CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri



भगवान् सत्य साई वचनामृत

(खण्ड सात)

भगवान् श्री सत्य साई बाबा के प्रवचन



संकलनकर्ता :

श्री एन० कस्तूरी, एम० ए० बी० एल०

संपादक "सनातन सारथी" प्रशान्ति निलयम्

अनुवादकर्त्ता :

श्री कपूरीलाल अग्निहोत्री, एम० ए० 'अकिञ्चन'

सेवा-निवृत्त अध्यापक, गवर्नमेंट इंटर कालेज, फर्रुखाबाद ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

॥ समर्पण ॥

सब में व्यापक सब के त्राता, जड़ चेतन के मूलाधार !
सेवा, प्रेम, शान्ति के गायक, हे प्रभु करुणा के आगार !
तेरी ही वाणी का तेरे चरणों में अर्पित उपहार,
हाथ पकड़ पहुँचा दो मुझको, इस भव-सागर के उस पार ।

—क० ल० अग्निहोत्री

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्या साई बाबा बोलते हैं ?

सत्य साई बोलते हैं !

क्या साई बाबा इन शब्दों को उत्सुक कानों और शुष्क हृदयों के लिये उच्चारण करते हैं ? नहीं ! ......यह तो हमारी मां की वाणी है जो हमें प्रसन्न करती है, लाड़ लगाती है, लोरियाँ सुनाती है, जिससे हमारा कष्ट दूर हो, हमें ग्रानन्द प्राप्त होवे । मोक्षिष्यामि मा शुचः । मत रोओ, वह स्वयं हमारे पालने को झुला रही है, वह हमें उंगली पकड़ कर प्यार से धीरे-धीरे सड़क पर चलाती है, कंकड़ों ग्रौर कंटकों को पार करा देती है । जब पथ कठोर ग्रौर चढ़ाई कठिन होती है वह गाती हुयी हमारा मन बहलाव करती है, योग-क्षेमं वहाम्यहम्—यह तो हमारी ही मां की वाणी है ।

सत्य साई बोलते हैं !

क्या साई बाबा इन शब्दों को झनझनाते हुये कानों ग्रौर टिमटिमाते हुये हृदयों के लिये उच्चारण करते हैं ? नहीं...... यह तो हमारे पिता की वाणी है जो हमारा परिष्कार करती है, हमारा उद्बोधन करती है और हमें हमारे चिरविस्मृत नाम का बोध कराती है । अभयं सर्व भूतेभ्यो ! मत डरो, वे हमारे त्राता हैं । ग्रागे के पथ पर, ऊर्ध्वगति के लिये, कल्याण पथ के लिये ग्रौर प्रभु के मार्ग पर वे स्वयं हमारा मार्ग दर्शन करते हैं, रक्षा करते हैं, वे ही मार्ग के कंटकाकीर्ण, दुर्गम और दुखद भागों, भूलभुलइयों से हमें निकाल ले जाते हैं । ना सुखात् लभते सुखम्–यह हमारे पिता, पालनकर्त्ता की वाणी है ।

सत्य साई बोलते हैं !

क्या साई बाबा इन शब्दों को चक्करदार भुलक्कड़ कानों ग्रौर सनकी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हृदयों के लिये उच्चारण करते हैं? नहीं......यह तो हमारे स्वामी, गुरुदेव की वाणी है; जो हमें परामर्श देती है, प्रतारणा करती है, स्वर्णवत् अग्निपरीक्षा से शोधन करती है, चरम अवसरों पर देखरेख करती है और हृदयस्थित भगवान् से साक्षात्कार कराती है। ईशावास्यम् इदं सर्वम्। द्वित्व कहीं नहीं है। वे पंच कोषों में रक्षित खजाने की दैवी डिबिया का ढक्कन खोल देते हैं। सत्यं ज्ञानं अनंतम् ब्रह्म......गुरुदेव की वाणी है।

सत्य साई बोलते हैं !

क्या साई बाबा इन शब्दों का जिज्ञासु कानों और मुमुक्षु हृदयों के लिये उच्चारण करते हैं? नहीं! यह तो भगवान् का दिव्य सन्देश है जो हमारे मन की चंचलता को शान्त करता है। ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति। उसी का स्वरूप बनो उसी में लीन हो जाओ। वे हमें जगाते हैं "प्रिय तरंग तू जो मुझसे ही उठी है मुझमें लीन हो जा! प्रिय किरण! मुझ तक पुनः वापस लौट आओ"। वे आह्वान करते हैं, "प्रिय स्फुल्लिग उसी अग्नि में पुनः समा जाओ। तुम मेरा ही स्वरूप हो और मैं ही तुम्हारे रूप में स्थित हूं"। सोऽहम् में से 'स' और हम् रहित हो जाने पर केवल ओ३म् शेष रहता है। वही तो वह और हम—एकमेव अक्षरम् 'ब्रह्म'। है न ऐसा ही? ओ३म्।

यही सब हमारे साई बाबा की वाणी है।

—एन० कस्तूरी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रकरण सूची

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्र० सं०	विवरण	पृष्ठ
२२	तारण में समर्थ तरणी	१२६
२३	महिमा के चिन्ह और प्रतीक	१३२
२४	मन मोदकों को त्याग दो	१४०
२५	व्यर्थ का अभ्यास	१४६
२६	प्रत्येक श्वास से जोर देकर कहो	१५२
२७	सैनिक और सेनापति	१५८
२८	सच्चा कार्य-क्रम	१६४
२९	गंभीर कालक्षेपण	१६९
३०	उसी एक को विजय करलो	१७४
३१	सौंदर्य और कर्त्तव्य	१८१
३२	हमारी आवश्यकता के कालेज	१८४
३३	तीन राजगद्दियां	१८९
३४	सौ तथा उससे अगला	१९४
३५	पिष्ट-पेषण	२००
३६	"मुझसे" नकि "मुझको"	२०६
३७	क्रान्तियाँ और प्रस्ताव	२१५
३८	अहंकार और पतन	२२०
३९	राम और काम	२२६
४०	प्राण-वायु	२३१
४१	दम्भ-विद्यालय	२३६
४२	पुरस्कार दाता को पुरस्कार	२४४
४३	सर्वाधिक लाभ का व्यवसाय	२५२
४४	"प्रस्तर में भगवान्" न कि "प्रस्तर के भगवान्"	२६२
४५	आगे पीछे दायें बायें	२७२
४६	धनोद और ऋणोद	२८५
४७	अन्तर्साक्षी	२८९
४८	पका फल	२९४

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१ सत्य वटिका

(प्रशान्ति विद्वान् महासभा, हैदराबाद ५-३-१६६६)

यह कितने महान सौभाग्य की बात है कि तुम्हारा जन्म उस भारत में हुआ है जो अनादि काल से दैवी सुगन्धि से परिपूर्ण है और जिसमें सभी मनुष्यों को भगवान् के मार्ग पर चलने के लिये आह्वानकारी वाणियां गूंज रही हैं। यह देश समस्त मानवता का गुरु रह चुका है; इसने पूर्व पश्चिम के लोगों को उस अज्ञान का पर्दा हटाने की शिक्षा दी है जो मानव और माधव के बीच पड़ा हुआ है। इन उपायों में से एक उपाय भगवान् की प्रतीक मूर्तियों की पूजा करना है। इसको धर्मान्ध व्यक्तियों ने बहुत ही गलत समझा है और दूसरे विचार के लोगों ने तीखे ढंग से गलत आलोचना भी की है। मूर्ति का महत्त्व तो बहुत सीधा और सरल है तथा समझ में सुगमता से आने वाला है। कल्पना करो तुम्हें दूध पीने की इच्छा है तो एक प्याले की भी आवश्यकता होती है। तब दूध को प्याले में डाला जाता है और वह प्याले के आकार को धारण कर लेता है। जब आपको लिंग के रूप में मूर्ति प्राप्त होवे तो तुम यह अनुभव करो कि यह दिव्य प्रभा महिमा और वरदान देने में समर्थ है। जब आप कृष्ण की मूर्ति की पूजा करते हैं, तो यह एक अधिक सुसज्जित प्याला है जिसमें आपने अपनी भावना से दैवी तत्व भर दिया है, इसलिये कि इसका पान कर आप अपनी पिपासा को शान्त कर सकें।

साधक तो प्रस्तर खण्ड को अपनी उदात्त भावना से भगवान् के प्रतिनिधि का पद दे लेता है; वह भगवान् को सिमटा कर पत्थर में सीमित नहीं करता है। मूर्ति तो केवल पदार्थ रखने का एक पात्र मात्र है, एक स्मरण दिलाने का साधन है, एक आधार है और एक पुनः ध्यानाकर्षण करने का साधन है, एक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक बार एक राजा ने एक ठेकेदार को अपने लिये महल बनाने की आज्ञा दी। राजा की इच्छा थी कि महल में प्रयोग की जाने वाली लकड़ी चिकनी, गाँठरहित और बेजोड़ की हो। ठेकेदार ने पूरे क्षेत्र में भी खोजने पर सीधी चिकनी और गाँठरहित लकड़ी नहीं पायी। अन्त में उसे केले के वृक्ष दिखाई दिये, उनके तने राजा की मांग की पूर्ति करने वाले जँचे। वह वृक्षों को काट कर राजा के पास ल गया। राजा ने कहा, "निस्संदेह यह वस्तु चिकनी और बढ़िया है, परन्तु इनमें अभीष्ट दृढ़ता तो है ही नहीं। तुम इन्हें भवन के कार्य में क्योंकर प्रयोग कर सकते हो?" बाह्य गुणों का इतना महत्त्व नहीं होता है, वस्तु का मूल्य तो उसकी दृढ़ता और आंतरिक गुणों के कारण होता है। हृदय तो शुद्ध होना ही चाहिये। भगवान् की महिमा और यशोगान निरंतर करते रहने से हृदय शुद्ध होता है। यही बी/१२ का विटैमिन है जोकि आध्यात्मिक स्वास्थ्य को उन्नत करता है। इस बटिका के अतिरिक्त अन्य किसी की भी आवश्यकता नहीं है।

जीवन तो एक तीर्थ यात्रा है, जहां कि मनुष्य को ऊबड़-खाबड़ कँटीली भूमि पर भी चलना पड़ता है। भगवन्नाम ओठों पर रहने से मनुष्य को प्यास नहीं लगेगी, हृदय में भगवान् के रूप का ध्यान रहने से थकान और अशक्तता नहीं होगी। सत्संग से वह विश्वासपूर्वक और आशा से आगे की यात्रा पर वढ़ता जावेगा। यह आश्वासन कि भगवान् पुकार सुनता है, वह सदा सन्निकट है, वह आने में देरी नहीं करता है, तीर्थयात्री के अंगों को शक्ति प्रदान करता है और उसकी दृष्टि में साहस का संचार करता है।

याद रक्खो कि तुम प्रत्येक कदम चलकर भगवान् के समीप होते जा रहे हो और ईश्वर भी तुम्हारे एक कदम के बदले में दस कदम तुम्हारी ओर आगे बढ़ आता है। तीर्थ यात्रा में कहीं पड़ाव नहीं होता है; यह तो निरंतर चली जाने वाली यात्रा है, रात-दिन ऊँचे, नीचे में, रेगिस्तान में आंसुओं और मुस्कराहटों के साथ जन्म-मृत्यु और गर्भ और चिता के बीच यात्रा जारी रहती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है। जहां सड़क की परिसमाप्ति है वहीं और तभी लक्ष्य की प्राप्ति होती है। यात्री को लगता है कि उसने तो केवल अपने से अपने तक की यात्रा की है; यद्यपि मार्ग एकाकी, लम्बा था परन्तु भगवान् ने यात्रा भर सदा साथ रहकर पथ प्रदर्शन किया है। वह भगवान् ही तो सदा उसके चारों ओर, भीतर, बाहर और साथ रहा है। वह (तीर्थयात्री) तो स्वयं ही दिव्य था। उसकी भगवान् में लीन होने की आकांक्षा तो बूंद द्वारा महासागर का आह्वान था। मनुष्य प्रेम करता है क्योंकि भगवान् प्रेम ही तो है। वह (तीर्थयात्री) सदा मधुर तान और शान्ति की कामना करता है क्योंकि भगवान् का स्वरूप ही शान्ति और मृदु तानवत् है। वह यात्री आनन्द की खोज इसीलिये करता है कि भगवान् आनन्दकंद हैं। यात्री चूंकि भगवान् की ही एक किरण है इसीलिये उसे भगवान् को प्राप्त करने की प्यास है, वह तो भगवान् को प्राप्त किये बिना स्थिर हो ही नहीं सकेगा।

जो कुछ व्यक्त है उसी में ईश्वर को पहचानना है चाहे वह खिल रहा है, कष्ट पा रहा है, आकर्षक है, अनाकर्षक है, मुरझा रहा है अथवा आनन्दित हो रहा है। वह भगवान् कीड़े में चेतना, कुत्ते में स्वामिभक्ति और पत्थर चट्टानों की तरह जड़ पदार्थों में गुप्त शक्ति के रूप में व्याप्त है। विवेकानन्द ने शिकागों में घोषणा की थी कि हिन्दू धर्म उन आवरणों और उपाधियों को भगवान् पर से उतार कर उसके दर्शन प्रत्येक जड़ चेतन पदार्थ और जीव में करता है। एक भद्र पुरुष चाहे प्रातःकालीन वस्त्र पहने, चाहे सान्ध्य वस्त्र धारण करे, अथवा दावत और अपरान्ह भोजन के समय पहने जाने वाले कोट पतलून में सज्जित होवे, इन सभी परिधानों में व्यक्ति तो वही रहता है, क्यों है न ऐसी ही बात ?

यदि तुम्हें मार्ग और गन्तव्य का ज्ञान है, तभी तुम जान सकते हो कि तुम आगे बढ़ रहे हो या पीछे हट रहे हो, नहीं तो और किस प्रकार से जानोगे ? तुम्हारे दृष्टिकोण को व्यापक होना है, साथ ही तुम्हारी सहानुभूति, तुम्हारा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रेम उस सीमा तक जहाँ तक भगवान् के प्रेम का विस्तार है, उसकी करुणा और कृपा जाती है, की सीमाओं का विस्तार होना चाहिये । इसलिए सदा सावधान रहो कि तुममें अधिकाधिक भगवत् तत्त्व का विकास होता रहे। रक्त संचार सर से पांव तक होता है; प्रेम को सदा उच्च से निम्न की ओर प्रवाहित होना चाहिये; तभी व्यक्ति और समाज दोनों के आनन्द और स्वस्थ स्थिति की आशा की जा सकती है। यह जगत तो भगवान् का है; सभी प्राणी भगवान् के हैं। वह सभी को प्यार करता है, ठीक उसी प्रकार जैसे चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों को सभी पर बरसाता है।

सांसारिक वस्तुओं और उनकी प्राप्ति में ही सदा न लिप्त रहो। तुम दुनियाँ में रहो परन्तु अपने में दुनियाँ को मत प्रविष्ट होने दो। निष्काम कर्म करो, केवल कर्त्तव्य पूर्ति के लिये कर्म करो; जितने भी उत्तम ढंग से कर सको करो। भगवान् से किसी कामना की पूर्ति का अनुरोध मत करो, क्योंकि जो कुछ वे तुम्हें प्रदान करना चाहते हैं, जैसा अनुभव तुम्हें कराना चाहते हैं, उनके विचार से तुम्हारे लिये वही सर्वोत्तम हैं। जिन उपनिषदों का आप नित्य स्वाध्याय करते हो, भाषणों में प्रशंसा करते हो, उन पर अपने दैनिक व्यवहारिक जीवन में आचरण भी करो। वे उन व्यवहारिक स्त्री पुरुषों के सतत् अन्वेषण का परिणाम हैं, जिन्होंने अपना जीवन हर्ष, शोक के बदलते हुए वातावरण से ऊपर उठने और शान्ति, संतुलन को प्राप्त करने के निमित्त अर्पित कर दिया था। सतत् अभ्यास से ही पूर्णत्व की प्राप्ति होती है।

तीर्थ यात्रा में प्रत्येक जीवन एक दिन की यात्रा के समान होता है। अपने गुणों का भरपूर प्रयोग, अधिक से अधिक दूरी तय करके पड़ाव डालने के लिये करो जो तुम्हारे गन्तव्य के समीप हो; जब कि जीवन की संध्या आवे। एक भी क्षण काहिली या अनर्गल कार्यों में मत नष्ट करो। सदा विनम्रतापूर्वक, सेवाभावापन्न और धर्मभीरु रहकर भगवान् की उपस्थिति का अनुभव करते हुये जीवन-यापन करो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२ खट्टा मीठा

(प्रशान्ति निलयम् ११-३-१९६७)

इसी मंच से बीमा संगठन और ईस्पात-लौह संस्थान के दो अधिकारी तुम्हारे समक्ष बोल चुके हैं। उनकी वक्तृताओं ने मेरे प्रवचन के लिये उपयुक्त सामग्री प्रस्तुत की है। आप जीवन का बीमा इसीलिये तो करवाते हो कि आपको अपने जीवन का कोई भरोसा नहीं है; है न यही बात ? एक सुखी सम्पन्न जीवन की आशा में आप बीमा करा कर नियमित रूप से बीमा की किश्त चुकाते रहते हो। परन्तु, आप इन्द्रियों और मन को वश में करके भी तो आनन्द और सुख प्राप्त कर सकते हो। केवल ईश्वर ही तुम्हें मृत्यु की विभीषिका से त्राण दे सकता है।

लोहा और ईस्पात धमन भट्टियों से प्राप्त किया जाता है, जहां अयस्क को अन्य आवश्यक उपकरणों के साथ द्रवीभूत करके, स्वच्छ करके, लौह-खण्ड के रूप में प्राप्त करते हैं। द्रव लौह को बाल्टियों में भरकर, क्रेन मशीन से उठाकर बड़े-बड़े चिमचों द्वारा उड़ेंला जाता है यद्यपि इन यंत्रों को प्रचंड ताप से काम पड़ता है, परन्तु वे स्वयं ताप से अप्रभावित रहते हैं। क्रेन अन्य पदार्थों को तो उठाता है परन्तु स्वयं को नहीं संभाल सकता है; मन भी ऐसा ही होता है। यह अन्य पदार्थों को ग्रहण करता है, उनको इधर-उधर करता है, अन्य सभी पदार्थों को हाथ लगाता है परन्तु यह अपने पर स्वयं नियंत्रण नहीं कर पाता है, वह स्वयं अपने को परिवर्तित अथवा अन्य किसी क्रिया में संलग्न भी नहीं कर पाता है। मन उसे नहीं पकड़ पाता है जो इसे पकड़े हुए है; अर्थात अन्तप्रेरक भगवान् पर नहीं टिक पाता है, इसलिये मन की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चन्चलता और उसके प्रिय भोगों से अपने को बचाने के लिये, आपको उसी की शरण में जाना है कि जो मन को भी पकड़े हुये है ।

लोहा और चुम्बक दोनों ही हैं। चुम्बक लोहे को अपनी ओर आकर्षित करेगा ही। यह दोनों का सामान्य गुण है। परन्तु यदि लोहे पर जंग की काफी मोटी पर्त जम गयी हो तो संभव है कि चुम्बक का आकर्षण स्पष्ट अनुभव न किया जा सके और वह लोहे को न घसीट पावे। ऐन्द्रिक भोगों की आसक्ति भी इसी प्रकार जंग का कार्य करती है। यह तो वह धूलि है जिससे जंग लग जाती है। अंततोगत्वा यह जंग लोहे को ही निःशेष कर देती है और इसे आकर्षण प्रभाव में न आ सकने योग्य जड़ पदार्थ में परिणत कर देती है। इसलिये इसका निरन्तर परीक्षण किया जावे और धूलि पोंछी जाती रहे। तब तो लौह खण्ड चुम्वक के संयोग में आने पर स्वतः चुबंकत्व का गुण अर्जित कर लेता है और इसे नित्य निरन्तर की खोज से शांति मिल जाती है। यही उपलब्धि लोहा और चुम्बक दोनों के लिये सर्वोत्तम है।

सत्संग करने से इन्द्रियों की आसक्ति रूपी धूलि से वचा जा सकता है, साथ ही सदाचार के सामान्य सिद्धान्तों पर आचरण भी करते रहना चाहिये। आजकल तो पाखंड का बोलबाला है। इस सम्बन्ध में आध्यात्मिक क्षेत्र और भी गया बीता है। क्योंकि यहा पर बड़े-बड़े दावे किये जाते हैं, आश्वासन भी बहुत हैं, परन्तु आचरण क्षुद्र जीवों जैसा किया जाता है। एक गांव के एक खोये पक्षी की कहानी है। किसान ने चिल्लाकर कहा कि, "गांव में कल एक बाहरी व्यक्ति आया था। और वह ब्राह्मण था। परन्तु मेरा मुर्गा चुरा कर पका कर खा लिया गया है।" इस प्रकार ब्राह्मण का निरामिष भोजी होने का संकल्प एक पाखण्ड ही सिद्ध हुआ। जितना कर सकते हो, उतना ही कहो भी। जो कर नहीं सकते उसे बकवास में क्यों कह जाते हो? अपनी आत्मा के प्रति ईमानदार और सच्चे रहो। यह समस्त संसार और वह मकान, जिसमें तुम निवास करते हो अर्थात् तुम्हारा शरीर भी—पृथ्वी, जल,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अग्नि, वायु, आकाश, पाँच तत्वों से निर्मित है। यह पंच महाभूत हमारी ज्ञानेन्द्रियों को अपने शब्द, रूप, स्पर्श रस और गंध द्वारा प्रभावित करते हैं। चूंकि पंच महाभूतों की उत्पत्ति ब्राह्मी संकल्प से हुयी है, अतः प्रत्येक के साथ समुचित आदर और विचार से व्यवहार करना है। उदाहरण के लिये पृथ्वी को ले लें। यदि तुम पृथ्वी पर बीज बखेर देते हो, वे संभव है न अंकुरित होवें, यदि उन बीजों को अत्यधिक नीचे मिट्टी में गाड़ दो, तो भी उनके अंखुये ऊपर नहीं निकलते हैं। वे प्रकाश में आने का अपना प्रयास त्याग देते हैं। इसी प्रकार से प्रत्येक तत्व को कुछ सीमाओं के अन्दर ही प्रयोग किया जा सकता है। तुम अपनी इच्छानुसार और जैसे चाहो उस प्रकार से नहीं। पानी को गले से नीचे धार बांध कर पहुंचाना भी उत्पीड़न हो सकता है यदि एक सीमा से अधिक हो जाय। इसी प्रकार से तुम्हारी ऊष्मा और ध्वनि सहन करने की एक सीमा होती है। तुम्हें झंझावात् में जब वह विकराल गति से आता है, श्वाँस लेने में कठिनाई होती है। और तुम्हारे कानों के पर्दे भी कान के समीप सीमातीत भयंकर विस्फोटक ध्वनि को सुनकर फट जाते हैं। इन पंचमहाभूतों का सीमित मात्रा से आगे का अनुभव पाप ही होता है। फर्श पर आहिस्ता से पहियों की लपेट को रखो और बिछाओ। यदि तुम सीधे तने रहते हुये धम्म से फर्श पर बिछौना गिराते हो, तो जो शोर बचाया जा सकता था, उसके उत्पन्न करने के पाप के भागी तो हो ही जाते हो उस भगवान् के प्रति कि जिसने ध्वनि के माध्यम को तुम्हें प्रदान किया है।

जल ही रस और स्वाद के सिद्धांत का वाहक है। विभिन्न रुचियों वाले मानव के आमाशय में मीठे, कटु, नमकीन, अम्लीय, खट्टे, सूखे और गर्म इत्यादि सभी का संतुलित समावेशन होता है। यदि इनमें से किसी एक प्रकार के स्वादु की अधिकता से संतुलन भंग हो जाता है, स्वास्थ्य का भी पतन होता है। पंच महाभूतों में से किसी एक की भी प्रचुरता, सीमातीत हो जाती है तो स्वास्थ्य भी गिर जावेगा और साधना भी प्रभावित होगी। इन पंच महाभूतों को भी सर्वशक्तिमान भगवान् का ही आवरण समझो। वही तो धार है जो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यंत्रों को चालित करती है, वही हमारे सभी ओर है। उसके बिना एक पत्ता नहीं हिल सकता, कुछ किया, सोचा, ग्रौर निर्णय नहीं लिया जा सकता।

बुद्धि को प्रखर वनाग्रो, तभी प्रकृति के ग्रनुस्भूत एकत्व के दर्शन होंगे। वेदों में सवसे ग्रधिक ग्रादरणीय ग्रौर लोकप्रिय मंत्र, गायत्री मंत्र हैं, जो प्रकाश (ज्ञान) के श्रोत की ग्राराधना ग्रौर कृपा याचना का मंत्र है। इसके द्वारा ग्रपनी बुद्धि के विकास के ग्रतिरिक्त और कुछ नहीं मांगा जाता है। प्रसिद्ध आन्ध्र कवि तेनाली रामकृष्ण, जो विचारक ग्रौर विनोदी प्रकृति के थे, एक वार घने जंगल में मार्ग भूल गये। उन दिनों प्रसिद्ध सम्राट कृष्णदेव राय, विजयनगर के शासक थे। यह वात लगभग १५०० ई० की है। रामकृष्ण दरबार से संबंधित थे और ग्रपनी हाजिर जवावी ग्रौर बुद्धिमत्ता के लिये सम्मानित मंत्रीपद को सुशोभित कर रहे थे। जवकि वे निराशापूर्ण स्थिति में जंगल में भटक रहे थे, उन्हें एक वृद्ध ऋषि दिखाई दिये। रामकृष्ण दौड़ कर उनके चरणों में गिर गये और साष्टांग दण्डवत की। उन्होंने ऋषि से पूछा, "ग्राप इस घोर जंगल में कैसे ग्रा फंसे ?" ऋषि ने उत्तर दिया, "जिस रहस्यमयी शक्ति ने तुम्हें यहां घसीटा है उसी ने मुझे भी इस स्थान पर ला पटका है। जिस घड़ी मुझे इस शरीर का त्याग करना है वह ग्रा गयी है। मैं तुम्हें उस मंत्र की दीक्षा दूंगा जिसे मैंने इतने दीर्घ काल से जपा है ग्रौर अपने कवच ग्रौर कोष की तरह रक्षित रक्खा है।" यह माता काली का मंत्र था ग्रौर उन्होंने इसको रामकृष्ण के कान में धीरे-धीरे कह सुनाया।

इस महान उपहार को प्राप्त कर रामकृष्ण फूले न समाये। घने जंगल के मध्य स्थित वे जगदम्वा के एक मन्दिर में निकल गये और माता के ध्यान में ग्रनुरक्त हो गये। जैसा कि उस मन्त्र के द्वारा शुभारम्भ हुग्रा था। एक दिन, ग्राधी रात को, जंगल के ग्रादिवासी कोया लोग मन्दिर में ग्राये। उनके साथ एक वकरा था जिसको वे माता की ग्रनुकूलता और प्रसन्नता के लिये वलिदान करना चाहते थे। रामकृष्ण मूर्ति के पीछे छिप गये और ज्योंही चाकू ग्रभागे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पशु की गरदन पर गिरने को था वे चिल्ला उठे, "मैं सभी प्राणियों की, जिनमें तुम भी शामिल हो, जगन्माता हूं, अगर तुम मेरे बच्चे को मारोगे तो मैं तुम्हें शाप दूंगी, मैं तुम्हें वरदान नहीं दे सकती ।" कोया लोगों ने विश्वास कर लिया कि यह काली माता की वाणी है, उन्होंने बलि नहीं दी और चले गये ।

अब काली रामकृष्ण के सामने प्रकट हुयी; उसने पूछा, "तुम मुझसे किस वरदान की आकांक्षा रखते हो ? मैं तुम्हारी साधना से प्रसन्न हूं । बोलो तुम इनमें से क्या चाहते हो ?" माता के हाथ में उस समय एक में दही-चावल और दूसरे हाथ की तश्तरी में दूध-भात था । तेनालीराम रामकृष्ण उन तश्तरियों में के भोज्य पदार्थों के खाने का परिणाम, माँगने से पहले, जानना चाहते थे । माता ने स्पष्ट किया, "दही-चावल खाने से तुम्हें धन-वैभव और आर्थिक सम्पन्नता प्राप्त होगी, जबकि दूध-भात तुम्हें विद्वान और बुद्धिमान बनावेगा । अब तुम स्वयं चुनाव कर लो ।" रामकृष्ण ने अपने मन में सोचा, "विशाल धन सम्पतिवान मूर्ख रह जाना कोई अच्छी बात नहीं होगी और कोरी विद्वता से भी दिन में तीन बार पेट नहीं भरेगा ।" वह चतुर व्यक्ति था । उसने पुनः अगला प्रश्न किया, "मैं अपने सामने दो तश्तरियां देखता हूं, चुनाव करने से पूर्व मुझे बतलाइये प्रत्येक का स्वाद कैसा है ।"

वह हंसी और बोली, "मैं स्वाद का वर्णन किस प्रकार कर सकती हूं और इनके स्वादों में अन्तर को कैसे समझाऊं ? तुम्हें स्वयं उनको चखना पड़ेगा", और इसी उद्देश्य से रामकृष्ण को दोनों तश्तरियाँ दे दीं ।

चतुर रामकृष्ण ने शीघ्रता से दोनों में का दही, दूध, और समस्त भात निगल लिया ।

काली हक्की-बक्की रह गयी; और उसने चिल्लाकर रामकृष्ण की धृष्टता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

का गम्भीर दण्ड देने की घोषणा की। रामकृष्ण ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और काली के प्रस्तावित दंड के लिये अपने आपको अर्पित कर दिया। परन्तु, क्या माता का दंड बच्चे का नाश कर सकता है, चाहे बच्चे का आचरण कितना ही निन्दनीय क्यों न हो ? काली ने कहा, "तुम मत काँपों मेरा दण्ड तुम्हारी रक्षा करेगा।" तब उसने इस प्रकार दण्ड घोषित किया, "एक विकट कवि हो जाओ, अर्थात एक चतुर विदूषक हो ओ; जिसका राज-दरबार में बड़ा मान-सम्मान रहे। खूब धन, वैभव इकट्ठा हो और अपने चतु-रता पूर्ण परामर्श से, जो परामर्श चाहें, उनका पथ प्रदर्शन करो।"

जैसा कि भाट ने कहा है, "प्रत्येक को प्रभु कृपा अर्जित करने का अधि-कार है", परन्तु रामकृष्ण के समान लोग जिनमें आत्म विश्वास होता है, वे इसे शीघ्रता से और प्रचुरता से अर्जित कर लेते हैं। भगवान् उन लोगों को, जिनमें आत्म विश्वास, साहस और भरोसा होता है और जो प्रत्येक अवसर पर अपनी आध्यात्मिक स्थिति को सुधारने के लिये जागरूक रहते हैं, प्यार करता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३ चित्त शुद्धि योग

(विजयनगर कालोनी, हैदराबाद १६–३–१९६८)

मानव सत्यम्, शिवम् और सुन्दरं है। इसीलिये वह सत्य, सुन्दर और आनन्द प्रद के प्रति आकर्षित होता है। वह झूठा, कुरूप और दुष्ट चरित्र कहा जाने से घृणा करता है। मनुष्य को सामान्य से प्रथक भी जाना पड़ता है, विशेष कष्ट उठाना पड़ता है तब वह असत्य के मार्ग पर चल पाता है; उसके लिये किसी असत्य का अंत तक निर्वाह करना अपेक्षाकृत अधिक कठिन होता है; जबकि सत्य का समर्थन करने में उतनी कठिनाई नहीं होती है। इसलिये जब मनुष्य असत्य दुष्टता और अभद्रता का आचरण कर आनन्दित अनुभव करता है तो वह अपने लक्ष्य से दूर हटता जाता है।

भिन्न माताओं के उदर से जन्म लेने पर भी राम लक्ष्मण भ्रातृ प्रेम की रहस्यपूर्ण शक्ति से आकर्षित होकर एक दूसरे के इतने समीप अनुभव करते थे। एक बार जब शैशवावस्था में लक्ष्मण को रोने से चुप न कराया जा सका, यद्यपि वे जननी सुमित्रा के ही अंक में थे, तो राज पुरोहित वशिष्ट ने सुझाया कि बच्चे को राम के पालने में ही शयन करा दिया जावे। राम का जन्म कुछ दिन पूर्व ही हुआ था; और इतना करते ही बच्चा मधुर निद्रा में सो गया। दोनों एक ही भाग्य-सूत्र में आबद्ध थे। मानव भी भगवान् (राम) से उसी भाग्यसूत्र द्वारा आबद्ध है। उसे भगवान् की गोद में ही प्रगाढ़ और मधुर निद्रा प्राप्त हो सकती है। भगवान् से प्रथक रहने पर उसे शोक संतप्त रहना ही पड़ेगा।

अपनी जिह्वा पर, अपनी श्वाँस में, सदा भगवान् का नाम रक्खो। इससे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उनके रूप का उद्रेक होगा, जो कि प्रत्येक वस्तु, विचार और घटनाक्रम का आन्तरिक ग्राधार होता है। इससे तुम्हें भगवान् का साहचर्य प्राप्त होगा, उनके ग्रानन्द ग्रौर ग्रपरिहार्य शक्ति से सम्पर्क होवेगा। जिससे तुम्हें सर्वाधिक लाभ की प्राप्ति होवे, वही तो सत्संग है। ग्रपने ग्रन्दर स्थित भगवान् से वार्तालाप करो, उनसे साहस ग्रौर सान्त्वना प्राप्त करो। वे ही ऐसे गुरुदेव हैं जो तुम्हारी उन्नति में सबसे ग्रधिक रुचि रखते हैं। किसी बाहरी गुरु की खोज मत करो, इसके लिये कुटियों, आश्रमों ग्रौर तीर्थों की खाक मत छानो। वह अन्तर्यामी घट-घट वासी भगवान् ही पिता, माता, गुरु, मित्र सब कुछ है। 'पितु मातु सहायक स्वामि सखा तुमही एक नाथ हमारे हो।'

तुम जानते हो भगवान् कृष्ण के विषय में पाण्डवों के क्या भाव थे। ज्योंही धृतराष्ट्र, कौरव पक्ष के सम्राट को विदित हुग्रा कि कृष्ण ने आगामी युद्ध में पाण्डवों की सहायता करने का वचन दिया है, उन्होंने कहा, "हे कृष्ण, हम लोग भी तो तुम्हारे सम्बन्धी हैं, फिर तुम दूसरे पक्ष को क्यों ग्रपना समर्थन देते हो, ग्रर्थात् पाण्डवों ही की सहायता क्यों करते हो?" कृष्ण ने उत्तर दिया "सम्बन्धी होना तो ठीक। परन्तु कितना ग्रन्तर है। आप अग्नि हैं तो पाण्डव पानी हैं; जो कि उत्तप्त मरुस्थल में भटकने वालों की प्यास बुझाता है।" धृतराष्ट्र ने प्रतिवाद किया, "जो लगाव ग्राप अपने फुफेरे भाइयों से रखते हैं वह ग्रसंगत है।" कृष्ण ने कहा, "ज्येष्ठ पाण्डव धर्मराज मेरा मस्तिष्क है, द्वितीय पाण्डव भीम मेरे स्कंध-द्वय ग्रौर मध्यम पाण्डव मेरी भुजायें हैं। चतुर्थ और पंचम पाण्डव युगल नकुल सहदेव मेरे दोनों चरण हैं।" देखो वे लोग भगवान् से कितनी समीपता से संयुक्त थे। फिर भी, इतना होते हुये, जीवन के ग्रधिकांश भाग में पाण्डवों को कितना कष्ट, बनवास, बदनामी और हानि उठानी पड़ी। इसके लिये भी नास्तिक लोग भगवान् पर व्यंग करते हैं कि यह सब भगवान् की शरण-रक्षा में रहते हुए भुगतना पड़ा। उन्होंने इन सब कष्टों को साहस पूर्वक ग्रौर ग्रक्षुण्ण आनन्द पूर्वक वरदान मान कर भोग डाला। बिना सर्वव्यापी पर ग्रटूट विश्वास रक्खे मनुष्य को

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शान्ति नहीं प्राप्त हो सकती है। पाश्चात्य देशों में भगवान् के अस्तित्व से ही इनकार किया जाता है, मनुष्य अपने पर ही निर्भर रहना चाहता है; वह अपनी बुद्धि और साहसिकता की डींग हांकता है; विज्ञान और प्राविधिक ज्ञान की उपलब्धियों पर गर्व करता है। परन्तु शान्ति के बिना बुद्धि चातुर्य निरंतर मानसिक अस्पतालों की भीड़ को बढ़ा रहा है। शान्ति स्त्री पुरुषों के हृदयों से पलायन कर रही है; सामाजिक सौम्यता एक सुदूरवर्ती स्वप्न सिद्ध हो रहा है, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एक ऐसी मृग मरीचिका हो गयी है जिसकी टोह में केवल गिने चुने व्यक्ति ही प्रयास करते हैं। मानव चन्द्र लोक के अभियान पर जाता है, परन्तु अपनी चेतना के अन्तस्तलों को खोजने, समझने स्वच्छ करने और संयमित करने का विचार तक नहीं करता है।

जिस यंत्र के द्वारा वह प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का अभिलाषी है, उस यंत्र को भी मानव वास्तव में नहीं समझता है। एक बार यदि उसे समझ लिया जावे तो उसके द्वारा जो कुछ भी समझा जा सकता है, वह सब सरलता से समझ में आ जावेगा। भारत के ऋषियों ने यही सब किया था। उन्होंने उसके जानने का प्रयास किया जिसे ज्ञात कर शेष सभी कुछ सरलता से जाना जाता है। इस खोज या अनुसंधान की प्रक्रिया का उपनिषदों में वर्णन है।

व्यावहारिक जीवन में उस अनुसंधान की अभिव्यक्ति प्रेम से की जाती हैं। क्योंकि प्रेम ही जनक है, पालक है और सब कुछ आत्मसात किये हुये है। प्रेम के बिना भगवान् को कोई भी नहीं अनुभव कर सकता है; और न उनकी कृति विश्व का ही। भगवान् ही प्रेम हैं। प्रेम में निवास करो—ऋषियों द्वारा इसी पथ का उपदेश किया गया है। जिस हृदय को सभी प्रकार की घास-पात का उन्मूलन कर, अच्छी तरह जोत कर कृषि योग्य बनाया गया है; उसी में प्रेम उग सकता है। इसलिये सतत् नाम स्मरण द्वारा हृदय को तैयार

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

किया जाना चाहिये। इसे योग भी कहा जा सकता है जैसे भक्ति योग अथवा ज्ञान या कर्म योग; कुछ भी नाम दे डालो। इसे "चित्त शुद्धि योग" भी कहा जा सकता है। यह चेतना को स्वच्छ रखने की प्रक्रिया है। काल की प्रत्येक घड़ी को दिव्य नाम से उद्भूत धारा द्वारा आविष्ट करते हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४ विष का उपहार

(विद्यानगर कम्युनिटी हाल, हैदराबाद ९-३-१९६८)

भय, हिंसा, बलपूर्वक विधि पालन कराना, घृणा और उत्पीड़न के बढ़ते हुए अन्धकार में आशा की एक किरण शान्ति है; जिसे व्यक्ति अपनी साधना और आत्मसंयम के बल पर प्राप्त कर सकता है। वह शान्ति आन्तरिक चेतना को शुद्ध करके उसमें व्याप्त हो जाती है तथा वातावरण भी उससे प्रभावित होता है। साधना मनुष्य की प्राणवायु है, सत्ता प्राप्ति का संघर्ष, धन और वैभव के लिए पुरुषार्थ, विषाक्त वायु हैं। मूर्ख मनुष्य बेचारा उसी वायु के लिए छटपटाता है जो कि उसके लिये विनाशकारी है। वह अपनी प्रकृति का नाश करने और सद्गुणों का निषेध करके आनन्दित होता है। आज की सभ्यता की यही दुखान्त परिणति है।

वह अपने चतुर्दिक साँसारिक सद्भाव और उत्तमता से भी मुकरता है। वह संसार को भगवान् की कृति के रूप में नहीं देख पाता है, भले ही उसे खिले पुष्प, गाती चिड़ियाँ, लहराते जलाशय, इन्द्रधनुष और शस्य श्यामला भूमि दिखाई दे; संसार में व्याप्त सामंजस्य, मधुर संगीत, सत्य, प्रेम, सहानुभूति, न्याय, भद्रता और विद्वत्ता उसके नेत्रों और मस्तिष्क को अभिभूत करती रहे। वह अपने अन्वेषन पर गर्व करता है और इसे उन्नत नाम देकर नास्तिकवाद का दर्शन कहने लगता है। वह तो अंगूरों को खट्टा बता कर तिरस्कृत करेगा ही चाहे गुच्छे को प्राप्त करने के लिए एक भी उछाल न ली गयी हो। वह समुद्र को छिछला कह सकता है चाहे उसने गहराई जानने का प्रयास भी न किया हो। उसके दुर्बल पंखों के लिए सत्य, (जिसे भगवान् भी कहा जाता है) का अन्वेषण एक सीमातीत कठिन कार्य होता है। फिर क्या

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्राश्चर्य कि मनुष्य भय, ग्रौर दुर्बलता से सदा आक्रान्त रहे। वह इनसे तब तक बच नहीं सकता जब तक कि दलदल में घिसटता है और उन्मुक्त आकाश में, प्रकाश में, उड़ान भरने में असमर्थ है। लोग कहते हैं कि यह सब काल का सूक्ष्म प्रभाव है। ग्रच्छा, काल का ठीक-ठीक स्वरूप क्या है? काल तो जड़ों का गहराई में प्रवेश करना, फल का पक्कावस्था तक पहुंचना, एक स्वभाव का क्रमशः परम्परा में परिणत होना है। इनके बिना काल की गति एक चक्र के घूमने के समान है। काल ने भारत को एक महान उत्तराधिकार —सहन (विविधता में सहनशीलता), सत्यम् (सत्य पर आरूढ़ रहना), मातृभावम् (माता के प्रति, जननी ग्रौर सच्चे गुरु होने की, कृतज्ञता), धर्म (स्थाई समाज के मौलिक ग्राधार; जैसे सेवा, सच्चरित्रता, दयालुता आदि) प्रदान किया है। परन्तु यह विरासत किताबों में कैद हो गई है, कभी-कभी सभास्थलों पर बिछा ली जाती है; उसका दैनिक जीवन में कोई उपयोग नहीं है।

विष मानव का दैनिक आहार हो गया है। उसकी ग्राँख विष से आह्लादित होती है, उसका मुंह विष उगलता है, उसके कान विषवाणी से तृप्ति अनुभव करते हैं; उसके पैर उसे विष के भंडार तक घसीट ले जाते हैं, उसका मस्तिष्क दूसरे अन्य मस्तिष्कों को विषाक्त बनाने की योजना में संलग्न रहता है। केवल भगवान् ही इस विष को पान कर जाने में समर्थ हैं; ग्रौर वही इस विश्व को भस्म होने से रक्षा कर सकता है; जैसी कि हलाहल से ग्रांतकित विश्व की रक्षा शिवजी ने की थी। शिव का ध्यान करो, जो नीलकंठ हैं; क्योंकि विषपान के ही कारण उनका कंठ नीला पड़ गया है, तब विष तुम्हें हानि पहुँचाने में ग्रसमर्थ रहेगा। मैं तुम्हारा ग्राह्वान करता हूं, ग्रपने में का समस्त संचित विष मुझे ग्रर्पण कर दो, मुझसे स्वास्थ्य, प्रसन्नता ग्रौर स्वयं स्वर्ग तक प्राप्त कर लो।

कल्पवृक्ष, मानव के हृदय में जंगली घास-पात की प्रचुर उपज से कंटीली

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

झाड़ियों और लताओं से अवगुंठित होकर रह गया है। इस आवश्यक दम घोटने वाली हरीतिया का उन्मूलन कर डालो, तब कल्पवृक्ष उगकर फले फूलेगा। हर व्यक्ति जिससे तुम्हारी भेंट हो उसमें भगवान् के दर्शन करो। हर वस्तु जिसे तुम हाथ लगाओ उसमें भगवान् का दर्शन करो। उसकी महिमा सभी लौकिक और अलौकिक पदार्थों में व्याप्त है। वास्तव में ऐसा ज्ञात किया जा चुका है कि भगवान् के अतिरिक्त अन्य कुछ पदार्थ है ही नहीं। "सर्वम् खल्विंद ब्रह्म" सब उसी की महिमा है जो आनन्द का श्रोत तुम्हारे अन्दर और बाहर है उसी से आनन्द प्राप्त करो। न पीछे हटो, न रुको, तिरन्तर आगे बढ़ते रहो। चरैवेति, चरैवेति। प्रति मिनट आगे बढ़ते रहो और इस बात के लिए आनन्द मनाओ कि भगवान् ने वह क्षण तुम्हें अपने साक्षात्कार और स्वागत के लिये, तथा कीर्तन गान के लिए, अपनी लीला श्रवण करने के लिए और अपने सर्वत्र दर्शन के लिए प्रदान किया है। हर वस्तु में भगवान् के हाथों का कृतित्व है, सभी ऊँचाइयों तक उसी भगवान् के चरण और सभी क्षितिजों के पार तक उसकी आँखें पहुंची हैं। हर चेहरे के सामने भगवान् का मुखारविन्द है। यही सब भगवद्गीता में घोषित किया गया है। तुममें से जो गीता का पाठ करते हैं, वे इस कथन की सत्यता की साक्षी दे सकते हैं; यदि उनमें भगवद् गीता के प्रति निष्ठा है और उसके प्रकाश में, अर्थात् तदनुकूल, आचरण भी करते हों।

अब मैं उस दीपक को आलोकित करता हूँ जो तुम्हारे बारह घण्टे के अखण्ड जाप तक प्रज्वलित रहेगा। व्यंकटवदनी ने कहा कि दीपक तभी स्वच्छ और चटकीले प्रकाश से आलोकित होगा यदि आप उसमें भक्ति, ज्ञान या वैराग्य किसी भी प्रकार का तेल डालते रहेंगे। नहीं, तुम्हें दीपक के इन तीनों ही अंगों का एक ही दीपक में संयोजन करता है। वे ही पात्र, तेल और बत्ती हैं। भक्ति पात्र है, वैराग्यम् तेल है, और ज्ञानम् वाती है जिसे श्रद्धारूपी दियासलाई से दृढ़ निष्ठा से घिस कर आलोकित कर सकते हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५ प्रेम करो और प्रिय बनो

(अनंतपुर अध्यापक दिवस ५-६-१९६८)

मुझे प्रसन्नता है कि आप सब यहां पर अध्यापकों के एक सम्मेलन में एकत्रित हुए हो और आपने कतिपय अध्यापकों को, जिन्होंने छात्रों की पीढ़ियों के प्रेम और कृतज्ञता को उपार्जित किया है, सम्मानित करना उचित ठहराया है। यह सहयोग और पारस्परिक आदर प्रत्येक के दैनिक आचरण का एक अंग हो जावे प्रत्येक की मानसिक विचारधारा को प्रभावित करता रहे, प्रत्येक का स्वभाव बन जावे। प्राचीन भारत के ऋषियों ने सदा इस पर आग्रह किया है, "साथ रहें प्रत्येक एक दूसरे का आदर करें, ईर्ष्या और घृणा के बीज हममें अंकुरित होकर प्रेम की निर्मल धारा को अवरुद्ध न करें।" यही है वह प्रार्थना जिसे वे इस देश के बच्चों को सिखाते थे। उनकी शिक्षा में एकता दैवत्व और मनसा, वाचा, कर्मणा की त्रिविधि उदारता प्रथम से अन्तिम श्वांस तक रखने का उपदेश था। जब तक अध्यापक गण इस उत्तराधिकार को अविकृत रूप में और पूर्ण रूप से इस देश के बच्चों को सौंपते रहे तभी तक महान देश के रूप में इसका भविष्य सुनिश्चित था।

शिक्षकों को अपने आवश्यक आध्यात्मिक कर्त्तव्य 'शिक्षा' से बचने के लिये भौतिक और जड़ कारणों का आश्रय नहीं लेना चाहिये। उन्हें जांच और कठोर पीड़ा सभी का सामना शांति और संतोष से करना चाहिये और अपने कार्य को और अधिक दक्षता से करते जाना चाहिये। ईश्वर उन्हें पुरस्कृत करेगा; और समाज उनका सम्मान करना सीखेगा; उनका त्याग और बलिदान एक न एक दिन अवश्य फलेगा। जो लज्जित मुखड़े से मजे लूटता रहता है उसकी अपेक्षा दुनियां उस व्यक्ति का कहीं अधिक सम्मान करती है

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जो प्रसन्नता से दीर्घकाल तक दूसरों के लिए कष्ट भोगता रहता है। मौलिकरूप से जीवन की अवधि एक लघु अवधि होती है; दीर्घ मात्रा में मार्गस्थित सराय के पड़ाव के समान, एक चरमराती, विषम रंगस्थली का लघु अभिनय; पानी का बुलबुला मात्र। इस शीघ्र बीत जाने वाले समय में कुछ ही भाग्यशाली होते हैं जिन्हें बढ़ते हुए बच्चों को शिक्षा देने, प्रेरणाप्रद भक्ति जगाने, साहस भरने का स्वर्ण अवसर प्राप्त होता है बच्चा उनके प्रति जीवन भर आभारी रहेगा। अपने कर्त्तव्य को पूजा मान कर करो, वह भगवान् के चरण कमलों में अर्पित होगी और तुम्हारा जीवन शांति, प्रसन्नता और विश्राम पाकर प्रचुरता से पुरष्कृत होगा। जिन अध्यापकों को आप सम्मानित करना चाहते हैं उनका आप सभी के लिए यही संदेश है। उन्हें दीन, हीन दया का पात्र न समझा जावे। वे आध्यात्मिक वैभव से सम्पन्न हैं, कर्त्तव्य परायणता के आनन्द से सुखी हैं; वे अपने कर्त्तव्य को भली-भाँति समझते हैं, भली प्रकार करते हैं और उत्तम आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

आजकल अध्यापक अपने व्यवसाय की महानता से परिचित नहीं हैं, समाज भी बदल कर कृतघ्न हो गया है। लड़कों और युवा लोगों ने रजतपट के नायकों को अपना आराध्यदेव मान रक्खा है और अपना मार्गदर्शक स्वीकार किया है। वे फिल्मों से बुरी तरह और गंभीरता से प्रभावित हैं, आतंकपूर्ण विदूषकों और अपराधमूलक पुस्तकों से उनके मस्तिष्क विकृत हो गये हैं। बाल्यकाल में उनके मन में जो जीवनादर्श स्थापित और बीजारोपित किये गये थे, उनका मूल्य अब उनके मन से उतर गया है। क्षुद्राकर्षणों की प्रखर धारा से प्राचीन महानता की भावना धुल गयी प्रतीत होती है। इस दुःखान्त नाटिका का असहाय दर्शक अध्यापक है; उसके पास अब देने को कोई शक्ति और सहायता नहीं रह गयी है, कोई आदर्श नहीं है जिसकी स्थापना करे। यदि गीता और उपनिषद के आदर्शों से वह स्वयं ओतप्रोत हो तो वह शिष्यों को भी अपने आचरण और उपदेश से प्रभावित कर सकता है और उन्हें शान्ति और आनंद के पथ पर चला सकता है। यह

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ठीक है कि समाज और परिवार को भी अध्यापक का हाथ इस कार्य में बंटाना चाहिये और अध्यापक के प्रयत्नों की पुष्टि करनी चाहिये। अध्यापक को प्रेम और सत्य के वातावरण मे ही कार्य करना है; नकि घृणा और असत्य के। उसे बच्चों में घूमते-फिरते आनन्दित और संतुष्ट दिखाई देना चाहिये; नकि क्षुब्ध और क्रुद्ध। तभी वह प्रेम विकसित कर पावेगा।

कितना भी उपदेश और प्रेरणा देकर अध्यापक को अपने व्यवसाय की उन्नत परिणति के लिये नहीं उठाया जा सकता है। उसे तो स्वयं ही उठ खड़े होना है, उसे बाह्य प्रभावों से, भय से, प्रलोभन से, फुसलाने से नहीं सुधारा जा सकता है। तुमने भिन्न-भिन्न परिस्थितियों से प्रभावित होकर इस व्यवसाय को अपनाया है; परन्तु वही स्थिति अब बदल गयी है। एक बार तुमने अध्यापकों की इस महान संस्था की सदस्यता स्वीकार कर ली है, तो उस विश्वास को जो तुम पर किया गया है, पूर्णरूप से चरितार्थ करो और बच्चों को जो तुम्हें सौंपे जावें, पूर्ण रूप से शिक्षित और दीक्षित करो। उन के अभिभावक तुमसे बड़ी-बड़ी आशायें रखते हैं।

तुम्हें तो भूतकाल के उन महान गुरुओं के चरणचिह्नों पर चलना है जो परवर्ती पीढ़ियों को अपनी आध्यात्मिक सम्पत्ति दे जाते थे। निस्संदेह, कुछ वर्ष पूर्व तुम लोग भी स्वयं छात्र थे और यह स्वभाविक है कि अपने गुरुओं के पदचिन्हों पर चलते हुए तुम लोग भी उसी ढंग और आचरण-व्यवहार को अपनाओ जो तुम्हारे गुरुओं के थे। कदाचित् जिन आदर्शों की मैंने अभी चर्चा की है; उनके आस-पास ही तक प्राचीन गुरुओं के आचार-व्यवहार थे, संभव है न भी पहुंचते हों। परन्तु तुम्हारा आदर्श यही है कि आन्तरिक सत्य को खोजो और उससे निस्त्रत आनन्द के श्रोत का पता लगाओ। जिससे बच्चों को "भारत के सच्चे सपूतों" में शिक्षित करने के कष्ट साध्य कार्य को, मनोरंजन कार्य मान कर, कर सको इससे तुम्हें उपयुक्त पुरस्कार और ताजगी प्राप्त होवे। तुम्हारा आचरण ही तुम्हारे व्यवसाय का सर्वोत्तम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मंत्र है; तुम्हारी विद्वत्ता बहुमूल्यवान् है; परन्तु इससे कुछ कम से भी काम निकाला जा सकता है; परन्तु चरित्र तो शत प्रतिशत् आदर्श होना ही चाहिये। स्वाभाविक रूप से, न कि प्रचारात्मक ढंग से। प्राचीन ऋषियों के संदेश के अनुसार अपनी जीवन चर्या बनालो; सत्यं वद्, धर्मम्चर। सच बोलो और धर्म मार्ग पर आचरण करो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६ सरल बनो, द्युतिमान बनो

(सत्यसाई महिला कालेज अनतपुर ५-६-१९६८)

भारत की संस्कृति प्राचीनतम, और आज भी अत्यंत सक्रियता की है। यह चिर नूतन बनी हुयी है क्योंकि इसका आधार अनादि, अनंत शाश्वत सत्य है; जिसका संबंध मानव प्रकृति और बाह्य विश्व का मानव चेतना पर प्रभाव से है। इस संस्कृति में अच्छी तरह स्पष्ट किया गया है कि सच्चिदानन्द भगवान्, जो इस विश्व में व्याप्त और विश्व को अपने में धारण किये हुये हैं, के प्रति अर्पित करके मनुष्य अपने कर्त्तव्यों का सर्वोत्तम ढंग से निर्वाह कर सकता है। इस संस्कृति की शिक्षा है कि मनुष्य एकाग्रता से जो कार्य करता है वह इसीलिये अत्यंत सन्तोषप्रद और फलप्रद होता है। वह कार्य नम्रता और श्रद्धा से युक्त होने के कारण मानव की ईश्वर प्रदत्त सभी क्षमताओं और प्रतिभाओं को प्रदर्शित करने में समर्थ होता है।

'भारती' नाम का अर्थ है (भा=भगवान्,+रति=प्रेम, अर्थातु) भगवान् के प्रति प्रेम, जो कि भगवान के प्रेम का आह्वान करता है; और मनुष्य को प्रेरित करता है कि वह अपने प्रत्येक कार्य को उसी भगवान् की महिमा केलिये अर्पित कर दे। वह प्रेम (रति) मनुष्य में दया भगवान् के सभी जीवों के प्रति चाहे वे बच्चे हों, या मानवेत्तर अन्य प्राणी; उत्पन्न करता है। इसी के कारण वह अन्य सभी की त्रुटियों और भूलों की उपेक्षा करता है और अपने दोषों के प्रति सावधान होता है; इससे वह अपने चारों ओर प्राणियों के हर्ष और शोक के प्रति सहानुभूति अनुभव करने लगता है। इससे उसमें नवीन प्रकार की आनन्द दायक अवचेतना उत्पन्न हो जावेगी जो उसके हृदय को भगवान् की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कृतियों को आश्चर्य से देखने में समर्थ बनावेगी, ऐसा अद्भुत अनुभव उसे प्रत्येक वस्तु के दर्शन से, और सर्वत्र ही होगा।

बड़ों का तुम्हारे प्रति इन दिनों, जबकि तुम कालेज में अध्ययन कर रहे हो, यह कर्त्तव्य है कि वे तुम्हारे उत्तराधिकार की भव्यता और दिव्यता के बारे में तुम्हें बतलावें। यह तुम्हारा अधिकार है। परन्तु लाखों नवयुवक और नवयुवतियां इन स्कूल-कालेजों में से पढ़कर उस पुरस्कार को बिना प्राप्त किये ही निकल जाते हैं कि जिसको प्राप्त करना सबसे अधिक आवश्यक है—अर्थात् प्राचीन ऋषियों के द्वारा संकलित बहुमूल्य ज्ञान भन्डार, जो कि नवीन पीढ़ी के लिये है। मुझे प्रसन्नता है कि इस कालेज के अध्यापकों ने भारतीय संस्कृति के ऊपर पाठों को भी पाठ्यक्रम में आयोजित किया है उससे पाठ्यक्रम की संम्पूर्ति की गयी है। ऋषियों ने इसे तुम्हारे लिये ही सम्बल बनने के लिये सहेजा था।

इस पाठ्यक्रम को भारतीय संस्कृति का नाम दिया गया है। धातुओं का उनकी स्वच्छता के लिये संस्कार किया जाता है। ढांचे में ढाल कर आकृति दी जाती है, घरिया में पिघला कर शुद्धिकरण किया जाता है, चमकाया जाता है और सीधा किया जाता है। भारतीय संस्कृति इसी प्रकार मनुष्य में से पशुत्व को निष्कासित कर उसे अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को, प्रत्येक कार्य को अपने अन्तर्यामी भगवान् के प्रति तीर्थ यात्रा के रूप में अर्पित करने के लिये उत्साहित करती है। यह दोहरी प्रक्रिया है जिसमें घास-पात का उन्मूलन और बीजों का बोया जाना दोनों ही सन्निहित है। भारत में तो यह क्रिया पालने से ही प्रारम्भ हो जाती है, इसे शिशु कक्षाओं से होते हुये स्कूल कालेज और विश्वविद्यालय स्तर तक जारी रखा जाता है।

इस कालेज को विकासमान पीढ़ी के लिये पावनकारी और साहसप्रद अनुशासनों को जानने और अभ्यास करने के अवसरों को प्रदान करने में एक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आदर्श स्थापित करना है । इसी उद्देश्य को लेकर इस कालेज की स्थापना की गयी है । इस दिशा में तुम उन पारिवारिक परम्पराओं से प्रभावित हुये हो जिन परिवारों में तुम्हारा जन्म हुआ है और शैशवावस्था बीती है, उस समाज से भी प्रभावित हुये हो जिसने तुम्हारे स्वभाव और मनोवृत्ति के तथा पूर्वाग्रहों के निर्माण में योगदान दिया है । यहाँ भी तुम एक दूसरे को परस्पर वार्तालाप और व्यवहार द्वारा प्रभावित कर रहे हो । तुम्हें उचित निष्कर्ष निकालने और सही निरीक्षण करने के लिये प्रशिक्षण दिया गया है । इस सब से तुम्हें भारतीय संस्कृति को समझने और लाभान्वित होने में सहायता मिलेगी ।

मातृभूमि एक मानचित्र मात्र नहीं है; और न है यह केवल भूमि विस्तार तथा कुछ नामों का समूह मात्र । यह तो मां है जो कि मस्तिष्क और शरीर दोनों का पोषण करती है; लोरियाँ गाती है; नेत्रों और आत्मा को लुभावने चित्र प्रस्तुत करती है । यह जीवन के लक्ष्य की ओर बढ़ने, अर्थात् आत्म-साक्षात्कार करने की दिशा में कदम उठाने की शिक्षा देती है । यह हर बच्चे को उसकी क्षमता और सीमाओं का ज्ञान कराती है । इस प्रकार यह लक्ष्मी और सरस्वती दोनो ही है ।

महिला कालेज का इस संबंध में दोहरा दायित्व है कि यह भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों की रक्षा करे और व्यवहार में भी लावे । मातृत्व तो भगवान् की सुस्पष्ट और सुनिश्चित देन है। मातायें ही किसी राष्ट्र की निर्माता और विनाशक होती हैं; क्योंकि वे ही राष्ट्र की आत्मा की स्नायुयों को आकार प्रदान करती हैं । ये स्नायु दो पाठों से, पाप का भय, और पुण्प-संग्रह का प्रलोभन, से सुदृढ़ बनायी जाती हैं । इन पाठों का आधार भगवान् के सर्वान्तिर्यामी होने का दृढ़ विश्वास होता है । यदि आप जानना चाहते हैं कि कोई राष्ट्र कितना समुन्नत है तो उसकी माताओं का अध्ययन करो । क्या वे निर्भय और चिन्तारहित है ? क्या वे सभी के प्रति दया=मया से पूर्ण और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सहन तथा सद्गुणों से युक्त हैं ? यदि आप संस्कृति की महिमा का अनुकरण करना चाहते हो तो माताओं का अध्ययन करो जिस प्रकार से वे पालना झुलाती हैं, भोजन कराती हैं, पालन करती हैं और शिशुओं को उंगली पकड़ कर चलना सिखाती हैं, प्यार करती हैं। जैसी मां होती हैं राष्ट्र भी उसी प्रकार उन्नति करता है; जैसी मां होती हैं, संस्कृति की मधुरता भी तद्वत् होती है।

इस उत्तरदायित्व को स्वयं माताओं को ही वहन करना चाहिये । इसे धाय अथवा परिचारिकाओं पर नहीं डालना चाहिये। यह ठीक है कि धाय और परिचारिकायें बड़ी परिश्रमी और निष्ठावान् होती हैं; मुझे उनके विरोध में कुछ नहीं कहना है। परन्तु जो शिशु इनके द्वारा पाला जाता है वह जीवन के लिये आवश्यक उर्वरक-प्रेम, को खो देता है। बच्चा स्वास्थ्यप्रद विटामिन, प्रेम से वंचित रह जाता है। घर, जहाँ कि प्रेम से सुगंधित वायु प्राणों को पुष्ट करती है, अपने पवित्र वायुमंडल को ही खो देता है। वह गृहस्थाश्रम, जहाँ दम्पति, भाई, बहिन, संबंधी, अध्यापक और भृत्यवर्ग सभी संयुक्त रूप से एक 'परिवार' बनाकर रहते हैं, एक दूसरे की वृत्तियों और रूचियों से अवगत होते हैं, उनकी कल्पनाओं और आशाओं से परिचित होने के कारण और अधिक प्रेम करने लगते हैं, शींघ्रता से विशृंखलित हो रहा है। अधिकाँश घरों में भगवान् की पूजा का कोई स्थान नहीं होता है; यदि होता भी है तो रसोईघर का कोई कोना ही होता है; जहाँ न कोई बैठ पाता है न कुछ समय ध्यान कर पाता है। अथवा उस पूजाघर का भार किसी वैतनिक पुजारी के ही सुपुर्द होता है; इस प्रकार यह एक नीरस और थोपी हुई परम्परा के समान चलने दी जाती है। इस देश के महान मंदिर, जिनका निर्माण भक्तों ने कराया था और कई दशकों के भक्तिपूर्ण उद्योग से जो निर्मित हुये थे वे आज उपेक्षा के कारण खंडहर हो रहे हैं; और पूजा कार्य भी ठप्प पड़ा है। सामूहिक अर्चना और सामूहिक कीर्तन की प्रेरणा ही नहीं उठती है; उसका तो उपहास किया जाता है।

इस कालेज में तुम केवल विद्वत्ता और दक्षता पर ही जोर न दो वरन्

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

'पुष्टि' और 'तुष्टि' (शारीरिक सौष्ठव और मानसिक शान्ति) का भी पूर्ण ध्यान रहे। वास्तव में, शारीरिक उत्तम स्वास्थ्य के लिये मानसिक शान्ति महान सहायक होती है। तुष्टि का अंतिम परिणाम पुष्टि ही होता है। मेक्सिको की इन्द्रादेवी, जिन्होंने चीन और रूस में योग की शिक्षा दी है और अब अमरीका में एक महान् योगाश्रम चला रही हैं, तुम्हारे सीखने के लिये एक उत्तम शिक्षिका हैं। तुम्हें वह उस योग की शिक्षा देंगीं जिससे शरीर और मस्तिष्क दोनों सुदृढ़ होंगे। उन्होंने भारत में, मैसूर में योग की शिक्षा, भारतीय परम्परागत विधि से, शारीरिक और मानसिक लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से, प्राप्त की थीं। देखो वे वयोवृद्ध होने पर भी कैसी सक्रिय, स्फूर्तिवान और प्रसन्न रहती हैं।

मानव जब जीवन सागर में तरंगाय्रमान होता है तो एक आत्मविद्या ही होती है जो उसे उस स्थिति से उबार सकती है, रक्षा करती है और संबल देती है। जीवन केवल जीना भर ही नहीं होता है; यह तो जीवन के क्षेत्र में मुक्ति प्राप्त करने की कला को सीखना है। भारत ने इस विद्या में विशेषता और दक्षता प्राप्त की थी इसलिये वह शेष संसार का मानवता का गुरु बन गया। उसे पुनः अपने प्राचीन पद को प्राप्त करना है, यद्यपि यहां की जनता इस समय उदासीन और शासकों ने संकुचित दृष्टिकोण अपना रक्खा है। जो भगवान् ओसविन्दु, सुदूरवर्ती नक्षत्र, वैज्ञानिक और उसकी अध्ययन वस्तु परमाणु में व्याप्त है, उसे मानवीकृत अंतरात्मा द्वारा ही देखा जा सकता है। मीठे का स्वाद केवल जिह्वा ही बता सकती है वह भी तब जब कि वह स्वस्थ हो। इसी प्रकार शुद्ध चेतना ही भगवान् की महिमा और वैभव को पहचान सकती है। इसे निरंतर 'सोऽहम्' के जाप द्वारा पवित्र बना डालो। वह (भगवान्) मैं हूँ और मैं वही हूं। अंत में मैं, वह एक होकर केवल 'वह' ही रह जावेगा।

इन दिव्य विचारों का मनन करो। केवल उसी की पूजा के लिये अपना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रत्येक कार्य करो। मृदु और धीमे सम्भाषण करो ताकि उसकी महिमा को कहीं ठेस न लगे, अपमान न होने पावे क्योंकि वह सर्वत्र, सदैव, हर वस्तु में व्याप्त है। तभी तुम्हें अंक प्राप्त होंगे। ऐसे अंकों को प्राप्त करने के तुम्हारे प्रयास की मैं सराहना करता हूं; न कि उन टिप्पणियों की, जो तुम्हारे गुरुजन और प्रधानाचार्य तुम्हारे सम्बन्ध में जब तब करते रहते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७ भिक्षा और चिन्तायें

(प्रशान्ति निलयम् १३-१-६९)

आज के दिन से सूर्य मकर रेखा से उत्तर की ओर परिभ्रमण करता हुआ सा प्रतीत होने लगता है; मकर-संक्रमण, जैसाकि इस दिवस का नाम है, के बाद सूर्य उत्तरायण हो जाने के कारण यह दिवस युगों युगों से एक शुभ दिन, और पवित्र त्यौहार के रूप में मनाया जाता है। परन्तु तुम्हें तो अपनी यात्रा की चिन्ता अधिक करनी चाहिये, तुम्हारी यात्रा की यह स्थिति जिसका अंत प्रत्येक सूर्योदय के साथ समीप आता जा रहा है, चिन्तनीय है। तुम तो निरंतर काल के झपट्टे से बचने के लिये सूर्य की गति के साथ संघर्षरत हो क्योंकि सूर्य की गति से ही तो काल की माप या गणना की जाती है। तुम जन्म मृत्यु के भवबंधन से छूटना चाहते हो। तुम आनन्द और शान्ति चाहते हो; इसके लिये तुम मन को इतना स्वच्छ कर लो कि वह लगभग समाप्त प्राय हो जावे। यह तभी संभव है जब तुम अपने को यह शरीर न मानकर आत्मा मानो। शरीर तो आत्मा का खोल मात्र है जो पिछले जन्म के मानसिक और शारीरिक कृत्यों के आधार पर दिया गया है। जब तुम सर्वव्यापक आत्मा की चैतन्यता के साथ प्रेम में जीवन यापन करते हो तो तुमसे प्रेम निस्वृत होकर बाहर के जगत को आप्लावित कर देगा।

प्रतिदिन जब तुम जगकर बिस्तर पर उठ बैठो तो अपने से पूछो, "मैं इस जगत में क्यों आया हूं? मेरे लिये क्या कार्य निर्देशित हुआ है? यह तैय्यारियां मैं किस संघर्ष में विजय प्राप्त करने के लिये कर रहा हूं? मेरी विजय का अंतिम लक्ष्य क्या है?" प्रसिद्ध तीर्थों पर तुमने कभी कभी कारों का जमघट भी देखा होगा। मंदिर के विशाल रथ बड़ी शोभा के साथ झंडियों तथा अन्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तड़क-भड़क के उपकरणों से सजाये जाते हैं। तगड़े बलिष्ठ पुरुषों के दल इन रथों को चौड़ी सड़कों पर शंखों और बिगुलों तथा अन्य वाद्य यंत्रों की ध्वनि के साथ खींचते हैं, नृत्यकार और अन्य प्रकार की क्रीड़ा दिखाने वाले आगे-आगे चलते हैं। मंत्रपाठी दल और गायक भी साथ चलते हैं और जलूस की श्रीवृद्धि करते हैं। दर्शकों का उत्साह भी बढ़ता जाता है। हजारों की संख्या में लोग रथ के आगे चलते हैं और सड़क के दोनों ओर पंक्तिबद्ध होकर खड़े हो जाते हैं। यद्यपि इन सबसे उन लोगों का मनोरंजन होता रहता है; परन्तु उस क्षण में उन्हें अत्यन्त सुख और संतोष होता है जबकि वह लोग हाथ जोड़ कर रथ में स्थित मूर्ति को भक्ति भाव से प्रणाम करते हैं। अन्य सब कार्य-कलाप गौण रहता है; और कुछ लोगों के लिये अप्रासंगिक भी होता है। इसी प्रकार जीवन की शोभायात्रा में भी, तुम सब के "रथ यात्रा" में आत्मा ही केन्द्र है; वही दिव्य चिन्गारी है। शरीर ही रथ है, आत्मा उस रथ में स्थापित मूर्ति है। खाते, कमाते, हंसते, रोते, चोट मारते और घाव भरते हुये तथा जीवन के अन्य कार्य कलाप भगवान् की पूजा में गौण स्थान रखते हैं; और आत्म साक्षात्कार में उनका अल्प महत्त्व है।

शरीर रथ है, बुद्धि सारथी है, इच्छायें ही वह सड़कें हैं जिन पर ऐन्द्रिक आसक्तियों की रस्सी से रथ खींचा जाता है; मोक्ष गन्तव्य स्थान है मूल-विराट् स्वरूप ही रथ का स्वामी है। इस रथ को, जिसे तुम लिये फिरते हो, इसी प्रकार समझना चाहिये। प्रत्युत, मानव इसे इधर-उधर वहशियाना ढंग से घसीटे फिरता है, सुनसान भूखण्डों से होकर जाता है, जन्म से मृत्यु पर्यन्त इच्छाओं और आवश्यकताओं के वशीभूत मारा-मारा फिरता है। तीर्थयात्रा की सड़क पर के मीलों के एक दो पत्थर भी आगे नहीं बढ़ता है। न तो कोई पुल पार करता है न कोई उन्नति ही अंकित की जाती है। सम्पूर्ण यात्रा उपेक्षा या उपहास का विषय बनी रहती है।

तुम कह सकते हो कि उन्नति तो प्रभुकृपा से ही संभव होती है। परन्तु

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यद्यपि मेरा हृदय नवनीत की तरह कोमल है, यह पिघलता तभी है जबकि तुम्हारी प्रार्थना में कुछ गरमाहट भी हो। जब तक तुम संयम पूर्वक प्रयास नहीं करोगे, कुछ साधना नहीं करोगे, प्रभुकृपा तुम्हें नहीं प्राप्त होगी। अभीप्सा, अपूर्ण लक्ष्य की पीड़ा, ही वह गरमाहट है जिससे मेरा हृदय द्रवित होता है। आवेदना से मेरी कृपा प्राप्त की जाती है। तुम चाहे जितनी नव-रात्रियाँ और शिवरात्रियाँ यहाँ इस स्थान पर व्यतीत कर चुके हो, जब तक तुम अपना हृदय आलोकित कर उसे स्वच्छ और पवित्र प्रकाश से नहीं भर लेते हो, तब तक तुम्हारे हृदयों में अंधकार छाया रहेगा और रात्रि में डूबा रहेगा।

साधना से तुम में नीरवता, निस्तब्धता, एक आसन में सिद्धता, संतुलन आना चाहिये। चूंकि चन्द्रमा मन का अधिष्ठाता देवता है, अतः अपने मन को चन्द्रिका के समान शीतल और तापनाशक सुखकारी बना लो। वाणी में शान्त रहो, अन्य लोगों के द्वेष के प्रति शान्त रहो, निन्दा स्तुति में भी शान्त रहो। इन्द्रियों की, भावोद्रेकों की, अनुभावों की और मानसिक उद्वेगों की शान्ति ही वास्तविक प्रशान्ति है। तुम प्रायः लांक्षन लगाते हो कि अन्य लोगों के कारण तुम्हारी शान्ति भंग हो जाती है; परन्तु तुम नहीं जानते हो कि यद्यपि तुम जिह्वा से नहीं बोलते हो, फिर भी अपनी विचारधारा से तुम अपने आस-पास के लोगों की शान्ति भंग कर रहे हो।

वैराग्य, निष्ठा और प्रेम के तीन स्तम्भों पर शांति का भवन ठहरा हुआ है। इनमें से निष्ठा ही आधार है; क्योंकि इसके विना तो साधना लकीर पीटना मात्र रह जाता है। वैराग्य से साधना प्रभावकारी होती है और प्रेम ईश्वर के सन्निकट पहुंचाता है। ईश्वर से प्रथकता की पीड़ा को निष्ठा ही बढ़ाती है, वैराग्य इसे ईश्वरोन्मुख करता है। प्रेम-पथ को आलोकित करता है। तुम जिसके योग्य हो, और तुम्हारी जो आवश्यकता है उसे भगवान् देगा। भिक्षा माँगने की कोई आवश्यकता नहीं है और असंतुष्ट होकर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बड़बड़ाने से भी कोई लाभ नहीं। संतुष्ट रहो; कृतज्ञ रहो; चाहे जो कुछ और चाहे जहां जो भी घटना घटे उसे देखते जाओ। उस भगवान् की इच्छा के विरुद्ध कुछ न होगा।

मुझे कर्ण का स्मरण हो आया। अपने अंतिम क्षण में उसने भगवान् से केवल यही वरदान मांगा, "मुझे कोई चिन्ता नहीं आप यदि मुझे अनेक पुनर्जन्म देते हैं और बार-बार मृत्यु का सामना करना पड़े मुझे केवल यही वरदान दीजिये कि मुझे किसीके समक्ष याचना के लिये हाथ न फैलाना पड़े, और यह भी वरदान दीजिये कि मैं कभी भी इस स्थिति में न होऊं कि मुझे किसी याचक से "नहीं" कहना पड़े। मेरे मुख से कभी 'देहि' और 'नास्ति' के शब्द न निकलें।" जो व्यक्ति त्याग और योग में स्थित रहता है उसे देहि और नास्ति के शब्द कभी नहीं कहने पड़ते हैं। क्योंकि वह सदैव संतुष्ट और परिपूर्ण रहता है।

विवेकानंद से एक बार एक झक्की आलोचक ने पूछा कि गेरुआ वस्त्रों को धारण कर वे क्यों सड़कों पर अपने त्याग और तपस्या का विज्ञापन करते रहते हैं। उन्होंने उत्तर दिया "यह क्या विज्ञापन है? यह तो रक्षा कवच है। मैंने स्वयं जब गेरुआ वस्त्र पहन लिये हैं तो कोई मेरे पास आर्थिक सहायता या भिक्षा के लिये नहीं याचना करेगा; इस प्रकार 'नहीं' का शब्द, जिसका उच्चारण मुझे अप्रिय है, मुझसे नहीं उच्चारित होगा। इस परिधान से केवल मुमुक्षु व्यक्ति ही मेरे निकट आवेंगे, उन्हें देने के लिये मेरे पास प्रचुर सामग्री है। संकटग्रस्त व्यक्ति को समीप पाकर मैं द्रवित हो उठता हूँ, परन्तु उसे देने के लिये मेरे पास धन नहीं होता है। ऐसी दुखद परिस्थितियों से यह परिधान मेरी रक्षा करता है।" तुम भी अपने जीवन को इस प्रकार बना लो कि उपर्युक्त दोनों शब्द अपने जीवन भर प्रयोग न करना पड़ें।

न तो शोक करो; और न दूसरों के शोक के कारण बनो। आनन्द की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मूर्ति (भगवान्) तुम्हारे अन्दर ही है, जैसी कि अन्य लोगों में भी है, सभी में है। पात्रों की बहुलता होने पर भी उनमें संचित पदार्थ सर्वत्र एक ही है। सत्, चित्, आनन्द (अस्तित्त्व, ज्ञान, और प्रसन्नता) का सिद्धांत यही है। लघुतम परमाणु और विशालतम नक्षत्र सिद्धांततः एक ही हैं। "अणोरणीयान् महतोमहीयान्"। सत्य तो यह है कि यह सब ब्रह्म ही है, दिव्य है। तुमने शास्त्रों में पढ़ा है कि विष्णु (वह भगवान् जो विश्व की रक्षा, पालन-पोषण करता है) का वाहन गरुड़ है; शिव (वह ईश्वर जो विश्व को अपने में लय, विनाश और संहार करता है) का वाहन 'वृषभ' है और ब्रह्मा (वह भगवान् जो सृष्टि की रचना, विकास और वृद्धि के कार्यों से संबंधित है) का वाहन हंस होता है। सुब्रह्मण्य (देवताओं की सेना का प्रधान सेनापति) का वाहन मयूर है। शनि (वह देवता जो गंभीर, अवसादकारक प्रभाव डालता है) कौआ की सवारी करता है। गणेश (जो विघ्न बाधाओं को दूर करते हैं) का वाहन मूषक है; यद्यपि वे स्थूल-काय और हाथी के समान मस्तक-सूंड वाले हैं। इस व्याख्या का यह अर्थ नहीं है कि देवतागण इन पशु, पक्षी वाहनों के बिना असहाय और असमर्थ हैं। इस सब का तात्पर्य यही है कि कोई पशु-पक्षी घृणा का पात्र नहीं होना चाहिये, क्योंकि वह तो किसी न किसी देव का वाहन है। देह अथवा शरीर के रूप में तो सभी भिन्न-भिन्न हैं परन्तु देही (आत्मा) की दृष्टि से सभी में एक ही ब्रह्म का निवास है।

साधना से तुम्हें इस एकता का बोध होगा। परन्तु, सावधान, साधना से कभी-कभी ईर्ष्या और अभिमान भी उत्पन्न होने लगते हैं, वह उन्नति के साथ उत्पन्न होने वाली अवांछनीय घासपात के समान है। जब तुम यह सोचते हो कि तुम्हें साधना करते कितना दीर्घकाल हो चुका है और तुम्हारी दैनिक चर्चा का कितना भाग साधना में ही लगता है तो तुम दूसरों को, जो उतने पुराने या लम्बा समय देने वाले साधक नहीं होते हैं, क्षुद्र समझ बैठते हो। तुम्हें यह सोच कर गर्व होता होगा कि तुमने इतने लक्ष भगवन्नाम लिखा है; तुम इसकी चर्चा करते हो, जब भी अवसर मिलता है ताकि अन्य लोग तुम्हारी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रशंसा और सराहना करें कि तुम इतने बड़े साधक और सहिष्णु हो। परंतु यह लक्षाधिक संख्या महत्त्वपूर्ण नहीं होती है; महत्त्व तो मन की पवित्रता का होती है, जो एकाग्रता और नाम की साधना से उत्पन्न होता है। तुम्हारी साधना कुयें से बार-बार उसी बाल्टी-रस्सी से जल निकालने के समान नहीं होनी चाहिये । तुम चाहे जितना बाल्टी को बार-बार डबकोरो और बाल्टी को ऊपर खींचो उसमें जल नहीं आवेगा क्योंकि प्रत्येक पाप का बाल्टी में एक एक छिद्र है जो जल ऊपर आने से पहले ही गिरा देता है। पहले बाल्टी को रंजवाकर ठीक तो कर लो।

सभी धर्म और मत मनुष्य को हृदय की शुद्धि का, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या और क्रोध से रहित बनाने का, उपदेश देते हैं। इस मन शुद्धि की क्रिया के पुरस्कार रूप में सभी धर्म भगवान् की कृपा की प्राप्ति का उल्लेख करते हैं। अहंकार से पीड़ित हृदय में ही उच्चता और क्षुद्रता के विचार उठते हैं। यदि कोई तर्क करता है कि वह अथवा उसी का धर्म अधिक महान है; तो यही प्रमाण है कि उसने अपने धर्म का आधार ही नहीं समझा है। वृक्षों के पत्ते, फूल, फल तो भिन्न दिखाई देते हैं परन्तु उनके तनों को देखो तब तुम्हें उनमें तात्विक साम्य की प्रतीति होगी। साधना से इसी प्रकार तुम्हें सभी धर्मों के उपदेशों में समानता का बोध होगा। निस्सन्देह यह एक कठिन पथ है; परंतु देर सबेर सभी को चलना इसी पथ पर है। आध्यात्मिक क्षेत्र में छोटे रास्ते (शार्ट कट) नहीं होते हैं। एक व्यक्ति था जो मोक्ष का एक बड़ा छोटा रास्ता बतलाता था। वह एक गुरु के पास गया और उनसे मोक्ष प्राप्ति का शीघ्राति-शीघ्र उपाय पूछा। गुरु ने कहा, 'अपने को जानो'। 'अरे, यह तो मैं जानता हूं, मैं इस समय तो आपका शिष्य हूं। तो क्या इतने से मुझे अभीप्सित मोक्ष प्राप्त हो गयी ?'' उसने पूछा। परन्तु गुरु ने उत्तर दिया कि, "यह सब ठीक से समझ पाना इतना सरल नहीं है।'' गुरू ने उसे समझाया कि शरीर के पूर्व और पश्चात् दूसरे परे क्योंकि यह तो इन्द्रियों की क्रीड़ा का क्षेत्र है, अहंकार और बुद्धि के भी परे वह 'आत्मा' है जो पंच कोषों से आवृत है वे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पंचकोष अन्नमय (स्थूल, मांसल और भौतिक) प्राणमय (जीवन धारा अनुभूतियों के रूप में) मनोमय (मानसिक, कल्पनाशील, अनुमानों का सृष्टा) विज्ञानमय (बुद्धि का प्रयोक्ता, तर्क वितर्क करने वाला) और आनन्दमय (स्फुर्णाशील, अनुभव प्रधान और प्रसन्नता युक्त) हैं। जो हो अंततोगत्वा गुरु ने उसे एक उपाय यह बताया "हृदय से भगवन्नाम का जाप करो और उनके प्रत्यक्ष दर्शन की अभीप्सा करो"। उन्होंने कहा, "यदि तुम्हें भगवान् का सतत् स्मरण अपने अन्तर्यामी और घटघट वासी के रूप में रहने लगे तो उसकी कृपा तुम्हें क्षण भर में ही बिजली के एक लपाके के समान प्राप्त हो जावेगी।" यह सुनकर वह काँप उठा, उसने फिर भी साहस बटोर कर पूछा कि वह किसी अन्य को धन देकर यह सब कार्य अपने लिये नहीं करवा सकता है; इस पर गुरु ने उत्तर दिया, "क्या तुम धन देकर किसी अन्य को अपने स्थान पर खिला कर और सुला कर तृप्ति और विश्रान्ति लाभ कर सकते हो? जब तुम बीमार पड़ते हो तो क्या किसी और को दवा खिला कर इन्जेक्शन लगवा कर स्वयं स्वास्थ्य लाभ कर सकते हो?"

संध्या को भजन के पश्चात् तुम दस मिनट ध्यान करते हो। जो कुछ कर पाते हो अच्छा है। परन्तु मैं एक बात पूछना चाहता हूं कि जब तुम ध्यान के पश्चात् उठते हो, इधर-उधर घूमते हो तो क्या सभी को अधिक स्पष्ट आलोक में देखते हो कि वह दिव्यता से युक्त हैं? यदि ऐसा नहीं है तो ध्यान में लगाया समय व्यर्थ ही नष्ट किया है। क्या तुम अधिक प्रेम करने लगते हो या कम बात करते हो, क्या तुम दूसरों की सेवा अधिक हार्दिकता से करते हो? ध्यान की सफलता की यही कसौटी है। तुम्हारी उन्नति तुम्हारे चरित्र और व्यवहार से परिलक्षित होवे। ध्यान के द्वारा तुम्हारा वस्तुओं और प्राणियों के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित हो जाना चाहिये, अन्यथा यह एक छलना है। एक पत्थर भी सूर्य किरण, वर्षा, ताप, शीत और आघातों से बिखर कर मिट्टी बन जाता है और एक वृक्ष का भोज्य पदार्थ हो जाता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इसी प्रकार कठोर से कठोर हृदय भी कोमल होकर दिव्यता को अंकुरित करने में समर्थ हो जाता है।

जैसे कारें एक वर्कशाप में आती हैं उसी प्रकार तुम प्रशान्त निलयम में आते हो। तुम यहाँ से नये रंग रोगन से, टूटे-फूटे ढीले कल-पुर्जों की मरम्मत और बदलाव के बाद इंजिन की सफाई और पुनर्नवीकरण (बोरिंग एण्ड चार्जिंग) के बाद बाहर जाओ। हर पुर्जा, अंग प्रत्यंग, सुन्दर, संकट रहित, अच्छी दशा में, आगे की यात्रा पर दौड़ लगाने के लिये ठीक होवे। हर बुरी लत को अच्छे स्वभाव से बदल डालना है। विकार का लेशमात्र भी शेष न रहे। हृदय में से सम्पूर्ण अहंकार निकल जावे। यहाँ की तीर्थ यात्रा का यह फल तुम्हें प्राप्त होवे। इस उत्तरायण उत्सव पर तुम्हारा यही संकल्प और दृढ़ विचार बन जावे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८ ग्रानन्द का पुलिन्दा

(राजहमन्द्री १७-२-१९६९)

सनातन धर्म नामक यह विशाल भवन भूतकाल के महान ऋषियों द्वारा परवर्त्ती पीढ़ियों के शान्ति ग्रौर समृद्धिपूर्ण निवास के लिए निर्मित किया गया था; परन्तु लाभान्वित होने वालों की उपेक्षा से यह महल ग्रब उजाड़ ग्रौर रहने के ग्रायोग्य ठहराया जाता है। भारत के पुत्रों ग्रौर पुत्रियों के लिये जिस शान्ति ग्रौर ग्रानन्द की कामना जिन ऋषियों ने की थी वे ग्रब धरती पर से उठ गये हैं। ग्रब उनके प्राचीन चेहरों को इन वच्चों के चेहरों में, जो मेरे समक्ष यहाँ उपस्थित हैं, झांका जा सकता है, वे वच्चे ग्रब इस स्कूल में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं ग्रौर ग्रन्यत्र भी हैं। जब वे वड़े होते हैं तो आनन्द शोक में ग्रौर शान्ति, चिन्ता में परिणत हो जाते हैं। सयाने लोगों ने भी ग्रानन्द प्राप्ति की कला ग्रौर उसके रक्षण की विधि को भुला दिया है।

ये बच्चे तो ग्राकर्षक पौध की तरह हैं, होनहार हैं; इन्हें बुद्धिमत्तापूर्ण पोषण ग्रौर प्रेमपूर्ण व्यवहार से ग्रादर्श नागरिकों के रूप में विकसित किया जा सकता है। तब ये सनातन धर्म के संयम, नियम और ग्रनुशासन को समझ सकेंगे, जिससे इन्हें ग्रात्मज्ञान, विश्वज्ञान, जो कि ग्रात्मा के ही स्वरूप का दूसरा पहलू है, प्राप्त होगा। जीवन के प्रारम्भिक वर्ष अत्यंत महत्त्वपूर्ण होते हैं; इस लिये माता ग्रौर पिता को उनके समुचित प्रशिक्षण का दायित्व उठाना ही चाहिये। इन्हीं प्रारम्भिक वर्षों में वच्चों में वह कलायें, भाव, मनोवृत्तियाँ, उद्वेग ग्रौर दक्षता का प्रादुर्भाव होता है जिससे उनके भावी चरित्र की नीव बन बिगड़ सकती है। माता-पिताओं को इस नींव को सुदृढ़ और सीधी रखना है। परन्तु अब माता-पिताग्रों के पास इसके लिये उपकरण ही क्या है जिससे इस

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उद्देश्य की पूर्ति होवे ? उन्हें स्वयं अपनी संस्कृति का गम्भीर ज्ञान नहीं है, उन्हें अपने आध्यात्मिक मूल्यों में विश्वास ही नहीं है; वे कोई आध्यात्मिक साधना भी नहीं करते हैं; उन्हें मानसिक शांति भी प्राप्त नहीं है। बच्चों का विकास श्रद्धा, भक्ति, पारस्परिक सेवा और सहकारिता के वातावरण में होना चाहिये। उन्हें माता-पिता का सम्मान करना, गुरुजनों और बड़े-बूढ़े लोगों का सम्मान करने की शिक्षा देनी चाहिये। इस समय तो वे केवल शुष्क, प्रेरणारहित, पुस्तकों में मुद्रित घिसी पिटी बातों को सीखते और नकल करते हैं; उनमें कोई वास्तविक हार्दिक प्रेरणा या उल्लास नहीं रहता है।

उन्हें बचपन में ही भगवान् की कृतियों के प्रति अद्भूत कौतूहल और जिज्ञासा का भाव उत्पन्न होवे जिससे वे उनके विषय में ज्ञान प्राप्त करें। उन्हें अच्छी तरह समझा दो कि वे केवल दो हाथ, दो पैर. पेट, मस्तक और हृदय नामक अंगों के बंडल मात्र नहीं हैं। वे अपने में एक ऐसी अन्तर्निहित शक्ति की सत्ता का अनुभव करें जो उनके कार्यों को निर्देशित करती है। भजन और श्रवण (धार्मिक कथानकों और शास्त्रों के पाठ सुनना जो ईश्वर विषयक हों) के द्वारा इन उन्नायक सत्यों को शिक्षकों और माता-पिताओं द्वारा बच्चों के हृदयंगम कराया जा सकता है।

अपनी भाषा के अ, आ, इ, ई वर्णमाला के अक्षर सीखो। तभी तुम बच्चों को उनके जीवन की वर्णमाला सिखा सकोगे। अपने बच्चों का परि-हास मत करो। यदि वे किसी मंदिर या संत-महात्मा के दर्शनार्थ जाना चाहें तो उन्हें साथ ले जाओ। उन्हें भजन और ध्यान के लिए उत्साहित करो। स्वयं भी ऐसे अवसरों पर जाओ। इस भ्रम को त्याग दो कि भजन ध्यान केवल बुढ़ापे के दिनों के लिए ही उपयुक्त कार्य हैं। यही क्षण सभी के लिए भजन ध्यान के लिए शुभतम है। कोई भी घड़ी इस कार्य के लिए जल्दी या समय से पूर्व नहीं कही जा सकती है। असत्य और गलत की सदैव भर्त्सना करो और सत्य, शुद्ध की प्रशंसा और समर्थन करो जब भी तुम्हें अपने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बच्चों में इन बातों का प्रारम्भ मात्र दीखे तो तुरंत समुचित प्रतिक्रिया करो; नहीं तो यह सब उनके स्वभाव में गहरे बैठ जावेंगे और तब परिवर्तन करना कठिन हो जावेगा। ऐसे अनेकों माता-पिता होते हैं जो अपने बच्चों के देखते देखते शराब पीते हैं, जुआ खेलते हैं और सफेद झूठ बोलते रहते हैं और इस प्रकार कोमलमति बालकों में कुसंस्कार के बीज बोते हैं, चरित्र बिगाड़ते हैं। जब पिता ही बच्चे से किसी मुलाकाती को यह कहलवाता है कि कह दो "पिता जी घर पर नहीं हैं" तो वह स्पष्ट रूप से बच्चे को बेईमानी की शिक्षा देता है।

उनके कोमल मस्तिष्क को अनावश्यक और अवाँछनीय सूचनाओं से मत भर दो। क्या इनमें से सभी सूचनायें उसके जीवन में कभी भी उपयोगी हो सकती हैं? इससे सत्य का रूप विकृत होता है। उनमें किसी जाति, वर्ग, धर्म, सभ्यता के प्रति विकारी भाव प्रारम्भ से ही मत भरो। बच्चों को दैनिक प्रार्थना करने का अभ्यास डालो। जब वे शय्या से उठें या दिन भर का काम निबटा कर सोने जावें तो प्रार्थना अवश्य करें। स्वयं भी करो। तुम देखोगे कि इससे शान्ति और संतोष में वृद्धि ही होती है। तुम इन्हीं बच्चों के लिए तो कठोर परिश्रम करते हो; जिससे ये चिन्ता मुक्त रहें। तुम अपने सुख-सुविधा का त्याग इन्हीं के भावी सुख-शान्तिमय जीवन के लिये करते हो। यह उद्देश्य तो उचित है परन्तु जीवन में सुख ही सर्वोपरि और एक मात्र वांछनीय नहीं है। क्या तुम भ्रातृत्व, सहनशीलता, सौम्यता, उदारता और दयालुता का व्यवहार करते हो? यही तो वह कवच हैं जो मन की शोक और कष्ट के बाणों से रक्षा करते हैं।

पहले माता-पिता, उसके बाद शिक्षकगण, तत्पश्चात खेल के अध्ययन के साथी और लाखों की श्रद्धा के पात्र नेता लोग, सदैव अपने मन में प्रश्न करते रहे कि क्या उनका आचरण और व्यवहार इस देश के कोमलमति बालकों के मन पर उचित प्रभाव डालने के योग्य होता है जिसका बच्चे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अनुकरण करें। इन्हीं से बच्चों के चरित्र का निर्माण होता है इसी से देश का भविष्य बन बिगड़ सकता है। बड़ों को शिक्षकों का आदर करना ही चाहिये जिससे बच्चे भी उनका सम्मान करें। जब अध्यापक तुम्हारे घर आवें तो उनका सम्मान करो। जिससे तुम्हारे बच्चे भी उनका सम्मान करें और आज्ञा पालन करें। इस व्यवहार से शिक्षक भी अपने को उस सम्मान के योग्य बनाने का प्रयत्न करेगा, अपने पद के गौरव को पहचानेगा। मेरे नाम से संयुक्त विद्यालय का इस सम्बंध में अन्य विद्यालयों से विशेष उत्तर-दायित्व है। इस विद्यालय को इस क्षेत्र के अन्य विद्यालयों को अपने व्यवहार से यह विशेष प्रेरणा देनी है कि वे भी अपने छात्र-छात्राओं को, नन्हें-मुन्नों को, अपेक्षित प्रेम और देख-रेख देवें, विद्यालय के वातावरण को दिव्य विचारों और भावनाओं से संयुक्त रखें।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

९ जप, भज,

(धर्म क्षेत्र, बम्बई १०-५-१९६९)

मुझे बतलाया गया है कि तुम लोग साधक हो, इसलिये तुम जिस साधन में रत हो उसके सम्बन्ध में कुछ वार्ता करने की मांग की गयी है। अच्छा, तत्वत: साधना है क्या ? यह 'उपवासम्' 'उपासना' है। 'उप' का अर्थ है समीप, निकट और 'वासम्' या 'आसना' का अर्थ है स्थिति या निवास करना। हम एक कूलर (शीतलतादायक यंत्र) के समीप शीतलता प्राप्त करने के लिए बैठते हैं। हम भगवान् के समीप भागवदीय सद्गुण प्राप्त करने के लिए बैठते हैं, दुर्गुणों को दूर करने के लिए भी उसी की शरण में जाते हैं। परन्तु कूलर की तरह भगवान् कोई बाह्य उपकरण या आयोजना मात्र नहीं है। वह तो अन्तर्यामी और घटघटवासी है जिसके अदृश्य आधार पर यह सब दृश्यमान् जगत चल रहा है। वह तो उस प्रच्छन्न अग्नि के समान है जो कि काष्ठ में विद्यमान् है। जब लकड़ी का एक टुकड़ा दूसरे टुकड़े से वेग से घिसा जाता है तो अग्नि प्रकट हो जाती है; यह अग्नि सम्पूर्ण वन को ही भस्म कर सकती है। सत्संग से तुम्हें अन्य आत्माओं का सान्निध्य प्राप्त होता है जो उसी वृत्ति के होते हैं उनके सम्पर्क से अन्तर का 'भगवान्' प्रकट हो जाता है।

सत्संग का अर्थ है सत् से भेंट करना। भगवान् का वर्णन भी तो सत् चित्त और आनन्द रूप में किया जाता है; यह सत् उसी भगवान् के एक गुण से सम्बन्धित होता है यह अस्तित्व का बोध कराने वाला है, वही तो इस विश्व ब्रह्माण्ड का आधार स्थिति है। तुममें जो सत् है उसी से संयुक्त होओ। अज्ञानी लोग उसी सत् के आधार पर मिथ्या की भित्ति खड़ी करते हैं। सत्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

में स्थित होने से (सत्संग करने से) ज्योति (ज्ञान) जग जाती है, प्रकाश हो जाता है; अँधेरा दूर भाग जाता है; ज्ञान रूपी सूर्य उदय हो जाता है; आत्म-साक्षात्कार प्राप्त हो जाता है।

जब नीचे की चट्टान कठोर होती है तो तुम्हें आर नीचे खोदने पर नीचे बहने वाली अजस्त्र जलधारा की प्राप्ति होती है। यदि भीतर की पर्तें मुलायम होती हैं तो सफलता भी शीघ्र प्राप्त होती है। अपने हृदय को कोमल बना लो तो साधना में शीघ्रता से सफलता प्राप्त होगी। मृदु ढंग से बोलो, मीठी वार्ता करो, केवल ईश्वर विषयक वार्ता करो—अन्तस्तरा को मृदु करने का यही ढंग होता है। सहानुभूति और दयाभाव की वृद्धि करो, सेवा कार्यों में सहयोग करो। निर्धनता, बीमारी, संकट और निराशा के कष्टों को समझने की चेष्टा करो। दूसरों के आँसुओं और मुस्कराहटों में समान भागी बनने का अभ्यास करो। हृदय को कोमल बनाने का और साधना को सफल करने का यही ढंग होता हैं। सत्संग करना शुद्ध निर्मल जल पीने के समान होता है। दुस्संग (कुसंग), दुष्टों, अभक्तों, अशुद्ध व्यक्तियों और मूर्खों का साथ समुद्र के खारी जल पीने के समान होता है; इसमें कितनी भी चीनी मिला लो फिर भी यह सुस्वाद पेय नहीं बन सकता। इससे प्यास बढ़ती ही जाती है। गीता में कृष्ण को योगेश्वर कहा गया है। इसका क्या अर्थ है? पातंजलि ने योग की परिभाषा करते हुए उसे चित्त की वृत्तियों का निरोध करना बताया है। योगश्चित्तवृत्ति निरोधः। अर्थात् मन और अन्तःकरण की उथल-पुथल को संयमित करके शांत करना। यदि इच्छाओं की आंधी से तरंगायित मन को शान्त, स्थिर किया जा सके तो ऐसा कर सकने वाला योगी कहलाता है और भगवान् भी इसीलिये योगेश्वर है क्योंकि वे महासागर होते हुए उत्ताल तरंगों और क्षोभों से रहित है। काले नाग के उन्नत फनों पर कृष्ण ने नृत्य किया था और उसे बाध्य करके विष का वमन कराकर निर्विष, निरापद कर दिया था। यह दूसरे प्रकार से वही बात कहना है कि उन्होंने ऐन्द्रिक कामनाओं को उनके विषाक्त, दूषित प्रभाव से रहित बना दिया था।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इस प्रकार का योग, योगेश्वर पद प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन है। केवल श्वास निरोध नहीं बल्कि इच्छाओं का शमन ही उपयुक्त साधन है।

अनेकत्व भाव (विविध सत्ताओं की चेतना) से ऊपर उठो और एकत्व भाव में स्थित होओ। इससे संघर्ष, शोक, दर्द और अहंकार की समाप्ति होगी। सभी में उसी एक की सत्ता के दर्शन करो, विविधता तो केवल ऊपरी सतह पर है; जैसे कि एक ही विद्युतधारा से नाना प्रकार के छोटे बड़े और अनेक रंगों के बल्ब जल उठते हैं जिनकी प्रकाश शक्ति भिन्न-भिन्न होती है।

कल्पना करो कि तुम और वे साथ-साथ वार्ता कर सकते हो, टहल सकते हो, सोच सकते हो और साथ-साथ कार्य भी कर सकते हो क्योंकि सभी के अन्दर एक ही भगवान् स्थित है। जब तुम दृष्टिपात करते हो तो जो अन्तर दिखाई देता है वह भ्रांति है। तुमने अभी उस दृष्टि को विकसित नहीं किया है जिससे कि एकत्व के दर्शन हो सकते हैं। इस प्रतीयमान विविधता में एकत्व ही वास्तविक सत्य है। यह त्रुटि तो तुम्हारे में ही है; न कि दुनियाँ में। दुनियां तो एक ही है परन्तु प्रत्येक इसे अपने दृष्टिकोण से देखता है इसीलिये यह ऐसी दिखाई देती है मानो इसके अनेकों पहलू (पार्श्व) हों।

जपमाला भी तुम्हें एकत्व का बोध कराती है, यद्यपि इसमें १०८ दानें होते हैं। यदि यह स्फटिक की माला है तो तुम इन दानों के मध्य से होकर जाने वाले धागे को भी देख सकते हो, वही आन्तरिक सत्ता है जिस पर सभी दाने पिरोये हुए हैं। यदि दाने पारदर्शी नहीं है; फिर भी तो तुम्हें ज्ञान है कि सभी दानों में से होकर जाने वाला, उनको एकत्र रखने वाला, और माला की एकता का आधार सूत्र एक ही है। यह दाने १०८ ही क्यों होते हैं? १०८ की संख्या १२ को ९ से गुणा करने से प्राप्त होती है। बारह आदित्य (सूर्य) होते हैं जिनके प्रकाश में इस विश्व के समस्त पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं। साकार, व्यक्त, विश्व के यह प्रतीक जिनके अनेक नाम रूप है (यह सब

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

परिवर्तन शील और नश्वर हैं) ९ तो दृश्यपट है जिस पर यह सब चित्र उभरते हैं, यही तो वह आधार है जिसमें रस्सी भी अंधेरे में सर्प प्रतीत होने लगती है। निर्गुण, निराकार उपाधि रहित ब्रह्म ही ९ का अंक है वही ब्रह्म का प्रतीक है क्योंकि इस का रूप इसके सभी गुणनफलों(१८,२७,३६,८१ इत्यादि में) में वही ९ का ९ बना रहता है। यह अपरिवर्त्तन शील रहता है। क्योंकि ९ को किसी भी संख्या से गुणा करें और गुणनफल के अंकों को जोड़ कर देखने से अंत में ९ ही प्राप्त होता है। इसीलिये तुम जब माला के दानों को जप में आगे बढ़ाते हो तो स्मरण रक्खो कि यद्यपि संसार में विविधता और एकता, सत्य और असत्य दोनों हैं। यह कि असत्य यानी मिथ्या आकर्षित करती है; प्रतिकर्षित करती है और तुम्हें भ्रमित भी करती है; तुम्हें सत्य पथ से विचलित करती है; जबकि सत्य तुम्हें मुक्त करता है।

अब माला फेरने के संबंध में सुनो। सबसे पहले उंगलियों के प्रतीक का अर्थ जानो। अंगूठा ब्रह्म का प्रतीक है वह जो कि शाश्वत, निरपेक्ष और व्यापक सर्वाधार है। तर्जनी जो इस, उस, का संकेत करती है वह जीव का प्रतीक है वही व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करती है; व्यक्ति, वह जो अपने को औरों से पृथक, स्पष्टतः एक इकाई अनुभव करता है। जब इन दोनों अंगूठा और तर्जनी को पोरों से मिलाया जाता है, तो उस स्थिति को 'ज्ञानमुद्रा' कहते हैं। यह बुद्धि का, क्योंकि जीव का ब्रह्म से संयुक्त होना ही बुद्धिमत्ता का कार्य है, संकेत चिन्ह है। जो यह अनुभव करता है कि पार्थक्य हुआ था उसी का तो इस प्रकार लय होना प्रदर्शित किया जाता है। अन्य तीनों उंगलियाँ प्रकृति की प्रतीक हैं जब लय होता है तो प्रकृति का अस्तित्व भी निषेधित रहता है। ये तीन उंगलियाँ, सत्व, रजोगुण और तमोगुण की; जिनके परस्पर क्रीड़ा करने (गुणा गुणेषुवर्तन्ते) से यह ऐन्द्रजालवत् दृश्यमान जगत भासित होता है, प्रतीक हैं।

माला को इस प्रकार पकड़ो कि वह मध्य वाली उंगली के ऊपर रहे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर तीनों गुणों की प्रतीक उंगलियाँ इकट्ठी रहे। इसका तात्पर्य यह है कि ग्रब तुम नाम रूप त्रिगुणात्मक विश्व से ऊपर उठकर एकत्व के ज्ञान में प्रवेश कर रहे हो। जीव उंगली (तर्जनी) एक-एक करके दोनों को ब्रह्म (अंगूठे) की ग्रोर ठेलती रहे ग्रौर उसे स्पर्श भी करती जावे, ताकि प्रत्येक दाने की गति के साथ-साथ 'लय' क्रिया परिलक्षित होती रहे। जिस समय उँगलियाँ इस क्रियात्मक पाठ को सीखें, जिह्वा मंत्र या भगवन्नाम का जाप ऊँकार सहित करती रहे। प्रारंभिक ग्रवस्था में साधकों के लिये जपमाला का बड़ा महत्त्व है। परन्तु अभ्यास हो जाने पर श्वास के साथ ही जप चलना चाहिये तब दानों को आगे बढ़ाते जाना एक फालतू ग्रौर ग्रनावश्यक क्रिया हो जाती है जिसमें साधक की कोई रुचि नहीं रह जाती है। सर्वदा सर्व कालेषु चिन्तयते हरिम्। सभी स्थानों पर सब समय भगवान् का ध्यान करते रहना चाहिये। इस स्थिति तक जपमाला तुम्हें पहुंचा दे। तुम्हें इससे सदा नहीं चिपके रहना है। यह तो एकाग्रता की सहायक ग्रौर ध्यान को व्यवस्थित रखने का उपाय मात्र है। जब तैरना सीख लिया तो तैराने वाली लौकी या पेटिका की क्या ग्रावश्यकता रह जाती है; उसे तो त्याग ही देना चाहिये; ग्रौर इसी प्रकार वैसाखियों को भी; जब चलना ग्रा जावे तब।

प्रारंभ में जितने घंटे जप को देना है नियमित रूप से देते रहो। रविवार को, जब कि कार्यालय या बाजार जाने की जल्दी न हो, ९ बजे पूर्वान्ह तक जप करते रहा करो। इसे स्वेच्छा से और स्वाभाविक रूप से करो, प्रेम ग्रौर उत्साह पूर्वक करो। यह तो तुम्हारी प्रकृति या स्वभाव ही बन जावे। निस्सन्देह गुरुकृपा से बड़ी सहायता प्राप्त होती है। विवेकानन्द तो नास्तिक ग्रौर ग्रनीश्वरवाद की ग्रोर ग्रपने ग्रध्ययन के साथ-साथ बढ़ रहे थे; परन्तु रामकृष्ण के एक ही स्पर्श से वे पूर्णतया बदल गये। ग्रपने प्रयास ग्रौर प्रार्थना से तुम भी यह गुरु कृपा प्राप्त कर सकते हो।

एक बात ग्रौर। ध्यान प्रारंभ करने से पूर्व 'सोऽहम्' का उच्चारण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करो। स्वाँस अंदर लेते समय 'सो' का श्रौर बाहर निकालते समय 'हम्' का। एक नथुने से श्वाँस अन्दर जावे और दूसरे से बाहर निकाली जावे। 'सोऽहम्' का अर्थ है 'वह मैं हूं'। यह तुम्हें असीम अपरिमित ब्रह्म से संयुक्त करता है; तुम्हारी चेतना का विस्तार होता है। अपने विचार और श्वाँस क्रिया का समन्वय कर लो। स्वाभाविक रूप से धीरे-धीरे श्वाँस लो; इसे अप्राकृतिक न बनाओ और न प्रयासपूर्ण रहे। यह निःशब्द ढंग से अन्दर जावे और बाहर निकले सारी क्रिया बिना किसी प्रयास या तनाव के होवे, यहां तक कि यदि तुम्हारी हथेली पर थोड़ा सा आटा होवे तो वह रंचमात्र भी उड़कर तितर-बितर न हो, श्वाँस इतनी शान्ति से आवे जावे। जितना शीघ्र श्वाँस लोगे उतना ही शीघ्र तुम्हारे अन्दर ज्वलन क्रिया होगी, जीवनावधि छोटी होती जावेगी। धीमी श्वाँस क्रिया शान्तिदायक होती है और उद्वेगों को शान्त करने वाली होती है। इस 'सोऽहम्' उच्चारण से जो सहज, तनावरहित स्थिति, उत्पन्न होती है वह ध्यान के लिये बड़ी उपयोगी ही नहीं आवश्यक भी होती है।

इस स्वाभाविक सहज स्थिति के लिये अन्य बातें भी आवश्यक होती हैं। अपने मन में घृणा रूपी कण्टक न रहने दो, सभी के प्रति प्रेम का विकास करो। कामना तो एक तूफान है, लोभ चक्रवात है, अभिमान खड़ा ढाल है, आसक्ति पहाड़ से फिसलती हुई बर्फ की एक महान शिलाखण्ड के समान है, गर्व ज्वालामुखी है। इनको दूर ही रक्खो, ताकि तुम जब जप करो तो तुम्हारी शान्ति न भंग हो। तुम्हारे हृदय की गद्दी पर प्रेम का अधिकार रहे। तब वहाँ सूर्योदय होगा और शीतल वायु चलेगी, सन्तोष का निर्भर बहेगा जिससे निष्ठा और विश्वास की जड़ें सिंचित होंगी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१० मत और सभ्यता

(धर्म क्षेत्र, बम्बई १२-५-१९६९)

सत्य और धर्म का सनातन धर्म के मूल तत्त्वों में प्रमुख स्थान है। यह सभी संतों की शिक्षा का सार और सभी धर्मों के लक्ष्य हैं, सभी साधकों ने इन्हें प्राप्त करने की साधना की। यह सभी धर्म शास्त्रों की अन्तरवाहिनी धारा है। आत्म-तत्त्व का जो पाठ गीता पढ़ाती है उसी से ये तत्व उद्भूत होते हैं। गीता उपनिषदों का सार है, वेदान्त है। धर्म क्षेत्र के उद्घाटन की वर्ष गांठ मनाने के दिन इन सब का स्मरण कराना आवश्यक है। वेदान्त 'ईशावास्यमिदं सर्वम्' की घोषणा करता है। चूंकि यह सब ईश्वर से व्याप्त है तो कोई कैसे किसी को धोका दे सकता है या घृणा कर सकता है? सभी धर्मों में जिन नियम संयम की व्यवस्था की गयी है उनका दैनिक जीवन में यही महत्त्व है कि लोग इस महान् सत्य ईश्वर की व्यापकता से अवगत होवें।

सत्य, धर्म, सभी धर्मों के दोनों नेत्रों के समान हैं। इन्हें सनातन धर्म, बुद्धधर्म, ईसाईधर्म और इस्लाम धर्म भी महत्त्व देते हैं। भारत के महा-काव्यों और पुराणों में इनकी व्याख्या भरी पड़ी है। राम बन को गये वहां उन्होंने सत्य के पालन के लिये नानाविधि कष्ट सहे। राजधानी से निकल कर पाण्डव स्वेच्छा से वन-वन इसी लिये भटके, अपमान सहे कि जिससे कि सत्य की रक्षा हो सम्मान हो। हरिश्चन्द्र ने तो अपमान और शोक की पराकाष्ठा को भी सह डाला परन्तु सत्य से नहीं डिगे। ड्रामा, कविता, मूर्ति, गीतों, चित्रों द्वारा इस तथ्य को इस देश के स्त्री-पुरुषों बच्चों के सम्मुख प्रदर्शित करते हुये अनन्त काल बीत चुका है। वे तो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इस देश के स्त्री-पुरुषों के लिये प्रकाश-स्तंभ, आदर्श और उन्नत जीवन के लिये स्थायी प्रेरणा के स्रोत बने हुये हैं। फिर भी आधुनिक भारत के बच्चे पाश्चात्य देशों द्वारा भौतिक क्षेत्र की वैज्ञानिक और प्राविधिक उपलब्धियों से, यद्यपि वे हल्की-फुल्की और दिखावटी हैं, चमत्कृत हो रहे हैं। अंतरिक्ष की उड़ान और चन्द्र-अभियान का महत्त्व अन्तर्जगत और मनोदेश की यात्रा, इच्छाओं का शयन, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, मोह, लोभ रहित होकर प्रेमपूर्ण होने के समक्ष कुछ भी नहीं है।

महाभारत काव्य के अमरनायक पाण्डवों की ओर तो देखो; व्यास ने उनकी कीर्ति अमर कर दी है। सबसे जेठे धर्मराज धर्म के पुत्र थे। द्वितीय पाण्डव महावली वायु पुत्र भीम थे; जिनकी गदा-युद्ध की कला अद्वितीय थी। तृतीय पाण्डव अर्जुन अपने युग के सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर थे। फिर भी ये दोनों ही धर्मराज के संकेत मात्र का पालन करते थे क्योंकि शक्ति को न्याय के समक्ष झुकना ही चाहिये। आधुनिक व्याख्या करें तो कहना पड़ेगा कि अमरीका अर्जुन और रूस भीम के समान शक्तिशाली हैं दोनों को धर्मराज भारत के समक्ष झुकना चाहिये जो कि सदा न्याय का पक्ष लेता है और शक्ति से प्रभावित नहीं होता है चाहे वह शक्ति शास्त्रों की हो या धन की हो। फिर यह कैसी विडम्बना की बात है कि हम, जिन्हें समस्त संसार का धर्म न्याय में नेतृत्व करना है, स्वयं इस मार्ग पर शिथिल-विश्वास होते जा रहे हैं और पथभ्रष्ट होकर शक्ति और शस्त्रबल की कोलाहलपूर्ण ऊबड़ खावड़ भूमि की ओर दौड़े जा रहे हैं।

भारत अन्य पाठ भी पढ़ाने में समर्थ है। आओ, धर्मराज अर्जुन भीम के शत्रुओं की ओर भी दृष्टिपात करें। वह ताऊ, जो चचेरे भाइयों (कौरवों) और उनके कुचक्री साथी शकुनि और कर्ण का नेतृत्व कर रहे थे वे अंधे शासक धृतराष्ट्र थे। उन्हें तो दिखाई ही नही देता था, वह दृष्टि तो न्यायी को ही प्राप्त होती है। वह तो अन्धे थे अर्थात् अज्ञानी थे; उन्हें मानव की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अयोग्यता और भगवान् की सर्वशक्तिमत्ता का बोध न था। अपनी सैनिक तैयारी की कमी को पाण्डवों ने अपने बढ़े हुये विश्वास (भगवान् की सर्व-शक्तिमत्तायें) और अपनी असमर्थता की स्वीकृति से पूरा कर लिया था। इसलिये युद्ध क्षेत्र में स्वयं भगवान् ने उनका नेतृत्व किया। और पराजय के मुख में से उनका उद्धार कर विजयोपहार दिलवा दिया।

ज्ञान से आलोकित कर्म से सफलता प्राप्त होती है। यह ज्ञान कि एकमेव भगवान् ही सर्वस्व है, इसी से भगवत्कृपा की प्राप्ति हो सकती है। बन्धनों से मुक्ति प्राप्त कराने के लिये आत्म समर्पण साधना का प्रथम चरण होता है। धृतराष्ट्र अंधे होने पर भी राष्ट्र के सूत्रधर बने हुये थे। सभी वस्तुओं, वैभवों से चिपके हुये थे जो कि अनात्म थीं। वह आत्मा जो जन्म मृत्यु में से होकर जाता है, पुनः पुनः यही अनुभव दोहराता है, यह ज्ञान धृतराष्ट्र को न था। वह हर वस्तु जो 'तुम' नहीं हो, एक पदार्थ है, यात्रा का संबल है अतः यह जितना कम रहे यात्रा भी उतनी अधिक सुखदायक रहेगी।

नक्शे में धर्मक्षेत्र और कुरुक्षेत्र की खोज दिल्ली या हस्तिनापुर के इर्द गिर्द नहीं करनी चाहिये। इसी प्रकार भ्रातृनाशक युद्ध में रत कौरव और पाण्डव कोई दो राजपूत जातियाँ ही नहीं हैं, यदि तुम कुछ भी गम्भीरता से महाभारत का अध्ययन करो तो यह तथ्य स्पष्ट हो जावेगा। गीता के १३ वें अध्याय में मानव शरीर को ही क्षेत्र की संज्ञा दी गई है इसी प्रकार धर्म क्षेत्र भी सभी में है। जब शरीर का स्वामी पूर्णतः कामना रहित हो जाता है, सभी उद्वेगों और इन्द्रियभोगों में आसक्तियों से रहित सभी उत्तेजनाओं और मनोविकारों से रहित हो जाता है तो उसका शरीर धर्म क्षेत्र हो जाता है। केवल एक बच्चे का ही हृदय धर्मक्षेत्र होता है क्योंकि अभी तक उसमें ऐन्द्रिक भोगासक्तियाँ उत्पन्न ही नहीं हुयी हैं। उसे जो कुछ दिया जाता है उसे वह स्वीकार करता है। उसका अहंकार इस विविधतापूर्ण दुनियां में विभक्त होकर वस्तुओं से संयुक्त नहीं हुआ है। परन्तु बाद में जब इसमें शाखा-प्रशाखायें

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

फूट निकलती हैं पत्त और ऊपरी हरियाली विकसित हो जाती है तो वही धर्म क्षेत्र कुरुक्षेत्र का रूप बन जाता है—युद्ध क्षेत्र बन जाता है जहाँ मन आशा निराशा के बीच संघर्ष करता है और अपने कर्मों के विविध स्वाद वाले कटु मधुर फलों का आस्वादन वाध्य होकर करता है।

आत्मा का वर्णन 'विद्युल्लेख' प्रकाश की एक रेखा, करोड़ों सूर्य के आलोक वाली रेखा, के रूप में किया गया है। स्वय 'गीता' शब्द का भी यही अर्थ है। इसीलिये हममें 'विद्युल्लेख' रूप में कृष्ण ही विद्यमान हैं। इस प्रकार हममें गीता है। आत्मा ही ईश्वर के रूप में सदा हमें सत्परामर्श देती है और अन्तर्यामी भगवान् के रूप में हमें सुधारती रहती है।

ऐसा कहा जा चुका है कि धर्मक्षेत्र का विकास साधकों और जिज्ञासुओं के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र के रूप में किया जा रहा है जो कि सनातन धर्म के जीवनादर्श को जानने और मानने को उत्सुक हैं। भारत में ऐसे मन्दिरों और संस्थाओं की कमी नहीं है जो तीर्थयात्रियों को भगवान् तक पथ-प्रदर्शन करने का दावा रखते हैं। पुस्तकालय में केवल वे ही लोग एकत्र होंगे जो पुस्तकों के अध्ययन में रुचि रखते हैं। भोजनालय में एक खूराक भोजन की आकांक्षा रखने वाले पधारते हैं। औषधालय में रोगी ही आते हैं; परन्तु देवालय या भगवान् के मन्दिर में आज हमें न तो भगवान् के दर्शन होते हैं और न भक्तों का कहीं पता चलता है। यही एक ऐसा भवन है जहाँ का वैध स्वामी अपने स्वत्व से अनुपस्थित है। भारतीय संस्कृति के प्रचार और प्रसार के लिये ये मन्दिर ही तो केन्द्र थे। जब पाश्चात्य सभ्यता का आकर्षण वलवान हो गया तो ये मन्दिर निर्जन हो गये और काल के थपेड़ों से नष्ट होने लगे।

आज हर वस्तु अमरीकन दृष्टि से देखी जाती है उसी मापदण्ड से मूल्यांकित की जाती है। अमरीकी कान हमारे लिये सुनने का कार्य करते हैं। घटनाओं और वस्तुओं के प्रति हमारी प्रतिक्रिया क्या हो इसे आज अमरीका

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अनुभव करता है, कल्पना करता है और मूर्तरूप देता है। यह ठीक है कि हमें दूसरों से शिक्षा ग्रहण करने के लिये सदैव तत्पर रहना चाहिये इससे लाभ ही होता है, न कि हम हर अनुभव को स्वयं दोहराते हुए ज्ञानार्जन की लम्बी यात्रा करें। परन्तु इस भूमि पर युगों युगों के परीक्षण और अभ्यास से जिस संस्कृति का विकास हुआ है उसे भी तो यों ही न ठुकरा देना चाहिए। तुम्हारे पूर्वजों ने इसे अपने प्रेम से, त्याग तपस्या से, तुम्हारे ही लाभ के लिये पुष्ट किया है।

अमेरिकी संस्कृति भारत के लिए किस प्रकार लाभप्रद और सुगम हो सकती है? अथवा अन्य किसी देश की संस्कृति ही? इस समय सायंकालीन साढ़े सात बजे का समय है। यदि तुम अपने मित्र को, जो अमरीका में हो, फोन करो कि "अब मैं सिनेमा देखने जा रहा हूं!" तो वह भी उत्तर देगा कि "यहां भी साढ़े सात बजे हैं और अब मैं प्रातराश करने जा रहा हूं!" यहाँ जब प्रातःकाल होता है तो वहाँ सायंकाल होता है जब सूर्य यहां अस्त होता है तो वहां उदय होता है। समय, जलवायु, हरीतिमा और स्वभाव, आदर्श, भाषा के सूक्ष्म भाव, लोकाचार, उस देश का इतिहास, सभी कुछ भिन्न प्रकार का है। इसलिये अन्धानुकरण से शान्ति, जो सत्कर्मों से प्राप्त होती है खो दी जावेगी। इस देश के लोगों को जिस प्रकार से शान्ति प्राप्त होती रही है उसी प्रकार से प्राप्त होगी क्योंकि उसके पीछे शताब्दियों का अनुभव, अन्वेषण और निरीक्षण का बल है खूब परीक्षण करके भी देखा जा चुका है। भारतीय संस्कृति में उन्हीं न्याययुक्त ढंग और क्रियाओं पर आग्रह किया गया है जिनमें मानव शक्ति और धन दीन-दुखियों की सेवा और परोपकार में व्यय करता है; भूखों, अशिक्षितों, गृहविहीन और वस्त्रहीनों के कष्ट दूर करता है। यहां शक्ति और धन का अपव्यय, वैभव प्रदर्शन, बदला लेने या प्रतिद्वन्दिता करने और जड़-भौतिक विजयों को प्राप्त करने में निन्दनीय ठहराया गया है। प्रतापभानु राजा का उपाख्यान इस पतन का जीता-जागता ज्वलंत प्रमाण है। धन तो एक धरोहर होती है जिसका

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सदुपयोग मानवों में भ्रातृत्व भावना और भगवान् की पितृत्व भावना को उन्नत बनाने के लिए किया जाना चाहिये। यह संस्कृति यह भी शिक्षा देती है कि किसी के आत्मविषयक और परमात्मविषयक विश्वास को घटाने का कोई प्रयास नहीं करना चाहिये। विश्वास एक कोमल पौधा होता है, इसे तो जितना ही आप पुष्ट कर सकें सींच कर बड़ा कर सकें, करें। मेरी इच्छा है कि तुम किसी भी धर्म की निन्दा या खण्डन न करो। आपस में भ्रातृभाव की वृद्धि करो क्योंकि ईश्वर, अनेक नहीं, एक ही है जो सभी का है। प्रेम भी एक ही है, यह जाति रंग, मतमतान्तर, वर्ग सभी भेदों से ऊपर उठ जाता है; बशर्ते हो सच्चा प्रेम। सत्य भी एक है, दो सत्य नहीं हो सकते। क्योंकि, दो सत्य भी दो बार घटित होकर एक ही तो होते हैं। लक्ष्य भी एक ही है क्योंकि सभी मार्ग उसी एक भगवान् तक पहुँचाने वाले होते हैं। फिर मनुष्य शाश्वत् और निरपेक्ष ब्रह्म के लिये क्यों झगड़ा और विवाद करे।

धर्मक्षेत्र का एक महान कार्य सम्पादन करना है। यह बम्बई में है जो भारत का उदर है। हिमालय मस्तक है, कन्याकुमारी चरण है। यदि उदर अक्षम होता है तो उसका दुष्परिणाम समस्त शरीर को भोगना पड़ता है। इसलिये धर्मक्षेत्र को सक्षम, दक्ष और दृढ़ रक्खो। इसका पतन होकर कुरुक्षेत्र न बनने पावे। यहां संघर्ष, झगड़े, और विवाद न उत्पन्न होने पावें। धर्म के उच्च आदर्शों का यहां पालन किया जावे। यही वास्तविक सेवा है जिसकी अपेक्षा मैं आप से आपके माध्यम से करता हूं। यदि इतना हो जाता है तो हमारे देश में शान्ति और सुरक्षा बनी रहेगी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

११ 'इसमें' नकि 'इसका'

(अहमदाबाद १५-५-१९६९)

इस विशाल जनसमुदाय की भीड़ में अनेक भाषा भाषी लोग सम्मिलित हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही भाषा समझ सकता है और चाहता है कि उसके लिये वही भाषा बोली जावे। परन्तु एक हृदय की भी भाषा होती है जिसे सब कोई समझ लेते हैं और सुनना पसंद करते हैं। मैं वही भाषा बोलता हूँ वह भाषा मेरे हृदय से निकल कर सीधे ही तुम्हारे हृदय में प्रवेश कर जाती है। जब हृदय से हृदय बोलता है तो प्रेम ही का आदान-प्रदान होता है। वहाँ कोई संकोच या सीमा नहीं होती है। परीक्षण और परेशानी, रोमांच और कंपन, दुख और अन्वेषण यह सभी मानवों को समान अनुभव प्रदान करते हैं। प्रतिवेदनशील हृदय इन्हें सहानुभूतिपूर्वक श्रवण करता है और प्रेम से उत्तर देता है।

प्रत्येक ही प्रसन्नता अनुभव करने के लिये आतुर है। वह सोचता है कि अधिक से अधिक की इच्छा करने से और कम से कम काम करने से मनुष्य शीघ्रातिशीघ्र प्रसन्न हो पाता है। दूसरे ढंग अर्थात् कम से कम की इच्छा करना और अधिक से अधिक काम करना, को तो आजमाना ही कोई नहीं चाहता है। प्रत्येक इच्छा एक बंधन है और गति को रोकने वाली हैं, वह तो पैरों में पड़ा एक अवरोध है। एक तरुण विद्यार्थी अपनी दो टाँगों से स्वतंत्रता पूर्वक चल फिर सकता है। जब उसका विवाह हो जाता है तो वह चतुष्पाद हो जाता है बच्चा हो जाने पर षटपदीय हो जाता है और उसकी गतिशीलता की सीमा और अधिक संकुचित होती जाती है। जितने अधिक चरण बढ़ते जाते हैं उतनी ही कमी गति में होती जाती है; वह दृढ़ता से भूमि को पकड़े रहता है। कनखजूरे को, जिसके १००

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चरण होते हैं, रेंगना पड़ता है। वस्तुओं का बाहुल्य, विघ्न बाधाओं के बाहुल्य का कार्य करता है। सोफा, कुर्सियों, चारपाइयों, मेंजों अलमारियों और विचित्र वस्तुओं का संग्रह हाल को भर देते हैं, उस दशा में वहां चहल कदमी बड़ी सावधानी से और धीरे धीरे करनी पड़ती है। आवश्यकताओं को घटाओ, सादा जीवन अपनाओ, प्रसन्नता को यही सड़क जाती है। आसक्ति से ही विपत्ति आती है और अन्त में जब मृत्यु, सर्वस्व त्याग, की वेला उपस्थित करती है तो तुम शोकार्त होकर क्रंदन करने लगते हो। जल में स्थित कमल वत् हो जाओ, 'इसमें' तो रहो परन्तु 'इसके' होकर न रहो। कमल के विकास के लिये जल आवश्यक है परन्तु, वह इसके एक बिन्दु से भी लिप्त नहीं होता है, गीला नहीं होता है। यह स्थूल पार्थिव जगत गुणों का क्रीड़ास्थल और आत्मा के लिये व्यायाम शाला है। इसे इसी उद्देश्य के लिये प्रयोग करना चाहिए, इसकी पदोन्नति मत करो न इसकी उपासना करने लग जाओ कि यही सबसे महत्त्वपूर्ण है।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कहते फिरते हैं कि ईश्वर का कोई अस्तित्व नहीं है क्योंकि वह उन्हें नहीं दिखाई देता है। वे कहते हैं कि भगवान् को उन्होंने अंतरिक्ष में खोजा, चाँद पर जाकर देखा, मार्ग में देखा परन्तु उस सर्वशक्तिमान् का कहीं कोई चिन्ह भी न मिला। परन्तु वे स्वयं ही 'उस' के विशाल भवन हैं और वैसे ही सभी समय रहते हैं कि जिस भवन में वह भगवान् निवास करता है। जिस प्रकार एक अंधा दूसरे अंधे को चकमा देकर गर्त में गिरा दे; इसी प्रकार अन्य लोग भी इस "फैशनेबिल नारे" को बिना समझे ही प्रयोग करते रहते हैं। जड़ों पर गहराई में कोई दृष्टि नहीं डालता फिर भी मिट्टी के अन्दर गहराई में जड़ें होती ही हैं जहाँ आँख नहीं पहुंच पाती है। क्या तुम साहसपूर्वक कह सकते हो कि वृक्षों के न तो जड़ें होती हैं और न उन्हें कोई भोजन देता है या पकड़े रहता है? ईश्वर ही अदृश्य रह कर उन्हें भोजन देता है स्थिर रखता है और दृढ़ता से पकड़े रहता है। जो प्रयास करते हैं वे ही उसे देख भी पाते हैं। जो इस कार्य में सफल हो चुके हैं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उन्होंने अपने अनुभव से ईश्वरदर्शन का मार्ग भी बतलाया है। जैसे दूध में मक्खन होता है परन्तु बिना पकाये, जमाये बिलोये दिखाई नहीं देता है। इसी प्रकार समुचित साधना किये बिना भगवान् के दर्शन भी नहीं हो सकते हैं।

एक आकाशचुम्बी अनेक मंजिल वाली बिल्डिंग की नींव तुम्हें नहीं दिखाई देती है। क्या तुम यह कुतर्क कर सकते हो कि यह तो भूमि पर यों ही रक्खी है ? वर्तमान जीवन की जड़ें अनेक भूतकालीन जीवनों तक गयी हुयी हैं। उन्हीं जीवनों के आधार पर वर्तमान जीवन का ढांचा खड़ा है। वह अदृश्य ही इसके मोड़ और अंत को निर्णय करता है, यह भी निर्णय करता है कि इसमें कितनी मंजिलें हों, किस ऊंचाई तक ऊपर उठे और यह कितना भार वहन करने में समर्थ है।

ईश्वर ही वह महान अदृश्य और अज्ञेय है। वृक्ष की जड़ों को बिना देखे ही और बिना यह जाने कि उनका विस्तार चारों ओर अथवा नीचे कहां तक है तुम वृक्ष के तने को सींचते हो जिससे कि वह वहाँ तक पहुंच जावे, है न ऐसी बात ? तुम आशा करते हो कि जल जड़ों तक पहुंचेगा और वृक्ष में फल आवेंगे। सीधे तौर पर यह पहचान लो, मान लो कि भगवान् है वहीं इस सृष्टि का आधार है। उसे प्रार्थना रूपी जल अर्पित करो उसकी कृपा रूपी फल प्राप्त होंगे।

दुनियाँ के आकर्षणों से मुक्ति पाने और भगवान् से संयुक्त होने के प्रमुख साधन त्याग और योग हैं। काम (इच्छाओं) से त्याग के द्वारा छुटकारा प्राप्त करो, राम को योग द्वारा प्राप्त करो। योग का अर्थ है अपने सभी गुणों क्षमताओं और वृत्तियों को एक भगवान् में ही केन्द्रित करना। इच्छायें बुद्धि को मलिन कर देती हैं, विवेक को विकृत कर देती हैं, इन्द्रियों की बुभुक्षाओं को प्रखर कर देती हैं। यह बाह्य दृश्यमान जगत में एक मिथ्या आकर्षण उत्पन्न कर देती हैं। जब इच्छाओं का उन्मूलन कर दिया जाता है अथवा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उन्हें भगवान् को समर्पित कर दिया जाता है, तो बुद्धि जो स्वयं प्रकाशवान् है वह अपने निर्मल स्वच्छ आलोक को विकीर्ण करने लगती है और तब अंत-स्तल में भगवान् तथा बाहर भी भगवान् ही दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम जिस साधना में संलग्न हो, वह सफल हो। यदि तुम इस समय कोई साधना नहीं कर रहे हो तो मेरा परामर्श है कि तुम केवल नामस्मरण को ही करने लगो। अपने माता-पिता, गुरुजनों और बड़ों का सम्मान करने लगो, बीमार और दीन दुखियों की सेवा करने लगो। उनमें से प्रत्येक को अपना इष्टदेव समझकर सेवा करो। इससे तुम्हारा हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो जावेगा तुम्हारे विचार दृढ़ और चित्त में शान्ति प्राप्त होवेगी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१२ जिह्वा की कहानी

(धर्म क्षेत्र, बम्बई १६-५-१९६९)

तुम सब विद्यालय में हो, पुस्तकें अध्ययन कर रहे हो, कक्षा में शिक्षा पा रहे हो, और तुम सब कहते हो "हम विद्यार्थी हैं"। क्योंकि तुम अध्ययन कर रहे हो, और तुम्हारे अध्ययन के अनेक विषय हैं। इस अध्ययन से तुम्हें कुछ काम पाने में, नौकरी पाने में, जब काफी सयाने हो जाओगे, सहायता मिलेगी। तुम स्वास्थ्य के नियमों की शिक्षा प्राप्त करते हो, तुम अपने शरीर को सुदृढ़ बनाने के लिये, विकास के लिये, खेल खेलते हो, व्यायाम करते हो। यह सब बहुत अच्छी बातें हैं, तुम इन सब कामों को अच्छी तरह सीख लो । परन्तु कुछ अन्य बातें भी है, जिनका सीखना परमावश्यक है और अच्छी तरह करना सीखना चाहिये। मैं तुम्हें आज उन बातों को बताऊंगा । आंखें देखती हैं, कान सुनते हैं, नाक सूंघती है, त्वचा बतलाती है कि स्पर्श में आई वस्तु कठोर है या चिकनी है। जिह्वा स्वाद लेती है। इन पांचों को इन्द्रियां कहते हैं। ये पांचों पृथक पृथक एक कार्य करती हैं और केवल उसी कार्य को करने में समर्थ हैं। आंख न तो सुन सकती है न सूंघ सकती है न स्वाद ले सकती है। कान न देख सकता है, सूंघ सकता है, स्वाद ले सकता है और न बता सकता है कि कोई वस्तु चिकनी अथवा कठोर स्पर्श करने में कैसी है । जिह्वा के विषय में यही बात सत्य नहीं है, क्योंकि यह दो कार्य करने में सक्षम है न कि केवल एक ही।

भगवान् द्वारा जिह्वा को दिये गये यह दोनों ही कार्य महान हैं। पहले कार्य के विषय में क्षण भर सोचो—आस्वादन। यदि कोई वस्तु स्वाद में बुरी है तो तुम उसे नापसन्द करते हो और नहीं खाते हो। निस्संदेह बीमार होने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पर अरुचिकर स्वाद वाली औषधि लेनी ही पड़ती है। इसलिये सभी वस्तुयें जो स्वाद में कटु होती हैं, थूकी नहीं जा सकतीं। उनमें से कुछेक तुम्हारी बीमारी को शीघ्रता से दूर करती हैं; तुम्हें आरोग्य प्रदान करती हैं। एक दूसरी बात भी याद रक्खो, यदि कोई वस्तु स्वादिष्ट है तो यह आवश्यक नहीं है कि वह तुम्हारे स्वास्थ्य के लिये भी हितकर हो। जिह्वा तो वस्तु का केवल स्वाद, कटु, मीठा या खट्टा इत्यादि, ही बताती है। यह नहीं बता सकती कि इसका खाना हितकर है अथवा नहीं। इसलिये तुम सदा सावधान रहो कि अधिक खाकर अपना स्वास्थ्य न बिगाड़ लो।

अब जिह्वा के दूसरे कार्य के विषय में जो यह करती है—भाषण। यह एक यंत्र है जो तुम प्रयोग करते हो, इसके माध्यम से तुम्हारे विचारों, कल्पनाओं, भावों, इच्छाओं, प्रार्थनाओं, आनन्द, दुख का प्रकाशन होता है। यदि तुम क्रोधित होते हो तो इससे कठोर और कटु शब्दावली निकलने लगती है, और जोर-जोर से निकलने लगती है। यदि तुम प्रसन्न हुये तो तुम मृदु आनन्द-दायक मधुर शब्द धीमी-धीमी वाणी से बोलने लगते हो। मैं चाहता हूं कि तुम वाणी को अपने पराये कल्याण, सुख के लिये प्रयोग करो। यदि तुम किसी से कठोरता से बोलते हो तो वह भी प्रत्युत्तर में जोर से और कठोर शब्दों का प्रयोग करता है। कठोर क्रोधपूर्ण शब्दों से अन्य कठोर और क्रोधपूर्ण शब्दों की सृष्टि होने लगती है। परन्तु यदि तुम मृदु और मधुर शब्दों का प्रयोग करो, जबकि दूसरा तुमसे झल्ला रहा हो तो वह ठंडा पड़ जावेगा। उसे अपनी जिह्वा के इस प्रकार बोलने पर दुख होगा। कभी मत चीखो, चिल्लाओ, आवश्यकता से अधिक देर तक मत बात करो, अनावश्यक बात ही न करो। जब तुम किसी व्यक्ति या, कुछ व्यक्तियों के दल से बात करो तो अपने स्वर को इतना और केवल इतना ही ऊंचा उठाओ कि वह अथवा वे लोग अच्छी तरह सुन भर सकें इससे अधिक नहीं। अनावश्यक देर तक या जोर से बोल कर तुम क्यों अपनी शक्ति नष्ट करते हो ?

किसी के प्रति अशिष्ट और अश्लील शब्दों का प्रयोग कभी मत करो। ऐसे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शब्द तो तुम्हारी जिह्वा पर आने ही न पावें; और दूसरों के कान तक पहुंचे। याद रहे तुम्हारे हृदय में भगवान् का निवास है, अन्य सभी के हृदय में भी उसी का निवास है। वह सब उन बातों को सदा देखने और सुनने में समर्थ है। क्या तुम नहीं कहते हो, "मेरा मस्तक, मेरे हाथ, मेरी आँख, मेरा मन, मेरे विचार ?" अब सोचो "मैं" क्या है जिसके यह सब अंग प्रत्यंग और कार्य हैं ? यह "मैं" ही भगवान् की चिनगारी है जो तुम में है। वही चिनगारी अन्य सभी प्राणियों में है। इसलिए जब तुम किसी अन्य के प्रति निर्मम, कठोर, क्रोधपूर्ण या गन्दे शब्दों का प्रयोग करते हो तो तुम्हारे अन्दर वाले तथा अन्य लोगों में स्थित भगवान् को दुख होता है। इसलिये बहुत सावधान रहो और केवल अपने पराये हित में ही वाणी का प्रयोग करो। यदि तुम इसका प्रयोग दयालुतापूर्ण वार्ता के लिये, भगवान्नाम उच्चारण के लिये, उसकी महिमा का गान करने के लिये या प्रभु प्रार्थना के लिये करते हो; तो उसका सर्वोत्तम प्रयोग होता है।

जिह्वा के विषय में मैं तुम्हें कुछ और भी बतलाऊंगा। जिह्वा का निरीक्षण कर तुम बहुत कुछ सीख सकते हो। वह सदा अपने घर में रहती है; और कभी कभी ही अपनी देहली के बाहर आती है। वह कुलवधू के समान चुपचाप घर के अन्दर ही रहती है; वह अपनी सीमायें जानती है; उसे इधर उधर घूमने फिरने का चाव नहीं है। यह शिक्षा तुम्हें जिह्वा से ग्रहण करना चाहिये। सदा घर पर अपने को व्यस्त और लाभप्रद बनाये रहो, अपने माता-पिता, भाई-बहिनों कीं सहायता करते रहो। बाहर गली में निकल कर इधर-उधर समय मत नष्ट करो। उद्देश्यहीन होकर भटकना कोई अच्छी बात नहीं है। दूसरों के घरों में घुस कर उन्हें उनके कार्य से विरत न करो। जिह्वा किसी अन्य मुख में नहीं जाती और सदा अपने घर में ही बनी रहती है। अपने घर को छोड़कर बाहर व्यर्थ में समय गंवाना, इधर-उधर बैठना, खड़े होना, आलस्य पूर्ण दृष्टि से निकलने पैठने वालों की ओर ताकना, उचित

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नहीं है। तुम्हें घर, बाहर, विद्यालय में अपने संयमित उत्तम व्यवहार से सुयश कमाना चाहिये।

क्या तुम दूसरे पाठ को, जो जिह्वा तुम्हें सिखाती है, जानते हो? अपनी जिह्वा का निरीक्षण करो जबकि तुम जोर-जोर से पढ़ रहे हो या अन्य किसी से संभाषण कर रहे हो। यह शीघ्रतापूर्वक एक ओर से दूसरी ओर चलती है यह आगे पीछे चलती है जिससे श्वाँस के द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न होती रहें। और जब तुम भोजन करते हो तब भी जिह्वा को शीघ्रता से कार्य करना होता है। क्या तुमने ध्यान दिया है कि इस समय जिह्वा को दाँतों के बीच न आजाने की बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है? दाँत ३२ होते हैं और वे सब जिह्वा को घेरे हुये ऊपर नीचे नुकीले और तलवार के समान तीक्ष्ण होते हैं। यह दाँत रंचमात्र असावधानी से चल जाने पर मोटी परन्तु कोमल जिह्वा को काट कर लोहू-लुहान कर देते हैं। फिर भी देखो कितनी चतुराई से फुर्ती से मुख-गुहा में जीभ चलती है और १६ जोड़ी निर्दय सिपाहियों को, जो सदा इसे घायल करने की ताक में रहते हैं, बुत्ता देती रहती है। तुम अपने चारों ओर भी सावधान रहो जिससे कोई दुर्घटना या संकट न आने पावे। कुसंगति में न पड़ जाओ; बुरी आदतें न सीख जाओ; अपने विद्यालय और परिवार पर कलंक का टीका न लगने दो।

हम जिह्वा से एक और पाठ भी पढ़ सकते हैं। जीभ का निज का कोई स्वार्थ नहीं होता है; वह अपने लिये कुछ भी बचा कर नहीं रख छोड़ती है। गुप्त रूप से कुछ भी सग्रह नहीं करती है जो किसी से छिपाया गया हो। जिसे यह कालांतर में अकेले-अकेले ही उपभोग करने की इच्छा रखती हो। यदि कोई वस्तु हितकर, अच्छी है तो वह उसे गले से नीचे उतार देती है और आमाशय में भेज देती है। यदि कोई वस्तु बुरी है, कटु है या सड़ गयी है तो वह उसे ओठों के बाहर थूक देती है या वमन कर देती है। यह स्वयं अपने लिये कुछ भी रक्षित रख छोड़ने की प्रवृत्ति नहीं रखती है। यह दूसरों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की सेवा करती है और अपनी आवश्यकता को अंत में पूर्ण करती है। जो वस्तुयें इस पर होकर जाती हैं; उनका लेश मात्र भी यह नहीं रोकती है। चाहे वह मिठाई, घी, अचार, मलाई कुछ भी क्यों न हो जीभ पूर्ववत् निर्लेप ही रहती है। इसका कुछ भी प्रिय या अप्रिय नहीं होता है। तुम्हें भी लोभ त्याग देना चाहिये। किसी भी वस्तु या व्यक्ति में लिप्त न होओ। अपने सभी कर्त्तव्यों को अच्छी तरह करो। अपने माता-पिता और गुरुओं को पूर्ण सुख दो। सभी की भरसक सहायता करो। परन्तु प्रतिदिन कुछ समय के लिये मौन रहना भी सीखो और जब कोई घटना तुम्हारी इच्छा के प्रतिकूल घटे तो भी शान्त रहने की चेष्टा करो।

तुममें से कुछ लोग जानते होंगे कि हाथी कैसे पकड़े जाते हैं कैसे पालतू बनाये जाते हैं। जंगल में तो हाथी एक जंगली पशु होता है, वह अपने झुंड के साथ ही चलता है। यदि कोई उसके समीप जाने का साहस करे तो वह उस पर भयंकर आक्रमण करता है। उसे तो फन्दे में फँसाया जाकर रस्सियों से जकड़ कर एक सुदृढ़ वृक्ष या खम्भे से बांध दिया जाता है जिससे वह पुनः न भाग जावे। उसे सधाया जाता है तब वह एक त्रिपाद पर भी सर्कस में खड़ा होकर प्रदर्शन देने लगता है; अथवा विशाल वृक्षों के तने के टुकड़ों को अपने महावत की आज्ञा से ढोता रहता है। जब हाथी को वृक्ष या खम्भे से बाँध देते हैं तो उसकी समस्त शक्ति और चतुराई के तुम स्वामी हो जाते हो; क्योंकि तुम उनका उपयोग अपनी आवश्यकतानुसार कर सकते हो। जिह्वा भी एक खम्भा है, भगवान् का भजन रस्सी है। इसके सहारे तुम सर्वशक्तिमान भगवान् को अपने समीप लाकर बन्धन में डाल सकते हो; तब उसकी कृपा तुम्हारी हो जाती है। हाँ, तुम यह सब कर सकते हो। भगवान् ऐसा दयालु है जो तुम्हारी प्रार्थना से तुम्हारे वश में आकर बन्धन स्वीकार कर लेगा। तुम्हें भगवान् को पुकारना मात्र है कि वह तुम्हारे पास आजावे, तुम्हारे साथ रहे, तुम्हारे आगे आगे मार्ग दर्शन करता हुआ नेतृत्व करे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जो कुछ जिसके अधिकार में है वह उसे रक्षित रखना चाहता है; जब कोई उससे इसका अपहरण करता है तो वह दुखी होता है, धोखे से या चोरी से लेता है तब भी यही होता है। यदि तुम्हारी पुस्तक या कलम किसी अन्य छात्र या छात्रा द्वारा चुरा ली जाती है तो तुम बहुत दुखी होगे, है न ऐसी बात ? तो फिर किसी छात्र या छात्रा की पुस्तक या कलम चुराकर उसे भी दुखी मत करो। दूसरों के साथ वही व्यवहार करो जो तुम चाहते हो कि दूसरे लोग तुम्हारे साथ करें। भजन में एक गीत गाया जाता है "वड़ा चित चोर..." इसमें भगवान् को एक बड़ा पक्का चोर बतलाया गया है जो दूसरों के हृदय चुरा लेता है। समस्त विश्व भगवान् का ही है। तुम सब उसी के हो, यद्यपि तुम चाहे इस तथ्य से न भी अवगत हो। इसलिये वह किसी से कुछ भी ले सकता है। वह आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी सभी का स्वामी है। वह आकाश को पृथ्वी में और पृथ्वी को आकाश में बदल सकता है। इसलिये वह लोगों के हृदय चुराकर उन्हें प्रेम से संपृक्त कर सकता है। एक बार लोगों को ज्ञात भर हो जाये कि दैवी प्रेम कितना महान होता है तो फिर वे अन्य कुछ भी न चाहेंगे। इसीलिये उसे 'चित्त चोर' कहा जाता है। जब तुम यह गीत गाते हो तो तुम्हें यह भी प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये 'हे भगवान् आप मेरे हृदय में प्रवेश कर जाइये और इसे प्रेम से भर दीजिये जिससे मैं आपके सभी बच्चों से, सभी देशों में, प्रेम कर सकूं"। जो दूसरों का है उसे मत छीनो। दूसरों की निन्दा मत करो। दूसरों की बात ही मत करो; यदि बात करनी ही पड़े तो जो अच्छाई उनमें दिखाई पड़े उसी की चर्चा करो। सभी अच्छे होते हैं, यदि उनमें तुम्हें कुछ बुराई दिख जाती है तो वह इसलिये कि स्वयं तुममें बुराई है। यदि तुम किसी को नापसंद करते हो, तो उसकी संगति मत करो; अलग रहो। परन्तु, उसकी निन्दा कर उसको बदनाम मत करो; और उसके संबंध में मनगढन्त कहानियों का प्रचार मत करो। क्रोध बुरी चीज है; उससे व्यक्ति अंधा होकर कार्य करने लगता है। तुम्हें इसके लिये पश्चाताप करना पड़ेगा, जब बाद में शान्त मन से विचार करोगे तब तुम्हें स्पष्ट और सही स्थिति का ज्ञान होगा; तब अपनी गलती सुधारने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

का अवसर निकल चुका होगा और तुम्हें अपनी गलती का परिमार्जन करने का कोई उपाय न रह जावेगा ।

तुम्हें अच्छे ग्रन्थों का अध्ययन करना ही चाहिये । तभी तुम अच्छे और श्रेष्ठ विद्यार्थी कहे जा सकोगे । परन्तु अच्छे ग्रन्थों का आजकल अभाव हो रहा है । सस्ती पुस्तकों और पत्रिकाओं द्वारा निकृष्ट जीवन की कहानियों का बड़ा प्रचार हो रहा है । यह कहानियां दुराचार, दुष्ट व्यक्तियों, ठगों और डकैतों के संबंध में होती हैं । ऐसी पुस्तकों से दूर ही रहो; वे तुम्हारे मन को गंदला करेंगी और उसे क्रोध, घृणा और फरेब से भरेंगीं । अपने धर्म की पवित्र पुस्तकों का अध्ययन करो, दूसरे धर्म ग्रन्थों का अध्ययन करो । रामायण महाभारत, भागवत्, बाइबिल, कुरान तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों को पढ़ो । कुछ परिवारों में नित्य ही इस प्रकार का स्वाध्याय चलता रहता है; उन परिवार के बच्चों को भूतकाल के ऋषियों, सन्तों, धार्मिक पुरुषों के संबंध में जानकारी रहती है । अधिकांश परिवारों में इस प्रकार के अध्ययन की परम्परा नहीं होती है । बड़े बूढ़े लोग भी नहीं जानते कि हर पुस्तकों के पृष्ठों में क्या है । फिर बच्चे कैसे जान सकते हैं ? जब तुम किसी बच्चे से राम या कृष्ण के संबंध में प्रश्न करते हो तो वह उत्तर देता है "अरे वह तो मेरी कक्षा में पढ़ता है ।" उसे पता ही नहीं कि कृष्ण तो भगवान थे जो मानवाकार में लोक उद्धार के लिये अवतीर्ण हुये थे । उसे नहीं ज्ञात है कि कृष्ण ने अर्जुन को गीता के उपदेश द्वारा भगवान् तक पहुँचने का मार्ग दिखाया था और यह कि गीता संस्कृत में एक पद्यात्मक श्लोकों का अपूर्व ग्रन्थ है । वह नहीं जानता है कि राम एक महान राजा थे, जिन्होंने हर परिस्थिति के लिये आदर्श जीवन बिताकर एक उदाहरण उपस्थित किया है । वे भी भगवान् के अवतार थे और नर रूप में मनुष्यों को भगवान् का मार्ग दिखाने के लिये आये हुये नारायण थे । भगवान् तक पहुंचने के अनेक मार्ग हैं; जैसे कि नगर में अनेकों सड़कें होती हैं अथवा हिमालय की चोटी तक जाने वाली कई पगडंडियां होती हैं जिससे शेरपा लोग चोटी पर पहुंच जाते हैं ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

घर पर तुम्हें भगवान् के चित्र एक विशेष स्थान में, पूजागृह में, पूजा के लिये सजाकर रखे हुए दिखाई देते हैं। प्रत्येक घर में, इसी प्रकार, कुछ जीवित देव भी होते हैं, जिनकी सेवा और पूजा करने का ऋषियों ने उपदेश दिया है। वे तुम्हारे माता पिता हैं। उन्होंने तुम्हें जन्म दिया है; तुम्हारा स्वास्थ्य और सुख उन्हीं के कारण है। वे तुम्हें प्रेम करते हैं, तुम्हारी सेवा करते हैं, तुम्हें अधिक से अधिक देने की चेष्टा करते हैं। हाँ, वे प्रायः अधपेटे ही रह जाते हैं जिससे कि तुम्हें भरपेट भोजन प्राप्त हो जाय। वे विभिन्न प्रकार से पैसा बचाने का प्रयत्न करते हैं जिससे तुम्हारे अध्ययन का व्यय भार वहन कर सकें। तुम्हें छात्रावास में रख सकें या तुम्हें विद्यालय उत्सव में भेज सकें और तुम्हें अध्ययन यात्रा पर भेज सकें। धार्मिक पुस्तकों का आदेश है कि तुम उनका सम्मान करो, पूजा करो, "मातृ देवो भव" "पितृ देवो भव"। तुम्हारी माँ और पिता तुम्हारे देव हैं यह शिक्षा दी गयी है। नहीं तो तुम किस प्रकार उनसे उऋण हो सकते हो? तुम उन्हें इसके बदले में क्या दे सकते हो सिवाय अपनी सेवा और प्रेम के? उस सब प्रेम और सावधानी और चिन्ता की कल्पना तो करो जिसके साथ उन्होंने तुम्हारा पालन पोषण सभी कष्ट, भूख, अनिद्रा सहकर किया है और अब भी कर रहे हैं। उनके साथ अशिष्ट और कठोर नहीं होना चाहिये। उन्हें प्रसन्न करने का भरसक प्रयत्न करो, उनकी आज्ञा पालन करो क्योंकि वे तुमसे कही अधिक इस दुनियाँ और उसके संकटों का ज्ञान रखते हैं। उनकी पूजा का यही ढंग हो सकता है।

ऋषि यह भी कहते हैं, "आचार्य देवो भव"। तुम्हारे अध्यापक तुम्हारे देव हैं। क्योंकि यह गुरु ही होता है जो तुम्हारे आन्तरिक ज्ञान चक्षु को उन्मीलित कर तुम्हारे चतुर्दिक फैले हुये विश्व का सौंदर्य-बोध तुम्हें कौतूहल के साथ कराते हैं। वह तुम्हें आकाश और नक्षत्रों के सत्य से परिचित कराते हैं। वह तुम्हें स्वस्थ और प्रसन्न, शान्त और लाभप्रद होने की शिक्षा देते हैं। माता पिता ने तुम्हें यहाँ लाकर तुम्हारा हाथ गुरु को पकड़ा दिया है। अध्यापक तुम्हें दक्ष और प्रसन्न, कार्यपटु और सभी के लिये लाभकारी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सेवा भावयुक्त बनाते हैं। इसलिये उनका सम्मान करो, आज्ञा का पालन करो और उसी आदर का पात्र समझो कि जिस प्रकार तुम माता-पिता का आदर करते हो।

महाभारत ग्रन्थ में तुम चचेरे भाइयों के बीच हुये महायुद्ध का वर्णन पढ़ते हो जो कौरव और पाण्डव कहे जाते थे। पाण्डवों के पक्ष में न्याय था, वे सत्य और न्याय के लिये लड़े। इसीलिये भगवान् भी उन्हीं के पक्षधर होकर उनकी विजय के लिये सहायता करते रहे। पाण्डवों में सबसे बड़े को धर्मराज भी कहते थे। उसके पितामह भीष्म और उसके पूज्य गुरु द्रोणाचार्य ने कौरव पक्ष को चुना था। और पाण्डवों के विरुद्ध युद्ध की तैयारी कर रहे थे। जब युद्ध प्रारंभ हुआ, धर्मराज को उपर्युक्त नियम स्मरण था कि "आचार्य देवो भव"; वे शत्रु पक्ष के पड़ाव में चलते हुये भीष्म और द्रोण के शिविर में प्रविष्ट होकर उनके चरणों पर गिर पड़े। वे लोग पाण्डवों को पराजित करने पर तुले हुये थे। धर्मराज ने उनसे अपने कल्याण का आशीर्वाद मांगा। इस व्यवहार से उनमें कोमलता आई और मृदु होकर उनके हृदय दया से भर गये। उन्होंने कहा, "पुत्र तुमने सदा सत्य और धर्म का आचरण किया है, भगवान् तुम्हारे पक्ष में हैं; तुम अवश्य विजयी होगे। हमें कर्त्तव्यवश इस पक्ष में होना पड़ा है। परन्तु हम तुम्हें आशीर्वाद देते हैं जिससे तुम अपने शत्रुओं को विजय कर खोई हुयी राज-लक्ष्मी पुनः प्राप्त करोगे"। देखो धर्मराज ने किस प्रकार अपने पितामह और गुरु का आशीर्वाद प्राप्त किया यह केवल ऋषियों द्वारा निर्धारित धर्ममार्ग पर चलने से ही संभव हो सका।

तुम सब सत्य साई बाल बिहार के सदस्य हो। तुम अन्य बालक-बालिकाओं के लिये उत्तम उदाहरण बन कर चमको। जब तुम अपने घर पर होओ और तुम्हारे पिता के कुछ मित्र अंदर आवें, तुम्हें आसन छोड़कर अवश्य खड़ा हों जाना चाहिये, उनसे शिष्टता और विनम्रतापूर्वक स्पष्ट भाषण करो। प्रसन्नतापूर्वक उनका स्वागत करो और उनके प्रति उत्तम आचरण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करो। जब तुम्हें दूरभाष पर वार्ता करनी पड़े तो धृष्टतापूर्वक बार-बार 'हल्लो हल्लो' मत चिल्लाओ। बड़ों को इस प्रकार संबोधित नहीं किया जाता है। 'हल्लो हल्लो' कहना कोई शिष्ट व्यवहार नहीं है। ऐसा तो बराबर वालों और 'लंगोटिया यार' लोगों से ही कहा जा सकता हे। मैं तुम्हें 'ओम्' कहने की सलाह देता हूं। तब तो तुम्हारे माता-पिता और गुरुजन भी तुमसे 'ओम्' कहना सीखेंगे। तुम्हें कोई न कोई भारतीय शब्द का ही प्रयोग करना चाहिये। अभी तो तुम विदेशी ढंग और विदेशी संस्कृति में रंगे जा रहे हो। विद्यालय में पहला पाठ "बी बी, ब्लैक शीप" घोटते हो क्या तुम पर कोई ऊन उगी हुयी है? "डिग डांग बेल, यस इन दि वेल" का दूसरा पाठ आता है। वे दिन चले गये जबकि प्रथम पाठ राम, कृष्ण या किसी अन्य संत महर्षि पर हुआ करता था। 'तेहि नो दिवसः गतः'। काली भेड़ों के संबंध में जानकारी प्राप्त करते करते बच्चे काली भेंड़ ही बन जावेंगे। बड़े और महान पुरुषों के संबंध में जानकारी करके बच्चे भी महान और नेक बनेंगे। इसीलिये बालबिहार के बच्चों को राम, कृष्ण और अन्य महापुरुषों की कहानियां सुनायी जाती हे। उन कहानियों को सीख लो और उन्हीं के अनुसार अपना जीवन ढालने का प्रयास करो। भारतीय ढंग सीखो, भारतीय कहानियां सीखो और सच्चे भारतीय बनो। तुम्हारे लिये यह सरल बात है और आवश्यक भी है। उदाहरण के लिये 'गुडमार्निंग' या 'गुडनाइट' क्यों कहते हो। नमस्कार या नमस्ते कहना भारतीय पद्धति है; यही विनम्रता की निशानी है। तुममें भय, विनय और विश्वास होना चाहिये। भय किसका? असदाचरण का, पतन का। विनम्रता किसके प्रति? गुरुजनों, माता-पिता और बड़ों के प्रति। विश्वास किसमें? भगवान् में, अपनी शक्ति में और अपनी विजय में करो।

मैं चाहता हूं कि तुममें से प्रत्येक बड़ा होकर बलवान्, धैर्यवान् और ईमानदार व्यक्ति बने। तुम्हारे नेत्र अशोभनीय दृश्यों पर न पड़ें; तुम्हारे कान दुष्टतापूर्ण कहानियाँ सुनने के लिये लालायित न होवें। तुम्हारी जिह्वा दुष्टतापूर्ण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शब्द न उच्चारण करें; तुम्हारे हाथ अशोभनीय कार्य न करें, तुम्हारे मन में कुविचार न आवें। पवित्र रहो प्रेम से पूर्ण रहो। जो दीनदशा में हों उनकी सहायता करो उनकी सेवा करो जिन्हें तुम्हारी सेवा की अपेक्षा हो। तभी तुम सत्यसाई बाल विहार के यशस्वी सदस्य कहलाओगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१३ इच्छा न करने का संकल्प

(धर्मक्षेत्र, बम्बई १८–५–१९६९)

मन एक विचार से चट दूसरे पर उड़ जाता है। एक क्षरण के लिये जिस को अपनाता है दूसरे ही क्षरण उसे त्याग देता है। तुम अपना मुंह तो बन्द रख सकते हो परन्तु मन की चन्चलता को रोक पाना लगभग असम्भव ही है। मन की प्रकृति ही वैसी है, यह इच्छाओं के ताने-बाने से बुना गया है। इसकी विशेषता यही है कि इधर-उधर इन्द्रियों के क्षेत्र में से होकर; बाह्य विश्व के रूप, रस, गंध, शब्द, स्वाद स्पर्श से होकर फुर-फुर उड़ता फिरे। परन्तु, प्रयास करने पर मनुष्य इसे भी पालतू बनाकर उपयोगी बना सकता है। यदि इसे हम सद् विचारों, सत्कार्यों विशेष कर विश्वात्मा, शाश्वत और निरपेक्ष ब्रह्म के चिन्तन में लगा सकें, तो फिर यह इधर-उधर नहीं भटकेगा। और मनुष्य को अपरिचित विदेशी भूमि पर ले जाकर न पटकेगा जहाँ उसका विनाश होवे; क्योंकि भगवान् अपार शक्ति, असीम आनन्द और गंभीरतम प्रज्ञा; सच्चिदानंदघन हैं।

१६ से ३० तक की आयु की अवधि बड़ी कठिन होती है; क्योंकि यह वह समय होता है जब जीवन में मधुरता आती है, जब व्यक्ति में गुणों, क्षमताओं, भावों का संकलन, उन्तयन और पावनीकरण होता है। यदि निस्वार्थ सेवा का पौष्टिक मन को इस अवधि में प्राप्त हो जाता है तो जीवन सफल हो जाता है; क्योंकि इस पौष्टिक औषधि से उर्ध्वगमन और पावनी-करण की क्रियाओं में त्वरण (गतिशीलता) आ जाती है। किसी पुरस्कार की आशा से सेवा मत करो, दूसरों के ध्यानाकर्षण या कृतज्ञता प्राप्ति के लिये या अपनी श्रेष्ठता के अहंकार में वृद्धि करने के लिये, धन चातुर्य सत्ता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

या स्थिति के प्रदर्शन के लिये भी सेवा न करो। सेवा इसलिये करो कि प्रेम तुम्हें सेवा करने के लिये प्रेरित करता है। यदि अपने प्रयास में सफल होओ तो सफलता का श्रेय प्रभु कृपा को अर्पित कर दो, जिसने तुम्हारे अंदर स्थित होकर प्रेम के रूप में प्रेरणा थी। यदि असफलता ही हाथ लगे, तो असफलता का कारण निज की अक्षमता, अज्ञान और हार्दिकता की कमी समझो। कार्य की प्रेरणा के स्रोतों की परीक्षा करो, उन्हें अहं भाव की लेश-मात्र गंध से भी कीटाणु रहित कर डालो। सेवा प्राप्त करने वालों पर दोषा-रोपण मत करो; न अपने साथियों, सहायकों अथवा भगवान् पर ही। इस पर मत उछलो कूदो कि तुम भी सेवा दल के सदस्य स्वीकार कर लिये गये हो कि जिस संस्था से इस नगर के सहस्रों व्यक्तियों को लाभ प्राप्त होगा। इस प्रकार का अहंकार तुम्हारे सदस्य होने की दक्षता पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। इससे निश्चय ही तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति खोखली रह जावेगी। भगवान् की महत्ता और व्यापक महिमा के अज्ञान से ही 'मैं' और 'मेरा' के भाव लहराते हैं। इसी बुराई की संतान क्रोध और लोभ हैं। अहंकार, अज्ञान, क्रोध और लोभ की चंडाल चौकड़ी ही मनुष्य के अनुभव में आने वाली इस विश्व की समस्त विपत्तियों का कारण होती है।

विश्व भर में, सभी रूपों में, सेवा कार्य मौलिक साधना ही होती है। यह आध्यात्मिक संयम और मानसिक स्वच्छता का अभियान है। सेवा भाव की प्रेरणा के अभाव में आध्यात्मिक आकांक्षा में ह्रास और शुष्कता आ जाते हैं; अथवा वह क्षीण धारा के रूप में अहंकार और वैभव प्रदर्शन की घाटियों में प्रवाहित होने लगती है। क्षण भर विचारो क्या तुम भगवान् की सेवा कर रहे हो ? या, भगवान् ही तुम्हारी सेवा कर रहा है ? जब एक तीर्थ यात्री कमर तक गहरी गंगा में खड़ा होकर, अंजली में जल लेकर, मंत्रोच्चार सहित, देवता का आवाहन कर जल अर्पण करता है; तो वह इसके अतिरिक्त क्या करता है कि गंगाजल को गंगा में ही उछाल देता है। जब तुम भूखे बच्चे को दूध अथवा ठिठुरते भाई को, जो पैदल चलने वालों के मार्ग में एक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

किनारे बैठा है, कम्बल देते हो तो भगवान् की भेंट को भगवान् को ही तो अर्पित करते हो। तुम भगवान् की भेंट को भगवान् के कोषागार के एक कोठे में ही जमा कर रहे होते हो। सेवा तो भगवान् ही करते हैं और तुम्हें बट्टे में सुयश कमाने का अवसर मिल जाता है कि तुम सेवा करते हो। उसकी इच्छा के बिना तो घास का एक पत्ता भी हवा से प्रकम्पित नहीं हो सकता है। सभी भेंटों के दाता और प्राप्त कर्त्ता भगवान् के प्रति हर घड़ी कृतज्ञता के भाव से छलकते रहो।

देने की इच्छा को सदा पुष्ट करो। महान् के लिये लघु का उत्सर्ग करो, क्षणिक का शाश्वत के लिये बलिदान करो। सेवादल का बिल्ला कोई अलंकरण, या आभूषण नहीं है जो बिना मूल्य चुकाये बट्टे में प्राप्त कर लिया गया है। यह तो उदात्त आचरण, उदार भावना और स्थायी प्रयास का प्रतीक है। यह तो आंतरिक उत्साह शक्ति, निष्ठा और चातुर्य्य का बाहरी प्रदर्शक है। जिस प्रकार चुम्बक के द्वारा लौह आकर्षित होता है उसी प्रकार इन गुणों से, जो तुम्हारे माध्यम से प्रकाशित हो रहे हैं, निराश, दलित और दुखी व्यक्ति तुम्हारी ओर आकर्षित होंगे। यदि तुम अभिमानी और स्वार्थी, उस भ्रातृत्व सम्बन्ध, जिसमें सभी आबद्ध हैं, के प्रति अन्धे होंगे तो यह बिल्ला एक धोखा और छलना है।

भोजन की क्रिया के पश्चात् मलत्याग, श्वाँस अन्दर लेने के बाद बाहर निष्कासन, की क्रिया होती हैं। रक्त के सभी नालिकाओं में हृदय से जानो, समस्त शरीर में प्रवाहित होने और पुनः हृदय में लौटने से स्वास्थ्य की स्थिति बनी रहती है। लेने के पश्चात् देना होता ही है; यह एक ही सिक्के के दोनों पार्श्व हैं। यह व्यक्तियों संस्थाओं, राष्ट्रों और समस्त मानवता का शाश्वत धर्म है। उन्नति और शान्ति सदा बलिदान, त्याग और सेवा के सहारे पनपते हैं।

तुम्हारी सेवा, धर्म क्षेत्र तक और केवल उस समय के लिए जब मैं बम्बई

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

में होऊँ सीमित न रह जावे। सर्वत्र और सदैव किसी आर्त्त की पुकार सुनने के लिये मुस्तैद (कटिबद्ध) रहो, तुम्हारी स्मित मुस्कान, मृदुवाणी और लाभ-दायक सुझाव, ज्ञानवान् देखरेख और आनन्ददायक उत्तर, अवसरों की प्रतीक्षा में रहे। किसी का उद्धार, दुख दूर करने और पुनर्जीवन प्रदान करने के लिये अवसरों की प्रतीक्षा में रहो। अपने को शीघ्रता से और भली प्रकार सेवा देने योग्य दक्षता से युक्त कर लो। सेवा तपस्या का सबसे अधिक लाभदायक रूप है, यह सर्वाधिक तुष्टिदायक और आनन्ददायक है। यह प्रेम का निर्झर है और प्रेम को प्रचुरता से चतुर्दिक विकीर्ण करता है। यह तो चट्टान पर भी बीजारोपण कर उसे अंकुरित करके ही आनन्दित होता है। प्रेम से इसको रोपो, बीज पत्थर में भी प्रेम खोज लेगा और उसमें से पोषण प्राप्त कर ही लेगा।

डा० मिस्त्री ने अपनी आख्या में उल्लेख किया है कि आप बम्बई में अच्छा कार्य कर रहे हो, रक्त दान द्वारा, अस्पतालों में रोगियों की परिचर्या द्वारा, अपने-अपने क्षेत्रों में प्राथमिक सहायता केन्द्रों के संचालन से, भजनों की व्यवस्था से और बाल विहार इत्यादि संस्थाओं के संचालन से यह सब सत्कार्य किये जा रहे हैं। परन्तु कार्यों की मात्रा या विविधता का उतना महत्त्व नहीं है। महत्त्व तो उस आन्तरिक आनन्द और प्रेम का, जिसे तुम अपने चतुर्दिक बिखेरते हो, होता है। केवल सहानुभूति और सद्भावना से कोई लाभ नहीं, उन्हें तो बुद्धिमत्ता पूर्ण ढंग से कार्यान्वित और नियमित बनाना चाहिये। उदास लोगों पर प्रसन्नता की फुहार डालो, जो भटक गये हैं रास्ता भूल गये हैं उन्हें सहायता दो; दूसरों के दोष दर्शन के लिये कहीं भी दृष्टि न डालो परन्तु निज के दोषों को देखने के लिये सदा नेत्रों को सावधानी से खुला रखो। यह सब कार्य हैं तो कठिन अवश्य, परन्तु सतत् अभ्यास से तुम भी दक्ष हो जाओगे। केवल सेवा का ही अभ्यास नहीं, भगवान् के ध्यान का भी अभ्यास करते रहो। जप और ध्यान से आप सेवा के क्षेत्र में अधिकाधिक दक्ष हो जावेंगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ध्यान करना आवश्यक है; क्योंकि इसी से धारणा पुष्ट होती है और कालांतर में समाधि की स्थिति प्राप्त होती है। रात्रि में, जब तुम खुले में शयन करो तब सर पर एक चमकीले नक्षत्र पर दृष्टि जमा कर धारणा बनाओ और अभ्यास करो। सेवा के अभ्यास से मस्तिष्क निर्मल होता है, एकाग्रता गहरी होती जाती है। सेवा दल के अनेक सदस्यों ने मुझसे कहा है कि अब उनका ध्यान देर तक और जम कर लगने लगा है। कुछ लोग इसके लिये औषधियों की संस्तुति करते हैं; परन्तु वे नहीं जानते कि औषधियाँ अविश्वसनीय, निर्बलकारी और कभी-कभी संकट ढाने वाली भी सिद्ध होती हैं; उनके परिणाम बड़े घातक भी सिद्ध हुये हैं। मैं तो सेवा की ही संस्तुति करता हूं।

तुमसे सेवा की भावना ओत प्रोत हो, फिर भी सतर्कता और बुद्धि के बिना सेवा असफल हो जाती है। प्रत्येक क्षुद्र से क्षुद्र व्यावहारिक क्रिया का अनुमान रखना चाहिये। उदाहरण के लिये, तुम कुछ लोगों को बैठ जाने को बाध्य करते हो जिससे वे अपने से पीछे बैठे हुये लोगों के सामने बाधा न बने और उनकी दृष्टि भी मंच पर की लीला तक पहुंचने दें। तुम यह भूल जाते हो कि कुछ लोग अपनी शारीरिक अक्षमता के कारण भूमि पर पलोथी मार कर बैठ ही नहीं सकते। मध्य के जनसमुदाय की अवहेलना कर तुम दायें, बायें और पीछे की ओर बढ़ जाते हो। तुम मेरे इर्दगिर्द अनावश्यक उद्वेग मत उत्पन्न करो। बच्चों, बुड्ढों और बीमारों की सुख सुविधा का अधिक ध्यान रखो; जो धूप में हैं, प्यासे हैं, या असमर्थ और थकित हैं उनकी सेवा करो। कठोर व्यवहार से किसी का जी न दुखाओ। किसी को दर्शन प्राप्त करने में बाधा न बनो। अपने घर पर पधारने वाले मेहमानों को जो शिष्टाचार और अभ्यर्थना आप देते हैं, वही सब यहाँ पधारने वाले दर्शकों को दो। यह तुम्हारा घर है और ये लोग तुम्हारे मेहमान हैं। वे धर्मक्षेत्र की इस सभा की सदा सुखद स्मृति संजोये रहें कि यहां सेवा दल ने कितना शिष्ट, उत्तम व्यवहार और स्वागत उन्हें प्रदान किया है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१४ पंच-फणिधर

(गिन्डी मद्रास २२-६-१९६९)

विष्णु का शब्दिक अर्थ है 'सर्वत्र समाया हुआ' सर्वव्यापक। जब लोगों से विष्णु की मूर्ति की चर्चा की जाती है तो वे हंसते हैं और इस विचार को मूर्खता की संज्ञा देते हैं। परन्तु जब हम सर्वव्यापक विष्णु का चरणामृत पान करना चाहते हैं तो हमें एक प्याला, एक चम्मच या पात्र की आवश्यकता होती है। मूर्ति भी एक ऐसी ही आयोजना है जिसके द्वारा हम आनन्द का उपभोग करना चाहते हैं। प्याला किसी भी आकार और आकृति का हो सकता है; अमृत का आनंद तो अमृत में ही है जिसे कि प्यासा और पीड़ित पीने पर ही जान सकते हैं। रसो वैसः। भगवान् ही आनंद और अमृत हैं वे मधुर, शक्तिप्रदायक और पोषणकर्त्ता हैं। तुम उनको नटराज, दुर्गा, कृष्ण, शिवलिंग, गणेश, ईसा किसी भी मूर्ति, जो तुम्हारी रुचि के अनुकूल पीड़ा दूर करने वाली जँचे, द्वारा प्राप्त कर सकते हो। यही मन्दिर है जहाँ २१ वर्ष पूर्व मैंने एक ऐसी ही मूर्ति की स्थापना की थी, जिसे अनेक आकांक्षी भक्तों ने अपने प्रिय 'प्याला' के रूप में मानस पटल पर अंकित कर रखा है। यह साई मूर्ति है; जिसने द्वारकामयी में वैठकर शिरडी में उपदेश दिये थे। इस मूर्ति के पृष्ठ भाग में शेषाकृति पांच फनों से युक्त कुंडली मारकर फनों को उठाये हुये साई मूर्ति को अपने साये में लिये हुये है। अब इसकी व्याख्या भी सुन लो। पाँच फन उन पाँच इन्द्रियों के प्रतीक हैं जिनमें विषयों का विष भरा हुआ है। आँखें तुम्हें मांसल सौन्दर्य के ऐन्द्रिक आकर्षण में फंसा देती हैं। कान कामुकतापूर्ण गीतों के लिये व्यग्र रहते हैं, जिह्वा तुम्हारी पाचन क्रिया पर सदा स्वादिष्ट भोजन का अम्बार लगा कर अत्याचार करती रहती है। नासीका सदा उपवनों के पुष्पों और प्रयोगशालाओं की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सुगन्धि की खोज में रहती है। कोमल चिकने स्पर्श सुख के लिये स्पर्शेन्द्रिय (त्वचा) सदा रेशम और मखमल में ही लोटती रहना चाहती है और इस प्रकार मनुष्य को काम कीचड़ में धकेल देती है। जब मनुष्य इन्द्रियों को वशीभूत कर लेता है और उन्हें अधिक लाभप्रद प्रवाहों में डालने में समर्थ होता है तो वही नेत्र भगवान् के चरणचिन्हों के दर्शन नक्षत्रों और गुलाब की पंखड़ियों में करने लगते हैं, कान चिड़ियों के कलरव और झरने की कलकल ध्वनि में भगवान् की वाणी सुनते हैं। जिह्वा सभी सरस भोगों में भगवान् की मधुरता का आस्वादन करती है। नाक को प्रत्येक गंध से भगवान् की महिमा का स्मरण होने लगता है। त्वचा संकटग्रस्त और परित्यक्त बन्धु का हाथ थाम कर अनुभव करती है कि मानो उसने भगवान् के किसी प्रिय बच्चे का स्पर्श किया हो—तब उसे अपनी हृदय गुफा में भगवान् के प्रत्यक्ष दर्शन की अनुभूति होती है। यही शिक्षा पंच फणधर शेषाकृति से ग्रहण की जा सकती है।

आजकल हड़ताल और 'बन्द' के दिन हैं। लोगों के दल कार्य करना बंद कर देते हैं, चिल्लाना, नारे लगाना प्रारंभ कर देते हैं, कार्य से मुँह मोड़ लेते हैं, इस उद्देश्य से कि उन्हें कुछ लाभ प्राप्त हो जावे, इससे अन्य लोगों को हानि और उनके कार्य में अव्यवस्था आ जाती है। मैं तुम सब लोगों को मन के विरुद्ध हड़ताल करने का परामर्श देता हूं। तुम इसके लालच और क्षणिक अस्थिरता की अवज्ञा करने लगो। अपने संकल्प में दृढ़ रहो जो तुम्हारा विवेक कहे उसी को दृढ़ता से पकड़े रहो। मन की उपेक्षा करो, बुद्धि का सम्मान करो। इन्द्रियों को बुद्धि के आधीन कर दो; न कि उन्हें मन के उपर आसीन रखो। उनसे कह दो कि मन को गद्दी से उतार दिया गया है, उसका अब कोई अस्तित्व नहीं है। ऐन्द्रिकता एक रोग है। इसके कारण ही तुम्हें सुख और शान्ति प्राप्त नहीं हो रही है। रोग तो योग से निरोग होता है न कि भोग से। भोग का अर्थ इन्द्रियों की तृप्ति और उनकी तृष्णा की पूर्ति। योग का अर्थ मन की वृत्तियों और इन्द्रियों द्वारा निर्धारित

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

लक्ष्यों के पीछे दौड़ने की प्रवृत्ति का अंत। यदि जल खारा है तो इसे शकर मिलाकर मृदु नहीं बनाया जा सकता है। कठोर जल को मृदु बनाने के हानि रहित पेय और स्वादिष्ट बनाने के और ही उपाय होते हैं।

भगवान् सर्व-व्यापक है; परन्तु फिर भी, कुछ वैज्ञानिक यह दावा करते हैं, "हमने सम्पूर्ण अन्तरिक्ष को खोज डाला, भगवान् को चन्द्रमा पर भी खोजा, नहीं, वह कहीं नहीं प्राप्य है। उसका कोई अस्तित्व नहीं है।" वे नहीं जानते कि उसे कहाँ और कैसे खोजना चाहिये; फिर भी, उनमें यह कहने का दुस्साहस और धृष्टता है कि वह कहीं भी प्राप्य नहीं है। क्या ईश्वर की कोई आकृति और पदार्थगत स्थिति से वे परिचित हैं? क्या उसका कोई निवास स्थान या परम्परागत परिधान है? यह सब कुछ भगवान् है और इससे अधिक भी है। इस सब में वह है और इसके परे भी है। वह तो उस वैज्ञानिक का भी उर-प्रेरक है जो उसके अस्तित्व से इनकार करता है। स्वयं मानव, माधव है। सभी पदार्थ, यहाँ तक कि चन्द्रमा भी, भगवदीय तत्व से व्याप्त है। प्रयोगशाला के उपकरणों, यंत्रों द्वारा भगवान् की खोज ऐसी ही है जैसे उदर पीड़ा के लिये आँख में औषधि टपकाई जावे। उस कार्य का एक विशेष ढग और विशेष यंत्र होता है, जिसको भूत कालीन ऋषियों ने इस विज्ञान के लिये विकसित किया था और उसका वर्णन भी किया है। प्रेम और वैराग्य के द्वारा नेत्र स्वच्छ कर लो; अपने विवेक को तीक्ष्ण बना लो जिससे तुममें कोई पूर्वाग्रह या पूर्व धारणा न रहे, तब तुम भगवान् को अपने में, अपने चारों ओर और उस सब में जो तुम जानते, अनुभव करते हो, देख सकोगे। डाक्टर अपना स्टेथस्कोप लगाने से पूर्व तुमसे कमीज उतरवाता है; और तुम्हारे रोग का निदान करता है। तुम्हारी छाती को ढकने वाली एक और कमीज होती है, वे इच्छायें हैं जो तुम्हारे हृदय में तंरगित होती रहती हैं। उस कमीज को हटाओ; जिससे तुम्हारे वास्तविक दैवी स्वभाव का पता तुम्हें चल जावे, औरों को भी, जो तुम्हें जानना और समझना चाहते हों, तुम्हारी वास्तविकता ज्ञात हो जावे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सभी व्यक्ति दैवी तत्त्व रक्षरण के लिये मंजूषा या डिबिया के समान हैं परन्तु उनमें से कुछ को तुम मित्र मान कर प्रेम करते हो, कुछ दूसरों को अवांछनीय मान कर घृणा करते हो और उनका विभिन्न पक्षों और वर्गों में वर्गीकरण कर डालते हो। यदि तुम्हें कोई व्यक्ति भला लगता है तो उसकी अच्छाई को उसमें निहित भगवदीय तत्व को दो। यदि कोई व्यक्ति बुरा प्रतीत होता है तो यह सोचकर प्रसन्न होओ कि तुमने उसे भी, उसके लक्ष्य वन कर, कुछ संतोष दिया है। यदि वह शरीर को हानि पहुंचाता है तो ऋषि निर्लिप्त रहते हैं क्योंकि वे जानते है कि वे शरीर नहीं हैं। यदि वह आत्मा को हानि पहुंचाने की चेष्टा करता है तो वे जानते हैं कि यह असंभव है क्योंकि आत्मा तो सदा आनन्द-मग्न रहता है।

साधना द्वारा उसी पूर्वोक्त प्रकार के ऋषि वन जाओ जो सुख-दुख से, हानि-लाभ से, विजय-पराजय से अप्रभावित रहता है। भाग्य के सभी चक्करों और विडम्बनाओं को एक निरपेक्ष द्दष्टा (साक्षी) वन कर देखते रहो। विचार और विवेक से तुम जानोगे कि यह सब मन की कल्पनायें होती हैं जो सदैव परिवर्तित होती रहती हैं, वास्तविक नहीं होती हैं। जप और ध्यान के द्वारा तुम चरमतत्व वास्तविकता से सयुक्त रहने की स्थिति का अनुभव कर सकोगे। इस अनुभव से तुम्हें ब्रह्म को छोड़ कर अन्य सब मिथ्या प्रतीत होगा। वह निरपेक्ष विश्वात्मा, ब्रह्म ही होता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१५ शीशा कंघा

(प्रशान्ति निलयम २६-६-१९६९)

प्रशान्ति निलयम में मनाये जाने वाले किसी उत्सव के पूर्व यह एक आवश्यक परम्परा सी बन गयी है कि कुछ व्यक्तियों का चुनाव करके उन्हें स्वयंसेवक की मान्यता देकर अगले दिन का कार्य-भार समझा दिया जावे। इसका मुख्य उद्देश्य उनको जीवन में ऐसे अवसर देना है कि जब वे विनम्रता, मुस्तैदी और श्रद्धा, जो कि व्यक्ति की स्वयं की प्रसन्नता के लिये तथा समाज की रक्षा के लिये आवश्यक हैं, के अभ्यास का अवसर पाकर लाभान्वित हों। मैं इन चुने हुये व्यक्तियों को हरबार सम्बोधित करता रहा हूं ताकि वे जान सकें कि उनसे क्या अपेक्षा की जाती है; विशेष रूप से उनकी सेवा भावना के पीछे प्रेरणा क्या है।

भक्ति मार्गीय उन्नति के नव-साधनों में चौथे और पाँचवें साधन में सेवा पर बहुत आग्रह किया गया है, इसका उल्लेख 'पादसेवनम्' और 'दास्यम्' भगवान् के चरणों की सेवा करना, भगवान् के चरणों में अपने पुण्य कार्यों को अर्पित करना, अपने को भगवान् का सेवक मानना बतलाया गया है। भगवान् की कृपा का आकांक्षी होने से मौलिक क्रिया कलाप होने लगते हैं वही सेवा कार्य है। केवल सेवा द्वारा ही मनुष्य को स्वामित्व प्राप्त होता है और इन्द्रियों के, उद्वेगों और पूर्वानुरागों के स्वामित्व से मनुष्य स्वयं ही दैवत्व की स्थिति प्राप्त कर सकता है। अज्ञानता से अहंकार की वृद्धि होती है; यदि सत्य का ज्ञान हो जावे तो सभी लोग भर्तृहरि के समान विनम्र हो जावें। वे एक शक्तिशाली सम्राट थे जो एक समुद्र से दूसरे समुद्र तक साम्राज्य के लाखों व्यक्तियों पर शासन करते थे। उनका आदेश अनुलंघनीय था; उनकी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इच्छा विशाल मानव समुदाय द्वारा समादृत की जाती थी। फिर भी, जब उन्हें क्षरण भर में बोध हुआ कि यहां का जीवन क्षरण-भंगुर है तो उन्होंने अपना राज, वैभव, सम्पत्ति त्याग कर गेरुआ वस्त्र धारण कर पर्यटक साधु बन गये। उनके दरबारियों और आधीन सामंतों ने वास्तविक स्नेह से अश्रु-पात किये क्योंकि वे उनसे प्रेम करते थे, श्रद्धा करते थे। उन्होंने इस बात पर पश्चात्ताप किया कि महाराज ने निर्धन साधुओं के से जीर्ण-शीर्ण वस्त्र धारण कर भिक्षा द्वारा निर्वाह करना प्रारम्भ कर दिया था। "कैसा बहुमूल्य राज्य और वैभव आपने ठुकरा दिया है ? और इसके बदले में क्या घटिया सौदा आपने कर लिया है ?" उन्होंने शोकार्त होकर कहा। परन्तु भर्तृहरि ने उत्तर दिया, "मित्रों, मैंने एक बहुत ही लाभ का सौदा किया है। यह वस्त्र तो इतने मूल्यवान् हैं कि इनके बदले मेरा साम्राज्य एक अल्प मूल्य की वस्तु थी"। आध्यात्मिक पथ, जो भगवान् तक पहुँचा देता है, की यही भव्य महत्ता है। बलिदान की भावना ही सेवक की मौलिक साज सज्जा है। बलिदान की भावना की प्रेरणा के बिना तुम्हारी सेवा एक पाखण्ड, खोखली मर्यादा-पालन मात्र रह जाती है। इसे अपने हृत्पटल पर अंकित कर लो। इसे स्पष्ट और गहराई तक अंकित कर लो। लेखन सामग्री के आधार पर अंकित करने के चार प्रकार होते हैं। पहला पानी की सतह पर लिखना, यह तो उंगली के आगे बढ़ते ही मिटता जाता है। दूसरा रेत पर लिखना यह तभी तक स्पष्ट रहता है जब तक की हवा रेत को उड़ा कर सभी कुछ समतल और अस्पष्ट न करदे। तीसरा चट्टानों आदि पर उत्कीर्ण करना; यह शताब्दियों तक स्थायी रहता है; परन्तु काल की गति से यह भी कभी न कभी नष्ट ही हो जाता है। लौह पर लिखवा देना अनंत काल तक बना रहता है, समय उस पर प्रभाव डाल कर नष्ट नहीं कर पाता है। अपने हृदय पर इसी प्रकार से इसे अंकित कर लो, "परहित सरिस धर्म नहिं भाई—पर पीड़ा सम नहिं अधमाई"। इस बार मैं तुम्हें धारण करने के लिये कोई बिल्ला नहीं दे रहा हूं; क्योंकि कमीज पर धारण किया जाने वाला बिल्ला तो एक विशेष योग्यता है जो तुम्हें अभी प्राप्त करनी है यह प्रदर्शन के लिये अलंकरण नहीं है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भगवान् प्रेम है और इसे केवल प्रेम के संवर्धन और अभ्यास द्वारा ही जीता जा सकता। उसे किसी प्रकार के धोखे के फन्दे या चालबाजी से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। वह तभी द्रवित होता है जब उसके आदेशों का पालन किया जाता है; ये आदेश सभी को प्रेम करने सभी की सेवा करने के हैं। जब आप सभी से प्रेम करते हैं और सेवा करते हैं तो आप सबसे अधिक अपनी ही सेवा करते हैं क्योंकि आप सबसे अधिक अपने को ही तो प्रेम करते हैं। क्योंकि तब भगवान् की कृपा तुम्हें अपने में निमग्न कर लेती है और तुम्हें अभूतपूर्व शक्ति सम्पन्नता का अनुभव होता है। यदि मैं एक पिन लगा कर तुम्हारे परिधान पर एक बिल्ला और जोड़ दूँ तो तुम शीघ्र इसे उतार डालोगे। जब इसे कमीज पर से हटा दिया जाता है तो तुम एक सुख की श्वाँस लेते हो कि अब प्रेम करने और सेवा करने के कर्त्तव्य भार से मुक्त हो गये। तुम तो एक नाटक में हल्का सा अभिनय मात्र करना चाहते हो बिल्ला का धारण करना और उसे उतार देना। इस गाँव में एक बार एक नवयुवक का जो लोक अभिनय में त्यौहारों पर मन्दिर में सम्राट् का अभिनय किया करता था। सूर्योदय होते ही यवनिका गिरा दी गयी परन्तु उसने मस्तक पर से मुकट नहीं उतारा। उसने हठ किया कि वह तो तब भी सम्राट् था। उसने महीनों प्रजा पर अपना आदेश चलाना जारी रखा। उसने अपने सम्बन्धियों को कभी इसका, कभी उसका वध किये जाने का आदेश दिया। वह स्वयं भी शीघ्र तीव्र ज्वर का रोगी होकर चल बसा। यह तो पागलपन ही था। परन्तु व्यवहार का एक गंभीर और बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग होता है, जिससे व्यक्ति गलत अभिनय से बच कर सही दिशा में कार्य करने की स्थित में दृढ़ हो जाता है। भगवान् के स्वयं सेवक होने का अदृश्य बिल्ला सदैव धारण किये रहो, और सर्वत्र धारण किये रहो। जीवन का प्रत्येक दिन अविरल प्रेमार्पण का दिवस मनाते रहो; जिस प्रकार कि एक तैल-दीप अपने चतुर्दिक आलोक बिखेरता स्वयं को समाप्त कर देता है ठीक उसी प्रकार से तुम भी जीवन लीला बिताओ। शरीर झुके, इन्द्रियाँ परिष्कृत होवे और मन की परिसमाप्ति होवे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अमृतस्य पुत्रः की स्थिति प्राप्त करने की यही प्रक्रिया है। उपनिषदों में यही पद मनुष्य के लिये निर्धारित किया गया है कि वह अमृत पुत्र है।

भगवान् माधुर्य के विग्रह हैं। माधुर्य उन्होंने तुम्हारे अन्दर प्रदान किया है उसे तुम सर्वव्यापी भगवान्, जो प्रत्येक जीवधारी के अन्दर है, को अर्पित कर भगवान् को पालो। गन्ने को सेवा के मील में पेरो, धैर्य के कड़ाह में इस रस को पकाओ, इसे सभी ऐंद्रिक भोगों के गंदगी से स्वच्छ निर्मल, कर लो, तब इस दयापूर्ण प्रेम के शकर दाने को भगवान् को अर्पण करो।

मानव सर्वोत्तम जीवधारी है, अनादि काल से चलने वाले जैवी विकास का अंतिम विकसित पुष्प है; परन्तु वह अपने उत्तम उत्तराधिकार के अनुरूप जीवन यापन करने का प्रयास नहीं कर रहा है।

जीवधारियों ने एक विश्व-विचार-सम्मेलन यह निर्णय करने के लिये किया कि किस सीमा तक मानव को सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी, राजा और पृथ्वी पर चलने वाले सभी प्राणियों का अगुआ स्वीकार किया जावे। सिंह ने विचार गोष्ठी की अध्यक्षता की। वाघ ने मनुष्य के इस दावे को चुनौती दी, चीते ने उसका अनुमोदन कर मनुष्य के दावे का विरोध किया। उसने मनुष्य की निन्दा करते हुये एक ओजस्विनी वक्तता दी। "वह तो प्राणिमात्र के लिये सर्वत्र कलंक रूप में स्थित है। वह घातक विषों का उत्पादन कर उन्हें प्रसन्नता से पीता है और अपनी मूर्खता पर गर्व भी करता है। वह अपने ही बन्धु-बान्धवों को ठगता है और उसकी समस्त शक्तियाँ और साधन उन आसुरी आयुधो के निर्माण में लगे हुये हैं जिनसे वह अपने भाई बहिनों को निर्मूल कर डालना चाहता है। वह कुत्तों और घोड़ों को नुकीले डंडों से बदहवास शीघ्रता से दौड़ने के लिये बार-बार गोदता है; और जुआड़ियों की तरह अपनी कमाई को अविचार पूर्ण ढग से उड़ा देता है। वह सड़कों पर बदहवास होकर सरपट दौड़ता है; वह निर्दयी, लोभी, अनैतिक, सदा अतृप्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर निर्लज्ज है। वह शेष ग्रन्य प्राणियों के लिये घृणित उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह ठीक है कि उसे उच्च भाव और प्रखर बुद्धि ग्रौर स्मृति प्रदान किये गये हैं; उसका व्यवहार घृणित ग्रौर नीचतापूर्ण होता है।" उसने फिर कहा, "हमें अपने ग्रगले भोजन के विषय में उसका स्थान ग्रौर समय कुछ भी ज्ञात नहीं होता है कि वह ग्रवसर हमारे जीवन में ग्रावेगा भी कि नहीं। हमारे विश्राम के लिए भी कोई स्थान सुरक्षित नहीं है। हम ग्रपने को शीत, वायु से बचाने के लिये ग्रपनी त्वचा के ग्रतिरिक्त कोई साधन नहीं रखते हैं। फिर भी हम में से निकृष्टतम जीव भगवान् का मनुष्य से कहीं ग्रधिक श्रेष्ठतर सुपुत्र है" उसने ग्रपने भाषण के उपसंहार में कह डाला।

लोमड़ी ने उठकर निवेदन किया, "हमारे सन्तानोत्पादन ग्रौर संभोग की एक निश्चित ऋतु होती है; परन्तु, मुझे कहते हुये लज्जा ग्राती है, कि मनुष्य इस सम्बन्ध में सभी विघ्न वाधाओं को दूर कर, निर्वाध ग्रौर असीमित भोग का कीड़ा बना हुग्रा है। वही ग्रपने लिये कानून वनाता है ग्रौर शेष प्राणियों के लिये विनाशकारी हन्ता भी वन गया है।"

सिंह ने उठकर तर्क वितर्कों का समापन किया। मनुष्य के प्रति जो सर्व सामान्य ग्राक्रोश चल रहा था उससे उसने अपनी सहमति प्रकट की। यह उग्र विरोध तो मानव की इस दम्भपूर्ण घोषणा का, कि वही सवश्रेष्ठ प्राणी है, प्रतिवाद स्वरूप था। परन्तु सिंह ने सभी मनुष्यों को एक ही काले ब्रुश से रंगने से ग्रसहमति प्रकट की। उसने पाशविक प्रवृत्ति वाले निम्नकोटि के मनुष्यों ग्रौर उच्च प्रकृति वाले, भगवान् की दी हुई प्रतिभा ग्रौर सद्गुणों से मानवी ग्रौर पाशविक प्रकृति से ऊपर उठकर विवेक ग्रौर वैराग्यपूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले महात्माओं में ग्रन्तर को स्पष्ट किया। उसने कहा कि इन बाद वाले मानवों को हमें स्वामी मान कर उनके समक्ष श्रद्धावनत होना चाहिये ग्रौर पूर्वोलिखित मानवों की निन्दा कर उनसे बदला लेना चाहिये।

तुम में से प्रत्येक संघर्ष करते हुये पत्थर से बनस्पति ग्रौर बनस्पति से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जीवधारी और जीवधारी से विकसित होकर मानवाकार में अवतरित हुआ है। अब पुनः पशुत्व की ओर मत फिसलो, बल्कि उन्नत होकर दैवत्व की स्थिति प्राप्त करो और तुम्हारे चारों ओर प्रेम की नूतन प्रभा आलोक बिखेर रही होवे। यह दैवी शक्ति ही अनुप्राणित कर रही है, वह तुम्हारे स्नायु जाल में रक्त संचार करती है, ज्ञान तन्तुओं के द्वारा अनुभव और ज्ञान को अग्रसारित करती है, वह इन्द्रियों से प्राप्त संवेदनों को एकत्र करती है, तुम्हारे बौद्धिक निर्णयों को स्मृति भंडार में संजोकर रखती है। इस दैवी तत्व से प्रेम, सत्य और सज्जनता द्वारा सदैव निकट सम्पर्क बनाये रहो।

आजकल स्त्रियों की प्रसाधन थैली और पुरुषों की जेबों में एक अपरिहार्य सहायक जोड़ी रहा करती है; एक कंघा और एक शीशा। तुम्हें आशंका रहती है कि ज़रा भी तुम्हारे बाल इधर-उधर हुये नहीं कि तुम्हारे मुख मंडल का आकर्षण समाप्त हुआ, अथवा तुम्हारे मुख मंडल पर लेपित पाउडर पुंछ जाने पर भी यही भय रहता है। इसीलिये तुम इस जोड़ी की सहायता से पुनः पुनः अपनी आकृति सँवारते रहते हो। अपने इस मुख मंडल के सौंदर्य को अक्षुण्ण रखने के लिये तो तुम इतने सावधान और प्रयत्नशील रहते हो तो तुम्हें अपने ऊपर ईर्ष्या और घृणा की धूलि, मस्तिष्क में द्वेष और धोखेबाजी के धब्बे पड़ जाने और हृदय के दूषित होने के प्रति कितना सावधान और क्रियाशील रहना चाहिए? इस कार्य के लिये भी एक कंघा शीशा रखो। भक्ति का दर्पण, यह देखने के लिये कि तुम स्वच्छ, तेजस्वी और आकर्षक हो, और ज्ञान का कंघा (विवेक द्वारा समस्याओं को सुलझाने गाठों को खोलने और उलझनों को सरल बनाने की शक्ति) अपने भावों और उद्वेगों को शयन करने के लिये रखो; क्योंकि यही तो तुम्हें इधर-उधर ले जाकर पथ भ्रष्ट करते हैं।

तुम जो कुछ करो और जहाँ भी होओ सदा स्मरण रक्खो कि मैं तुम्हारे साथ हूँ, तुम में हूं, इसी को स्मरण रखने से तुम धोखा और गलतियों से बचते रहोगे। इसी से तुम्हारी सेवा उन लोगों के योग्य हो सकेगी कि जिनकी सेवा तुम करना चाहते हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१६ घर और निवासस्थान

(कालेज आफ होम साइंस, बंगलौर २६–७–१९६९)

तुम्हारे उप-कुलपति गोकक ने कन्नड़ भाषा में बड़ा ही सुन्दर शब्दा-वली में भाषण दिया है। उनका इस भाषा के कवि और लेखक होने के नाते ऐसा भाषण स्वाभाविक है। मैं भी इसी भाषा में बोलूंगा यद्यपि मैं सामान्यतया ऐसे सम्मेलनों में तेलगू में ही बोलता हूं। जो कुछ कहूं उस पर ध्यान दो, बोलने के ढंग की ओर मत जाओ क्योंकि मैं तुमसे आध्यात्मिक संयमों की, जिनसे तुम्हें स्थायी लाभ होवे, चर्चा करता हूं।

भारतीय संस्कृति संसारव्यापी है; क्योंकि यह मानवीय उद्वेगों, उद्देश्यों प्रेरणाओं को स्वस्थ और हितकर माध्यमों से प्रवाहित करने के लिये सुधार और मोड़ दे सकने में समर्थ है। यह पवित्र और मौलिक है; यह सभी हृदयों को शान्ति और आनन्द प्रदान कर सकने में समर्थ है। यह तो माता की गोदी में खेलते हुये शिशुओं के पालन से ही प्रारम्भ हो जाती है और जड़ें जमा लेती हैं। मातायें इसकी उन्नायक और संरक्षिका रहती आई हैं, मनुष्यों को तो गौण (द्वितीय स्थानीय) कार्य करना होता है। और स्त्रियों में भी, तुम छात्राओं, जो कि भविष्य में स्त्री जाति का नेतृत्व करने वाली हो, को वह आदर्श स्थापित करना है जिसका अनुकरण अन्य सभी स्त्रियाँ करना चाहें; तुम्हें इस संस्कृति को अनिवार्य रूप से समझना और आचरण में उतारना ही चाहिये; जिससे इसकी रक्षा हो और फले फूले। राष्ट्र की पुत्रियों में शिक्षा को प्राप्त करने का स्पष्ट रूप से बड़ा उत्साह है इसलिये देश और समाज के पुनर्निर्माण में उन्हीं से महान आशा की जा सकती है। शिक्षा जीवन के लिये हो; न कि जीविका के लिये। भारतीय इतिहास में शताब्दियों से यही देखा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाता रहा है कि स्त्रियों के साहस, दृष्टिकोण की विशालता, आध्यात्मिक और वैज्ञानिक संयमों और अनुशासनों में गहराई से प्रवेश कर सकने की बौद्धिक क्षमता सभी कुछ पर्याप्त मात्रा में होते हैं। मैत्रेयी, मीरा, गार्गी, सुलभा, चुडाला, महादेवी, अंदल उन शक्तिशाली नायिकाओं की प्रतिनिधि है जिन्होंने ब्रह्मसाक्षात्कार और आध्यात्मिक क्षेत्र में वड़े साहसिक कार्य किये हैं।

प्राचीन धर्मशास्त्रों और महाकाव्यों में स्त्री की बड़ी प्रशंसा की गयी है। उसे गृहलक्ष्मी "घर में समृद्धि की देवी" की संज्ञा दी गयी है। वह धर्मपत्नी, अर्थात् पुरुष के कर्त्तव्यों में गृहस्थी के सभी कर्त्तव्यों और अधिकारों और वैवाहिक जीवन के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में समान रूप से भाग लेने वाली कही गयी है। गृह विज्ञान का अध्ययन करते हुए संभवतः तुम्हें घर को सुखी, प्रसन्न, सौमनस्यतापूर्ण और स्वस्थ बनाये रखने की कला भी सिखाई जा रही हो। तुम्हें घृणा, द्वेष, लोभ, क्रोध, चिन्ता घमंड और अन्य बाधाओं से बचकर घरमें आंतरिक शांति बनाये रखते हुये घर चलाना सीखना चाहिये। केवल घरेलू बजट को संतुलित रख सकना ही पर्याप्त नहीं है, घरनी को (चाहे वह माता हो या पत्नी) जीवन का संतुलित दृष्टिकोण भी बनाये रखने की कला आनी चाहिये, जो कि कभी विजय-पराजय, लाभ-हानि और घरेलू दैनिक उलझनों से अप्रभावित रहे। यह संतुलन तो केवल ईश्वर पर भरोसा रखने से ही प्राप्त होता है, वह ईश्वर भी तो अपने ही अन्दर है। जो समस्या सभी के सामने आती है उसी का गायन करते हुये त्यागराज संकेत करते हैं कि एक ओर तो लोगों के सामने अन्तरात्मा होती है और दूसरी ओर धन वैभव का मायाजाल होता है; व्यक्ति किधर जावे क्या करे? त्यागराज ने धन वैभव का त्याग किया और अन्तरात्मा का वरण किया।

एक अनुशासन, इन्द्रियों का, तुम्हें स्वीकार ही करना चाहिये। यदि तुम उन्हें खुली छूट दोगी तो वे तुम्हें संकटों के खन्दक में गिरा देंगी। शिक्षा तुम्हें अपने गुणों, विशेषताओं ज्ञान प्राप्ति के यंत्रों पर स्वामित्व दिलाने में सफल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

होवे । आँख, कान, जिह्वा तो बेलगाम जगली घोड़ों की तरह हैं; ध्यान करना सीख लो जिससे इन्द्रियाँ अन्तर्मुखी और संयमशील होकर तुम्हें अपने मनोभावों और संवेदनों पर अंकुश लगाने देंगी । जो राष्ट्र अपने ऐन्द्रिक अनुभावों को बेलगाम रखता है उसे जीवित रहने और समृद्ध होने की आशा नहीं करनी चाहिये ।

तुम 'गृह विज्ञान' में दक्षता प्राप्त कर रही हो; परन्तु कभी यह भी सोचा है कि 'गृह' क्या है ? इसमें और निवासस्थान में क्या अन्तर है ? गृह अथवा घर को प्रेम से पूर्ण रखा जाता है, उसमें प्रेम से अर्पित बलिदान और प्रेम की प्रसन्नता होती है और होती है प्रेम की देन शान्ति । सीमेंट, लोहा, ईंट से निर्मित भवन, जहाँ माता पिता और बच्चे अपना जीवन वितावें, घर नहीं होता है । बच्चे को उसकी आकांक्षा नहीं होती है, माता-पिता को वहाँ शान्ति नहीं प्राप्त होती है । बहुत सी शिक्षित महिलाओं ने घर को होटल बना डाला है; रसोईया, माली, नौकर-चाकर, धाय, बैरा लोग, मोटर ड्राइवर जो भरे रहते हैं इनकी चहल-पहल से घर क्या 'घर' रह जाता है ? स्वामिनी, एक चमकोर गुड़िया की तरह सजी-बजी, इस कमरे से उस कमरे में विद्युत् गति से जाती आती है; वह प्रायः अपने पति के गले में लटकते हुये चक्की के पाट की तरह दुखदायी होती है, उस बेचारे पर शासन करती है उसे चैन से नहीं बैठने देती है । वह तो स्वयं को व्यय करने की अधिकारिणी मानती है, अपनी विकृत कल्पना के अनुसार गृहस्थी के लिये सदा सौदा-सुलुफ करती रहती है; जिससे समाज में उसकी प्रतिष्ठा बनी रहे; शेष समय आलस्य में निरुद्देश्य पर्यटन और काल्पनिक बीमारियों के इलाज में व्यतीत करती रहती है । वह अपने जीवन-साथी और बच्चों के लिए भार बनी रहती है ।

प्रत्येक घर का केन्द्र उसमें स्थित पूजा-स्थान होना चाहिये जिससे पुष्पों और धूप की सुगन्ध निसृत होकर घर के वायुमंडल को सुरभित और पवित्र बनाती रहे । माता को स्वयं ही इस पूजा-स्थान को गृहस्थी का हृदय बनाकर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shasfri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रादर्श उपस्थित करना चाहिये । उसे वच्चों से शारीरिक स्वच्छता, विनम्रता, ग्रातिथ्य ग्रौर सेवापूर्ण सद्व्यवहार का ग्रनुशासन कड़ाई से पालन कराना चाहिये । उसे स्वयं के आचरण ग्रौर सीख से वच्चों को समभा कर बड़ों के प्रति सम्मान प्रदर्शन, प्रातः सायं कुछ समय प्रार्थना ग्रौर ध्यान में लगाने को राजी कर लेना चाहिये । पूजा-स्थान को सदा स्वच्छ, पवित्र रखना चाहिये । प्रत्येक धर्म में कुछ विशिष्ट दिवस होते हैं; ग्रपनी ग्रपनी मान्यता के ग्रनुसार ऐसे दिवसों को इस प्रकार मनाया जाना चाहिये कि विकासोन्मुख बच्चों के मस्तिष्क में उनकी महत्ता ग्रौर जानकारी अंकित हो जावे । पति चाहे जैसा स्वार्थी ग्रौर गुस्सैल क्यों न हो, गृहस्थी की नियमित चर्या, उसमें केन्द्र बिन्दु भगवान् की पूजा द्वारा, उसे यह मानने को वाध्य किया जा सकता है कि भगवान् को केन्द्र मान कर चलाया जाने वाला घर ही शान्ति ग्रौर ग्रानन्द प्राप्ति का स्थान होता है । वह स्वयं भी शीघ्र अपना मत परिवर्तन कर इस व्यवस्था का पोषक सुदृढ़ स्तंभ वन जाता है ।

प्रारम्भिक आयु में स्वयं माता को ही वच्चों की शिक्षा का दायित्व उठाना चाहिए । यदि संतान को धाय ग्रौर नौकरों को सौंप दिया जाता है तो वह उन्हीं के ढग ग्रौर बोली सीख लेता है; वे धाय ग्रौर नौकरों के मरने पर रोते हैं ग्रौर माँ के मरने पर नहीं । क्योंकि वे धाय को मां से ग्रधिक प्यार करते हैं । मां ने तो उन्हें एक परेशानी और भार समभ कर दूसरों को सौंप दिया था । माता को स्वयं ही घर के लिये भोजन तैयार करना चाहिये; क्योंकि जो भोजन प्रेम से तैयार कर मुस्कराहट के साथ परोसा जाता है वही ग्रधिक पोषक ग्रौर शक्तिदायक होता है उस भोजन की ग्रपेक्षा जिसे नौकरानी तैयार करती है ग्रौर जो ग्रसन्तुष्ट, भ्रष्ट चौके के नौकर द्वारा परोसा जाता है ।

मुझे प्रसन्नता है तुम्हारे पाठ्यक्रम में पाक विद्या ग्रौर पोषण का भी समावेश है । मैं यहां मंच पर से ही गरमागरम भोज्य सामग्री से निकलने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वाली पाकशाला से आने वाली सुगन्ध का अनुभव कर रहा हूँ ! तुम्हारी पाक विद्या की पहुंच दूर दूर तक होती है, यह मुझे स्वीकार करना चाहिये !! एक स्वादिष्ट पकवान्न में प्रयुक्त पदार्थों की गन्ध से इन्द्रियां सजग हो जाती हैं और निस्सन्देह उनमें भोगेच्छा उत्पन्न हो जाती है । परन्तु, मैं आशा करता हूं कि तुम सात्विक, राजसिक और तामसिक भोजनों का अन्तर भी जानती होगी और यह भी जानती होगी कि चरित्र पर उनका क्या प्रभाव पड़ता है । मस्तिष्क ही स्वास्थ्य और प्रसन्नता की कुंजी है; इसलिये भोजन ऐसा होना चाहिये कि उसका मस्तिष्क पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े । सात्विक भोजन के साथ ही मस्तिष्क को विशेष भोजन के रूप में ध्यान, जप, नामस्मरण इत्यादि भी प्राप्त होता रहे जिससे कि वह सदा स्वस्थ, स्थिरचित्त और मुस्तैद रहे ।

घर में माता का स्थान स्वामिनी का होता है । इस जैसा विद्यालय भी आजकल पत्नीत्व की तो शिक्षा देता है परन्तु मातृत्व की नहीं । यहां विज्ञान जिस घर के लिए प्रशिक्षण देता है वह पत्नी के शासन का क्षेत्र बन जाता है, न कि वह क्षेत्र जहाँ माता अपने प्यार को बखेरती है और देश और उसकी संस्कृति को ढालने, मूर्तरूप देने का प्रयास करती है । सयाने और बड़े बड़े लड़के लड़कियाँ माता पिता के चरण स्पर्श प्रतिदिन कार्यारंभ करने से पूर्व करें । इस से घर में श्रद्धा का वातावरण बनेगा । पांच मिनट पूजा-स्थान में, माता पिता को नमस्कार यही दैनिक क्रम होना चाहिये । उपनिषदों की यही व्यवस्था है, हमारी संस्कृति की यह मौलिक आवश्यकता है । मातृदेवोभव, पितृदेवोभव, आचार्य देवोभव !

घर वह मन्दिर है, जहाँ परिवार और उसका प्रत्येक सदस्य जो स्वयं ही एक चलता फिरता मन्दिर है, पालित होता है, पुष्ट बनता है । भगवान् के इस भवन की मां ही प्रमुख पुजारिन है । विनम्रता की धूप से घर सुवासित रहे । सम्मान और श्रद्धा का दीप इसमें सदा आलोकित रहे । इस दीप में

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रम का तैल और विश्वास की बत्ती सदैव रहें। अपने जीवन के वर्ष ऐसे घर में, उस पूजा में रत रहते हुये, जिसे तुमने स्थापित किया है, बिताओ। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि इस देश में तुम्हारे विश्वास और शक्ति से भक्ति और समर्पण का भाव बढ़ता रहे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१७ महासागर का आह्वान

(गुरुपूर्णिमा प्रशान्ति निलयम् २९-७-१९६९)

साधक को अपने दृष्टिकोण के बारे में बड़ा सावधान रहना पड़ता है। वह कुछ वस्तुओं को देखना चाहता है; जिन वस्तुओं पर वह दृष्टिपात करना चाहता है उनके चुनाव के विषय में। क्योंकि दृष्टि से ही आसक्ति, दुख और उद्वेग आदि का निर्णय होता है। अभी तक भगवान् द्वारा उत्पन्न सभी ाणियों में तुम्हारा स्थान सर्वश्रेष्ठ है; इसीलिये तुम्हें ऐसी समदृष्टि उत्पन्न र लेना है जो नीच ऊंच का भेदभाव न करके सभी में व्यापक दिव्यता का र्शन कर सके; इसी से किसी को किसी से भिन्न न माने। शंकर ने कहा था "अपनी दृष्टि को ज्ञान सम्पन्न कर लो फिर दृष्टिगोचर पदार्थ अपने सच्चे प्रकाश में ब्रह्म ही प्रतीत होगा।"

ऐसी दृष्टि को दिव्य, अलौकिक, अतीन्द्रिय और कल्याणकारी कहा जाता है। हर पदार्थ, जो तुम्हारे सामने दिखाई देवे, एक दर्पण होता है जिसमें यदि तुम नेत्र खोलकर झाँको तो भगवान् के दर्शन पा सकते हो। जो भगवान् तुम्हारे अन्दर है, वही प्रत्येक के अन्दर है। अन्यों को अपने से भिन्न मत मानो; वे तो भिन्न-भिन्न दर्पणों में तुम्हीं हो। विश्व में सब तुम्हारे ही सगे-संबन्धी हैं; सब के सब एक ही ज्योति की चिनगारियां हैं। गीता कहती है

"विद्या विनय सम्पन्ने, ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पंडिताः समदर्शिनः॥

(अध्याय ५—श्लोक १८)

विद्या और विनय से युक्त ब्राह्मण, गाय, हथिनी, कुतिया और चाण्डाल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इन सब में उस एक ही का दर्शन कर सकने वाला पंडित या ज्ञानी होता है। अब इस पृथ्वीतल पर ऐसे पंडितों की संख्या नहीं के बराबर है। लोग तो अपनी विद्वता प्रदर्शन के बलपर पंडित कहलाना चाहते हैं; न कि उस दृष्टि के आधार पर जो वे पा सके हैं।

कुछेक पंडित गीता के श्लोक द्वारा यह घोषित करते हैं कि धर्म का ह्रास होने पर भगवान अवतार लेते हैं। उनकी व्याख्या इस प्रकार होती हैं, "कृत-युग में धर्म के चार चरण थे उसके बाद त्रेता में तीन ही रह गये। कालांतर में द्वापर में केवल दो चरणों पर ही धर्म खड़ा रहा और अब कलियुग में तो केवल एक ही चरण पर सधा हुआ है"। उसी श्वांस में वे यह भी कह जाते हैं कि भगवान् ने त्रेता में रामावतार और द्वापर में कृष्णावतार केवल धर्म की पुनर्स्थापना के लिए लिया था। उनके कथनानुसार जब कृष्णावतार हुआ था तो धर्म के दो चरण विद्यमान थे, परन्तु जब भगवान् की नरलीला समाप्त हुयी (कृष्ण के शरीर छोड़ने के समय) तो धर्म की एक और टांग जाती रही और उसे पीड़ित होकर केवल एक ही चरण पर सधना पड़ा। इस मूर्खतापूर्ण व्याख्या पर कौन विश्वास कर सकेगा ? नहीं भगवान् के हर अवतार ने सदा अपने लिए अंगीकृत कार्य को पूरा किया हैं। धर्म की हरबार पूर्णरूप से स्थापना हो गयी थी।

वे तो हरबार सत्य की पुनरस्थापना के लिए, उसे दृढ़ नींव पर स्थित करने के लिए आये थे। क्योंकि, जैसा वेदों में कहा गया है, सत्यान्नापरोधर्मः सत्य से श्रेष्ठतर कोई धर्म नहीं हैं। जब सत्य ओझल हो जाता है, विकृत प्रतीत होता है, उसे असफल घोषित किया जाता है, तो उसकी सत्यता प्रमाणित करने, एकबार पुनर्मूल्यन करने के लिए अवतार होता है। भगवान् सत्य को धारण करते हैं, सज्जन लोग सत्य पर आचरण करते हैं, दुष्टों का सत्य के द्वारा उद्धार किया जाता है। सत्य बन्धनों से मुक्त करता है, सत्य ही शक्ति है; सत्य ही मुक्ति अथवा स्वतंत्रता है। यह वह दीपक है जो हृदय से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अज्ञान और संशय का अन्धकार नष्ट कर ज्ञान का प्रकाश कर देता है भगवान् की आभा ही सत्य है। अपने हृदय में भगवान् का स्वागत करो। अपनी अभीप्सा की पूर्ति के लिए भगवान् को हृदय में स्थापित करो। सदा ब्रह्म का चिन्तन करो। तभी तुम ब्राह्मण कहलाने के अधिकारी हो सकोगे। केवल चर्म से ही संबंध रखने और जो कुछ चमड़े के अन्दर है उससे संबंधित रहने पर तो चाण्डाल की संज्ञा दी जाती है; जो केवल चमड़े का व्यापार और काम करता है।

एक कनक था, जिसका जन्म किसी नीची कही जाने वाली जाति में हुआ था। वह बड़ा पक्का भक्त और कृष्ण के वियोग की पीड़ा में तड़पाता रहता था। वह उदीपी गया जहां कि कृष्ण का एक प्रसिद्ध मन्दिर है जिसकी स्थापना स्वयं माधवाचार्य ने की थी। नीच कुल में जन्म लेने के कारण वह मन्दिर में प्रवेश करके अन्तः प्रकोष्ठ के समक्ष, जहां कृष्ण की भव्य मूर्ति जो आचार्य द्वारा खोजी गयी थी, स्थापित थी, पहुंच न सका। वह बाहर ही खड़ा रहा, परन्तु मन्दिर के सामने वाले झंडे के लट्ठे द्वारा मूर्ति नहीं दिखाई देती थी। उसने मन्दिर की बाहरी दीवाल की परिक्रमा की और पत्थरों के बीच किसी छिद्र की खोज की जिसमें होकर वह भीतर की एक हल्की झलक ही पा जावे। उसने देखा कि एक पत्थर अपने स्थान पर ढीला रखा है। उसने उंगलियों से गारा हटाकर एक छोटा सा छिद्र बना लिया और जब उसमें से होकर उसने झांका तो मूर्ति का पिछला भाग अर्थात् पीठ ही देख सका। परन्तु वह इतने से ही फूला न समाया। दिव्योन्माद से वह नृत्य करने लगा और कृष्ण की महिमा के गीत गाता रहा। उसी समय मूर्ति ने उसकी ओर घूम कर उसे मुखाकृति के सामने वाले भाग के भी दर्शन दिये। इस प्रकार कृष्ण ने उसे अपने ऐश्वर्य और महिमा सहित दिव्य दर्शन दिये। अभीप्सा को कृपा का पुरस्कार प्राप्त हो गया।

अभीप्सा से समर्पण आता है और समर्पण से उच्चतम कोटि का आनन्द

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्राप्त होता है। सब कुछ उसी की इच्छा पर छोड़ दो, "त्वदिष्टं भवतु गोविन्द !" जो कुछ घटे चाहे वह सुखद हो या दुखद स्वीकार करो। प्रत्येक का तुममें दैवत्व का विकास करने में आवश्यक योगदान होता है। एक बार बग़दाद में एक धनी व्यापारी था। वह पवित्र और धार्मिक जीवन बिता रहा था। उसके एक पुत्री थी जिसे वह बहुत प्यार करता था; क्योंकि वह सद्गुणों की खान थी। पिता ने निश्चय किया कि वह अपनी पुत्री का विवाह जाति, कुल, धर्म के बन्धनों से मुक्त होकर भगवान् के किसी सच्चे तरुण भक्त से करेगा, चाहे उसमें अन्य कोई गुण न हों या कोई अक्षमता ही क्यों न होवे। उसने ऐसे वर की खोज की, सरायों में, मस्जिदों में तथा उन जगहों पर भी जहां धर्मात्मा व्यक्ति जाया करते हैं। एक शुक्रवार को उसने एक मस्जिद में देखा कि एक सुन्दर नवयुवक घुटनों के बल बैठ कर, सबके चले जाने के बाद भी, भगवान् को पुकार-पुकार कर बड़ी विनय से प्रार्थना करता रहा। उसकी प्रार्थना में हार्दिकता और करुणा भी थी। वह उसके समीप गया और पूछा कि क्या वह उसकी पुत्री से विवाह कर लेगा। उसने उत्तर दिया, "मैं तो निर्धनों में भी सबसे अधिक निर्धन हूं। मेरी छत भी टपकती है और मेरे आँगन में कंकड़ पत्थर ही बिछे हैं; मैं वहीं बैठता हूं। ऐसे भिखमंगे का कौन ब्याह करेगा? मैं उससे विवाह कर लूंगा जिससे मेरी आध्यात्मिक साधना में कोई अन्तर न पड़े और वह मेरी निर्धनता में भागीदार बनना चाहे तो।"

व्यापारी को लगा कि वह नवयुवक ही सर्वोत्तम वर है, उसकी शीघ्र ही शादी सम्पन्न हो गई। व्यापारी की पुत्री आकर फकीर के घर में झाड़ू लगाने लगी। उसे प्रसन्नता थी कि उसका पति उसके हृदय की भावना के अनुकूल था। वह भी भगवान् के मार्ग की तीर्थयात्री थी और आध्यात्मिक साधना करने वाली थी। जब वह फर्श पर झाड़ू लगा रही थी तो उसने एक तश्तरी में रखा हुआ रोटी का एक टुकड़ा देखा। उसने पूछा कि उसे वहां

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्यों रखा गया है और उसने उत्तर दिया, "मैंने ही उस टुकड़े को रख छोड़ा है कि यदि कल पर्याप्त भिक्षा न मिली तो यह काम आवेगा।"

इस पर पत्नी ने उत्तर दिया, "मैं तुम्हारे कारण लज्जित हूं कि अल्लाह में तुम्हारा इतना अल्प विश्वास है। वह जो हमें भूख लगाता है, क्या वह हमें रोटी भी न देगा? मैं इस धारणा के व्यक्ति के साथ नहीं रह सकती। भगवान् और उसकी करुणा में तुम्हारा कतई विश्वास नहीं है।" इतना कह कर वह फकीर को उसके भाग्य पर छोड़कर चली गई। गीता भी कहती है कि यदि तुम सभी धर्मों को छोड़कर केवल उसी की शरण में चले जाओ तो वह तुम्हारे पाप नष्ट कर आंसू पोंछ देगा। धर्मों को छोड़ने का अर्थ सत्कर्मों और सद्‌गुणों के छोड़ने से नहीं है, उसका यही अर्थ है कि अपने कर्त्तापन का अहंकार त्याग दो और इस विश्वास को पकड़लो कि जो कुछ होता है उसका कर्ता एक मात्र वही भगवान् है। यही वास्तविक 'छोड़ना' है। संसार में भोजनालय, विद्यालय, विलासालय, क्रीड़ालय, विचित्रालय (म्यूजियम) आदि होते हैं। इन सब का नाम कुछ भी हो यह सब दुःखालय भी होते हैं। आनन्दनिलयम् तो केवल देवालय ही होते हैं; अर्थात् व्यक्ति का अपना शरीर जिसमें भगवान् अन्तर्यामी, पथप्रदर्शक और संरक्षक बन कर स्थित है वही तो मन्दिर है।

इस गुरुपूर्णिमा दिवस पर मैं आपको यह परामर्श देता हूं। किसी से घृणा न करो। गीता में वर्णित आध्यात्मिक स्वास्थ्य, 'अद्वैष्टा सर्वभूतानाम्' किसी से भी द्वेष न रखने वाले बनो। इस आदेश का कारण यही है कि हर व्यक्त वस्तु और व्यक्ति की आत्मा में उसी भगवान् का अस्तित्व है। इसलिये किसी को भी चोट पहुंचाना पाप और आत्मघात के सदृश है। प्रेम ही विष में परिवर्तित हो जाता है जब घृणा इसे दूषित कर देती है। कुछेक को प्यार करो तो करो परन्तु शेष से घृणा तो न करो। क्योंकि वह घृणा प्रेम को गंदला कर देगी और उसे संघातक बना देगी। एक सिद्ध पुरुष को तो यह सब स्वतः ही आ जाता है, परन्तु साधक को तो इसे सेवा और चिन्तन द्वारा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

(यह चिन्तन आत्मिक एकता के लिए होवे) प्राप्त करना होता है। प्रेम केवल जिह्वा से ही न बहे, न केवल मास्तिष्क से अर्थात् विचारों से ही बहे उसे तो प्रधानतया हृदय के झरने से ही बहना चाहिये।

तुम्हें परीक्षा में लिखित उत्तरों पर ही अंक प्रदान किये जाते हैं; न कम न अधिक। कभी, यदि १०० प्राप्त अंकों में केवल ५ या ६ ही प्राप्त कर सको या हो सकता है उन ५ या ६ को भी निरस्तकर तुम्हें शून्य प्रदान किया जावे। क्योंकि शून्य और ५ या ६, जो भी तुम अर्जित कर सके, के बीच स्थिति में कोई विशेष अन्तर नहीं आता है। परन्तु यदि तुम्हारे प्राप्तांक पास होने के लिये निर्धारित न्यूनतम अंकों के अत्यन्त निकट हों तो २ या ३ की जो कमी होती है कृपांक देकर पूर्ति करके तुम्हें अगली कक्षा में चढ़ा दिया जाता है। साधना में भी ऐसा ही नियम है। अल्प उन्नति तो असफलता के ही समतुल्य होती है; 'सफलता के सन्निकट पहुंच जाना' सराहा जाता है और कृपा द्वारा तुम्हें आगे बढ़ा दिया जाता है।

इस गुरुपूर्णिमा दिवस पर लोग आध्यात्मिक जीवन की दीक्षा किसी गुरु या मंत्रदाता से लेते हैं या किसी नये व्रत या प्रतिज्ञा को लेते हैं। ये मंत्र-दाता गुरु की पदवी को नहीं पा सकते जैसा कि श्लोक में कहा गया है, गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरु-साक्षात् पर ब्रह्म" इत्यादि। यहां पर गुरु से तात्पर्य उस नाम रूप से परे ऋषि से है जो त्रिगुणातती है। वह तो न बुरा है न अच्छा, वह न उत्साहपूर्ण और न उदासीन है और न विरक्त है। वह शान्त, संतुष्ट और सभी प्रकार के वाह्य प्रभावों से रहित होता है। वह ऐसी आत्मा है जिसने कि यह अनुभव कर लिया है कि आतमा सभी में एक ही है। वह तुम्हें जन्म मृत्यु के भय से मुक्त कर देता है वह तुम्हें शाश्वत निर्पेक्ष सत्य के दर्शन कर सकने योग्य बना देता है।

यदि किसी ऐसे मंत्रदाता से तुम्हारी भेंट न हुयी हो तो निराश या उदास

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

न होओ। पथ प्रदर्शन पाने के लिये प्रार्थना करो तो तुम्हें अपने हृदय से ही गीता का ज्ञान अपने अन्दर स्थित सारथी से प्राप्त हो जावेंगे। मंत्रदाता तो हर वक्त तुम्हें सरलता से अनेकों प्राप्त हो जावेगा क्योंकि यह तो अनेकों का धंधा ही बन गया है। इस धंधे में अनेकों प्रतिद्वन्दी घुस आये हैं; वे अहर्निशि अपने शिष्यों की संख्या में निरन्तर वृद्धि के लिये प्रयत्नशील रहते हैं। इससे उन्हें अधिकाधिक धन संचय करने के अवसर भी मिलते रहते हैं। ख्याति भी दूर-दूर तक फैलती जातीं है। कुछेक की गर्दन मोटी पड़ जाती है, किसी की दृष्टि धुंधली पड़ जाती है। कोई-कोई खुजली या कटुता प्रदान करने वाली अन्य बीमारियों का शिकार बने रहते हैं। शुष्क शास्त्रार्थ के लिये परस्पर ललकारने वाले व्यक्तियों का सम्मान गुरू की तरह कैसे किया जा सकता है? उनमें विद्वता के साथ ही भागवदीय दिव्य आनन्द का अनुभव नहीं होता है; वह उस पवित्र कार्य के लिये निर्देशित या निर्मित ही नहीं किये गये हैं।

पत्र का कागज चाहे जितनी उच्चकोटि का हो, उस पर का लिफाफा कितना ही कलात्मक हो, और पत्र भी भाषा सुरुचिपूर्ण और पद्यात्मक होवे फिर भी वह सम्बोधित व्यक्ति को प्राप्त नहीं होगा यदि उस पर २५ पैसे का पोष्टेज टिकट नहीं चिपकाया गया है। इसी प्रकार, छाप तिलक माला शाल और धार्मिकता के अन्य अलंकरण अप्रभावी रह जाते हैं और भगवान् से भेंट नहीं हो पाती है। भक्त की प्रार्थना भगवान् तक बिना २५ पैसे के टिकट—समर्पण या भक्ति लगाये कैसे पहुंच सकती है।

जिस गुरू की खोज है उसे गुरू प्रत्येक शब्द में, जो उसके सुनने में किसी भी घटना में बोला गया हो; खोजने पर प्राप्त हो जावेगा। देवता, दक्षिणा-मूर्ति (जो मानवो को बुद्धि प्रदान करता है) एक चौड़ी समुद्र पट्टी पर अकेले ही विचार मग्न होकर विचर रहे थे। वे लहरों की ओर मुड़े और उनका अनंत बार समुद्र तट पर आकर टूटना देखते रहे। उन्होंने लहरों पर एक सूखी टहनी को उछलते हुए दूर पर देखा। वह एक लहर से दूसरी तक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पहुँचाई जा रही थी, कभी लहर के अवनत भाग में, कभी चोटी पर पहुंचती थी, क्रमशः वह रेत पर लाकर फेंक दी गई और दक्षिणामूर्ति के पास ही आकर गिरी। वे महासागर का अहंकार, कि वह एक नन्हीं सी टहनी को भी शरण न दे सका, देखकर चकित रह गये। उनकी यह आलोचना का अनुमान कर महासागर ने कहा, "मुझमें न तो अहंकार है और न क्रोध, यह तो आत्मरक्षणार्थ मेरा कर्त्तव्य था। मुझे अपने भव्य सम्मान में बहा ले जाने वाली किसी भी वस्तु को नहीं स्वीकार करना चाहिये। यदि आज मैं इस टहनी को अपनी भव्यता का उल्लंघन करने देता तो यह मेरे पतन का प्रथम सोपान होता"। महासागर की सतर्कता की सराहना करते हुये दक्षिणामूर्ति मन ही मन मुस्करा उठे। उन्होंने इस घटना को आध्यात्मिक क्षेत्र में एक अनूठी शिक्षा के रूप में लिया। इच्छा की नन्हीं सी टहनी भी यदि मन में उत्पन्न होती है तो उसे अविलम्ब शुद्ध निर्मल जल से बाहर निकाल फेंकना चाहिये। यही शिक्षा इससे प्राप्त होती है। रामायण भी यही शिक्षा देती है कि सीता को कंचनमृग पाने की क्षुद्र इच्छा को प्रश्रय देने के कारण ही उन्हें राम के वियोग जैसी हृदय-विदारक पीड़ा को दीर्घकाल तक सहना पड़ा था। यदि वे भी महासागर की तरह उस इच्छा का तत्काल परित्याग कर देतीं तो क्यो इतना कष्ट उठातीं। 'इच्छा के बन्धन से मुक्त रहे' यही बार-बार गूंजने वाला स्वर रामायण, महाभारत, भागवत, बाइबिल, कुरान तथा मनुष्य के अन्य धर्मशास्त्रों में दोहराया गया है।

प्रत्येक धर्म अपने अनुयाइयों को भगवान् का ध्यान किसो न किसी नाम-रूप के सहारे करने का उपदेश देता है। परन्तु जो हर नाम हर रूप को भगवान् का ही नाम और रूप मानता है वह ध्वन्यात्मक प्रतीक स्वीकार करता है। वह ध्वनि सारगर्भित और सभी नामों की सार रूप 'प्रणव' ध्वनि होती है, वह अक्षर अपरिवर्तनीय और अविनाशी होती है। यह यात्रा परिवर्तन-शील से अपरिवर्तनीय क्षर से अक्षर की ओर होती है। इस यात्रा में तीन चरण होते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

"मैं हूं आपका" "तुम मेरे हो" और अन्त में "मैं ही तुम हूं।" प्रत्येक साधक को एक पड़ाव से दूसरे तक जाते हुए यात्रा पूरी करनी पड़ती है। आगे बढ़ते रहो (चरैवेति चरैवेति) न रुको और न पड़ाव डालो। अपना बोरिया बिस्तर यात्रा भर अपने साथ ही रखो जैसा कि घोंघा कछुआ जैसे जीवधारी करते ही हैं। सिद्धांत यह है कि सशरीर यात्रा वहाँ तक चलती रहे जब तक कि आत्मा स्वयं शरीर त्याग कर आगे न बढ़ जावे।

चर्च में उत्पन्न होना तो अच्छा है पर चर्च में शरीर त्यागना अच्छा नहीं होता। आगे बढ़ो और अपने को संयम नियमों से अपर, सिद्धांतों, विचारों और रूढ़ परम्पराओं और कर्मकाण्ड के विस्तार से, जिनसे तुम्हारी स्वतन्त्रता और गति सीमित हो गई है, बंधकर रह गई है, परे होकर अपना उद्धार स्वयं कर लो। उस विन्दु तक पहुंच जाओ जो चर्च की सीमा से परे है, जहाँ सभी सड़कों की परिसमाप्ति है अथवा जहाँ से सभी मार्ग निकल कर आगे जाते हैं।

कलकत्ता के दत्त महाशय का कहना है कि शास्त्रों में निर्दिष्ट तीनों चरण, ध्यान से सुनो, गम्भीरता से सोचो और ईमानदारी से उनका अभ्यास करो, बहुत ही कठिन और दुस्कर कार्य हैं। निस्सन्देह बात सही है। आत्म-साक्षात्कार किसी जादू छूमन्तर अथवा धोखाधड़ी से प्राप्त होने वाली सस्ती घटना नहीं हैं। इसके लिए कोई लघु मार्ग (शार्टकट) भी नहीं है। सुनो, भद्राचलम् के संत रामदास के साथ क्या वीती। उनके जैसे महान् गायक को गोलकुंडा के नवाव ने कैद में डाल दिया क्योंकि उस पर सार्वजनिक धन के दुरुपयोग का आरोप था (भद्राचलम् में स्थित राम मन्दिर जीर्णोद्धार को लेकर) स्वयं राम और लक्ष्मण ने नवाब को आरोपित धन चुराकर उनकी मुक्ति कारागार से कराई थी।

रामदास ने ताड़पत्रों का एक विशाल संग्रह एकत्रित कर उनमें से प्रत्येक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पर एक-एक राम संबन्धी पद लिख रखा था । इस विशाल संग्रह पर एक दिन उनकी दृष्टि पड़ी, उनके मन में एक विचार उठा, "क्या मैंने अपने आनन्द के लिए इन गीतों को रचा है ? अथवा राम की प्रसन्नता के लिए लिखा है ? वह जानना चाहते थे कि वे कौन-कौन से गीत हैं जो राम को पसन्द आये और कौन-कौन नापसन्द हुये । उन्होंने सभी को गोदावरी में विसर्जित कर दिया और कहा कि जो पसंद आये हों उन्हें राम ही बचावें । लगभग सभी पानी की तली में बैठ गये; केवल १०८ तैरते रहे उन्हीं का रक्षण किया गया । केवल वे ही हृदय की गहराई से उठे थे । शेष में चतुराई, कृत्रिमता, पाण्डित्य और प्रदर्शन की दुर्गन्ध आती थी । प्रार्थना तो हृदय से ही होनी चाहिये जहाँ कि भगवान् का निवास है न कि मस्तिष्क से जहां सिद्धांतों और संशयों की आँधी उठती रहती है ।

भगवान् के प्रति विश्वास हृदय में ही होता है । उसकी निरन्तर उपस्थिति, और निरन्तर पथ-प्रदर्शन से मनुष्य को साहस, सद्गुण, प्रकाश और (ज्ञान) प्राप्त होता है । शास्त्र कहते हैं, वैद्य में विश्वास करो जिससे तुम निरोग हो सको, मंत्रदाता के दिए हुए मंत्र में विश्वास रखोगे तभी तुम्हारी साधना सफल होगी, यदि मन्दिर की पवित्रता में विश्वास रखोगे तो तुम्हारी तीर्थ-यात्रा सफल होगी, ज्योतिषी की भविष्यवाणी में विश्वास यदि नहीं करते हो तो क्यों उसके पोथो-पत्रा और नानाप्रकार की अटपटी गणना को घण्टों सुनने का कष्ट उठाते हो ? गुरू में विश्वास रखो तभी तुम्हारे चरण दृढ़ और आत्म साक्षात्कार के मार्ग पर आगे बढ़ते रहेंगे । गुरू में विश्वास करने से आत्मा में विश्वास दृढ़ होता है; अन्यथा गुरू एक बाधा ही है ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१८ मकड़ी अपने ही जाले में

(प्रशान्ति निलयम् ३-९-१९६९)

इस तरह के उत्सवों के दिन कैलेन्डर में विशेष रूप से अंकित किये हुये होते हैं; इनका उद्देश्य मानव के मस्तिष्क को सावधान करना होता है; क्योंकि यह मन सुस्ती, आत्मतुष्टि के कारण प्राय: साधना के पश्चात् ऊँघने लगता है; जड़ता आ घेरती है। ये तो चेतावनी की घंटी के सदृश होते हैं जो वर्ष के बीच यदा-कदा बज उठती है और मनुष्यों को उनके आगे की यात्रा और क्षितिज के उस पार लक्ष्य प्राप्त करने की चेतावनी देती है।'तस्माद् जाग्रत् उत्तिष्ठ' ऋषियों का कथन है कि इसलिये सावधान हो जाओ जागो। 'जाग्रत उत्तिष्ठ प्राप्यवरान्निवोधत्' जगो, उठो और लक्ष्यप्राप्ति तक निरंतर उद्योग-रत बने रहो।

सांसारिक उपहारों की प्राप्ति के लिये मनुष्य को तृष्णा के समक्ष घुटने नहीं टेकने चाहिये। उसे तो प्रभु कृपा का उपहार प्राप्त करने का आकांक्षी होना चाहिये। उस आकांक्षा से कृष्ण दर्शन देने के लिये बाध्य होते हैं, कि जिससे तुम्हारी पीड़ा शान्त होवे। भारतीय सस्कृति में धर्मशास्त्रों के आंतरिक अर्थों पर जोर दिया गया है; उसमें संस्कारों, धार्मिक कृत्यों और रीति-रिवाजों का गंभीर महत्त्व समझाया गया है। यद्यपि इस सबका प्रतीकात्मक भाषा में उल्लेख किया गया है; परन्तु उनमें साधक को सदैव आवरण हटाकर प्रतीकवाद में निहित सिद्धान्त को उघाड़ कर सत्य को समझने के लिये सदा प्रोत्साहित किया गया है। इसने वेदपाठियों को वेद की ऋचाओं से, अर्थों का पूर्णरुपेण स्मरण करते हुये ध्यान करते हुये, सस्वर पाठ सहित प्रार्थना करने का आदेश दिया है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आज हम श्री कृष्णावतार की जयंती मना रहे हैं। कृष्ण रूप में अवतार होने के अनेकों गूढ़ रहस्य हैं। वृन्दावन (वृन्दा, तुलसीका, वन) जीवन का उलझा हुआ बन है। वृन्दावन में कृष्ण के द्वारा जिन गायों के चराने का उल्लेख आता है, वे मानवों के अतिरिक्त कुछ और नहीं है; मानव भगवान् की देखरेख और कृपा के बिना असहाय ही रहता है। गोकुल (गायों के झुण्ड) भागवत (भगवान् की महिमा का ग्रन्थ) में उस क्षेत्र को बतलाया गया है जहाँ कृष्ण गायें चराया करते थे। 'गो' का अर्थ वह जीवात्मा जो मानवाकृति में बन्धन में पड़ी हुयी है। इसलिये गोकुल वह क्षेत्र है जहां मानव का निवास है। तुम जानते ही हो कि तेलगू में गीता का अर्थ एक रेखा होता है। और उपनिषदों में भगवान् का स्वरूप विद्युत-रेखा के समान, जो नीले आकाश में कभी-कभी कौंध जाती है, बतलाया गया है। नीले आकाश का 'नील' ही कृष्ण है। वेदों का कथन है 'नीलतोयद' भागवत् 'नीलमेघ' कह कर संकेत करती है। दोनों ही भगवान् को समुद्र या आकाश के समान गहरे नीलवर्ण का बतलाते हैं।

वेदों में उल्लिखित रेखा ही गीता है, वही कृष्ण का सत्यगीत है। गोकुल की सरल हृदय गोपियां कृष्ण को प्रत्येक झाड़ी, कुंज के अन्दर या आड़ में खोजती थीं, क्योंकि उसने उनका हृदय मोह लिया था फिर भी उनसे दूर रहता था। भगवान् की खोज का वर्णन करने का यह दूसरा ही ढंग है। हम जानते हैं कि भगवान् सदैव सर्वत्र हमारे साथ ही है फिर भी उसकी मधुरता में निमग्न होने के हमारे प्रयत्न निस्फल रह जाते हैं। कृष्ण तुम्हारे हृदय के अंधकार में छिपा हुआ है तुम्हें वहीं उसको खोजकर कसकर पकड़ लेना है। वह भाग जाता है, परन्तु, उसके पदचिन्ह उसके द्वारा फलाये हुये दूध पर बन जाते हैं; वह हमारी पहुंच के बाहर रहने की हड़बड़ी में दूध फैला जाता है। हां, इसका अर्थ है कि उसके पदचिन्ह प्रत्येक सुन्दर वस्तुओं में खोजो, प्रत्येक सुन्दर कार्य, कृतज्ञता के प्रत्येक आंसू में उसे खोजने की व्याकुल पुकार में,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अपने हृदय कुंज में जहाँ प्रेम की सुगन्ध और सद्गुणों का प्रकाश है, उसे खोज निकालो।

लोग तुम्हें चन्द्रमा दिखाने के समय कहते हैं, "उस वृक्ष की फुनगी के ऊपर उसी दिशा में देखो।" मानों कि चन्द्रमा उसी वृक्ष की किसी डाल पर रखा है। उससे आगे लाखों मील का व्यवधान है उस सब मार्ग को पार करके ही चन्द्रमा तक पहुंचा जा सकता है। परन्तु तुम इतने दूर से भी उसे एक गोल तश्तरी जिससे सतत् शीतल सुखदायक प्रकाश निस्रत होता है, के रूप में देख सकते हो। इसी प्रकार भागवत और अन्य महाकाव्य और कवितायें भगवान् की ओर संकेत करते हैं, तुम्हें उसके दर्शन में सहायक होते हैं; तुम्हारे अन्दर भगवान् के समीप तक पहुंचने की जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं, इतना ही होता है। प्रत्येक ग्रन्थ तुम्हें एक स्थिति से दूसरी तक मार्ग दिखाता है; भगवान् की महिमा का अधिकाधिक बोध होता जाता है यहां तक कि तुम्हारे अन्दर एक अदम्य आकाँक्षा भगवद्दर्शन की उत्पन्न हो जाती है। वह आकांक्षा ही स्वयं अपना पुरस्कार है, उसी से भगवान् की इच्छा में ऐसा परिवर्तन होता है कि वे तुम्हारी सन्धि और आकांक्षा के अनुसार ही रूप धारण कर प्रत्यक्ष हो जाते हैं। कहा जाता है कि लुढ़कने वाले पत्थर के साथ अन्य कुछ आकार वृद्धि का पदार्थ नहीं संग्रहीत होता है, जो पत्थर कहीं ठहर जाता है उसी के साथ कुछ पपड़ी या काई लग जाती है, उग आती है। जो मस्तिष्क भगवान् की महिमा का वखान करने वाले ग्रन्थों के अनुशीलन में रत रहता है उसमें भौतिक इच्छाओं की पपड़ी या काई कैसे उग सकती है।

भगवान् इच्छाओं से नहीं आकर्षित होता है; उसकी कोई आवश्यकतायें ही नहीं होती हैं। वह तो सदा पूर्ण, स्वतंत्र और संतुष्ट रहता है। उसके कोई आकर्षण अथवा प्रतिकर्षण नहीं होते हैं। उसके सगे संबंधियों के कोई वन्धन नहीं होते हैं। किसी कवि ने गाया है, "हे कृष्ण ! हे गोपीनाथ ! मैं तुमसे कृपा करने को या अपनी पुकारों पर दया से द्रवित होने को नहीं कहता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हूं। क्या मैं नहीं जानता हूँ कि तुमने अपने ही हाथों से अपने सगे मामा का वध किया था ? तुमने उसी धाय को जो तुम्हें प्रेमपूर्वक अपना स्तन्य-पान कराने आई थी मार डाला। तुमने अपने सबसे प्रिय भक्त, प्रहलाद के पिता को ही उसी के सामने निर्दयतापूर्वक पेट फाड़ कर मार डाला और वह असहाय की भाँति देखता रह गया। तुमने बलि के आगे भिक्षा प्राप्त करने को हाथ पसारा; जब उसने सर्वस्व अर्पण कर दिया तो तुमने उसी के मस्तक पर पैर रख कर उसे पाताल जाने को विवश किया। फिर ऐसे हृदय में जब करुणा लेशमात्र भी नहीं है, तो वह मेरी करुणापूर्ण पुकार पर क्यों द्रवित होगा ?" हां, भगवान् सभी आसक्तियों से ऊपर हैं; उसके कोई प्रिय या शत्रु नहीं होते हैं। तुम स्वयं अपने और उसके बीच दूरी को निश्चित कर लो। मोक्ष तो वह स्थिति है जब मोह (आसक्ति) का क्षय (अंत) हो जाता है। तो फिर मोक्षदाता स्वयं मोहासक्त कैसे हो सकता है ?

भगवान् की कोई इच्छा या रूचि नहीं होता है। वह न कुछ प्रदान करता है और न रोक रखता है। वह तो शाश्वत-साक्षी है। अच्छा तुम्हारी समझ की भाषा में कहें तो यह कहना चाहिये कि वह पोस्टमैन (डाकिया) की तरह है, जिसे पत्रों के अन्दर लिखित समाचारों से कोई लगाव नहीं होता है; वह तो उन पत्रों के पाने वालों को आवाज देकर पत्र दे देता है। चाहे किसी पत्र में विजय का शुभ समाचार हो चाहे किसी में पराजय की अशुभ सूचना। जिसके लिये तुमने कार्य किया है, उसका जो उचित परिणाम दैवी दृष्टि से होता है, वह तुम्हें प्राप्त होता रहता है। अच्छा काम करो बदले में अच्छा पुरस्कार प्राप्त करो। बुरा करोगे तो फिर बुराई ही लौटकर तुम्हें प्राप्त होगी। यही नियम है; इसमें न कोई बाधक है न साधक।

रावण एक महात्मा था; ताड़का, जिसे राक्षसी बताया गया है, भी एक महात्मा थी। अन्तर यही कि उन्हें अतिमानवीय और रहस्यपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त थीं। सभी दैवी शक्तियाँ हैं। भगवान् इन सभी का आन्तरिक प्रेरक श्रोत

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है । वे इस अर्थ में महात्मा नहीं हैं कि सभी महात्मा होते हैं । वे राजसिक महात्मा है जिनपर उनके मनोविकारों और उद्वेगों का अधिकार है; वे घृणा करने में गुस्तैद और अल्पातिअल्प चोट को भूलने में बड़े सुरत हैं । राम और लक्ष्मण सात्विक महात्मा हैं; वे धार्मिकता और सद्गुणों से प्राप्त साहस और शक्तियों के मूर्त अवतार हैं । एक तप्त लाल लौह हथौड़े को पीट पीट कर ठंडे हथौड़े से किसी भी आकृति में बदल लेते हैं; ठीक है न ? इसी प्रकार मनोविकारों और उद्वेगों से पीड़ित, लाल-ताल मनुष्य भी क्रोधरहित, घृणा रहित व्यक्ति के द्वारा ताड़ना देकर सुधारा जा सकता है। यही कारण है राम रावण को पराजित कर उसका नाश करने में सफल हुये । सत्व का शाब्दिक अर्थ ही शक्ति, क्षमता, उत्साह और जीवनी शक्ति होता है । क्योंकि सद्गुण शक्ति है, अच्छाई (सदाशयता भी) शक्ति है । एक मनुष्य को क्रोध इसीलिये आता है क्योंकि वह निर्बल होता है; वह दूसरों को धमकाने वाला इसीलिये बनता है क्योंकि वह भीतर से डरपोक या भीरु है । वह झूठ इसीलिये बोलता है क्योंकि उसे दृढ़ विश्वास है उसे दण्डित किया जाना चाहिये और इस सब का प्रसन्नता से स्वागत करने का उसमें नैतिक साहस नहीं है ।

धर्मक्षेत्र (धर्म के लीलाक्षेत्र) में उत्पन्न होने वाला नरशिशु अबोध होता है । तब सतोगुण का पूर्ण प्रभाव रहता है। जैसे जैसे समय बीतता जाता है उसे रजोगुण और तमोगुण की काई लिपटती जाती है और वह अंततोगत्वा कुरुक्षेत्र के संघर्षमय क्षेत्र में आ गिरता है । प्रत्येक जीवन में महाभारत की यह कहानी चरितार्थ होती है । कुरुक्षेत्र युद्ध क्षेत्र है; एक ओर मामकाः (अपने लोग) दूसरी और पाण्डवाः (न्याय बुद्धि सज्जन लोग) होते हैं। गीता के प्रथम श्लोक में ही यह कह दिया गया है । इसका वास्तविक अर्थ क्या है ? एक ओर राजसिक और तामसिक शक्तियां 'मेरे और हमारे' की भावना लेकर जुटी पड़ी हैं दूसरे पक्ष में सात्विक, न्यायोचित, निष्कलंक प्रेम, सहनशीलता, सत्य और धर्माचरण के दैवी तत्व, जिन्हें भगवान् का संरक्षण प्राप्त है, आ खड़े हुये हैं । इन दोनों पक्षों के संघर्ष, निम्नगामी और ऊर्ध्वगामी गतियों का, ये

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कहीं पर भी युद्ध निर्णय नहीं है। नित्य स्नान से शारीरिक स्वच्छता आती है, दैनिक संघर्ष से शत्रु पक्ष भी सदा दूर-दूर ही रह जाता है; निकट आकर हानि पहुंचाने में असमर्थ रहता है।

कहा जाता है कि कुरुक्षेत्र के १८ दिन के युद्ध में व्यास ने अपने मस्तिष्क को तपस्या द्वारा समाधिस्थ कर लिया था; क्योंकि उभयपक्ष में उन्हीं के वन्श-धर ही थे। इसलिये वे इस भ्रातृनाशक युद्ध पर दृष्टिपात नहीं करना चाहते थे। एक दिन उन्हें इतना पश्चाताप हुआ कि रातों रात वे उस रक्तरंजित प्रदेश के उस पार, दूसरे दिन का नरसंहार प्रारम्भ होने से पूर्व ही, निकल गये। शीघ्रता से जाते हुये भी उन्होंने एक मकड़ी को बड़ी शीघ्रता से पृथ्वी पर रेंगते हुये देखा। महर्षि ने पूछा, "इतनी शीघ्रता किसलिये ?" मकड़ी ने सड़क को भागकर पार किया और एक टीले पर चढ़ गयी और वहीं से उत्तर दिया, "क्या आप नहीं जानते हैं कि अर्जुन का युद्धगामी रथ इसी मार्ग से निकलेगा। यदि मैं उसके पहियों के बीच में फंस गयी तो बस मेरा तो काम तमाम ही हो जावेगा।" व्यास इस उत्तर पर हँस पड़े और कहा, "तुम्हारे मरने पर किस आँख में आंसू आवेंगे ? दुनिया में इससे कौनसा काम रुक जावेगा ? तुम्हारे मर जाने से दुनियाँ का कोई कोना खाली नहीं हो जावेगा।" इस अपमान से आहत होकर और क्रोध से कांपती हुयी मकड़ी बोली, "यह ऐसा क्यों ? तुम तपस्या के घमण्ड में फूले हुये ऋषि हो। तुम्हारा विचार है कि यदि तुम मर जाओ तो एक महान क्षति होगी; और मेरी मृत्यु का शोक किसी को नहीं होगा। मेरा भी जोड़ा और बच्चे हैं, जिन्हें मैं उतना ही प्यार करती हूँ जितना कि तुम पुरुष वर्ग करते हो। मेरे भी घर-द्वार और बखार है। मैं भी जीवन से उतनी ही चिपकी रहती हूँ कि जितना तुम लोग। मुझे भी भूख, प्यास, शोक, दर्द, आनन्द, प्रसन्नता और संबंधियों से वियोग के दुख की अनुभूति होती है। सांसारिकता जितनी मुझमें व्याप्त है और मेरे चारों ओर है उतनी ही मानवों में और उनके चतुर्दिक फैली हुयी है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

व्यास ने अपना सर झुका लिया और चुपचाप आगे बढ़ते हुये यह पंक्ति दोहराने लगे, "आहार निद्रा भय मैथुनं च, समानमेतत् पशुभिर्नराणाम।" आहार, निद्रा, भय, संतानोत्पत्ति के कार्य तो पशु, मनुष्य, कीट आदि सभी समान रूप से करते हैं। परन्तु उनके मन में आया कि, "आत्म जिज्ञासा सच्चिदानंद प्राप्ति की आकाँक्षा और धर्माधर्म का ज्ञान केवल मनुष्यों में ही हो पाता है" और वे अपने मार्ग पर आगे बढ़ गये।

इस ज्ञान से मनुष्य मकड़ी और प्रत्येक जीव में जो अंतरिक्ष की परिधि हैं उसी अन्तर्यामी घट-घट वासी के दर्शन प्राप्त करता है। पात्र भले ही भिन्न हों परन्तु पात्र में स्थित दैवी तत्व सर्वत्र एक ही है। समुद्र जल स्वाद में खारा होता है चाहे तुम चुल्लू से चखो चाहे घड़े से या उससे भी बड़े किसी पात्र द्वारा; चाहे जिह्वा पर एक बूंद डाल कर ही देखो समान स्वाद ही पाओगे। इसी प्रकार चाहे पिण्ड में चाहे ब्रह्माण्ड में जहाँ तक तुम्हारे देख सकने की क्षमता हो, उस दैवी तत्व को मित्र-शत्रु में, कण और विश्वविराट में, एक ही प्रकार का अनुभव देने वाला पाओगे। यही साक्षात्कार, मोक्ष और प्रकाश तथा इल्हाम है। सर्व विष्णुमयं जगत। यह परिवर्तन चक्र सर्वव्यापी दैवी तत्व से आविष्ट होता है। ऋषि त्यागराज ने गाया है, "हे सीताराम! आप अपनी असीम करुणा से चीटी और त्रिकुटि (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) से प्रकाशित हो रहे हो।" कृष्ण ही धनुर्धर और युद्ध क्षेत्र में, शंखध्वनि करते हुये या मोहक मुरलीतान छेड़ते हुये कोड़ा फटकारते हुये या चक्र घुमाते हुये प्रत्येक मनुष्य के प्रत्येक शब्द और क्रिया के पीछे प्रच्छन्न शक्ति के रूप में सर्वत्र और सदैव, विद्यमान रहते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

१६ हाथी और सिंह

(लायन्स क्लब राजहमंद्री १०-६-१९६९)

आज भारत में ऐसे व्यक्तियों और संस्थाओं की कमी नहीं है जो इस देश की बहुमूल्य संस्कृति के, अपनी शक्ति भर, अपनी आत्मा के आदेशानुसार, पुनर्जागरण और प्रचार में संलग्न हैं; समर्पित हैं। वे आर्थिक उन्नति के क्षेत्र में, नैतिक उत्थान में, भावात्मक एकीकरण में, सामाजिक उत्थान में, राजनैतिक उन्नति और आध्यात्मिक ज्ञानालोक प्रसार में परिश्रम पूर्वक जुटे हुये हैं। जो आदर्श और लक्ष्य इन कार्यों को उत्साहित और प्रेरित करते हैं वे सराहनीय हैं, वाँछनीय हैं। परन्तु इन सब में एक ही बीमारी निराशा, थकावट, कटुता और आलस्य पायी जाती है; क्योंकि प्रायः साधन अशक्त और गलत होते हैं।

सबसे प्रथम उन्हें अपने कार्य क्षेत्र के विस्तार की सीमायें सुनिश्चित कर लेनी चाहिये और उसी सीमित क्षेत्र में अपना कर्त्तव्य निश्चित कर लेना चाहिये; केवल कर्त्तव्य मात्र, अधिकार नहीं। आमतौर पर होता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अथवा संस्था अपनी सीमा का अतिक्रमण कर अन्यों के क्षेत्र में अनाधिकार प्रवेश कर जाते हैं; वे सहकर्मियों से प्रतिद्वन्दिता में उतर आते हैं; उन्हें अपनी श्रेष्ठता, चाहे जैसे हो, ईमानदारी से या बेईमानी से, अन्य कार्यकर्त्ताओं पर सिद्ध करनी ही है। सत्ता और शक्ति के लिये तो योग्यता प्रदर्शित करनी पड़ती है तब प्राप्ति की इच्छा करनी चाहिये। जो लोग दूसरों की सेवा करना, उसके दुख दूर करना चाहते हैं उनके पास रोग की पहिचान में सहायक यंत्र और लाभप्रद औषधियों के निर्णायक उपकरण भी होने चाहिये। सेवा एक, विवेक-आपेक्षित, कठिन कार्य होता है; नवसीखिये के उत्साह

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

से बाधा ही पड़ती है रोगमुक्ति में शीघ्रता नहीं होती है। सेवा की विधि का ज्ञान, सेवा करने की भावना को जगाना, ही वे क्रियायें हैं जिनसे मनुष्य नेतृत्व के लिये सज्जित होता है।

एक क्लब की ख्याति उसके सदस्यों के द्वारा फैलायी जाती है। प्रत्येक सदस्य के व्यक्तिगत कार्य से भी संस्था की शक्ति में वृद्धि होती है। यदि सदस्य असंतुष्ट और क्षणिक बुद्धि वाला तथा सदा आलोचनापूर्वक बड़बड़ाने वाला होता है; तो क्लब भी चिन्तामुक्त नहीं हो पाता है। लायन्स क्लब सेवा का उद्देश्य रखने वाली संस्था है। यह अमेरिका से भारत में लाया गया है; परन्तु इस देश के लिये इस क्लब ने कोई नया संदेश नहीं दिया है। शताब्दियों से इस देश के लाखों हृदयों में इसका आह्वान गूंजता चला आ रहा है। भारत के ऋषि मुनि यहां तक कि अवतारों ने भी जो भगवान् ने इस देश में लिये हैं, अपना उद्देश्य मानव सेवा ही घोषित किया है और उसी के लिये सेवा का आदर्श व्यवहार में भी रखा है। कृष्ण ने तो अर्जुन का रथ उस समय हाँका जबकि तलवार की नोक पर महाभारत के १८ दिनों में, पाण्डवों के भाग्य का फैसला किया जा रहा था। उस अखिल विश्व के स्वामी द्वारा अर्जुन के घोड़ों की रासें पकड़ी गयीं थीं। ध्यान रहे कि जब हनुमान को राम के सेवक का पद प्राप्त हुआ था तो उन्हें कितना हर्षातिरेक था।

जो कुछ मैं यहाँ कह रहा हूं उसकी साक्षी यहाँ पर उपस्थित वे लोग दे सकते हैं जिन्होंने स्वयं अपने अभागे भाई बहिनों की सेवा की है। अहंकार को क्षीण करने और हृदय को सच्चे आनन्द से परिपूर्ण करने के लिये सेवा से बढ़कर और कोई साधना या संयम नहीं है। सेवा की क्षुद्र कार्य और मान-हानि कारक कह कर निन्दा करना तो इन उपर्युक्त दोनों लाभों से वंचित रह जाना है। यदि आज देश में सेवा की एक लहर ऐसी आती है जो अपनी लपेट में हरएक को लेकर उत्साह से भर देती है तो वह संसार से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

घृणा, द्वेष, लोभ के टीले, जो सर्वत्र भरे पड़े हैं, धोकर वहा ले जावेगी। अपने हृदय तंत्र को ऐसा बना लो कि वह तुम्हारे साथियों के सुख, दुख से सहानुभूति रखता हुआ झंकृत हो जाया करे। संसार को प्रेम से आप्लावित कर दो। प्रेम तुम्हें चेतावनी देता रहेगा कि जो तुम स्वयं नहीं करना चाहते हो उसे करने का परामर्श किसी और को भी मत दो। तुम्हारी आत्मा तुम्हें धिक्कारेगी कि तुम एक पाखण्डी का जीवन जी रहे हो। इसलिये किसी क्लब के सदस्य बनने से पूर्व, जो कि सेवा कार्य के लिये अर्पित है, पहले अपने मस्तिष्क की परीक्षा कर लो उसमें संदेह के जाले तो नहीं लगे हैं, उद्वेगों की धूलि तो नहीं जमी है। इसीलिये सदस्य मत बनो कि वहाँ अमुक-अमुक भी तो सदस्य हैं अथवा ऐसा करने से तुम्हारे व्यापार और ख्याति में वृद्धि होगी। चूंकि नियमों से ऐसा निर्धारित है, इसीलिये बैठक मत बुलाओ। वास्तविक आवश्यकता से उत्पन्न प्रेरणा भी तो हो जिसमें परस्पर अनुभव और विचार विनिमय की भावना हो। दावतों पर प्रचुर धनराशि व्यय करने के लिये मत उत्सुक रहो। जो पहले ही से तृप्त और भरे पेट के हैं उन्हें और अधिक खिलाने का क्यों आग्रह करते हो। भूखों को खिलाओ; उन्हें कि जिन्हें पूर्ण पेट भर भोजन पाने का आनन्द कभी न मिला हो।

तुम्हारे क्लब का सार्थक और सारगर्भित नामकरण हुआ है। तुम लोगों की अच्छी सेवा कर रहे हो। परन्तु मैं जानता हूँ कि इससे तुम अपेक्षित संतोष नहीं पा रहे हो। सिंह तो पशुओं का राजा होता है, जंगल का एकाधिकार प्राप्त सम्राट् होता है। मनुष्य भी तो एक पशु है जैसे कि अन्य पशु गीदड़, चीता, बाघ और सिंह हैं। हाथी सबसे विशालकाय पशु है, उसके पदचिन्ह किसी भी पशु के पदचिन्हों से बडे होते हैं। जब हाथी चलता है तो उसके भारी भरकम चौड़े पैर पृथ्वी पर पड़ कर अन्य नागरिकों और पशुओं के पदचिन्हों का नाम ही मिटा देते हैं। और सिंह तथा हाथी एक दूसरे के जानी दुश्मन होते हैं। इसके द्वारा प्रकृति तुम्हें एक गंभीर पाठ

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की शिक्षा देती है। मन ही वह हाथी है जो जीवन रूपी जंगल को कुचलता रहता है, उसे किसी का भय नहीं होता है और वह किसी नियम से भी नहीं बंधा होता है। परन्तु, हाथी सिंह से बहुत डरता है। सिंह का दर्शन मात्र ही हाथी को आतंकित कर देता है। क्योंकि, सिंह बुद्धि का प्रतीक है। बुद्धि ही तुम्हें राज-पद पर प्रतिष्ठित करती है। सभी को उस बुद्धि की राजगद्दी के समक्ष नतमस्तक होना पड़ता है, जो सर्वोच्च आनन्द को प्रदान करने में समर्थ है। मन तो बुद्धि के आदेशों के समक्ष गूंगा हो जाता है; परन्तु इन्द्रियों और उनकी मांगों के लिये यह भड़काने वाले का कार्य करता है। मन को बुद्धि के आधीन कर दो, तब भगवान् की ओर मनुष्य को ले जाने वाला मार्ग सीधा और चिकना हो जाता है। इस लायन्स क्लब के सदस्य होने के नाते तुम्हें उन दोषों और त्रुटियों का पता लगाना चाहिये जिन्हें तुम सुधारना चाहते हो। उन बीमारियों का, जिन्हें तुम दूर करना चाहते हो, पहले निदान अथवा लक्षणों की परीक्षा करो, फिर सबसे उत्तम चिकित्सा के संबंध में मंत्रणा करो, तथा सेवा अभियान कार्य रूप में प्रारंभ करो।

कुछ संस्थाओं के सदस्य उन दायित्वों के प्रति, जो सदस्य होने के नाते उन पर आ पड़ते हैं, इतना कम ध्यान देते हैं कि उन्हें संस्था के उद्देश्यों और लक्ष्य प्राप्ति की विधियों की भी कोई जानकारी नहीं रह जाती है। वे तो केवल अपना नाम रखने के लिये ही सदस्य बने रहते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिये। प्रत्येक को अपने कर्त्तव्यों, सीमाओं और कार्य करने के ढंग से, खुले नेत्रों से सजग रहना चाहिये। उन कर्त्तव्यों के पालन में प्रत्येक को अपना दायित्व पूरी तरह निभाना चाहिये। तुम्हारा आदर्श सेवा है, इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को सेवा कार्यों में पूरी हार्दिकता से सहयोग करना चाहिये।

मैंने पूर्वी अफ्रीका और भारत के बहुत से नगरों में लायन्स क्लब का कार्य देखा है। समुद्र पार के देशों में ये लायन्स लोग बहुत अच्छा कार्य कर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रहे हैं। वे शिक्षा की उन्नति और बीमारियों की रोक थाम के कार्य करते हैं। हमारे देश के लोगों की घोर निर्धनता इन सेवा कार्यों की योजनाओं को कठिन और सीमातीत मँहगी बना रही है। परन्तु निराश होने की आवश्यकता नहीं है। अपने साधनों के अनुसार बहादुरी के साथ चलते चलो। दयालुता से कभी-कभी जो सफलता प्राप्त होती है वह केवल धन से नहीं प्राप्त की जा सकती। उत्साह और रुचि सेवा के अधिक दक्ष यंत्र हैं; उनकी समता उपहार और दान नहीं कर सकते। वे तो एक एक व्यक्ति में दस दस व्यक्तियों की शक्ति भर देते हैं।

तुम लोगों में वकील, डाक्टर दोनों ही हैं। ये लोग गंदी बस्तियों में जाकर वहाँ के निवासियों से मिलकर उन्हें कानूनी और डाक्टरी सहायता दे सकते हैं। अथवा वे लोग कुछ ग्रामों में जा सकते हैं और उन लोगों को कानूनी और डाक्टरी सहायता दे सकते हैं। न्यायिक सुविधा प्राप्त करने में ग्रामीणों को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है, क्योंकि कागज पत्रों के लेखन में बहुत सी त्रुटियाँ रह जाती हैं। वे वकीलों के दलालों पर कठवैद्यों पर निर्भर करते हैं और बाद में अनुभव कर पाते हैं कि उन्हें गलत सम्मति दी गयी है और तब सीमा से अधिक देर हो चुकी होती है। अपने कार्य क्षेत्र का उन लोगों तक, उन जगहों तक विस्तार करो जिनको, और जहां, कोई पथ-प्रदर्शक प्राप्य नहीं है। अपनी शक्ति का उन क्षेत्रों में क्यों अपव्यय करते हो कि जिनकी देख-रेख प्रशासन द्वारा पहले ही से की जा रही है?

उन्नति का माप-दण्ड सदस्यों की संख्या वृद्धि नहीं होता है। यह तो सम्पादित कार्य की मात्रा और स्तर (क्वालिटी) पर निर्भर करता है। मुझे तुम्हारा ध्यान एक अन्य बिंदु की ओर भी आकर्षित करना है। देश में अनेक लोग ऐसे भी हैं जो देशव्यापी बेचैनी का कारण धर्म को बताते हैं जो इसका एकमात्र उपाय धर्म को तिलाञ्जलि दे देना बता देते हैं। दोष तो धर्म का, जो सदा आत्म-संयम और विचारों की पवित्रता, भाईचारा और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सेवा पर आग्रह करता है, नहीं होता है; बल्कि उस कलुषित मानवीय हृदय का होता है जो कि लोभ और काम से रंजित है। भारत में विविध मत, पंथ और धर्मों की ओर दोषारोपण करने वाली उंगली उठ जाती है; परन्तु जो लोग एक ही धर्म के अनुयायी होते हैं वे जातियाँ भी आपस में ही बुरी तरह लड़ मरती हैं जब कि उनका धर्म एक गाल पर चाँटा पड़ने पर दूसरा गाल भी चोट मारने वाले की ओर घुमा देने की शिक्षा देता है वे अपने को इस पाशविक क्रूर घनघोर युद्ध के बाद भी क्रिश्चियन कहने का दम भरते हैं। इसलिये धर्म इस मामले में कतई दोषी नहीं है। यह बेचैनी तो धर्म-शून्यता के कारण हैं; न कि धर्म की बहुलता के कारण। धर्मान्धता और कठमुल्लापन ही इसके लिये दोषी हो सकते हैं; न कि धर्म जो इनके प्रतिकूल आज्ञा देता है। देशभक्ति भी धर्मान्धता का कारण हो सकती है। इसी ने मनुष्य को एटमबम के द्वारा दूसरे देश के लाखों प्राणियों की निरीह हत्या के लिये प्रेरित किया है; इस दुराशा से कि कदाचित् उनकी प्रिय मातृभूमि की सुरक्षा इसी प्रकार हो सकती है। जिस मस्तिष्क में घृणा और अहंकार पनपते हैं वह धर्म को कभी नहीं समझ सकता है। क्या एटम-बम द्वारा गणित लगा कर अनुमानित निर्दयता का कारण धर्म है?

भारत के प्राचीन धर्मों की योजना और उद्देश्य मानव के हृदय में प्रेम का बीजारोपण करना था जिससे उसमें सहनशीलता का अंकुर फूटे, सहन शक्ति के पुष्प खिले और अंत में शान्ति रूपी फल लगे। भारतीय विचार सारणी का सर्वोच्च शिखर अद्वैतवाद है जिसमें विश्वव्यापी एकत्व का दर्शन है द्वित्व का निषेध किया गया है। कुछ देश व्यक्तिगत स्वतंत्रता को आदर्श मानते हैं; अन्य देश राज्य की अखंड प्रभुसत्ता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सीमित रखना चाहते हैं। परन्तु, भारत तो अनादि काल से व्यक्ति को यही शिक्षा देता रहा है कि वह तभी स्वतंत्रता का पूर्ण अनुभव कर सकेगा जब कि वह सभी के साथ आत्म भाव रखने में समर्थ हो जावे। केवल अपने देशवासियों या अपनी भाषा भाषियों और अपने सहधर्मियों और उसी वर्ण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के लोगों के साथ इस आत्मीयता की सीमा न हो; बल्कि इसकी परिधि में समस्त मानव जाति, समस्त प्राणी स्थावर जंगम जड़ चेतन सभी कुछ आ जावे। विस्तार ही प्रसन्नता की कुंजी है, और इस विस्तार की कुंजी प्रेम है। मनुष्य सभी का सगा संबंधी है यही सनातन धर्म की शिक्षा है।

सगा सम्बन्धी होने का विचार सेवाकार्य में बड़ा प्रेरणादायक है। इस सम्बन्ध की सत्यता पर जितना अधिक जोर दिया जावेगा सामाजिक सेवा का तुम्हारा कार्यक्रम उतनी ही उन्नति करेगा और सफल होगा। विश्लेषण करके दोषारोपण न करो, सहानुभूति प्रदर्शित कर प्रेम की वर्षा करो। अपने हृदय की टीस को मिटाने के लिए सेवा करो; इसलिए नहीं कि क्लब का संविधान सदस्यों को सेवा करने के लिए आदेश देता है; इसलिये भी नहीं कि इससे तुम्हें उच्च वर्ग द्वारा मान्यता प्रदान की जावेगी; इसलिए भी नहीं कि यह तो सम्पन्न व्यक्तियों का कर्त्तव्य है। इसलिये सेवा करो कि बिना ऐसा किये तुम्हें चैन ही नहीं पड़ता है। यह संबंध अनुभव करना तो आन्तरिक प्रेरणा है।

जो प्रशासन का संचालन करते हैं वे इन साधनों को उन्नत करने में कोई रुचि नहीं रखते हैं वे तो लक्ष्य प्राप्ति के लिये उत्सुक हैं और यह लक्ष्य जीवन-यापन का स्तर ऊँचा उठाना मात्र है। साधनों की पवित्रता से लक्ष्य की पवित्रता सुरक्षित हो जाती है। जनता भी शासकों की मनोवृत्ति और लक्ष्यों के सुधार करने में असमर्थ रहती है। इसलिये तुम्हारे जैसे ईमानदार हार्दिक लोगों के दल को शासकों को, सावधान और शासितों के जगाने का कार्य करना चाहिये।

इस आधार को लेकर कि जनसंख्या की वृद्धि देश की उन्नति में बाधक है, कृत्रिम साधनों से संतानोत्पत्ति को सीमित करना एक नीति बन गई है; और इसके लिये राष्ट्रीय स्तर पर संतान निरोधक उपायों का प्रचार और व्यवहार अपनाया जा रहा है। यह तो एक ऐसा मूर्खतापूर्ण कार्य है। चूंकि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

दरवाजा नीचा है इसलिये सर कलम कर देने के अतिरिक्त चारा ही क्या है। क्योंकि झुककर घुस जाना भी तुम्हें अरुचिकर है। तुम्हें तो अधिक अन्न उपजाने के उपाय करने हैं; उदाहरण के लिये अन्तस्तल की जलधारा जो पृथ्वी के निम्न स्तरों में प्रचुरता से विद्यमान है, का सदुपयोग करो। कृत्रिम साधनों से गर्भनिरोध करने से स्वच्छंदता को बढ़ावा मिलेगा और देश में पाशविक गड़वड़ी फैल जावेगी। जो लोग ऐसी भयंकर तरकीवों को प्रोत्साहन देते हैं उन्हें इन्द्रिय संयम और आत्म संयम, योग और सेवा का उपदेश देना चाहिये था। धर्मशास्त्रों में ऋषियों ने, जो अनुत्तरदायी पितृत्व और निराश मातृत्व की विपत्तियों का अनुमान कर सकते थे, उपर्युक्त उपायों का उपदेश दिया है। इस अभिमान के, जो विस्तृत क्षेत्र में इतने उत्साह से चलाया जा रहा है, के शिकार अवोध और अज्ञानी लोगों को अपनी निम्न प्रवृत्तियों को दमन करने की शिक्षा देकर उनकी शक्ति को लाभकारी प्रवृत्तियो की ओर मोड़ा जा सकता था। विना मानसिक तैयारी और संकल्प के यह कृत्रिम साधन पागलपन और कुंठाओं, अस्वस्थता और चिड़चिड़ापन पैदा कर सकते हैं।

फिल्मों, पुस्तकों, संगीत और वड़े बूढ़े लोगों के आचरण से युवा लोगों के मन में अनुचित प्रवृत्तियां और असदाचरण की मनोवृत्ति जागृत होकर उत्तेजित हो जाते हैं। परिवार नियोजन के प्रचार से उन्हें ऐसे उपायों का अवलम्बन करने की प्रेरणा प्राप्त होती है जिससे भविष्य के परिणामों के प्रति उनका कुछ उत्तरदायित्व ही नहीं रह जाता है और वे इनमें पड़ जाते हैं। इससे राष्ट्र की भावी शक्ति और उन्नति अकारण दोनों सिरों से दग्ध हो रही है। परिवार नियोजन का प्राचीन उपाय ही सर्वोत्तम है कि साधना के द्वारा आत्म साक्षात्कार के लिये प्रयास किया जावे। मैं चाहता हूं कि तुम-लोगों में उपस्थित डाक्टर लोग इस अपरिहार्य विपत्तियों पर विचार करें जो कृत्रिम साधनों द्वारा परिवार नियोजन के कारण आने वाली हैं। धर्मशास्त्रों, समाज और संस्कृति ने जो प्रतिबन्ध मनुष्य की निम्न वृत्तियों पर लगाये हैं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उन्हें इस प्रकार छल फरेब से उल्लंघन कर तुम उनके दुष्परिणामों से नहीं बच सकते। तुम राष्ट्र का सही मार्ग पर पथप्रदर्शन करो। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ कि राष्ट्र के हित में सर्वोत्तम सेवा करने के प्रयास में तुम्हें सफलता प्राप्त होवे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२० गिने चुनों को परामर्श

(प्रशान्ति निलयम् ११-१०-१९६९)

यह शरीर भगवान् का मन्दिर है, देश (भूमि, राष्ट्र) भगवान् की देह (शरीर) है। शरीर पांच तत्त्व आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी से निर्मित हुआ है। देश, पांच प्राण वायु से निर्मित होता है। देश की देखरेख उतनी ही महत्त्वपूर्ण हैं जितनी शरीर की। क्योंकि, सुख,-दुख, आरोग्य और रोग, विपत्ति और संपत्ति, चिन्ता और शान्ति, राष्ट्र या देश के स्वस्थ और अस्वस्थ होने पर निर्भर करते हैं। प्रशान्ति निलयम् में अगले कुछ दिनों में स्वयंसेवक बनकर सेवा करने का जो तुम्हें स्वर्ण अवसर प्राप्त होने जा रहा है उससे न केवल तुम अपनी बल्कि देश की—सभी राज्यों से पधारे हुये लोगों की यहां तक कि समुद्र पार से आने वाले अन्य राष्ट्रों के लोगों की भी दशहरा के उत्सव में सेवा करने का अवसर प्राप्त करोगे। वे हृदय से, उत्सुकता और अभीप्सा में; वे चाहे जो भाषा बोलें, चाहे जिस समाज और धर्म के हों, एक ही हैं। वे सभी स्वयंसेवक बनकर सेवा करने का अवसर पाने के लिए आतुर हैं। परन्तु, स्मरण रहे यह सौभाग्य तुम्हें ही प्राप्त हुआ हैं कि तुम मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर आशीर्वाद प्राप्त करने में सफल हुये हो। अतएव यह एक महान् उत्तरदायित्व है।

जो सेवा तुम यहां एकत्रित सहस्रों व्यक्तियों की कर सकते हो; वह अन्य लोगों की नहीं कर सकते हो। यह तो तुम स्वयं अपनी सेवा करोगे। यह सहायता तो तुम्हारी अपने स्वयं के प्रति होगी। एक भिक्षुक था जिसने एक धनी के द्वार पर रोकर एक ग्रास पाने की याचना की; गृहपति ने, जो आराम कुर्सी पर झुका हुआ आराम कर रहा था, उसे झिड़क कर भगाना चाहा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

परन्तु भिक्षुक ने आग्रह जारी रखा। उसने कुछ बासी भोजन ही मांगा। इस पर पुत्रवधू ने जो अन्त:पुर में अपनी थाली पर बैठ चुकी थी, उत्तर दिया, "प्रिय महोदय, हम लोग बासी भोजन ही इस समय खा रहे हैं, ताजा भोजन तो अभी बन ही रहा है"। भिक्षुक उसका आशय समझ गया कि उस स्त्री का संकेत अपने श्वसुर के द्वारा निर्दयता और क्रोध प्रदर्शन की ओर था कि अभी उनका संकटपूर्ण भविष्य निर्मित हो रहा है और वर्तमान समृद्ध जीवन तो पूर्व जन्मों के दान, सत्कर्मों का फल है। हम बासी भोजन पा रहे हैं इसका अर्थ ही यह है कि हम गत जन्मों के सत्कर्मों पुण्यों से प्राप्त समृद्धि का उपभोग कर रहे हैं। हम अपना भावी भोजन भी पकाते हैं। इस प्रकार, इस सेवा द्वारा तुम अपने लिये एक उत्तम दावत की भावी तैयारी में संलग्न होगे। पिछले कर्मों के फलस्वरूप वर्तमान में तुम्हारा कुछ भी भोजन क्यों न हो।

तुम यहां आ चुके हो, अन्य लोग भी पधार रहे हैं सब एक ही लाभ प्राप्त करना चाहते हैं। हमारे देश में होने वाली विभिन्न रथ-यात्राओं में तुम अवश्य ही सम्मिलित हुये होगे। शोभायात्रा तो बड़ी लम्बी और साज सज्जा से पूर्ण होती है। ढोल, मंजीरे, भजन, संगीतकारों की टोलियां यहाँ तक कि विदूषक भी, आगे आगे चलते हैं। रथयात्रा में रथ के मार्ग पर झंडियां, वन्दनवार, तोरणद्वार खड़े कर सजावट की जाती हैं। हाथी, घोड़ों को सज्जित कर, हौदा, झूल और जीन लगाकर चांदी सोने के आभूषण पहराये जाते हैं; गाय बैलों के सींग चांदी से मढ़कर उनकी गर्दन में घुंघरू और घन्टियाँ बांधी जाती हैं। नृत्य करते हुये ग्रामीण लोगों को भी तुम उस शोभा यात्रा में देख चुके होगे। परन्तु कभी सोचा है कि यह सब आयोजन किसलिये किया जाता है ? तीर्थयात्री इन्ही सब को देखने के लिए इतना खर्चा करके इतनी दूर दूर जगहों से नहीं आते हैं। यह सब तो कई मंजिले रथ की शोभा बढ़ाने महत्त्व देने के लिए अलंकरणमात्र हैं और स्वयं रथ भी मूर्ति की सवारी के लिये है और मूर्ति भगवान् का प्रतीक है जिसकी पूजा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करने के लिए प्रत्येक आता है। इसी प्रकार याद रहे जीवन के सभी ठाठबाट और प्रदर्शन, विदूषण और नृत्य, प्रहसन और गुनगुनाहट, व्यसन और व्यवसाय जिनसे मिलकर जीवन पूर्ण होता है, उसी भगवान् की पूजा के लिये है। जीवन एक लम्बी रथ-यात्रा ही तो है। प्रत्येक कार्य का मूल्यांकन इसी पृष्ठभूमि से किया जाना चाहिये। जीवन की केन्द्रीय धारा पर ध्यान दो, न कि किनारे पर लगी हुई वंदनवार और सजावट में ही ध्यान उलझा रहे।

याद रहे, आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के मन में यही मुख्य विचार सर्वोपरि होता है, उसे हतोत्साहित मत करो। उन्हें अपना लक्ष्य प्राप्त करने में भरसक सहायता दो, आचरण और वचन दोनों से, परन्तु नम्रतापूर्वक।

वीत रहा प्रत्येक मिनट भगवान् का बहुमूल्य उपहार है, जिसका तुम्हें सर्वोत्तम स्थाई लाभ के लिए उपयोग कर लेना है। इस समय में दूसरों की सेवा और उनकी तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करके आनन्दित होओ। इन मिनटों को गपशप, परनिन्दा, दुर्बल बनाने वाले उपन्यासों के अध्ययन, सिनेमाघरों में, अथवा अविचारी बकवासी साथी में यों मत बिताओ। अपनी इन्द्रियों के दास मत बनो, परन्तु साहसपूर्वक उनकी माँगों और उछृंखलता का प्रतिरोध करो। आत्मा में ही जो कि तुम्हारे अन्दर वास्तविक सत्य है, कभी न निष्फल होने वाले आनन्द का निर्झर है, फिर अपना स्वास्थ्य, मानसिक शान्ति इन इन्द्रियों के पीछे भागते हुये क्यों नष्ट कर रहे हो? ये तो तुम्हें क्षुद्र पदार्थों की मृगतृष्णा में लिप्त रखते हुये पार्थिव जगत में ही उलझाये रखेंगी। इनसे प्राप्त आनन्द केवल क्षणिक होता है।

यह बिल्ला तुम्हारे ऊपर महान उत्तरदायित्व डालता है। यह तुम्हें जनता जनार्दन के समक्ष लाकर चौड़े में खड़ा कर देता है। जब तुम किसी से शान्ति रखने को कहते हो तो सहस्रों नेत्र तुम्हारी ओर उठ जाते हैं और यह देखते

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हैं कि तुम स्वयं भी शान्ति रखते हो ? तुम्हें अधैर्य या क्रोध का प्रदर्शन नहीं करना है, तुम्हें अपने गांव से आने वालों या परिचितों या अपनी बोली बोलने वालों के प्रति अन्य लोगों की अपेक्षा पक्षपातपूर्ण व्यवहार नहीं करना है; अन्य क्षेत्रों से आने वालों, दूसरी भाषा बोलने वालों के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार भी नहीं क्षम्य है। सभी मामलों और क्रियाओं को यह सोच कर किया करो कि क्या इससे बाबा को प्रसन्नता होगी अथवा अप्रसन्नता, तब तैसा किया करो। चाहे कोई तुम्हें देखे या न देखे, मैं तो तुम्हारे साथ होता ही हूँ। तुम चाहे जहाँ होओ, अभी या कभी, यहां या कहीं भी; इसलिए ईमानदारी का आचरण करो, कभी बुत्ता देने, बहाना बनाने या धोखा देने की चेष्टा न करो।

यह तो जीवनव्यापी साधना की भूमिका तुममें से प्रत्येक के लिए है। साधना में अनासक्ति पहला चरण है। मौनम् से दूसरों के झगड़ों में फँसने से बचने में सहायता प्राप्त होती है, इसीलिए इसे मौलिक साधना मानकर उत्साहित किया जाता है। चींटी की तरह आचरण करो। जब चींटी को बालुका मिश्रित शक्कर प्राप्त होती है, तो वह उसमें से शकर को ग्रहण कर बालुका की उपेक्षा कर देती है। दूसरों की अच्छाइयों पर ही ध्यान दो उनकी बुराइयों पर मत दृष्टिपात करो। वे चाहें तो तुम्हारी आलोचना निन्दा कर सकते हैं; कुछ अन्य लोग इनसे भी आगे बढ़कर दोषारोपण कर सकते हैं; अपनी शान्ति और सौमनस्यता की रक्षा करो। उनलोगों के शब्दों को गंभीरता से हृदय में मत स्थान दो। उन्हें बाहर ही रहने दो; वे तो बालुका के कण हैं।

तुममें से जो डाक्टर हैं उन्हें यह कर्त्तव्य सौंपा जाता है कि वे घूम-घूमकर ऐसे व्यक्तियों को खोज लें जिन्हें तुम्हारी (डाक्टरों की) आवश्यकता हो सकती हो, उनलोगों से विशेष स्नेह और विचारपूर्वक व्यवहार किया जावे। रोगियों से झल्लाते हुये उनका हाल मत पूछो, उनका विवरण सुनते समय भी धैर्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रखो। दयालुतापूर्ण व्यवहार कोमलता और सहानुभूति से आधी पीड़ा तो तत्काल समाप्त हो जाती है। 'वैद्यो नारायणो हरिः' शास्त्रों का कथन है "चिकित्सक नराकार में भगवान् ही है"। लोग इसी सम्मान, विश्वास और भावना से तुम्हारे समीप आते हैं और तुमसे औषधि ग्रहण करते हैं। अपनी सेवा का यह महान मूल्यांकन समझ कर ही उस भावना के प्रति व्यवहार करो। आजकल डाक्टरों ने मृदु भाषण की कला को खो दिया है। दयालुता से बात करना सीखो, अपने झोले में सभी प्रकार के रोगों में लाभकारी औषधियां सदैव रखो, औषधियों के अभाव में देर और झमेला मत उठने दो। स्वयंसेवक डाक्टरों के पास बीमारों को ले जावे अथवा डाक्टरों को ही बुलाकर रोगियों को दिखा दें यदि उन्हें ले जाना संभव न हो तो। कौआ भैंस की पीठ पर बैठ कर उसके कच्चे घाव में चोंच डाल देता है। उसे भैंस को अनुभव होने वाली पीड़ा का कोई अनुमान नहीं होता है। डाक्टरों को भी उस संकट या विपत्ति का अनुमान नहीं होता हैं जो उनकी उपेक्षा और गुस्सैल स्वभाव के कारण मरीजों पर आ बनती है। स्वयंसेवक भी उस कष्ट का अनुमान नहीं करते हैं जो उनके क्रोधपूर्ण शब्द, घृणासूचक हावभाव या प्रतिरोध सहित व्यवहार के कारण रोगियों को अनुभव होता है। कल्पना करो कि आज तुम स्वयं रोगी की स्थिति में होते और कोई अन्य तुम्हारे प्रति वही व्यवहार करता जो तुम आज कर रहे हो तो तुम्हें कैसा बुरा लगता—इसीलिये वैसा न बोलो न व्यवहार करो। सदा अपने को दूसरों की स्थिति में रखकर विचार करो, अपने कार्य का औचित्य उसी पृष्ठभूमि में समझो, तब तुम कभी गलती नहीं करोगे।

सदा अपने शब्दों और कार्यों में पवित्र बने रहो। अशुद्ध और अशोभनीय विचारों को दूर ही रहने दो। मैं तुममें से प्रत्येक में हू इसीलिए मैं तुम्हारी विचारधारा की प्रत्येक तरंग से अवगत रहता हूँ। जब कपड़े गंदे हो जाते हैं तो उन्हें धुलने के लिए दे दिया जाता है। जब तुम्हारा मस्तिष्क गंदला हो जाता है, तो तुम्हें स्वच्छता की प्रक्रियाओं के निमित्त पुनर्जन्म लेना पड़ता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

धोबी कपड़ों को कठोर शिला पर कूटता-पीटता है और उसकी सुकड़न मिटाने के लिए, पर्तों ग्रौर मोड़ों को सीधा करने के लिए कपड़े पर धमकते हुये गर्म लोहा भी फिराता है। इसी प्रकार भगवान् के समीप पहुंचने के योग्य होने के लिये तुम्हें भी अनेकों बार जन्म मृत्यु की यंत्रणाग्रों से होकर जाना पड़ेगा। सभी में मेरा ही निवास समझो। जो सहायता तुम दे सकते हो दो, जो भी सेवा वे चाहें। मृदु शब्दों को, सहारा देने वाले हाथ को, आश्वासन-प्रद मुस्कान को, सुखदायक साहचर्य, ढाढस देने वाली वार्ता, इनमें से रोगी से बचाकर कुछ भी मत रोके रखो।

ग्रब तुम्हें एक शपथ में दीक्षित किया जाता है। यह पद तुमपर कुछ कर्त्तव्य भार ग्रौर बन्धन भी लाता है। कृष्ण मस्तक पर कस्तूरी का तिलक धारण करते हैं वह ज्ञान प्राप्त करने का चिन्ह है। वह नासिका में पवित्रता का मोती धारण करते हैं, नासाग्र पर ही तो ध्यान केन्द्रित किया जाता है। उनकी कलाई पर चारतार वाला कलावा बंधा है यह उनके द्वारा स्वीकृत प्रतिज्ञाग्रों का सूचक है जो उन्होंने जीवात्माग्रों की रक्षा के लिए ली हैं। 'परित्राणाय साधूनाम्, विनाशाय चदुष्कृताम् धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।' 'धर्माचरण करने वालों की रक्षा करने, दुष्टों का नाश करने, धर्मा-चरण को प्रोत्साहन देने ग्रौर पूर्ण रूप से समर्पण कर शरण ग्रानेवाले को उनके पापों से बचाने के लिए मैं युग-युग में ग्रवतार धारण करता हूं।' तुमने भी ग्राज एक प्रतिज्ञा ली है ग्रौर यह बिल्ला धारण किया है, यही कंकण है जो तुम्हारी कलाई पर बाँधा जाता है। संकटग्रस्तों का उद्धार करो जो कि ग्रसामाजिक तत्व इस प्रशान्ति निलयम् की सीमा क्षेत्र में भी, उनपर लादते हैं, अपने चारों ग्रोर ग्रानन्द ग्रौर संतोष को फैलाओ तुम्हें तो 'शान्तम्' 'सहनम्' ग्रौर 'प्रेम' का उदाहरण स्वयं ही बनकर दिखाना है। इसीसे उपयुक्त वातावरण बनेगा जिसमें सभी आनन्दित होंगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२१ अद्‌भुत रात्रि

(प्रशान्ति निलयम् १२-१०-१९६९)

नवरात्रि का उत्सव दुष्टता पर दिव्यता की विजय के उपलक्ष में मनाया जाता है। अपने विभिन्न रूपों में पराशक्ति ही सात्विक (महासरस्वती) राजसिक (महालक्ष्मी) तामसिक (महाकाली) रूप धारण कर दुष्टता, अहंकार पाप का नव दिनों में पराभव कर विजयादशमी के दिन वरदायिनी के रूप में पूजित होती है।

यह तो भगवान् के प्रति कृतज्ञता का उत्सव है। कृतज्ञता दिव्यभाव है। कृतघ्नता राक्षसी वृत्ति है। परन्तु, कृतज्ञता का आदर भाव प्रकट करते हुये यह भी तो जान लो कि किसका वध हुआ था और किस की रक्षा की गयी थी और क्यों? मनुष्य के छः शत्रु ही तो सदा उसकी शक्ति का नाश करते रहते हैं और इन शत्रुओं का निवास स्वयं मनुष्य के अन्तःकरण में होता है। इन्हीं राक्षसों का वध होना है। वे काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद और मत्सर हैं। वे तो मनुष्य का पतन कर उसे राक्षस बना देते हैं। उनको विजय कर, दिव्य प्रेरणा की रसायन से परिवर्तित कर डालना है। तब नवरात्रियों का संघर्ष नूतन हो जावेगा, यह एक अद्‌भुत रात्रि होगी जिसका मन को पवित्र, शुद्ध बनाने के लिये उपयोग किया जावेगा और इसी से आत्मा प्रकाशित होगी। इसी रात्रि का गीता में वर्णन आता है। यह सांसारिक जीवों का दिन है। जिससे सामान्य जीव आकर्षित होते हैं और वह उन्हें स्पष्ट लगती है वही योगियों के लिए अरुचिकर और अज्ञात रहती है। जो योगी को स्पष्ट और आकर्षित करते हैं वे सब सांसारिक मनुष्य को अरुचिकर और अज्ञात प्रतीत होते हैं। इस दुनियां की ऐसी ही उल्टी सुल्टी प्रकृति है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रशान्ति निलयम् ने इस नव-रात्रि (नौ अथवा नवीन) त्यौहार का मनाना एक दुर्लभ अवसर का पाना है, यह तो आश्चर्य और आनन्द दोनों से परिपूर्ण है। क्योंकि यह तो शान्ति का निवास स्थान है यह तभी मिलता है जब षड्रिपुओं का सदा के लिए नाश हो जाता है प्रशान्ति पताका, जो अभी फहराई जावेगी, इसी उपलब्धि की प्रतीक है कि मानव द्वारा अपने षड्रिपुओं पर विजय प्राप्त कर ली गई है और उसके हृदय कमल में ज्ञान की ज्योति का प्रकाश हो गया है। यह तो स्व-राज अर्थात् अपने पर शासनाधिकार पा जाने का झंडा है। यही वास्तविक स्वतंत्रता है तभी तुम उस क्षेत्र के स्वामी बन सकोगे जो तुमसे निकटता से संयुक्त हैं। यह वह पताका है जो आनन्द की वायु में लहराती है, यह पताका आन्तरिक प्रकाश की उत्पत्ति की घोषणा करती है; यह पताका सर्वोच्च बुद्धिमत्ता और गम्भीरतम शान्ति के प्रभात का उद्घोष करती है।

मनुष्य इस बात पर गर्व करता है कि वह सुदूर आकाश में उड़ा चला जाता है और यहाँ तक कि चन्द्रमा पर भी उतर गया है; परन्तु वह अपने पड़ोसियों के साथ यहां इसी पृथ्वी पर शान्तिपूर्वक रह जाने में असमर्थ है, अक्षम है। उसका पृथ्वीतल का जीवन भय और आशंका से ग्रस्त है। परन्तु, वह निर्लज्जतापूर्वक घोषणा करता है कि वह सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी है। जो आग उसके सीने में धधक रही है उसका शमन कर सकना उसके वश के बाहर की बात है, परन्तु वह समूचे नगरों को परमाणविक आयुधों से भस्म कर डालने की सामर्थ्य रखता है।

स्व-राज का अर्थ, अपनी इन्द्रियों, मन और बुद्धि पर पूर्ण विजय प्राप्त कर लेना होता है वह तभी हो पाता है जब आत्म-साक्षात्कार हो जावे। जो अपनी सेवा तुम स्वयं कर सकते हो उसके लिए दूसरों का मुंह मत ताको। तुम काहिली में ध्यान का बहाना लेकर बैठे रहो तो नौकर को क्यों अपनी सेवा और इच्छाओं की पूर्ति से थका डालते हो? अपने को सक्रिय बनाओ,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आराधनापूर्ण कार्यों में अपने को व्यस्त रखो। भगवान् की महिमा के लिये सब कुछ करो—यह कहीं अधिक लाभप्रद योजना है उस 'ध्यान' की अपेक्षा जिस पर तुम निर्भर हो रहे हो। जिस प्रकार थर्मामीटर से शरीर का ताप ज्ञात हो जाता है, तुम्हारा वार्तालाप, आचरण और व्यवहार तुम्हारे मानसिक भाव और मानसिक गठन और सांसारिकता के ताप को बतला देता है जिससे कि तुम पीड़ित हो। उन्हें तो उद्वेगों और मनोविकारों जैसे घृणा या घमंड से रहित सात्विक होना चाहिये। स्वयं शान्तिपूर्वक बात करो जिससे अन्य लोगों में भी शान्ति की मात्रा में वृद्धि होवे। उस जप और ध्यान से क्या लाभ जबकि तुम्हारा वार्तालाप और आचरण मनुष्यतापूर्ण भी नहीं है ? पशुत्व के दलदल में फँसे उस दैवी तत्व तक तुम कैसे पहुंच सकने की आशा करते हो ? आज तो दशहरा के त्यौहार का प्रथम दिवस है, इसलिये आज ही संकल्प करो, मन को गंदगी से स्वच्छ कर लो, जिससे तुम उस प्रेरणा को प्राप्त कर सको जिसे कि प्रदान करने की इच्छा रखता है।

मानसिक शान्ति के इच्छुक को उस बोझ को भी घटाना है जिसकी रक्षा के लिये वे चिन्तित रहते हैं। जितना अधिक बोझ होता है चिन्ता और परेशानी भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती हैं। वस्तु परक वैभव और अधिकार तथा व्यक्तिगत इच्छायें, दोनों ही आत्म साक्षात्कार के मार्ग की बाधायें हैं। जिस मकान में काठ कबाड़ ही भरा गया है वह अंधेरा, धूलि से भरा और शुद्ध वायु के आवागमन से रहित होगा। वह दम घोटने वाला और श्वांसावरोधक होगा। मानव शरीर भी एक मकान है इसे विचित्रताओं, टुटपुंजिया, क्षुद्र और अनावश्यक विचारों और मनोद्वेगों से पूर्ण मत रखो। इसमें से होकर पवित्रता की शुद्ध वायु का आवागमन होने दो, यही स्वाभाविक है। अज्ञान रूपी अंधकार द्वारा इसे अपवित्र मत बनाये रखो। परिवर्तन शीलता के समुद्र के ऊपर जीवन एक सेतु है; इस पर से होकर निकल जाओ; वहाँ मकान बनाकर निवास करने का विचार मत करो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तुम्हारा हृदय भी मन्दिर है उस पर प्रशान्ति का झंडा फहराओ । इससे जो शिक्षा प्राप्त होती है उस पर आचरण करो । उन षड्रिपुओं को वश में करो जो मनुष्य के स्वाभाविक आन्तरिक आनन्द की जड़ें खोखली करते रहते हैं । योग के मंच पर चढ़ चलो जब भी अन्दर शान्ति का अनुभव हो, और आत्मा में निहित दिव्यलोक को बिखरने दो इस आलोक की परिधि में सदैव के लिए सभी का प्रेमपूर्वक आलिंगन करो ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२२ तारण में समर्थ तरणी

(प्रशान्ति निलयम् १२-१०-१९६९)

बहुतों को यह विचित्र लगेगा कि इस आनन्द निलयम् में भी एक आरोग्य निलयम् (अस्पताल) स्थित है। वे आश्चर्य कर सकते हैं कि शारीरिक स्वास्थ्य को यहां इतना महत्त्व क्यों दिया जाता है जो स्थान आत्मा के स्वास्थ्य के लिये अर्पित किया गया है। परन्तु मानव जीवन के चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को प्राप्त करने के लिए प्रमुख आवश्यकता स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क की होती है। रोग का अर्थ है बेचैनी का अनुभव करना। यह बेचैनी किसी की मनोदशा के बिगड़ने, मानसिक संतुलन के गड़बड़ा जाने से शारीरिक स्वास्थ्य भी बिगड़ जाता है। ऐसा दो कारणों से होता है दूषित भोजन और दूषित आचरण (मिथ्या आहार विहार)।

सभी जानते हैं कि बाद में चिकित्सा करने की अपेक्षा पहले से ही बीमारियों की रोकथाम करना अच्छा होता है। बीमारी आजावे, सीमा से बाहर अर्थात् असाध्य हो जावे तब क्या हो सकेगा? मनुष्य सावधानी वाले उपायों पर चलता ही नहीं। वह स्थिति को बिगड़ने देता है चाहे इसका कारण भय, चिन्ता या अनिश्चय कुछ भी क्यों न हो। पुराने लोग एक कहावत में विश्वास करते थे "व्यक्ति एक बार से योगी, दो बार से भोगी और तीन बार भोजन से रोगी बनता है।" योगी तो एकाग्रचित्त और भगवान् के चिन्तन में लीन रहता है। ऐन्द्रिक सुखों में लिप्त मनुष्य भोगी कहा जाता है। रोगी उसे कहते हैं जो बीमारी से आक्रांत रहता है। हां, सम्पन्न व्यक्ति के भोजन की मात्रा आवश्यक आवश्यकताओं से कहीं अधिक होती है। अधिक भोजन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तो एक परम्परा ग्रौर फैशन हो गया है। ब्रेक फास्ट (प्रातराश) किसी फास्ट (व्रत) को समाप्त करने के लिए किया जाता है क्योंकि वह तो प्रातःकाल ही कर लेने से उपवास या व्रत करने का समय ही कहाँ मिल पाता है। यह तो पूर्ण भोजन की तरह ही किया जाने लगा है। मध्यान्ह भोजन में ग्रनेक व्यंजन होते हैं वे सब स्वाद के लिए, न कि भूख मिटाने के लिए, होते हैं। चाय तो बस कहने भर को कही जाती है, इसमें शारीरिक ग्रावश्यकता की उपेक्षा करके ग्रनेक गरिष्ठ ग्रौर स्वादिष्ट पक्वान्न भी शामिल रहते हैं। रात्रिकालीन भोजन (ब्यालू) तो गरिष्ठतम भोजन विविध भोज्यपदार्थों से संयुक्त होता है। इसीलिए व्यक्ति ग्रनावश्यक रूप से उदर में ठूंस-ठूंस कर भोजन करके भारी पेट से शय्या पर इधर-उधर करवटें बदलता रहता है कि कुछ निद्रा ग्रा जावे। भोजन की कमी प्रधानतः लोगों की विकृत प्रकृति ग्रौर भोजन की बर्बादी के कारण है। इसे सुधारा जा सकता है; लोग दीर्घायु ग्रौर अधिक स्वस्थ रह सकते हैं यदि वे कम से कम ग्रावश्यक भोजन करें न कि ग्रपने पेट में ग्रधिक से अधिक भोजन पहुंचाने की चेष्टा करें।

दिन में दो बार दैनिक प्रार्थना से मनुष्य को वह साहस और बल प्राप्त होते हैं जिससे वह बीमारी का प्रतिरोध कर सकता है। भगवान् की कृपा मानसिक शान्ति देगी इसी से अच्छी प्रगाढ़ निद्रा ग्रौर मन को विश्राम मिलेगा। कल्पना करो कि तुम शत प्रतिशत भगवान् पर ग्राश्रित हो वह तुम्हारी देखभाल करेगा ग्रौर चोट ग्रौर हानि से रक्षा करेगा। कृतज्ञापूर्ण प्रार्थना के बाद जब उससे दिनभर रक्षा ग्रौर पथप्रदर्शन पाने के लिये ग्राभार प्रकट कर सोग्रो। जब कोई मित्र तुम्हें एक सिगरेट या जल का गिलास भेंट करता है तो तुम तत्काल उसे धन्यवाद कहते हो तो फिर उस भगवान् के प्रति जो निरन्तर तुम्हारी देखभाल करता है ग्रौर ग्राने वाले सभी संकटों, हानियों से रक्षा करता है जो तुम्हें अभिभूत् करने को ग्राने वाली होती हैं तुम्हें कितना अधिक कृतज्ञ होना चाहिये। समस्त कार्यकलाप

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भगवान् को, जो हमारा सर्वोच्च कल्याणकर्ता है, अर्पण कर देना चाहिये। इससे शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का स्वास्थ्य प्राप्त होगा।

शरीर तो एक रथ है जिसके रथी भगवान् हैं और जो इस जीवन रूपी रथ-यात्रा के जलूस की मूर्ति हैं। आओ हम कुछ ऐसी बातों पर विचार करें जिनके संबंध में हमें सावधान रहना है जिससे मार्ग पर कोई दुर्घटना न हो। (१) सप्ताह में एक दिन उपवास करो। यह शरीर और राष्ट्र दोनों के लिये हितकर है। एक दर्जन केले, आधे दर्जन पूड़ियां और पावभर दूध डकार जाने का नाम व्रत नहीं होता है। केवल जल ग्रहण करो जिससे सभी आन्तरिक गंदगी धुलकर स्वच्छ हो जावे। फलों के रस अथवा अन्य पेयों के लिये मत ललचाओ। जड़ मशीनों को भी तो विश्राम देना पड़ता है। वे निरंतर नहीं कार्य करती हैं। फिर इस अत्यंत संश्लिष्ट मानव यंत्र के संबंध में, जो बहुत संवेदनशील भी है, क्या कहा जा सकता है। यह कोई सभ्यता का चिन्ह नहीं है कि शरीर को, स्वामी मानकर सदा इसकी सनकों और मांगों की पूर्ति करते हुये और अज्ञानपूर्वक इसे दुलारकर बिगाड़ दिया जावे। यह तो असभ्यता, बर्बरता का चिन्ह है।

इस देश की पुरानी पीढ़ी दही में भीगा कुछ भात प्रातःकाल के नाश्ते में लिया करती थी। यह अच्छा सात्विक भोजन है; अथवा वे पतला दलिया पान करते थे, वह भी उतना ही अच्छा भोजन है। पशु इस मामले में अधिक अच्छे आचरण वाले होते हैं, कुत्तों का भी भोजन संबंधी स्वभाव अधिक अच्छा होता है। यदि कुत्ते को ज्वर आजावे तो वह भोजन त्याग देता है; परन्तु मनुष्य डाक्टर की चेतावनी की भी उपेक्षा कर जाता है और चुराकर चुपके चुपके खाता रहता है। केवल भोजन संबंधी नियमन से चिड़ियों और पशुओं का स्वास्थ्य ठीक हो जाता है। परन्तु मनुष्य तो बटिका, गुटिका और गोलियों और इन्जेक्शनों का भरोसा करके वर्जित भोज्य और पेय पदार्थों का सेवन करता रहता है। भोजन के कुछ पहिले या पश्चात्, भोजन करते समय नहीं,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रचुर मात्रा में उबाल कर ठंडा किया हुआ जल पिया करो (२) केवल स्वस्थ व्यक्ति ही अपने शरीर को भूलकर अपना ध्यान भगवान् पर केन्द्रित कर उससे आनन्द प्राप्त करने में समर्थ होता है। अन्य दश इन्द्रियों के समान ही मन ग्यारहवीं इन्द्रिय है। व्यक्ति को चाहिये कि वह इसका स्तर घटाकर बुद्धि के नीचे रखे। एक सुव्यवस्थित नियम के अनुसार सदा उचित और नियमित व्यवधान कर भोजन किया करो। दिन भर घूम फिर कर कार्य में व्यस्त रहो जिससे भोजन अच्छी तरह पचे। भोजन के लिये बैठने से पूर्व अच्छी जोरदार भूख लगी होवे। बहुतों को तो इसका अनुभव ही नहीं होता है कि अच्छी तरह भूखा या प्यासा होने पर कैसा लगता है। जब तक अन्दर से मांग न होवे प्रतीक्षा करो और पुनः पेट में भोजन के भार में वृद्धि मत करो। इस मामले में धनिक वर्ग की स्थिति बड़ीं दयनीय है। और स्त्रियों, को इतना लाड़ प्यार दिया जाता है कि वे शारीरिक श्रम आपेक्षित कार्य को निन्दित कर्म समझने लगी हैं।

काहिली और टालमटोल का स्वाभाविक परिणाम रोग होता है। परिश्रम पूर्ण नियमित आहार-विहार वाले जीवन का अनिवार्य परिणाम स्वस्थ या निरोग जीवन होता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत सेवा स्वयं कर लिया करे और नौकरों, सहायकों चपरासियों पर आश्रित न रहे तो निश्चय ही देश के स्वास्थ्य की स्थिति सुधरेगी और अस्पतालों का कार्य बहुत कुछ हल्का हो जावेगा। (३) मन को भगवान् में, सद्विचारों में और सत्कार्यों में निमग्न रखने से भी स्वास्थ्य को सहायता मिलती है। आंख, कान, जिह्वा और हाथ पैरों को अनुशासित रखो। दुर्बलता या उत्तेजना उत्पन्न करने वाले उपन्यासों को मत पढ़ो, उन सिनेमा चित्रों को देखने मत जाओ जो मन को थकाने वाले या भड़काने वाले हों। अपने में भी विश्वास मत छोड़ो, तुम तो इस शरीर रूपी पिंजड़े में दिव्यात्म तत्व हो संतोष ही सर्वोत्तम पौष्टिक है; अपने में लोभ की बीमारी क्यों उत्पन्न करते हो और फिर शक्ति प्राप्त करने के लिये पौष्टिकों की शरण जाते हो, जिससे फिर स्वस्थ होकर अधिकाधिक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

धन संचय और कर सको ? शरीर को जीवन रूपी महासागर के पार जाने के लिये एक तरणी के समान प्रयोग करो जिसमें भक्ति और वैराग्य के दो डांड़ भी प्रयुक्त किये जाते हैं।

शरीर का ही अधिक चिन्तन नहीं करना चाहिये। कुछ लोग सदा स्वास्थ्य ही की चिन्ता में डूबे रहते हैं और अपनी शारीरिक सेवा सुश्रूषा, जो भी वे अपने शरीर की कर पाते हैं से कभी संतुष्ट नहीं रहते हैं। सूर्य के प्रकाश में निकलो, सूर्य की किरणों को घर में प्रवेश करने दो, उन्हें शरीर पर भी कुछ काल तक पड़ने दो, उन्हें भोजन वस्त्रों पर पड़कर उन्हें गर्म और आलोकित करने दो, इससे वे स्वास्थ्यप्रद हो जावेंगे।

कुछ लोग हैं, जो प्रश्न करते हैं कि इस जगह आरोग्य सदन या अस्पताल का क्या औचित्य है ? यह मूर्खतापूर्ण प्रश्न है; और इस मान्यता को लिये हुये है कि यहाँ तो सब कुछ चमत्कार, अनिर्वचनीय प्रक्रिया द्वारा ही ठीक ठाक रहना चाहिये। इसका लक्षित अर्थ यह भी है कि यहां आनेवाले को न तो बीमार पड़ना चाहिये और न मरना ही चाहिये। मेरी ऐसी कोई इच्छा नहीं है कि तुम्हें जीवित रहना चाहिये और न मुझे तुम्हारे शरीर छूट जाने का ही भय हैं। अपनी दशा का निर्णय करने वाले तुम्हीं हो। देर, सबेर मरना सभी को हैं। वर्षों तक कोई भी वे ही पुराने, गंदे या फटे वस्त्र धारण किये रहने के लिये उत्सुक न होगा। मृत्यु तो पुराने वस्त्रों को बदलने के समान होने वाली क्रिया है। अपना निर्धारित कार्य संपादन के पश्चात् अवतारों को भी तो शरीर त्याग करना होता है, तो मनुष्य को अपरिहार्य शरीर परिवर्तन से बचने की क्या बात है ? अस्पताल तो उन लोगों के लिये है जो दवाओं और डाक्टरों में विश्वास करते हैं, विश्वास और निष्ठा का बड़ा महत्त्व है, उसी से व्यक्ति निरोग होता है। अस्पताल ऐसे लोगों को स्थान देता है जो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इधर-उधर हिलडुल भी नहीं सकते और फिर भी निरोग होने की आशा में यहां दौड़े आते हैं। जो अस्पताल में पड़े हैं उन्हें भी प्रणव संकीर्तन, भजन और आध्यात्मिक स्पन्दनों का लाभ मिलता ही है; यह तो प्रशान्ति निलयम् की वायु को ही संपृक्त किये हुये हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२३ महिमा के चिन्ह और प्रतीक

(प्रशान्ति निलयम १४-१०-१९६९)

जो सड़क सुख-दुख, हर्ष-विषाद से होकर जाती है उसी से होकर मनुष्य को जीवन यात्रा करनी है। इस सड़क को केवल इसी प्रकार चिकना और आरामदायक बनाया जा सकता है कि मानव बुद्धिपूर्वक अपने साथ भक्ति और वैराग्य का संबल रखे तो यात्रा के कष्ट बहुत कुछ दूर ही रहेंगे। यह उन्हें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है यदि वह अपने बड़े बूढ़ों की वार्ता और अनुभवों को, जैसा कि धर्मशास्त्रों में अथवा अपने चारों ओर वर्णन किये जाने वाले व्यक्तिगत अनुभवों में सुनता है, वह उनसे परिचित होवे। उसे केवल कुछ देर शान्त होकर बैठ जाना है, और जीवन यात्रा में घटने वाली घटनाओं को काल के प्रवाह में बहते हुए देखकर विचार करना है।

शिशु उदासीन रह कर मल-मूत्र में लोटता रहता है; क्योंकि वह इस दुर्गन्धयुक्त मैल और घृणा से अपरिचित होता है; परन्तु सयाने होने पर जब उसके अनुभव और बुद्धि में वृद्धि हो जाती है तो उसे यह ज्ञान होता है कि इस प्रकार गंदगी में लोट लगाना विपत्तिकारक और लज्जादायक कार्य है। इसी प्रकार मनुष्य अपनी अज्ञानावस्था में ऐन्द्रिक मूर्खताओं में लिप्त रहता है तब वह यही बहाना करता है कि उसे श्रेष्ठ ज्ञान नहीं प्राप्त हुआ है। बाद को, फिर भी, यदि वह अनुभव से नहीं सीखता हैं; और बुद्धि को मंद करने वाली इन घृणित बातों ओर आदतों से विरत नहीं होता है, तो वह लोगों के उपहास का पात्र हो ही जाता है। वह तो अपने लिये और दूसरों के लिये एक विपत्ति के समान है। संज्ञा के साथ तो अनेक विशेषण लग जाते हैं, नासमझ व्यक्ति को अनेक उपाधियाँ प्राप्त हो सकती हैं, जो उसकी पवित्रता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को विकृत करने वाली होती हैं। डाक्टर बीमारी का निदान कर सकने में समर्थ होता है—वह तो वात, पित्त, कफ और रक्त के संतुलन की अवस्था का निर्णय कर पाता है, केवल भगवान् रूपी वैद्य (वैद्यो नारायणो हरिः) जो व्यक्ति के आन्तरिक दोषों, विज्ञानमय और आनन्दमय से सुपरिचित है, ही गुणों और उनके मानवीय चरित्रों और क्रियाओं पर प्रभाव का विवेचन कर पूर्ण रूप से आरोग्य प्रदान कर सकता है।

आधुनिक वर्षों में आध्यात्मिक क्षेत्र में उन्नति द्वारा मानसिक शान्ति प्राप्त करने के उत्साह में वृद्धि हुयी है, अवतार द्वारा विकीर्ण कृपा का यह एक प्रत्यक्ष प्रमाण है। न केवल भारत में, वरन् समूचे विश्वभर में, ऋषियों के द्वारा अपनाये गये उपायों के प्रति बड़ी जिज्ञासा और उत्साह है। ये सभी लोग प्रेम, योग, धर्म और सत्य के द्वारा शान्ति प्राप्त करना चाहते हैं। १०, १५ वर्ष पूर्व धार्मिक प्रवचन सुनने वाली भीड़ बड़ी कम संख्या में, जिनमें मुट्ठी भर वृद्ध स्त्री-पुरुष हुआ करते थे, आती थी। परन्तु अब हम देखते हैं कि हजारों और लाखों की संख्या में लोग दूर-दूर से आकर उत्साह और जिज्ञासा से घंटों पहले एकत्रित हो जाते हैं। इनमें भी अधिकांश संख्या तरुणों की होती है। आज युवक अपने उत्तराधिकार को, जो भूतकाल के पूर्वजों की देन है, प्राप्त कर अपनी भावी जीवन सुधारने की आशा करते हैं।

हिन्दू शब्द का अर्थ है वे लोग जो हिन्सा से दूर रहते हैं, किसी को चोट नहीं मारना चाहते हैं। हिं (हिन्सा अर्थात् शारीरिक मानसिक किसी प्रकार का आघात) दू (दूर, पृथक)। शास्त्र कहते हैं कि भारत में उच्च सम्मान से देखे जाने वाले १८ पुराणों का सार पुण्य है जिसे परोपकार कर मानव अर्जित करता है और दूसरे को कष्ट देना ही पाप होता है। 'परहित सरिस धर्म नहिं भाई परपीड़ा सम नहिं अध माई'। यदि तुम इस मार्ग के पथिक हो जाओ तो फिर सभी धर्मों और पंथों का स्वागत करोगे क्योंकि ये सब मनुष्य को उसी मार्ग पर चलने का प्रशिक्षण देते हैं। बौद्ध, यहूदी, ईसाई और मुसलमान सभी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उस दिव्यालोक को प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा रखते हैं और इसी के लिये मस्तिष्क की स्वच्छता के लिये सत्कर्म करते हैं। वेदान्त के सनातन धर्म में इन सब का बीज पाया जाता है। जिस प्रकार कान्ग्रेस में कई दल, संयुक्त सोशलिष्ट पार्टी, प्रजा सोशलिष्ट पार्टी और यहाँ तक की कम्युनिस्ट पार्टी निकलकर बाहर स्वतंत्र रूप से संगठित हो गये हैं। उसी प्रकार भारत के सनातन धर्म की दक्षिण, वाम और मध्य विचार धारा को लेकर आगे चलने वाले अन्य सभी धर्म और पंथ हैं। धर्म भगवान् तक लेजाने वाले सभी संभव मार्गों का परीक्षण करता है और उन्हें उसी क्रम में, जिसमें साधक इन्हें अपनाकर लाभान्वित होते हैं, जिस स्तर तक उनकी उपलब्धियाँ और साज सज्जा होते हैं, व्यवस्थित करता है। जब एक वृक्ष का अंकुर बीज फोड़कर मिट्टी से बाहर आता है तो उस समय तने और दो पत्तियों के अतिरिक्त विस्तार नहीं होता है। कालान्तर में वृद्धि होने पर इसी में से सुदृढ़ तना, शाखायें और विस्तृत हरीतिमा पुंज प्रकट हो जाते हैं। प्रत्येक शाखा ही तने जैसी मोटी और सुदृढ़ होती है परन्तु किसी को भूलना नहीं चाहिये कि इन सबको जड़ों से एक ही तने के माध्यम से भोजन-रस प्राप्त होता रहता है। भगवान्, वही एक भगवान्, इन सब धर्मों, पंथों, मत, मज़हबों की आध्यात्मिक पिपासा को सामान्य पोषण, सत्य, सद्गुण, नम्रता और बलिदान के द्वारा तृप्त करता रहता है।

पिछली मई में, जब, धर्मक्षेत्र के वार्षिकोत्सव के अवसर पर, मैं बम्बई में था तो डाक्टर के० एम० मुंशी के यहां बुद्धिवादियों का सम्मेलन एकत्रित हुआ था जिसमें अनेक उप-कुलपति, डाक्टर, वकील, प्रोफेसर लोग मुझसे भेंट करने को उत्सुक थे। उस बैठक ने प्रश्नोत्तर सभा का रूप धारण कर लिया और पूरे छः घंटे तक यही चलता रहा।

एक प्रश्न इस आशय का था कि विभिन्न धर्म और मत मनुष्य को परस्पर भिन्न और भेदकारी दिशाओं में घसीटते हैं। मैंने उन्हें बतलाया कि कोई

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नहीं जानता है कि वेद अपने वर्तमान् रूप में कब संपादित हुये थे। बाल गंगाधर तिलक का अनुमान था कि यह कार्य १३००० वर्ष पूर्व हुआ था। अन्य लोग इस कालावधि को घटाकर ६००० वर्ष तक ले आते हैं। परन्तु इस बात पर सभी सहमत हैं कि यह घटना कम से कम ४००० वर्ष पहले की है। बुद्ध तो ऐतिहासिक व्यक्तित्व है जिसकी उत्पत्ति २५०० वर्ष पूर्व हुयी थी। ईसा का १९६९ वर्ष पूर्व और उनके ६०० वर्ष वाद इस्लाम का जन्म हुआ था। इस प्रकार ऐतिहासिकता और तर्क दोनों के अनुसार यह निष्कर्ष प्राप्त है कि वैदिक धर्म पिता, बुद्ध धर्म पुत्र, ईसाई धर्म पौत्र और इस्लाम प्रपौत्र हैं। यदि इनमें कोई मतभेद भी हो तो वह एक पारिवारिक मामला है। पूर्वजों द्वारा छोड़ी गयी सम्पत्ति एक ही है और ये सब उसके समान भागीदार हैं।

दूसरा प्रश्न परमाणु वम के वारे में था। भारत भी क्यों न उसके निर्माण अथवा प्राप्ति का प्रयास करे। मैंने उत्तर दिया कि यदि हमने उसे अभी तक नहीं वनाया है तो इसमें लज्जा की कोई वात नहीं है, यह तो गर्व की वात है, कि हमने अभी तक उसके निर्माण का कोई प्रयास ही नहीं किया है। अपनी सुरक्षा भावना को दृढ़ वनाये रखने के लिये हमें इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ी। पांचों पाण्डव अपने अग्रज, जिनका नाम धर्मराज पड़ गया था, के नेतृत्व में चलते थे। वे सदा धर्म के अनुसार ही आचरण करते थे। उनका भाई भीम अपने युग का सबसे अधिक शक्तिशाली योद्धा था, उनकी गदा के आघात से पृथ्वी काँप जाती थी। उन्होंने विशालकाय और वलशाली कीचक से मल्लयुद्ध करके उसका वध कर दिया था। उनका शारीरिक और मानसिक स्वाथ्य उत्तम था। दूसरा लघुभ्राता अर्जुन अपने युग का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर था। उनकी धर्मनिष्ठा और साहस से संतुष्ट होकर देवताओं ने भी अपने दिव्य और अमोघ शस्त्र उन्हें प्रदान कर दिये थे। फिर भी ये दोनों इसी प्रकार अपने वड़े भाई की आज्ञानुसार चलते थे मानों कि ये उन्हीं के एक शारीरिक अंग प्रत्यंग हों, धर्मराज द्वारा निर्देशित धर्ममार्ग से रंचमात्र भी विचलित नहीं होते थे। मैंने उस सम्मेलन में कहा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कि जब तक भारत धर्म के मार्ग पर डटा रहेगा, रूस, जो भीम के समान बलवान है, और अमरीका, जो अर्जुन की तरह शक्तिशाली है, इस देश का सम्मान करेंगे और इससे मानसिक शान्ति और सुरक्षा के साधनों की शिक्षा ग्रहण करते रहेंगे। क्योंकि, उनके वर्तमान अभिमान और शक्ति आन्तरिक विद्यमान् भय, एक ऐसी ज्वलन्त पीड़ा जो जीवन तत्व को ही खाये जा रही है, के ही परिणाम हैं। इसीलिये भगवान् ने पाण्डवों की सहायता की कि वे जीवन की अग्निपरीक्षाओं में खरे उतरें। पाण्डव इतने धार्मिक थे कि ज्योंही उन्हें ज्ञात हुआ कि उनके सबसे बड़े शत्रु कौरवों को गंधर्व लोग बाँध कर ले गये हैं, वे उनके उद्धार के लिये निकल पड़े। वे जानते थे कि कौरवों के उद्धार का अन्य कोई उपाय ही नहीं है। ऐसा ही आचरण तुम्हें भी करना है। इस राष्ट्र का नारा ही 'सेवा' होना चाहिये। उनलोगों की सेवा नहीं कि जिनकी सेवा के लिये हजारों व्यक्ति पहले ही तत्पर हैं और जिनमें आर्थिक सामर्थ्य सेवा कराने के लिये है; बल्कि अस्पतालों में पड़े साधनहीन बीमारों की सेवा जिनकी सेवा सुश्रूषा करने, एक पुष्प देने, या एक सहानुभूति पूर्ण मुस्कान भरी दृष्टि डालने, को कोई नहीं पहुंचता है। उनकी चिट्ठियाँ भी लिखने को कोई चाहिये। एक दिन अनेक ऋषियों ने एकत्र होकर स्त्रियों के आचरण के नियमों पर वार्ता की। उनमें कुछ स्त्रियाँ भी विद्यमान थीं उन्होंने गृहिणी के कर्त्तव्य जानने चाहे। स्त्रियों ने कहा उन्हें तो दान करने में, कुछ प्राप्त करने की अपेक्षा, अधिक आनन्द आता है; जोड़ने में या संग्रह करने में भी उतना नही। मातृत्व के सर्वाधिक आनन्द दायक क्षण वे होते हैं जिनमें स्त्रियां अपने बच्चे को अपने ही शरीर का जीवन द्रव, स्तन्य पान कराती हैं जिससे शिशु अपने ओठों से उनके स्वास्थ्य पोषक दुग्ध को पीकर स्वस्थ होवे। दूसरी स्त्री ने कहा कि उसे अपने द्वारा तैयार किये गये सुस्वादु व्यंजन पति बच्चों और दूसरों को परोसने में स्वयं खाने की अपेक्षा अधिक आनन्द आता हैं। आनन्द प्राप्ति का द्वार तो देना है न कि पाना। अकेले खाने में, चाहे वह सर्वोत्तम,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

स्वादिष्ट और पौष्टिक व्यंजन क्यों न हो उतना आनन्द नहीं आता है। साथ खाने वाला कोई हो तो आनन्द दूना हो जाता है।

मैं तुम्हें बतला देना चाहता हूं कि जिस आनन्द को तुम सेवा करके प्राप्त करते हो वह अन्य किसी भी क्रिया से नहीं पाया जा सकता है। एक दयालुता का शब्द, एक छोटे से उपहार की भेंट, एक सदाशयता की मुद्रा, सहानुभूतिपूर्ण विश्वास, दया के संकेत द्वारा जो पीड़ित हृदय को रोमाञ्च-कारी, आनन्दकारी, अनुभूति प्रदान करते हैं, वह अनिर्वचनीय होती है।

वेदों की यही शिक्षा है कि सभी प्राणी अपने ही स्वजन हैं, सभी में दैवी ज्योति है। वे इस बात पर जोर देते हैं कि भगवान् प्रेम स्वरूप है। अखिल भारत प्रशान्ति विद्वान महासभा की स्थापना इसीलिये की गयी है कि इस बहुमूल्य उत्तराधिकार की रक्षा हो, प्रचार हो और संसार से घृणा और हिन्सा की उत्ताल तरंगें, जो उसे डुबा रही हैं, शान्त की जा सकें। यह सभा इस देश के प्राचीन मंदिरों के प्रति श्रद्धा को बढ़ावा देगी। पहले यही मंदिर आध्यात्मिक स्पन्दनों को समूचे समाज में प्रसारित करते थे। वे कला के संग्रहालय, काव्य के उन्नायक, वैदिक ज्ञान की पाठशालायें, जातियों को एकता के सूत्र में आबद्ध करने वाले और नैतिक उत्थान के केन्द्र थे। सभा इन्हीं सब कार्यों को उन्नत करेगी और एतद् संबंधी अन्य संस्थाओं की, जिनका आदर्श धर्म के सार्वभौम मूल्यों का प्रसारण होवे, स्थापना और संगठन करेगी।

पाश्चात्य देश शान्ति का अर्थ दो युद्धों के बीच की अवधि मात्र मानते हैं जिसमें कि पराजित देश अपनी पराजय के अपमान का बदला चुकाने की तैयारी में लगाते रहते हैं, तथा विजयी देश, विजयोपहारों की लूट-खूंट संग्रह और अगली मुठभेड़ में पुनः विजय प्राप्त करने के लिये तैयारी करते रहते हैं। यह तो शान्ति नहीं है। जब मनुष्य अच्छा सोचे, अच्छा कहे और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अच्छा करे भी तभी शान्ति का विकास होता है; परन्तु, आज तो वह अच्छा कहता है यद्यपि उसकी विचार धारा दुष्टतापूर्ण है और वह बुरे कार्य करने की तैयारी में लगा रहता है। मनुष्यों के बीच एक मानव के रूप में उसका विकास मानवीय सद्गुणों से युक्त होना चाहिये, परन्तु मनुष्य उपेक्षा करता है कि भगवान् उसकी क्रूरता और दुष्टता का दण्ड नृसिंह अवतार धारण करके दे सकता है। वह अमरत्त्व के सिद्धान्त की अवहेलना करता है जो कि उसका मूलाधार है; प्रेम का सिद्धान्त ही तो मानव समाज की जीवन-धारा, रक्त-संचार है। वह शान्ति के वरदान से स्वयं को वंचित कर लेता है और विनाश की ओर दौड़ता है। दूसरों का विनाश करके वह अपना ही विनाश करता है।

भगवान् की महिमा, सर्वव्यापकता, और सौंदर्य का चिन्तवन करने से ही व्यक्ति को शान्ति प्राप्त हो सकती है। इसी घंटे में जब तुम मेरे समक्ष इतनी समीपता से सँट कर बैठे हो तो तुम्हारे मस्तिष्क में इन विचारों के अतिरिक्त कुछ और विचार नहीं है, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। अपने हृदय को एक प्रशान्ति निलयम् बना लो। इसके लिये भगवान् की महिमा का चिंतन करते हुये अपने को उसी महिमा का प्रतीक और नामपट्ट मानो। मंत्री कह रहे थे कि वे यहाँ आते हैं तो निलयम् के लिये कुछ करने की इच्छा करते हैं। उन्होंने कहा कि वे मंत्रिपरिषद के अपने साथियों से स्वयं बात करके इस स्थान पर आने वाली सड़क को शीघ्र ही सुधरवा देंगे। शरीर तो सीमेंट या टार की पक्की चिकनी सड़क से सुखदायक यात्रा का लोलुप होता है, परन्तु हृदय पवित्रता और विनम्रता की सड़क को अधिक पसंद करता है; जिससे वह अपने लक्ष्य भगवान् में लीन हो सके। मैं भी इस वाद में उल्लेख की गयी सड़क के पक्ष में हूं। मैं सीमेंट की या टार की पक्की सड़क के बारे में उत्साह नहीं रखता हूँ क्योंकि उससे तो इस स्थान की यात्रा अधिक सरल हो जावेगी और सावधानी से धीरे-धीरे गाड़ी चलाने का छोटा सा अनुशासन, जो यहाँ यहाँ आने वालों पर अभी है, मिट जावेगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जब यहाँ आओ तो छोटी मोटी कठिनाइयों और असुविधाओं को सहना भी सीखो। जीवन एक सीधी, चिकनी, समतल सड़क की सुखद यात्रा नहीं होती है। यह तो अनेकों उतार-चढ़ाव वाली है। भारत शताब्दियों से जिस प्रकार की सुखद यात्रा का उपदेश करता रहा है और स्वयं उस पर आचरण करता रहा है उस कला को सीख लो और शान्ति लाभ करो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२४ मन-मोदकों को त्याग दो

प्रशान्ति निलयम् १५-१०-१९६९

मनुष्य क्यों जन्मते समय रोता है, जीवन भर गिड़गिड़ाता है और इसके पश्चात् कराहता रहता है, यहाँ के अल्प जीवन के लिये पश्चात्ताप करता है कि यह तो निरर्थक ही बीत गया ? मनुष्य ऐसा इसलिये करता है क्योंकि वह अपनी महिमा से और अपने महान् लक्ष्य से अनभिज्ञ है। वह मानवीय साँचे में ढाला हुआ दैवी तत्त्व है जैसा कि अन्य जड़-चेतन और हर वस्तु के सम्बंध में है; परन्तु, यह विशेषाधिकार मानव को ही प्राप्त है कि वह इस मूल्यवान् सत्य से अवगत हो सकता है। मनुष्य के लिये उपनिषदों का यही सन्देश है। इसी सत्य की गूँज धर्मशास्त्रों में और अगणित सन्तों, ऋषियों की वाणी में पायी जाती है। फिर भी मानव इसके प्रति बहरा बन जाता है; कदाचित इसलिये कि पूर्व जन्म के कुकृत्यों के कारण उसका दुर्भाग्य उसे ऐसा ही बना देता है। वह अपने दैवत्त्व पर मनन करके आनन्द प्राप्त कर सकता है; अथवा जो कुछ वह अपने से बाहर देखता, सुनता, स्वाद लेता, स्पर्श करता या सूँघता है उसमें दैवत्त्व का दर्शन करने का प्रयत्न कर सकता है। "सर्वं ब्रह्ममययं" इस सब में ब्रह्म व्यापक है। तुम्हारे अन्दर और बाहर कैसा अक्षय आनन्द का सागर लहरा रहा है। तुम्हें केवल अपने मस्तिष्क को विकसित करना है कि वह इस पुकार की सुनवाई करे और सत्य को पहचाने। पालने में पड़ा शिशु आनन्द की प्रतिमा है; जिस समय वह व्याकुलता से चिल्लाता है, हम उसकी ओर भाग कर जाते हैं क्योंकि दुखी होना तो उसके स्वभाव के प्रतिकूल है। मानव भी तत्त्वतः आनन्द ही है। कष्ट या पीड़ा उसके गठन के प्रतिकूल है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भगवान् की व्यापकता का अनुमान कर मानव को उस दैवी तत्त्व के प्रति अपने समस्त कर्मों को अर्पण कर देना चाहिये। यदि गंभीरता से तुम सोचो तो कर्म क्या होता है ? यह तो दिव्यता के द्वारा दिव्यता के लिये किया गया क्रिया-कौशल होता है और इसमें प्रयुक्त दक्षता भी उसी दिव्यता की देन होती है। इसमें 'मैं' और 'मेरा' अर्थात् ममत्व के लिये कोई स्थान नहीं है। वह तो विश्व जननी 'मैं' और दैवी 'मेरा' की ही लीला है।

अर्पण करना तो कई प्रकार से होता है। जिस भोजन को हम पाते हैं उसे ही ले लें। उसे स्वयं पाने से पूर्व भगवान् को समर्पित करो। तब यह प्रसाद और पवित्र भक्ष्य हो जाता है। इसी प्रकार भगवान् की महिमा के विस्तार के लिये किया गया प्रत्येक कर्म शक्तिसम्पन्न और पवित्र बन जाता है। वह तो कर्त्ता के लिये हानि-रहित हो जाता है; वह तो व्यक्ति और समाज के लिये कल्याणकारी इसीलिये हो जाता है कि वह प्रेम से संपृक्त होता है और प्रेम तो भगवान् का स्वरूप ही है। इस कठपुतली के तमाशे का संचालक भगवान् ही तो है, जो अपनी उंगलियों से रस्सी के संकेत द्वारा सभी को नचाता है।

'उमा दारु योषित की नाईं, सबहि नचावत राम गुसाईं'।

पर्दे के पीछे जाओ और उससे साक्षात्कार कर लो। जो पर्दा उसे छिपाये हुये है उसके पार तुम्हें झाँकना है। पुष्पों के पीछे, बादलों के पीछे ताकना है। वही अपनो अंगुलि संचालन से हमें सौंदर्य का, बादलों में आर्द्रता का नीलिमा का बोध प्रदान करता है। इसी प्रकार तुम्हें अपने विचारों के पार झाँकना है और अपनी अनुभूति के अंदर ताकना है तब तुम उस अंतःकरण निवासी उत्प्रेरक के दर्शन पा सकोगे। अन्तर के विचारों में इस प्रकार डुबकियाँ लगाने की क्रिया भारत के योगशास्त्र द्वारा सिखाई जाती है। परन्तु, तुम ऐसे गुरुओं तक पहुंचो जो शुद्ध और निस्वार्थ हैं; न कि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उनके पास जो अपने अज्ञान को ऊपरी, आडम्बर और झाँसा पट्टी से छिपाये रहते हैं।

यदि कोई ऐसा शिक्षक न प्राप्त होवे तो केवल अपनी रुचि के भगवान् के किसी भी नाम-रूप का सहारा लेकर ध्यान करना भी पर्याप्त होगा। अथवा नाम और महिमा का स्मरण करना भी पर्याप्त रहेगा। मन को लोभ और पापाचार से दूर रखना एक महत्त्वपूर्ण बात है। हृदय को कोमल और दयालुतापूर्ण रखो। इसमें आयु का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। चाहे कोई वृद्ध हो फिर भी उसका हृदय ताजा और कोमल रह सकता है; उसमें पर्याप्त उत्साह, सेवाभाव और बलिदान की स्वेच्छा हो सकती है। इससे तुम्हें निश्चय ही आध्यात्मिक प्रदेश में प्रवेश का पार-पत्र प्राप्त हो जावेगा। दिव्यता मानव जीवन यात्रा का अंतिम छोर है ठीक उसी प्रकार जैसे कि फल का पक जाना उस यात्रा का अंतिम छोर है जो कली से पुष्प, पुष्प से फलित होना और कच्चे खट्टे फल से उसके पूरी तरह पकने की अवस्था तक होती है। भगवत्कृपा ही वह सुनहली धूप है जो फल को पकाती है। साधना वह पोषक रस है जो वृक्ष पृथ्वी से प्राप्त करता है। वृक्ष को फल उगाने के लिये इन दोनों (धूप और रस) की आवश्यकता होती है।

जो चाहते हैं उन्हीं पर कृपा की वर्षा होती है। कुंडी खटखटाओ, द्वार खुल जावेगा। मांगो; भोजन परोसा जावेगा; खोजो तो तुम कोषागार को भी पा लोगे। तुम यह उपालंभ दे सकते हो, "स्वामी जी हम तो वर्षों से कुंडी खटखटा रहे हैं, याचना कर रहे हैं और खोज रहे हैं फिर भी अभी द्वार ही नहीं खुला है, भोजन पाने की तो बात ही क्या है और खजाना, वह तो मृगमरीचिका है हमारी पहुंच के बाहर की बात है।" परन्तु मैं तुमसे यह पूछना चाहूंगा। तुम तो दानव के द्वार पर कुंडी खटखटाते और याचना करते रहे हो न कि देवता के द्वार पर, और दानव के खजाने को खोद निकालने की चेष्टा करते रहे हो। दानव का क्षेत्र पार्थिव जगत है,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बाह्य प्रकृति है। वह तो चतुर जादूगरनी, ठगिनी है। अभी तक तुम उसी की ग्राराधना-पूजा करते रहे हो इस ग्राशा से कि वह तुम्हें शान्ति ग्रौर ग्रानन्द प्रदान करेगी। वह तुम्हें छेड़ती है ग्रौर तुम्हें एक निराशा से दूसरी तक भटकाती रहती है। वह तुम्हारे ग्रहंकार ग्रौर उपलब्धियों को इतना बढ़ा चढ़ा कर प्रतीत कराती है कि अंत में तुम उन्नतगर्व के कारण ही पतित हो जाते हो। तुम गलत द्वार पर थपकी दे रहे हो यह तो नरक का द्वार है जो सदा खुला रहता है। तुम क्षुद्र ग्रानन्द की खोज में हो न कि स्थायी कोष प्राप्ति के ग्राकांक्षी हो।

तुम मुझसे कहते हो, "स्वामीजी, मैं तो ५० वर्ष से गंभीर ध्यान कर ग्रभ्यास कर रहा हूं परन्तु, ग्रभी मुझे एकाग्रता ही प्राप्त करना है।" यह तो निर्लज्जतापूर्ण स्वीकारोक्ति है। मन को विजय करने की शृंखला में ध्यान सातवाँ और समाधि ग्राठवाँ चरण है। जब तक तुम पिछले ५ चरणों पर दृढ़ता से पैर नहीं जमा पाये हो तो तुम ध्यान से फिसल जाग्रोगे, तुम चाहे कितने ही वर्षों से इस पर जमने का अभ्यास क्यों न करते रहे हो। पहला चरण तो इन्द्रियों को वश में करने का है; दूसरा मनोद्वेगों ग्रौर तीव्र क्षोभों के दमन का है। तीसरा चरण मानसिक संतुलन ग्रौर सौम्यता का है चौथा प्राणायाम का है; पांचवाँ बाह्य प्रभावों से मुक्त रहना ग्रौर मन का ग्रविचलित रहना है। ग्रगला चरण एकाग्रता से ग्रपनी ग्राध्यात्मिक उन्नति का ध्यान करना तब हम वास्तविक ध्यान पर ग्रा पाते हैं। जबकि ग्रात्मतत्त्व या वास्तविक सत्य का ध्यान किया जाता है जो कि समाधिस्थ होने पर सहज ही प्राप्त हो जाता है; बिना पिछले नीचे के डंडों पर पैर जमाये तुम उछल कर सिढ़ी के ऊपरी सातवें डंडे पर कैसे पहुंच सकते हो? फिर ग्राठवें को सरलता से उचक कर पकड़ लोगे।

जीवनरूपी यात्रा में जो बोझा ढोये जा रहे हो उसे घटा दो। स्मरण रहे कि वह सब जो 'तुम' नहीं हो बोझा ही है। तुम शरीर नहीं हो। इस प्रकार

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शरीर भी बोझे की एक अदद (या इकाई) है। मन, इन्द्रियां, बुद्धि और कल्पना इच्छायें, योजनायें, पूर्वाग्रह, असंतोष और संकट; सभी बोझा की इकाइयां हैं। उन्हें फेंक कर; हल्के होकर यात्रा करो, तब अधिक सुखी और सुरक्षित भी होगे। उनलोगों को देखकर जो विनम्र और महान हैं, इस शिक्षा को ग्रहण कर लो। वही तो महान और अग्रज हैं जिनका तुम्हें अनुकरण करना है, सराहना करनी है। ऐसे लोगों के चले जाने पर ही तो तुम्हारे नेत्र गीले हो जाते हैं; इनके प्रतिकूल दूसरे ऐसे भी होते हैं कि जिनके तुम्हारे मार्ग में आ जाने मात्र से ही तुम्हारी आंखें छलछला उठती हैं। उनसे तो बचते ही रहना है। भगवान् पशु पक्षियों को अपनी अनुभूति प्रदान करता है। मानव तो जंगलों में भटक गया है उसे कैसे अनुभूति होवे। हाल में धर्मावरम् में एक बग्घी को, जिसमें सवारियां और बोझा लदा हुआ था, रेलवे स्टेशन की ओर हांका जा रहा था चालक घोड़ों को निर्दयता से पीठ और गर्दन पर मार रहा था जिससे वे तेज दौड़ें। एक दाढ़ीवाला सुन्दर स्वस्थ व्यक्ति भी उधर से जा रहा था। उसने चालक को पुकारा और कहा "सुनो, रासें इतनी खीचकर मत पकड़ो। उन्हें आजाद कर दो, ढीले से पकड़े रहो। तभी घोड़े तेजी से दौड़ेंगे"। चालक ने प्रत्युत्तर में कहा, "तुम चुपचाप अपने रास्ते पर जाओ, मैं अपने घोड़ों को तुम्हारी अपेक्षा अधिक जानता हूँ"। गाड़ी में बैठे एक सज्जन बोले, "क्या तुम जानते हो वह कौन है ?" चालक ने कहा, "मैं इसकी चिन्ता नहीं करता"। तब चालक ने एक (घोड़े की) आवाज सुनी, "वह कृष्ण है जिन्होंने अर्जुन का रथ हांका था। वे घोड़ों के विषय में सब जानते हैं"। चालक ने सोचा कि यह आवाज उसकी सवारियों में से किसी की है। उसने उत्तर दिया। वह अर्जुन के घोड़ों के विषय में सब कुछ भले ही जानता होवे परन्तु वह मेरे घोड़ों के विषय में क्या जानता है ?" गोपियां सोचती थीं कि एक मधुमक्खी उनकी कृष्ण से वियोग जनित पीड़ा से मानव की अपेक्षा अधिक सहानुभूति कर सकती है। उन्होंने मधुमक्खी से गोपियों की ओर से भगवान् से प्रार्थना करने को कहा। "उनसे मेरी पूजा में अर्पित माला को धारण करने की प्रार्थना करना;" एक गोपी ने कहा। दूसरी गोपी कृष्ण से अपना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हृदय आलोकित करने की प्रार्थी थी। राधा ने मधुमक्खी के द्वारा कृष्ण से प्रार्थना की कि वे उसके हृदय मरुस्थल को लहलहाते हुये क्षेत्र में परिणत कर दें जिससे उनके चरणों को वहां कोमल और सुखद स्पर्श प्राप्त होवे।

भगवान् को स्वच्छ शांत मानसरोवर अर्पित करो; अथवा यदि मन बन्दर की तरह शैतान और चंचल है तो शंकराचार्य की तरह भगवान् को अर्पण करो। उन्होंने शिव से प्रार्थना की थी, "भगवान् मेरे पास वही वस्तु हैं जिसकी आपको भिक्षा मांगने के समय आवश्यकता पड़ जाती है। मेरे पास एक अत्यन्त उछल-कूद करने वाला नटखट बन्दर है जो अपने हास्यास्पद कृत्यों से सभी को अपनी ओर आर्कषित कर लेता है। इसे आप अपने साथ ले लें तो जैसा कि वन्दर वाले अन्य भिक्षुक करते हैं जिन ग्रामों में आप भिक्षाटन करने जावेंगे वहां के वच्चे आपका स्वागत बड़े उत्साह से करेंगे"। शुद्ध अशुद्ध जैसा भी हो तुम मन को भगवान् के हवाले कर दो। अपनी आकाँक्षा और साधना में सच्चे हृदय से लगे रहो। औपचारिक विद्वंत्ता और उसकी बहिरंग मान्यता, सच्ची भक्ति के क्षुद्र एवज है। वाराणसी की गलियों में शंकराचार्य जा रहे थे, उन्होंने एक कुटिया में एक साधु को संस्कृत व्याकरण की पुस्तक में तल्लीन देखा। उन्हें उस वृद्ध शिक्षार्थी पर दया आ गयी और उन्होंने उसे चेतावनी दी कि जब अन्त समय आवेगा तो उसका पाण्डित्य उसे न तो नरक से बचायेगा और न भगवान् तक ही पहुंचावेगा :—

गेयं गीतानाम सहस्रं ध्येयं श्रीपति रूप मजस्रम्।
प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति डुकृञ् करणे॥

इसलिये भगवान् का भजन करो और अपने को उसी के चिन्तवन में मग्न रखो। जीवन का सदुपयोग इसी प्रकार हो सकता है, मन मोदकों की दावत उड़ाते रहने से जीवन व्यर्थ हो जाता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२५ व्यर्थ का अभ्यास

(प्रशान्ति निलयम् १६-१०-१९६९)

सज्जनों का सत्संग करो; दीन दुखियों के प्रति सहानुभूति की भावना रखो, सुखी और समृद्ध लोगों को देखकर प्रसन्न होओ, दुष्टों के प्रति घोर उदासीनता का व्यवहार करो। शान्त और द्वन्दरहित जीवन यापन का यही अनुभूत प्रयोग है। भगवान् ऐसे ही लोगों से प्रसन्न होता है उन्हें भगवान् की कृपा प्राप्त होती है। जब हार्दिक प्रसन्नता के साथ भगवान् का नामोच्चार किया जाता है, तो वह मानव के मन पर बड़ा प्रभाव डालता है। यह तो चन्द्रिका के समान मानव के हृदय सागर की आंतरिक तरंगों को उन्नत करता है। क्योंकि, बाहर से आने वाली भगवान् की पुकार को भगवान् ही अन्दर से प्रतिध्वनित करता है। परन्तु देखो, विज्ञान, जो कि पार्थिव वस्तुओं, घटनाओं के संबंध में जो तोले, नापे और विचार सारणी के द्वारा गणना किये जाने योग्य हैं, उन सब के आकर्षण से मानव को आकर्षित कर रहा है और मनुष्य को आनन्द की खोज में शुष्क ऊसर में ला पटका है। चन्द्रमौलि शास्त्री तुमको सभी मंत्रों के संबंध में बतला रहे थे कि जब पूर्णनिष्ठा और मंत्रों की महिमा को स्मरण करते हुये मंत्र को जपा जाता है तो उपासना कही जाने वाली इस क्रिया से उस दैवत् का रहस्यपूर्ण अनुभव होता है। अर्थात् मंत्र तुम्हें दैवत् के निकट समीप पहुंचा देता है या दैवत् को ही तुम्हारे निकट व्यक्त कर देता है; तुम्हारी साधना और मंत्रों की दिव्य शक्ति से यह सब होता है।

मंत्र होता क्या है ? 'मन्' अर्थात् मनन् (निहित अर्थों पर सतत् विचार) 'त्र' त्राण (रक्षण,व्यक्ति को दुखमय स्थिति से बाहर निकलना)। वे कौन-कौन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

से प्रतिबंध हैं जिनके अन्तर्गत मन मंत्र को आवश्यक शक्ति से आविष्ट कर सकता है ? सर्वप्रथम एकाग्रता । इसके लिए मन एक अधमकोटि का यंत्र है, यह भोथरा है यह अनेक विध वस्तुओं के पीछे दौड़ता रहता है। जिस समय आप इसकी चिरौरी करके भगवान् पर केन्द्रित करने का उपक्रम करते हैं, यह भागकर बाजार, सिनेमा हाल, ताश खेलने का क्लब का कमरा इत्यादि, न जाने कहाँ कहाँ पहुंच जाता है । यह बहुत कम अवसरों पर भगवान् की भव्यता पर टिकता है । जब तुम इसे भगवान् की ओर घसीटते हो तो इसे ऐसा प्रतीत होता है कि मानो तुम इससे भयंकर बाढ़ की मुठभेड़ में ला देते हो या नरक की भीषण अग्नि के समीप ला खड़ा करते हो। भगवान् का चिंतन, भगवान् में अटूट विश्वास के बिना, नहीं हो पाता है । यह विश्वास तो धीरे धीरे भक्तों के सत्संग से पनपता है, उनके जीवन और अनुभवों के अध्ययन से जगता है और अपने अनुभव से दृढ़ होता है। नाम संकीर्तन से विश्वास शीघ्रता से पुष्ट होता है । प्रारम्भ में तो इच्छा अनिच्छा सभी प्रकार से नाम का कीर्तन किया जाता है कालान्तर में दैनिक चर्या बन जाने से, स्वाद जग जाने से तुम स्वभाव से ही कीर्तन करने लगोगे । इससे तुम्हें अनिवार्यतः आनन्द की प्राप्ति होगी । हम हृदय कमल की चर्चा करते हैं, क्यों ? क्योंकि कमल जल में उत्पन्न होकर जल से बाहर धूप में खिलता है। हृदय भी भक्ति से पोषण प्राप्त कर ज्ञान से खिल उठता है ।

अधिकतर भगवान् के नाम दो अक्षरों या शब्द-खण्डों वाले हैं। दो की संख्या का महत्त्व (राम, कृष्ण, हर, हरि, दत्ता, शक्ति, काली) यों है कि पहला अक्षर या शब्द खंड अग्नि का बीज जो समस्त सचित पापों को भस्म करने वाला और दूसरा अमृत का बीज होता है जिसमें स्फूर्तिदायक पोषक और पुनर्जीवन प्रदान करने वाली शक्ति होती है । यह दोनों ही शक्तियां आवश्यक हैं जिनसे बाधाओं का उन्मूलन और दिव्यता उत्पन्न करने का उत्पादन कार्य सम्पन्न होवे ।

भगवान् कृष्ण का पालन यशोदा के द्वारा किया गया था परन्तु उसे नहीं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ज्ञात था कि भगवान् का जन्म कहां हुआ था। उनका पालन-पोषण और लाड़-प्यार अपने स्वयं के पुत्र के समान ही किया गया था। यशोदा का प्रेम शुद्ध, पवित्र और स्वार्थ की गंध से रहित था। इस कथानक को इस प्रकार समझना चाहिये कि नाभि प्रदेश में उत्पन्न दिव्य तत्व का रक्षण, पोषण जिह्वा के द्वारा (गोकुल में नन्द और यशोदा के द्वारा) सतत् नाम स्मरण द्वारा किया गया।

'राम' तत्त्व प्रेमतत्त्व है; जो स्वर्ग से इस धराधाम पर देवताओं के वरदान द्वारा महान् बलिदान के परिणाम स्वरूप अवतरित हुआ है 'राम' शब्द का अर्थ आनन्द होता है। अपनी अन्तरात्मा से अधिक कुछ भी प्रिय नहीं होता है। इसीलिये राम को आत्माराम भी कहा जाता है। फिर भरत उस राजगद्दी को कैसे स्वीकार करते जो कि न्यायत: राम का उत्तराधिकार थी? जब राम का बन गमन हुआ तो वे और शत्रुघ्न केकय प्रदेश की राजधानी में थे, तभी दशरथ ने भी राम के वियोग में प्राण त्याग दिये थे। उनको सन्देशा भेजकर बुलाया गया। जब वे महल में घुसे तो इस दोहरी विपत्ति का उन्हें कोई ज्ञान न था जिसके कारण समस्त नगर अवसाद और शोक की एक मोटी काली चादर से आवृत था। उन्हें कुछ आशंका हुयी। कुल पुरोहित वशिष्ट ने उन्हें सिंहासन स्वीकार करने का परामर्श दिया क्योंकि राज्य 'शासन-रिक्तता' से पीड़ित था।

भरत ने निवेदन किया कि उन्हें, "अपनी प्रार्थनाओं को स्वीकार करने वाले स्वामी के पास बन जाने की आज्ञा दी जावे"। वशिष्ट ने उन्हें स्मरण कराया कि यह तो उनके पिता सम्राट् की आज्ञा और उनके कुल पुरोहित और गुरु का परामर्श था कि वे शासक होकर गद्दी पर आसीन होवें। भरत ने कहा यह तो माता-पिता की, गुरुजनों और अयोध्या के प्रत्येक निवासी की जो उन्हें (भरत को) प्यार करते थे, घोर घृणायुक्त प्रार्थना है और क्षुद्र पाप पंक में गिराने वाली है। भरत वशिष्ट के समक्ष हाथ जोड़ कर खड़े हो गये

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर कहा, "क्या यह न्याय है, क्या यह उचित है कि ग्राप मुझे एक ऐसे राज्य का ग्रधिष्ठाता बना दें, जिसके कारण मेरे पिता की हत्या हुयी, मातायें विधवा बनीं, मेरे सर्वाधिक प्रिय भाई को निर्वासित किया गया जिसे मैं प्राणों से ग्रधिक प्रेम करता हूं, उन्हें राक्षसों से पूरित बनों में भेजा गया, ग्रपनी प्रियतमा पत्नी महारानी के साथ। ग्रौर उसी राज्य ने मेरी माता को ग्रमिट कलंक कुंड में डाल दिया है ? मेरा साम्राज्य तो वह क्षेत्र है जहां राम शासन करते हों ग्रर्थात् मेरा हृदय जो कि एक की महिमा को स्थान दे सकने के लिये बहुत संकीर्ण क्षेत्र है ?" भरत का नाम ही यह प्रदर्शित करता है कि वह राम के प्रेम से संपृक्त हैं। (भ का ग्रर्थ भगवान्, राम, 'रत' का अर्थ है "से जो ग्रनुरक्त है", "ग्रानन्दित है" उसमें लीन है)। इस प्रकार भरत का ग्रर्थ हुग्रा भगवान् राम की भक्ति में लीन भक्त।

भरत के समान, भगवान् की भक्ति ग्रपने में उत्पन्न होने दो। भक्ति की वह भावना जिसने राजमुकुट को भी ठुकरा दिया, तुममें फले-फूले। तब तुम अपने देश, संस्कृति, समाज, धर्म ग्रौर जाति के बड़े काम के सिद्ध होगे। ग्रन्यथा यह सब त्याग तपस्या जो तुम यहां सत्संग में बैठना, ग्राध्यात्मिक प्रवचन सुनना, ग्राध्यात्मिक गुरुग्रों से भेंट, धार्मिक ग्रंथों का पाठ इत्यादि कार्यों से प्रदर्शित करते हो वह सब 'व्यर्थ का ग्रभ्यास' रह जावेगा। शिक्षा की वह व्यवस्था या प्रणाली ने जो साक्षरता पर जोर देती है, कारीगरी औ र भौतिक उन्नति को ग्रपना लक्ष्य रखती है, मानव हृदय को इतना कठोर बनाकर सैनिक शस्त्रागार में एक की ग्रौर वृद्धि कर दी है। निरन्तर ग्रसत्य बोलने से उसकी बुद्धि कुंठित हो गयी है। श्रद्धा ग्रौर सम्मान, जो मानव में पवित्र भावना को पुष्ट करते रहते थे, ग्रब घिसे-पिटे ग्रौर भूतकालीन निरर्थक कार्य बताये जाने लगे हैं। साधुग्रों, तीर्थों ग्रौर पवित्र नदियों का उपहास किया जाता है। भारत जो युगों युगों तक देवताग्रों की लीला- भूमि, सन्तों ग्रौर मानवता के गुरुओं की खान रहा है वह ग्रब उन्हीं लोगों के द्वार का भिक्षुक बन गया है जो वेदान्त ग्रालोक के लिए ग्रातुर हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ज्ञान के भव्य ग्रालोक को जानों ग्रौर जहां तक तुम्हारे पक्ष तुम्हें उड़ने की सामर्थ्य दें ऊँचे, ग्रौर ऊँचे, उड़ते ही चले जाग्रो—यह पक्ष भक्ति ग्रौर श्रद्धा के पक्ष हैं।

शास्त्री का कथन है कि यह ग्रसम्भव कार्य है कि स्वामी के ग्रद्‌भुत ग्राश्चर्यजनक कामों की कोई व्याख्या कर सके। जब तक कोई उस रहस्य को न समझे तो वर्णन कैसे करे? तट पर बैठा हुआ मनुष्य समुद्र की लहरों की गणना नहीं कर सकता है? वह उनके योग को नहीं जान सकता है। उसके लिये तो वह लहर, जब से उसने गणना प्रारम्भ की प्रथम ग्रौर जहां पर उसने गणना करना बन्द किया वह लहर ग्रन्तिम होगी। सुनो, विचारो ग्रौर परामर्श का अनुसरण करो; यही साधना तुम्हारे लिये पर्याप्त है।

मेरा सबसे प्रथम ग्रादेश है, अपने माता-पिता का सम्मान करो, विशेष रूप से माता का। एक बार एक स्थान पर बड़ी ग्रांधियाँ आती थीं, इतनी कि सभी घर मकान भूमिसात् हो जाते थे; लोगों के पास भोजन या कोई वस्तु हाथ रखने को नहीं रह जाती थी। सर्वाधिक क्षतिग्रस्त लोगों में एक माता ग्रौर उसके दो पुत्र थे। बड़ा तो सद्‌गुणों का रत्न था, वह ग्रपने को परिवार की रक्षा ग्रौर पालन के लिये उत्तरदायी समझता था; क्योंकि वह ग्रपनी मां को प्रेम करता था ग्रौर उसके प्रेम और ग्राशीर्वाद प्राप्त करने का ऐसा ग्राकांक्षी था जैसा कोई भी ग्रौर न था।

तुम भारत माता की चर्चा करते हो, मातृभूमि। प्रत्येक मां उसी वंश परम्परा में से, ग्रौर प्राण वायु को धारण करने वाली है। मां छोटे को साथ लेकर भीख मांगने जाया करती थी ग्रौर जो कुछ पाती उसी के सहारे उस ग्रकाल पीड़ित देश में जीवित रहने का प्रयास कर रही थी। शीघ्र ही उसे लगा कि ग्रब तो वह कुछ दूर भी चल सकने में ग्रसमर्थ है तब बड़ा पुत्र अकेला ही भिक्षाटन पर जाने लगा जिससे परिवार का पालन तो होवे। उसने,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मां के पैरों पर गिरकर, कहा कि अभी तक जो वह करती थी वही वह करेगा, और सबके लिये भिक्षा लावेगा। वह चाहता था कि मां अब और प्रयास करके अपने को न थका डाले और अपने स्वास्थ्य को और अधिक गिरा ले। केवल कुछ मुट्ठियों भर अनाज पर उनका निर्वाह कैसे होवे ? पुत्र भी निर्बल हो गया। क्षीण स्वर से, और डगमगाते हुये, उसने एक जमींदार के द्वार पर आवाज देकर एक ग्रास भोजन मांगा। गृहस्वामिनी ने उसे अन्दर बुलाकर एक पत्तल पर बिठा दिया और उस पत्तल पर भोजन परोस दिया। परन्तु वह ज्यों ही सीधा होकर लड़खड़ाकर आगे बढ़ा वह फर्श पर गिर गया। जमींदार दौड़ा आया, उसने अपना कान बच्चे के मुंह से सटा दिया, जिससे वह मरते हुये बच्चे के मुंह से निकलने वाले अन्तिम शब्द सुन ले। वह कह रहा था, "नहीं, नहीं, पहले मां को भोजन दिया जावे मेरी बारी बाद में"। तुम एक ऋण को बाद में चुका देते हों; परन्तु जो ऋण माता का तुम्हारे ऊपर है उसे तो तुम कभी चुका ही नहीं पाओगे। जो लोग भगवान् के भक्त होने का दावा करते हैं उनके पास इस परिचय-पत्र का होना आवश्यक है; उन्हें तो मां का सम्मान करना ही चाहिये।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२६ प्रत्येक श्वांस से जोर देकर कहो

(प्रशान्ति निलयम् १७-१०-१९६९)

इतिहास और महाकाव्यों से उद्धरण देते हुए शास्त्री ने तुम्हें मनुष्य के मामलों पर समय के प्रभाव और शक्ति का विवेचन कर समझाया है। जो आज अच्छा है उसे कल बुरा कहा जा सकता है। आज जो सुखकर है वह कल दुष्कर हो सकता है। समय में वह शक्ति है कि वह स्वभावों और परम्पराओं को पिछड़ा हुआ और गया बीता अनैतिहासिक बना देता है। आज जिससे शोक और दुख होता है आगामी दिन उसी से आनन्द प्राप्त हो सकता है। बच्चे को प्रारम्भिक दिनों में विद्यालय जाना बड़ा दुखद लगता है बाद में वही कृतज्ञ होता है कि उसे बलात् कक्षाओं में बिठाया गया जब कि वह अज्ञान बच्चा था। सीता ने अयोध्या के सभी सुखों को तिलांजलि देकर, उस सर्व सुखों, वैभव से पूर्ण महल को त्याग कर राम के साथ वन जाना स्वीकार किया फिर भी वन में जब स्वर्णमृग देखा तो उनकी असुप्त आशक्ति जागृत हो गई जिसके परिणाम स्वरूप उन्हें विपत्तियों की एक शृंखला का सामना करना पड़ा। समय ने षड़यंत्र रचकर सीता के हृदय में इस भोगेच्छा की जड़ों को जीवित रखा।

रामायण से एक और शिक्षा प्राप्त होती है। सीता के लिए खोज, अनुभव के क्षेत्र में आत्म साक्षात्कार की खोज का प्रतीक है। जब पुनः सीता को प्राप्त कर लिया गया तो राम ने आत्म साक्षात्कार के ज्ञान को प्राप्त कर लिया जिसकी पुष्टि उनके ज्ञान ने कर दी। ज्ञान अब अनुभव जन्य ज्ञान हो गया था। रामायण हमें शिक्षा देती है कि जब कोई व्यक्ति आत्म साक्षात्कार को लक्ष्य रखकर आकाँक्षी होता है तो प्रकृति की शक्तियां और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सभी सृष्टि उसकी सहायता करते हैं और सभी प्रकार की सहायता देते हैं। बन्दर, पक्षी, गिलहरी यहां तक कि चट्टानें और शिलाखन्ड सभी राम के कार्य में सहकर्मी और सहायक हो गए थे। ऊंचा लक्ष्य रखो। इस सर्वोच्च साहसिक कार्य के लिए संकल्प दृढ़ कर लो--तब हर वस्तु तुम्हें लक्ष्य तक पहुंचने में सहायक बन जावेगी।

वास्तव में तुम्हारी प्रत्येक श्वाँस, जो कि २१६०० बार प्रतिदिन चलती है 'सोऽहम् के जाप के लिए, जो कि अन्तर्यामी और सर्वव्यापक की एकता का मंत्र है, तुम्हें इसी साहसिक कार्य के लिए प्रेरित करती रहती है। तुम अपनी जिह्वा से भले ही कहा करो कि भगवान् का अस्तित्व नहीं है, परन्तु अन्दर जाती हुई श्वाँस 'सो' और बाहर आती हुई निश्वास 'हम' कहती है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि विश्व में व्यापक भगवान् और अन्दर घट-घट वासी दोनों एक ही हैं।

जो संयम-नियम भारत के प्राचीन ऋषियों ने दैनिक चर्या के सूत्र रूप में हार्दिक भावों और उद्वेगों के नियमन और निर्देशन के लिए निर्धारित किये हैं; वे सब हमारी संस्कृति के बहुमूल्य तत्त्व हैं; उन्हें सदा संरक्षित रखते हुए आचरण में उतारना चाहिये। यह संसार तीन गुणों—सात्विक, राजसिक और तामसिक, का संमिश्रण है। उपनिषद कहते हैं कि मेघ गर्जन एक त्रिसूत्री उपदेश (द, द, ध) दया, दम और धर्म का गुणों में ग्रस्त व्यक्तियों को देता है। सात्विक के लिये जो आनन्द प्राप्ति का आकांक्षी हैं, ऋषियों ने दमन (आत्मसंयम) का मार्ग बताया है। राजसिक, जो साहसिक कार्यों, शूरता, सक्रियता के उपासक हैं, सदा धर्माचरण का पालन करें। जो तामसिक वृत्ति वाले, इन्द्रियों को प्रिय पार्थिव पदार्थों को प्राप्त करने के इच्छुक, होते हैं उन्हें ऋषि (मेघ गर्जन से) दया, जो प्रेम पर आधारित हो, जो आशक्ति को पवित्र करे, और लोभ का उन्मूलन करे, धर्म पर आचरण करने का उपदेश देते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ऋषियों ने 'तत्त्वमसि' 'वह आप ही हो' जिस दैवी तत्त्व से यह सृष्टि उत्पन्न हुई, और जो तत्त्वतः वही है और जिसमें इसका लय होता है वह एक ही है। यह ज्ञान भक्ति मार्ग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यह मार्ग प्रेम का, आत्म-समर्पण और उत्सर्ग का है। 'तू' जो व्यष्टि है वह कर्म मार्ग द्वारा (निस्वार्थ और निष्काम कर्म फलाशा त्याग की भावना से सच्ची उपासना करने से) समझा जा सकता है। तब 'तत्, और 'त्वम्' की एकता का बोध ज्ञान मार्ग द्वारा (जो कि प्रखर ज्ञान निरंतर विवेचन द्वारा) प्राप्त होता है। जब भक्ति और कर्म का लय होता है तो ज्ञान का उदय होता है। भक्ति द्वारा हर वस्तु में 'तत्' वही भगवान् दिखाई देता है, कर्म 'त्वम्' की भिन्नता को समाप्त कर देता है। इस प्रकार असि (ज्ञान की अनुभूति) क्रिया सरल हो जाती है।

यह सरल बात यद्यपि सब विभिन्न धर्मशास्त्रों में वर्णित हुई है और इसकी व्याख्या प्रतिदिन विख्यात धर्मोपदेशकों द्वारा हजारों श्रोताओं को समझाई जाती है फिर भी सत्य अनुभूत नहीं होता और वह तात्त्विक एकता अनूठी ही रह जाती है। यह सब मंचाभिनय मात्र होता है। शब्द हृदय से नहीं निकलते हैं, वे धर्मशास्त्रों के संकेत पर चलते हैं जिसका प्रणयन किसी अन्य के द्वारा किया गया होता है। श्रोताओं को प्रभावित करने के लिये ही सारा कार्यकलाप होता है कि जिससे बार-बार तालियां बजें और ढेर सारे उपहार, पुरष्कार और चढ़ावा आ जावें। यदि तुम अपनी बाल्टियों घड़ों को औंधा करके रखो तो मूसलाधार वर्षा से भी क्या लाभ ? क्या उनमें कुछ भी जल संग्रहित होगा ? जब तुम धर्मोपदेश सुन रहे हो और तुम्हारा मस्तिष्क ग्रहणशील न हो तो उससे तुम्हें क्या कोई लाभ मिल पाता है ?

डा० मिस्त्री ने बम्बई के सेवादल के कार्यों की चर्चा की है। वे रक्तदान करते हैं, अस्पतालों में जाते हैं और निर्धन रोगियों की सेवा करते हैं। निस्संदेह इन कार्यों से अहंकार क्षीण होता है और कर्त्ता को वास्तविक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आनन्द की प्राप्ति होती हैं। डा० मिस्त्री पारसी हैं फिर भी, देखो, उन्होंने हिन्दू धर्मशास्त्रों का कितना उत्तम ज्ञान प्राप्त कर लिया है कि अब वे तुम्हें समझाते हैं कि शिव, पार्वती और गरणपति का अर्थ कर्म, भक्ति और ज्ञान के मार्ग हैं जो लक्ष्य तक पहुंचाते हैं।

इस विश्वास से, कि सभी रूप (आकृतियाँ) उसी एक भगवान् की हैं, जो सेवा की जाती है वह उच्चतम कोटि का कर्म होता है। तुम देखो और इस ताक में रहो कि सेवा की प्रेरणा हृदय से उठे, न कि मस्तिष्क से। कुछ समय पूर्व जब मैं व्हाइट फील्ड स्थित साहित्य, विज्ञान कालेज के छात्रों और प्रवक्ताओं को सम्बोधित कर रहा था तो मैंने उन्हें बड़ों के सम्मान करने की आवश्यकता समझाई थी। आजकल तो छात्र अपने अध्यापकों का, केवल सर को हल्के स्वीकृति सूचक ढंग से हिलाकर, अभिवादन करते हैं और इसे ही पर्याप्त समझ लेते हैं। मैंने उन्हें बतलाया कि केवल सर हिलाने का अर्थ दूरी, विरोध और असहमति होते हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि छात्र और अध्यापक विरोधी शिविरों में बंट चुके हैं, और वे अब परस्पर अपरिचित जैसे हो गये हैं। मैंने चाहा कि वे ऐसे विचारों को त्याग दें। अध्यापकों को अपनी सेवा में संलग्न मित्र और पथदर्शक मानें और स्वयं को उनका छात्र ही समझें। मैंने चाहा कि उन दोनों में परस्पर प्रेम और श्रद्धा का आदान-प्रदान पुनः होने लगे।

अब मुझे अपने कथन को समाप्त करके रंगशाला में वेद पाठशाला के बच्चों के पास पहुँच जाना चाहिये। वे आध्यात्मिक अमृत से संपृक्त एक नाटिका अभिनीत करेंगे। क्योंकि, जिन्होंने उसका आस्वादन किया है वे भगवान के सम्बन्ध में कहते हैं "रसो वै सः" (वह अमृत ही है)। उसकी कथा अमृत के भी परे अभिवर्चनीय होना चाहिये। उसी के उपस्थिति के कारण विश्व में मधुरता है; इससे आनन्द की प्राप्ति इसीलिये होती है कि यह (कथा) भगवान् ही है। तुम इस आनन्द का अनुभव करना नहीं जानते हो और न

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उसे स्थिर रख पाते हो। इसीलिये तुम आनन्द और शोक के बीच दोलायमान रहते हो। इसे सदा के लिए और पूर्णतृप्तिदायक मात्रा में प्राप्त करो। फिर आवागमन के बन्धन से मुक्त हो जाओगे। तुम आनन्द, शक्ति और ज्ञान रूप हो।

जो नाटिका लड़कों के द्वारा अभिनीत होने को है; उसमें मैंने अपने प्राचीन भक्तों, कंस, गोपियां, अक्रूर, देवकी, वासुदेव और नन्द के जीवन में घटित घटनाओं को दर्शाया है। यह इन लड़कों का सौभाग्य है कि मैंने अनेक सायंकाल इन्हीं के साथ गाते हुये पंक्तियाँ दोहराते हुये बिताये हैं, जिससे कि वे इन महान सत्य सिद्धान्तों को सीख लें, तुम्हारे समक्ष उन घटनाओं का प्रेरणादायक अभिनय करें और आनंदित होते हुये आनन्द की वर्षा करें। लड़के इन भूमिकाओं का निर्वाह पूर्णरूप से न भी कर पावें फिर भी इससे प्राप्त करने योग्य आध्यात्मिक शिक्षा और उच्च प्रसन्नता का तुमलोग अनुमान करके आनन्दमग्न हो सकते हो। यह कथानक वहां से प्रारम्भ होता है कि कन्स अपने सप्तवर्षीय, घोर शत्रु ग्वाला कृष्ण और उनके बन्धु को अपनी राजधानी में अपने महल में षड़यंत्र द्वारा बुलाकर मरवा देना चाहता है। चाहे हाथी कुवलमापीड, अथवा राजकीय मल्ल चाणूर या मुष्टिक, किसी से भी मुठभेड़ करा देने का आयोजन करता है। नाटिका के उत्तरार्ध में कृष्ण के वियोग में पीड़ित गोकुल की गोपियों के दृश्य हैं। कृष्ण के पोषक पितामाता नन्द-यशोदा को दोनो भाइयों को मथुरा भेजने में असमंजस है क्योंकि कंस से उन्हें किसी भी दुर्व्यवहार और कुचेष्टा की आशंका है। मथुरा पहुंचकर कृष्ण एक दरिद्र भक्त का आतिथ्य स्वीकार करते हैं और आमंत्रित करने वाले राजा की उपेक्षा कर जाते हैं। वहां की जनता में उनके पदार्पण से उत्साह और महान आनन्द की लहर व्याप्त हो जाती है। उनके माता-पिता, जो जेल में बन्द थे, उनके दर्शनों की आशा से ही आनन्द विभोर हैं कि इतने दीर्घकाल के वियोग का अंत समीप आ रहा है। जेल के चौकीदार उन्हें आनन्दवर्धक घटनाओं की क्रमबद्ध शृंखला का वर्णन करते हैं कि किस प्रकार नगर उनकी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

निरंतर विजयों से गूंज रहा है, कृष्ण बलराम वीरतापूर्वक हाथी को मार डालते हैं, मल्लों का वध कर देते हैं और अंत में स्वयं कंस के अपमान और वध की कहानी भी सुनाते हैं। कृष्ण बलराम जेल में प्रवेश करके माता-पिता को कारागार से मुक्त कर देते हैं। यहीं पर नाटिका में यवनिका पतन होता है। अभिनेताओं की अल्पायु की ओर ध्यान न दो। उनके मुख से निकलने वाले शब्द सुधारने वाले और बुद्धिमत्तापूर्ण हैं; यही वेद शास्त्रों के उपदेश हैं। उन्हें अपने हृदय कोषागारों में सुरक्षित रखते हुये अपने-अपने स्थान को प्रस्थान करो। उनमें से कुछेक को अपने दैनिक जीवन में उतारने का संकल्प भी कर लो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२७ सैनिक और सेनापति

(प्रशान्ति निलयम् १८-१०-१९६९)

इस अद्भुत संसार को व्यायामशाला मानकर मानसिक शान्ति के विकास करने का भगवान् ने तुम्हें यह महान अवसर दिया है। इस टकसाल में हम अपनी मिश्रित धातु को स्वच्छ करके मूल्यवान सिक्के ढाल लें। तुम्हें इसके लिये भगवान् की कृपा की वर्षा के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये। कीड़ों-मकोड़ों में भी कृतज्ञता की भावना पायी जाती है। एक चींटी सूखी पत्ती पर थी जो एक बाढ़ आई नदी की धार में पड़कर बही चली जा रही थी। उसने अपने नन्हें हृदय से भगवान् को रक्षा के लिये पुकारा। भगवान् ने उस नदी के ऊपर मंडराती एक चील्ह को प्रेरित किया कि वह नीचे झपट्टा मार कर पत्ती को धार में से अपनी चोंच में दाब कर ऊपर उठ आवे। इसके लिये भगवान् ने चील्ह को प्रतीति कराई कि वह पत्ती को एक मछली या मेढक समझ बैठी। यद्यपि चील्ह को बाद में घोर निराशा हुयी परन्तु चींटी को पुनः कठोर सूखी पृथ्वी पर पहुंच कर बड़ा हर्ष हुआ। उसे लगा 'स्वयं भगवान् ने चील्ह रूप धारण कर स्वयं पधार कर मेरा उद्धार किया'। मुझे उस पक्षी के प्रति, और सभी पक्षियोंके प्रति कृतज्ञता का संकल्प करना चाहिये। एक दिन, सदा की भांति जब वह अपने प्रातः कालीन दौरे पर थी, उसने देखा कि शिकारी एक पक्षी पर निशाना साध रहा है। यह सोच कर कि उसे किस प्रकार जीवन दान मिला, उसने शिकारी की एड़ी में चोंक दिया जबकि वह घातक वाण छोड़ने ही वाला था। निशाना चूक गया, चिड़िया उड़ गयी और उसकी रक्षा हो गयी। चींटी ने अपना ऋण चुका दिया।

मनुष्य को भी अपने ऋण चुकाने हैं। वह भगवान् का, उनके द्वारा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मानव में सृजित सत्यं शिवं सुन्दरम् के लिये बड़ा ऋणी है। वह सत्संग में प्रवचन सुनकर भी ऋणी बनता है; इसे वह सुने हुये का चिन्तन करके और अपने जीवन में कम से कम कुछ उपदिष्ट बातों पर तदनुकूल आचरण करके चुका सकता है। खाये हुये भोजन को पचाना पड़ता है जिससे वह रक्तसंचार को शक्तिशाली बनाकर स्वयं साहस, चातुर्य और अध्यवसाय में परिणत हो जावे। जिस दुनियां में व्यक्ति जन्म लेता है, उसका अवलोकन, अध्ययन और विवेचन किया जाना चाहिये। दुनियां शब्द का अर्थ है कि 'मुझे छोड़कर अन्य सभी कुछ' वह सब जिसे 'मैं' अपना शरीर, इन्द्रियां, मस्तिष्क, बुद्धि आदि नाम देकर पुकारता है।

भगवान् सर्वत्र है, वही सब कुछ है; इसीलिये लगता है मानों वह कहीं भी नहीं है और किसी वस्तु में भी नहीं है। क्योंकि, उसको जानने के लिये तुमको उसे कुछ विशिष्टताओं से युक्त और विदेशी मानना पड़ता है। हम भूल जाते हैं कि हर वस्तु हमारे लिये विदेशी (हमसे पृथक) है; उसकी अपनी विशेषता होती है। किस आधार पर तुम मुकर सकते हो ? किस आधार पर तुम स्वीकार करते हो ? तुम प्रेम, सत्य या बुद्धिमत्ता की सत्ता से नहीं मुकर सकते हो। भगवान् प्रेम, शक्ति सत्य, बुद्धिमत्ता और सौंदर्य है। जब तुम प्रेम का अस्तित्व स्वीकार करते हो तो भगवान् को ही स्वीकार करते हो। आध्यात्मिकता का कोमल पौधा केवल प्रेम के खेत में ही पनप सकता है, उग सकता है। प्रेमविहीन शुष्क मानव हृदय में यह पल्लवित नहीं हो सकता है।

अपने हृदयों में से खारीपन को अंतिम रूप से निःशेष कर दो और उस भूमि में भगवान् के नाम का बहुमूल्य पूरक तत्त्व (खाद) मिला दो। इसे विश्वास के जल से सींचो। तब दैवत्व का पौधा रोंपो; संयम की बिरवाही लगाकर लगन रूपी कीटाणुनाशक द्रव्य छिड़को। तब तुम बहुमूल्य फसल के रूप में ज्ञान को प्राप्त करोगे जो तुम्हें सदा सर्वदा के लिये कृषि कार्य से मुक्त कर देगा। जो लोग कीर्त्तन करने वालों की, मंदिर जाने वालों की या धार्मिक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रवचन सुनने वालों का उपहास करते हैं; उन्होंने अमृत का स्वाद ही नहीं जाना है और इसी से उनके मन में इनके विरुद्ध दुराग्रह है। उन पर दया करो क्योंकि वे नहीं जानते हैं कि उनमें क्या कमी है या वे कहां भूल कर रहे हैं।

परन्तु ये लोग साधक का तो उसकी आकांक्षा में बाधा डालकर हित ही करते हैं। लोग मुझसे प्रार्थना करते हैं, "बाबा ! इन नास्तिकों के षड्यन्त्रों का अंत कर दो" ! परन्तु मैं जानता हूं कि ये निन्दक कितने लाभकारी हैं। जब बाजरा कुछ ऊंचाई तक उग आता है तो खेत को नराने वाले खुरपी से तने के चारों ओर की मिट्टी को उलट-पलट करते हैं; तुम्हें आशंका हो सकती है कि वह पौधे की जड़ों को हानि पहुंचा रहा है। नहीं, इस क्रिया से पौधा अधिक शक्तिशाली होकर शीघ्र उगने लगता है। कुछ फल वाले वृक्षों की डालों को प्रायः अच्छे बड़े फल उगाने के लिये छाँट दिया जाता है। विरोध, आलोचना यहाँ तक कि एक दम घोर निन्दा भी, धारणा को दृढ़ करने, संगठित होने और वास्तविक विश्वास को उन्नत करने के लिये आवश्यक होते हैं। परीक्षणों से तो विश्वास और दृढ़ ही होता है। उस नाक से क्या लाभ जो पहली छींक पर ही टपक पड़े ? कुछ तो केवल विपत्ति में पड़ने पर ही भगवान् को पुकारते हैं। (कहावत है कि 'संकटम् वस्ते व्यंकट रमण" ! जब संकट पड़े तो भगवान् व्यकंट रमण को पुकारो !)। अभी हाल तक 'सप्त पर्वत' के अन्दर स्थित भगवान् व्यंकट रमण के मंदिर की सीढ़ियों पर चढ़ते थे वे गोविन्द, गोविन्द चिल्लाया करते थे, जिससे उनकी टांगों में पीड़ा न हो। अब तो सीधे मन्दिर के द्वार तक सड़कें बन चुकी हैं और कारें और बसें तीर्थयात्रियों को सीधे मूर्ति के सामने तक ले जाती हैं। इसलिये अब एक ही दर्द, पेट का दर्द लोगों को रह गया है; क्योंकि अधिक भोजन खा जाने और व्यायाम न करने का यह न्यायोचित परिणाम होता ही है। जब भक्त एक सुन्दर कार में बैठ कर सीधा मूर्ति के समक्ष जा धमकता है और अपनी नियमित विलासपूर्ण दिनचर्या में दृढ़ रहता है तो भगवान् कैसे प्रकट होवे ? अपने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शरीर रूपी मंदिर के निवासी भगवान् के दर्शन की आकांक्षा करो; ठाट-बाट और आडंबर सहित, शरीर को सुरक्षित, सुख में, नाज नखरे से रहते हुये, वहुमूल्य साध्य सुविधाओं सहित आराधना मत करो। कुछ अत्याधुनिक साधक भी होने लगे हैं जो अपनी ड्योढ़ी को लांघना नहीं चाहते, एक पैसा व्यय नहीं करते, शरीर की एक भी मांसपेशी को गति नहीं देते फिर भी वे चाहते हैं कि आत्म साक्षात्कार रूपी अमृत-फल उनकी गोद में धीरे से गुरु के द्वारा रख दिया जावे या भगवान् स्वयं आकर दे जावें जिन्हें कि वह अपनी इच्छानुसार चला सकें। और ऐसे गुरु होते भी हैं जो ऐसों (!) को संतुष्ट करते हैं जिससे वे भी प्रचुर धन संग्रह कर सकें।

तुम चाहो तो उपालंभ दे सकते हो कि भगवान् कठोर और हृदयहीन है क्योंकि वह प्रार्थना से द्रवित नहीं होता है; अपने चित्र से कोई संकेत नहीं देता है और स्पष्ट शब्दों में आकाशवाणी नहीं होती है जो दुख दूर करे, विश्वास दिलावे या परामर्श देवे; परन्तु मैं तुम्हें बता दूं कि 'प्रेम भगवान् है अथवा भगवान् प्रेममय है'। उसका आकार, प्रेम, स्वभाव, आनन्द और रक्त सत्यम् है। जबकि पथरीली पहाड़ी भी चढ़ाई चढ़ते समय तुम्हारी वाणी को प्रतिध्वनित करती है तो क्या कोमलतम, प्रेमपूर्ण हृदय वाला भगवान् नहीं सुनेगा या पुकार का प्रतिफल देगा? यदि पुकार का कोई प्रतिफल न निकले तो समझ लो कि पुकार में कुछ त्रुटि अवश्य रह गई है। या तो पुकार खोखली है, हार्दिकता से रहित कोरा अभिनय मात्र है और अपने से पृथक किसी विदेशी को सम्वोधित की गयी हैं जो कहीं दूर निर्दयी होकर प्रभुत्व प्रदर्शन के लिये बैठा हुआ है। जानो कि भगवान् जो तुम्हारा सवसे प्रिय और निकटतम संबंधी है वह तुम्हारे हृदय की तरह तुम्हारे सवसे समीप और प्रिय है उसे ही पुकारो निश्चय ही तत्काल उसका उत्तर प्राप्त होगा। ऐसे एक सौ व्यक्ति तो समूची पृथ्वी को ही फुला देंगे। तुम सेना में भीड़ की भीड़ क्यों न भर्ती कर लो परन्तु वे तभी उपयोगी हो सकते हैं यदि उनका नेतृत्त्व कुछ सेनापति करें जो अपनी स्थिति, शत्रु की स्थिति, आक्रमण करने का मार्ग और समय और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शत्रु के बल और दुर्बलताओं को जानते हों और उसपर विजय प्राप्त कर सकने की चालों से भी परिचित हों। लोगों की भीड़ गाती है, सस्वर पाठ करती है, आराधना-पूजा करती है, यशोगान और दण्डवत करती है—परन्तु ये सब तो सिपाही हैं; परन्तु जो निष्ठावान् हैं जिन्हें भगवान् में विश्वास है जो संयम का पालन करते हैं वे सेनापति होते हैं जिन्हें स्वामी का विश्वास भी प्राप्त है।

इस पवित्र देश का भविष्य उन कतिपय साधकों पर निर्भर करता है जो आध्यात्मिक संयमों का पालन करते हुये स्वयं को दूसरों के अनुकरण के लिये आदर्श रूप में उपस्थित करते हैं और उन्हें सूचित करते हैं कि उन साधकों से कैसा आनन्द प्राप्त किया जा सकता है। केवल वे ही प्रशान्ति की स्थापना और अशान्ति को दूर कर सकते हैं। मैं प्रतिदिन ही आचरण, दृढ़ विश्वास और संयम की आवश्यकता को दोहराता रहता हूं। तुममें से कुछ लोगों को इससे चिढ़ हो सकती है। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि मैं बहुत कुछ बोल चुका हूं और अब मुझे तुम्हें विश्राम देना चाहिये। परन्तु शीघ्र ही उक्त निश्चय को दया पलट देती है। और मैं यहां तुम्हें संबोधित करने फिर आ गया हूं। मेरा विश्वास है, जैसा कि संगीत मास्टर कहते हैं, "तान का बार-बार अभ्यास करके ही राग को पूर्णतः उसी प्रकार दोहराया जा सकता है, अन्य कोई उपाय नहीं है। यहाँ उपस्थित कुछ हृदयों के एक कोने में मेरे परामर्श का कुछ अंश भी रह जाता है तो वह वहां पल्लवित होकर उनके दैनिक जीवन, मनोभावों, उद्वेगों और विकृत प्रवृत्तियों को बदल देगा। जब मूसलाधार वर्षा होती है, अनेकों को कष्ट होता है वे मौसम खराब कहने लगते हैं क्योंकि वे इधर-उधर घूम-फिर नहीं सकते। परन्तु उन स्थायी लाभों को भी तो सोचो जो वर्षा प्रदान करती है। पिछले तीन दिन से अच्छी वर्षा हुई है। कुछ लोगों ने मुझसे कहा है, "स्वामी! आप ऐसा क्यों नहीं चाहते हो कि वर्षा से यहां के कार्यक्रम में कोई बाधा न पड़े?" अच्छा, यह तो छोटी छोटी बातें हैं; जिनके लिये महत्त्वपूर्ण लाभों से वंचित नहीं रहा जा सकता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है । वास्तव में, जो यज्ञ यहां किया गया है वह देवताओं से जलवर्षा के ही लिये प्रार्थना थीं । यह उस लक्ष्य में सफल हुआ है । वर्षा से अच्छी उपज और समृद्धि आती है । यहां पर पुजारियों के द्वारा ठीक वैदिक विधि से यज्ञ किया जाता है और जबकि यज्ञ चलता रहता है उसकी समाप्ति के पूर्व ही हवायें चलने लगती हैं और बर्साऊ बादल घिर आते हैं ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२८ सच्चा कार्यक्रम

(प्रशान्ति निलयम् १६-१०-१९६६)

सृष्टि की लपेटों में जकड़ा हुआ मानव इस तथ्य के प्रति अन्धा है कि वह भी दैवी सृष्टा का ही एक अंश है जो भ्रम से स्वयं को अपने आवरण का पर्याय समझ रहा है। वह एक निरपेक्ष विश्वात्मा में सभी व्यक्तियों की एकता के प्रति भी अन्धा है। मानव ने अनेक ग्रंथों का प्रणयन और अध्ययन, आध्यात्मिक अन्वेषण और संयम के सम्बन्ध में किया है और परस्पर विरोधी शास्त्रार्थों द्वारा भ्रम को भी भ्रमित कर डाला है। परन्तु जिसने इन खण्डों के किसी एक से भी एक-दो पृष्ठों को अपने जीवन में उतारा है वह यश अथवा विजय की किसी इच्छा से भी रहित होकर चुपचाप हो जाता है। वह अपनी आत्मा की गहराई में मग्न रहता है। वह आन्तरिक क्षेत्र में खेती करता है, प्रेम के बीज बोता है, जिससे सहन के पुष्प उत्पन्न होते हैं और इनसे शान्ति के फल उत्पन्न होते हैं। इस देश के ऋषियों का यही सन्देश है।

प्रत्येक मानव को तीन दोषों को, मल आवरण और विक्षेप को, दूर करना है मल तो मौलिक अज्ञान है जिससे दसवें मनुष्य की खोज नहीं हो पाती है (हर गिनने वाला अपने को भूल कर शेष ९ को ही गिनता है)। इस अज्ञान या मल से ही आवरण की दुर्गन्धयुक्त निःश्वांस निकलती है। और उस अज्ञान का परिणाम विक्षेप है जिससे दसों मिल कर नदी में दसवें खोये व्यक्ति की खोज करने लगते हैं। मल तो पिछले और वर्तमान जीवन के कर्मों का परिणाम है। इसको निष्काम कर्म के द्वारा दूर कर सकते हैं। आवरण के दुष्प्रभाव को सहनशक्ति अन्योन्याश्रयता का विकास करके दूर कर सकते हैं। यदि दसों को पारस्परिक एकता के सूत्र द्वारा आवद्ध कर दिया जावे तो फिर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

किसी को भी खोया हुआ समझ कर व्यर्थ खोज न करनी पड़ती। अतः विक्षेप पर भी प्रेम के द्वारा विजय प्राप्त हो सकती है। प्रेम ने प्रत्येक को शेष अन्यों पर 'व्यक्त' कर दिया होता और कोई 'खोया' न होता। अपने को आनन्द से संयुक्त करने का यही उपाय है—यह प्रेम, सेवा और समर्पण का मार्ग है। पूर्णत्व को प्राप्त करने के लिये तुम कुछ अन्य बातें भी कर सकते हो। उदाहरण के लिये सत्य का पालन कठोरता से करो 'मानस सत्येन शुद्धयति' मन सत्य के द्वारा स्वच्छ और पवित्र होता है। सत्य महान पावनकर्त्ता है। यह किसी भी प्रकार की गंदगी, पाप, दोष और छल को नहीं टिकने देता है असत्य, वक्ता की जिह्वा को भ्रष्ट या दूषित करता है, श्रोता के कान को दूषित करता है, उस वायु को दूषित करता है जिसके माध्यम से शब्द जिह्वा से कान के पर्दे तक यात्रा करता है। शब्द कल्याणकारी और विनाशकारी दोनों प्रकार के होते हैं और वे तदनुसार स्पंदन वायुमंडल में उत्पन्न करते हैं। वे शब्द जो भगवान् में विश्वास तथा उससे उत्पन्न विनम्रता से युक्त होते हैं, वायुमंडल को पवित्रता से भर देंगे; जबकि वे शब्द जो घमंड से चीख कर, शून्यवाद और नास्तिकता से बोले जाते हैं वे इसे दूषित कर देते हैं। केवल ऐसे शब्दों का उच्चारण करो जिनसे वायुमण्डल स्वच्छ होवे। कठोर मत बनो। ऐसे शब्द विन्यासों का प्रयोग मत करो जिनसे किसी को चोट लगे या तप्त लोह से दागे जाने के समान पीड़ा की अनुभूति होवे। अथवा जो शब्द घृणा और घमण्ड से उत्पन्न हुये हों।

भगवान् का यशोगान करो, उसकी महिमा का पाठ करो—यह तुम्हारा अपने प्रति और अन्य लोगों के प्रति कर्त्तव्य भी है। इस योग के पीछे तर्क यह है कि वेद की प्रत्येक ध्वनि भगवान् की प्रशंसा में उच्चारण की गयी है और जब वेद को ऊंची और धीमी ध्वनि से नियमानुसार पाठ करते हैं, जैसा कि विभिन्न वेदपाठी लोगों की अपनी-अपनी शैलियाँ हैं तो निश्चय ही वातावरण में अद्भुत् परिवर्तन आना अवश्यंभावी हो जाता है और वेदपारायण करने वालों की बुराइयों में कुछ ह्रास होता ही है। ईश्वर में विश्वास

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करने से उनमें आत्म विश्वास उत्पन्न हो जाता है वे दूसरों में भी विश्वास करने लगते हैं और इससे दुनियां अधिक प्रसन्न होवेगी । अमेरिकन चन्द्रमा पर भले ही भ्रमण कर लें या रूसी लोग मंगलग्रह पर सैर करने जावें, फिर भी उन्हें इस पृथ्वी पर जो उनका दोनों का घर है, लौटना ही पड़ता है । तुमने रामायण में पढ़ा है कि सीता के सामने एक बार राम का कटा हुआ मस्तक रखा गया था जिससे राम के पुर्नमिलन संबंधी उनकी आशा ही नष्ट हो जावे । राक्षसों ने उसी प्रकार राम के सामने सीता का कटा हुआ मस्तक प्रदर्शित किया जिससे वे सीता को जीवित प्राप्त कर सकने की आशा ही छोड़ दें । ये दोनों ही सर माया के थे और वास्तविक नहीं थे केवल धोका देने के लिये रचे गये थे । इसी प्रकार व्यक्ति तभी विजय की घोषणा कर सकता है जब कि वह निर्जीव ग्रह के बजाय प्रकाशमान् जीवित नक्षत्र तक पहुंच जावे । चन्द्र पर नहीं बल्कि रामचन्द्र को, जो कि आंतरिक ग्रहों, आंतरिक उद्देश्यों और उद्वेगों पर शासन करने वाला भगवान् है, प्राप्त करले ।

जब भी एक बार आन्तरिक प्रतिक्रियाओं और विक्षोभों को दैवी तत्त्व से संयुक्त कर दिया जाता है, तो वह सब जो इन्द्रियों, मन और बुद्धि के माध्यम से अनुभव में आता है दैवी प्रभा से संयुक्त होकर दिव्य हो जाता है, और मानव प्रेम के सांचे में ढल जाता है । वह दुनियाँ में रहते हुये भी सांसारिकता से अप्रभावित रहता है प्रतिबन्ध यही कि वह ऐसी दृष्टि पा सके । फिर तो सभी क्रिया कलाप उसी सर्व शक्तिमान के लिये होते हैं; ऐसा उसी की इच्छा से उसी की कृपा से सम्पन्न होता है । घर में नौकरों, रसोइयों और धाय के द्वारा काम मत कराओ । स्त्रियों को इन पर नहीं निर्भर होना चाहिये कि ये लोग उनके पतियों की सेवा करें या बच्चों का पालन करें । इन नौकरों को काम सौंपकर ध्यान के लिये समय बचा लेना कोई आध्यात्मिक लाभ की बात नहीं होती है । गृहस्थी का सभी कार्य उसी की पूजा-भावना से करो । ऐसा करना उन घंटों में ध्यान करने से अधिक लाभकारी है जो महत्त्वपूर्ण काम को नौकरों को सौंप कर बचाये गये हैं । मनुष्यों को भी बहुमूल्य समय

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के गंवाने का पश्चाताप होना चाहिये जो कि वह एक प्रदर्शन से दूसरे पर फुदकने में नष्ट करता है और निरुद्देश्यपूर्ण जीवन के दिन और रातों को जीवन के महत्त्वपूर्ण उद्देश्य की हानि करके गँवाता है। आनन्द का वितरण करो, शक्ति दान करो, साहस का प्रसाद बांटो, संकटग्रस्त को धीरज बँधाओ, लँगड़े को चलने में और अंधे के मार्ग तय करने में सहायता करो—मनुष्यों के कार्यकलाप का यही सच्चा कार्यक्रम है। भारत अब पतित होकर भिक्षुक-राष्ट्र बन गया है क्योंकि उसकी संतान ने इन आदर्शों को त्याग कर 'स्वार्थ' को राजमुकुट पहना कर हृदयासीन कर लिया है और उसी को भगवान् मानकर पूज रहे हैं।

हम यहां पर एक और अखिल भारतीय सत्य साई संगठनों के पदाधिकारियों की कान्फ्रेंस करने जा रहे हैं जिससे कि इन कार्यकताओं को इस संदेश का पुनः स्मरण कराया जा सके। जब पैट्रोमैक्स हंडो का प्रकाश धीमा हो जाता है, तो हम उनमें और हवा पंप कर देते हैं, और वे पुनः प्रखर आलोक विकीर्ण करने लगते हैं। इन हंडों का स्वभाव ही है कि कुछ काल बाद धीमे हो जाया करें इसीलिये, हम उन्हें यहाँ सत्संग के लिये बुलाते हैं और उनमें प्रेरणा और निर्देशों की वायु फूंकते हैं। उनकी बैटरियां आगे की सेवा के लिये पुनः विद्युन्मय कर दी जाती हैं।

भारत सदा से सदाचार का समर्थक रहा है, जिसे पूर्ण सतर्कता से बनाये हुये सदाचार के नियमों से पूर्ण सज्जित रखा गया है। बिना दृढ़ स्थाई सदाचार के जीवन की उपलब्धियाँ, विद्वता, सिद्धियाँ या यौगिक आसनों की दक्षता पलास्टिक के फलों की भाँति कृत्रिम खिलौने मात्र रह जाते हैं उनसे आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती। जब भगवान् की महिमा गान में, कीर्तन में मन लगा होता है तब उसके इस पागलपन की इच्छाओं और क्षुद्र आकर्षणों की ओर भटक जाने की संभावना नहीं रहती है। यदि तुम प्रातः सायं दिन भर में दो बार कुछ समय बचाकर समान भावना वाले कुछ व्यक्तियों के साथ

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बैठकर भगवन्नाम संकीर्तन मधुर ध्वनि से एक साथ कर लिया करो और उस समय तुम्हारे मन में भगवान् के उस नाम की, जिसे जिह्वा उच्चारण करे, महिमा का महत्त्व फुटता चले तो इससे भगवान् की लगातार उपस्थिति का भान तुम्हारे हृदय के भीतर ग्रौर बाहर सर्वत्र होने लगेगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

२६ गम्भीर कालक्षेपण

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् २०-१०-१९६९)

आजकल मनुष्य का यह स्वभाव बन गया है कि वह अपनी झक के अनुसार आचरण करता है और इच्छानुसार बकवास करता रहता है। उस पर आत्मा, नैतिकता या शिष्टाचार का कोई प्रतिबन्ध नहीं रह गया है। क्योंकि यदि कोई ऐसे ही उल्टे दिमाग का है और जो अपने विनाश की ओर जाने के लिये कृत संकल्प है, उसे परामर्श देने की कोई आवश्यकता नहीं है। औषधि तो बीमारों के लिये होती है, पूर्ण स्वस्थ और मृत शवों को औषधि से कोई लाभ नहीं हो सकता है। जिन्हें कुछ संदेह या दुविधा हो, चिन्ता या क्षोभ ग्रस्त हों, उनके लिये परामर्श होता है। यह परामर्श शास्त्रों और धार्मिक पुस्तकों में वर्णित है। जब पत्र में अंकित समाचार पढ़ लिया तो पत्र को एक ओर रख दिया जाता है और उसमें लिखे निर्देशों पर अमल होने लगता है। इसी प्रकार इन शास्त्रों को और धार्मिक ग्रन्थों को पढ़कर, समझकर, आचरण करने के लिये एक और रख देना है। उनका बार-बार का पठन कोई ऐसा अज्ञात रहस्यपूर्ण लाभ देने वाला नहीं होता है जिसका संबंध पाठों की संख्या के महत्त्व के अनुसार होवे।

ये ग्रन्थ घोषणा करते हैं कि तुम रम्भू, कल्लू, मिट्ठू, पप्पू, मंजुला या गुड्डी जो भी नाम-पट्ट लटकाया गया हो, वह नहीं हो। बल्कि एक उसी आत्मा का अंश मात्र हो जिसने इस समस्त विश्व, ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर रखा है इसी सत्य की शिक्षा गीता देती है; जो इसको जानता है वही "अर्जुन" है; जो नहीं जानता है वह अन्धा राजा "धृतराष्ट्र" है। 'धृत' कस कर पकड़ा हुआ और 'राष्ट्र' का अर्थ राज्य। अर्थात् जिसने राज्य-वैभव पर बलात दृढ़ता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

से अधिकार जमा रखा है। धृतराष्ट्र ने इसी प्रकार राज्य पर दृढ़ता से अधिकार जमा रखा था; तभी तो उसने केवल पांच गांव भी वास्तविक न्यायपूर्ण आधे राज्य के उत्तराधिकारी पाण्डवों को देने से इनकार कर दिया। वह अपने लोभ में इतना जकड़ा हुआ था। वह एक ऐसी वस्तु से चिपका हुआ था 'वह' नहीं थी, इसी कारण उसका विनाश हो गया। जैसा तुम अपने को प्यार करते हो वैसा ही हर व्यक्ति और वस्तु को करो; कदाचित इससे अधिक प्यार करना तुम्हारे वश के बाहर की बात है। क्योंकि किसी पात्र में उतना ही पदार्थ तो भरा जा सकता है जितनी उसकी धारिता या समाव है; उससे अधिक उसमें भरा ही नहीं जा सकता। तुम सबसे अधिक अपने को प्यार करते हो, अर्थात भगवान् को प्यार करते हो, जो कि तुम्हारी वास्तविक आत्मा है।

पहरेदारों को सावधान रहना पड़ता है कि कहीं चोर घर में न घुस पावें, क्यों है न ? मनुष्य का शरीर एक मन्दिर है जहाँ भगवान् स्थापित है। वे पहरेदार शम और दम, इन्द्रियों का संयम और मनोद्वेगों का निरोध, होते हैं। यदि वे अपर्याप्त अथवा काहिल हों तो काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, घृणा और घमंड चुपके-चुपके प्रविष्ट होकर वृद्धि को प्राप्त हो जाते हैं और अंत में मंदिर पर अधिकार कर लेते हैं, मनुष्य भ्रमित होकर इन चोरों का ही आदर करने लगता है कि मानो वे ही गृहपति हों; यद्यपि वे तो घुसे हुये चोर हैं। तुम अपने मन के स्वामी स्वयं बनो। जागते रहो, उठो और चोरों को अपने कोष पर अधिकार करने से पूर्व ही उन्हें ललकारो और सामना करो।

वह कोष, सभी में भगवान् के होने की, चेतना है। यदि घर में चोर न होवे तो मनुष्य अपने लाभ के लिये कोष का इच्छानुसार उपयोग कर सकता है; परन्तु जब चोर अन्दर घुस आवें तो वह "सृष्टि से संबंध" होने के कारण लाभ उठाने में असमर्थ रहता है। वह समझता है कि वह शरीर है, पृथक स्पष्टतः एक इकाई है, यह कि वह शत्रु मित्रों से घिरा हुआ है और उसे हानि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पहुंचाने के लिये बहुत से षडयंत्र चल रहे हैं। वह अन्यों को गंभीरता से प्यार नहीं करता है; वह भय अथवा आसक्ति से पीड़ित रहता है।

मुख्य मूर्खता, जिससे चरित्र में, व्यवहार में, दोष आ जाते हैं, मनुष्य का वह विश्वास है, जिससे वह समझता है कि जो कुछ वह करता है वही अनिवार्यतः उचित और न्यायपूर्ण है। एक बार एक किसान को एक दुष्ट कुत्ते ने काट खाया कुत्ता एक व्यापारी का पालतू था। अपने बचाव के लिये किसान ने कुत्ते के सर पर लाठी से प्रहार कर दिया, जो कि उस समय उसके हाथ में थी। वह भयंकर पशु तो वहीं ढेर हो गया; व्यापारी हठधर्मी से किसान को थाने तक ले गया और उसके विरुद्ध कुत्ते की हत्या की रिपोर्ट लिखा दी। मजिस्ट्रेट के समक्ष व्यापारी ने तर्क किया कि "किसान कहीं दूसरी जगह मार सकता था उसने मर्म स्थान मस्तक पर ही क्यों प्रहार किया?" यह उसका पालतू कुत्ता था। परन्तु किसान ने उत्तर दिया, "परन्तु, कुत्ते ने तो मुझे अपने दाँतों से काटा; यदि वह मुझे अपनी पूंछ से काटता तो मैं इसे पिछले भाग पर चोट मारता।" जिससे हमें अपना लाभ दिखाई देता है वही हमें सही प्रतीत होता है, हम सामान्यतया प्रश्न पर प्रतिपक्षी के दृष्टिकोण से विचार ही नहीं करते हैं। इसी से अनंत उलझनें पैदा हो जाती हैं।

जो भोजन किसी के खाने के काम आवे उसे पवित्र और उन सूक्ष्म दोषों से रहित होना चाहिये जो पदार्थ संग्रह करने वाले, पकाने वाले, परोसने वालों के द्वारा विकीर्ण किये जा सकते हैं। हाँ, साधक को इन सूक्ष्म बातों की ओर भी ध्यान देना चाहिये। वह जगह भी जहां व्यक्ति अपना जीवन बिताता है, उसके चरित्र और विचारों पर प्रभाव डालती है। रामकृष्ण परमहंस मथुरा, वनारस या अन्य तीर्थ स्थान पर प्राप्त होने वाली शान्ति की चर्चा किया करते थे। यद्यपि गंगा नदी का प्रत्येक गज किनारा, उसके उद्गम से लेकर समुद्र तक लम्बी यात्रा में पवित्र है, फिर भी कुछ स्थान जैसे ऋषिकेश, हरिद्वार,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

काशी, प्रयाग इत्यादि, विशिष्ट आध्यात्मिक स्पंदनों से ग्राविष्ट होते हैं ग्रौर वे स्थान साधक की चेतना के प्रत्येक स्तर को स्वच्छ करने में सहायक होते हैं।

हर स्थान के विशिष्ट स्पंदन होते हैं, जो वहाँ के निवासी को प्रभावित करते हैं । एक कुख्यात डकैत ने अपने छिपने का स्थान घने जंगल के मध्य बना रखा था। एक दम्पत्ति जो घोर वर्षा के कारण जंगल से न निकल सके, उसी स्थान पर शरण लेने को बाध्य हुये। वे उस स्थान के वायु मंडल में व्याप्त क्रूर लोभ की तरंगों से प्रभावित नहीं हुये। परन्तु, जब कुछ मिनटों के पश्चात एक साधु भी वर्षा से बचने के लिये भाग कर वहाँ शरण लेने पहुंचा तो उसका निर्मल हृदय शीघ्रता से काला हो गया । स्वच्छ मस्तिष्क पर फौरन दाग पड़ गया। उस साधु के मन में यह विचार ग्राया कि दम्पत्ति को मार कर उनके ग्राभूषणों को हथिया लेना चाहिये, और उस धन से कुटिया का जीर्णोद्धार कराकर उसे योग शिक्षण केन्द्र का रूप दे दे । इस विचार को ग्रपनी बुद्धि द्वारा धिक्कारने पर वह इतना लज्जित हुग्रा कि वह वहाँ से वर्षा में ही भाग निकला ग्रौर उसने ग्रात्मा को कलुषित विचार ग्रौर दुष्कर्म से बचा लिया। इसीलिये सत्संग, धार्मिक पुरुषों का साहचर्य, आध्यात्मिक उन्नति चाहने वालों के लिये ग्रनिवार्यतः ग्रावश्यक बतलाये गये हैं । धार्मिक व्यक्ति सदा निस्वार्थ होते हैं। वे ग्रपने ग्रौर दूसरों के भी सर्वोत्कृष्ट मित्र होते हैं । जब तुम सत्संग में बैठते हो, तुम्हारे कानों में भी एक छन्ना लगा है, तुम लाभ-दायक, कल्याणकारी बातें ही सुनते हो, दोषारोपण की कोई बात नहीं सुनते हो । वे तो वर्षा के काले बादलों की तरह दीन दुखियों के मध्य ग्रानंद ग्रौर साहस की वर्षा करने ग्राते हैं। वे फलों से लदी हुयी शाखा की तरह इतने नीचे झुक जाते हैं कि हर व्यक्ति की पहुँच में ग्रा जावें।

ग्राज संध्या को हमने कई कवियों से उनका कविता पाठ सुना । कवि शब्द का महत्त्व हमारी प्राचीन भाषा संस्कृत में ग्रत्यंत उच्च बतलाया गया है। 'कविम् पुराणं ग्रनुशासितारम्' । कवि, काल से ऊपर, मानवीय उन्नति के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नियमों का नियामक है। वह अपनी, उच्च कल्पना शक्ति से भूत भविष्यत् की घटनाओं का वर्तमान प्रत्यक्ष की तरह अनुमान कर सकने में, अपने-पराये के हृदय में स्थित भगवान् का साक्षात्कार कर सकने में समर्थ होता है। वह वस्तु, दर्पण और प्रतिबिम्ब तीनों की ही वास्तविकता से परिचित हो जाता है। मानव समाज में कवि का स्थान वास्तव में स्वतंत्र और महान होता है।

जो कवि अपनी प्रतिभा का उपयोग चन्द सिक्कों या सस्ती लोकप्रियता पाने के लिये करता है वह तो केवल 'तुकबन्दी' करने वाला होता है और कभी २ तो वह भी नहीं होता है। वह तो अपने संरक्षक या दानदाता की, जो अपने चौके से एक दो टुकड़े खाद्य पदार्थ (रोटी, पूड़ी, चाय आदि) उसके समक्ष फेंक देते हैं। ऐसा व्यक्ति तो निखट्टू और समाज का कलंक है। कवि को महान आदर्शवाला, संस्कृति का प्रेमी और समाज की सेवा और उन्नति की भावना से उत्साहित होना चाहिये; उसे भगवान् की इस सृष्टि रचना (जो भगवान् स्वयं सर्वश्रेष्ठ कवि है) के प्रत्येक कण, बिन्दु या वायु के झोंके में, प्रकाश की प्रत्येक किरण में, की उत्कृष्टता का दर्शन कर सकना चाहिये। उनका आन्तरिक आनन्द ही पोषक, मधुर काव्य के रूप में छलक निकले जिससे मानवता जगे, उसके शान्ति और आनन्द प्राप्ति का मार्ग आलोकित हो। कविता कानों में शहद की मधुरता और हृदय में अमृत की शान्ति-दायिनी होनी चाहिये।

भूतकाल के काव्य में यह गुण होते थे। इसीलिये उनकी प्रेरणा शाश्वत और महान है। वे मानव की शाश्वत और मुख्य आकांक्षा का वर्णन करते हैं और उनके काव्य में इस प्यास को शान्त करने वाला अमृत प्रचुरता से प्राप्य है। वे संतोषप्रद और शक्तिप्रद होते हैं। आध्यात्मिक साधना के बिना, व्यक्ति की चेतना के, सहानुभूति के विस्तार से रहित, व्यक्ति के अपने-पराये से सपर्क में गहरी आत्मीयता से रहित, कविता एक निरुद्देश्य कालक्षेप करना है।

समदृष्टि और शान्ति को पहले प्राप्त कर लो, तत्पश्चात् कविता के क्षेत्र में उतरो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३० उसी एक को विजय कर लो

(प्रशान्ति निलयम् २१-१०-१६६६)

भारतीयों को उस आनन्द का ज्ञान है जो उन्हें संयम और नियम के द्वारा प्राप्त हो सकता है; इसी से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के प्रत्येक कार्य के संबंध में विधि-निषेध की शृंखला उन्होंने स्वयं के लिये और अन्य सभी के लिये निर्धारित कर रखी है। वे अनुशासन, और आत्म-सयम को मानने वाले हैं। वे आध्यात्मिक सत्य का 'अनुभव' करने के लिये, उनकी व्याख्या और पुष्टि करने की अपेक्षा, अधिक उत्साहित रहते हैं। वैदिक काल के प्रारंभ से ही "तुमने कितनी कमाई की है" पर "तुमने कितना जाना, सीखा है" की अपेक्षा अधिक आग्रह किया जाता रहा है। वे जानते हैं कि कुछ स्थितियां इन्द्रियातीत, भावातीत, बुद्धि और अस्मिता के परे की भी होती हैं जो अत्यधिक हर्ष प्रदान करने वाली होती हैं। वे जानते हैं कि वह चरम सौंदर्य वर्णनातीत होता है 'गिरा अनैन नैन बिनु बानी' होता है।

ऋषियों ने बोधगम्य विश्व की जो तीन श्रेणियां निर्धारित की हैं वे ईश्वर, प्रकृति और जीव हैं। जब ईश्वर का प्रतिबिम्ब प्रकृति में पड़ता है तो उस प्रतिबिम्ब की संज्ञा "मैं" होती है। दर्पण को हटा दो तो केवल 'ईश्वर' ही रह जाता है, प्रतिबिम्ब मूल ब्रिम्ब में तिरोहित हो जाता है। मानव तो भगवान् का प्रतिबिम्ब मात्र है। प्रकृति भी तो भगवान् की ही अभिव्यक्ति है, वास्तविकता और अतिम तत्त्व तो वही है अभिव्यक्ति का वह सिद्धान्त जिससे नानात्व (विविधता) का भ्रम होता है, माया है। वह भगवान् से पृथक अस्तित्व नहीं रखती है, वह उसी में अन्तर्निहित है जैसे कि अन्य शक्तियाँ भी तो उसी में निहित हैं। जब 'मैं' का प्रतिबिम्ब स्वतंत्र और पृथक इकाई ,जैसा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रतीत होता है तो 'द्वैत' का बोध होता है। जब इस प्रतिबिम्ब को प्रतिभासी प्रतिबिम्ब समझते हैं, परन्तु, फिर भी मूलबिम्ब (भगवान्) से कुछ संबंधित मानते हैं तो यह "विशिष्टाद्वैत" का बोध होता है। जब 'मैं' और 'दर्पण' दोनों का भ्रम समझकर त्याग कर दिया जाता है तो केवल एक "अद्वैत दर्शन" ही रह जाता है वह अद्वितीय अर्थात् केवल एक ही है (जिसके अतिरिक्त कुछ नहीं है)। उस अद्वैत का अन्वेषण ही युगों युगों से भारत का अन्वेषण रहा है। उसी की खोज का प्रयत्न किया जाता है; उसे ज्ञात कर लेने पर अन्य सभी कुछ (क्या उससे पृथक कुछ है भी ?) ज्ञात हो सकता है। उस एक का ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान होता है, विविधता का भ्रम ज्ञान नहीं होता है। 'विविधता' का अर्थ सन्देह, मतभेद और अनुत्साह होता है। द्रष्टा से दृश्य पृथक होता है; वह द्रष्टा तो प्रत्येक में वही एक है।

साधना चार चरणों में होती है। पहला चरण तुम्हें 'सालोक्य' की स्थिति तक पहुंचा देता है। तुम भगवान् के राज्य अथवा 'लोक' में पहुंच जाते हो। तुम्हें भगवान् के आदेशों का पालन करना है, उनके प्रति निष्ठावान् होना है, उनकी छोटी से छोटी इच्छा का आदर करना और हार्दिकता से सेवा करना, पूर्ण रुपेण समर्पण करना है। दूसरा चरण 'सामीप्य' की स्थिति तक पहुंचाता है। यह वह स्थिति है कि राजा के महल में उसके दरबारियों, भृत्यों, सेवकों की भाँति प्रवेश कर जाने की है। तब तुम उसके समीपतर होते हो और तुम्हें दिव्य-वातावरण का अनुसरण करने के, प्रभावित होने के, अधिक अवसर प्राप्त होते हैं और स्वयं तुममें दैवीगुण उदय होने लगता हैं। अगला चरण 'सारूप्य' की स्थिति में ला देता है। साधक दैवी स्वरूप वाला हो जाता है; अर्थात वह भी राजा के भाई-भतीजा या कोई अन्य संबंधी जैसी स्थिति में होता है उसे भी राजा के समान राजकीय वस्त्राभूषण धारण करने की क्षमता प्राप्त हो जाती है। अंत में 'मापुज्य' की स्थिति प्राप्त हो पाती है, तब युवराज के सदृश स्थिति हो जाती है, वह राजमुकुट धारण कर स्वयं राजा के अस्तित्व में लीन हो जाता है, स्वयं राजा बन जाता है। अंग-

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रत्यंग प्रजा, हृदय राजा होता है। मन, जिसे कि उस एक का ज्ञान नहीं होता है, उस सूखी पत्ती की तरह होता है जो वायु के प्रत्येक झोंके के साथ ऊपर उठती है और उस झोंके के मंद पड़ जाने पर गिर जाती है। परन्तु मन जब उस एक के ज्ञान से संयुक्त होता है तो वह एक चट्टान की तरह अटल और अडिग रहता है; उस पर संशय, संदेह के झोकों का कोई प्रभाव नहीं होता है वह स्थाई और सुरक्षित रहता है। जो भगवान् पूजा और ध्यान के लिये उपलब्ध होता है उसकी संज्ञा 'हिरण्यगर्भ' दी गयी है। स्वर्ण के समान आलोकित इस समस्त ब्रह्माण्ड को गर्भ में धारण करने वाला, सृष्टि की उत्पत्ति का मूल, वह सर्वव्यापक तत्त्व अपने संकल्प से विविध रूपों में व्यक्त होता है। यहां पर स्वर्ण का उल्लेख समीचीन है, क्योंकि उसी एक से अनेक आभूषणों को कारीगर आकृति प्रदान करता है जो ग्राहक की आवश्यकता, रुचि, फैशन और धारण करने वालों की इच्छा को संतुष्ट करने वाली होती हैं। मनुष्य की कल्पना, सम्मान और बुद्धि के अनुसार भगवान् भी नाना रूपों में, नाना स्थानों पर, नाना प्रकार से व्यक्त होता है जो भयानक, अजीब, आकर्षक और सुखदायक होते हैं। मानव इन प्रतिमाओं को निर्मित करता है और उनके समक्ष अपने भय, कल्पानायें, इच्छायें, आशंकायें और स्वप्न को प्रकट करता रहता है, अर्पित करता रहता है। व्यक्ति उनको (भगवान् के विविध रूपों को) अपने स्वामी, साथी, राजा, शिक्षक जब जैसी आवश्यकता पड़ जाय, मानने लग जाता है। परन्तु मानव भगवान् से कुछ भी व्यवहार करे, भगवान् इस सबसे अप्रभावित रहता है। वह तो सोना है, जो सभी आभूषणों में विद्यमान तत्त्व है।

वह तुममें है; उसी ने तुम्हें वाह्य सृष्टि में अपना रूप मूर्ति, चित्र, मंत्र के रूप में अध्यारोपित करने की प्रेरणा दी है और तुममें यह विश्वास और धारणा उत्पन्न की है कि इनकी आराधना और जाप से तुम्हें शान्ति प्राप्त होवेगी, प्रार्थना सुनी जावेगी। विना अंतरात्मा की प्रेरणा, आश्वासन और आनन्द के जो उसी एक की देन हैं, तुम्हारी स्थिति एक भटकने वाले पागल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जैसी हो जाती है, जो अपना मार्ग भूलकर पतवार रहित तूफानी समुद्र की उत्ताल तरंगों द्वारा उछाला जा रहा हो। उसी एक को दृढ़ता से हृदय में धारण किये रहो, परामर्श और आश्वासन देने वाले उसके निःशब्दों को अपने कान में फुसफुसाहट के साथ सुन सकने का अभ्यास करो। उससे वार्तालाप करो, जैसी वह प्रेरणा दे उसी दिशा में अपने कदम रखो, तुम अपने लक्ष्य तक सुरक्षित और शीघ्र पहुँचोगे। चित्र के समक्ष तुम बैठते हो, पुष्प जो तुम उस पर चढ़ाते हो, मंत्र जो तुम पाठ करते हो, जो व्रत तुम लेते हो, जिन सावधानियों को तुम वर्तते हो, ये सब उन बाधाओं को, जो तुम्हारे हृदय में स्थित भगवान् का साक्षात्कार करने के मार्ग में आती है, गंदा करती है, स्वच्छ करते हैं और दूर करने वाले हैं।

सच तो यह है कि तुम यह शरीर नहीं हो जो तुम धारण किये हुये हो। जैसे घोंघा स्वयं अपने घर के बोझ से भार ग्रस्त रहता है उसी प्रकार तुम बोझिल रहते हो। जब शरीर के प्रति आसक्ति समाप्त हो जाती है तो अंतः स्थित भगवान् का आलोक उद्भासित होकर तुम्हारे विचारों, शब्दों और कार्यों को आलोकित कर देता है। कृष्ण ने गीता में कहा है, "सर्वधर्मान् परित्यज्यमामेकं शरणं व्रज, अहं त्वाम् सर्व पादेभ्यो मोक्षयिस्यामि याशुत्रः।" यदि तुम सभी धर्मों (कर्त्तव्यों की समस्त भावना और अधिकारों की आकांक्षा) को त्याग कर केवल एक उसी की शरण में चले जाओ तो वह तुम्हें उसी क्षण बन्धन रहित कर देगा। 'न ऊधौ को लेना न माधौ का देना' रह जावेगा, अर्थात् वह शरीर के साथ व्यक्ति के तादात्म्य का परित्याग मांगता है।

यही धर्म है, सर्वोच्च कर्त्तव्य है जिसकी शिक्षा देने के लिये कृष्ण का अवतार हुआ था। मानव का अपने प्रति यही कर्त्तव्य है कि वह जाने कि वह "दिव्य" है और इसके अतरिक्त कुछ नहीं है। जब वह इसकी उपेक्षा करता है और सड़क छोड़कर इधर-उधर पगडंडियों पर भटक जाता है, भगवान् अवतार धारण करता है और पुनः उसे सन्मार्ग पर ला देता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पहले आवश्यकता होती है, तब उसकी पूर्ति के लिये उपयुक्त उपदेश और उपदेष्टा रंगमंच पर आते हैं। देवर्षि नारद को कुछ मानसिक विक्षोभ हुआ था, तब सनत्कुमार ने उनकी मानसिक शान्ति के लिये उन्हें वेदों का उपदेश दिया था। इसलिये वेद अनादि नहीं कहे जा सकते हैं। वेद की ऋचाओं में अनेक ऋषियों और कवियों के नामों का उल्लेख आता है इसलिये इन ऋचाओं को उन लोगों के जन्म के बाद की ही मानना पड़ेगा। बाल्मीकि ने रामायण की रचना की और सर्वप्रथम उस लव-कुश, राम के युगल पुत्रों को पढ़ाया; जिन्होंने सम्पूर्ण काव्य को, काव्य के नायक अपने पिता के समक्ष खुले दरबार में गाकर सुनाया। जब तुम पात्र को, शरीर को, बल को महत्त्व देते हो और पात्र में रखे पदार्थ, आतमा और धारा की उपेक्षा कर जाते हो तब तुम इस देवता, उस देवता, ब्रह्मा, विष्णु, महेश की चर्चा करते हो। परन्तु वास्तव में यह (अपने शरीर की ओर संकेत करके) शरीर और वे सब शरीर, जो मेरे समक्ष उपस्थित हैं, सब एक ही हैं; उनमें यद्यपि धारा एक ही प्रवाहित हो रही है, परन्तु शरीरों की धारा को धारण करने की क्षमता पृथक-पृथक है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, ये छः राक्षस तुम्हारा पीछा करके तुम्हें पथ-भ्रष्ट कर देते हैं और तुम्हें नीच, मूर्ख और उदास बना देते हैं। इनसे दृढ़ संकल्प होकर युद्ध करो। यह जीवन-व्यापी युद्ध तुम्हें लड़ना ही है। यह सप्तवर्षीय या बीसवर्षीय युद्ध नहीं है; यदि तुम जीवित रहे तो यह शतवर्षीय युद्ध भी बन सकता है। इस युद्ध में कहीं पर भी कभी 'युद्ध विराम' का क्षण नहीं आता है। यह तो गृह-युद्ध है, जहाँ केवल सतर्कता ही लाभप्रद होती है। अर्जुन ने कृष्ण से कहा, "मन तो सदा इन राक्षसों से पीड़ित रहता है, ये तो एक क्षण भर विश्राम नहीं लेने देते हैं।" कृष्ण ने कहा, "इसे (मन को) मुझे सौंप दो।" कितना सरल, है न ? मधु-मक्खी, जब तक पुष्प पर न पहुंचे, भिनभिनाती रहती है; मधुपान प्रारम्भ करते ही भिनभिनाहट बन्द हो जाती है। मन भी भगवान् के चरण कमलों पर स्थिर होने से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पूर्व ही कोलाहल करता है। फिर तो यह शान्त होकर दिव्य ग्रमृतपान करने में जुट जाता है। एक बार इसे अमृत का पता लग भर जावे, फिर यह वहाँ से नहीं टलेगा।

अपने को भगवान् के लिये अर्पण कर दो। सुदामा से भगवान् ने पूछा, "बोलो, तुम क्या चाहते हो ?" उसने उत्तर दिया, "मैं तो तुम्हें ग्रौर केवल तुम्हीं को चाहता हूँ", क्योंकि उसी में सब कुछ समाया हुग्रा है। नन्हा-मुन्ना पिता से पुस्तक, बुश-शर्ट, गेंद ग्रौर कलम माँगता है। यदि वह पिता का प्यार पा ले, तब तो उसे यह जानने की भी ग्रावश्यकता नहीं है कि उसे किस वस्तु की ग्रावश्यकता है। पिता बच्चे की ग्रावश्यकताग्रों का ग्रनुमान स्वयं करेगा, और उन्हें जुटावेगा।

यही कारण है कि भारत के प्राचीन राजा सदा ऋषियों से परामर्श लेते रहते थे। ऋषिगण निर्लिप्त ग्रौर पूर्वाग्रहों से रहित होते थे इसीलिये वे जानते थे कि किसी विकट परिस्थित में क्या करना उचित है। वे मानवता के प्रति सदा प्रेम से पूर्ण रहते थे, उनके हृदय में दुखियों के प्रति दया ग्रौर पापियों के उद्देश्य के प्रति ज्ञानपूर्ण समझदारी थी। उनकी पाँच श्रेणियाँ थीं, पंडित, ऋषि, राजर्षि, महर्षि ग्रौर ब्रह्मर्षि। महत्त्वकांक्षा का उनमें लेश भी न था, धन, सम्पत्ति, भूमि, यश किसी की भी लिप्सा न थी। दशरथ के कुलगुरू और परामर्शदाता वशिष्ट ने राम को "ग्रादित्य हृदय" ग्रर्थात् सूर्य का हृदय नामक रहस्यात्मक मंत्र की दीक्षा दी। और आदेश दिया कि जब विजय उनके हाथ से खिसकती दिखाई दे तो इस मंत्र का पाठ करने लग जावें। ये परामर्शदाता (मंत्रीगण) राज्य की नौका को संकटों से पार लगाते रहते थे। दुष्ट चचेरे भाइयों तैल (कर्ण) और वायु (शकुनि) ने जो अग्नि-ज्वाला प्रज्वलित किया था उसे बुझाने के लिए वर्षा की आवश्यकता थी। कृष्ण ने कुरुक्षेत्र में बाण वर्षा की व्यवस्था कर दी।

यदि शासक ग्रपना शासन इस ज्ञान से संचालित करता है कि भगवान्

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

का निवास सभी में है, यही मानकर प्रत्येक व्यक्ति का उसी प्रकार मान-सम्मान किया जाता है तब कोई भी असन्तोष या मतभेद रह ही नहीं सकता। यही वैदिक विचारधारा की नीव है जिस पर जीवन के विभिन्न पहलुओं का निर्माण करना है। बुद्ध ने भी अपने धर्म की वेदान्त के आधार पर व्याख्या की थी, यद्यपि स्पष्ट रूप से उन्होंने इसकी कभी घोषणा नहीं की। आधार को तो सर्वस्वीकृत मानकर आगे बढ़ा गया। इसके सम्बन्ध में तो कभी संदेह किया ही नहीं गया। केवल धार्मिक ही प्रसन्नता, स्थाई यश और आनन्द दे सकने में समर्थ होता है। वर्षों पूर्व भारत का वायुमण्डल तीन देश भक्तों, लाल, वाल, पाल के यश से गूंज रहा था। इनमें से बालगंगाधर तिलक का नाम शेष दो की अपेक्षा अधिक समय तक रह सकता है। क्योंकि तिलक ने गीता रहस्य नामक गीता का एक भाष्य या टीका लिखी है। भगवान् का साक्षात्कार करने के लिये ही तुम्हें शरीर की प्राप्ति हुयी है। इसलिये शरीर को भगवान् के अन्वेषण, भगवान् की सेवा के लिये समर्पण और भगवान् से पोषण प्राप्त करने में लगा दो। इन्हीं से तुम्हारी अन्तरात्मा की आकांक्षा की पूर्ति होगी और चूहे की तरह सदा दाँत से कुतरने वाले असंतोष को बहिष्कृत कर दो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३१ सौंदर्य और कर्त्तव्य

(प्रशान्ति निलयम् २८-१०-१९६९)

स्वयंसेवक की स्थिति से तुम्हारा कार्य सम्पन्न हो जावेगा, जबकि तुम्हें यह भली प्रकार विदित हो जाये कि अपनी सम्पूर्ण शक्तियों और सम्भावनाओं से युक्त यह मानव शरीर तुम्हें क्यों प्रदान किया गया है। यह प्रेम में विकसित होना, प्रेम में विस्तृत होना, प्रेम का व्यवहार करना, प्रेम को शक्तिशाली बनाना, अन्त में प्रेम स्वरूप हो जाना और उसी दिव्य-ज्योति प्रेम में लीन होना है जो कि स्वयं भगवान् ही है। समस्त जीवन भर तुम्हें प्रेम में ही रहना है, प्रेमपूर्वक रहना है और प्रेम के लिये रहना है। अर्थात् सेवा द्वारा प्रेम उनके प्रति प्रकट करना है जो तुमसे उस प्रेम को प्राप्त करते हैं, और इस प्रकार लेते हुए भी उसकी वृद्धि करते हैं और गहरा करते हैं। आध्यात्मिक अनुशासन उस प्रेम को समुचित दिशा में मोड़ देने के लिये होता है, जिससे वह उस हृदय को सींच सके जो इसके अभाव में सूख जावेगा।

प्रशान्ति नियलम में सेवा कार्य का सौभाग्य प्राप्त करने वाले स्वयंसेवकों को संसार के अन्य इसी प्रकार के स्वयंसेवकों के लिए एक आदर्श उपस्थित करना है। क्योंकि, यहाँ, जीवन का सच्चा अर्थ, उद्देश्य ज्ञात हो जाने से सेवा भावना का स्वतः हृदय से उद्रेक होता है। जब वह ज्ञात हो जाती है तो प्रत्येक कदम सही पड़ता है, धार्मिकता की ओर ले जाने वाला होता है। और, यदि हृदय में धार्मिकता हुई तो चरित्र में सौंदर्य आवेगा, यदि चरित्र में सौंदर्य आया तो घर में सौमनस्यता रहेगी; और यदि घर में सौमनस्यता हुई तो राष्ट्र में व्यवस्था रहेगी; यदि राष्ट्र में व्यवस्था रही तो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

विश्व में शान्ति रहेगी। तुम्हारी दया के क्षेत्र के क्षितिज का विस्तार होने का नाम ही धार्मिकता है। इससे मानव के सुख और प्रसन्नता उन्नत होंगे।

धर्म का तीन चौथाई चरित्र होता है। कोई भी व्यक्ति, जो केवल बपतिस्मा (दीक्षा) को स्वीकार करता है, नियमों का पालन करता है, परन्तु ईमानदार और दयालु नहीं रह पाता है, धार्मिक कहलाने का अधिकारी नहीं होता है। केवल चारित्रिक दृढ़ता ही मानव को सुख-दुख के थपेड़ों को सहने में समर्थ बनाती है। यह अकेली ही मानव से घोषणा करा सकती है, "मृत्यु तो मेरे लिए एक विनोद है, जन्म लेने से मैं नहीं डरता।" यह सप्ताह जो तुमने यहाँ स्वयंसेवक होकर बिताया है, चरित्रनिर्माण अथवा साधना सप्ताह रहा है। स्वयं के अर्थ अपने और सेवक का अर्थ सेवा करने वाला। इन सब दिनों में तुमने यहाँ अपनी ही सेवा की है।

जब तुम यहाँ से वापस अपने ग्राम या नगर जाकर अपने काम में पुनः लगो, तो इसी मनोदशा में रहते रहना। अपने लाभों को त्याग कर घाटे के काम मत हाथ में लेना। दैवी इच्छा के प्रतीक बनकर सभी की सेवा करते रहना। इससे तुम्हें अपार हर्ष होगा; यह ऐसी प्रसन्नता होगी जो अन्य किसी भी कार्य से प्राप्त नहीं हो सकती। चकोर पक्षी खुली चंचु से आकाशीय वर्षा की प्रथम बूंद की प्रतीक्षा करता रहता है; वह दूसरे जल का आस्वादन नहीं करता है। इसी प्रकार तुम भी किसी को धीरज बँधाना, आराम देना, साहस देने, घाव पूरने या अन्य किसी प्रकार की सहायता चाहने वाले अवसर की प्रतीक्षा में रहो। उस व्यक्ति में अपनी ही आत्मा के दर्शन करो, अनुभव करो कि उसकी प्रसन्नता तुम्हारी प्रसन्नता है; उसका दुख तुम्हारा दुख है। यदि तुम्हें कार चलाना नहीं आता है और इसमें बैठकर तुम इधर-उधर नहीं टहल सकते हो तो इससे लाभ ही क्या है? यदि रेडियो बजाना तुम्हें नहीं आता है, तो इससे तुम्हें लाभ ही क्या है? यदि तुम यह नहीं जानना चाहते हो कि शरीर का सर्वोत्तम प्रयोग क्या है तो तुम्हें शरीर पाने से लाभ ही

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्या है ? उन सन्तों और ऋषियों के जीवन से, जिन्होंने सत्य जानने में सफलता प्राप्त की है, शिक्षा ग्रहण करो कि तुम्हारा लक्ष्य क्या है और तुम्हें किस मार्ग से उस लक्ष्य तक पहुंचना है। वह लक्ष्य भगवान् है। वही सभी शुभाशुभ उचितानुचित से परे है। यह सब पार्थिव मापें हैं इनसे केवल अस्थाई पदार्थ ही तोला नापा जा सकता है। उस भगवान् की कोई आकृति, अंग-प्रत्यंग, गुणविशेष नहीं होते हैं, और न उसे किसी से राग-द्वेष अथवा पक्षपात की ही भावना होती है यह कहना भी कि वह सत्यस्वरूप, ज्ञानस्वरूप या आनन्दस्वरूप है, सही नहीं है क्योंकि उसका कोई स्वरूप या स्वभाव नहीं होता है। वह सत्य है ज्ञान है, आनन्द है। जिन्होंने अनुभव किया है उनका यही कथन है।

मिट्टी में बर्तन नहीं होते हैं परन्तु बर्तनों में मिट्टी अवश्य होती है। इसी प्रकार भगवान् में विशेषतायें नहीं होती हैं; परन्तु सत्य, ज्ञान, आनन्द की विशेषता में भगवान् है। भगवान् सर्वत्र है, परन्तु कोई अन्तरिक्ष यान उससे टकराता नहीं है, कोई अन्तरिक्ष उड़ाका उसे देख नहीं सकता। उस प्रकार के किसी भी सम्पर्क के लिए वह सीमातीत सूक्ष्म है, वह आकाश से भी अधिक सूक्ष्म है। इसलिए ऐसे लोगों की बात ही मत सुनो जो शपथपूर्वक भगवान् के न होने की घोषणा करते हैं। वे स्वयं नहीं जानते कि वे क्या कह रहे हैं, अर्थात् भगवान् को वे जानते ही नहीं हैं। भगवान् सीमा रहित विस्तृत, कल्पना और तर्क की पहुँच से आगे होता है। उसकी महिमा पर विचार करने से कभी-कभी तुम्हें आनन्द की झलकियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३२ हमारी आवश्यकता के कालेज

(भारत के उपराष्ट्रपति द्वारा अनंतपुर कालेज का शिलान्यास समारोह ७-११-१९६९)

अनंतपुर के इतिहास में आज का दिन बड़ा पवित्र और महत्त्वपूर्ण है, यह उनके लिये भी महत्त्वपूर्ण दिवस है जो भारतीय संस्कृति का पुनर्जागरण चाहते हैं। अपनी सरकार के माध्यम से भारतीय जनता अब स्वयं को शिक्षा, चिकित्सा, खाद्यपदार्थ और पेय जल की सुविधा का विस्तार व विकास बड़े पैमाने पर करने के लिए कृतसंकल्प है। इससे लाखों व्यक्तियों की रहन-सहन का स्तर उन्नत होगा। अनेक मकान, स्कूल, अस्पताल, निर्माणशालायें, उन्नत कृषि क्षेत्रों के निर्माण की योजना बनाई गई है और स्थापना की गई है। निस्सन्देह यह सब वाँछनीय है। परन्तु इनके साथ ही, इनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यहाँ के लाखों लोगों की सुरक्षा, सन्तोष, शान्ति और तुष्टि की प्रत्याभूति के लिये योजना बनाकर उन्हें कार्यान्वित किया जावे। यह आन्तरिक गुण है; इनसे स्थाई संतुष्ट समाज की स्थापना होगी। जो भारत की वास्तविक संस्कृति को प्रतिबिम्बित करेगा, और इसके प्राण-दायक, शक्तिदायक गुणों को प्रकट करेगा। यह एक आश्चर्य की बात है कि अभी तक शासक और शासित किसी ने भी वर्तमान असन्तोष, घृणा और भ्रमोत्पादक, लहरों का विश्लेषण कर इनके मूल कारणों का पता लगाने की चेष्टा नहीं की है जो हमारी शान्ति, चिन्ता, भय को उद्वेलित करते हैं और हमारी सामाजिक शान्ति को भंग करते हैं। इन रोगों का कारण आर्थिक, राजनैतिक, बौद्धिक, पाण्डित्य या सामाजिक क्षेत्रों से कहीं अधिक आध्यात्मिक क्षेत्र में खोजना चाहिये। यह बड़े खेद की बात है कि आध्यात्मिक शिक्षा की नितान्त उपेक्षा की गई है; जब कि कारीगरी, चातुर्य, चमक-दमक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर सूचनाग्रों के संग्रह पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। यह कालेज तथा ग्रन्य उन सब कालेजों का जो मैं भारत के प्रत्येक राज्य में स्थापित करता जा रहा हूं, एक यह भी उद्देश्य है कि जनता ग्रौर प्रशासन के समक्ष इस कार्य की तात्कालिकता ग्रौर इसकी पूर्ति के ढंगों का प्रदर्शन भी रखा जा सके। मेरा संकल्प युवकों को ऐसी शिक्षा प्रदान करना है जो बुद्धि का विकाश करने के साथ ही उनके मनोभावों ग्रौर उद्वेगों को भी पवित्र करने वाली हो ग्रौर उन्हें शारीरिक ग्रौर मानसिक ग्रनुशासन ग्रौर संयमों से संयुक्त करे जिससे वे ग्रावश्यकता पड़ने पर शान्ति ग्रौर ग्रानन्द, जो उनके हृदयों में सचित है, कि समुचित मात्रा वहाँ से प्राप्त कर सकें। उनकी उच्च प्रवृत्तियों को पुष्ट ग्रौर प्रोत्साहित करना है जिससे वे ग्रध्ययन, प्रार्थना, साधना, ऋषियों, सन्तों ग्रौर ग्राध्यात्मिक स्त्री-पुरुषों के सम्पर्क द्वारा, विकसित होवें ग्रौर छात्र छात्रायें ग्रात्मविश्वास, ग्रात्मसन्तोष ग्रौर ग्रात्मवलिदान के मार्ग के पथिक बनें।

मनुष्य का हृदय ग्राजकल तराई भूमि की तरह निष्क्रिय पड़ा हुग्रा है। इसे आध्यात्मिक अभ्यास—जप, ध्यान और नाम स्मरण, से जोतकर प्रेम के बीज बो देना चाहिये। उसमें श्रद्धा का उर्वरक डालकर तितिक्षा (सावधानी) की विरवाही (रक्षापंक्ति) से रक्षित रखते हुए शान्ति ग्रौर सहनशीलता की उपज प्राप्त करना चाहिये; जिससे घृणा ग्रौर क्रोध दूर होवें। सहिष्णुता तो मानव का सबसे मूल्यवान रक्षणीय कोष है।

भारत की संस्कृति को सही ग्रर्थों में समझने के लिये लोगों को पुराणों का ग्रध्ययन करना चाहिये जोकि 'प्रमाण' हैं ग्रौर शास्त्र उन्हें समझने (देखने) के नेत्र हैं। वेदान्त की गंभीर शिक्षाग्रों को हृदयंगम करने के लिये उपर्युक्त दोनों ही विस्तृत व्याख्या करके सरलता से समझा देते हैं। उन्हें "ग्रध्यात्मविज्ञान के लोकप्रिय ग्रन्थ" की संज्ञा दी जा सकती है।

इन पुराणों ग्रौर शास्त्रों में स्त्रियों के मातृपद की महिमा का बड़ा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उल्लेख है। माताएं इस देश के बच्चों के मस्तिष्क में उच्च आदर्शों को भरती रहती थीं। वेदों में मैत्रेयी गार्गी का उल्लेख महान् आध्यात्मिक विद्वानों के रूप में हुआ है। पंडितों की भरी सभा में गार्गी का सम्मान, उसकी कठिन आध्यात्मिक समस्याओं पर अगाध पाण्डित्य के लिये और आत्म साक्षात्कार की उच्च स्थिति प्राप्त कर सकने के लिये, किया गया था। ऐतिहासिक घटनाओं के अन्तर्गत हमें शिवाजी की माता जीजाबाई का स्मरण हो आता है जिन्होंने सदा महाकाव्यों, पुराणों की कथायें सुना-सुना कर शिवाजी को शूर-वीर और हिन्दू संस्कृति का उत्तम प्रतिनिधि बना दिया था।

सनातन धर्मावलम्बी हिन्दू के लिये संस्कृति इतनी ही प्रिय है कि जितना उसका शरीर उसे प्रिय है। इसके रक्षण और पोषण के लिये वह देश-निकाला, उत्पीड़त और मृत्यु का आलिंगन भी करने को तैयार रहता था। धर्म तो वह भूमि थी जहाँ वह निवास करता था; वह वायु थी जिससे वह प्राण-प्रद शक्ति प्राप्त करता था। वह ऐसे देश में कभी निवास नहीं कर सकता था जहां धर्माचरण न किया जाता हो; वहाँ उसे घुटन अनुभव होती थी यदि उसे ऐसे देश में रहना पड़ता जहाँ का वातावरण अधर्म से दूषित रहने वाला हो। अधार्मिक देश में उसकी स्थिति सीता की स्थिति, लंका की अशोक बाटिका, के समान हो सकती है जहाँ कि वह रामनाम की प्राणप्रद वायु के सहारे रही और शेष संसार और अपने वायुमण्डल की उपेक्षा करती रही।

भारत सिवाय भगवान् की भक्ति और भगवदार्पण के वातावरण के अन्यत्र कहीं भी वास्तविक आनन्द प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि यहाँ के लोगों के मन, वचन, कर्म में भगवान् इसी सीमा तक समाया हुआ है। बांध, निर्माण शालायें, विश्वविद्यालय—ये सब भी फले फूलेंगे और अपने-अपने लक्ष्यों को प्राप्त करेंगे यदि यहाँ इन कार्यों से सम्बन्धित अथवा लाभान्वित होने वाले स्त्री-पुरुषों में उत्कट इच्छा, हार्दिकता, मानवता और श्रद्धा हुयी;

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जो कि भक्ति उनमें उत्पन्न कर सकती है। केवल इसी एक उपाय से भारत अपने गौरवपूर्ण पद "समस्त मानवता के गुरु" को जो उसने प्राप्त किया और शताब्दियों तक अधिकृत रखा, पुनः प्राप्त कर सकता है।

यह कालेज "सत्य साई ट्रस्ट" द्वारा चलाया जावेगा। इस ट्रस्ट के परामर्श दाताओं में भारत के प्रख्यात पुत्र और पुत्रियां होंगी जिनमें योग और त्याग की प्रचुर भावना होगी; यही तो भारत की स्पष्ट विशेषतायें हैं। वे हमारे समाज और संस्कृति में मातृत्व की उच्च भावना को पोषण देंगे। वे संस्था में ऐसे आदर्शों को स्थापित करेंगे जो शिक्षितों को समर्थन और शक्ति प्रदान करने वाले हों, दयामयी, संस्कृत, निःस्वार्थ माताओं को इस देश में धार्मिक जीवन बिताने की प्रेरणा देने वाले हों।

यह ट्रस्ट अनन्तपुर के लोगों से किसी प्रकार की आर्थिक या अन्य प्रकार की सहायता की आशा नहीं करेगा। यदि वे ट्रस्ट को, ट्रस्ट से सम्बन्धित लोगों, अध्यापकों, छात्रों, उनके माता-पिताओं और परिवार के लोगों को, वर्तमान और भविष्य में भी, आनन्दित देखकर सुख मान सके तो इससे ट्रस्ट को भी सुख संतोष प्राप्त होगा। यह कालेज केवल इसी नगर के लिये नहीं है; बल्कि इसे तो एक आदर्श संस्था, और उन लोगों के लिये पथ-प्रदर्शक बनना है जो कि स्त्रियों की शिक्षा में रुचि रखते हैं, माताओं के माध्यम से हमारी संस्कृति की उन्नति के आकांक्षी हैं। मेरे मन के एक कोने में ऐसा भी विचार अंकुरित हो रहा है कि कभी भविष्य में अनन्तपुर एक विश्वविद्यालय कदाचित महिला विश्वविद्यालय, का केन्द्र बने।

मैं चाहता हूँ कि नागरिकों के पारस्परिक सम्बन्ध प्रेम पर आधारित हों। घृणा और घमंड का लेश मात्र भी न रहे और एकता दृढ़ता से स्थापित हो जावे। मन विश्व जनीत आत्मा का चिन्तन अधिक लगन से करने लगे क्योंकि आत्मा का निवास तो प्रत्येक जीव में है; तब प्रेम स्वतः सभी कार्यों में लाभप्रद

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पथ का पथ-प्रदर्शक बन जावेगा। मैं आशीर्वाद देता हूँ कि यह कालेज प्रेम ग्रौर श्रद्धा से प्राप्त होने वाली विजय का एक ग्रादर्श उदाहरण बने। प्रत्येक राज्य के महिला-कल्याण और राष्ट्रीय उन्नति के क्षेत्र में कार्य करने वालों के लिये यह संस्था प्रेरणा का स्रोत बने। यह कालेज उन उत्तम माताग्रों की ग्रनेक पीढ़ियों को शिक्षा प्रदान करे जो धर्माचरण करें ग्रौर भक्ति तथा भगवान् के प्रति उत्कट समर्पण भावना वाले उत्तम नायकों को जन्म दें।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३३ तीन राजगद्दियाँ

(अखिल भारतीय कान्फ्रेंस का उद्घाटन
प्रशान्ति निलयम् २०-११-१९६९)

सम्पूर्ण भारत की सत्य साई संगठनों के पदाधिकारियों का यह जमाव सभी हृदयों को प्रसन्नता से भर देता है। यह महान अवसर है। जिस महान उद्देश्य की पूर्ति के लिये यह संगठन समर्पित है उसकी खोज और पुनर्स्थापना के लिये अपने मन को टटोलो; उस विश्वास को शक्तिवान बनाओ जिससे तुम और अधिक उत्साह से और लाभप्रद ढंग से इस युगान्तरकारी साहसिक कार्य में भाग ले सको। आध्यात्मिक क्षेत्र के संगठनात्मक प्रयासों की भारत में दीर्घकाल से उपेक्षा की जाती रही है। अहंभाव पूर्ण महत्त्वाकांक्षा और दलबन्दी के सूक्ष्म कंकड़ों से भरे होने के कारण इसमें विस्फोट की आशंका बढ़ गयी है। जब तक व्यक्ति पहले पवित्र और शक्तिमान नहीं बन जाता है तो उसके कारण संगठन विशृंखलित और टुकड़े-टुकड़े हो जावेगा। इसलिये, इतने दीर्घकाल से यह प्रेम और ज्ञान के क्षेत्र की लम्बी तीर्थ यात्रा चली जा रही है। परन्तु, आध्यात्मिक उन्नति का मूलाधार इस 'अहं' का त्याग करना है और प्रसन्नतापूर्वक "हम सब" की स्थिति में बदल जाना है; यही तो 'अहं' का उस (भगवान्) में लीन होना है। इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिये व्यक्ति को जिन कठोर कार्यों को पूरा करना पड़ता है वे बलिदान, सेवा, दूसरों के सुख में प्रसन्न होना और दुखों में सहानुभूति से दुखी होने जैसे सद्गुणों से हो पाते हैं। 'व्यक्तिगत सीमित चेतना को भगवान् की महिमा के असीम क्षेत्र में विस्तृत कर दो' समय के गलियारों से लगातार यही पुकार आती रही है।

निःसन्देह प्रत्येक इकाई स्व-राज्य संगठन का एक अंग है; संगठन का

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक ऐसा अंग जिससे ग्रात्म-ग्रधिकार प्राप्त होवे, परन्तु, व्यक्ति को ग्रपने स्वर पर ग्रधिकार इसलिये करना पड़ता है कि वह दूसरों की सेवा करने में ग्रधिक सक्षम हो सके। साधकों का परस्पर सम्पर्क एक दूसरे को इन्द्रियों की ग्रासक्ति से मुक्ति, ग्रौर सर्वव्यापी भगवान् की, जिससे वे ग्रपना सम्पर्क स्थापित कर चुके हैं, की निरन्तर उपस्थिति में रहने के ग्रभ्यास में सहायक होवे। इकाई तो ग्रानन्द का, व्यक्ति ग्रौर समाज दोनों के लिये, स्थाई स्रोत है। यह तो सुनसान का दीपक है। यह भक्ति के तेल ग्रौर सेवा की बत्ती से प्रेम का प्रकाश ज्ञान की ज्योति से विकीर्ण करता है। यदि व्यक्ति न्याय बुद्धि वाला ग्रौर हार्दिक है, तो ज्योति स्वच्छ ग्रौर धूम्र रहित होगी। वह व्यक्ति ग्रन्य लोगों को भी हार्दिकता, ऋजुता ग्रौर स्वयं दैवत्व की प्रतिमूर्ति मान कर सम्मान देने वाला हो। वर्तमान समय में तो जब लोग मिलते हैं तो उनके मध्य में ईर्ष्या, ग्रहंकार ग्रौर दुर्भाव का पर्दा पड़ा रहता है; जिससे एक दूसरे की दुर्बलतायें परस्पर भ्रातृ-भाव ग्रौर सहानुभूति के मार्ग में बढ़ा चढ़ा कर कहने से महान बाधा बनकर पथावरोध करने लगती हैं। वे मौलिक एकता को ग्रावश्यक भ्रातृत्व को, मौलिक समानता को खोदते हैं। समझो ग्रौर सहन करो, सहानुभूति ग्रौर प्रेम करो, जिन ऋषियों ने सनातन धर्म को व्यवस्थित और पुष्ट किया उनका यही संदेश है। इस विश्व उद्धारक सगठन की इकाइयों के पदाधिकारियों के रूप में तुम्हें इस सन्देश को पुनर्जीवित, और प्राण-वान करना है ग्रौर ग्रपने जीवन में संकलित ग्रनुभवों के ग्राधार पर मानवों का मार्गदर्शन करना है। यदि तुम उन ऋषियों द्वारा निर्धारित पथ पर चलोगे तो तुम एक साथ ग्रपने को, मुझे ग्रौर उस व्यक्ति, तीन को प्रसन्न कर सकोगे।

समर्पण की भावना के साथ प्रदर्शन, प्रचार और तड़क-भड़क की कोई संगति नहीं। यह तो ग्रात्मा परमात्मा का संयोग है। यह वह कोष है जिसे एकान्त की शान्ति में गिनना चाहिये। ऋषिगण जानते थे कि किस प्रकार इसका संग्रह किया जावे ग्रौर इसका ध्यान ऐसे ग्रानन्दपूर्ण एकान्त में किया जावे जैसा कि घने जंगल के बीच कुटिया में होता है। उनका एकमात्र साथी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आत्मा और एकमात्र परामर्श दाता परमात्मा रहता था। वे अपने आंतरिक शत्रुओं, नीरस आकर्षक पार्थिव पदार्थों से संघर्ष करते थे। वे संदेहों और विचलनों का दमन कर देते थे। पूर्ण शान्ति के अपने लक्ष्य को प्राप्त कर वे शंकराचार्य की तरह जनता के मध्य में आते थे और उन्हें शिक्षा देते थे कि किस प्रकार प्रार्थना करना चाहिये, कैसे उस अनादि असीम को संतुष्ट कर उसी में प्रवेश किया जावे जो कि हर समय उन्हीं में निवास करता हो।

वे अपने आचरण द्वारा शिक्षा देते थे कि सबसे अधिक मूल्यवान् रत्न मनुष्य के हृदय में स्थित प्रेम होता है। वह प्रेम जो सब में एकमात्र अपना ही स्वरूप देखता है। अब तो वह इस पंच तत्त्व निर्मित तिजोरी में ताले के अन्दर बन्द है। उसका प्रकाश केवल अहंकार पर पड़ता है अथवा अहंकार के पोषकों पर पड़ता है। वास्तव में तो यह समस्त मानव जाति का उत्तराधिकार है इसलिये इसे सभी के साथ मिल बाँट कर भोगा जावे। विश्व एक व्यायामशाला, क्रीड़ास्थल या एक तपोवन है जहाँ मानव अपने दिन शक्ति और स्वास्थ्य लाभ करने में, अपनी बुद्धि में स्पष्टता और पवित्रता लाने में बिताता है। परन्तु आजकल तो यह 'वध स्थल' और तमोवन हो रहा है मानव तो पशु से भी अधम राक्षस के समान हो रहा है। क्रोध, घृणा, ठाठबाट ने प्रेम, हार्दिकता और सरलता का स्थान ले लिया है। भक्ति एक ऐसी उपलब्धि नहीं है, जिसका विज्ञापन किया जावे। यह तो एक गोपनीय लाभ है जिसे केवल भगवान् को ही बताया जा सकता है। जब ईर्ष्या की एक चिनगारी मन में प्रवेश कर जाती है तो शीघ्र ही यह विशाल दावाग्नि बनकर कल्याण की समस्त संभावनाओं को जलाकर राख कर देती है। सतर्कता से इस पर दृष्टि रखो, ईर्ष्या तो घमंड का ही परिणाम है और तुम्हारी चारित्रिक अज्ञानता से ही घमंड की उत्पत्ति होती है। तुम सोचते हो कि तुमने जीवन में बहुत कुछ तो पा लिया है और दूसरे लोग तुम्हें पर्याप्त सम्मान नहीं दे रहे हैं। वे तुमसे कम उपलब्धियों वाले किसी अन्य व्यक्ति को तुमसे अधिक सम्मान दे रहे हैं। परन्तु, कुछ विचार भी तो कर लो। किसने तुम्हें

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अवसर, बुद्धि और सफलता प्रदान किये हैं ? भगवान् ने । उसके बिना तो तुम असहाय हो । उसी ने तुम्हें चुना, उसी ने प्रेरणा दी, और उसी ने कार्य किया; तब वह हो पाया था । नम्र बनों, सभी से प्रेमपूर्ण व्यवहार करो। वे सब भी उतने ही हार्दिक और भक्तिभाव सम्पन्न हैं ।

मेरी कृपा के अभिलाषी साधकों के इन सगठनों को दलबन्दी और प्रतिद्वन्दिता के विष से दूषित मत करो। किसी से उसकी जात-पाँत पूछ कर उसके प्रति राग-द्वेष का भाव मत बना लो। मेरी कृपा का पुरस्कार प्राप्त करने की सतत् चेष्टा करो। अध्यक्ष अथवा मंत्री के पदों की चमक के प्रति मत आकर्षित होवो। अपने कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों पर अधिक ध्यान दो। यह कोई साधारण भार नहीं है कि जिसको वहन करने का तुम्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं तुम्हारे अन्दर तक बिल्कुल स्पष्टता से देख रहा हूं। सर ऊँचा करके लोगों पर व्यंग बाण मत छोड़ो। झुको, जिससे कि तुम अपना भार नीचे से उठाकर कंधे पर रख सको। जैसे डाल फलों के भार से नीचे की ओर झुक जाती है उसी प्रकार तुम भी झुको। हर कर्त्तव्य जो अच्छी तरह पूर्ण किया जा चुका है, तुम्हारे खाते में भगवान् की बैंक में जमा कर लिया जाता है। इस जमा की पूंजी में सतत् वृद्धि करते हुये मोटो रकम जमा कर लो। फिर तो तुम इच्छानुसार इस धन में से चेक द्वारा धन निकाल सकोगे और इसका भुगतान पाने का तुम्हें अधिकार भी होगा।

तुम्हें वेदों, शास्त्रों और पुराणों में अगाध श्रद्धा रखना चाहिये। वे प्राचीन ज्ञान के कोषागार हैं, वह ज्ञान जो काल और युगों के परीक्षण में सत्य सिद्ध हो चुका है। वे विनम्रता, श्रद्धा और सहनशीलता की शिक्षा देते हैं। उन ग्रन्थों के ज्ञान से अपने को संपृक्त करलो। तब तुम जड़ता और लिप्सा की बीमारियों से मुक्त रहोगे, काम, प्रचण्ड बुभुक्षा, ईर्ष्या और अभिमान तुम्हारे पास नहीं फटकेंगे।

संवेदनशीलता के क्षेत्र रूपी राज्य के शासक के रूप में प्रेम को

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

राजमुकुट पहनाओ। विचार क्षेत्र के शासक के रूप में तर्क को राजगद्दी पर बिठादो। क्रिया-क्षेत्र के राज्य की गद्दी पर वैराग्य (अनासक्ति) को प्रतिष्ठित करो। सत्य साई संगठनों की इकाइयों के लिये आज मैं यही कार्य-भार सौंपता हूं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३४ सौ तथा उससे अगला

(अखिल भारतीय कान्फ्रेंस प्रशान्ति निलयम् २१-११-१९६९)

यह कान्फ्रेंस, जहाँ कि भारत के सभी राज्यों से भक्तगण आकर एकत्रित हुये हैं, विचार-विनिमय करने और कार्यक्रम निर्धारित करने का एक अच्छा अवसर प्रदान करती है। तुम अपने संदेहों और बाधाओं की चर्चा करके यहाँ से दृढ़ विश्वास लेकर संदेह रहित होकर लौट सकोगे। संस्थाओं से राजनीति को अनिवार्य रूप से पृथक रखो क्योंकि यह तो केवल आध्यात्मिक विकास में सहायता करने वाली हैं। जहां राजनीतिक उखाड़-पछाड़ और हथकन्डें चलें, दलबन्दी का बोल बाला रहे वहां कोई भी आध्यात्मिक अनुशासन नहीं पनप सकेगा। तुम्हें तो एकता, प्रेम, शान्ति की कामना करनी चाहिये। विवादों, मतभेदों और झगड़ों को बढ़ने नहीं देना है। ये तो राजनीतिक क्षेत्र की उपज हैं; न कि परमार्थिक क्षेत्र की। राजनीति, अर्थात प्रतिद्वन्दिता और सत्ता के स्थानों की प्राप्ति के लिये संघर्ष ने इन संगठनों की कुछ संस्थाओं को भी खोखला बना दिया है; क्योंकि व्यक्तियों ने अपने अहं को संयमित करना नहीं सीखा है; उनके मस्तिष्क राजसिक वृत्तियों से निर्मल या स्वच्छ नहीं हुये हैं। दया, दम, दान—इन तीन गुणों को मनुष्यों को अपने में उत्पन्न करना है। दया का अर्थ आसुरी वृत्तियों को रोक कर पर दुख कातरता में लगना; दम का अर्थ वह संयम जिससे दैवी गुणों का विकास हो और दान का अर्थ अपने लोभ और भोगवृत्ति को रोक कर दूसरों के दुख दूर करने के लिये भोग्य पदार्थों का त्याग करना। स्वार्थी होना तो मनुष्य की क्षुद्र वृत्ति और पशुत्त्व का प्रदर्शन है।

संसार में यश उपार्जन करना, साथ के मानव समाज में कोई अधिकार का पद पा जाना, विलास और ऐश्वर्यपूर्ण जीवन बिताना, इन सबसे कभी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शान्ति नहीं प्राप्त होगी। मानसिक शान्ति तो कुछ दूसरी ही उपलब्धियों से प्राप्त होती है। न तो यह धन से खरीदी जा सकती है और न सत्ता के आदेश से मिलने वाली वस्तु है। इसे तो कठिन साधना, ध्यान, नाम-स्मरण और भगवत् प्राप्ति के नौ साधनों से ही प्राप्त किया जा सकता है। इसे तो इसी पृथ्वी पर ही, जहां का मनुष्य न्यायानुमोदित निवासी है, प्राप्त करना है न कि अन्य ग्रह नक्षत्रों की अंतरिक्ष यात्रा से या वहां पहुँच कर ही, शान्ति प्राप्त हो सकेगी। भूतकाल का स्मरण करके या आशंकापूर्ण भविष्य के चित्र बना कर तुम केवल अपने शोक की ही वृद्धि कर पाते हो। तुम वर्त्तमान को भय से पूर्ण रखते हो; कारण भूतकाल को दोहराने और भविष्य की आशंका से यही परिणाम तो होवेगा ही। ग्रामोंफोन के रिकार्ड पर सुई की नोक चलने से संगीत उत्पन्न होता है। रिकार्ड तो एक जड़ प्रदार्थ है। जब मन रूपी सुई प्रकृति रूपी रिकार्ड पर विचरण करती है तो सुख-दुख का संगीत उत्पन्न होता है। प्रकृति का इसमें कोई अपराध नहीं है, न मन का अपराध है; अपराध तो दोनों के सम्पर्क होने का है। अलग रहो, विरक्त रहो, तो फिर कोई प्रतिक्रिया न होगी। मानसिक शान्ति प्राप्ति का यही मार्ग है।

बच्चे की अपनी जिह्वा होती है और मां की अपनी। मां बच्चे को गोद में लेकर शब्दों का उच्चारण करती है। जिससे बच्चा बोलना सीखे। मां की जिह्वा चाहे जितनी व्यस्त क्यों न रहे, बच्चे को तो अपनी जिह्वा के प्रयोग से ही बोलना आ पाता है। मां बच्चे के लिये स्वयं बोलने का काम करके बच्चे को उस कार्य भार से नही बचा पाती है। गुरु की भी स्थिति वैसी ही होती है। वह तो स्वयं दोहरा कर, स्मरण करा कर, प्रेरणा देकर, शिक्षा देकर, फुसला या समझा कर, क्रिया करने के लिए आग्रह कर सकता है; परन्तु दीक्षा के अनुसार शिष्य को स्वयं ही अनुकरण करना है। उसे तो स्वयं ही उछल कर स्थिति पर अधिकार करना है। अन्य कोई उसे उठाकर वहां नहीं स्थापित करेगा। 'तत्' शब्द दूर स्थित किसी अन्य वस्तु के लिये संकेत किया जाता है। अर्थात् कोई ऐसी वस्तु

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जो दूर पर है और तुम उसकी ओर संकेत करते हो। 'त्वम्' तो तुम हो ही। यह तो तुम्हारे सर्वाधिक सन्निकट है अर्थात् स्वयं तुम्हीं हो। तुम अपने को सबसे अधिक जानते हो, अब तुम्हें यही जानना शेष है कि 'वह' और 'तुम' एक ही हो। एक ही आस्तित्त्व है दो नहीं। "बुद्धिग्राह्यम् अतीन्द्रियम्" यही तो हमारे विषय में कहा गया है कि यह केवल बुद्धि से समझा जा सकता है, इन्द्रियों द्वारा इसका अनुभव नहीं किया जा सकता है; छूकर, सूंघकर, चखकर, देखकर, सुनकर, किसी प्रकार से भी नहीं। भगवान् व्यंकटेश्वर की सात पहाड़ियों के अधीश्वर के रूप में पूजा की जाती है। उनका मन्दिर सातवीं पहाड़ी पर स्थित है इसलिये व्यक्ति को छः पहाड़ियाँ पार करके उन तक पहुंचना पड़ता है। ये पहाड़ियां काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर रूप छः बाधाओं की हैं। भगवान् का साक्षात्कार पाने के पूर्व व्यक्ति को इन मनोविकारों, उद्वेगों को पार करके उन्हें पीछे छोड़ देना होगा। शरीर रूपी पथराई हुयी भूमि से, बुद्धि के कुदाल से खोदकर ज्ञान रूपी हीरे को मन के क्षेत्र से ढूंढ़ निकालो। एक बार इस रत्न को प्राप्त कर लो फिर चाहे इसे प्रकृति रूपी सोने में जड़वा कर धारण करो, इससे कुछ भी अंतर नहीं आवेगा। प्रकृति का प्रयोग तो इस रत्न की चमक, अर्थात् बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन बढ़ाने के लिये होगा, वह एक हानिरहित कालक्षेपण है। परन्तु प्रकृति के शिकार मत हो जाओ, भगवान् का ही विस्तार मानकर इस (प्रकृति) का आदर या सम्मान करते रहो।

यदि तुम पहली सीढ़ी पर चढ़ने से संकोच करते हो तो फिर छः पर चढ़ कर सातवीं तक कैसे पहुंच सकते हो? मैंने तो गत वर्ष बम्बई में होने वाली विश्व कान्फ्रेंस में ही नगर संकीर्तन को एक आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में निर्धारित किया था। परन्तु, आज, इस कान्फ्रेंस में, मैं यह देखकर हैरान हूं कि उपसमिति यह संस्तुति करती है कि पदाधिकारियों को वर्ष भर में कम से कम छः बार नगर संकीर्तन में अवश्य भाग लेना चाहिये। क्या आप इसे साधना कह सकते हैं? पदाधिकारीगणों को ऐसा कोई विशेषाधिकार या

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

छूट नहीं मिली हुयी है। उन्हें तो अपनी भक्ति और विश्वास के द्वारा समाज का नेतृत्व करना है। उन्हें तो संशयालुओं को अपने आचरण से प्रेरणा देना चाहिये। यही उनका काम है।

परन्तु, अब वे सुविधायें या छूट मांग रहे हैं। लोग फिल्मों के प्रदर्शनों के स्थानों पर खुब जुटते हैं, सामाजिक क्लबों की ओर भागते हैं और ताश को तो लगातार कई दिनों तक खेलते रहते हैं—परन्तु जब उनसे भगवान् की महिमा गान कर अपने को और वायुमंडल को शुद्ध स्वच्छ करने के लिये कहा जाता है तो वे सुविधाओं के लिये चिल्लाने लगते हैं। जब क्रोधावेश में आकर सर टकराते हैं तो पैर क्या इससे अप्रभावित रह कर जमे रह सकेंगे। वे भी जितना हो सकेगा ठोकर मारेंगे और द्वेष से एक दूसरे को कुचलेंगे। जब मुखियागण बाहर वापस जाने की इच्छा करते हैं, तो दूसरे लोग भी निरुत्साहित होकर इधर-उधर होने की सोचने लगते हैं। गीता कहती है कि मुक्तात्मा तो संसार के कल्याण के लिये ही क्रिया करते हैं। यदि यह ठीक है तो मुमुक्ष लोगों को भी कर्म करना चाहिये जिससे उनकी उन्नति में बाधा न पड़े। मैं इस तर्क को नहीं स्वीकार करता कि लोगों को नगर संकीर्तन में बाहर जाने का समय नहीं मिल पाता है। यदि प्राप्त समय में सौ काम किये जा सकते हैं तो निश्चय ही एक सौ एकवें कर्म को भी इन्हीं के साथ कार्यक्रम में स्थान और समय दिया जा सकता है। तुम चाहो तो इस एक को प्राणप्रद वायु समझकर करते रहो और शेष सौ में से किसी को, अथवा कुछेक को, छोड़ सकते हो। जब कोई फोटो लेने वाला दिखाई देवे तो उसी समय झट से आकर दल में मत शामिल होवो, इसके साथ ही चलते चलो और संकीर्तन से रोमाञ्चकारी अनूभूति प्राप्त करो। पदाधिकारियों को भी शेष सभी के साथ इकाई के सभी कार्यक्रमों में साथ-साथ रहना चाहिये, भाग लेना चाहिये। इस बात को सोच सोचकर आनन्द का अनुभव करो कि तुम्हें सुनने और आदेश पालन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मनुष्य को ऐसा अवसर बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जब नेतृत्व करने वाले ही स्वयं उन कार्यों को नहीं करते हैं कि जिनके किये जाने का आदेश वे अपने अनुयाइयों को देते हैं तो अत्यन्त सुदृढ़ संगठन भी विशृंखलित होने लगते हैं। दो वृक्षों के परस्पर रगड़ने से जो अग्नि उत्पन्न होती है उससे समूचे वन का विनाश हो जाता है। इसी प्रकार जब दो शक्तिशाली व्यक्ति एक ही पद के लिये या सत्ता के लिये संघर्ष करते हैं तो संस्था भी नष्ट हो सकती है। बिना गंभीर चिन्तन किये या कठोरता से नियमों को मत परिवर्तित करो। यदि कोई व्यक्ति ६०% बैठकों से अनुपस्थित रहता है तो उसे नियमों के अनुसार पद से हटाने का विधान है। उसे सुधरने का अवसर दो, दल में ही रहने दो जिससे वह सुधर सके। यदि इससे भी काम न चले, तो बिना किसी हिचक के नाम हटा दो। किसी ऐसे व्यक्ति को मत भर्ती कर लो जो अपने स्वभाव या धार्मिक मामलों, विशेषकर मेरे निर्देशों के प्रति उदासीनता का भाव रखने से साई भक्तों के समाज से बाहर ही रहता हो। मेरा सम्मान तुम्हारा सम्मान है और तुम्हारा सम्मान मेरा सम्मान है। यह तुम्हारी इकाई या तुम्हारी संस्था नहीं है, यह मेरी है। मेरी संस्था में मस्तिष्कों को परस्पर सामंजस्यपूर्ण हो ही जाना चाहिये। सभी के हृदय अनुशासन और संयम द्वारा जोते जावें और उनमें प्रेम का बीज बोया जावे जिससे वे समर्पण के वृक्ष के रूप में उगें और उनमें ज्ञान के फल लगें।

सत्य साइ संगठन के पदाधिकारियों में सहनशीलता, सत्य, दया और सबके प्रति प्रेम होना चाहिये। वे अपने माता-पिता का सम्मान करें। जो वे नहीं करते उसके उपदेश का पाप न कमावें। जो कोई अपने माता-पिता की उपेक्षा करता है, उन्हें दीन-दुखी होकर कष्ट भोगने देता है, जबकि स्वयं समृद्ध और वैभव का जीवन बिता रहा हो, ऐसा व्यक्ति संगठन का सदस्य बनने के अयोग्य है; क्योंकि मैं सदा वेद की आज्ञा "मातृ देवो भव, पितृ देवो भव" पालन पर आग्रह करता रहता हूं। तुममें से यदि कोई इस

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वीमारी से पीड़ित हो तो, सावधान हो जाग्रो ग्रौर इस ग्रादेश द्वारा निरोग हो जाग्रो। सत्य साई परिवार में केवल वही स्त्री पुरुष रहें जो ग्रपने पारिवारिक कर्त्तव्यों का पालन करने वाले हों जिनमें माता-पिता की सेवा-सुश्रूषा सर्व प्रमुख है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३५ पिष्ट-पेषण

(अखिल भारतीय कान्फ्रेंस प्रशान्ति निलयम्, २२-११-१९६९)

इन्दुलाल शाह ने तुम्हें उन प्रस्तावों की सूचना दी जिन्हें विभिन्न उपसमितियों ने स्वीकृत किया है जिससे संस्था के वर्तमान नियमों में परिवर्तन, परिवर्द्धन और संशोधन करने के सुझाव दिये गये हैं। इन सभी नियमों में जो मुख्य उद्देश्य निहित है उससे तुम परिचित हो यह सत्संग की स्थापना का है जिससे तुम्हें आत्मसाक्षात्कार करने में सहायता प्राप्त होवे। जो शान्ति तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है उसी का इस कोलाहलपूर्ण विश्व में से अन्वेषण करना है और उसका उपयोग हृदय में प्रकाश के लिये किया जाना है जिससे अपने आत्म स्वरूप का जो स्वयं प्राकाश ही है, पता लगे। जब तक अर्जुन स्वयं को अपने कर्म फलों का कर्त्ता और भोक्ता मानता रहा वह दुखी रहा। परन्तु जब भगवान् ने उसे उपदेश दिया और प्रत्यक्ष दर्शाया कि वह तो एक यंत्र मात्र है उसे केवल भगवान् की इच्छा पर अपने को छोड़ देना है; और जिनकी हत्या से वह भयभीत था वे तो पहले भगवान् के द्वारा मारे जा चुके थे, तो वह शोक मोह से रहित हो गया और उनके मन में अनिवर्चनीय शान्ति छा गयी।

सब धर्मों में यह शिक्षा दी गयी है। यह शिक्षा सभी धर्मों के अन्तस्तल में प्रवाहित होने वाली उस धारा के समान है जो उस धर्म के बाह्य कर्म-काण्ड, परम्परा पूजाविधि को प्रभावित करती रही है; इसमें जो भिन्नता दृष्टि-गोचर होती है वह स्थानीय भौगोलिक विशेषताओं, जलवायु आदि के कारण हैं। प्रत्येक धर्म में यह मौलिक सिद्धान्त है कि मानव को भगवान् के प्रति समर्पण करना चाहिये और पुण्य कर्मफलों को स्वयं भगवान् को ही अर्पित

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कर देना चाहिये। यदि तुम इसके पात्र हो तो वह तुम्हें प्राप्त होगा, यदि तुम्हें दण्डित होना है तो दण्ड भोग डालो। यह उस (भगवान्) की इच्छा है और तुम्हारा एक मात्र कर्त्तव्य यही है कि जितना भी हो सके, अपनी परिस्थितियों के अनुसार, जिनमें भगवान् ने तुम्हें रखा हो, उसके आदेशों को पालन करने के एक योग्य यंत्र बन जाओ। प्रत्येक धर्म में सबल अहंभाव के शान्त करने वाले अनुशासनों का वर्णन किया गया है। परन्तु सबसे प्राचीन और प्रभावशाली और सफलता पूर्वक व्यवहार में आई हुयी वह आचार संहिता है जिसका वर्णन भारत के वेद शास्त्रों में किया गया है।

यदि किसी परिवार में गृहिणी कलह-प्रिय है तो वहाँ प्रसन्नता और शान्ति नहीं हो सकती अथवा यदि पति शराबी और क्रूर अत्याचारी है तो वहाँ का वातावरण सदा घृणा और शोक पूर्ण रहेगा। इसी प्रकार शरीर में यदि मस्तिष्क झगड़ालू है अथवा बुद्धि अत्याचारी है तो वहाँ शान्ति नहीं हो सकती। गृहपति आत्मा होता है जिस को इस पद पर कभी कभी ही मान्यता मिल पाती है। जब आत्मा को स्वामी माना जाता है और आदर किया जाता है तो घर में सदैव बाधारहित शान्ति रहती है, आनंद रहता है। अच्छा, बोल चाल में 'मैं' का प्रयोग किया जाता है और उसका इस शरीर, अंगों, इन्द्रियों और मन तथा बुद्धि पर अधिकार होता है; परन्तु इस विचार के फलितार्थों पर कभी विचार नहीं किया जाता है और इस 'मैं' के गुण और स्थिति का पता नहीं लगाया जाता है इसे आत्म-विचार कहा जाता है। प्रत्येक इकाई को अपने सदस्यों में आत्म-विचार को विकसित करना चाहिये और उन्हें केवल क्लब के से जीवन और कार्यों से संतुष्ट नहीं रहना चाहिये। क्लब जीवन से मेरा तात्पर्य यही चाय पीना, किसी चित्र या मूर्ति का अनावरण करना आदि परम्परागत घिसे-पिटे कार्यों से है। भगवद्-गीता और उपनिषदों के अध्ययन से आत्मा की खोज में सुविधा होती है। भगवद्गीता तो उपनिषदों की शिक्षा का सार ही है।

अथवा, यदि प्रम का व्यवहार क्षत्र बढ़ जाता है, यानी प्रेम का प्रसाद

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सभी को विना किसी प्रकार के भेद-भाव के प्राप्त होता रहता है, क्योंकि हैं तो सब सर्वशक्तिमान के विशाल विराट शरीर के अवयव मात्र, तो भी पर्याप्त है। प्रेम के द्वारा ही उस प्रेम की मूर्ति (भगवान्) को प्राप्त किया जा सकता है। यहाँ, किसी विद्वत्ता की आवश्यकता नहीं है; वास्तव में विद्वत्ता तो मार्ग का रोड़ा सिद्ध होगी। क्योंकि इससे अहंभाव की पुष्टि होती है, यह संशय उत्पन्न करती है और शास्त्रार्थ के लिये उद्यत अन्य विद्वानों से शास्त्रार्थ तथा विजय की इच्छा को जागृत कर देती है। जब यह प्रेम संबंध चालू हो जाता है तो संगठन का कोई सदस्य किसी से प्रतिद्वन्दिता या नीचा दिखाने के लिये प्रयत्न नहीं करेगा। प्रेम सूत्र सभी को एक अनुपम पारिवारिक संगठन में बाँध देगा जो सदा एक दिशा में एक मत होकर कार्य करता है। असाधारण द्वेष भले ही किसी क्षुद्र विचार वाले व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत झगड़े को निवटाने के लिये न्यायालय तक घसीट ले जावें; परन्तु संगठन का कोई सदस्य संस्था की इकाई के प्रशासन के झमेले को लेकर न्यायालय नहीं जावेगा यदि वह इस नाम रूप वाले धर्म स्थान का कुछ भी महत्त्व स्वीकार करता है।

चूंकि इन कान्फ्रेंसों में प्रेसीडेन्ट, वाइस प्रेसीडेन्ट और सेक्रेटरी ही आमंत्रित किये जाते हैं; मैं देखता हूं कि प्रत्येक इकाई के दो-दो भाग हो गये हैं जिससे कुछ और भी व्यक्ति, जो अपना आदर, मान, ख्याति, चाहते है, यहाँ आ सकें। जो व्यक्ति किसी अन्य के विरुद्ध न्यायालय से निषेधाज्ञा लेकर यहाँ कान्फ्रेंस में सम्मिलित हो रहा है, उसका यही उद्देश्य रहा होगा। वह दूसरे को इससे जिसे वह असाधारण सम्मान समझता है, वंचित करना चाहता था। मैं इसे दूषित मनोवृत्ति का कार्य समझता हूं क्योंकि यह अनुचित यशोकामना के अन्तर्गत किया गया कार्य है। मैं इन मूर्खतापूर्ण आधारों पर कृपा का वितरण 'राशन' की तरह नहीं करता हूं। एक व्यक्ति चाहे किसी भी पद पर न हो, फिर भी वह कृपा प्राप्ति का उचित पात्र हो सकता है यदि वह अपनी निष्ठा और प्रेम में स्थिर रहने वाला है। इन समितियों और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मंडलियों में किसी अधिकार के पद को पाने के लालच के शिकार मत बनो। पद को वारी-वारी से ग्रहण करते रहो जिससे सभी को सेवा कार्य के नेतृत्व का अवसर प्राप्त होता रहे। कुछ समितियाँ और मंडलियाँ चिट्ठी डालकर (भाग्य परीक्षा के बतौर) अपने पदाधिकारियों का चुनाव कर लेती हैं। सदस्य गण भी अनुभव करते हैं जिस किसी का नाम चिट्ठी से निकल आता है वह भी दूसरे के समान ही पद ग्रहण के लिये उपयुक्त है।

समितियों, संघों, महिला सत्संगों तथा इस संगठन की अन्य इकाइयों के कार्यकाल का वर्ष अब से मकर संक्रान्ति से, जो सामान्यतया १४ जनवरी को पड़ती है, प्रारंभ हुआ करेगा। अतः इस दिनांक के वाद शीघ्र ही, आगामी वर्ष के लिये निर्वाचित पदाधिकारियों और सदस्यों के नाम की सूची और वार्षिक आख्या डिस्ट्रिक्ट प्रेसीडेन्टों, स्टेट प्रेसीडेन्टों और केन्द्रीय कार्यालय को भेज दी जावें।

एक और वात ध्यान में रखने की यह है कि सार्वजनिक अधिवेशन या बैठक, जो किसी नगर या कसबे में आयोजित की जावे उसका आयोजन समिति के माध्यम से होवे। किसी अत्युत्साही इकाई और समिति के बीच इसी कार्य को लेकर होड़ नहीं होना चाहिये जिस होड़ की प्रतिद्वन्दिता का मूल कारण निमंत्रण पत्रों का छपाना, वितरण करना, वक्ताओं का स्वागत करना, अधिक व्यय साध्य कार्यों का आयोजन, बैठने का प्रबंध, ध्वनि-विस्तारक यंत्र का प्रबंध आदि अपने आधीन अपनी इच्छानुसार रखना हो। यदि प्रत्येक इकाई अन्य इकाईयों से बढ़चढ़कर चमकना चाहे तो इकाइयों के पास ऐसे कार्यक्रमों, उत्सवों के लिये साधन नहीं होंगे। इसके अतिरिक्त परस्पर सौहार्द और सहयोग की भावना भी दूषित हो जावेगी। किसी इकाई में परस्पर दलबंदी, या दो इकाइयों के बीच होड़ या इकाई और समिति के वीच इस प्रकार के संबंध और भाव नहीं होने चाहिये।

अब नगर संकीर्तन के विषय में इसको न तो बहुत तड़के और न बहुत

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

देर से, प्रारंभ करो। सड़कों और गलियों से भगवन्नाम उच्चारण करते हुये, महिमा के गीत गाते हुये, उस समय धीरे-धीरे निकलो जब उस क्षेत्र के लोग जाग जावें और अपना दैनिक कार्यक्रम प्रारंभ करने वाले हों। अपने साथ अपने किसी इष्ट देव का फोटो या चित्र या मूर्ति लेकर मत चलो जिससे यह विज्ञापित होता हो कि तुम किस नाम रूप के प्रति निष्ठा रखते हो। सुव्यवस्थित ढंग से टहलते चलो। स्त्रियाँ और पुरुष पृथक-पृथक रहें। बसों, ट्रैक्टरों, साइकिलों या गाड़ियों पर नगर संकीर्तन का आयोजन मत करो। परस्पर नामावलियाँ गाने में होड़ करके घृणा मत उत्पन्न करो। जो लोग सुरीले गले और अच्छे गायक हों उन्हीं को नेतृत्व करने दो; कीर्तन सदा आनन्ददायक होवे वह कर्णकटु न होवे। यदि तुम्हारी वाणी कड़ी या बेताल होती हो तो गीत की लय और ताल को मत बिगाड़ो भगवान् का नाम मन ही मन लेते रहो। इस प्रकार गाओ कि श्रोताओं को प्रत्येक नाम का महत्त्व स्पष्ट होता रहे। किसी पंक्ति को दो बार से अधिक मत दोहराओ जिससे भगवान् के विभिन्न नाम-रूपों का कीर्तन करने और विभिन्न नामावलियों के गाने का अवसर पूरी मात्रा में मिल जावे। अधिक लम्बे मार्ग से होकर दल को ले जाने की योजना मत बनाओ। प्रथम कदम से अंतिम कदम तक वातावरण की पवित्रता का ध्यान रहे।

किसी मंदिर या किसी पवित्र स्थान पर एकत्रित होकर प्रणवोच्चार को दोहराओ और सुप्रभातम् गाओ तब नगर संकीर्तन पर निकल जाओ। 'ॐ' का धीरे-धीरे उच्चारण, उसकी विस्तृत महानता और शक्ति का ध्यान करते हुये, करो 'अ' गले से, 'उ' जिह्वा पर लुढ़कता हुआ, 'म' ओठों पर आकर अंत में निकले, अर्थात् ओऽम् शब्द, जो कि अ, उ, म, तीन का समुच्चय है, सभी शब्दों का जो मानवीय जिह्वा उच्चारण कर सकती है, सार है। यह तो मौलिक और आदि ध्वनि है और निरपेक्ष विश्वात्मा का, ब्रह्म का, प्रतीक है। 'म' के बाद भी अश्रव्य गूंज रहे; जो निर्गुण निराकार परब्रह्म का प्रतीक है। चढ़ती हुयी ओं की ध्वनि 'म' पर आकर मोड़ लेवे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर उसी गति से धीरे-धीरे नीचे उतरे जैसे बढ़ी थी इसके उतार-चढ़ाव का समय बराबर ही रहना चाहिये तब शान्ति में विलीन हो जावे, जो कि आन्तरिक चेतना में गूंजती रहती है।

भक्ति से शान्ति ग्रौर ग्रानन्द की प्राप्ति होनी चाहिये। इसलिये जिस मंडली या सत्संग के तुम सदस्य हो उसका प्रयोग ग्रपनी या पराई शान्ति भंग करने के लिये मत करो। यदि तुम ग्रपने समक्ष रखने योग्य लक्ष्य ग्रात्म साक्षात्कार को सदा ध्यान में रखो, यदि साधना पथ पर चलना चाहो तो तुममें इस प्रकार की वृत्तियाँ ही नहीं उत्पन्न होंगी। चूंकि तुम्हारे लक्ष्य सांसारिक हैं। तुम्हारे ग्रादर्श, भौतिक सफलता, यश ग्रौर दूसरों पर ग्रधिकार-लिप्सा से युक्त हैं। इसलिये तुम सदस्यों में मतभेद ग्रौर संशय उत्पन्न हो जाते हैं। ग्रपने दृष्टिकोण ग्रौर भाव में परिवर्तन करो। ग्रपने जीवन को उपयोगी बनाग्रो। इकाइयों को सभी के लिये लाभकारी बनाग्रो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३६ मुझसे, नकि मुझको

(अखिल भारतीय कांफ्रेंस, प्रशान्ति निलयम् २२-११-१६६६)

तृतीय अखिल भारतीय कॉफ्रेंस का विदाई दिवस इतनी जल्दी आ गया! समय चक्रवात की तरह हर वस्तु को अपने आगे ठेलता हुआ तीव्र गति से चला जाता है। इसलिए व्यक्ति को वर्तमान क्षण में अपने कर्त्तव्य पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है, इनसे होने वाले परिणामों को भगवान् पर छोड़ देता है जिसने उस क्षण में वह कार्य करने की प्रेरणा दी, उस कार्य का किया जाना सम्भव बनाया, और व्यक्ति को करने का अवसर प्रदान किया। घड़ी की टिक्-टिक् ध्वनि के साथ समय निरंतर बीता चला जा रहा है इसी में मनुष्य जन्मता, जीता और मरता है। वह कर्म और परिणाम के चक्र पर घूमता हुआ, भावी से बच निकलने के उपाय से सर्वथा अनभिज्ञ रहता है। चिन्ता और पीड़ा उसके हृदय को कोमल न बना सके, साहसिकता और उपलब्धियों से वह विनम्र न बन सका। घृणा और घमंड के मार्ग पर आगे निकल जाने का उसे गर्व है। वह पाप और क्रूरता में लोट लगा रहा है। वह अनैतिकता और असत्य के आचरण से अपवित्र सन्तोष प्रकट करता है। वह पशुओं से भी निम्न स्तर पर उतर गया है।

मनुष्य की इस दुर्दशा पर दया आती है। क्योंकि प्रसन्नता को जाने वाले मार्ग पर उसने गलत दिशा में मोड़ ले लिया है और अब नरक में आ गिरा है। कोई भी शोक को प्राप्त होना नहीं चाहता; सभी केवल सुख ही चाहते हैं। परन्तु, जो लोग यह जानते हैं कि दो सुखों के बीच की स्थिति ही दुख होता है और सुख दो दुखों के बीच का मध्यावकाश है, वे वह स्थिति प्राप्त करना चाहते हैं, जबकि वे भयंकर अथवा मैत्रीपूर्ण किसी भी झंझावात से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्षुब्ध न होवें। शान्ति की वह स्थिति तो सर्वाधिक वांछनीय है। यही निर्वाण है जबकि मन पूर्ण शान्ति में निमग्न होता है और भाग्य के सुखद या दुखद थपेड़ों से अप्रभावित रहता है। क्योंकि वह जानता है कि उसे निर्णय देने का कोई अधिकार नहीं है चाहे अच्छा हो या बुरा, लाभकारी हो या हानिकारक हो।

इस आनन्दपूर्ण स्थिति तक पहुंचने के लिए मनुष्य को साधनामय जीवन जीना पड़ता है। यदि तुम एक के बाद दूसरा पग उठाते चले जाओ तो तुम सैकड़ों मील की यात्रा पूर्ण कर लोगे; चाहे तुम्हारे पग कितने ही छोटे-छोटे क्यों न पड़ें। एक श्येन, वह उड़ान में चाहे जितना दक्ष और समर्थ क्यों न हो, को भी अपने पंख फैलाकर वायु में साहस पूर्वक आगे बढ़ना पड़ता है तभी वह कुछ फीट की दूरी की उड़ान पूरी कर पाता है। यदि उसमें आगे पहुँचने की या पंख फैलाने की इच्छा ही न हो, तो आगे जाने या उन्नति करने की बात तो एक कल्पना या स्वप्न मात्र रह जाती है। इच्छा शक्ति को प्रखर और तदनुकूल बनाकर ही उन्नति की जा सकती है। व्यक्ति दूसरों की सेवा द्वारा, विश्व में आत्मविस्तार करके ही अपने पूर्णत्व को प्राप्त हो सकता है। साधना को, दृष्टिकोण को व्यापक, अनुभव को विस्तृत, और जीवात्मा को परमात्मा में लीन होने को उत्साहित करना है। यह इस प्रश्न से प्रारम्भ होती है, "मेरा अपने पड़ोसी के कल्याण के लिये क्या योगदान है? नहीं, तो मैं अपने पड़ोसी से क्या प्राप्त कर रहा हूँ? यदि तुमने पहले से बैंक में कुछ धन जमा करवा रखा है तभी तो उसमें से चेक के द्वारा धन निकाल सकते हो, या अपनी संपत्ति गिरवीं रखकर कुछ धन ऋणस्वरूप प्राप्त कर सकते हो; अथवा बैंक तुम्हारी साख पर तुम्हें जमा की सीमा के बाहर अधिक धन निकाल लेने की अनुमति दे सकती है। जिस सम्पत्ति पर तुम्हें ऋण प्राप्त हो सकता है वह, "पूर्व जन्मों के संचित पुण्य हैं" और वह साख, जिसके आधार पर आपत्तिकाल में तुम सीमातीत धन (ओवर ड्राफ्ट) निकाल पाते हो, प्रभुकृपा है। वही तभी प्राप्त होती है यदि तुम लगन वाले और सच्चे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

साधक हो, जोकि इसके पात्र समझे जाते हैं। तुम्हें कुछ प्रत्याभूति (जमानत) या किसी को अपना ज़ामिन बनाना होगा जो तुम्हें ऋण दिलवा सके। वह प्रत्याभूति दैवी कृपा है और ज़ामिन स्वयं तुम्हारे विश्वास की दृढ़ता और आत्म समर्पण की एकता है। प्रत्याभूति और ज़ामिन का कार्य वह गुरू भी कर सकता है जो अपने शिष्य की उपलब्धियों और सम्भावनाओं से परिचित हों।

परन्तु पूर्वजों से प्राप्त उत्ताराधिकार (संचित पुण्य) की सीमा के विषय में तुम्हें कोई ज्ञान नहीं है, उस पर तुम नहीं निर्भर हो सकते हो। फिर तुम यह भी नहीं जानते हो कि गुरू कहाँ मिलेंगे जो कि विश्वसनीय प्रत्याभूति या स्वीकार्य ज़ामिन हो सकें। ऐसे गुरू वास्तव में दुर्लभ हैं। इसलिये, प्रभुकृपा अर्जित करो और विपत्ति में ओवर ड्राफ्ट (जमा से अधिक धन) निकाल सकने की क्षमता प्राप्त करो यही सर्वोत्तम उपाय है। तुम्हारी साधना जितनी व्यवस्थित और सफल होगी उतने ही तुम स्वयं के लिये, समाज के लिये, उपयोगी हो सकोगे।

चूंकि यह सत्य साई आदर्शों के प्रचार और उन्नति के लिए कार्य करने वालों की कॉंफ्रेंस है, मैं कार्य के उन कुछ विवरणों के सम्बन्ध में चर्चा करना चाहता हूँ जिन्हें मैं आज की स्थिति में महत्त्वपूर्ण समझता हूं। सबसे पहले सत्य साई सेवा दल को ले लें। सभी राज्यों के एक समान परिचय चिन्ह (बिल्ला) एक समान आध्यात्मिक अनुशासन और अध्ययन का पाठ्यक्रम, व्यावहारिक प्रशिक्षण का समान पाठ्यक्रम जिसमें प्राथमिक सहायता, समाज सेवा आदि हों, रखना चाहिये। इस समय बम्बई, मद्रास, केरल, आँध्र और कुछ अन्य राज्यों में भी सेवा दल हैं। परन्तु प्रत्येक दल का प्रशिक्षण, बिना अन्य राज्यों के सेवा दलों के प्रशिक्षण की कोई जानकारी रखे ही, चल रहा है। दूसरे में महिला सत्संग को ले लें। भारतीय संस्कृति में माँ को प्रेम और श्रद्धा का पात्र मानकर महान आदर दिया गया है। वह गृहस्वामिनी होती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है, बच्चे की आदि गुरू होती है, जो इस प्राचीन देश की संस्कृति के उत्तराधिकारी को प्रेमपूर्वक उसके प्रथम विकास काल में ही हस्तांतरित करना प्रारम्भ कर देती है, माता-पिता ही सामाजिक व्यवहार के प्रथम उदाहरण होते हैं जिनका बच्चा अनुकरण करता है और वैसा ही बनने का प्रयत्न करता है। वे भक्ति और प्रपत्ति (शरणागति और समर्पण) की शिक्षा देते हैं; वे बच्चे के सतत् जागरूक नेत्रों के समक्ष शान्ति और प्रेम का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिये उन्हें इस संगठन द्वारा आयोजित आध्यात्मिक जागरण में अपना समुचित भाग लेने के लिये उत्साहित किया जाना चाहिये। सहनशीलता और विनम्रता के गुण इस उदीयमान पीढ़ी में, माताओं में साधना की भावना की वृद्धि करके, जागृत करना है वे ही 'धरती माता' माता हैं जो कि बीजों को अंकुरित करके उन्हे सुदृढ़ पौधों और वृक्षों का रूप प्रदान करती हैं। खारी मिट्टी में पौधे नन्हें-नन्हें रह जाते हैं और फसल भी बहुत कम ही उपजती है। अपने जीवन और शरीर को प्राप्त करने का एक मात्र उद्गम स्थान उसकी अपनी माता ही होती है। इसलिये माता को मन और शरीर दोनों से सशक्त होना चाहिये, उसे संस्कृति से समृद्ध, चरित्रवान, पवित्र विचारों, प्रेम और 'अर्पण' की भावना से पूर्ण होना चाहिये। अच्छी मातायें अच्छे राष्ट्र का निर्माण करती हैं। माताओं को त्याग, योग, भक्ति, अनासक्ति, अनुशासन और भक्ति का भण्डार होना चाहिये। उनके कार्य इन्हीं तीन अन्तःप्रेरणाओं पर आधारित होने चाहिये।

इस देश में समितियों की जगह-जगह स्थापना को छः वर्ष हो चुके हैं। उन्होंने सबसे प्रथम भजन या धर्मशास्त्रों के अध्ययन जैसे प्रारम्भिक कार्यों को हाथ में लिया; परन्तु जैसे-जैसे प्रत्येक समिति ने अन्यों के संपर्क से अनुभव प्राप्त किया उसके कार्यों में विविधता और गहराई आती गयी। इस कांफ्रेंस के बाद जब तुम अपने स्थानों को लौटो, तो वहाँ जाकर इस संभावना की खोज करो कि माताओं, बच्चों और युवकों के कार्यों को कितना और विस्तृत किया जाना है। महिला-विभाग को सशक्त बनाना है। जिन स्थानों में महिला

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सत्संग नहीं है, वहाँ प्रारम्भ करो और उसकी देख-रेख में बाल-विहार को चालू करो।

तीसरा नगर संकीर्तन। इस कॉंफ्रेंस में कुछ बड़बड़ाहट ऐसी भी सुनने में आयी है कि पदाधिकारियों और सदस्यों के लिये ४.३० प्रातः उठना और ओंकारम् सुप्रभातम् के बाद एक मील के लगभग सभी को साथ लिये हुये भजन गाते हुये सड़कों पर जाना अपेक्षाकृत कठिन है। सभी अच्छे कार्यों को कठिनाई झेलकर ही करना होता है। सुविधा और उन्नति का कोई मेल नहीं होता। ऋषियों ने सदा जीवन के कठिन मार्ग को ही अंगीकृत किया है। पाण्डवों की राजमाता कुन्ती ने भगवान् से यही प्रार्थना की कि उसपर लगातार विपत्तियाँ आती रहें जिससे उसका सम्पूर्ण जीवन एक सुन्दर अटूट भक्ति की शृंखला ही बन जावे। इसीलिये भगवान् सदा उसके मानस चक्षु के सम्मुख बने रहे। कठिनाइयाँ व्यक्ति को सदा सावधान और सज्जित रखती हैं। वे गुप्त शक्तियों, चातुर्य और बुद्धिमत्ता को प्रकाशित करती हैं। वे निष्ठा की जड़ें गहराई तक पहुंचाने वाली और सहनशीलता को दृढ़ करने वाली होती हैं। मुझे आश्चर्य हुआ जबकि यह प्रार्थना की गयी कि वह पदाधिकारियों को वर्ष भर में ६ कीर्तनों से आगे भाग लेने से छूट दे दी जाये। और यह उन लोगों से प्राप्त हुयी जो वर्ष भर में ६०० सिनेमा प्रदर्शनों को देखते हैं। यह तो सरासर अपमान की बात है कि इस प्रकार का प्रस्ताव लाया ही कैसे गया। ऐसे लोगों के लिये घण्टों बैठे ताश खेलते रहना कदाचित् अधिक पवित्र धर्मकार्य है। किसी ने एक दूसरी आपत्ति, स्त्रियों के इतने तड़के प्रातःकाल नगर की गलियों में घूमने पर उठाई। कहा गया कि यह तो उनके लिये बड़ी अपमान जनक बात होगी। क्या इन महिलाओं को सिनेमा टिकट प्राप्त करने के लिये घण्टों पंक्ति में खड़े रहना अपमान जनक या अशोभनीय नहीं होता? अथवा, एक बस स्टैंड पर आने वाली गाड़ी, जिसमें उन्हें भी स्थान मिल सके, की प्रतीक्षा में खड़े रहना अशोभनीय नहीं लगता है? कदाचित् नहीं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कीर्तन तो सुनने वाले और गाने वाले दोनों को आनन्द प्रदान करता है। यह तो स्वयं अपना पुरस्कार है। इसमें अपमान जनक कुछ भी नहीं है; यह तो समाजसेवा और आत्मसेवा का सर्वोत्तम प्रकार है। इसमें संदेह या संकोच न करो। यदि कोई साथ नहीं देता है तो अकेले ही जाओ। इस संसार में भी तुम अकेले ही आये थे और अकेले ही यहाँ से जाना भी होगा। फिर जब तुम अपने गाँव या मोहल्ले में कीर्तन करते हो और साथी नहीं जुटते हैं तो क्यों पश्चाताप या खेद अनुभव करते हो। यही बात एक गली से दूसरी गली में कीर्तन करते हुये जाने के संबन्ध में भी सोचो। लोग तुम्हारी खिल्ली उड़ा सकते हैं, तुम्हें पागल कह सकते हैं, तुम्हारे उद्देश्यों पर इंकार कर सकते हैं। परन्तु तुम डटे रहोगे तो वे शीघ्र ही देखेंगे कि तुम कितने स्वस्थ और प्रसन्न कितने पवित्र हो। धीरे-धीरे वे भी तुम्हारे आस-पास एकत्रित होने लगेंगे और भगवान् के मार्ग पर चल पड़ेंगे। पुरुष या स्त्री का चाहे वे पति-पत्नी ही क्यों न हों, आध्यात्मिक भाग्य पृथक-पृथक होता है; प्रत्येक अपनी-अपनी गति से उस ओर बढ़ता है। वे सांसारिक मामलों में चाहे जितने परस्पर सम्बन्धित या अन्योन्याश्रित क्यों न हों, आध्यात्मिक मामलों में हर एक को अपना-अपना मार्ग स्वयं अपनाना पड़ता है। घर को सामंजस्य और सौमनस्यता का अड्डा बनाओ, तब गाँव में भी शान्ति रहेगी; राज्य में शान्ति होगी और राष्ट्र सुखी होगा; और संसार में सुख-समृद्धि होगी।

जब तुम साधना का जीवन व्यवतीत करने लगोगे तो तुम्हें विभिन्न दिशाओं से आये विरोध का सामना करना पड़ेगा। परन्तु इन्हें कुछ महत्त्व मत दो। सबसे पहले तो तुम्हारे निकट संबंधी ही तुम्हारा ध्यान उस ओर से हटाकर सांसारिक उपलब्धियों की ओर आकर्षित करेंगे। कृष्ण का तो सगा मामा ही उनका घोर शत्रु था। राम की एक सौतेली माँ थी जिसने उन्हें वन में निर्वासित कर भेजा था। झक्कियों या आलोचकों की हरकतों से अप्रतिभ अथवा भयभीत मत होओ; चाहे वे तुम्हारे परिवार में से क्यों न होवें। इसके पश्चात् जनमत भी होता है, जो तुम्हारे आध्यात्मिक पथ की निन्दा कर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सकता है, तुम्हारा उपहास अथवा इससे भी अधिक कठोर उपाय से तुम्हें विच-लित कर सकता है। शिशुपाल, जरासंध और निन्दकों की संतति ने भगवान् को अपने पथ से विचलित करने का भरसक प्रयास किया जबकि वे यहाँ कृष्ण के रूप में अवतरित हुये थे। दूसरी बाधा तुम्हें उन भगवद्भक्तों से प्राप्त होगी, जो तुम्हारे नाम-रूप से भिन्न भगवान् के किसी अन्य नाम-रूप की उपासना करते हैं। यह नाम-रूप चाहे उनको पारिवारिक उत्तराधिकार से प्राप्त हुआ हो, अथवा उन्हीं की अपनी कल्पना या पसन्दगी का हो। ऐसे लोग भी अन्य नाम-रूप से उपासना करने वालों का विरोध और उत्पीड़न करते हैं। एक शेर का पीछा करते हुये मर जाना कहीं अधिक श्रेष्ठ है, अपेक्षा उस जीवन के जिसमें एक लंगड़े गीदड़ का शिकार कर लेने का गर्व किया जावे।

लोगों के नैतिक पुनरुत्थान में स्त्रियाँ एक महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती इसी से महिला सत्संग पर अधिक आग्रह करता हूं। वे बच्चों को ादान और वीरता की कहानियाँ महाकाव्यों और पुराणों से सुना सकती । इनमें ऋषियों संतों के जीवन तथा भगवान् को प्राप्त करने के लिये उनके त्याग-तपस्या का वर्णन होवे। जिस प्रकार उन्होंने सत्यं, शिवं, सुन्दरम के दर्शन और प्राप्ति की और सर्वत्र उसी का दर्शन किया, जिस प्रकार उन्होंने विश्व के रहस्यों और सभी नियमों के ऊपर नियमों को जाना जिससे व्यष्टि और समष्टि संचालित किये जा रहे हैं उसका वर्णन बच्चों को सुनाया जावे। ईसा ने कहा था कि 'बच्चों को मुझ तक आने दो। उनमें अद्भुत के प्रति जिज्ञासा, सरलता और ताजगी होती है, उनमें सत्यता और ज्ञान और शक्ति के प्रति श्रद्धा होती है। उन्हें राम, कृष्ण, नचिकेता, ध्रुव, उर्मिला, सीता, हनुमान, अर्जुन और अन्य इसी कोटि के भक्तों के चरित्र, जिनको वे अपने मस्तिष्क में चित्रित कर सकें, सुनाओ। इन्दिरा देवी ने अभी कहा है कि लोग अपने ही बच्चों को प्यार करते हैं, दुलारते हैं; परन्तु अपने पड़ोसियों के बच्चों को प्यार नहीं करते हैं। सच्चाई तो यह है कि पड़ोसियों के बच्चों को "शैतान

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के बच्चे" मानकर व्यवहार किया जाता है। 'मेरे' 'तेरे' की भावना ही व्यक्ति के ग्रौर ग्राध्यात्मिक उन्नति के बीच बाधा की दीवाल बनी रहती है।

सभी का आन्तरिक ग्राधार वही दैवत् तत्त्व है, चाहे वे सब हमारे सगे-सम्बन्धी हों, छोटे या बड़े हों या शत्रु ही क्यों न हों। ग्रपनी चेतना का विस्तार उसकी सीमा तक बढ़ा दो। सच कहूँ तो इस विस्तार की कोई सीमा ही नहीं हो सकती है। इसे किश्तों में, ग्रथवा, जितना नकद उतना ग्रभी शेष बाद में, इन पद्धतियों से काम नहीं चल सकता। यह तो सम्पूर्ण रूप से, ध्यान, जप ग्रौर नाम स्मरण के द्वारा, ग्रन्तःकरण को बदलने से ही संभव है। ग्रपने ग्रन्दर जो परात्पर ब्रह्म-ज्योति स्थित है उसका नित्य निरंतर ध्यान करके अपनी महिमा को ग्रपने प्रति प्रकट कर लो तभी तुम सेवा ग्रौर उद्धार कार्य के लिये प्रभावशाली मंत्र बन सकोगे, ग्रपने चतुर्दिक एकत्रित निराश ग्रौर संकट ग्रस्त लोगों की आशा का केन्द्र बन सकोगे वह दैवत् हृदय में अंकुरित होता है, चेतना में वृद्धि को प्राप्त होता है, ग्रौर मनुष्य की शारीरिक और मानसिक क्रियाग्रों में फलता-फूलता है। चूंकि तुम अपना सर्वोत्तम ग्रधिकार दूसरों के लिये जिनमें वही तत्त्व है देना नहीं चाहते, इसीलिये वह 'दैवी तत्त्व' तुम्हारे ग्रनुभव की परिधि के बाहर बना हुग्रा है। जब तुम देने को तैयार होगे तभी पा भी सकोगे, ग्रन्यथा नहीं।

हम देखते हैं कि उच्च शिक्षा प्राप्त लोग जैसे ग्राई० ए० एस० ग्रथवा ग्राई० पी० एस० लोगों में बहुत कम ग्रपने वृद्ध माता-पिता की सहायता करते हैं। जो सुविधायें वे स्वयं भोग करते हैं ग्रथवा उनके ग्रधिकार में है उसका बहुत ही कम अंश उन्हें देते हैं। प्रत्येक ग्रपने जीवन स्तर को उठाने, दृढ़ करने में डूबा हुग्रा है। इस स्तर की मदिरा को वे कब तक घुटकते रहेंगे? ऐसा भी एक दिन ग्रावेगा जब उन्हें धूर्तता ग्रौर मक्कारी से ग्रौर दूसरों का उत्पीड़न करके उन पर दुख ग्रौर बहुतों पर संकट डालकर, इन जोड़े हुए भण्डार गृहों, वैभवों को त्याग कर उनसे अंतिम नमस्कार कर बिदाई लेनी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

होगी। माता-पिता की, बड़ों की और दुखियों की सेवा से सभी को आनन्द और सन्तोष प्राप्त होते हैं। सद्गुण और धार्मिकता तुम्हारे साक्षी होकर तुम्हारे अंतिम न्याय के दिन तुम्हारे सहायक होंगे। न तो तुम्हारा बैंक में जमा धन और न चुकता किया गया आयकर तुम्हारा समर्थन करेंगे। तुम्हारा उच्च पद और वह शक्ति जो तुम्हें मनुष्यों और वस्तुओं पर शासन करने को प्राप्त थी, कोई भी तुम्हारे काम नहीं आवेंगे।

अब मैं यहीं पर यह चेतावनी देकर समाप्त करना चाहता हूं। अपने लक्ष्य के विषय में कोई संदेह संकोच मत रखो। अपनी परम वास्तविकता को प्राप्त करने की आकांक्षा रखो। उसी आकांक्षा से ही तुममें दृढ़ लगन उत्पन्न होगी; भगवत्कृपा प्राप्त होगी जो सभी बाधाओं का अंत कर देगी। स्वय दूसरों के लिये एक उदाहरण बनो। बिना व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किये और उचित अधिकार पाये इधर-उधर परामर्श बिखेरते मत फिरो। पर छिद्रा-न्वेषण मत करो, अपने दोषों को ही खोजो। प्रेम करो, सहयोग करो, सहायता करो, सेवा करो। अपने गाँव या मोहल्ले की सत साई इकाई के पदाधिकारी, नेता, सदस्य के नाते यही तुम्हारा मुख्य कर्त्तव्य है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३७ क्रान्तियाँ और प्रस्ताव

(प्रशान्ति निलयम् १४-१-१६७०)

पत्रा वर्षों को घुमाता है; उसके अनुसार आज वर्ष का प्रथम दिवस है; अर्थात् कलियुग को प्रविष्ट हुये ५०७८ वर्ष व्यतीत हो गये हैं। परन्तु काल के बीतने की गणना तो इस अवधि में सम्पन्न हुये कार्य के परिमाण से की जानी चाहिये; न कि उन चक्करों से जो पृथ्वी ने सूर्य की परिक्रमा में लगाये हैं। प्रत्येक व्यक्ति के लिये नूतन दिवस आता है जब कि वह सूर्य की एक प्रदक्षिणा पूर्ण कर लेता है; सूर्य अर्थात् एक ज्योतिर्मय जागृत चेतन बुद्धि, जो व्यक्ति को विवेक और वैराग्य प्रदान करने में समर्थ है।

उत्साही साधकों ने सम्पूर्ण ज्ञान की कुंजी को प्राप्त करने की चेष्टा की है, यह वह है कि जिसे जानने से अन्य सभी कुछ ज्ञात हो जाता है; यानी भगवान् जो कि इस विश्व के कण-कण में व्याप्त है। उसका वर्णन अनिर्वचनीय, कल्पनातीत और बुद्धि से परे कहकर किया गया है। यही सर्वोत्तम है, उनलोगों ने स्वयं ही स्वीकार किया है कि उस 'देव' की कल्पना मानवाकार में की गयी है जिससे मनुष्य इसे सरलता से हृदयंगम कर सके, और उस तक पहुंच सके और उस चिन्तन से आनन्द प्राप्त कर सके। मनुष्य केवल मानवीय गुणों और उपलब्धियों के विषय में विचार कर सकता है; वह इनको सीमा तक विस्तार दे सकता है; इससे उत्पन्न मनचाही मात्रा को हृदय में धारण कर सकता है जो छलककर बाहर भी आ सकती है।

अन्य देशों में, मनुष्य की अन्य जातियों में प्रायः एक ही धर्म का प्रचलन है, एक विधि, एक पूज्य देव, एक ही पूजन विधि होती है। इसकी जड़ें गहराई

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तक गयी हुयी हैं और फलित भी हुई हैं। यह धर्म चाहे देशी हो अथवा बाहर से आयातित हो, परन्तु लोगों ने इसे आत्मसात् करना सीख लिया है; वे अन्य धर्मों से विदकते हैं। इसके प्रतिकूल भारत में युगों-युगों से अनेक धर्म, अनेक मार्ग हैं जो मानव की सभी प्रवृत्तियों को परिलक्षित करते हैं जो उनको बाहर-भीतर क्रियाओं में प्रवृत्त करते हैं। इसीलिये बहुत से विकल्प होते हैं जिनमें से मनुष्य अपने आध्यात्मिक विकास की स्थिति के अनुसार चुन लेता है। उस पर अपने चरण दृढ़ता से जमाकर वह ऊपर अधिक ऊँचाइयों तक अपने को उठा सकता है। भारतीय संस्कृति तो एक महासागर के समान है जिसमें सभी देशों की सभी नदियों का जल आकर सम्मिलित होता है; सभी महाद्वीपों पर मँडराने वाले बादलों का जल भी सम्मिलित होता है। महासागर जो सभी नदियों का गन्तव्य और साधन है विष्णु की शैय्या का स्थल है। इसीलिये विष्णु भगवान् का वह प्रतीक है जो ब्रह्माण्ड और उसके परे भी भगवान् के अस्तित्व का द्योतक है।

'ऋतम्' या धर्माचरण ही विष्णु का निःश्वास है क्योंकि इससे नक्षत्रों को पोषण प्राप्त होता है, समाज में स्थायित्व आता है, इससे प्रगति का निश्चय होता है। त्रिदेवों में विष्णु वह मूर्ति है जो रक्षण, पोषण, स्थायित्व-दायिनी और शक्ति-प्रदायिनी क्रियाओं की अधिष्ठाता है। इसलिये प्रायः विष्णु को ही अवतार लेना पड़ता है जिससे संसार की रक्षा और उद्धार हो सके। उन्हें पुनः 'ऋतम्' (धर्माचरण और नैतिकता) की स्थापना करनी होती है; जिससे संसार की नौका एक समतल धुरी पर संतरण करती हुयी मुक्ति के बंदरगाह तक पहुंच सके जिससे कि सम्पूर्ण विश्व ही प्रशान्ति निलयम् में परिवर्तित हो सके।

भारत के लिये हिमालय उसकी ढाल, उसका कवच और मुकुट है। उसकी श्रृंखला शान्त, शीतल, हर्षातिरेक और वैभव का चिन्ह है, एक आह्वान है कि मानव ऊँचाइयों का आरोहण करे। हिमालय से गंगा, यमुना, सरस्वती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की त्रिधारा जो आध्यात्मवाद की त्रिवेणी है गंगा (आध्यात्मिक अन्वेषण) यमुना (मानस शुद्धीकरण) सरस्वती (बौद्धिक स्वच्छता), प्रवाहित होती है। गंगा कभी सुखती नहीं है; यह शुद्ध, पूर्ण और समस्त बैक्टीरिया कीटाणुओं का नाश करने में समर्थ है जो बीमारी के वाहक होते हैं। जब तक इस देश में गंगा की धारा बहती है भारत की संस्कृति जीवित और सक्रिय रहेगी; और गंगा कभी सूखने वाली नहीं है। यह पीढ़ी दर पीढ़ी लोगों की पिपासा को शान्त करती रहेगी। जो इसके लिये प्रयत्नशील हैं उन्हें यह अमरत्व का वरदान भी देती रहेगी।

इस सस्कृति ने आचरण पर अनेक सीमायें और प्रतिबन्धों की व्यवस्था की है। जिन-जिन धाराओं से, मनोविकारों और उद्वेगों का प्रवाह होता है उन्हें समुचित मोड़ देने और रोक देने का आदेश धर्मग्रन्थों में दिया गया है। इनसे व्यक्तित्व में निखार आता है और वह इन्द्रियों की दासता से, खुरट से मुक्त हो जाता है। वे व्यक्ति के भोजन, निद्रा, मनोरंजन, वस्त्र, वार्तालाप और साथियों के चुनाव को भी नियमित और सीमित करते हैं। जीवन की प्रत्येक गतिविधि और स्थिति, मानव के प्रत्येक दल के लिये सांस्कृतिक प्रति-बन्ध और विधि-निषेध हैं। इन सबका उद्देश्य यही है कि सहानुभूति के क्षेत्र का विस्तार और उसकी गहनता में तब तक निरन्तर वृद्धि के लिये सतत् प्रयास किया जाता रहे जब तक कि व्यक्ति का प्रेम सृष्टि की सबसे बाहरी सीमाओं तक न पहुंच जावे।

जब इस विश्व में व्याप्त और इस विश्व पर शासन करने वाले संयोजक और संगठन के सिद्धान्त को मानवाकार में चित्रित किया जाता है, तभी मनुष्य इसको समझ पाता है और उस तक पहुंचने का प्रयास करके लाभा-न्वित होता है। इस शाश्वत विश्व का मानवीकृत रूप कृष्ण है। जब हम कृष्ण की कल्पना अपने ग्वालों के बीच, उनके साथ खाते, पीते, हँसते और हँसाते हुये, नटखटपन करते हुये और अपने चारों ओर आनन्द बिखेरते हुये

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

साथी के रूप में करते हैं, तो हमारे मन में कृष्ण के प्रति एक पारिवारिक सम्बन्ध की कल्पना होकर वर्तमान में वियोग की पीड़ा का सा अनुभव होने लगता है, यही अनुभूति हमें उस पार पहुंचने में सहायक होती है। जहाँ कहीं यह सखा-भाव प्रकट होता है वहीं 'दिव्य प्रेम' की एक चिनगारी जग जाती है। जहाँ कहीं यह रोमाञ्चकारी सिहरन अनुभव की जाती है वहीं व्यक्तिगत सीमाओं के बाहर एक पग आगे उठ जाता है। एक समय में एक सही और दृढ़ पग उठाना—इसी प्रकार यह तीर्थ यात्रा आगे-आगे बढ़ती जाती है।

अर्जुन ने प्रार्थना की कि कृष्ण उसके समक्ष मित्र और सखा के रूप में प्रकट हों; न कि व्यापक नियन्ता, परात्पर ब्रह्म और भूत, भविष्यत्, वर्त्तमान सृष्टि के आधारभूत मूलतत्त्व के रूप में। वे सखा-भाव से साहचर्य-सुख को लालायित थे उन्हें लीन होने की उतनी आकांक्षा नहीं थी। भगवत् तत्त्व की कल्पना प्रत्येक कष्ट के आन्तरिक आधार और वाह्य रक्षक कवच के रूप में, ग्रह नक्षत्र में, धूलि के और बादलों के प्रत्येक कण में, जैसा कि किसी भी व्यक्ति में विद्यमान है एक ऐसी साधना है जिससे व्यक्ति का व्यक्तित्त्व अभिभूत हो जाता है; इसीसे रामकृष्ण परमहंस और अन्य भी भगवान् से भक्त के रूप में सम्बन्ध बनाये रखने की प्रार्थना करते थे, वे लीन होकर यह आनन्दानुभूति नहीं खोना चाहते थे।

तुम मूर्ति के समक्ष बैठकर स्तुति करते हो, पूजा की धूप देते हो, परन्तु तुम मूर्ति में व्यापक 'दैवी तत्त्व' के महत्त्व को नहीं ग्रहण कर पाते हो और न उसको मूर्ति में देखने का प्रयत्न ही करते हो। भगवान् की इच्छा को जानने की चेष्टा करो, भगवान् की आज्ञा का पता लगाओ, अनुमान करो कि क्या करने से वे पूर्णतया प्रसन्न व संतुष्ट होंगे, उसी के अनुकूल अपने जीवन को नियमित करो। यह संकल्प ही तुम्हारे नव वर्ष दिवस का संकल्प हो जाय। वाह्य प्रकृति की फँसाने वाली उलझनों की पकड़ में न आओ। लोभ और घृणा के निरन्तर प्रयोग से अपने हृदय को कठोर मत बना डालो। इसे प्रेम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

से कोमल बनाओ, जीवन ग्रौर मनन की पवित्र ग्रादतों से इसे स्वच्छ करलो। इसे ग्रपने भगवान् का मन्दिर समझ कर प्रयोग करो। यह सोचकर कि वह शक्ति, बुद्धि और ग्रानन्द का स्रोत तुम्हारे ग्रन्दर ही है, सदा प्रसन्न रहो। घोषणा कर दो कि तुम अजेय और स्वतन्त्र हो, तुम्हें भय या प्रलोभन द्वारा अनुचित या गलत कार्य करने को वाध्य नहीं किया जा सकता। जब तक तुम्हारे ग्रन्दर "मैं यह शरीर हूँ" की लेशमात्र भावना है तब तक तुम्हें स्वयं भगवान् का ग्रन्वेषण करना है; तुम्हें दर्पण के पास जाना है; दर्पण तुम्हें तुम्हारा वास्तविक रूप दर्शाने के लिये तुम्हारी ग्रोर नहीं गतिशील होगा। काम ग्रौर क्रोध के दोनों कपाट खोल दो, लोभ की साँकल हटा दो तभी तुम मोक्ष की पवित्र भूमि (सीमा) में प्रवेश पा सकोगे।

लोभ मनुष्य को नीचे की ग्रोर घसीटने वाली महान बुराई है। जब रावण मृत्यु शैय्या पर था, राम ने ग्रपने भाई लक्ष्मण को उससे सफल राज-नीति के सिद्धान्तों और रहस्यों की शिक्षा लेने के लिये भेजा। रावण ने उन्हें उपदेश दिया कि जो राजा विजय का उत्सुक हो उसे अपने ग्रन्दर से, ज्योंही लोभ सर उठावे उसका दमन कर देना चाहिये ग्रौर परोपकार के छोटे से छोटे अवसरों का सदा स्वागत करना चाहिये ग्रौर इसमें किसी प्रकार की टालमटोल या शिथिलता नहीं करना चाहिये। उसने यह शिक्षा बड़ी कठोर ग्रौर कटु अनुभवों के बाद सीख पायी थी। इन्द्रियों से आसक्ति ग्रौर उनकी भोगेच्छाओं की पूर्ति करते जाने से लोभ की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। उन्हें उनकी उचित सीमा के अन्दर और उचित स्थान पर ही रखो; वे ज्ञान प्राप्ति के द्वार हैं उन्हें दूषित करने का साधन मत बनने दो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३८ अहंकार और पतन

(वृन्दावन, मैसूर राज्य भ्रमण कान्फ्रेंस १३-१-१९७०)

जिला प्रेसीडेन्टों ने अपने जिलों में हुयी प्रगति तथा अपने अधिकार क्षेत्र में विभिन्न इकाइयों के कार्यों की आख्याओं को पढ़ा। परन्तु, अधिकांश में ये, आख्यायें जल्दी में तैयार की गयी और अपने निज के निरीक्षण और अनुभवों से रहित थीं, चूंकि आंखा देना है इसीलिये जैसे-तैसे कुछ लिख लिया गया था। वास्तविक और हार्दिक कार्य तो राज्य में कुछ थोड़े ही स्थानों पर चल रहा है। तुमने मुझे प्रतिनिधियों के मध्य, शामियाना के पिछवाड़े, खड़े देखा होगा कि कभी मैं इधर कभी उधर विभिन्न स्थानों से निरीक्षण करता हुआ रिपोर्टों का पढ़ा जाना सुन रहा था। मंच पर मेरे लिये एक कुर्सी रखी है, परन्तु मैं तो इस पर बहुत थोड़े समय तक ही बैठा हूं; क्योंकि मेरा स्थान तो तुम्हारे मध्य में है, तुम्हारे साथ है जहाँ कहीं भी कार्य हो रहा हो। इसी से मैं तुम्हारे बीच घूमता रहा और तुम्हारी पीठ पीछे भी खड़ा हुआ हूं। यह सब तुम्हें यह दिखाने के लिये है कि जब तुम अपने स्थानों पर भी भजन या कुछ अन्य इसी प्रकार के भक्ति कार्यों में संलग्न होते हो जैसे बच्चों की या बीमारों की या निर्धनों की सेवा, तो मैं अलग और विशेष आसन पर जो दूर रखा होता है नहीं बैठता हूं। मैं तुमसे पृथक किसी उच्च आसन पर, जो तुम मुझे भेंट करते हो, आसीन होता हूं, ऐसा तो विश्वास ही मत करो। मैं तुम्हारा अंश, तुम्हारा साथी, और तुम्हारे सभी क्रिया-कलापों में सहभागी, सहभोक्ता, प्रेरक और निर्देशक सभी कुछ हूं जब तुम जिसकी मांग करते हो अथवा तुम्हें निर्देशन या प्रेरणा की आवश्यकता होती है वह मैं देता हूं। इसीलिये मैं जानता हूं कि उन कार्यों में से, जिनका तुमने अपनी रिपोर्टों में उल्लेख किया है, अधिकांश नाम मात्र के और छिछले हैं उनमें वास्तविक उत्साह और निष्ठा नहीं थी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आध्यात्मिक यात्रा का एक ही राज मार्ग है प्रेम—सभी जीवों को उसी 'देव' की अभिव्यक्ति मानकर प्रेम करना क्योंकि वही तो व्यक्ति का मूलाधार है। इसी विश्वास से तुम्हारे अन्दर भगवान् की सतत् उपस्थिति रहती है और उस भगवान् तक तीर्थयात्रा करने का आवश्यक उत्साह और साहस की प्राप्ति होती है। अनेक आख्याओं में नगर संकीर्तन प्रारंभ किये जाने का उल्लेख है। परन्तु बंगलौर जैसे महत्त्वपूर्ण नगर में साधना का यह महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम विशेष अवसरों पर और कभी-कभी ही आयोजित किया जाता है। कुछ लोग तो झक्की नास्तिकों की आलोचना और व्यंग बाणों से भयभीत हैं और इसीलिये वे लोग प्रातःकाल सड़कों पर, दल बनाकर, भगवान् की महिमा गाते हुये निकल नहीं सकते। जब तुम्हारे हृदय में उस निर्भीकता की मूर्ति आसीन है तो फिर भय की हल्की कंपकपी का तुम पर क्यों प्रभाव पड़ता है ? यदि अन्य लोग विद्रूप और उपहास के भय से तुम्हारा साथ नहीं देते हैं तो भगवन्नाम गाते हुये अकेले ही निकलो। तुम इस संसार में अकेले आये, कोई साथी तो नहीं था ? जीवन की अवधि में बहुत से सगे-संबंधी जुड़ गये, स्त्री और बच्चे, मित्र और अनेक परिचित स्वतः तुमसे संयुक्त होते गये। जब तुम अपने उसी देश को लौटे, जहां से आये थे, तो भी उस प्रदेश की ड्योढ़ी तुम अकेले ही लाँघते हो; उस समय भी तुम्हारा कोई साथी नहीं होता। इसलिये इस यात्रा में भी जिसे नगर संकीर्तन कहा जाता है, ऐसा ही होने दो। अकेले ही सड़क पर निकल जाओ, यदि कोई सगा-संबंधी साथ आता है तो उसे साथ ले लो, उनको साथ लेकर अप्रभावित और विरक्त भाव से चल दो। अपने मधुर एकान्त में प्रसन्न रहा करो। अंत में अपने घर में इस संतोष को लिये हुये लौटो कि जहाँ तक तुम्हारा काम था, काम हो गया और भली प्रकार हो गया। साथी लोग चाहे तो तुम्हें पागल समझ कर हंसलें; परन्तु यह 'पागलपन' बड़ा संक्रामक होता है और वहुत शीघ्र ही अश्रद्धालु लोग भी इसी मार्ग में दीक्षित हो लेंगे। किसी भी संगठन में ऐसे पदाधिकारी न रखे जावें जो नगर संकीर्तन दल में न शामिल होते हों। उन्हें कोई अड़चन, परेशानी, संकोच या संदेह लेशमात्र भी नहीं होनी चाहिये।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कुछ लोगों ने सुझाया कि इन संगठनों के प्रेसीडेन्टों को सक्षिप्त नव-चेतना पाठ्यक्रम का प्रशिक्षण दिया जावे जिससे वे अपने कर्त्तव्य (इकाइयों को साधना और सेवा काम में उत्साहित करना) अधिक दक्षतापूर्वक संपादित कर सकें। यह तो लगभग वही बात हुयी कि पूरे समय के पेशेवर पुजारी लोगों को मंदिर में पूजाकार्य करने का भगवान् की भक्ति करने का प्रशिक्षण दिया जावे। यह कोई यांत्रिक क्रिया नहीं है जो कि कक्षा के पाठ्यक्रम और टायमटेबिल के अनुसार चलाई जावे। यह तो स्वेच्छा से अंत: प्रेरणा, जो हार्दिक विश्वास और आकांक्षा से उत्पन्न होती है, के अनुसार होना चाहिये। यदि पुजारियों या मंदिर के अर्चकों को प्रार्थना-पूजा का प्रशिक्षण दिया जावे तो कल को यह प्रश्न भी उठाया जा सकता है कि भगवान् को भी इस बात का प्रशिक्षण दिया जावे कि वे भी भक्तों की पुकार का उचित मात्रा में, उचित समय की मर्यादा के अन्तर्गत उत्तर दिया करें। नहीं, प्रेसीडेन्ट और अन्य लोग उन स्थानों पर इसलिये हैं कि लोग उन्हें धार्मिक और उस पद को उपयुक्त मानते हैं जो कि अपने भाई बहिनों की सेवा लगन और सक्षमता से करते हैं और उनका जीवन अन्य लोगों के लिये अनुकरणीय है। उनकी आध्यात्मिकता की ऊंचाई में, जहाँ तक भी वे पहुँच पाये हैं, प्रशिक्षण और उपदेश कितनी वृद्धि कर सकेंगे? यह और अन्य इसी प्रकार के सुझाव इसी लिये उठाये जाते हैं कि तुम में से अधिकांश इस संगठन और संस्था के मूलभूत उद्देश्यों को पूर्णतया नहीं समझ पाये हैं। उद्देश्य, कार्यकलापों और इकाइयों और केन्द्रों की संख्या में सही वृद्धि करना मात्र नहीं है कि विश्व के मानचित्र पर उन स्थानों को लाल कुंडली से घेर दिया जावे जहां-जहां ये भजन मण्डलियां या सत्संग के केन्द्र स्थापित हो चुके हैं और ऐसी लाल कुण्डलियाँ अधिक से अधिक स्थानों पर दिखाई पड़ें। मुख्य उद्देश्य तो साधकों को उत्साहित करने का है कि वे और लोगों को उत्साहित करने के लिये स्वयं को आदर्श रूप में उपस्थित करें।

योजना 'व्यक्ति के आन्तरिक सुधार और पुनर्निर्माण' की है न कि "बाह्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सुधार और बाह्य निर्माण" की है। यह शब्द निर्माण का खेल नहीं है जहां एक बड़ा शब्द बनाते-बनाते ही उसके पूर्व कई छोटे-छोटे तीन अक्षरों वाले शब्द बन जाते हैं और प्रतिपक्षी विजय की घोषणा कर देता है। यह तो विश्व निर्माण का कार्य है जहाँ अनेक ईमानदार लगन वाले व्यक्तियों को लेकर नया समाज बनाना है। इन इकाईयों के पदाधिकारियों की निर्वाचन राज-नैतिक दृष्टिकोण से न किया जावे जिसमें पदाधिकारियों की आर्थिक स्थिति, उनकी सामाजिक अथवा प्रशासकीय स्थिति का बड़ा प्रभाव पड़ता है। इससे झगड़े, ईर्ष्या, दलबन्दी उत्पन्न हो जाते हैं जैसा कि अनेक इकाइयों में आज दिन हो रहा है।

ऐसे स्त्री पुरुषों को पदाधिकारी चुना जावे जिनका वर्त्तमान अवतार, उसके नाम और इस रूप में अटल विश्वास हो। इससे इकाइयां बाद में उत्पन्न होने वाली अनेक उलझनों से बच जावेंगी। क्योंकि इससे भिन्न निष्ठा वाले व्यक्तियों में अपनी भिन्न नाम-रूपों के प्रति निष्ठा के कारण अंतः विरोध-भी प्रारंभ हो सकता है। इन इकाइयों के पदाधिकारी तो अपनी निष्ठा और आकाँक्षा के बल पर नेतृत्व करते हैं न कि अपने 'वोटों' और 'नोटों' के बल पर। उन्हें जो आनन्द प्राप्त होता है वही उनका पुरस्कार है। जब ऐसे लोग जिन्हें न कोई ज्ञान है और न दूर दृष्टि ही है, सत्ता और पद पर आरुढ़ हो जाते हैं तो उद्विग्नता और गड़बड़ी का ही राज्य हो जाता है। वैराग्य, सादा जीवन, सतत् साधना, सदस्यों की इकाइयों की सदस्यता की योग्यतायें हैं। त्याग करो, न कि संग्रह, कृपा प्राप्ति का मार्ग यही है। अबूबेन अढेम को बाद में पता लगा कि उसका नाम उस सूची में लिखा है जिन्हें भगवान् प्यार करता था; यद्यपि उसका नाम उस सूची में नहीं था जो कि भगवान् को प्यार करते थे। क्योंकि वह भगवान् को नहीं मनुष्यों को प्यार करता था। कृपा प्राप्त करने के लिये इतना पर्याप्त होता है।

टंकी को जल से भर लो। फिर, जब टोंटी घुमाओगे तो बाल्टियां भर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ही जावेंगी । भक्ति और प्रेम को उपजाओ, तब तुम्हारे सभी कार्य दया और उदारता से संपृक्त रहेंगे; उनसे आनन्द और शान्ति की स्वर्णिम फसल उत्पन्न होगी । पानी शुद्ध होना चाहिये । प्रेम निस्वार्थ और भेद रहित सार्वजनीक होवे । तुम स्वयं निर्णय कर सकते हो कि क्या तुम्हारा प्रेम संकुचित या विस्तृत है तुम्हारी भक्ति छिल्छली या गंभीर है । क्या तुम अपनी उपलब्धि से स्वयं संतुष्ट हो; इसकी स्वयं जांच करो और अपने आप निर्णय दे लो, अपने ही विवेक को काम में लाओ । उद्देश्य की शुद्धता ही इस बात की प्रत्याभूति है कि तुम्हें शान्ति प्राप्त होगी । एक अशान्त आत्मा अत्याचारी साथी होता है । धार्मिक कृत्य का कोई बुरा प्रभाव शेष नही रहता है जो तुम्हारी नींद या स्वास्थ्य को अशान्त बना दे ।

"धार्मिकता हृदय की सुन्दर बनाती आचरण को,
आचरण के सौंदर्य से गृहधाम होता सौम्य है ।
सौम्यता गृहधाम की से राष्ट्र होते हैं व्यवस्थित,
और राष्ट्रों की व्यवस्था शान्ति लाती विश्व में है" ।।

इसलिये धार्मिक बनो, किसी से जाति, धर्म, रंग, पूजाविधि, सामाजिक स्थिति के आधार पर या उसकी आर्थिक स्थिति के आधार पर कोई भेदभाव या पक्षपात न करो । किसी को नीचा या घृणित मत समझो, सभी को अपने समान उसी दिव्य अंश को धारण करने वाला मानकर व्यवहार करो ।

इस संगठन की जड़ें खोखली करने वाली महान बुराई घमंड और ईर्ष्या में है । यदि कोई व्यक्ति यह घमंड दिखाता है कि समूचे दल में वही अकेला एक भजनों को गा सकता है, स्वाभाविक है कि दूसरे लोगों में रोष उत्पन्न होवे, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष और इसी प्रकार को निम्न प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो सकती हैं । केवल प्रेम ही हृदय से घमंड की निरंथक घासपात का उन्मूलन कर सकता है । सभी को भगवान् के भिन्न-भिन्न रूप मानकर प्रेम करो जो भिन्न-

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भिन्न अभिनय कर रहे हैं। बिना प्रेम का हृदय इतना ही सुनसान होता है जैसे कि भगवान् के मंदिर से विहीन नगर। सभी प्रकार के घमंडों से आध्यात्मिक उच्चता का घमंड अधिक विषैला होता है। यह तो व्यक्ति को अन्धा कर देता है और अंत में उसको पतन के गर्त में गिरा देता है। घमंड से सावधान रहना। सदा याद रखो तुम तो मेरे उद्देश्यपूर्ति धर्मसंस्थापन में एक यंत्र मात्र हो। इसलिये यंत्र की हैसियत से अधिकाधिक दक्षता प्रदर्शन के लिये अपने को तैयार करो। जो हाथ यंत्र को चालित करता है वह अच्छी तरह जानता है कि कैसे, कब, कहाँ यंत्र का प्रयोग करना है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

३६ राम और काम

(महिला सत्संग केन्द्रीय समिति का उद्घाटन बंगलौर १-२-१९७०)

विश्व इतिहास की इस महत्त्वपूर्ण घड़ी में, जब कि भय, चिन्ता, अन्याय और असमानता की आसुरी शक्तियां प्रबल हो रही हैं तो प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वह आध्यात्मिक शक्ति से सुसज्जित होवे जिससे वह इस झंझा-वात से पराभूत न हो जावे। यह एक आवश्यक और तात्कालिक कार्य है। और मुझे कहना ही पड़ता है कि इसमें भारत की महिलाओं को योगदान देना है, एक सेवा-कार्य करना है, एक महत्त्वपूर्ण भाग लेना है। उन्हें बच्चों के हृदय में भगवान् की प्रतिष्ठा करनी है और बच्चों की सहायता करनी है जिससे वे भगवान् को हृदय में सदा बनाये रखें। क्योंकि जिस पौष्टिक की मनुष्य को अपने स्वास्थ्य और प्रसन्नता बनाये रखने के लिये आवश्यकता है वह है भगवान् में अटल निष्ठा।

तुम मुझसे पूछ सकते हो, "अच्छा। ईश्वर है कौन?" पहले इसके कि तुम मुझसे यह प्रश्न पूछो, मैं चाहता हूँ कि तुम यह पूछो और उसका उत्तर भी ज्ञात करो, "मैं कौन हूँ ?" यह अवसर तुमको "शारीरिक और मानसिक क्रियाओं के जीवन" का अवसर एक लिफाफें में रखे पत्र के समान मिला हुआ है। आपको इस पत्र को लाल पेटिका में छोड़ देना है। यह लाल पेटिका प्रकृति (संसार, सृष्टि) है। परन्तु इस पर आपको दो पंक्तियाँ लिखना है जिसके विषय में अभी तुमको कुछ ज्ञात नहीं है। तुमको लिफाफे के ऊपर लिखना है जो तुम हो। अपना वास्तविक पता। और इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि यह पत्र कहां के लिये है, किस भाग्य को यह जीवन प्राप्त करेगा, वह पता जहां कि इस पत्र को पहुँचना है। जीवन के बारे में दो मूल प्रश्न हैं, कहां से?

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कहां को ? ग्रौर दोनों के लिये तुमने उत्तर नहीं खोज पाया है, यद्यपि तुम्हारी जिह्वा हजारों अप्रासंगिक प्रश्न पूछने के लिये सदैव खुजलाती रहती है । मुझे पूर्ण विश्वास है ग्राज के इस सत्संग से क्रमशः तुम्हें ग्रवश्य इन दो समस्याग्रों का समाधान प्राप्त हो जावेगा; अब कुछ सत्संग के बारे में भी । सत्संग तुम्हारे घर से ही प्रारम्भ हो । घर का वातावरण सौमनस्यता पूर्ण, प्रसन्नता युक्त, बिना किसी बाधा या दलबंदी के सरलता से चलने वाला हो । विभिन्न व्यक्ति जो परिवार के सदस्य हैं, विभिन्न पीढ़ियां ग्रौर विभिन्न स्तर की बुद्धिमत्ता, विकास ग्रौर उपलब्धियों वाले लोग होते हैं । उन्हें सबको समझदारी और सहानुभूति पूर्वक, साहस ग्रौर सहनशीलता, पारस्परिक सहयोग ग्रौर प्रेम पूर्ण उदारता के साथ मिलकर रहना सीख लेना चाहिये । तुम्हारे घरों में मां ग्रौर बच्चों के बीच, भाई-बहनों में तथा ग्रन्य सभी सगे-संबधियों में शान्ति रहे । इसी सत्संग की सुदृढ़ नींव पर सामुदायिक सत्संग और राज्य व्यापी सत्संग, राष्ट्र व्यापी सत्संग यहां तक कि समस्त विश्व का सत्संग का भवन निर्मित किया जा सकता है । यदि वह ग्राधार ही नहीं है, तो सत्संग के विचार का प्रकाशन करना ही ग्रपना उपहास कराना होगा । ग्रनेकों संस्थायें हैं जो उपदेश करती हैं परन्तु उन उपदेशों पर वे स्वयं आचरण नहीं करती हैं, हर गली में तुम्हें एक न एक ऐसी संस्था मिल जावेगी । यह सत्संग भी पतित होकर एक ग्रौर पाखण्ड की संख्या वृद्धि न करे ।

धर्म का लक्ष्य तो भगवान् के बच्चों में घृणा ग्रौर शत्रुता को मिटाना है; परन्तु व्यवहार में धर्मों में संघर्ष दिखाई देता है । भाषा तो प्रेम संबंध को पक्का करने, लोगो में हार्दिक सहानुभूति पूर्ण वार्तालाप द्वारा आत्मीयता उत्पन्न करने, उन्हें एक दूसरे के समीप लाने, का माध्यम होना चाहिये परन्तु ग्राजकल तो यह पागलपन से भरा हुग्रा अस्त्र बन गयी है । सीमायें ग्रब सीमित करने के लिये नहीं हैं; लोग उनका उल्लघंन उनको मिटाने के लिये, लड़ते हैं । मंदिर शान्ति के निवास स्थान और धर्मिक ग्राचरण की प्रेरणा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

देने वाले नहीं रह गये हैं ; वे तो अब ऐसी संस्थाये हैं जहां लोग परस्पर लड़ते हैं । भाई-भाई से लड़ता है । प्रत्येक घर एक युद्ध-क्षेत्र बना हुआ है ।

घरों में मिलजुल कर शान्ति और प्रेम से रहने की कला को सीखने, व्यवहार में उसी पर आचरण करने और उसका प्रचार करने से पुनः शान्ति का नूतन प्रभात लाया जा सकता है । तभी संसार में अविलंब प्रसव-पीड़ा रहित शान्ति की स्थापना हो सकती है ।

पारस्परिक स्वभावों में समझौता करके तुम सत्संग की उन्नति कर सकते हो । सैकड़ों सज्जनों को सदस्य या कार्यकर्त्ता के रूप में संयुक्त करके भी एक संगठन बनाना संभव है । वे जानें कि एक टोली के समान मिलकर कैसे काम करना होता है । परन्तु, स्त्रियों में व्यक्तित्व की भावना कहीं अधिक होती है । अनुभवों के आधार पर लोगों में एक धारणा बन गयी है कि तीन स्त्रियाँ कभी मिलकर नहीं रह सकती हैं । एक तेलगू कहावत है कि "एक स्त्री के समक्ष दुनियां कांपती है" । समुद्र सूख जावेगा यदि कहीं दो हो गयीं तो । और यदि तीन हो गयीं तब तो मध्यान्ह में ही नक्षत्र टूट-टूट कर गिरने लगेंगे" । स्त्रियों को ऐसा क्यों कहा गया है ? स्त्रियों में सहिष्णुता बहुत ही कम होती है । सहिष्णुता से मेरा आशय है पराजय को सह लेना, आपस में एक दूसरे को सह लेना, धैर्य, विना बदले की भावना के चुपचाप कष्ट सहन कर लेना । इन्हीं कारणों से स्त्रियों को 'अबला' कहा गया है । यह संकेत स्त्रियों में अधिक सहनशीलता लाने की आवश्यकता को बतलाता है । तुम्हें मतभेद और स्वभाव-भिन्नता होते हुये भी सहानुभूति और समझदारी को विकसित करना है । इससे सत्संग के सदस्यों में भी सहनशीलता की वृद्धि होगी । उनमें कुछेक को संस्थायें चलाने का, दक्षतापूर्ण दीर्घकालीन, अनुभव होता है । परन्तु यह तो एक मौलिक संस्था है । तुम्हें भारतीय संस्कृति के मूल सिद्धान्त नहीं भूलना चाहिये । बच्चों में यह सिद्धान्त प्रतिष्ठित किये जावें जबकि वे तुम्हारी गोदी में ही खेल रहे हों उन्हें धाय या नौकरों को मत

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सौंप दो जो न तो संस्कृति को जानते हैं और न जानने की उन्हें कोई चिन्ता ही है। शैशव कालीन गीतों, लोरियों के माध्यम से बच्चों को रामायण के उपदेशों की शिक्षा दो। उन्हें बी०, बी० ! ब्लैक शीप (का, का, काला कौआ) जैसी निरर्थक संस्कारहीन तुकबन्दियां मत रटाओ। इससे तो वे स्वयं ही "काली भेंड़" बन सकते हैं।

सेवा-भाव उत्पन्न करो और सेवा-कार्य के किसी कार्यक्रम में जुट जाओ चाहे नगर की गंदी बस्तियाँ, जेल, अस्पताल कोई जगह चुन लो। कैदियों के प्रति दया-भाव उत्पन्न करो, उनको पुनः समाजोपयोगी बनाने का सर्वोत्तम उपाय यही है। उनमें इस विश्वास को उगाओ कि मानव मूल रूप में अच्छा ही है। वे फिर असामाजिक कार्यों में पुनः नहीं संलग्न होंगे। बच्चे को अपने मैल, मूत्र और विष्ठा से कोई लगाव नहीं होता है। बल्कि, आयुवृद्धि के साथ उसमें इनके प्रति घृणा भी बढ़ती जाती है। इसी प्रकार कैदियों को भी दुराचार के प्रति कोई लगाव नहीं है वे भी समझ उत्पन्न होते ही इन कार्यों से घृणा करने लगेंगे। उन्हें अपने कुकर्मों पर पश्चाताप और घृणा होगी। अस्पतालों में पड़े बीमारों से कोई बात करने वाला नहीं होता है, उन्हें प्रेम का एक शब्द या धैर्य बँधाने की कोई बात नहीं करता है। यदि तुम उनकी रोग-शैय्या तक दया का प्रकाश ले जा सके तो उनके नेत्रों में कृतज्ञता के आंसू आ जावेंगे। उनकी ओर से उनके संबंधियों को पत्र लिख दो, जो कुछ संदेश वे अपने सगे-संबंधियों, मित्रों को भेजना चाहें उसमें उनकी सहायता करो। उन्हें कहानियां सुनाओ, अच्छी पुस्तकें पढ़ने को दो; उन्हें सुन्दर सुगंधित पुष्प या फल भेंट करो। उनके वातावरण को आशाप्रद बनाओ, कुछ मुस्कानें बिखेरो। ये सब भी एक प्रभावशाली औषधि का काम करते हैं जिससे उन्हें शीघ्र स्वास्थ्य लाभ होता है। सामाजिक सेवा, सामाजिक प्रदर्शन या प्रहसन का रूप न ले ले। समाज में अपना यश कमाने या केमरा के सामने खड़े होने का अवसर पाने के लिये यह सब नहीं होना चाहिये। यह सब कार्य 'सुस्ती का कार्य' भी नहीं होना चाहिये। यदि कोई अच्छा कार्य किसी उपयुक्त पात्र के लिये करना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है तो फिर सुस्ती क्यों ? जो तुमसे हो सके जितनी जल्दी हो सके कर डालो। यदि कुछ अच्छा नहीं कर सकते हो तो बुरा करने से भी दूर रहो, जो लोग सेवा-कार्य में लगे हैं उनके दोषों और भूलों की भी चर्चा न करो, जो कुछ थोड़ा बहुत वे कर दें उसी के लिये उन्हें धन्यवाद दो।

इस बात को समझो कि सेवा एक उत्तम साधना है, यह ध्यान से भी बढ़कर है। यदि तुम्हारे पास ही कोई पीड़ा से कराह रहा है तो तुम्हारे ध्यान करने से भगवान् कैसे प्रसन्न हो सकता है यदि तुम कुछ समय उसके कष्ट दूर करने, प्रेम के शब्द बोलने, सहायता करने के लिये नहीं दे सकते हो ? केवल अपना ही मोक्ष जप ध्यान से प्राप्त करने के प्रयासों में लगे रहकर अलग रहने का प्रयास मत करो। अपने ओठों पर भगवान् का नाम, ॰स्तिष्क की आंख के सामने भगवान् का रूप रखते हुये अपनी बहनों के बीच ॰की सहायता करने के अवसरों की खोज करते हुये घूमों। यही सबसे उच्च-॰टि की साधना है "दिल में राम, हाथ में काम"। इसी भावना से आगे ॰ो। भगवान् की कृपा पूर्ण मात्रा में तुम पर बरसेगी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४० प्राण-वायु

(प्रशान्ति निलयम् १६-२-१६७०)

मानव के भगवान् तक की तीर्थयात्रा में ६ चरण होते हैं जिन्हें वह सर्मपित होकर और भगवान् के प्रेम में विभोर होकर पूर्ण करता है। (१) भगवान् के अवतारों की महिमा, उसकी सृष्टि की सौंदर्यपूर्ण और श्रद्धा उत्पन्न करने वाली दैवी अभिव्यक्तियों के कथानकों और वर्णन को सुनने की लालसा जगाना; पहला प्रारंभिक कार्य है। भगवान् की लीला का बार-बार श्रवण करने से हममें भगवत् चेतना जग जाती है और हम स्वयं भगवान् में परिणत होने लगते हैं। (२) भगवान् के नामों, लीलाओं और उनके महान् कार्यों का प्रेम पूर्वक स्वयं गान करना। (३) भगवान् का मन में ध्यान चिन्तन करना कि वे सौंदर्य, दयालुता और महिमामय हैं, इसी का चिन्तन करने में आनन्द मानना (४) भगवान् के चरणों की अर्चना और एकाग्रता से ध्यान पूजन में मग्न रहना (५) इससे साधक में भगवान् के प्रति पूजा का भाव उत्पन्न होता है और वह विधिवत् कर्मकाण्ड के अनुसार पूजा करने में संतोष और प्रेरणा प्राप्त करता है (६) साधक को अपने इष्टदेव का सभी जीवों में सभी पदार्थों में जहां कहीं भी वह जाता है, दर्शन होने लगता है; इस प्रकार उसमें प्रकृति और समस्त जीवन के प्रति वन्दना, श्रद्धा का भाव उत्पन्न होता है। (७) ऐसी मनोवृत्ति बन जाने से वह सभी का सच्चा सेवक बन जाता है उसमें किसी प्रकार उच्चता या हीनता की भावना नहीं रहती है। यह प्रमुख चरण है जो महान आध्यात्मिक सफलता का द्वार उन्मुक्त कर देता है (८) इसमें साधक भगवान् के अत्यंत सन्निकट हो जाता है और इसका उसे स्वयं अनुभव होने लगता है कि वह भगवान् का विश्वासी साथी, सखा, उसकी शक्ति और दया का साझीदार, भगवान् की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

विजयों और उपलब्धियों में उनका सहभागी बन जाता है, जैसा अर्जुन हो गये थे। (९) जैसा अंत में होना ही चाहिये, यह तो भगवान् की शरण में पूर्ण रूप से समर्पण या आत्म-निवेदन की स्थिति होती है। इसमें साधक पूर्ण रूप से अपने को भगवान् की इच्छा पर छोड़ देता है; भगवान् की इस इच्छा का बोध उसके अपने पवित्र अंतःकरण में स्फुरित होता है।

तुमने ध्यान दिया होगा सातवां पग 'दास्यम्' का होता है। यह सेवक का भाव होता है। चाहे कोई अपने को सामाजिक कार्यकर्त्ता, स्वयंसेवक या सर्वसेवक कुछ भी कहले। माला जपने या घंटों ध्यान करने या भगवन्नाम कीर्तन करने से यह कहीं अधिक फलदायक होता है। यदि इस सेवा को आध्यात्मिक साधना या अनुशासन मानकर किया जावे तो इससे अधिक संतोष प्राप्त होता है। तुम सभी को अपने ही शरीर के अंग या अवयव मानकर व्यवहार करो। शरीर के किसी भी अंग में घाव या फुंसी हो जाने पर तुम उसे शीघ्र ठीक करने में लग जाते हो पूर्ण दक्षता और पूर्ण क्षमता के साथ। इसी प्रकार तुम्हें दूसरों के कष्टों को दूर करने में अपने साधनों और सीमा तक पूर्ण योग्यता से लग जाना चाहिये।

जिन वस्तुओं के लिये तुम लालायित हो, जिस सम्मान को तुम अपने लिये चाहते हो, उन सब वस्तुओं और श्रद्धा से भगवान् की पूजा आजकल की जाती है। मूर्ति को स्नान कराकर स्वच्छ किया जाता है, उसे वस्त्रों और आभूषणों से सज्जित किया जाता है, पकवान मिष्ठान्न निवेदन किया जाता [illegible]स पर पंखे से वायु की जाती है सुगंधि और दीपक से आरती की जाती है इत्यादि। परन्तु भगवान् तो तब संतुष्ट और प्रसन्न होता है जब तुम उसकी इच्छा के कार्य करते हो। अन्यथा तुम उसकी कृपा कैसे प्राप्त कर सकते हो ? उसके बच्चों की सेवा, सहायता, पालन करना, उन्हें सान्त्वना देने के अतिरिक्त और कौन सा ढंग भगवान् की कृपा प्राप्त करने का हो सकता है ? अपने सरल सच्चे जीवन को दूसरों के लिये एक उदाहरण बनाये बिना, उनलोगों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के हृदय में भगवान् के प्रति निष्ठा उत्पन्न करके उन्हें भगवान् के साक्षात्कार में कि वही उनका स्वामी और संरक्षक है सहायक बने बिना और किस ढंग से तुम भगवान् को प्रसन्न कर सकने की आशा करते हो ?

सरल जीवन के सर्व प्रथम सिद्धान्तों में एक 'मौनम् की साधना' है। क्योंकि भगवान् की वाणी तुम्हारे हृदय के क्षेत्र में तभी सुनी जा सकेगी जब तुम्हारी जिह्वा शान्त रहे, हृदय में उठने वाले झंझावात शान्त रहें और मानसिक तरंगें भी शान्त रहें। जब तुम दूसरों से फुसफुसाकर बात करोगे तो किसी को चिल्लाने का लालच न होगा। स्वयं पहल करके अपनी बोली का स्वर मंद रखो; जितना भा काम चलाऊ और नीचे से नीचा हो सके। पारस्परिक वार्ता और व्याख्यान के स्वरों में कुछ अन्तर रहेगा परन्तु वह तो परिस्थिति की मांग के आधार पर होगा ही। भगवान् से उत्पन्न, पंच महाभूतों से सर्व प्रथम आकाश तत्व की उपज 'ध्वनि' का अधिकाधिक मितव्ययता से प्रयोग करो। यदि ध्वनि का स्तर उठाये बिना तर्क दिये जाते हैं तो उनका प्रभाव अधिक पड़ता है। आध्यात्मिक अन्वेषक के लिये 'मौनम्' ही उसका व्याख्यान है। मंद स्वरों में मृदु भाषण ही सच्चे प्रेम का प्रतीक है। चीकने को घृणा करो, कर्कशता से भय खाओ। घमंड ही दहाड़ता है। परन्तु प्रेम संकेत करता है, लोरियाँ गाता है, यह शान्ति देता है और घावों पर मल्हम के समान पीड़ा हरने वाला होता है। प्रेम की शब्दावली का अभ्यास करो; घृणा और तिरस्कार की भाषा भूल जाओ।

दूसरी पहचान स्वच्छता है; बाहरी स्वच्छता वस्त्रों की, शरीर की नहीं बल्कि इससे आगे अन्तर की। एक बिना धुली कमीज के नीचे धुली बनियान पहनकर तुम पूर्ण रूप से स्वच्छता और ताजगी का अनुभव नहीं कर पाते हो। दोनों के स्वच्छ होने पर ही अन्दर गुदगुदी सी पैदा करने वाली प्रसन्नता का अनुभव होता है। इसी प्रकार बाहरी और भीतरी दोनों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रकार की स्वच्छता का होना ग्रावश्यक है। वास्तव में बाहरी स्वच्छता तो आन्तरिक उपलब्धियों का प्रतिबिम्ब होती है। एक सरल निष्कपट व्यक्ति के मुख-मण्डल पर विचित्र ग्राभा होती है। ग्रान्तरिक स्वच्छता के लिये दूसरा ही पानी ग्रौर साबुन काम ग्राता है—दृढ़ [विश्वास का साबुन ग्रौर सतत् ग्रभ्यास के पानी से वहाँ की स्वच्छता हो पाती है।

तीसरी पहचान सच्चे साधक की उसकी श्रद्धापूर्ण कर्त्तव्यनिष्ठा होती है वह उसी से बंधा होता है। वह ग्रपना हर काम इस भाव से करता है कि मानो उसी कार्य के समय पर भली प्रकार पूरा करने पर भगवान् उससे प्रसन्न हो जावेगा और ऐसा करना ही पूजा है जिससे वह भगवान् के सिंहासन तक पहुँच सकेगा। कर्त्तव्य ही उसका भगवान् है; कार्य करना ही पूजा करना है—यही उसका ग्रादर्श रहता है। कार्य एक ऐसा परिधान नहीं है जिसे ग्रावश्यकतानुसार कभी-कभी पहना ग्रौर उतार कर रख दिया जाता है। हर विचार को पुष्पित कर हाथ में ले लो ग्रौर भगवान् को भेंट कर दो; हर कार्य रूपी फल को प्रेम के मधुर रस से सिक्त कर भगवान् को अर्पण कर दो। तुम्हारा हर आँसू पवित्र होवे और भगवान् के चरण-कमलों का प्रक्षालन करे। प्रशान्ति निलयम् की पताका का प्रतीक इसी का स्मरण कराता है; इसी को तुम्हें अपने आचरण और व्यवहार में लाना है। यह उस विजय का प्रतीक है जो सतत् साधना द्वारा काम, लोभ, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष ग्रौर धोखा जैसे विकराल राक्षसों पर प्राप्त की गयी है। यह सर्वोच्च ग्रानन्द की शान्त स्थिति का प्रतीक है; जिसे ग्रात्मसंयम ग्रौर ग्रात्मसाक्षात्कार के द्वारा जीता गया है।

यह निर्णय करने की चेष्टा मत करो कि क्या दूसरे लोग तुम्हारी सेवा प्राप्त करने के उचित पात्र हैं या नहीं। केवल इतना पता लगाग्रो कि वे वास्तव में संकट ग्रस्त हैं या नहीं, इतना जान लेना पर्याप्त है। यह मत

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

देखो कि ये लोग और लोगों से कैसा व्यवहार करते हैं, निश्चय ही उन्हें प्रेम-व्यवहार से बदला जा सकता है। सेवा तो तुम्हारी पवित्र प्रतिज्ञा, साधना, आध्यात्मिक पथ की प्रतीक है। यह तो प्राण-वायु है; इस का तभी अंत होवेगा जब तुम अंतिम श्वाँस लोगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४१ दम्भ–विद्यालय

(बंगरपेट हाईस्कूल व्यंकट गिरि २-३-१९७०)

विद्यालय किसलिये होता है ? मनुष्य को मानवता का पाठ पढ़ाने के लिये। मनुष्य में कुछ विशेष गुण, विशेषतायें होती हैं उनको विकसित करना है, पुष्ट करना है, जिससे कि वह अपने पूर्णत्व की सीमा तक पहुँच सके यदि इनकी उपेक्षा की जाती है या प्रसुप्तावस्था में नीचे पड़ा रहने दिया जाता है तो फिर उसका अस्तित्व पशुत्व के स्तर पर ही रहता है। एक अनुशासन पालन से ही वह उन्नत होकर अपने उत्तराधिकार को प्राप्त कर सकता है। विद्यालय पशु को मानव में परिवर्तित कर देता है; कम से कम उसे ऐसा कर सकना चाहिये।

विद्यालय की सबसे महत्त्वपूर्ण निधि अध्यापक होता है। ईंट, सीमेंट और लोहे से लाभकारी, दक्ष विद्यालय का निर्माण नहीं होता है। पुस्तकालय की पुस्तकें और प्रयोगशाला के उपकरण भी उतने आवश्यक नहीं होते हैं। अध्यापक ही विद्यालय को बना, बिगाड़ सकता है। तुम्हें जितनी पुस्तकों की आवश्यकता है वे सब उसी में हैं, वही सबसे आवश्यक और वाँछनीय उपकरण है। वह शिष्यों के शिष्टाचार की आकृति निश्चित करता है, उनके आचरण, मनोभावों और यहाँ तक कि पूर्वाग्रहों का भी अपने विवेक और बुद्धिमत्ता से प्रभावित करता है। इसलिये उसका उत्तरदायित्व उसकी जानकारी से भी अधिक गुरुतर है। अध्यापक अपने आपको, अध्यापक बन कर, एक उत्तम उद्देश्यपूर्ति के लिये समर्पित कर देता है। यह एक साधना है। जो कुछ वह अपने शिष्यों को बनाना चाहता है वह उसे स्वयं बनकर दिखाना पड़ता है। उसकी कक्षा में उपस्थित कोमल मस्तिष्क सरलता से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उसी के उदाहरण और आदर्श के ढाँचे में ढलते रहते हैं। यदि अध्यापक धूम्रपान के विरुद्ध भाषण करता है तो उसे स्वयं धूम्रपान छोड़ना होगा। यदि वह समय की पाबंदी पर आग्रह करता है तो उसे भी सदा कक्षा में समय से ही आना होगा। उसका तो सतत् निरीक्षण सदैव होता रहता है। उसका छोटे से छोटा दोष भी नगर की चर्चा का विषय बन जाता है। उसी दिन सैंकड़ों घरों में भोजन के समय वार्ता में उसी पर चर्चा होती है। उसे दिन के २४ घंटों में सतर्क रहना पड़ता है।

धैर्यपूर्वक प्रयास और सतत् अध्यवसाय अध्यापकों के लिये अपरिहार्य है। राष्ट्र के लिये उनका काम मौलिक महत्त्व का है। बच्चों के मस्तिष्क कोमल होते हैं, भोले-भाले और शुद्ध होते हैं। यदि उसे न छुआ जावे तो चचेंड़ा टेढ़ा ही उगता है। इसी लिये माली उसके सिरे से एक पत्थर बाँध कर लटका देते हैं, जिससे वह भार के कारण सीधा और लम्बा उगे। बच्चों और युवकों के मस्तिष्क सामान्य प्रवृत्तियों से तो टेढ़े विकसित होते हैं क्योंकि ऐसा होने के लिये ऐन्द्रिक भोगों को उकसाने वाली फिल्में उन्हें पथभ्रष्ट करती हैं, बड़े बूढ़ों द्वारा समाज में खोखले और दम्भपूर्ण वातावरण की सष्टि, चमक-दमक और झूठी साहसिकता और यश-कामना के आकर्षण भी उन्हें उच्छृंखल बनाते हैं। इसलिये विद्यालयों को भी अनुशासन का पत्थर लटकाना है जिससे उनका विकास सरल और सच्चा होवे।

यह पत्थर भी सीमा से अधिक भारी नहीं होना चाहिये, ऐसा न हो कि चचेंड़ा टूटकर दो टुकड़े हो जावे। सभी मामलों में, सदैव मध्यमार्गी होकर रहो। अनुशासन के नियम ऐसे होने चाहिये जो उस आयु-वर्ग के छात्रों के लिये, जिन्हें सुधारना है, उचित कहे जा सकें। वातावरण भी ऐसी भावना से पूर्ण होवे कि अनुशासन का पालन स्वतः ही किया जाता रहे। ऐसे अनुशासन से राष्ट्र के लिये अच्छे नेता प्राप्त हो सकेंगे। देश के वर्तमान नेताओं की पीढ़ी के प्रतिकूल, ये नेता समाज को सही दिशा में प्रेरणा और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पथप्रदर्शन दे सकेंगे। उन्हें अच्छे अनुयायी भी होना चाहिये; अच्छे सैनिक ही उत्तम सेनापति बन पाते हैं। शान्ति के तरुण नवसिखिये आगे चलकर शान्ति के सुदृढ़ स्तंभ बनते हैं और पोषक और समर्थक बनते हैं। बच्चों की भोजन संबंधी आदतों को नियमित करो; भोजन अधिकांश में स्वास्थ्य और बुद्धिमत्ता, भावों और उद्वेगों का निर्णायक होता है। भोजन की मात्रा और गुणवत्ता की सीमा निर्धारित कर दो। कितने बार और कब-कब भोजन पाया जावे इसका भी नियम होना चाहिये। मनोरंजन भी नैतिकता पूर्ण होना चाहिये और उन्नायक होवे; वह भी सदाचारी और धार्मिक साथियों के साथ में होवे।

शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की अभिभावकों और अध्यापकों द्वारा उपेक्षा की जा रही है। अभिभावक चाहते हैं कि उनके पुत्र और पुत्रियाँ विश्वविद्यालय की उपाधियाँ, उचित अनुचित जैसे भी संभव हो, अवश्य प्राप्त करें क्योंकि ये आजकल सामाजिक स्तर का प्रतीक बन गयीं हैं। अध्यापक चाहते हैं कि उनके छात्रों की सफलता का प्रतिशत सदैव ऊँचा रहे, परन्तु अध्यापन-कार्य में उन्हें कोई विशेष कष्ट न करना पड़े। प्रत्येक छात्र एक मूल्यवान थाती है वही अध्यापक का उत्तरदायित्व है। उसे अपने कर्त्तव्य-पालन में बिल्कुल सच्चा होना चाहिये। क्योंकि, याद रहे, उसी को आदर्श मानकर छात्र उसका अनुकरण करते हैं। अब मैं एक बात का उल्लेख कर दूं वह यद्यपि छोटी मालूम पड़े परन्तु उसका तुम्हारे दृष्टिकोण और लड़कों पर बड़ा गंभीर प्रभाव पड़ता है। जब अध्यापक उपस्थिति अंकित करता है और उसके सामने उपस्थिति-पंजिका होती है तो वह छात्र का नाम नहीं पुकारता है। वह क्रमसंख्या का प्रयोग करता है। और वे लोग भी "हाँ" कहकर उत्तर दे देते हैं। उन्हें नाम से पुकारो, क्योंकि संख्या से तुम उनके व्यक्तित्व की उपेक्षा करते हो और वह संख्या के पीछे अदृश्य हो जाता है। इससे तो वे निर्जीव एकरूपता के साँचे में ढलते हैं। वे कैदी या

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पुलिस के सिपाही नहीं हैं जिनका व्यक्तित्व छिपाकर कार्य करने की परम्परा है वे ही संख्या से पुकारे और जाने जाते हैं।

विद्यालय के कार्यक्रम में प्रार्थना को स्थान देना एक अच्छी बात है। 'मौनम्' तो बहुमूल्य है और शिष्यों से इस का अभ्यास करने को कहा जा सकता है। सावधान वे सीमातीत क्षुब्ध या निराश न होने पावें। यदि घड़ी में चाबी दी गयी है तो उसका पेण्डुलम (दोलक) इधर-उधर झूलने लगेगा। उनकी इच्छायें समिति और निर्देशित रहें, उनमें चाबी न लगाई जावे। बड़े वृद्धजन, राजनैतिक नेतागण और अध्यापकों को छात्रों के उद्‌वेगों और मनोविकारों को प्रज्वलित कर उनमें क्रोध, आवेश का संचार नहीं करना चाहिये; जैसा कि वे लोग आजकल कर रहे हैं और हर अवसर पर छात्रों को उकसाया जाता है।

मैं छात्रों को प्रेम करता हूं, मैं उन पर प्यार और कृपा बरसाता हूं। उन्हें अपनी कक्षा छोड़कर राजनैतिक नेताओं के पीछे नहीं भागना चाहिये, वे लोग छात्रों को फुसला कर उन्हें सक्रिय आन्दोलनों में धकेल देते हैं। जब तुम अधिकारों के लिये कोलाहल मचाते हो तो तुम्हें अपने कंधे कर्त्तव्यों का भार वहन करने के लिये भी आगे बढ़ा देना चाहिये। अपना अध्ययन समाप्त करो, ऐसा विवेक उत्पन्न करो जो तुम्हें यह दृष्टि दे कि तुम समझो क्या अच्छा है और क्या अच्छा नहीं है। तब अच्छे और कल्याणकारी के लिये प्राप्ति की योजना बनाओ और बुराई से बचो। इसके प्रतिकूल यदि तुम नेताओं के पीछे गलियों में भागे तो तुम अपना भविष्य बिगाड़ लोगे क्योंकि वे लोग तो अपने उद्देश्यों के लिये तुम्हारा उपयोग करते हैं। इससे राजनीति को भी ठेस पहुंचती है। अपने माता-पिता की पीड़ा की भी कल्पना करो जो आशा के महलों में रह रहे हैं और वर्तमान में दयनीय जीवन बिता रहे हैं जिससे उनके बच्चे विद्वान और कमाऊ बनें।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अध्यापक तो छात्रों की सफलता के उच्च प्रतिशत की ही चिन्ता करते हैं, इसलिये वे प्रश्नों के, जिनके परीक्षा में पूछे जाने का वे अनुमान लगाते हैं, उत्तर लिखा देते हैं। यह तो सरासर द्यूत-क्रीड़ा (जुआ) है। पाठ्यक्रम के विषय न तो पूरी तौर पर और न अच्छी तरह ही पढ़ाये जाते हैं। छात्र भी परीक्षा के अवसर के लिये रटे हुये उत्तर भूल जाते हैं, वे भी कुछ अच्छी तरह तैयारी नहीं करते हैं भले ही परीक्षाफल में 'सफल' घोषित किये गये हों। उनके मस्तिष्क रिक्त हो जाते हैं; ज्यों ही परीक्षा समाप्त हुयी वे सब कुछ भूल जाते हैं क्योंकि उनके पास जो कुछ था उसे तो वे परीक्षा-कक्ष में उत्तर-पुस्तिका में वमन कर ही चुके हैं।

अध्ययन का पाठ्यक्रम और विषय अच्छी तरह विचार कर निर्धारित किये जाते हैं क्योंकि वे उपयोगी साधन हैं जिनसे विचार की धारा निर्देशित की जाती है और आगे अध्ययन में भी इससे लाभ होता है। इसीलिये इनको पाठ्यक्रम में रखा गया है। और जब उपाधि दी जाती है तो प्रत्येक यही आशा करता है कि छात्र ने उस विषय के अध्ययन में दक्षता (पारंगत) प्राप्त कर ली है। इस प्रकार अध्यापक जनता को धोखा देते हैं यदि वे पूरा पाठ्यक्रम नहीं पढ़ाते हैं; और छात्र जनता को धोखा देते हैं यदि वे विषय को पूर्ण रूप से हृदयंगम कर उस ज्ञान को उपयोग के लिये सदा प्रस्तुत रखने में असमर्थ होते हैं।

छात्रों को उत्साहित करो कि वे विद्यालय और अपनी उन्नति के संबंध में अपने अभिभावकों को सूचित करते रहें। अभिभावकों को अध्यापकों और शिक्षण-क्रिया से अवगत रहना चाहिये। विद्यालय में क्या हो रहा है यह उन्हें ज्ञात रहना चाहिये। इससे त्रुटियों और दोषों का परिमार्जन पूरी तौर से समय रहते हा होता रहेगा। एक और सुझाव यह है। तरुणों को कभी निठल्ले और बेकाम मत रखो। प्रत्येक क्षण अमूल्य है। समय का सदुपयोग

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भोजन के अच्छी तरह पचाने के समान है। इससे पोषण और शक्ति दोनों ही प्राप्त होते हैं।

स्वयं अभिभावकों को भी नियमों का पालन भली प्रकार करना चाहिये। एक परिगणित जाति के अभियंता का उदाहरण लेते हैं। जिसके पुत्र विद्यालय में पढ़ रहे हैं। छात्र को उसी दशा में छात्रवृत्ति का अधिकारी माना जाता है यदि उसके पिता की वार्षिक आय ३०० रु० वार्षिक के नीचे हो। पिता सभी तिकड़म करता है और अन्त में एक एम०एल०ए० से कालेज में यह कहलवा देता है कि इनके मामले में यह नियम लागू नहीं होता है। पुत्र को चाहे छात्रवृत्ति मिल जावे; परन्तु नैतिकता के नाते यह चालें कहाँ तक वांछनीय हैं।

छात्रों को सभी धर्मों की समानता की शिक्षा देना चाहिये। मैं पुरुषों के सत्य साई साहित्य और विज्ञान कालेज काडुगोडि में एक नाटिका के अभिनय की व्यवस्था कर रहा हूं। एक नाटिका महाभारत युद्धोपरान्त की एक घटना —अश्वत्थामा द्वारा पाण्डवों के पाँच पुत्रों की हत्या पर आधारित है। उसमें कृष्ण का अभिनय एक मुसलमान छात्र, भीम और अर्जुन का अभिनय ईसाई छात्रों द्वारा किये जाने को है। इस विश्व रंगमंच पर हम सब एक विशाल नाटक के पात्र ही तो हैं, जिसे जो अभिनय करना है वह उसी की वेष-भूषा धारण कर आता है, उन्हीं पंक्तियों को उसी भावभंगिमा और उपयुक्त स्वर से दोहराता है और निर्देशक के संकेत पर प्रवेश और बहिर्गमन होते रहते हैं।

यदि विद्यालय का अनुशासन शिथिल है, यदि उसके छात्रों को स्वार्थी लोग फुसलाकर सुनसात में ले जाते हैं, तो दोष माता-पिता का, बड़ों का, विद्यालय की प्रवन्ध समिति का है। 'कमिटी' प्रायः कम-फार-टी अर्थात् समिति तो केवल चाय-पानी के लिए जुटने वाली जमात होती है। मैं यह सुझाव देता हूं कि प्रत्येक विद्यालय में उपाधि प्रदान करने का उत्सव, जिसमें

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नवस्नातकों को उनकी सफलता के अनुसार डिप्लोमा या डिग्री प्रदान की जाती है, प्रत्येक कालेज में किया जावे। इससे सामूहिक उपाधि वितरण करने में जो हड़वड़ी होती है वह नहीं होने पावेगी, इससे तो सभी को उदासी ही का अनुभव होता है। मित्रों और अभिभावकों को इन उपाधि प्रदान करने के लघु उत्सवों में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जाना चाहिये जिससे वे छात्रों का उत्साहवर्धन करें। कालेज के अन्य लोग भी इससे उत्तम प्रेरणा ग्रहण करें।

तुम जानते हो कि आवश्यकता पड़ने पर तुम बैंक से चेक द्वारा धन निकाल सकते हो। प्रतिबन्ध यही है कि चेक के धन से अधिक धन तुम्हारे बैंक के खाते में जमा होवे। यदि बैंक दिवालिया हो जाता है तब तो विनाश ही समझो। शिक्षण-प्रणाली एक बैंक है, जिसमें से राष्ट्र अपनी आवश्यकता-नुसार चेक से दक्ष कार्यकर्त्ताओं का चयन करा लिया करता है। यदि यह प्रणाली दिवालिया हो जावे, जैसी कि आजकल लगभग वही स्थिति है, तो यह राष्ट्रीय संकट की बात है। यदि यह प्रणाली संशोधित और स्नेह सिक्त हो जाती है तो अगली पीढ़ी को अच्छे नेता प्राप्त हो जावेंगे; और उतने ही आवश्यक अनुयायी भी मिलते रहेंगे।

सत्य साई कालेज की एक घटना सुनाता हूँ जिससे तुम भी कल्पना कर सको कि मैं कैसे परिवर्तन का स्वागत करता हूँ। उस कालेज में हुई सार्वजनिक परीक्षा के अवसर पर, चूंकि यह कालेज भी उक्त परीक्षा का एक केन्द्र था, सभी परीक्षार्थी प्रश्न-पत्र पाते ही खड़े हो गये। निरीक्षकगणों को आशंका हुयी और आश्चर्य भी हुआ। कुछेक ने भय से यह कल्पना की कि परीक्षार्थी कुछ नाटकीयता उपस्थित करके कड़े प्रश्न-पत्र का सामूहिक बहिष्कार करने जा रहे हैं और साथ ही प्रश्न-पत्र बनाने वाले की भी निन्दा करेंगे। परन्तु वे केवल एक मिनट की मूक प्रार्थना के लिये खड़े हुये थे। यह अपने में एक शुद्ध करने वाली, शक्तिप्रदायिनी और उत्तम भावनापूर्ण घटना थी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

विद्यालयों को अधिक छात्र संख्या के लिये परस्पर होड़ नहीं करनी चाहिये। गुणवत्ता, नकि परिमाण, लक्ष्य होना चाहिये। छोटी संख्या को अधिक मात्रा में व्यक्तिगत अवधान, अधिक गम्भीर अनुशासन, उत्तम अध्यापन और गहन विद्वत्ता प्राप्त हो सकते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४२ पुरस्कार दाता को पुरस्कार

(काडुगोडी २७-३-१९७०)

आज यह विद्यालय प्रथम वार्षिक दिवस मना रहा है। अब यह एक वर्ष का हो चुका है। एक नवजात शिशु की अपेक्षा एक वर्ष की आयु के बच्चे को संभालना कहीं अधिक कठिन कार्य होता है। क्योंकि, यह इधर-उधर चलने का प्रयत्न करने लगता है और इसके लड़खड़ा जाने, गिर जाने, खतरे के स्थान पर पहुंच जाने और दुर्घटना में फँस जाने की आशंका होने लगती है। माँ, धाय या परिचारिकाओं को अब अधिक चौकसी रखनी पड़ती है। बच्चा सड़क पर पहुंच सकता है और किसी स्कूटर, साइकिल, कार या बस की चपेट में आ सकता है। इसी प्रकार अब यह विद्यालय भी नाना प्रकार के प्रतिकर्षण और बिचलनों जैसे ईर्ष्या, घमंड, पूर्वाग्रह में फँस सकता है और इसका स्वास्थ्य बिगड़ने की आशंका होती है। मां (प्रबंध समिति), धाय (प्रधानाचार्य) और परिचारिकायें (छात्र वर्ग) को विशेष रूप से सावधान रहना है; उनकी छोटी से छोटी उपेक्षा अथवा स्वतंत्रता, इस संस्था का भविष्य बिगाड़ सकती है। उन्हें परस्पर सहयोग के साथ इस विद्यालय की सेवा करनी है और ईमानदारी और सच्चाई के साथ विद्यालय की उत्तम परम्पराओं का निर्माण करना है।

हिमालय पर्वत, जो भारत के दुर्ग की प्राचीर बना है, इसकी महानता और दबदबे का प्रतीक है। यह हमें स्मरण कराता है कि हमारे अन्दर कैसी शुद्धता और दृढ़ता होनी चाहिये। हमें इसके तुषारमंडित उत्तुंगधवल शिखरों की भाँति अचल और अडिग रहना चाहिये। जिस प्रकार इसके शिखर पर पड़ी बर्फ निर्मल और स्वच्छ स्फटिक के समान होती है, उसी प्रकार मानवता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के बाजार के कोलाहल और उथल-पुथल के बीच हमें अपने हृदय स्वच्छ, शांत, और पवित्र रखना है । इन शिखरों से निकली हुयी गंगा, ऋजुता (भारतीय संस्कृति का अधार) का प्रतीक है। हिमालय से निकली दूसरी नदी यमुना न्यायप्रियता (भारतीय संस्कृति का अंगराग) की प्रतीक है । तीसरी सरस्वती नदी ईमानदारी की प्रतीक है; यह तो आध्यात्मिक अनुशासन का आधारभूत तत्त्व है। धर्मशास्त्रों में इसकी बड़ी महिमा वर्णन की गयी है। सरस्वती एक अंतस्तल में बहने वाली धारा है जो गंगा यमुना से प्रयाग में आकर मिलती है। जब तक गंगा बहती है भारतीय संस्कृति सुदृढ़ और पुष्ट रहेगी। यदि गंगा सूख भी जावे तो भी संस्कृति सदा ताजी और अपने उद्देश्य को पूरा करने वाली रहेगी। क्योंकि विश्व को इसकी आवश्यकता है और इसमें शाश्वत महान मूल्य निहित हैं।

भारत के बच्चों को एक महान उत्तरदायित्व सौंपा गया है। संस्कृति में विश्वास दृढ़ करने और उसके प्रयोग को प्रोत्साहन देने की इच्छा मुझमें हाल ही में उत्पन्न हुयी है; और मुझे लगा कि छात्रों को इस पुनर्जागरण के क्षेत्र में अग्रदूत का कार्य करना चाहिये। इसीलिये इस कालेज की स्थापना की गयी थी और इसे इसी दृष्टिकोण से चलाया जा रहा है। यहां चरित्र निर्माण पर विशेष आग्रह किया जाता है जो कि धन और भौतिक शक्तियों अथवा विद्वत्ता और कारीगरी की दक्षता से कहीं अधिक मूल्यवान है। तुम्हारे पास चाहे लाखों हों, फिर भी तुम्हें मानसिक शान्ति मिल सकने की कोई गारन्टी नहीं है । तुम्हारा स्वास्थ्य उत्तम हो सकता है; परन्तु यहां आये हुये राज्यपाल के साथ के दल के सबसे बलवान और दृढ़ व्यक्तियों से पूछो क्या उन्हें मानसिक शान्ति प्राप्त है। वे निषेधात्मक उत्तर ही देंगे।

इस कालेज में सभी धर्मों के मौलिक सिद्धान्तों की शिक्षा गीता, कुरान, बाइबिल, धम्मपद आदि पवित्र ग्रन्थों से दी जाती है। आनन्द का यह भोग जो कोमल मति छात्रों को यहां परोसा जाता है उससे उन्हें महान संतोष

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर तृप्ति का ग्रनुभव होता है। आज रात को छात्र महाभारत के एक प्रक-रण का ग्रभिनय करेंगे। इसका नाम "कृष्ण का शान्ति संदेश" है; यह मेरे द्वारा लिखित, प्रशिक्षित ग्रौर निर्देशित किया गया है। इससे न केवल नाटक के पात्रों बल्कि दर्शकों, जो आज यहां देखेंगे, को एक महान शिक्षा प्राप्त होगी कि ग्रानन्द तो मन की दो शोकपूर्ण दशाग्रों के बीच एक सुख का मध्यावकाश होता है। देश निकाले के दुख के बाद ही समर में विजय का उल्लास ग्राता है। यह भी द्रौपदी के पाँच पुत्रों की हृदय-विदारक हत्या से ग्रवसाद की काली चादर से ढक जाता है। गुरु पुत्र ग्रश्वत्थामा बदले की भावना से रात्रि के अन्धकार में इन सोते हुये युवकों का क्रूरतापूर्वक वध कर डालता है। नाटिका का मुख्य कथानक यही है।

ग्रानन्द पूर्ण समर्पण की भावना के साथ जीवन के उतार चढ़ावों को सहते जाना ही शान्ति का राजपथ है। प्रत्येक जीव को सुख शान्ति की लालसा होती है। परन्तु, यह कैसे प्राप्त हों, इसकी शिक्षा देने वाला कोई नहीं है। रामायण और महाभारत शान्ति के अन्वेषकों के लिये ज्ञान का ग्रक्षय भंडार हैं। समयानुकूल ग्रौर प्रेरक शिक्षाग्रों और उदाहरणों से यह ग्रंथ परिपूर्ण है। इन शिक्षाग्रों को हृदयंगम कर लेने से पवित्रता प्राप्त की जा सकती है। एक पवित्र हृदय, जो भगवान् की ग्रोर निर्देशित है, ग्रौर जिसमें वह प्रतिबिम्बित होता है, ही वास्तव में स्वर्ग, बैकुण्ठ या कैलाश है।

भारत के (जो कि शताब्दियों तक एशिया का प्रकाश ग्रौर पश्चिम का गुरु रहा है) पुत्रों ग्रौर पुत्रियों के लिये यह एक राष्ट्रीय कलंक की बात है कि वे पश्चिम के इन वैज्ञानिक ग्राविष्कारों की चकाचौंध से ग्रन्धे होकर ग्रपना मार्ग ग्रन्धों की तरह टटोलें। शान्ति बाह्य अंतरिक्ष से ग्रायात नहीं की जा सकती। यह तो हृदय के अन्दर से ही झरने की तरह फूट निकलती है।

कालेज की शिक्षा तुम्हें ऐसा ग्रवसर प्रदान करती है कि चन्द सिक्के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कमा लो और उसी पर अपना निर्वाह करो। परन्तु सामान्य मानवों में जो भ्रम समाया हुआ है उसका उच्छेदन जब तक नहीं होता है तुम्हारे जीवन में भी प्रसन्नता नहीं आ सकती। एक भ्रम जो नितान्त अवांछनीय है, यह है कि तुम लोग यह सोचते हो यह शरीर ही तुम हो और इसके नाश होने से तुम्हारा नाश हो जावेगा। दूसरा भ्रम यह है "धन, ज्ञान, सुख-सुविधा और यश को संग्रह कर लेना प्रसन्नता प्राप्ति के साधन हैं।" इन सबके संग्रह के प्रयत्न से आनन्द प्राप्त करने की आशा करना ऐसा ही है कि मद्रास जाने वाली बस में बैठकर बंगलौर पहुंचने की आशा करना। प्रसन्नता क्या होती है? यह तो मस्तिष्क की उस दशा या स्थिति का नाम है जो दुर्भाग्य या सौभाग्य से अप्रभावित रहती है। मस्तिष्क की दशा उस दशा से भिन्न होती है जो जीवन-स्तर की उच्चता या वस्तु संग्रह की प्रचुरता मात्र से अनुभूति होती है। व्यवस्थित शिक्षा से मस्तिष्क उस स्थिति को प्राप्त कर लेता है। अतः मानव को बिना निष्क्रिय, सुस्त और निकम्मा व्यक्ति बनाये ही यह किया जा सकता है। यदि क्रिया मात्र पूजा-भाव से की जाती है तो मस्तिष्क स्थिर और चिन्ता रहित हो जाता है।

मद्रास के गवर्नर अभी कह रहे थे कि छात्रों को राजनैतिक विवादों से दूर रहना चाहिये। उन्हें अपने अध्ययन से इनके कारण चित्त नहीं हटाना चाहिये। मैं तुम्हें अध्ययन में अपना मस्तिष्क केन्द्रित करने का परापर्श देता हूँ; क्योंकि वर्तमान में, कदाचित सदैव ही, राजनीति एक क्षुद्र क्रीड़ा है जहां मनोविकार उभाड़े जाते हैं और पूर्वाग्रहों का संवर्धन एक सम्मानप्रद नीति के नाम से किया जाता है। तेलगू में राजनीति के लिये 'राजकीय' शब्द का प्रयोग होता है। परन्तु अधिक उपयुक्त तो तब है जब इसे 'राज-कय्या' कहा जावे। 'कय्या' का अर्थ है दलीय संघर्ष। तुम्हें तो नवीन प्रकार के पथप्रदर्शक बनना है, जोकि सेवा को साधना मानकर, पककर घरिया में से स्वर्ण-खण्ड के समान निकले हों। यह स्कूल, कालेज ही तो वह घरिया हैं। यहां तुम्हें भूतकाल के अनुभवों के प्रकाश में वर्तमान और भविष्य की समस्याओं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को सुलझाने का ज्ञान प्राप्त होता है, और आप में देश की परम्पराओं और संस्कृति के प्रति निष्ठा और प्रेम की जड़ें सुदृढ़ होती हैं।

यही वह कार्य है जिसके लिये तुम्हें अपने को तैयार करना है। तेलगू में कार्य के लिये शब्द 'उद्योग' है। इस शब्द की व्युत्पत्ति पर ध्यान दो। उद्+योग, उद् का अर्थ ऊपर को, उठना, निकला हुआ। इस प्रकार यह योग की क्रिया है इससे काम का उद्देश्य और प्रकृति की परिभाषा हो जाती है। और 'योग' क्या है? पातञ्जलि कहते हैं, "योगश्चित्त वृत्ति निरोधः। मन की भय, आशंका, क्षोभ, चिन्ता आदि वृत्तियों को रोकना। जो लोग प्रशासन के अधिकारी होते हैं वे इस प्रकार के रोक लगाने वाले नियमों को बनाते हैं, परिवर्तित करते हैं और विधि-निषेधों के द्वारा राजकीय योजनाओं को लोकप्रिय बनाने का कार्य करते हैं। उनकी योजनाओं में, भोजन संबंधी रोक (फूड कंट्रोल) स्वर्ण संबंधी रोक (गोल्ड कन्ट्रोल) संतति निग्रह (वर्थ कन्ट्रोल) आदि अनेक योजनायें हैं; परन्तु सबसे मौलिक और आवश्यक मनोनिग्रह (माइन्ड कन्ट्रोल) का कोई स्थान नहीं है। तुम एक शीतल वायु वाले कमरे में भले ही बैठो परन्तु, यदि तुम्हारा मन क्षुब्ध है; क्रोध, ईर्ष्या, लोभ या भय से आक्रान्त है तो वहाँ तुम्हें कुछ गर्मी या उष्णता का ही अनुभव होगा।

भगवान् की यात्रा पर निकले हुए विभिन्न सड़कों पर चलने वाले तीर्थ-यात्रियों में शिक्षा के द्वारा घृणा का भाव निर्मूल हो ही जाना चाहिये। ईश्वर एक है, लक्ष्य एक है, एक ही कानून है, एक धर्म है और तर्क भी एक ही है। तुम यहाँ काडुगुडी में सकड़ों भिन्न-भिन्न गाँवों, नगरों से आये हो; परन्तु सभी एक ही इच्छा को लेकर, एक ही 'स्वामी' के दर्शनों के लिये आये हो।

यह विद्यालय पूर्ण शिक्षा देने की ओर ध्यान देगा। अर्थात् कर्ममार्ग,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

धर्ममार्ग और ब्रह्ममार्ग तीनों ही की। तुम चाहे यहीं पढ़ते रहो, या बाद में किसी अन्य कालेज में भर्ती हो जाओ, अथवा अपना अध्ययन समाप्त कर घर चले जाओ; जहां कहीं भी होओ, यहाँ की देखरेख और शिक्षा की छाप से तुम सर्वत्र अलोकित रहो। निश्चय ही तुम अपनी सचरित्रता, ईमानदारी, आध्यात्मिक आकांक्षा वाले आचरण के उदाहरण से सभी को प्रेरणा देते रहोगे। डा० गोकक ने आधुनिक युवकों के पहनावे—छैला बनने, की चर्चा की है। मैं सादगी पसंद करता हूं; ऐसा परिधान जिससे लोग तुम्हारे समीप आने में हतोत्साहित न होवें कि तुम उनसे मृदु भाषण करोगे या नहीं। एक छोटी सी सेवा, कुछ सहायता, दोगे या झिड़कोगे और तिरस्कार पूर्वक उपेक्षा करोगे। परिधान स्वच्छ, सुरुचिपूर्ण हो; विदेशी और विचित्र न प्रतीत होवे। परिधान केवल लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने ही के उद्देश्य से न धारण किया जावे। जैसे तुम शरीर के लिये स्वच्छ सुखदायक वस्त्र पहनने की इच्छा करते हो, उसी प्रकार मन को स्वच्छ और शान्त करने वाले अभ्यास भी किया करो; जैसे जप, ध्यान आदि। सुखदायक वस्तुओं को देखने के लिये नेत्रों का प्रयोग करो, पैरों को भगवान् के मन्दिर (तीर्थयात्रा) जाने के लिये प्रयोग करो। अपने चतुर्दिक घूमती हुयी भगवान् की नराकार मूर्तियों की सेवा के लिये प्रयोग करो, जिह्वा को भगवान् का यश बखानने और किसी को सान्त्वना देने के लिये प्रयोग करो। अपने मस्तिष्क को अश्लील भावों से भरने के लिये आँख का प्रयोग मत करो, पैरों को, गंदी फिल्मों के लिये टिकट खरीदने की प्रतीक्षा में लगी पंक्तियों में खड़े होकर, कष्ट मत दो। विद्यालय में अपनी असाधारण योग्यता, अध्ययन-पटुता के लिये तुमने नेत्रहीन सुधीर को अनेक पुरस्कार प्राप्त करते हुये देखा है। दृष्टि हीनता ने उसे कम से कम एक पतन-मार्ग से तो बचा ही दिया है। मैं यह नहीं कहता कि लोग पूर्ण बनने के लिये अपने नेत्रों से ही हाथ धो लें। नेत्रों के होते हुये भी पतन मार्ग से बचे रहने में अधिक शूरता है।

विद्यालय के वार्षिकोत्सव की समस्त व्यवस्था बालकों द्वारा ही की गयी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

थी। वे कई दिनों से इसमें जुटे हुए थे; और आज भी उन्हें क्षण भर का विश्राम नहीं मिला। यद्यपि मैंने उनसे कहा कि मध्यान्ह में भोजन और विश्राम के लिये एक घण्टे का अवकाश ले लें। परन्तु, उन्हें मंच की सजावट और प्रांगण को स्वच्छ कर लेने की अधिक चिन्ता थी कि समस्त क्षेत्र स्वच्छ और आकर्षक दिखाई दे। बालक वास्तव में बहुत अच्छे हैं, वे अपना कर्त्तव्य करना चाहते हैं और अध्ययन के विषयों में भी यशस्वी होना चाहते हैं; वैसे ही जैसे कि सेवा क्षेत्र में उनकी आवारागर्दी, मनमौजीपन और कभी-कभी अनुशासन हीनता की लहरों के लिए मैं बड़े बूढ़ों को ही दोषी समझता हूं जो अपने आत्म संयम या सत्याचरण के बड़े विकृत उदाहरण छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। जीवन के थोथे मूल्यों वाले कार्यों और वातावरण से प्रभावित होने पर उनमें भी दोष आ जाना स्वाभाविक है। इस विद्यालय के बालक अपने सगे-सम्बन्धियों और उन ग्रामों में भी, वे जहाँ के निवासी हैं, स्वस्थ और उन्नायक प्रभाव डालेंगे। बड़ों की योग्यता और षड़यंत्रों से नगरों का वायुमण्डल बेचैनी से संपृक्त हो गया है; इसीलिए यह कालेज ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित किया गया है।

शिक्षा की सबसे मूल्यवान देन चरित्र होता है। मैं जीवन के इस उपहार का प्रमुख अंग 'कृतज्ञता' को मानता हूं और सबसे अधिक माता-पिता के प्रति कृतज्ञता होनी चाहिये। उन माता-पिता का, जो तुम्हें इस विद्यालय की शिक्षा दिलाने के लिये अपनी सुख-सुविधाओं का बलिदान कर रहे हैं, सम्मान करो। यदि कोई माता या पिता यह कह कर दुखी होता है कि 'मैंने तो साई बाबा कालेज में अपने पुत्र को शिक्षा प्राप्त करने भेजा था और अब वह मेरे ही विरुद्ध हो गया है। उसे मेरी इच्छाओं के प्रति कोई सम्मान नहीं है, मेरे लिये तो अब उसका होना न होना बराबर है।" इससे कालेज को भी महान दुख होगा। यदि इसके स्थान पर कोई माता-पिता कहता है, "मैंने अपने पुत्र को साई बाबा कालेज भेजा और अब वह मेरा इतना आज्ञाकारी है, वह मेरी तुच्छ से तुच्छ इच्छा का बहुत सम्मान करता है; निस्संदेह,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मेरी सभी इच्छायें उसी के कल्याण के लिये होती हैं। परन्तु फिर भी, पहले वह बहुत बड़बड़ाता रहता था और हर काम को अन्यमनस्कता और विरोध के साथ किया करता था।" यही तो पुरस्कार है जो तुम कालेज को देते हो।

आज तुम्हें खेल-कूद, अध्ययन, भाषण प्रतियोगिता, निबंधलेखन में दक्षता प्रकट करने के लिए पुरस्कार दिये गये हैं। तुम्हें भी कालेज को एक पुरस्कार देना चाहिये, और तुम जानते हो वह क्या है ? जब तुम्हारे माता-पिता आनन्द के आंसू गिराते हैं, जब वे तुम्हें स्वस्थ, प्रसन्न और अच्छे देखते हैं, तभी कालेज को पुरस्कार प्राप्त होता है। जब तुम्हारे माता-पिता तुम्हारी ईमानदारी, सेवाभाव, नेतृत्व, सच्चे उपयोगी जीवन, के विषय में सुनते हैं तो वे आनन्द से भर जाते हैं। वह आनन्द ही वह पुरस्कार है जो तुम अपने कालेज को देते हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४३ सर्वाधिक लाभ का व्यवसाय

(बम्बई १३-५-१९७०)

"पिंगे की कक्षायें" नामक सस्था की रजत-जयंती के इस अवसर पर मुझे यह अवसर मिलने की प्रसन्नता है कि मैं शिक्षा के नैतिक और आध्यात्मिक पक्षों के महत्त्व पर कुछ कह सकूंगा। क्योंकि पिन्गे ने अपना जीवन ही इनकी उन्नति के लिये अर्पित कर दिया था। इन कक्षाओं जैसे किसी काम की प्रशंसा में जो कुछ कहा जाये वह अधिक नहीं है। ऐसी संस्थाओं की संख्या इस देश में शीघ्रता से बढ़नी चाहिये। और उन्हें सभी प्रकार का प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये; क्योंकि वे उस अतिरिक्त को प्रस्तुत करते हैं जो कि एक तात्कालिक आवश्यकता है।

तुम सब जानते हो और कहते हो कि भारत योग-भूमि, त्याग-भूमि और उत्तम कर्म-भूमि है। अपने मस्तिष्क में देश के चित्र की कल्पना करो। सबसे प्रमुख और ध्यानाकर्षण करने वाली हिमालय पर्वत श्रेणी है, रजत-शुभ्रश्रृंग नीले आकाश में उन्नत है। यह भारत की शाश्वत रजत जयंती है। इन्हीं श्रृंगों से स्वच्छ पारदर्शक पवित्र जल वाली गंगा बह निकली है, जो भारतीय संस्कृति का प्रतीक है।

भारतीय संस्कृति ही मानव की उन्नति का मूलाधार है। भ्रातृत्व की उन्नति करके, सत्यधर्म के समर्थन से, प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य को विनम्रता और श्रद्धा से संपृक्त करके यह मानवता की ही उन्नति करेगा। जब तक गंगा बहती है यह संस्कृति अडिग बनी रहेगी; इसको दबाने या

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मिटाने के सभी प्रयत्न असफल रहेंगे। जब गंगा ही सूख जावे तो यह भी मिट सकती है।

भारत की परम्परा और इतिहास उतने ही पवित्र हैं जैसी कि गंगा पावन कारिणी आरोग्यवर्धक और बहुमूल्यवान है। दोनों के उद्गम वही शीतल, सुखदायक, निष्कलंक, स्वच्छ हिमाच्छादित शिखर हैं।

यह देश सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक रोगों से ग्रस्त है, क्योंकि जो लोग शिक्षानीति को निर्धारण करने के लिए उत्तरदायी हैं उन्होंने भारत के लड़के-लड़कियों को भारतीय संस्कृति की शिक्षा देने का कभी प्रयत्न नहीं किया है। वे उनके प्रति निष्ठावान ही नहीं हैं, मानव को सुसंस्कृत जीवन धार्मिक जीवन जीने की शिक्षा ही नहीं दी जाती है। उन्हें इन सिद्धान्तों के जानने और प्रचार करने का कोई उत्साह नहीं होता है। बिना धार्मिक और सुसंस्कृत जीवन की शिक्षा पाये केवल चतुरता और कारीगरी में निष्णात व्यक्ति अपने और समाज के लिये एक संकट ही होता है। इस समय शिक्षा की माध्यम भाषा के विषय में अनन्त तर्क-वितर्क किये जा रहे हैं। इस शास्त्रार्थ का कभी अंत भी होगा ? परन्तु हृदय की भाषा तो एक ही होती है, जो प्रेम की शब्दावली प्रयुक्त करती है, आत्म-निरीक्षण और आत्म-बलिदान की लोकोक्तियां प्रयोग करती है। आजकल स्कूल और कालेज छात्रों के मस्तिष्क में तथ्यों और कल्पनाओं को ठूंस-ठूंस कर भर रहे हैं, वे उन्हें जीवन के परिणामों को साहस और शान्तिपूर्वक सहन कर जाने की शिक्षा नहीं देते हैं, छात्र में जो गुण हैं उनका पूर्ण विकास कर उन्हें समाज की सेवा में लगाने की शिक्षा नहीं देते हैं। प्रार्थना का अभ्यास उनमें साहस और आत्म-विश्वास दृढ़ करेगा। इससे छात्रों को अनंत शक्ति का एक नवीन स्रोत ही प्राप्त हो जावेगा। छात्रों को ध्यान और योग के मधुर अनुभवों से अवगत कराने का कोई प्रयास ही नहीं किया जाता; अथवा उन्हें आत्म-ज्ञान की जिज्ञासा के लिये भी प्रेरित नहीं किया जाता।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

छात्र जब पाठ्यक्रम समाप्त कर, व्यायाम और अन्य कष्टदायक कार्य-क्रमों को पूरा करके बाहर आता है तो उसे उपाधि वितरण के अवसर पर एक उपाधि दी जाती है। वास्तव में यह उपाधियां तो एक भिक्षा-पात्र जैसी होती हैं। इसे हाथ में लेकर स्नातक दफ्तरों के द्वार-द्वार जाकर नौकरी मांगता है। आज की शिक्षा नवयुवकों को द्वार-द्वार भिक्षा मांगने वाले भिक्षुक में बदल रही है। वे स्वावलंबी नहीं हो पाते हैं; और न स्वतंन्त्र रूप से अपनी रोजी-रोटी का प्रबंध कर पाते हैं। यह भारतीय संस्कृति का चिन्ह या विशेषता नहीं है। नहीं, इसमें तो अध्यापक, नेता और उसके परामर्शदाता तथा बड़े-बूढ़े लोग ही दोषी हैं।

वे तो एक पत्थर के टुकड़े में से ऐसी सुन्दर मूर्ति गढ़ने वाले शिल्पी हैं, जो मन को प्रेरणा दे सके और उन्नत कर सके। वे रूखानी नहीं चलाते हैं, वे तो पत्थर के टुकड़े को जैसे का तैसा ही छोड़ देते हैं। स्वतन्त्रता के नाम पर स्वच्छन्दता का उपभोग हो रहा है। स्वतन्त्रा की तो कुछ सीमायें होती हैं, इसी नियमन से तो शक्ति का उन्नयन होता है। 'विद्या विनय सम्पन्ने' अर्थात् विद्या से विनम्रता और अनुशासन आना ही चाहिये।

किसी भी छात्र से पूछो वह विद्यालय क्यों जाता है, शायद ही वह कभी स्पष्ट उत्तर दे सके। प्रायः यही उत्तर होता है कि मैं पढ़ना चाहता हूँ 'मैं अध्ययन करना चाहता हूँ' यदि यही सब कुछ वह चाहता है तो वह घर पर भी पढ़ सकता है या अध्ययन कर सकता है, कोई न कोई पथप्रदर्शक मिल ही जावेगा। वे स्कूल या कालेजों में क्यों पढ़ने जाते हैं जोकि उनके घर से इतनी दूर होते हैं और इतना अधिक व्यय साध्य भी हैं? वे स्कूल कालेजों में अनु-शासन सीखने नहीं जाते हैं। अपने उद्वेगों को रोको, अपनी वृत्तियों को उचित दिशा में मोड़ दो स्कूल कालेजों से जो कुछ सीखा जा सकता है उसका एक अंश ही पढ़ाई-लिखाई होती है। वे छात्रों में पारस्परिक सहयोग, शिष्टाचार, नम्रता, दयालुता, साथीपने की भावना, परिस्थितियों के साथ संगति बिठाना, और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शान्त विचार-मंथन से विघ्न-वाधाओं पर विजय प्राप्त करना, आदि की शिक्षा देते हैं। प्रत्येक विषय की परीक्षा में जो प्राप्तांक तुम प्राप्त करते हो वे इतने महत्त्वपूर्ण नहीं होते हैं, मैं उन टिप्पणियों को, जो तुम्हें तुम्हारे अध्यापकों से अच्छाई या बुराई के लिये दी जाती हैं, अधिक महत्त्व देता हूँ; जैसे 'अच्छा' 'बुरा' 'उदासीन' 'ताजा' 'सुन्दर और 'स्वतन्त्र' या 'दुष्ट' 'नीच' या 'गन्दा'। माता-पिता अनेक कष्ट उठाकर बच्चों को अच्छी शिक्षा के लिए बाहर भेजते हैं। और इसके बदले में तुम उन्हें और कष्ट दो और सदा दुखी ही रखो, तुम्हारा चलन व्यवहार इतना दुष्ट हो जाय कि तुम्हें कोई भी अपनी देख-रेख में रखने को तैयार न होवे, तो यह तुम्हारी कितनी बड़ी कृतघ्नता होगी। जिस शान्ति और आनन्द के वे पात्र हैं वह उन्हें दो क्योंकि उन्होंने स्वयं कष्ट उठाकर तुम्हारी बड़ी सेवा की है, बड़ा त्याग किया है। छात्रों को तो राजनीति से कोई संबंध नहीं रखना चाहिये। आजकल राजनीति से लगाव रखने के कारण ही कालेजों और स्कूलों के छात्र बिगड़ रहे हैं।

बिना सिद्धान्तों की राजनीति, और चरित्र के बिना शिक्षा, मानवता से रहित विज्ञान, नैतिकता विहीन व्यापार, उद्योग, केवल व्यर्थ ही नहीं बल्कि निश्चय ही भयंकर हैं। बुद्धि से भी ऊपर चरित्र को महत्त्व देना चाहिये। अभी तो दुर्व्यवहार तुम्हें साहसिकता का पर्याप्त प्रतीत होता होगा; परन्तु कुछ काल बाद जब तुम्हारे पुत्र ऐसा ही व्यवहार करेंगे तब तुम्हें इस दुर्व्यवहार की बुराई का बोध होगा और तुम इसे साहसिकता नहीं मान सकोगे। आज जैसा दृष्टिकोण है, उसी के उपर तो भविष्य का निर्माण हो रहा है। कर्म-फल से कभी भी बचा नहीं जा सकता। यदि तुम अपने माता-पिता को आनन्द दे सकोगे तो तुम्हारे बुढ़ापे के दिनों में तुम्हारे बच्चे भी तुम्हारे आनन्द-प्राप्ति के साधन बनेंगे।

विद्यालयों में हमें निस्वार्थ प्रेम की वृद्धि करनी चाहिये, और इसमें किसी प्रकार का भय या सन्देह नहीं करना चाहिये। अध्यापकों को सदाचार, नैतिक महानता और आध्यात्मिक साधना का जीवन बिताना चाहिये। आज के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

छात्र ही तो कल अध्यापक बनेंगे; इसीलिये कक्षा का वातावरण स्वच्छ होना अत्यावश्यक है; जिससे भविष्य उज्ज्वल हो। अध्यापक तो जलाशय हैं जहां से शिक्षा की प्रक्रिया से छात्र जीवन रूपी जल प्राप्त करते हैं; इसलिये इस बात की बड़ी चिन्ता करनी चाहिये कि यह जलाशय घृणा, घमण्ड आदि से दूषित न होने पावें। स्कूल कालेज केवल अध्यापन और अध्ययन के ही कार्यों तक सीमित न रहें। पढ़ना, लिखना और हिसाब जोड़ना इन्हीं तीन कार्यों से विद्यालय के महान कार्य की इतिश्री नहीं हो जाती। महान आदर्शों की छात्रों के हृदय में स्थापना और उन आदर्शों को अपने चरित्र में उतारना भी तो विद्यालय के महान उद्देश्य हैं

स्कूल में तुम्हें अनेक अध्यापक पढ़ाने आते हैं। उनमें से इतिहास का अध्यापक पुस्तक और मानचित्र की सहायता से पढ़ाता है; गणित का अध्यापक श्याम-पट पर प्रश्नों को हल करता है, विज्ञानाध्यापक की अपनी प्रयोगशाला होती है; परन्तु व्यायाम शिक्षक को छात्रों के समक्ष खड़ा होना पड़ता है; जो कि स्वयं पंक्तिवद्ध होकर खड़े होते हैं, और उसे स्वयं अपने हाथ पैरो को गति देकर व्यायाम की क्रिया का प्रदर्शन करना पड़ता है वैसा ही अभ्यास वह अपने छात्रों से आशा करता है। तुम सब अच्छा काम करो और दूसरों के लिये एक अनुकरणीय उदाहरण बनो। इस देश के भविष्य को महान बनानें का यही मार्ग है। एक विचित्र विरोधाभास इस देश में पनप रहा है; इसके गंभीर परिणाम भी होंगे। यद्यपि आज दुनियाँ एक बहुत छोटा गोला मात्र रह गयी है; इसका कारण यातायात और संचार के क्षिप्र साधन ही हैं; परन्तु दुख हैं कि मनुष्य ने अभी निकट पड़ोसियों से मिलजुल कर एक भगवान् के बच्चों की तरह रहना भी नहीं सीख पाया है। मानव जितना ही अधिक समीप आता जा रहा है उतने ही अधिक मतभेद उभर कर सामने आ रहे हैं। अतः यह नन्हीं सी दुनियाँ विरोधी संस्कृतियों की समस्याओं से अभिभूत, प्रतिद्वन्दी धर्मों और विरोधी महत्त्वाकाँक्षाओं से पीड़ित है। एक राज्य के दुख शीघ्र ही सभी दूसरे राज्यों में फैल जाते हैं और अंततोगत्वा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

समस्त विश्व में दूषण फैल जाता है। विश्व एक विस्तृत मैदान बन गया है जहां शीत, गरम और तप्त युद्ध होते रहते हैं।

जब संक्रामक रोग सीमाओं को लांघ जाते हैं और बिना किसी भेद-भाव के नरसंहार में जुट जाते हैं तो उस आतंक को सीमित करने, रोकने का उपाय तत्काल किया जाता है और विनाश के क्षेत्र में सहायता शीघ्र भेज दी जाती है। परन्तु घृणा और लोभ की बीमारियों का शमन इतनी सफलता से अथवा इतने शीघ्र नहीं किया जा सकता है; चाहे वह कितनी ही शक्तिशाली सरकार क्यों न हो। आओ हम इस प्रश्न का उत्तर खोजें, "किस प्रकार की सरकार उत्तम होती है ?" इसका यही उत्तर है, "वह सरकार सबसे अच्छी है जो हमें अपने ऊपर शासन करने में सहायता देती है"। अपनी अंतरात्मा को शासक बना दो, किसी बाहरी प्रशासक पर निर्भर मत रहो।

जो संसार के रोगों का निदान खोजते हैं वे विभिन्न उपचारों से उनका सुधार करना सुझाते हैं; परन्तु कोई भी विश्लेषण सही तर्क नहीं प्रस्तुत करता है। बीमारी का मूलभूत कारण 'डिस-ईज' (अंग्रेजी पर्याय की व्युत्पत्ति के अनुसार) 'आत्म विश्वास की कमी' होती है। आत्मा को आनन्द का स्त्रोत और निर्भर मान सकने के विश्वास की दुर्बलता है। इसीलिये मनुष्य का मन सांसारिक आनन्दों के पीछे भटकता रहता है। परिणाम तो शोक होगा ही।

बाइबिल कहती है कि धार्मिक पुरुष भगवान् को प्राप्त करना चाहते हैं। परन्तु एनीबीसेन्ट ने कहा कि भगवान् तो स्वयं धार्मिक अन्वेषक को खोजता है। भगवान् उस साधक की खोज करता रहता है जो पवित्र हृदयवाला और परमात्मा की प्राप्ति का इच्छुक है। मानव ने दुनियाँ को एक रंगमंच बनाकर रख दिया है; भगवान् की भक्ति भी रंगमंच का अभिनय मात्र रह गयी है। तुम लोगों को ऊपर से ठट्ठा लगाते हुये परन्तु अपने अन्तरतम हृदय में क्रन्दन करते हुये देखते हो उनका जीवन योंही बीत रहा है। हम ऐसे लोगों को भी देखते

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है जो अपने हृदय में तो हंसते हैं परन्तु दुनियाँ को दिखाने के लिये ऊपर से धाड़ मार-मार [कर रोते दिखाई देते हैं कि उनका भाग्य विपरीत है। जिस पूजा में प्रयत्नपूर्वक प्रभाव उत्पन्न किया जाता है, वह तो गड्ढे को देख समझ कर किया हुआ अभिनय है; उसमें कोई वास्तविकता या सत्यता नहीं होती है।

तुम देखते हो कि एकाएक कोई किसी 'वाद' को नवीन और क्रान्तिकारी कह कर प्रचार करने लगता है। उदाहरणार्थ समाजवाद को ले लें। इसका अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के समान है; यह तो प्राचीनकाल से ही भारत में माना जाता रहा है। राम जो कि एक विशाल राज्य के चक्र-वर्ती सम्राट थे, एक अनुत्तरदायी तुच्छ धोबी की निन्दात्मक आलोचना अन-सुनी न कर सके; वह धोबी तो अपनी पत्नी से झगड़ रहा था। परिणाम-स्वरूप उन्होंने अपनी रानी को, जिसकी पुनः प्राप्ति के लिये उन्होंने एक लोमहर्षक भीषण युद्ध लड़ा था, वन में निष्कासित कर दिया जबकि उन्हें ज्ञात था कि सीता गर्भवती थीं। हर किसी की वाणी को राम के राज्य में समान महत्त्व दिया जाता था, चाहे वह किसान हो या कोई अन्य कार्यकर्त्ता हो। आजकल यही तो नारा दिया जाता है न? समाज के इन दोनों वर्गों को कृष्णावतार में उनका उचित स्थान और महत्त्व दिया जाता था। आजकल चाहे लोग भोज्य सामग्री का उत्पादन न भी करें और नकद-नारायण कमाने वाली कोई जिन्स उगायें, फिर भी उनको सम्मानित किया जाता है। आजकल हम विदेशी-मुद्रा के चक्कर में हैं इसीलिये लोगों को वह जिन्स उगाने के लिये उत्साहित किया जाता है जिसे अन्य लोग खरीदने को इच्छुक भी हों इससे हमारी आवश्यकता का कोई संबंध नहीं है। कृष्ण तो स्वयं 'गोपाल' गौओं को पालने और चराने वाले थे। गायें दूध देती थीं और उनसे अनेकों पदार्थ बनाये जाते थे जो बड़े पोषक होते थे। अवतार के अग्रज बलराम तो अपने अधिकार-स्वरूप हल को ही अपने अस्त्र के रूप में रखते थे। इससे कृषि-कार्य की महत्ता और पवित्रता प्रकट होती है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भगवान् नराकार में अभिव्यक्त होता है, वह पशुओं के लिये, कृषि-कार्य के लिये, चरागाह (गोचारण क्षेत्र) और कृषि-भूमि का विकास करता है जिससे भोजन मस्तिष्क का पोषण करे, उसे बुद्धिमान बनावे जिससे व्यक्ति भगवान् को प्राप्त कर सके। मस्तिष्क के ही लिये शरीर का भी पोषण होना आवश्यक है; जिससे ज्ञान प्राप्त होवे और उससे मोक्ष प्राप्त होवे। भोजन—मस्तिष्क—भगवान् के क्रम से घटने वाली शृंखला अटूट और दृढ़ होती जावे।

तुम इसे बहुत कठिन बताकर भय खाते हो; नहीं कभी-कभी तो भगवत्प्राप्ति को असंभव भी कह जाते हो। यह तो बहुत ही सरल है। इसकी सरलता ऐसी है कि तुम्हें इसमे कुछ गुप्त रहस्य निहित लगता है। तुम सरल स्वभाव और सरल वस्तुओं की सराहना न करके उनसे चौंकते हो। उदाहरण के लिये सच बोलने से अधिक सरल कुछ भी नहीं है। यदि साहस करके तुम असत्य बोल जाओ, तो तुम्हें इसके लिये नई-नई कहानियां गढ़नी पड़ेंगी जो उसी असत्य भाषण की पोषक होंगी। इसी के आधार पर उन कहानियों और उनसे संबंधित व्यक्तियों को स्मरण रखना होगा। यह सब बातें उलझनों और अनेक नये असत्यों को उत्पन्न करने वाली होंगी।

छात्रों ! तुम तो 'दिव्यता' की प्रतिमूर्ति हो। विद्या (ज्ञान) की दो श्रेणियां होती हैं जिन्हें तुम को दक्षतापूर्वक सीख लेना है। विज्ञान—अर्थात् अपने चतुर्दिक संसार का ज्ञान और प्रज्ञान—उच्च ज्ञान जिसके द्वारा आन्तरिक मनोभावों और चेतना के विभिन्न स्तरों का संयम करना सीखा जाता है। कल्याण करने वालो, उपकार करने वालो और उपकृत होने वालो तुम शिक्षा के क्षेत्र में हो मेरी बात को समझ लो। हर छात्र की कलाई पर घड़ी बंधी है। और उस घड़ी पर कम से कम सौ बार प्रतिदिन तुम्हारी दृष्टि जाती है। अच्छा; घड़ी से एक महान पाठ की शिक्षा लो।जब तुम घड़ी को ध्यान से देखो तो (अंग्रेंजी के) ५ अक्षरो को स्मरण रखो जिनसे "वाच" शब्द बनता है। प्रत्येक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अक्षर जीवन के लिये एक उत्तम शिक्षा देता है 'डवल्यू' से "वाच योर वर्ड्स" अपने शब्दों का ध्यान रखो; 'ए' से "वाच योर एक्शन्स" अपने कर्मों का ध्यान रखो। 'टी' यह संकेत करता है कि "वाच योर थॉट्स" अपने विचारों का ध्यान रखो। 'सी' का परामर्श है 'वाच योर कैरेक्टर' अपने आचरण का ध्यान रखो और 'एच' घोषित करता है कि 'वाच योर हार्ट' अपने हृदय का भी ध्यान रहे। जब-जब घड़ी से समय ज्ञात करना चाहो तो यह शिक्षा भी स्मरण कर लिया करो।

चूंकि डा० गोकक बंगलोर विश्वविद्यालय के उप-कुलपति हैं, उन्होंने शिक्षा के चार मौलिक उद्देश्यों की चर्चा की है। वे कहते हैं ज्ञान, चातुर्य, संतुलन और अन्तर्दृष्टि यही चार लक्ष्य हैं। निस्सन्देह, ज्ञान तो प्रत्येक ही ग्रहण करता रहता है; यह ज्ञान इन्द्रियों से, वस्तुओं और घटनाओं के परिणामों से और उनके विवेचन से प्राप्त होता है। बिजली की धारा की क्षमता में भिन्नता हो सकती है, उससे प्रत्येक बल्ब कुछ न कुछ आलोकित होता है। गोकक कहते हैं कि ज्ञान को स्किल चातुर्य में परिणत कर लेना है। परन्तु अंग्रेजी के इस शब्द स्किल का 'एस' हटाकर इसे केवल 'किल' रखा जाता है, जिसका अर्थ है हत्या करना, वध करना। इस प्रकार ज्ञान की परिणति हत्या में हो रही है। इस प्रकार हत्या के लिये ज्ञान का प्रयोग करने से स्वयं ज्ञान की ही हत्या हो जाती है। इस प्रक्रिया में 'संतुलन' भी विगड़ जाता है; इसलिये अन्तरदृष्टि—जोकि गोकक का चौथा लक्ष्य है, के स्थान पर बाह्यदृष्टि ही विकसित होती है।

मैं छात्रों का अपने माता-पिता का सम्मान करने के लिये आह्वान करता हूं, क्योंकि सदाचारपूर्ण जीवन की यही पहिचान है। मैं पिंगे को आशीर्वाद देता हूं जिससे पिंगे की कक्षाओं की स्वर्ण जयंती और हीरक जयंतियाँ मनायी जावें जिससे मैं यहाँ उन अवसरों पर आकर संस्था और उनको पुनः आशीर्वाद दे सकूं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मैं चाहता हूं कि इन कक्षाओं में केवल विभिन्न परीक्षाओं के लिये निर्धारित पाठ्यक्रम ही पढ़ाये जावें बल्कि इसके साथ ही महान धर्मग्रन्थों के कुछ अंश भी सम्मिलित कर लिये जावें और वे भी पढ़ाये जावें जिससे वे इस बहुमूल्य ज्ञान-कोष से वंचित न रहें। मेरा सुझाव है कि तुम्हारे कार्यक्रम में प्रार्थना रख ली जावे जो कक्षायें प्रारंभ होने के पूर्व ही श्रद्धापूर्वक गाते हुये दोहरायी जावे। इसी प्रार्थना के द्वारा ही तो प्रभु-कृपा का अपने ऊपर आह्वान किया जाता है। भजन और कीर्तन भी रहें; क्योंकि भगवान् ने कहा है "मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि" 'जहाँ मेरे भक्त मेरी महिमा-गान करते हैं मैं वहाँ उपस्थित रहता हूं'। भजन से वातावरण शुद्ध होता है और तुम्हारे सांस लेने की वायु पवित्र होती है। श्री भरडे ने मेरे द्वारा इस नगर में एक कालेज की स्थापना की बात कही है; परन्तु विद्यालय की स्थापना के पूर्व ऐसे छात्रों को भी तो तैयार करना है जिन्हें कि उस कालेज में प्रविष्ट करने योग्य समझा जावे। छात्रों को तैयार करो, उन्हें आध्यात्मिक सत्यों की शिक्षा दो और उस अनुशासन (संयम) की भी शिक्षा दो जिससे उन सत्यों को दैनिक जीवन में उतारा जावे। जिस कालेज के लिये तुम इच्छुक हो उसकी शीघ्र स्थापना का यही मार्ग है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४४ 'प्रस्तर में भगवान' नकि 'प्रस्तर के भगवान'

(बम्बई १२-५-१९७०)

भारतीय संस्कृति में सभी धर्मों और विश्वासों को सामञ्जस्यपूर्ण ढंग से व्यवस्थित किया गया है, क्योंकि यह सदाचार पूर्णजीवन के लिये आग्रह करती है; 'प्रेम' और 'सेवा' के लिये आह्वान करती है; इनसे अधिक ऊंची कोई साधना नहीं होती है। परन्तु, लोग तो इस संदेश की पुकार सुनने के लिये बहरे हो गये हैं और वे लोग, जिनका यही कर्त्तव्य है कि समाज की त्रुटियों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते रहें, अब दुर्बल और विदेशी भावों की ओर आकर्षित होकर संशयात्मा हो गये हैं।

समूचे इतिहास में भारत ने अपने बच्चों की निष्ठा सदैव पुरुषार्थ चतुष्टय धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की ओर आकर्षित की है; यानी कि सान्सारिक आदर्श, काम और अर्थ को एक ओर धर्म और दूसरी ओर मोक्ष की सीमाओं के अन्तर्गत, ही स्थान दिया गया है। अर्थ या धन की प्राप्ति सदाचार और धार्मिकता की रक्षा करते हुये ही उचित बतायी गयी है। केवल एक ही 'काम' (इच्छा) उत्साहित किये जाने के योग्य है, वह है 'मोक्ष' की इच्छा। 'प्रेम' प्रेरणा है और 'सत्य' ही लाभ है; जीवन रूपी रथ के यही दो पहिये हैं। 'अहिंसापरमोधर्म' किसी के प्रति मन, वचन, कर्म से हिंसा का व्यवहार न करना ही उत्तम धर्माचरण का आदर्श है। अनादिकाल से इस जाति का यही आदर्शसूत्र रहा है और यह प्रत्येक व्यक्ति के उत्तराधिकार का गुण है चाहे वह स्त्री, पुरुष, बच्चा कोई ही क्यों न हो। इसलिये कहना चाहिये कि वर्तमान अव्यवस्था, जिसके अन्तर्गत हिंसा की बाढ़ आयी है और जब भाई भाई के लिये छुरा, चाकू ताने खड़ा है, उस सब महान आदर्शवादिता, जिसे यह देश बहुमूल्य घोषित करता रहा है, पर यह बहुत बड़े कलंक के समान है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

'हि' का अर्थ हिंसा और दू का अर्थ दूर; इस प्रकार हिन्दू का अर्थ है वह व्यक्ति जो हिंसा से रहित है; जो प्रेम करता है, सहानुभूति रखता है, जो सहायता करता है, सेवा करता है। वह किसी को धोखे से न तो चोट पहुंचाता है और न छिपाव करता है, न हानि पहुंचाता है और न रक्त-शोषण करता है। सभी के ऊपर आकाश एक ही है; सभी के पैर एक ही पृथ्वी पर टिके हुये हैं; वही एक वायु सभी के फेफड़ों में जाती है। ये सब एक ही भगवान् की दिव्य कृतियाँ हैं। वही इनका पालन करता है और वही इनके पार्थिव अस्तित्व को समाप्त भी करता है। फिर यह सब शत्रुता, धर्मान्धता, संघर्ष और झगड़े का अमानवीय व्यवहार किसलिये हैं?

गीता में भगवान् ने कहा है "बीजं माम सर्वभूतानां" मैं ही सभी प्राणियों का बीज स्वरूप हूं' वृक्ष तो बीज का ही एक वृहत् विस्तार फल, फूल, पत्ती और शाखों का होता है। तना, शाखायें, टहनी इत्यादि सभी कुछ उस नन्हें से बीज के अन्दर ही सिकुड़ा छिपा था जो अनुकूल परिस्थितियाँ पाकर इतने वृहदाकार में प्रकट हुआ है। इसी प्रकार विचार कर समझो यह जीवन की विविध क्रियायें जिनमें दुर्बल, सबल, शिकार और शिकारी, अत्याचारी और पीड़ित, रेंगने वाले, उड़ने वाले, तैरने वाले, टहलने वाले, लटकने वाले, बिल में रहने वाले, डुबकी लगाकर जल में रहने वाले, असंख्य योनियों के जीव उसी एक भगवान् रूपी 'बीज' से प्रकट हुये हैं और उन सब का वही एक आधार है; जिसमें अंत में उन्हें लीन होना है। इस विशाल, व्यापक 'दैवतत्त्व' की कल्पना करो, तुममें विनम्रता बुद्धि और प्रेम अंकुरित हो उठेंगे।

भगवान् जो सभी का उद्गम और अंतिम आश्रय है, तभी पहचाना जा सकता है जबकि साधक ने चित्त-शुद्धि के द्वारा पवित्र चेतना प्राप्त कर ली हो। इस चेतना की शुद्धि के लिये मनुष्य को जल्दी ही प्रयास प्रारंभ कर देना चाहिये। दौड़ में वे ही विजयी होते हैं जो जल्दी प्रारंभ कर देते हैं और संभल कर धीरे-धीरे चलते रहते हैं। तभी वे अपने गन्तव्य पर सुरक्षित

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पहुंच पाते हैं; अन्यथा नहीं। अपने नन्हें-नन्हें चरणों को भगवान् के पथ पर रखो, पहले पग रखने से जो आनन्द प्राप्त होगा वही अगला पग रखने के लिये प्रेरित और उत्साहित करेगा। हम भारतवासी तो वृक्षों, पौधों, चिड़ियों, पशुओं में भी भगवान् को देखते हैं, हम उसकी सर्वत्र पूजा करते हैं, सभी वस्तुओं में पूजा करते हैं, जब तुम किसी चित्र की पूजा करते हो तो लोग तुम पर हंसते हैं; कुछ दुर्बल मस्तिष्क वाले तो ऐसा करने में लजाते हैं। परन्तु, हम तो चित्र को भगवान् मानकर व्यवहार करते हैं; न कि भगवान् को चित्र मात्र मानते हैं। प्रस्तर को भगवान् मानकर पूजो; न कि भगवान् को प्रस्तर मानकर व्यवहार करो।

इन आलोचकों को केवल देखने से ही विश्वास आता है। क्या बादलों के पीछे सूर्य के छिप जाने से ये लोग आकाश में सूर्य के अस्तित्व से मुकर जायेंगे? माया रूपी बादल के पर्दे के बीच में आ जाने से भगवान् मनुष्य की चेतना से छिपा हुआ है। जिस आँख में मोतियाबिन्द आ जाता है उसे कमरे में रखा हुआ प्रज्वलित दीपक भी नहीं दिखाई देता है; परन्तु समुचित शल्य-क्रिया के पश्चात् वही कमरे में दीपक क्या, सभी वस्तुयें देखने में समर्थ हो जाती है। केवल शल्य-क्रिया की आवश्यकता थी। यह शल्य-क्रिया आध्यात्मिक संयम की होती है जिसे व्यक्ति को आचरण में लाना होता है, तभी भगवान् का दर्शन हो पाता है।

मानव चाँद तक उड़ा जा रहा है, समुद्रों की तली में उतर रहा है, परन्तु वह नहीं जानता है कि इसी पृथ्वी-तल पर पड़ोसियों के साथ किस प्रकार प्रेम और शान्ति से रहे। वह चन्द्रमा की ओर इस भय से भाग रहा है कि कहीं अन्य लोग उससे पहले न पहुंच जावें, और समुद्र में गोता भी, अन्य लोगों में आतंक उत्पन्न करने के लिये लगा रहा है जब कि वास्तव में वह स्वयं आतंकित है। स्वयं निर्भय होकर बिना दूसरों को भयभीत किये जीने का मार्ग गीता में वर्णित हुआ है। सबसे प्रथम श्लोक में ही 'धर्म क्षेत्र'

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शब्द प्रयुक्त हुआ है। इस श्लोक में धृतराष्ट्र ने एक प्रश्न पूछा है। यह धृतराष्ट्र कौन है ? इस शब्द का अर्थ है, 'वह जो दृढ़ता से राष्ट्र को पकड़े हुये हैं, जो इसे नहीं छोड़ेगा जो इससे अकारण चिपका हुआ है'। अब राष्ट्र क्या है, या व्यक्ति के लिये राज्य क्या है ? वह सब जो उससे पृथक है वही उसके अधिकार की वस्तुयें हैं, अर्थात् उसका शरीर, उसकी इन्द्रियाँ, उसका ज्ञान, उसकी वेदनायें, क्षोभ और इनके साथ ही उसका मकान, कार, भूमि, यश इत्यादि। धृतराष्ट्र तो वह प्रत्येक व्यक्ति है जो अपने से इन सब वस्तुओं का अस्तित्व पृथक मानता है न कि वह शरीर को ही अपना स्वरूप मानता है। उदाहरण के लिये उन्होंने संजय से पूछा कि, "कुरुक्षेत्र और धर्मक्षेत्र में क्या हुआ ?" संजय का अर्थ है "जिसने विजय प्राप्त कर ली है" उन इन्द्रियों और अन्य शक्तियों पर जो उच्च शक्तियों को सीमित कर देती हैं अथवा इधर-उधर पथ-भ्रष्ट कर देती हैं और भगवान् के मार्ग से हटा देती हैं। उससे उस युद्ध के विषय में पूछा गया जो कि कुरुक्षेत्र में लड़ा जा रहा था, जो कि धर्मक्षेत्र भी था। उस संजय का उत्तर ७८ वें श्लोक अध्याय १८ गीता में संक्षेप में कह दिया गया है। "यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्यतिर्मम" जो पक्ष योगेश्वर कृष्ण को अपनी ओर करने में, तथा अर्जुन जैसे श्रेष्ठ धनुर्धारी को साथ रखने में सफल है वहाँ विजय इत्यादि सभी विभूतियां रहेंगी यही मेरे विचार का निष्कर्ष है। गीता के प्रथम श्लोक में जो प्रश्न पूछा गया है उसी का इस अंतिम श्लोक में उपसंहार सहित उत्तर है। बीच का समस्त वर्णन तो विषय का विस्तार मात्र है।

लोगों ने भगवान् की पूजा के विविध प्रकारों में निपुणता प्राप्त की है। अनेकों कृत्य और संस्कार होते हैं, पद्धतियाँ हैं, मंत्र हैं, त्यौहार हैं, व्रत उपवास और तीर्थयात्रायें की जाती हैं परन्तु सर्वश्रेष्ठ विधि, जिससे भगवान् की कृपा प्रचुर मात्रा में और शीघ्र ही प्राप्त होती है, यह है कि भगवान् के आदेशों का पालन किया जावे। स्तुति या चापलूसी तो निम्नकोटि की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पूजा है। भगवान् को अपने से दूर कहीं कल्पना करना उन्हें सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ मानकर प्रशंसा करने से भी वह प्रसन्न नहीं होगा। उससे सामीप्य का भाव बनाओ, निकटता का, संबंधी का तभी भगवान् को पा सकोगे। आज्ञा पालन, निष्ठा, विनम्रता और पवित्रता से ईश्वर को भी वशीभूत कर लोगे।

अपना जीवन सरल बनाओ। विविध दैनिक कार्यों को प्रेम और पारस्परिक सहयोग की भावना से ओतप्रोत कर लो, अन्य लोगों की त्रुटियों के प्रति सहिष्णुता की भावना रखो। उनसे सहानुभूति और समझदारी का व्यवहार करो; शान्त और क्षोभ रहित हो जाओ; चाहे जैसी भी परिस्थिति क्यों न हो। तभी तुम प्रसन्न रह सकोगे और देश भी प्रसन्न रहेगा। तब तुम्हारे भाव निस्वार्थ और उद्वेग कोमल रहेंगे ईर्ष्या, घृणा और बदले की भावना तुम्हारे मस्तिष्क में प्रवेश नहीं कर सकेंगे क्योंकि द्वार पर वहाँ दया, परोपकार और सहिष्णुता पहरेदार के रूप में डटे होंगे।

पुरस्कार अथवा दण्ड इन दोनों से भगवान् निर्लिप्त रहता है। वह तो केवल उन्हीं क्रियाओं को प्रत्यावर्तित, प्रतिबिम्बित, प्रतिध्वनित और प्रति-क्रिया रूप में करता है। वह तो शाश्वत निर्लिप्त साक्षी है। आप स्वयं ही अपने भाग्य निर्माता हो। अच्छा करो, अच्छे बनो, बदले में तुम्हें अच्छाई ही प्राप्त होगी। यदि बुरे बनोगे, बुरा करोगे तो परिणाम में तुम्हें बुराई प्राप्त होगी। भगवान् को न तो धन्यवाद दो और न उस पर दोषारोपण करो। स्वयं ही को चाहे तो धन्यवाद कह लो या दोषारोपण कर आक्रोश करो। वह तो सृष्टि की रचना, पालन, या संहार किसी के लिये भी इच्छा नहीं करता। ये सब तो एक नियम या क्रम के अन्तर्गत घटित होते रहते हैं क्योंकि यह ब्रह्माण्ड तो माया शक्ति के अन्दर ही मौलिक सन्निहित सिद्धान्तों से परिचालित हो रहा है। उदाहरण के लिये, हम लोग इस विद्युतधारा का प्रयोग पंखा चलाने, शीतलता प्राप्त करने, उष्णता प्राप्त करने, प्रकाश

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्राप्त करने, मानव वाणी के ध्वनि विस्तारण के लिये और दूर से प्रक्षिप्त शब्द को समीप से श्रवण कर सकने, इत्यादि के लिये प्रयोग करते हैं। इसी से मुद्रणालय लाखों की संख्या में समाचार पत्रों को छापकर मोड़कर, टाँका लगाकर विक्रयार्थ तैयार कर देता है। परन्तु इन सब सुविधाओं और सुखों का अनुभव कर तुम इसकी सराहना करो और यदि असावधानी से कहीं कोई व्यक्ति नंगे तार से छू जावे और उसका प्राणान्त हो जावे तो तुम तत्काल विद्युत की निन्दा भी करने लगोगे। यह धारा तो रक्षा करती है, उत्पन्न करती है और विनाश भी करने में पीछे नहीं रहती। यह तो इस बात पर निर्भर करता है कि हम इसका प्रयोग किस प्रकार और कितनी दक्षता से कर पाते हैं।

वे क्षुद्र इच्छायें, जिनके लिये तुम भगवान् से प्रार्थना-याचना करते हो, चाहे पूरी होवें या न होवें; उन्नति और पदोन्नति की योजनायें, जो तुम भगवान् के समक्ष रखते हो, चाहे पूरी होवें या न होवें, वे सब इतनी महत्त्वपूर्ण बातें नहीं हैं। मूल लक्ष्य तो तुम्हें अपना स्वामी बनना है, भगवान् से निकट निरंतर सम्पर्क की स्थिति प्राप्त करना है। वह भगवान् विश्व में व्याप्त है और तुम्हारे भी अन्दर है क्योंकि तुम उसी विश्व के एक अंश-मात्र ही तो हो। निराशाओं और असफलताओं का स्वागत करो क्योंकि वे तुम्हारे अन्दर दृढ़ता और सहन शक्ति की वृद्धि करती हैं।

जब स्वर्णकार अपने सामने घरिया में सोना पिघला रहा था तो सोने ने उससे कहा, "मुझे अग्नि में झोंककर प्रसन्न मत होओ जब कि मैं पिघला हूं और मिश्रित धातु मुझसे पृथक हो जाती है। स्मरण रहे मैं तो निरंतर शुद्ध से शुद्धतर ही होता जा रहा हूं और मेरा मूल्य प्रतिक्षण बढ़ता ही जाता है, परन्तु तुम्हारे इतने परिश्रम का फल तो वह धुआँ है जो तुम्हारे मुंह पर लगता है और वह कालिमा है जो तुम्हारे हाथ में लगती है"।

यही शिक्षा महाभारत से प्राप्त होती है, भगवान् को कभी मत छोड़ो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

या भूलो उन्हें अपने प्रत्येक रोग, कष्ट के लिये उत्तरदायी समझो विश्वास करो कि प्रत्येक कष्ट और रोग से तुम भगवान् के ग्रधिकाधिक समीप होते जाते हो; क्योंकि कठिनाई पड़ने पर तो तुम भगवान् को पुकारते ही होगे। तुम्हारे पेट में दर्द होता है, डाक्टर भी तुम्हारे पेट की शल्य-क्रिया करके तुम्हें शल्य-क्रिया जनित दर्द ग्रौर देता है जिससे पेट का दर्द मिटे ग्रौर तुम्हें ग्राराम मिले। तब तुम कहते हो, कि तुम्हें ग्रानंद प्राप्त हुग्रा। ग्रानन्द तो दो कष्टों के बीच का मध्यावकाश मात्र है। ग्रौर कष्ट या दर्द दो ग्रानंद के क्षणों के बीच का मध्यावकाश है।

रामकृष्ण परमहंस के कंठ में फोड़ा हो गया था, इसके कारण न तो वह खा सकते थे न कोई पेय पदार्थ ही बिना घोर कष्ट पाये पी सकते थे। इस पर विवेकानंद ने ग्रपवे स्वामी से निवेदन किया और उनसे प्रार्थना की कि वे जगदम्बा काली से प्रार्थना करें कि उसकी कृपा हो जावे तो वह पेय पदार्थों को तो पी सकें। रामकृष्ण ने उत्तर दिया, "मैंने मां से प्रार्थना तो की। मां ने कहा कि, "क्या तुम इतने खरबों कण्ठों से इतना सब भोजन प्रतिक्षण नहीं खा रहे हो, दुनियाँ में इतने ग्रधिक जीवित मुख निरंतर ही खाये जा रहे हैं ?" इन खरबों मुखों में से एक मुँह से न खा पाने पर तुम इतने क्षुब्ध, या बिगड़ क्यों रहे हो ? 'एक ही ग्रात्मा सर्वत्र व्याप्त है' यही पाठ मां ने पढ़ाया था। प्रत्येक परमात्मा रूपी महासागर की एक तरंग मात्र है। यही सत्य है।

'सत्यान्नास्ति परो धर्म' सत्य से बढ़कर ग्रन्य कोई धर्म नहीं होता है। सत्य बनो, धार्मिकता या सदाचार का यह सर्वोच्च विन्दु है, सभी नैतिकता का सार हैं। सब में एकत्व के सत्य का ग्रनुभव, प्रेम को, सेवा को, शान्ति को उत्पन्न करता है; इसीलिये यह नैतिक जीवन का ग्राधार है। ग्रन्य सभी विशेषतायें घृणा या महत्त्वाकांक्षा द्वारा निर्मित ग्रस्थाई दीवालें मात्र हैं।

इस समय बाह्य परम्पराग्रों, रीति-रिवाजों, ग्रौर विभिन्न कर्मकाण्डों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर वाह्य पूजा पद्धतियों के कारण हिन्दूधर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म विभिन्न धर्मों का नाम लिया जाता है। वेष-भूषा, वालों का ढंग, माला, छाप, तिलक, चिन्ह, क्रास ग्रादि तो बाहरी भिन्नता के प्रतीक मात्र हैं। सभी एक ही उद्देश्य से, एक भावना से पूजा या ग्रर्चना करते हैं। भोजन, पहनावा, ऐसी छोटी-छोटी बातें हैं जिनका न तो कोई स्थायी महत्त्व है ग्रौर न आंतरिक क्रिया से कोई लगाव ही। यह सब तो ऊपरी छिछला आवरण, ग्रन्धविश्वास ग्रौर होठों की बुदबुदाहट मात्र है। उस भगवान् का स्पर्श प्राप्त करो, इसे (बाह्य धर्माडम्बर को) मत छुग्रो।

प्रेम शान्ति की शीतल प्राणप्रद जल धारा के समान तुम्हारे हृदय से धर्म की तरंगें उठती रहें। रामायण से तुम्हें शिक्षा मिल सकती है कि 'धर्म क्या है'। राम तो धर्म का विग्रह हैं। उसका प्रत्येक शव्द ग्रौर क्रिया धर्म से गूंजती हुयी है, धर्म की सटीक व्याख्या है। राम के भाई लक्ष्मण, जो उन्हीं के पदचिन्हों का उनकी लीला में ग्रनुकरण करते रहे, मन के प्रतीक हैं। जव मन धर्म के पदचिन्हों पर चलता है, तो वह मार्ग से कभी भी विचलित नहीं होता है, उसे विजय पर विजय मिलती ही जाती है। रामायण तो एक ऐसा धर्मग्रंथ हैं कि जिसके ग्राधार पर प्रत्येक घर का जीवन संचालित होवे। पिता, माता, पुत्र, पत्नी, भाई और सम्मिलित परिवार के सदस्यों के जीवन के ग्रादर्शों का उसमें वर्णन है। गाँधी जी भारत में राम-राज्य की कल्पना करते थे। वे चाहते थे कि इस देश के लोग राम की ग्रयोध्यावासी प्रजा के समान पुनीत ग्राचरण करने वाले बनें। परन्तु इस दुखद विपर्यय को देखो। तब तो राम ग्रौर लक्ष्मण परस्पर प्रेम के कारण दोनों भाई एकत्व की सर्वोच्च स्थिति में पहुंच गये थे। ग्राज कल भाई-भाई सर्वोच्च न्यायालय के द्वार खटखटाते हैं कि वह उनके मतभेदों और झगड़ों का निवटारा करे। यह झगड़े भी तुच्छ सम्पत्ति से संबंधित होते हैं जो कि वास्तव में कोई संवध ही नहीं होती हैं (प्रापरटीज नाट प्रापर टाईज) लोग मंचों पर चढ़कर संबोधन करते हैं 'भाइयो ग्रौर बहनो' परन्तु यह ईष्ट

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

संबोधन एक चापलूसी पूर्ण संबोधन ही रह जाता है। ज्यों ही वे मंच से नीचे उतरते हैं उनका वह भाव वायु में तिरोहित हो जाता है। भ्रातृत्व की भावना तो तत्परता से प्रेम के बदले में प्रेम करना होता है, हृदय पाने के लिये हृदय दे डालो। और जीवन के लिये जीवन का उत्सर्ग करना होगा।

भारतीय संस्कृति हिंसा की आसुरी वृत्ति कह कर निन्दा करती है और यह इससे भी अधम है। यद्यपि इस देश के महाकाव्य और प्राचीन कहानियों में राक्षसों की चर्चा आती है, मनुष्य और देवता लोग भिन्न-भिन्न हैं; वास्तव में यह तो चरित्र की विशेषताओं के नाम मात्र हैं, जो किसी न किसी सीमा तक सभी में पायी जाती हैं। मानवता को आसुरी प्रवृत्ति के कलुष से रहित होकर दैवत्व के आलोक को अपने में प्रज्वलित करना है।

भागवत में कृष्ण की गाथा को ही ले लें। कंस का राक्षसी या आसुरी चरित्र है, उसकी भगिनी देवकी मानवी है, उसी से कृष्ण की उत्पत्ति होती है, जो कि दैवी तत्त्व है और संसार का उद्धार करने के लिये अवतरित हुआ था। जिस व्यक्ति ने देवकी का पाणिग्रहण किया और अवतार के पितृत्व का सौभाग्य प्राप्त किया वे वसुदेव थे; उनका भागिनेय शिशुपाल राक्षस था, असुर था। विचित्र तो लगता है कि शिशुपाल को उसी रुक्मणी का वाग्दान किया जा चुका था जो बाद को कृष्ण की पटरानी बनी। विवाह की तैयारी और समारोह के मध्य से कृष्ण रुक्मिणी को निकाल ले गये और एक आसुरी वृत्ति के व्यक्ति शिशुपाल से विवाहित होने से बचा लिया। अतः यह स्पष्ट है कि व्यक्ति की वृत्तियों और मनोभावों के अनुसार उनके वर्ग का निर्णय होता था कि वह राक्षस, मानव अथवा देवता क्या है।

इसलिये सदा सतत् सावधान रहो कि तुम्हारे कार्य तुम्हें आसुरी वृत्ति की गहराइयों में न घसीट ले जावें। वे तुम्हें 'दैवत्व' की उच्च श्रेणी में उठाकर स्थिर करने वाले हों। यह प्रशंसनीय है कि इस नगर में तुम सब

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इतने लोग भजन, नगर संकीर्तन और नाम-स्मरण के कार्यों में सम्मिलित होते हो। भगवान् का नाम तुम्हारे हृदय के अन्तस्तल से उठे, केवल ओठों ही से नहीं। इस देश में तुम सब प्रह्लाद बनो क्योंकि यहाँ हिरण्यकश्यपों का बाहुल्य है। भगवान् का नाम ही नृसिंह है वही उद्धार करेगा और पोषण करेगा। अपने को पवित्र बनाओ उस वातावरण को भी पवित्र बनाओ जिसमें और जिसके द्वारा तुम्हें जीवित रहना है। यही मेरा परामर्श है, यही मेरा आशीर्वाद है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४५ आगे पीछे बायें दायें

धर्मक्षेत्र बम्बई २१-५-१९७०

मनुष्य जन्म से मृत्यु पर्यंत सुख-दुख भोगता ही रहता है; जिसे वह प्रसन्नता कहता है वह तो दो दुखों के बीच एक मध्यावकाश होता है। ये दुख तीन कारणों से उत्पन्न हुआ करते हैं। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक। जिन पार्थिव भौतिक पदार्थों को प्राप्त करने की मनुष्य लालसा रखता है और जिनकी रक्षा और अभिवृद्धि का वह प्रयत्न करता है, उनके न पाने अथवा न रहने पर उसे दुख होता है यही आधिभौतिक दुख होता है। इन्द्रियां पदार्थों के बोध की यंत्र होती हैं; मनुष्य नेत्रों से एक पदार्थ देखता है; परन्तु भौतिक आँख से नहीं, बल्कि उस आँख से देखता है कि जिसका अधिष्ठाता देवता सूर्य है। तुम अंधेरे में तो देख ही नहीं पाते हो। सूर्य तुम्हें देखने में सहायता करता है; उसके बिना तुम असहाय हो। प्रत्येक इन्द्रिय, अवयव, स्नायु और कोषिका, जोड़, ग्रन्थि, जो इस मानव शरीर में हैं, का एक न एक अधिष्ठाता देवता होता है जो उसे सक्रिय करता है और उसका इस अंग में निवास होता है। यदि ये देवतागण विरुद्ध हो जावें या अप्रसन्न हो जावें तो शरीर में असमर्थता आती है, कष्ट भी होता है। कष्टों का यह दूसरा कारण आधिदैविक है। इसके बाद आत्मा है—जो हमारी निष्क्रियता और सक्रियता का साक्षी रहता है, सुख-दुख, प्रसन्नता और चिन्ता और परीक्षण का भी द्रष्टा होता है। जब तुम इस साक्षी के अस्तित्व की उपेक्षा करते हो, जब तुम अपने दैनिक कार्यों को उस शान्ति स्थानीय अधिष्ठित चेतना की अवहेलना से करते हो तो तुम स्वयं को पीड़ित करने के लिये दुख को निमंत्रित करते हो। यही आध्यात्मिक ताप या दुख है यही वह क्रॉस (ईसा की शूली) है जिसे मानव जीवन के परीक्षणों में अपने साथ लिये फिरता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यह कहा जा सकता है कि मनुष्य के आवागमन, जन्म-मृत्यु के यही तीन कारण होते हैं। वह इस पृथ्वी पर माया और भ्रम से रहित होने और बुद्धिमत्ता के पाठ पढ़ने को आता है। जब कोई मंत्र पाठ किया जाता है तो अन्त में जापक को तुमने ओं शान्ति, शान्ति, शान्ति कहते हुये सुना होगा। यह तीन बार 'शान्ति' के उच्चारण का क्या तात्पर्य है ? ॐ का क्यों प्रयोग करते हैं ? ॐ तो परब्रह्म परमात्मा का पद है। जो साधक अंतःकरण में स्थित घट-घट वासी ब्रह्म का बोध चाहते हैं उन्हें ॐ का जप और ध्यान करना चाहिये और ध्यान के समय अर्थों सहित तीव्र भावना भी होना चाहिये। तीन बार 'शान्ति' उच्चारण का उद्देश्य तीनों प्रकार के दुखों के कारण आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक को शान्त करने के लिये किया जाता है, यही तीनों कारण जीव के कष्टों के कारण बनते हैं वे जीव के शरीर, अधिष्ठाता देवताओं और सार्वभौम चैतन्य के माध्यम से कार्य करते हैं।

सर्वव्यापक 'दैवत्' की चेतना को जागृत करने के तीन मार्ग कर्म, भक्ति, ज्ञान बतलाये गये हैं। न तो यह पृथक ही होते हैं और न परस्पर विरोधी। वे मिले-जुले, पूरक और अन्योन्याश्रित होते हैं। उदाहरण के लिये, तुम जानते हो कि साई सर्वत्र है जो तुम्हें हर जगह और तुम्हारे हर काम को देखता रहता है। तुम साई के भक्त हो और चाहते हो कि वे तुम्हारा हर कार्य में पथ-प्रदर्शन और निर्देशन करें और तुम उनकी आज्ञा को मानना भी चाहते हो जहाँ तक तुम्हारा वश है। जो दक्षता और चतुराई तुम्हें प्राप्त हुयी है उसका सदुपयोग तुम परोपकार और सेवा-कार्य में करना चाहते हो क्योंकि तुम्हें यह अनुभव होता है कि वे लोग भी तुम्हारे साई परिवार के ही अंतर्गत हैं और तुम्हारे सगे-सम्बन्धी हैं, चाहे उन्हें इसका न भी ज्ञान हो। यह बड़े सन्तोष का विषय है कि इस नगर के विभिन्न भागों में आप सेवा-कार्य चला रहे हैं और उन्हें भगवान् की नवधा भक्ति का ज्ञान कराने और उत्साहित करने में संलग्न हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भजन, अध्ययन केन्द्र, अभिनय, प्रातःकालीन टोलियों में नगर की सड़कों पर निकलते हुये संकीर्तन, ये सब प्रशसनीय कार्य हैं। साई दल का सहायता कार्य भी अच्छा चल रहा है। मुझे यह भी देखने को मिला है कि बाल-विहार में बच्चों के शुभ गुणों का विकास भी उपयोगी ढंग से किया जाता है, समय का सदुपयोग होता है। इससे निश्चय ही उनके अन्दर आध्यात्मिक आकांक्षा की ज्योति जगेगी और कालान्तर में आनन्द के सौंदर्य से उनका जीवन भी सुन्दर बन जावेगा। अभी तो मानव के समय का बहुत बड़ा भाग निरर्थक, हानिप्रद कार्यों में बरबाद किया जा रहा है। इन कार्यों के लिये जो वे प्रयत्न करते हैं उससे उन्हें किसी शुभ लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती। वे केवल अपनी निराशा, अज्ञान की वृद्धि करते जाते हैं। लोगों के पास सिनेमा के लिये टिकट देने वाली खिड़की के सामने लम्बी पंक्ति में घंटों खड़े रहने का समय मिल जाता है। इसी प्रकार किसी बस अड्डे पर भी उन्हें प्रतीक्षा करते हुये घंटे बीत जाते हैं। परन्तु भजन या नगर संकीर्तन में भाग लेने के लिये उनके पास समय का अभाव हो जाता है। वे ताश खेलने को और क्लबों (विनोद-गृहों) में बैठने के लिये भी समय पा जाते हैं; और घंटों निरर्थक विषयों पर निस्सार वार्ता या शास्त्रार्थ करते रहते हैं। यह इसीलिये लोग सतही, छिछला और तली का जीवन जीना पसन्द करते हैं वे समाज के 'फेन' या 'तलछट' के प्रकार के व्यक्ति होते हैं। वे उत्तरदावित्त्व से बचते हैं अर्थात् सही अर्थों में नागरिक भी नहीं होना चाहते। वे आत्म निरीक्षण नहीं करते हैं, उन्हें अपने कार्यों के परिणामों की भी चिन्ता नहीं होती, भले ही वे इन कार्यों के लिये जान तोड़ कर बकझक करते हुये संघर्ष कर रहे हों।

उदाहरण के लिये इस प्रश्न पर विचार करो, 'क्या मनुष्य बाह्य आकर्षणों और पदार्थों के द्वारा दास बनाया जाता है? अथवा, यह कोई आन्तरिक प्रेरणा या प्रवृत्ति है जो मनुष्य को आगे बढ़कर अपने को दुख से संयुक्त या आबद्ध कर लेने को बाध्य करती है? मैं एक उदाहरण देता हूं। गाँव में पेशेवर बन्दर पकड़ने वाले होते हैं, जो इस कार्य के लिये भोंड़ी तरकीब काम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

में लाते हैं। वे बगीचों में या डाकुओं के क्रीड़ा-स्थल वनों में लम्बी तंग गर्दन वाले मिट्टी के वर्त्तनों में कुछ मूंगफली जैसे खाद्य पदार्थ डालकर रख देते हैं। बन्दर पात्र के समीप आता है, यह जानता है कि इसके अन्दर स्वादिष्ट मूंग-फलियां हैं, अपना लंबा हाथ अन्दर डालकर अपनी मुट्ठी भर लेता है। अब उसका हाथ पात्र में से नहीं निकल पाता है क्योंकि उसकी मुट्ठी फलियों से भरी हुयी है। अतएव वह एकाकी और असहाय हुआ बैठा रहता है तब यह पकड़ा जाकर बाहर को लाद दिया जाता है। बन्दर सोचता है कि अन्दर घड़े में कोई उसका हाथ पकड़ लेता है और हाथ बाहर नहीं निकालने देता है। यदि बन्दर मुट्ठी में ली हुयी मूंगफलियों पर अपनी पकड़ ढीली कर देता और आसक्ति रहित हो जाता तो वह अपनी रक्षा कर सकता था। इसी प्रकार तुम भी इच्छाओं के शिकार हो और आसक्तियों से जकड़े हुए हो इस बन्धन को भी तुमने स्वयं ही अपने ऊपर ओढ़ लिया है। मुक्ति भी तुम्हारे हाथ में है। भगवान् की अपरिवर्त्तनशील महिमा का ध्यान करो। तब क्षणभंगुर पार्थिव आकर्षणों की इच्छा धूमिल होकर अदृश्य हो जावेगी और तुम स्वतन्त्र हो जाओगे।

किसी से भी पूछ कर देख लो—"तुमने अपनी वृद्धावस्था के लिये क्या प्रबन्ध कर लिया है" ? उत्तर यही होगा, "मेरा पुत्र एक अच्छे पद पर है या मुझे अपनी पूंजी पर ब्याज मिलता रहता है, मेरी पेन्शन है, मेरे पास भूमि है जिसकी उपज मेरे खाने-पहनने को पर्याप्त है" इत्यादि। परन्तु यह कोई नहीं कहता है, मैं भगवान् पर आश्रित हूं"। बिना भगवान् पर भरोसा किये बिना दैवी सहायता के इनमें से कोई भी, जीवन के तूफानी दौर में, बुढ़ापे में कोई सुख-सहायता न दे सकेंगे। भगवान् में दृढ़ विश्वास ही वह दृढ़ नींव है जिस पर आशाओं का महल बनाया जा सकता है। यह विश्वास दृढ़ और स्थायी होना चाहिये। 'भगवान् मेरी रक्षा करेगा'। यह भावना हमारे हर कार्य करते समय हृदय में रहना चाहिये। उसी से प्रेरणा, उद्देश्य और क्रिया-शक्ति मिलती रहती है। इसी भावना से जो दूसरों की सेवा करता है वह सदा स्वयं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रानन्द प्राप्त करता रहता है और सेवा का पात्र भी सुखी ग्रौर ग्रानन्दित ग्रनुभव करता है ।

पहले तुम 'कर्म-जिज्ञासा', ग्रर्थात् विवेक से कर्म का चुनाव करो फिर 'धर्म-जिज्ञासा' ग्रर्थात् उन नियमों सिद्धान्तों का ग्रन्वेषण जो हमारी चेतना तरंगों को प्रभावित करते हैं, ग्रात्मा को उन्नत या अवनत करते हैं; ग्रौर अंत में "ब्रह्म-जिज्ञासा" के क्षेत्र में प्रवेश करना होता है; यहाँ मोक्ष की समस्या पर विचार करना होता है और ऐसी साधना करनी होती है जो अद्वैतम् का बोध कराने वाली हो कि ब्रह्म एक है; जो कुछ दृश्यमान है वह भी ब्रह्म पर ही ग्राधारित है ।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि स्वयंसेवक, सेवादल के सदस्य, भजन मंडलियों के नेता ग्रौर भाग लेने वाले ग्रौर हर कोई जो सत्य साई संगठन के विभिन्न कार्यों में सलग्न हैं; वे इसी मार्ग (अद्वैत मार्ग) पर हैं और उनकी स्थितियाँ भिन्न-भिन्न हैं । तुम में से ग्रधिकांश प्रथम स्थिति कर्म-जिज्ञासा के ग्रन्तर्गत ग्राते हैं । वे केवल ग्रपने कार्यों के सम्बन्ध में उचित ग्रनुचित का विवेचन कर पाने में समर्थ होते हैं । कर्म-जिज्ञासा में प्रकृति, जीव, ब्रह्म तीनों के सम्बन्ध में विचार करना पड़ता है । धर्म-जिज्ञासा में केवल अंतिम दो के सम्बन्ध में, और ब्रह्म-जिज्ञासा में केवल 'ब्रह्म' पर ही विचार किया जाता है । चाहे तुम्हारी स्थिति पहली ही में क्यों न हो, सदा अंतिम स्थिति का ग्रपनी मात्रा के अंतिम गन्तव्य की भाँति स्मरण करते रहो ।

जब लक्ष्य तुम्हारी दृष्टि के समक्ष होता है, तो तुम चाहे जहाँ हो तुम्हारा हृदय वास्तविक ग्रानन्द से उत्साह से भर जाता है । उन कार्यों को करने का विचार भी न करो जिनसे क्षणिक ग्रौर केवल इन्द्रिय-सुखों की प्राप्ति होती हो । जो तुम्हें प्रिय हो उसकी लालसा मत किया करो, अपने को ऐसा प्रशिक्षित करो कि जो कुछ तुम्हें करना चाहिये उसी को पसन्द करने लगो ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यदि ऐसे कार्यों को तुम स्वेच्छया करो तो यही साधना का रूप ले लेता है तुम्हारा कल्याण होने लगता है। तभी प्रकृति और जीव को तिरोहित करके केवल ब्रह्म को ही अपनी चेतना में अधिष्ठित करना होता है। अब तुम्हें अपने को भगवान् का सेवक मानने की भावना दृढ़ करना चाहिये। कर्म करना पूजा करना है। इसी भावना से तुम दूसरों की सेवा करो कि जिनकों तुम्हें भगवान् की मूर्ति मान कर सेवा करना है। यही दृष्टिकोण संतप्त हृदय को अधिकतम संतोष प्रदान करता है।

दो गोपियाँ यमुना की रेती में टहल रही थीं और कृष्ण के संबंध में वार्ता करती हुयी उन्हीं के ध्यान में मग्न थीं। वे कृष्ण की लीलाओं, महिमा की चर्चा कर रही थीं। उनमें से नीरजा के मन में एकाएक एक संदेह उत्पन्न हुआ। यह एक दार्शनिक समस्या थी। 'जब मैं कृष्ण से तादात्म्य का अभ्यास करती हूं और अनुभव करती हूं कि मैं कृष्ण हूँ तो मुझे यह भय लगता है कि मैं वह आनन्दानुभूति खो दूंगी जोकि उनके सहचर्य से प्राप्त होती है, वार्तालाप और मधुर वंशी-ध्वनि से प्राप्त होती है। मैं उनसे पृथक अस्तित्व की इच्छा करती हूँ जिससे उनके प्रेम और महिमा का आस्वादन कर सकूं।' तब उसकी सखी सरला ने उसे ढाँढस बंधाया और कहा। 'नहीं, तुम्हारी आशंका निराधार है। क्यों कृष्ण तो स्वयं तुम्हारा और तुम्हारी पवित्रता का ध्यान करते हैं। जब तक तुम कृष्ण-तादात्म्य की साधना से कृष्ण रूप को प्राप्त रहोगी तो उन्हीं क्षणों में कृष्ण भी तुम्हारा ध्यान करके 'गोपी' रूप की अनुभूति करते हैं इसीलिये तुम्हारे मन में निराशा या आशंका का कोई स्थान नहीं होना चाहिये। प्रकृति तो धारा, पृथ्वी, सृष्टि है। सदैव इसका चिन्तन करो। दीर्घ-काल तक इसके इच्छुक रहो। इसलिये कृष्ण तो वह कूट तत्त्व है जिसका एक रूप राधा भी है। राधा-कृष्ण का यही परस्पर संबंध है, जिसका गायन ऋषि, कवियों ने किया और मूर्ख अज्ञानियों ने, आलोचकों ने निन्दा की उप-हास किया। साधकों ने सराहना की और हृदय में स्थान दिया, विश्लेषण किया और आध्यात्मिक सच्चे साधकों ने इसी का साक्षात्कार किया।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तुम परमात्मा का प्रतिबिम्ब हो, जो प्रतिविम्ब शरीर रूप में प्रतिबिम्त हुआ है वह भी प्रकृति का एक अंश है। जो पदार्थ तुम्हारे चारों ओर हैं उनसे तुम्हारे शरीर का निकट संबध है। तुम्हारा शरीर भी उन पदार्थों में से एक है। मूल दैवी आत्मा, जीवात्मा जो कि व्यक्तिगत रूप में आत्मा का प्रतिबिम्ब है और पार्थिव जगत जिसका एक अंश जीव शरीर में धारण किये है—यही तीनों मिलकर ईश्वर-जीव-प्रकृति का त्रिगुट है। साधना में उसी क्षण सफलता समझना चाहिये जब कि तुम पार्थिव जगत के अस्तित्व को माया कहकर अनुभव से ही निकाल दो अथवा इसे उसी परब्रह्म परमात्मा का ही स्वरूप मानकर चलो। सामान्यतया दैनिक व्यवहार में तीनों में से एक घटाने पर दो शेष रहते हैं; परन्तु आत्मा के गणित में तीन (ईश्वर जीव प्रकृति) में से एक (प्रकृति को) घटाने पर केवल एक (ईश्वर) ही शेष रह जाता है। जब प्रकृति रूपी दर्पण हटा दिया जाता है, तो जीव रूपी प्रतिबिम्ब भी अदृश्य हो जाता है। जब दर्पण को हटा दिया जाता है तो दो वस्तुयें अदृश्य हो जाती हैं—यह दर्पण और उसके द्वारा प्रतिबिम्बत प्रतिबिम्ब। और, तुम ब्रह्म में लय हो जाते हो।

सेवा का पथ, जो तुमने ग्रहण कर रखा है, क्रमश तुम्हें उस स्थिति तक पहुंचा देगा जबकि दर्पण-वैराग्य के द्वारा ऐसा बदल जावेगा कि पहचाना भी न जा सके। जब तुम मूर्ति को भगवान् के रूप में दर्शन करते हो तो तुम प्रस्तर को, जिसमें से काट-छाँट कर मूर्ति का निर्माण किया गया है, जो मूर्ति का उपकरण है, परिवर्तित कर अस्तित्व बनाकर मंदिर में केवल भगवान् के रूप के दर्शन करते हो। मन को स्वच्छ और पवित्र इस सीमा तक कर लो कि न केवल मंदिर में, जहाँ भी तुम्हारी दृष्टि पड़े चाहे वह मूर्ति हो या अन्य कोई पदार्थ, सदैव, सर्वत्र भगवद्दर्शन ही कर सको। तब मन तुम्हारा सर्वश्रेष्ठ मित्र अत्यंत दक्ष मुक्ति-यंत्र बन जावेगा।

मन असीमित नटखटपन के काम करता है इसलिये कभी-कभी इसकी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उपमा बंदर से दी जाती है। एक ग्रौर उपमा, जो कि पहले जैसी लोकप्रिय नहीं है, सर्प की दी जाती है। क्योंकि यह सीधा नहीं चलता है। वह पृथ्वी पर टेढ़े-मेढ़े वक्रपथ पर घिसटता है। मन मक्कारीपूर्ण चालबाजियों में ग्रानन्दित होता है; ग्रौर चंटपने की युक्तियों का ग्राश्रय लेता है। वह सत्य ग्रौर ऋजुता के मार्ग से बचता रहता है। साँप दंश कर विष प्रवेश कर देता है ग्रौर ग्रपने सामने पड़ने वाले जीवों को निगल लेता है। परन्तु मन रूपी सर्प को सम्मोहित कर निर्दोष भी बनाया जा सकता है। साँप को सम्मोहित करने वाले नाद-स्वरम् (महुग्रर ग्रथवा बीन) का प्रयोग कर उसमें से संगीत की धार बहाते हैं, तो साँप ग्रपना फन उठाकर उसे इधर-उधर ग्रानन्दित होकर झुलाने लगता है। इसी प्रकार नाम-स्वर के संगीत से सम्मोहित होकर मन भी भगवान् के ग्रानन्द में मग्न होकर झूमने लगता है। मन अन्य पदार्थों पर ग्रपने दोषों ग्रौर ग्रभावों को प्रत्यारोपित कर देता है। हमारी उन्नति पर यह सर्वाधिक संघातिक प्रभाव डालता है। व्यक्ति को मन की इस दुष्टतापूर्ण चाल को वशीभूत करना चाहिये।

महर्षि परमानन्द के १० शिष्य थे; प्रत्येक मूर्खता, सुस्ती, ग्रकर्मण्यता की प्रतिमूर्ति होने में एक से एक बढ़कर था। ग्रपनी यात्रा में वे एक नदी के किनारे पहुंचे, जिसे पार कर वे दूसरे किनारे पर पहुंच गये। कहीं-कहीं पानी उनकी गर्दन तक भी गहरा था, इसलिये वे संघर्ष करके जब भूमि पर पहुँचे तो उन्होंने पता लगाना चाहा कि सभी (१०) सुरक्षित पार हो गये हैं या नहीं। उन्हें ग्राशंका थी कि पानी की तीव्र धारा में कोई बह न गया हो। भय ग्रौर लज्जनित गड़बड़ी उसके साथ ही उनकी स्वाभाविक मूर्खता से उनकी मनोदशा विक्षिप्त लोगों की तरह हो गयी। उनका अंतिम निर्णय यही था कि एक बह गया है, क्योंकि जब उनमें कोई शेष को ग्रपने सामने पंक्तिबद्ध करके गिनता तो नौ ही होते थे ग्रौर गिनने वाला ग्रपने को सदा छोड़ जाता था। सभी दसों ने पक्का निश्चय किया कि उनमें से एक नदी की बाढ़ में खो गया है। दसों व्यक्ति उस खोये हुए के शोक में विलाप करने लगे ग्रौर इतने दुखी हुये कि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उनके कोलाहल से एक किसान उनकी ओर आया। उसने पूछा यह सब किस लिये? उत्तर मिला कि १० व्यक्तियों ने नदी पार की और एक डूब गया। किसान ने देखा कि उसके सामने तो पूरे १० व्यक्ति उपस्थित हैं। उन्होंने किसान के निर्णय को चुनौति दी और पुनः उसके सामने अपने गिनने की पद्धति का प्रदर्शन किया और सिद्ध किया कि एक तो खो ही गया है। तब किसान ने समझाया कि गिनने वाला अपने को तो भूल ही जाता है, इसलिये वाह्य दृष्टि गलत होती है, अन्तर्दृष्टि ही सत्य के दर्शन करा सकती है।

हम सम्पूर्ण ब्रह्मांड में भगवान् की खोज कर रहें हैं परन्तु हम अपने अन्दर उसकी खोज करना भूल जाते हैं, जोकि हमारा आधार और आत्मा है। जब तुम अपनी आत्मा की खोज पा जाओगे तो सभी शोक और दुख नष्ट हो जावेगा और तुम सर्वोच्च आनन्द की स्थिति को प्राप्त कर लोगे। यही वास्तविक आत्म-ज्ञान है।

जब तुम्हें यह ज्ञान प्राप्त होता है कि तुम स्वयं ही उसी दिव्य-ज्योति की चिनगारी हो तो शीघ्र ही तुम्हें यह भी ज्ञान हो जाता है, अन्य सभी लोग भी उसी एक ही आत्मा की चिनगारियां हैं। तो फिर इस सूर्य के प्रकाश में घृणा क्रोध, ईर्ष्या या लोभ के कीटाणु कैसे जीवित रह सकते हैं?

अभी तो तुम सीढ़ी के पहले डंडे पर अपने पैर जमा रहे हो। यह सीढ़ी तुम्हें ऊपर आने और शान्ति तक पहुंचाने वाली है। यह चढ़ाई कठिन और पतन के संकटों से भरी हुयी है परन्तु, अध्यवसाय, धैर्य से तुम्हें यह सब सहन करना होगा और लक्ष्य प्राप्ति की महान प्रसन्नता तुम्हें सदा उत्साहित करती रहेगी। प्रस्तर को मूर्ति में बदले जाने में कितनी घोर यंत्रणाओं को भोगना पड़ता है; तब कहीं वह अनेकों की श्रद्धा की पात्र और आकर्षक बन पाती है। यह कुर्सी भी पहले अनगढ़ लकड़ी का टुकड़ा रही होगी। इसे चीरा गया, चिकनाया गया, काटा गया, आकृति देकर सुडौल किया गया इसने वह सब

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उत्पीड़न सहन किये; तब आज यह हमारी सेवा के योग्य बन पायी है और अब सेवा करके आनन्द प्राप्त करती है।

जयदेव, तुकाराम, कबीर, गौरांग, रामकृष्ण, रामदास सभी संतों को इसी दुखान्त घटनाओं से तथा जन्म के समय की महान यंत्रणा से भरे मार्ग से होकर निकलना पड़ा है तब कहीं उन्हें भगवद्दर्शन प्राप्त हुआ और वे उसी में लीन हो सके। उन्हें अब मानव स्मृति के मंदिर के ताखों (आले) में स्थायी स्थान प्राप्त हो गया है। पुण्डरीक का उदाहरण ही ले लो। उन्हें मातृ-पितृ पूजा के वैदिक आदेश में इतना अटूट विश्वास था कि उन्होंने इसके सामने कृष्ण की पूजा करने से भी इनकार कर दिया (मातृ देवो भव, पितृ देवो भव) जबकि वे अपनी कृपा की वर्षा उनपर करने के लिये, उन्हीं के समक्ष प्रकट हुये थे। क्योंकि उस समय वह माता-पिता के चरणों को दबा रहे थे; उन्हें कृष्ण से वार्तालाप का अवकाश ही न था। वे सेवा में विघ्न नहीं सह सकते थे चाहे वह क्षण मात्र के ही लिये क्यों न होता। वे भगवान् के चरणों को स्पर्श करने को भी न उठे।

उसी समय उनके गुरु तुकाराम आये और उन्हें इतनी हठी होने के लिये फटकारा कि वेदों के नियम को इतनी कठोरता से नहीं लिया जाता है। पुण्डरीक ने कहा, "मेरे भगवान् तो इस समय भी मेरे सामने हैं; और उस समय भी दबाये जाने वाले चरण की ओर संकेत किया। यह जो भगवान् अभी पधारा है तब तक प्रतीक्षा करे जब तक कि इन भगवानों की सेवा पूरी न होवे। यह भगवान् तो अभी आये हैं जब कि ये भगवान् सदा जन्म से मेरे साथी ही रहे हैं। मैं इनमें प्रतिदिन दैवी तत्त्व की झलक देख पाता हूँ और मैं इन्हें भगवान् ही मानता हूं"। जो सेवा वे अपने माता-पिता की करते थे उसी से कृष्ण इतने प्रसन्न हुये कि वे ठहरे रहे; और अब भी पंढरपुर में विराजमान हैं।

इस विश्व के प्रत्येक कण-कण में, जीव में दैवी तत्त्व की अनुभूति के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पूर्व तुम्हें पहले अपने अन्दर उसकी उपस्थिति का अनुभव करना होगा। तुम्हारा प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य उस दिव्य चेतना से अनुप्राणित होगा। एक लखपती के दो दर्द थे। एक दर्द उसके पेट में था दूसरा उसके सिर में था। उसका निदान किया गया और चिकित्सा की गयी। उसकी परीक्षा एक विख्यात डाक्टरों के दल ने की जो अपने-अपने क्षेत्र में पारंगत थे। उसने अनेक दवाओं की शीशियां खाली कर दीं और सैकड़ों इन्जेक्शन लगवा डाले। फिर भी दर्द बने ही रहे; और पहले से बढ़ते ही गये। अंत में एक साधु उसकी पीड़ा के दृश्य के समय आया। वह उससे बड़ी दयालुता से बोला और कहा कि दोष तुम्हारी आंख का ही है। आंख को ठीक कर लो तो ऊपर का सिर और नीचे का पेट दोनों ही कोमलता का व्यवहार करने लगेंगे। आँख को सुधारने के लिये केवल एक ही रंग पर ध्यान केन्द्रित करो। उसने सुझाया कि हरे रंग पर ही ध्यान जमाओ। अपनी आंखों को लाल, पीले या अन्य रंग पर पड़ने ही न दो।

लखपति ने रंगसाजों की टुकड़ी बुलाई और हरे रंग के पीपे मंगवा दिये और आज्ञा दी कि उसकी आँख पड़ने वाली सभी वस्तुओं को गहरा हरा रंग दिया जावे। जैसे सन् १९६२ में अष्टग्रहों की विशेष स्थिति को संकट लाने वाली बताया गया था। उस समय अंधविश्वासी लोगों से पंडितों और पुजारियों ने खूब कमाई की थी; इस लखपति से भी रंगसाजों ने खूब पैसे कमाये। जब दस दिन बाद स्वामी पुन: लौटकर उसके पास आये तो उनकी ओर भी हरे रंग की भरी बाल्टियां और ब्रुश लिये रंगसाज दौड़े, क्योंकि स्वामी तो गेरुआ वस्त्र धारण किये हुये थे। स्वामी ने आश्चर्य-मुद्रा से लोगों की ओर देखा और कारण पूछने पर ज्ञात किया कि लखपती हरे रंग की वस्तु के अतिरिक्त अन्य कुछ देखना ही पसंद नहीं करता, ऐसा न हो कि उसके दर्द पुन: लौट आवें। स्वामी ने रोगी को फटकारा और कहा कि उसने लाखों रुपये इस घोर मूर्खता में नष्ट कर दिये हैं। "यदि तुम केवल चार रुपये का एक हरे काँच वाला चश्मा खरीद लेते तो यह सब दीवालें, वृक्ष, बर्त्तन, पंखें

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कुर्सियां, सोफा इत्यादि क्यों रंगे जाते तुमने अपनी संपत्ति का एक बड़ा भाग नष्ट कर डाला है। तुम दुनिया को हरा नहीं रंगवा सकोगे"।

अपनी दृष्टि बदलो। वैसी ही दुनियाँ भी दिखाई देने लगेगी। आँख को 'दिव्यता' से आविष्ट कर लो, फिर सभी कुछ भगवान्‌मय दीखेगा। दुनियाँ को विशेष ढांचे में ढालने का प्रयत्न करना मूर्खता है; स्वयं अपने को शान्ति, प्रेम और श्रद्धा की मूर्ति के रूप में बदल डालो, फिर तुम सभी को दया, प्रेम और विनम्रता के अवतार रूप में पाओगे। सेवादल के सदस्य और स्वयंसेवक के रूप में तुम्हारे द्वारा किये गये कार्यों से तुम्हारी दृष्टि अवश्य ही स्वच्छ और निर्मल हो जावेगी। अपनी आँखों को धोकर स्वच्छ करो और उन्हें सर्वत्र सब में भगवान् का दर्शन करने योग्य बना दो। तब तुम्हारी चेतना तुम्हारे प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य को एक वरदान, परोपकार और कल्याण-कारी बना देगी।

आध्यात्मिक प्रवचनों को सुनकर हृदय को स्वच्छ करलो, सच्चे और धार्मिक पुरुषों सरलका सत्संग करके हार्दिक साधनों की संगति में रहते हुये अपने स्वभाव को कोमल, मृदु और आचरण को सदाचार पूर्ण बना लो। अपने हृदय को प्रेम के शीतल सुगन्धित और मृदु-जल से पूर्ण कर लो। फिर तुम्हारा प्रत्येक कार्य, शब्द (जो कि जिह्वा, हाथ और मस्तिष्क के जलाशय से निकले हुये जल बिन्दुओं की तरह, जो नल या सरोवर से निकाला जाता है,) मधुर और सुगन्धित होंगे। यदि सरोवर में गन्दगी है, तो शब्द या विचार या कार्य किस प्रकार कल्याणकारी या सराहनीय हो सकता है?

दिव्य आत्माओं! इतने दिनों तुमने अपनी इच्छा से लिये हुए कर्त्तव्यों को सही भावना से सच्चाई के साथ पूरा किया है। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं। इस तात्कालित परिस्थिति के निकल जाने के बाद भी यदि तुम इसी भावना से अपने जीवन को मोड़ते रहे तो तुम भगवान् के अधिकाधिक समीप होते जाओगे। देश के अन्य भागों में साई स्वयंसेवकों के लिये तुम उत्तम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हो। निस्सन्देह, कभी-कभी, तुम्हारे काम में भी, जो कि नितान्त दोष रहित नहीं हैं, कुछ संकोच, कुछ मोड़, कार्य अथवा वाणी के द्वारा, आ जाती है अच्छा होता यदि ऐसा न होता। परन्तु, यह तो बिल्कुल स्वाभाविक है, और कुछ सावधानी बरतने से इसे सुधारा जा सकता है।

मैं जानता हूं कि तुम कितने अधिक उत्साह और प्रसन्नता से सेवा कर रहे हो, क्योंकि यह स्वामी का काम है, स्वामी की ही सेवा है; ऐसा तुम सोचते हो। वास्तविकता तो यह है कि धर्मक्षेत्र तुम्हारा है, तुम्हारा अपना घर है। और तुम्हारे हृदय मेरा घर हैं तो स्वामी अपने घर की अर्थात् तुम्हारे हृदय की पवित्रता को सुरक्षित रखेगा। अब चूंकि स्वामी के उद्देश्य की पूर्ति के लिये तुम यह कर्म इतने उत्तम ढंग से कर रहे हो तो स्वामी भी तुम्हें आगे, पीछे, दायें, बाँयें, अपनी उपस्थिति से आशीर्वाद देगा। मैं इसी वर्ष पुनः यहाँ आऊँगा, क्योंकि मैं उस कार्य की सराहना करता हूं जिसे तुम और अन्य सभी लोग धर्मक्षेत्र में कर रहे हो।

इसी के साथ तीन बातों को सदा स्मरण रखना; जहाँ भी तुम होओ सेवा-कार्य करते रहो। दूसरों की सहायता कर पाने के अवसर की ताक में रहो। दुख, दर्द, संकट को घटाने और निपटाने की अपनी क्षमता चातुर्य और उत्साह में कभी कमी न आने देना। इसके साथ ही अपनी वैयक्तिक विशेष साधना में कभी, स्थगन या उपेक्षा की भूल मत करना। जो साधना—स्वाध्याय, जप, ध्यान, भजन, नामसंकीर्तन अथवा अन्य संयम पालन द्वारा, करते थे वह न छूटने पावे इन सब के ऊपर सदा विश्वास रखना कि स्वामी सदैव तुम्हारे साथ सर्वत्र रहता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४६ धनोद और ऋणोद

(कलकुन्टे १-६-१९७०)

मुझे प्रसन्नता है कि कलकुन्टे के ग्रामीण लोग शिक्षा के लाभों से इतने सुपरिचित हैं कि उन्होंने पारस्परिक निर्णय द्वारा अपने बच्चों की शिक्षा के लिये एक विशाल विद्यालय भवन निर्माण कराने का संकल्प किया है। अपनी कठोर, परन्तु सीमित अल्प, कमाई में से वे कुछ भाग इसी शुभ कार्य के लिये संचित करते जाते हैं। यह सरस्वती देवी का मन्दिर है, अतः यह मोक्षदायिनी देवी का भी मन्दिर है। मोक्ष अद्वैत की बौद्धिक अनुभूति से प्राप्त होता है; इस साँसारिक वैविध्य में अद्वैत ही मौलिक आधार है। गंगा कर्म है, यमुना भक्ति है, प्रयाग में तीसरी धारा सरस्वती, ज्ञान की, आकर मिल जाती है।

बच्चों के हृदय ऐन्द्रिक आसक्तियों से दूषित नहीं होते हैं। अध्यापक, अभिभावक, साथी और अन्य बड़े-बूढ़े लोग अपने आचरण और उदाहरण से उनको भ्रष्ट कर देते हैं। वे उनके कोमल स्वभाव को विकृत और कलुषित कर देते हैं। यदि उन्हें समुचित अध्यात्मिक वातावरण में विकसित होने दिया जावे, यदि उन्हें ईश्वर की निकटता प्राप्त करने दी जावे, तो वे भी अच्छे, न्यायप्रिय, विनम्र और पवित्र हो सकते हैं। इससे वे निर्बल नहीं होंगे, वल्कि बलवान होंगे सत्य की सम्पूर्ण शक्ति उन्हें प्राप्त होगी। वे राष्ट्र की बहुमूल्य निधि होंगे; परन्तु, आजकल, जबकि विद्यालय में आध्यात्मिक वातावरण का एक प्रकार से निषेध ही है, वे उन्नति के मार्ग पर वाधाओं के वीच पनप रहे हैं, वे अपने लिए भी और राष्ट्र के लिये समस्या बन गये हैं। इसीलिये मैं शिक्षा के क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ हूं; और नये युग के लिये कालेजों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की स्थापना की है, भिन्न-भिन्न राज्यों में बालक और बालिकाओं के लिए पृथक-पृथक विद्यालय स्थापित किये गये हैं।

शिक्षा मंत्री ने कहा कि भगवान् विद्युत् धारा के समान सभी बल्वों को, जिनके प्रकाश की क्षमता भिन्न-भिन्न है, आलोकित करता है। परन्तु जिस स्विच के द्वारा धारा आती है वह प्रत्येक के हृदय में ही है। जब तुम चाहो इसे नीचे ऊपर करके धारा को प्रवाहित या विसर्जित कर सकते हो। तुम भगवान् के अस्तित्व से इनकार करके अंधकार में भटक सकते हो, प्रत्येक बाधा से तुम्हारा सिर टकराकर लोहू-लुहान हो सकता है। अथवा स्विच नीचे करके प्रकाश का लाभ उठा सकते हो। जब उसका प्रकाश तुम्हारे ऊपर पड़ता है तो भारी से भारी बोझ भी हल्का हो जाता है अंधेरे में बीमारियाँ और संकट बढ़ जाते हैं, प्रकाश हर वस्तु को, स्पष्ट कर देता है परिचित बनाता है और दृष्टि को निर्मल करता है; विश्वास को स्थायी और दृढ़ करता है।

जब हम विद्युत् धारा की बात करते हैं, तो तुम्हें धनोद और ऋणोद पर भी विचार करना चाहिये जिनके संयुक्त होने से विद्युत् धारा प्राप्त होती है। धनोद भगवान् की महिमा, कृपा, शक्ति, दयालुता और वैभव है। ऋणोद वह चेतना है "मैं नहीं" "मेरा नहीं" जागृत अवस्था के मायामय अनुभवों की निस्सारता का वर्णन करना, सुप्तावस्था के स्वप्न और सुषुप्तावस्था की चेतनाहीन दशा; यह सब मन ही के ताने-बाने से बुना हुआ जाल है इसे कृषि की अनावश्यक घास-पात की तरह उन्मूलन कर स्वच्छ हृदय कर लेना चाहिये।

इस देश के ग्राम आन्तरिक कलह से छिन्न-भिन्न हैं। वे फूट के परिणामों को भुगत रहे हैं। जब आधा गांव विरोध में खड़ा हो जावे तो कोई भी शुभ या लाभप्रद कार्य नहीं किया जा सकता है। यह विरोध भी किसलिये?

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्योंकि वह कार्य शेष आधे गांव के द्वारा प्रस्तावित किया गया हो। व्यक्तिगत रुचि या अरुचि, पक्षपात और द्वेष को इतना तूल दिया जाता है कि उनमें से घृणा, ईर्ष्या का विषाक्त धुआं निकलने लगता है जिससे प्रेम, निष्ठा उत्साह, सहकारिता अपना सिर भी नहीं उठा पाते हैं। इससे ग्रामीणों को स्वास्थ्य, शिक्षा और प्रसन्नता प्रदान करने का कार्य बहुत कम मात्रा में हो पा रहा है। सिर, हाथ, पेट और पैर सभी शरीर के अवयव हैं; उनका शरीर से पृथक स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। उन सबके एकत्र संगठन ही का नाम "शरीर" है। जब हम 'प्यारेलाल' या 'रामप्यारी' का नाम लेते हैं तो हमारा आशय इन उपर्युक्त अंगों के संयुक्त संगठन से ही होता है इसमें अवयव, प्रणातियां, श्वांस, स्नायुजाल, सभी कुछ आ जाता है। यदि कोई भी अवयव घायल हो जाता है तो 'प्यारेलाल' को कष्ट होता है। यदि किसी भी अवयव को ठीक कर दिया जाता है तो सम्पूर्ण 'प्यारेलाल' लाभान्वित होते हैं। कलकुन्टे एक शरीर है इसके अंग विभिन्न परिवार हैं जो इस गाँव में निवास करते हैं। प्रत्येक घर का एक अलग नाम हो सकता है चाहे उसे किसी नाम श्रीनिवास, लक्ष्मीनिवास, या पद्मनाभ का घर से पुकारो, परन्तु कलकुन्टे नाम के अन्तर्गत सभी आ जाते हैं। सभी परिवारों, घरानों को मिलकर एक की तरह कार्य करना चाहिये। एक अवयव को दूसरे से नहीं झगड़ना चाहिये।

मुझे प्रसन्नता है कि इस गांव में एक मन्दिर भी है। जिसे बहुत साफ सुथरा रखा जाता है, वहां सभी दैनिक-पूजापाठ के कार्यक्रम परम्परागत औपचारिकता से सम्पन्न किये जाते हैं। एक मन्दिर जहां भगवान् की पूजा, जीती जागती प्रत्यक्ष शक्ति के रूप में, की जाती है वह व्यक्ति के हृदय के समान होता है। कहा जाता है जिस गांव में मन्दिर न हो वहां 'एक रात' भी नहीं ठहरना चाहिये, क्योंकि वहाँ के लोग अवश्य ही इतने अधार्मिक होंगे कि ऐसे नास्तिकों के बीच जीवन संकट में ही समझना चाहिये। भगवान् संरक्षक, सुधारक, शासक, रक्षक, सभी कुछ होता है। लोगों का

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

स्वभाव ही ऐसा बन जावे कि वे सदैव उसे पुकार सकें मानो किसी जीवित और पास में स्थित त्राणकर्त्ता को बुला रहे हों। मन्दिर हृदयों को कोमल बनाने में सहायता करता है, वह उसमें दयालुता और उदारता के सद्‌गुणों को भरता रहता है। लोभ और क्रूरता के असमाजिक दुर्गुण उसी वातावरण में पनपते हैं जिसमें भगवान् की भक्ति और पूजा नहीं की जाती है। अपने को चलते-फिरते मन्दिर जैसा बना लो। उस भगवान् से भी परिचित रहो जो तुम्हारे अन्दर निवास करता है। वही तो तुम्हारी रक्षा करता है, पालन करता है और तुम्हें दुर्गुणों और कुप्रवृत्तियों में पतित होने से बचाता है।

उसी एक के अनेक नाम हैं, वही एक अनेक रूपों और आकृतियों में व्यक्त होता है। सत्य एक ही है। लोग एक समय में एक पहलू ही पहचान पाते हैं, समूचे एक को देख पाने के लिए उनकी दृष्टि बहुत ही सीमित होती है अतः नहीं देख पाती है। यहाँ पर किसी को एक क्षण भर भी शान्ति या आनन्द प्राप्त हो जाता है तो वह उसी शान्ति और आनन्द के महासागर की एक नन्हीं सी बूंद मात्र है; वह महासागर भगवान् हैं। फिर घृणा करके, अधिकार प्रदर्शन की होड़ करके क्यों दुख पाते हो? इससे तो कहीं अच्छा है कि सहयोग करो, प्रेम करो, मेल-मिलाप से सुखी रहो; और सावधान रहना कि तुम 'वही' और 'वह' तुम्हीं हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४७ अन्तर्साक्षी

(भारतीय विद्या भवन बंगलौर १–६–१९७०)

भारतीय विद्या भवन भारतीय संस्कृति के ज्ञान विस्तार के लिये और अधिकाधिक लोगों को उसमें वर्णित संयम नियमों का पालन करने के लिये प्रेरित करने की चेष्टा कर रहा है। जिन सत्यों के आधार पर यह संस्कृति आधारित है उन्हें इस देश के लोगों को समझाने की आवश्यकता है; साथ ही उन बाहरी व्यक्तियों को भी, जिनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है, समझाने की आवश्यकता है। वे लोग उस ज्ञान से, जिसे ऋषियों ने वर्षों की तपस्या, अन्वेषण और साधना से प्राप्त किया था, लाभान्वितं होने के लिये उत्सुक हैं। आज ऐसे सच्चे साधकों के दस्ते की आवश्यकता है जो इस आध्यात्मिक यात्रा के अंत में प्राप्त होने वाले आनन्द को अनुभव करने की आकांक्षा रखते हों, और इस तीर्थयात्रा पर निकल पड़ने को तैयार हों। ऐसे साधक चाहिये जो उस ज्ञान की सत्यता की परीक्षा भी करने को उत्सुक हो जो उन्हें दिया जावे। अनुभव ही वह कसौटी होगी जिसके द्वारा यह सत्यता प्रमाणित होगी। यही वह समय है, जबकि नवयुवकों में इसकी तीव्र तृषा है इसीलिये स्पष्ट ज्ञान की धारा पूरी तरह खुली रखी जावे।

भारतीय विद्या क्या है? भारत का ज्ञान? यह भवन शरीर है, परन्तु इसके अन्दर की आत्मा, जिसके लिये इस भवन का निर्माण किया गया है, जिसके लिये इसका पोषण और रक्षण करना है, वह सिद्धान्त है जिसका यहाँ प्रचार किया जाता है और जिसका अभ्यास किया जाता है। इसी प्रकार भारत ही भवन है, आत्म-विद्या, आत्म-संयम का विज्ञान, उस परम तत्व का साक्षात्कार है। द्वन्दात्मक दुनियाँ उसी की बाहरी अभिव्यक्ति मात्र है; किसी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मिट्टी की दीवाल में लगी 'लोना' की तरह है। यहाँ तुम अन्वेषकों को भारतीय ज्ञान, जैसा कि ऋषियों ने प्राप्त किया और शास्त्रों में वर्णन किया है, प्रदान करते हो। यहाँ पर तुम उन्हें अनुकूल वातावरण और सत्संग भी प्रदान करते हो जिससे श्रद्धा और विश्वास का पौधा रक्षित और सुदृढ़ वृद्धि को प्राप्त करता रहे। प्रेम ही तो बीज है, साहस उसका पुष्प और शान्ति फल है, यही ऋषीगण अपने हृदय रूपी उद्यान में उगाते थे। वे सत्य को आत्मसात् करने के लिये कठोर परिश्रम करते थे। वे छल से असत्य के ऊपर सत्य का रंग चढ़ाकर संसार को यह नहीं प्रदर्शित करते थे कि सत्य यही है और ऐसा करके अपने जीवन को कृत-कृत्य मान लेते हों। मानों उन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य पूरा कर लिया हो कि जिसके लिये उनका इस पृथ्वी पर जन्म हुआ था। उन्हें वह सफलता प्राप्त हुयी जिससे भारत शताब्दियों तक मानवता का आध्यात्मिक गुरु रहा है। परन्तु, अब दीक्षा देने वाला अपने अल्पतम बुद्धि रखने वाले शिष्य से पाठ पढ़ने लगा है और जब उसे शिष्य 'शाबाशी' देता है तो वह गर्व से गर्दन ऊँची कर लेता है। भारतीय विद्या भवन तथा इसी प्रकार की संस्थाओं का यह कर्त्तव्य है कि वे भारतीय विद्या अथवा आत्म-विद्या की सत्यता बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील रहें। संसार इस समय एक चरम स्थिति से निकल रहा है इस समय आवश्यकता है कि भारतीय विद्या की शिक्षा और तदनुकूल आचरण को प्रदर्शित करना, और यह दिखलाना कि इससे व्यक्ति और समाज को क्या लाभ हो सकते हैं। क्षेत्र और धर्म सम्बन्धी ग्रन्थों का मंथन करके, उपयोगी नवनीत को इकट्ठा करके, विश्व के कल्याण के लिये उपहार दे डालो। अखण्ड आनन्द का जीवन व्यतीत करने के लिये सर्वोत्तम उपाय यह है कि अपने अन्दर हार्दिक ईमानदारी का विकास करो कि जो सोचते हो वही कह सको, और जो कहो उसी पर आचरण भी करो। उन सहस्रों लोगों में से जो उपदेश करते हैं शायद एक दो ही उन उपदेशों पर दैनिक जीवन में आचरण भी करते होंगे। घुड़दौड़ के सभी घोड़ों में से, जो प्रारंम्भिक पंक्ति पर दौड़ के लिये खड़े होते हैं, एक दो ही विजेता घोषित किये जाते हैं और पुरष्कार प्राप्त करते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

व्यक्ति 'अर्जुन' है और प्ररणा देने वाला शाश्वत दिव्य तत्व ही 'कृष्ण' हैं। 'कृष्ण' के नेतृत्व में 'अर्जुन' को विविधता पूर्ण माया के आकर्षणों का, प्रकृति की प्रेरणाओं का विरोध करना पड़ता है, यही कौरव दल है। महाकाल का युद्ध, आन्तरिक संघर्ष के रूप में निरंतर चलता रहता है। यह संघर्ष नूतन और शाश्वत में, व्यष्टि और समष्टि में, ऐन्द्रिक और अतीन्द्रिय में, दृश्य और द्रष्टा में चलता ही रहता है। नीले आकाश में विद्युत् की एक तेजवान रेखा के रूप में आत्मा का वर्णन किया गया है यह 'गीता' है (तेलगू भाषा में)। गीता की खोज करो, तभी गीता अध्ययन का उद्देश्य पूरा होगा।

आजकल सुखी जीवन, कष्ट रहित जीवन, जिसमें न्यूनातिन्यून श्रम करना पड़े और न कोई भौतिक कठिनाई होवे, बिताने की इच्छा की जाती है। परन्तु, स्वास्थ्य तो तभी प्राप्त होता है जब कठोर परिश्रम से तीव्र भूख उत्पन्न हो और तब पौष्टिक भोजन खाकर अंग-प्रत्यंगों को सुदृढ़ और सक्षम बनाने वाला उत्तम जीवन रस उत्पन्न होवे। अपने विचारों को उत्तरोत्तर उन्नत करो और कोई न कोई परिश्रम से किया जाने वाला कार्य भी साथ-साथ में करो। जितना ही अधिक समय अकर्मण्यता से बीतेगा; उतना ही अधिक तुम सेवा, साधना और सत्य के विचारों से भटक कर अलग जा पड़ोगे। प्रत्येक क्षण को कल्याणकारी, रचनात्मक और भगवान् को अर्पित क्रिया से बिताया करो। वही भगवान् हमारा स्वामी होता है जो अदृश्य रहकर भी हमारी सभी क्रियाओं का अनिवार्य रूप से प्रेरक बना रहता है।

गीता के कुछ श्लोकों का पाठ करने के बाद अथवा धार्मिक ग्रंथ से कुछ स्वाध्याय पाठ के पश्चात् तुम्हें कुछ समय तक उस दिन के पाठ के विषय पर मनन के लिये लगाना चाहिये। अर्थों और फलितार्थों के महत्व पर विचार करो। तब तुम जिस निष्कर्ष पर पहुंचोगे वह सुस्वादु होगा, उससे बिना हानि उठाये लाभान्वित होओ। एक शब्द जैसे 'सर्वभूतान्तरात्मा' पर ही मनन करने में घंटों का समय लग जावेगा। मनन से यह बोध दृढ़ हो जावेगा कि भगवान्

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सभी में है चाहे वह पक्षी, पशु, कीट, पतगा, वृक्ष ग्रादि कुछ भी क्यों न हो, विद्यमान ग्रौर व्याप्त रहता है। जब ऐसी चेतना स्थिर हो जावे तब तुम सृष्टि के किसी प्राणी से भी घृणा ग्रथवा व्यंग, उपहास करना न चाहोगे। क्योंकि तत्वतः तुम भी वही हो और वह तुम्हीं हो। जब तक इस स्थिति तक न पहुंचो तब तक तुम केवल भक्त के अंशमात्र हो, और तुम्हें ग्रभी आगे बहुत यात्रा करनी है। चूंकि भगवान् का निवास सभी हृदयों में है, अंतरात्मा की पुकार ही वह संकेत है जो धर्म किसी कार्य के ग्रनुमोदन अथवा ग्रस्वीकृति के लिये देता है। जिस धर्म का ग्राचरण तुम्हें करना है वह इसी अंतर्वाणी से संकेत कर दिया जाता है। यही तुम्हारा स्वधर्म है। यही अन्तर साक्षी है वह वास्तविक 'मैं' है जो ग्राँख को, काम को, जिह्वा ग्रौर त्वचा को ग्रपना-अपना कार्य करने का सामर्थ्य प्रदान करता है। जब श्री आर० आर० दिवाकर कहते हैं कि उन्होंने कोई बात नहीं देखी, ग्रथवा बात नहीं सुनी यद्यपि ये दोनों घटनायें उनकी भौतिक उपस्थिति में ही घटीं; इसका ग्रर्थ यह है कि यद्यपि दृश्य उनके नेत्रों के समक्ष था ग्रौर बात भी सुनाई दे सकती थी परन्तु वे कहीं अन्यत्र किसी समस्या में उनका ध्यान केन्द्रित था किसी कागज पर टिका हुग्रा था और मस्तिष्क उस दृश्य ग्रौर बात की ध्वनि से 'संयोजित' ही न था। यह शरीर एक टार्च के समान है जिसमें 'मन' रूपी सेलें पड़ी हुयी हैं, जब नेत्र रूपी बल्व से युक्त हैं ग्रौर बुद्धि रूपी स्विच नीचे की ग्रोर झुका दिया गया है तो दृश्य पदार्थ ग्रालोकित हो उठता है ग्रौर पहचान लिया जाता है। इन सेलों को ग्रात्मा की शक्ति से सक्रिय ग्रौर सशक्त बनाया जाता है। इसी पाठ को विद्या भवन को प्रचारित करना है, लोगों के मन में स्थिर करना है और समस्त संसार के युवकों को इसका ज्ञान कराना है।

आज प्रातःकाल मैं कलकुन्टे ग्राम के निवासियों को यह वतला रहा था कि ग्रध्यापकों का महान उत्तरदायित्व है; क्योंकि जो कुछ वे पढ़ाते हैं उस पर उन्हें आचरण भी करना है; अन्यथा वह पाखण्ड की ग्रभिवृद्धि का पाप करेगा। मैं वहां एक हाई स्कूल के भवन का उद्घाटन कर रहा था। मैंने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उन्हें रामकृष्ण की एक कहानी सुनाई कि उन्होंने पहले एक बच्चे को गुड़ न खाने का परामर्श देने से इसलिये मना कर दिया था कि उस समय तक स्वयं उनका स्वभाव गुड़ खाने का बना हुआ था। जब उन्होंने स्वयं गुड़ खाना बंद कर दिया तभी उन्होंने बच्चे को भी गुड़ न खाने का उपदेश देना उचित समझा। यद्यपि स्वयं गुड़ का त्याग करने में उन्होंने बड़ी कठिनाई से जिह्वा का संयम किया था। भवन के प्रत्येक कार्यकर्त्ता को भारतीय विद्या से प्राप्त लाभों की उत्तम मूर्ति, चित्र बन जाना चाहिये। अर्थात् उसे सभी धर्मों के प्रति सहिष्णु, विषमताओं में धैर्यवान, वृद्धों, धार्मिकों और ऐतिहासिक व्यक्तियों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने वाला, तथा अपनी उत्तमता और श्रेष्ठता प्रदर्शन की उत्कट इच्छा रखते हुये भी विनम्र बने रहना चाहिये।

जब कि एकमात्र भगवान् ही शक्ति, पद और मर्यादा के विचार से सर्वश्रेष्ठ हैं, यह जान कर भी जो लोग स्थिति और पद के लिये होड़ करते हैं वे कितने उपहास के पात्र हैं। मनुष्य की स्थिति कितनी क्षणभंगुर है? उसके अधिकार का आधार कितना दुर्बल है? उसकी शक्ति के प्रतीक कितने क्षुद्र हैं? वास्तव में 'अहं' मनुष्य के साथ अनेकों छल कपट करता है और उससे अत्यंत संकट पूर्ण और घोर उपहास के कार्य करा देता है।

मुंशी (कन्हैयालाल मानिकलाल) इस भारतीय विद्या की महान सेवा करते रहे हैं। उनकी प्रेरणा से लोग इसका आदर करने लगे हैं, नवयुवकों को इसका परिचय कराया जाता रहा है और उन्हें इसका महत्त्व समझाकर इसका अनुसरण करने को प्रेरित किया गया है। मुझे विश्वास है कि कल जब रामकृष्ण उन्हें मेरे यहाँ होने की सूचना देंगे तो वे अत्यंत प्रसन्न होंगे। मेरी इच्छा के सभी लोग, जो भारतीय ऋषियों की इस आत्म-विद्या का सम्मान करते हैं, वे इस भगवान् को अपना पूर्ण सहयोग और शक्ति देंगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४८ पका फल

(प्रशान्ति निलयम् ६-६-१९७०)

शान्ति या घबड़ाहट, स्वस्थ चित्त होना अथवा चिन्तातुर होना, जो भी व्यक्ति के जीवन में अनुभव में आता है वह उसके विचारों और कामों का ही फल होता है। व्यक्ति अपने प्रति या औरों के प्रति जो भाव रखता है, आचरण करता है उसी पर यह निर्भर करता है। बहुत से लोग ध्यान करते हैं कि उन्हें चित्त की सुस्थिरता और शान्ति प्राप्त हो जावे। उनको विश्वास होता है कि भगवान् के नाम-रूप का नियमित ध्यान करने से उनके मन के उद्वेग शान्त होकर उनके आतमसाक्षात्कार का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा।

परन्तु यह ध्यान एक आदर्श से दूसरे आदर्श तक वार-बार परिवर्तन होने वाला नहीं होना चाहिये। यह किसी पुस्तक में लिखित मंत्र या सूत्र का यान्त्रिक पुनर्वाचन मात्र नहीं होना चाहिये कि इतने बार इस नथुने से श्वाँस अन्दर लेना और उससे बाहर निकालना, नासाग्र को व्यर्थ घूरते रहना इत्यादि। यह तो कठोर इन्द्रिय संयम, स्नायु जाल का संयम और कल्पना की उड़ान का संयम है। इसीलिये कहा जाता है कि ध्यान शान्ति की वह घाटी है जो मनुष्य के षड्रिपुओं की छः ऊंची-ऊंची चोटियाँ पार कर जाने के बाद आती है। यह चोटियां काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, घृणा के उन्नत शिखर हैं जिन्हें पार करना है, तब इनके आगे समतल मैदान आता है। व्यक्ति को पर्दा हटाना है तब प्रकाश की किरण से उसका मार्ग आलोकित होगा। आँख से मोतियाबिन्द के दूर होने पर ही सत्य के दर्शन हो पाते हैं। अज्ञान के कोहरे का ही नाम माया है जो मस्तिष्क का उत्पीड़न करती है; जब कि मन आत्मा की गहराइयों में प्रवेश करने का प्रयत्न करता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सत् रज् तम तीन गुणों का यह संश्लिष्ट संगठन ही वह कोहरा है जो विश्व की आदि शान्ति को निरंतर क्षुब्ध और अस्पष्ट करता रहता है। काला, लाल और श्वेत, तम, रज और सात्विक, गुणों के रंग हैं ये जड़ता, सक्रियता और स्थिरता प्रकृति वाले हैं और इनका प्रभाव निष्क्रियता, उद्‌विग्नता और वैराग्य को उत्पन्न करता है। इन्हीं तीन के ताने-बाने से बुनी हुयी माया के पर्दे को या तो एक ओर हटा देना है; या फाड़ कर अलग कर देना है या ऊपर उठा देना है जिससे परमतत्व का दर्शन प्राप्त हो सके। भक्ति-मार्ग इस पर्दे को ऊपर उठा देता है, क्योंकि ईश्वर ने इस पर्दे को डाला है तो उसमें तुम्हारे लिये दयाभाव भी है। कर्म-मार्ग इसे फाड़ फेंकता है; उसकी सक्रिय धार्मिक या सेवाभावापन्न क्रियायें जो भगवान् को अर्पित हैं इस पर्दे को फाड़ देती हैं। ज्ञानमार्ग इसे एक ओर खिसका देता है; क्योंकि यह तो वह मार्ग है जो यह मानकर चलता है कि माया जैसी कोई वस्तु है ही नहीं, वह तो केवल काल्पनिक छलना है। और यह उनके तर्क को सत्य सिद्ध करने के लिये अदृश्य भी हो जाती है।

कुछ लोग ईश्वर के अस्तित्व से ही इनकार करते हैं, क्योंकि वे अदूर-दर्शन (मायोविया) की बीमारी से पीड़ित होने के कारण उसका दर्शन पाने से वंचित रह जाते हैं। जब कोई दक्ष नेत्र सुधारक चिकित्सक उस दोष को दूर कर देता है तो वे भी स्वयं भगवान् की सर्वशक्तिमत्ता की, उसकी महिमा की, कृपा की, साक्षी देखने लगते हैं। त्रिगुणात्मक मिश्रित अंजन जब तक नेत्रों में लगा रहेगा तब तक स्पष्ट और स्वच्छ दृष्टि नहीं प्राप्त होगी; जो कुछ देखोगे वह धुंधला और एक आवरण से ढंका हुआ होगा, वह सभी प्रकार के असत्य के भयों से युक्त होगा। माया के प्रयोग में आने वाला आन्तरिक यंत्र मन होता है जिसे वह छलने और संदेह उत्पन्न करने के लिये प्रयोग करती है। इसी के प्रभाव में आकर मन एक कल्पना से दूसरी कल्पना तक उछल-कूद करता रहता है, कभी शान्त होकर किसी वस्तु पर नहीं टिकता है। माया सदा मन को बाह्य पदार्थों में उलझाये रखती है, वह

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बुद्धि की ग्रान्तरिक यात्रा का सदा विरोध करती रहती है, जो कि ग्रात्म-परीक्षण और ग्रात्म-संयम की क्रिया होती है। परन्तु, एक बार भी, चाहे कितने ग्रल्प समय के ही लिये क्यों न हो, जब मनुष्य ग्रपने मन को माया के चंगुल से मुक्त कराने में सफल हो पाता है, तो उसका मार्ग अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति के लिये वाधाग्रों से मुक्त हो जाता है।

ध्यान वह अनुशासन है जिसके द्वारा मन को ग्रान्तरिक विवेचन के लिये प्रशिक्षित किया जाता है। ध्यान का लक्ष्य तो वही एक होता है । जिसमें सभी 'मैं' लीन हो जाते हैं ग्रौर ग्रपने पवित्रतम, शुद्धतम स्वरूप को प्राप्त होते हैं। उसी एक का वर्णन गीता में आठ विभूतियों सहित किया गया है, वह कवि है (त्रिकालज्ञ है) 'पुराणम्' (ग्रनादि) है ग्रौर 'अनुशासितारम्' (विधि निषेधों का नियामक) है, 'ग्रणोरणीयान्' (सूक्ष्माति सूक्ष्म) है; सर्वस्यधाता (सभी का ग्राधार स्वरूप) है, अचिन्त्य रूपा (ग्रचिन्तनीय ग्राकार वाला) है, ग्रादित्यवर्ण (प्रातः कालीन उदय होते हुये सूर्य के समान तेजस्वी) है, 'तम-सहपरस्तात्' (ग्रज्ञानांधकार से परे) है। यह एक ऐसा कार्य है जिसे केवल निरंतर ध्यान के द्वारा ही पूर्ण किया जा सकता है।

पुनः ध्यान ग्रौर इन्द्रिय-संयम के कार्य साथ ही साथ चलने चाहिये । इन्द्रियां स्वर्ग के द्वार तक ले जाने वाले मार्ग का ही पथावरोध करती हैं। किसी भी इन्द्रिय की लगाम ढीली नहीं करनी चाहिये। ग्राज के युग में कुछ ऐसे भी योग के प्रचारक हैं, जो संयम-नियम को बहुत पतला यहां तक कर देते हैं कि इन्द्रियों को ध्यान के साथ ही पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो जाती है क्योंकि उन्हें ग्रपने ग्राहकों ग्रौर ग्राय के घट जाने का भय रहता है; यदि वे कठोर नियमों को परिवर्तित करें तो। योग की परिभाषा "योगश्चित्तवृत्ति निरोधः" मन की चन्चलताग्रों को रोक लेने का नाम योग है। यदि मन को छिछोरेपन ग्रौर नटखटपन करने की छूट मिली रहे तो फिर योग कैसे किया जा सकता है ?

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वह मनुष्य को इच्छाओं के जंगल में घसीट ले जाता है और उसे विषय-वासनाओं की तृप्ति में डूबा देता है।

योग का प्रथम पाठ ही काम, अथवा इच्छा को जीत लेना है। कल्याणकारी कार्य के लिये उपयोगी यंत्र के रूप में इच्छा-शक्ति को ढाल लेना है, कार्य यही कि उस ज्ञान को कैसे प्राप्त किया जावे, जिससे एक झपाके में ही परमतत्त्व की चेतना जग जावे। जब तक बच्चा पालने में छटपटाता और चिल्लाता रहता है, मां घर-गृहस्थी के विविध कार्य वस्त्रों को धोना, भोजन पकाना, इत्यादि नहीं कर पाती है। उसे सबसे पहले बच्चे को शान्त करना और सुलाना पड़ता है; फिर उससे छुट्टी पाकर अन्य कामों को उनकी तात्कालिक महत्ता के क्रम से निबटाती है। इसी प्रकार तुम्हें भी सबसे पहले मन को शान्त कर देना है, तब तुम इस द्वित्व के क्षेत्र की यात्रा को पार कर आगे बढ़ सकोगे।

सदा अपने मन और जिह्वा की नोक पर भगवान् का नाम जगमगाता हुआ रखो। मन की चन्चलतायें इसी से वश में हो जावेंगी। जब तक दीपक जलता रहता है, तब तक अंधेरा तुम्हारे आस-पास नहीं फटक सकता है। गीता में कहा है गया कि जिस समय एक मरणासन्न व्यक्ति, ब्रह्म के लिये, ॐ शब्द का उच्चारण अंतिम श्वांस में करता है तो वह ब्रह्मलीन ही हो जाता है। परन्तु अंतिम श्वांस में उच्चारण करने के लिये उससे पूर्व के जीवन में निरंतर इसी शब्द के जाप का अभ्यास करना आवश्यक है। प्राणों के प्रस्थान समय केवल जैसे-तैसे जोर लगा कर 'ओ३म' बोल जाने से भी काम नहीं चलेगा। अंतिम बार 'ओ३म' का उच्चारण तो जीवन लता के सबसे सुरभित पुष्प की भाँति होना चाहिये। यह लता भी अपने सहारे के लिये भगवान् से जीवन भर लिपटी हुयी होवे; तभी न। गीता में इसे राजविद्या का नाम दिया गया है, यही आध्यात्मिक सफलता की पक्की सड़क है। इसे 'राजगुह्यम्' भी कहा गया है। अर्थात् राजकीय रहस्य, एक ऐसी शिक्षा जो कि गुरु के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

द्वारा शिष्य को, पहले संयम नियम पूर्वक पूरी और गम्भीर दीर्घकालीन तैयारी के बाद, हार्दिक और गंभीर वातावरण में देना चाहिये । गीता के द्वारा अर्जुन को यह रहस्य सरल रूप से वर्णन करके बता दिया गया था। इसे पद्य बद्ध करके गाया नहीं गया था, यह तो गद्य-पाठ ही था । बाद में व्यास ने इसे पद्य के रूप में बदल दिया।

गीता तो ध्यान की विधि को एक संक्षिप्त सुन्दर सूत्र के रूप में बतलाती है "माम् अनुस्मर युध्य च !" 'मेरा स्मरण करते हुये युद्ध करो' । जीवन-रूपी लंबे संघर्ष की कुंजी भी इसी में निहित है कि भगवान् को अपने जीवन-सारथी के रूप में स्मरण करते हुये जीवन के कार्यों को, सुखद-दुखद जैसे भी हो, करो। यह केवल अर्जुन के ही लिये आदेश न था; यह तो समस्त मानवता के लिये राम-वाण औषधि है। "अपना ध्यान मुझ पर जमाये हुये युद्ध करते रहो, तुम्हारी इच्छा के पीछे मेरी इच्छा, तुम्हारी आँख के पीछे मेरी आंख, तुम्हारे मस्तिष्क के पीछे मेरा मस्तिष्क और तुम्हारे प्राणों के पीछे मेरे प्राण रहेंगे। यह युद्ध अब मेरा है, शक्ति मेरी है, परीक्षण और विजय मेरे ही हैं, विजय के फल मेरे हैं, पराजय का अपमान भी मेरा है, तुम मैं हूं और मैं तुम हो"। ध्यान की पूर्णता इसी एकाकार होने में है, जब किसी प्रकार का अंतर शेष न रहे ।

माम् अनुस्मर। सदा मेरे स्मरण में रत। इस दशा में क्रियाओं को पृथक-पृथक भजन, भोजन, पूजन के रूप में नहीं लिया जा सकता; फिर तो सभी क्रियायें एकमात्र पूजन में ही परिणत हो जाती है; क्योंकि भोजन वही देता है, उसी के द्वारा खाया जाता है उससे उसी के लिये शक्ति प्राप्त की जाती है कि उसका काम चलता रहे। प्रत्येक क्षण कृतकृत्य होता है, वही देता है वही प्रयोग करता है, वही भरता है, वही उसे रूप, रंग, आकृति और प्रकार निर्णय करता है वही इसे पूर्ण करता है । जब प्रत्येक श्वाँस उसी से युक्त है तो तुम उसी में लीन होने का सर्वोच्च कार्य भी सम्पन्न कर सकते हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तुम बल रखते हो, आत्मा को कोई दुर्बल नहीं पा सकता, जब तक की शक्ति का स्रोत तुम्हीं में न हो और जब तक तुम एक दुर्बल आत्मा हो तब तक उस सर्वोपरि साहसिक कार्य के लिये अनुपयुक्त हो ।

'माम् अनुस्मर' । जब तुम ईर्ष्या के बन्धनों से रहित होकर स्वतंत्र हो जाओगे तभी सतत् स्मरण की स्थिति तुममें दृढ़ता से जम पावेगी । घमंड और परदोष दर्शन, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, अहं भाव या आत्मवंचना का लेशमात्र भी शेष न रहे तभी तुम्हारा हृदय स्वच्छ और पवित्र होकर भगवान् के लिये उपयुक्त आसन बन सकेगा । दुख तुम्हें इसलिये दुखी करता है क्योंकि तुम अपने को सुख प्राप्त करने का अधिकारी समझते थे वह तुम्हें नहीं मिला और मिला दुख । परन्तु दुख और प्रसन्नता का वितरण कर्त्ता एक निष्पक्ष सत्ता है जो तुम्हारी योग्यता के आधार पर, (इच्छा के आधार पर नहीं) तुम्हें दुख या प्रसन्नता प्रदान करती है । हो सकता है कि तुम्हारी आवश्यकता एक दुख रूप पौष्टिक की हो जिससे तुम ठीक हो सकते हो तो वह तुम्हें मिलेगा ही । वह परम दयालु, सर्वज्ञ, परमात्मा अच्छी तरह जानता है कि हमारा कल्याण किस प्रकार हो सकता है वह उसी की व्यवस्था कर देता है । अतः दुख का भी स्वागत करो और उसे भगवान् का स्मरण करते हुये भोग डालो । सभी नदियाँ द्रुतगति से समुद्र की ओर भागी जा रहीं हैं, इसी प्रकार तुम्हारी सभी कल्पनायें भगवान् की ओर मुड़ जावें । यह नाटक उसी का है । उसी ने इसे लिख रखा है । दिया हुआ जीवन एक पार्ट है जो उसी का दिया हुआ पुरस्कार है । वही इसका निर्देशक है । सभी परिधान और वेष-भूषायें, साज-सज्जा, हाव-भाव, संकेत-वाणी का उतार-चढ़ाव प्रवेश और बहिर्गमन उसी के संकेत के अनुसार हो रहे हैं । तुम्हें अपना पार्ट उत्तम ढंग से करके उसका अनुमोदन प्राप्त करना है; और यह कार्य यवनिका पतन से पूर्व ही पूर्ण कर लेना है । अपनी दक्षता और उत्साह से, पिछले पार्ट से अधिक उच्च और महत्त्वपूर्ण पार्ट दिये जाने का अधिकार प्राप्त करो—जीवन का यही अर्थ और उद्देश्य है ।

ससार में बहुत आसक्त और लिप्त न होओ और न इसकी उलझनों में

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ही फँस जाओ । अपने मनोविकारों को सदा सीमित रखो । लहरों से समुद्र की केवल ऊपरी सतह ही प्रभावित होती है, नीचे के स्तर तो शान्त ही रहते हैं । इसी प्रकार तुम भी जब जीवन की गहराइयों में प्रवेश करो तो तरंगों के क्षोभ से रहित होओ । अधिकाँश पदार्थों का कोई स्थाई मूल्य नहीं होता हैं अतः उन्हें एक ओर खिसकाया जा सकता है; सार पदार्थ को ही दृढ़तापूर्वक ग्रहण किये रहना है । अपने विवेक का प्रयोग रक्षणीय और उपेक्षणीय के निर्णय के लिये करो । जिसे कोषागार में रखना है उसे वहाँ सुरक्षित रखो जिसे कबाड़खाने में भरना है उसे वहाँ डलवा दो ।

प्रणव का जप या 'ओ३म' का कीर्तन तुम्हारे क्षुब्ध हृदय की तरंगों को शान्त कर देगा । वेदों की समस्त शिक्षाओं का सार, उनमें वर्णित सभी प्रकार की भगवान् की पूजा का सार, "ओ३म् इति एकाक्षरं ब्रह्म" ऊँ एक अक्षर में ही ब्रह्म का वाचक है । 'ओ३म्' में तीन ध्वनियों का एकीकरण है । 'अ' नाभिप्रदेश से 'उ' कंठस्थान से बहकर जिह्वा पर होता हुआ जाता है और 'म' बंद ओठों पर पहुँच कर समाप्त होता है । इसे धीरे-धीरे ध्वनि से क्रमशः उच्च स्वर तक उठाते हुये उसी क्रम से पुनः स्वर को नीचे उतारते हुये समाप्त किया जाता है । ध्वनि के शान्त होने के बाद में भी अनुस्वरित गुंजन हृदय में चलते रहें । इसे दो भागों में मत बांटो इसलिये कि उतनी देर तक तुम्हारी श्वांस लम्बी नहीं खिच पाती है । अपनी शक्ति के अनुसार ही तीनों क्रियायें एक ही श्वाँस में सम्पन्न करो । अर्थात् 'ओ३म्' शब्द का उच्चारण बढ़ती हुयी ध्वनि, उसका विस्तार और उतार एक ही श्वाँस में पूरा कर लिया जावे । यह जागृत, सुप्त, सुषुप्ति और चौथी तुरीयावस्था सभी स्थितियों का प्रतिनिधित्व करता है । यह व्यक्ति के व्यक्तित्व के प्रफुल्लित होने, फल लगने, मधुर रस से सिक्त होने, और अंत में वृक्ष से मुक्त होने सभी क्रियाओं का प्रतीक भी है ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

४९ परार्थ, न कि पदार्थ

(प्रशान्ति निलयम् गुरुपूर्णिमा १८-७-१९७०)

ऐसे गुरु की आवश्यकता होती है जो पथ-प्रदर्शन कर सके और आगे का नेतृत्व कर सके, जो उस मार्ग पर पहले चलकर मार्ग के सभी चढ़ाइयों और उतारों से परिचित हो चुका हो। तुम्हारे पास दीपक, बत्ती, तेल हो फिर भी इसे प्रज्वलित करने वाले की आवश्यकता होती ही है श्यामपट पर कुछ आकृतियाँ बनाने के वाद भी एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता होती है जो उनको पहचान सके कि यह अक्षर 'भ' है यह 'ग' है यह 'वा' है और यह 'न' है तव वह वच्चे को बोल-बोल कर अक्षरों का उच्चारण करावे और मिलाकर एक शब्द 'भगवान्' कहना सिखलावे। और उन्हें समझावे कि भगवान् वह दैवी तत्व है जो सर्वव्यापक है। उसी के प्रभाव से ओस बूंद बनती है, कमल खिलता है, तितली उड़ती है और सूर्य निकलता है। वही सम्पूर्ण शक्ति, सम्पूर्ण ज्ञान, सम्पूर्ण प्रेम और वही भूत, भविष्यत, वर्तमान का सबसे बड़ा चमत्कार है।

जो लोग प्रकृति और उसके नियमों की, पदार्थ और उसके गुणों की, बल और उनकी कार्य-प्रणाली की शिक्षा देते हैं वे बंधन में डालने वाली शिक्षा देते हैं मुक्ति दिलाने की नहीं; यह तो बोझा है वरदान नहीं। यह तो तुम्हारे लिये सागर पार करने के लिये पत्थर की नौका के समान है; वह सागर शोक और हर्ष की घाटी और ऊंचाई वाली तरंगों से पूर्ण है। यह नौका तुम्हें जल पर तैरने में नहीं बल्कि डूबने में अवश्य सहायक होगी। इस सागर को पार करने के लिये तुम्हें भक्ति की नौका कृपा का आश्वासन, उसकी इच्छा के आगे आत्मसमर्पण कर देने की आवश्यकता है। सभी बोझों को

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उतार फेकों, हल्के हो जाओ, फिर तरंगों के शीर्षों पर चरण रखते हुये पार निकल जाओगे। भगवान् तुम्हें पार लगा देंगे। तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि जब वही सब कुछ करता है तो फिर कौन किस लिये चिन्ता करे?

प्रेम की चिनगारी जो तुम्हारे अन्दर है उसे बढ़ाकर इतना उठाना है कि वह भगवान् तक पहुंच जावे; फिर सभी कुछ भगवन्मय हो जावेगा; हर कार्य दिव्य हो जावेगा। तब विश्व की प्रत्येक बाहरी प्रतिक्रिया जो तुम्हें प्राप्त होगी वह प्रेम से युक्त और मधुरता में अमृत के समान होगी। तुम सभी में स्थित भगवान् को प्रेम करते हो इसी के प्रतिदान स्वरूप सभी में बैठा हुआ वह भगवान् भी प्रेम से व्यवहार करता है। चाहे तुम दुःखपूर्ण स्थिति में ही क्यों न हो, भगवान् को प्रेम करो, चाहे तुम्हें फटकारें और झड़कियां ही क्यों न प्राप्त हों (स्मरण रहे सोना घरिया में पिघलाया जाने पर ही शुद्ध और मूल्यवान बनता है)। भगवान् की भक्ति एक नाम एक रूप के आश्रय से ही करो, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उस नाम-रूप के अतिरिक्त और कोई तुम्हारी निष्ठा और श्रद्धा का पात्र नहीं है। भगवान् का क्षेत्र तो क्षितिज के उस पार भी है। वह अंतरिक्ष को भी घेरे हुये उसके भी पार है। इस लिये पूजा के लिये अपने नेत्रों पर यह पर्दा मत डालो कि भगवान् यहां तक है। अन्य नामों से घृणा मत करो न अन्य रूपों से द्वेष रखो। वह परब्रह्म परमात्मा, पुरुषोत्तम सभी रूपों में वही व्यक्त हो रहा है। क्योंकि घृणा से भय उत्पन्न होता है, उसी से चिन्ता उत्पन्न होती है, असत्य और दोष दर्शन भी उसी क्यारी में पनपते हैं। यह तुम्हारे मन से शान्ति को निकाल बाहर करती है। तुम्हें बिना तैल के प्रकाश, धुयें के बिना अग्नि, बिना पंखा झलने वाले के वायु के झकोरे, चिलचिलाती गर्मी के दिनों में अपने कमरे में शीत की सिहरन प्राप्त हो जावे। परन्तु, जब तक तुम्हारे अन्दर और बाहर चारों ओर के व्यक्तियों में शान्ति का वातावरण न हो, तो तुम्हारी नाड़ी की गति तीव्र और तुम्हारे अन्दर रक्त का संचार इतनी शीघ्रता से होगा कि जैसा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्रोध और घोर शत्रुता की अनुभूति के क्षणों में होता है । केवल प्रेम ही चिन्ता और भय को निर्मूल कर सकने में समर्थ होता है।

प्रकृति तो उस पुरातन पुरुष का परिधान है। अमरत्व ने मृत्यु के चीथड़ों से अपने को ढक रखा है। नवजात शिशु में ही वृद्धावस्था अनुस्भूत होती है। अंधकार प्रकाश के गर्भ में प्रसुप्त रहता है और रात्रि में प्रकाश प्रच्छन्न रहता है। चरम सत्य ही इस चमक-दमक वाले सभी पदार्थों, आकृतियों की आभा का वास्तविक आधार है; भले ही इसे मान्यता न भी दी जावे। पवित्रता के महासागर को मथकर जो अमरत्व का अमृत प्राप्त किया गया था उसके पूर्व हलाहल ही प्राप्त हुआ था; जिससे तीनों लोकों के विनाश की आशंका उत्पन्न हो गयी थी।

मूल्यों का उचित मूल्यांकन करने तथा तारतम्य बिठाने की बुद्धि का विकास करो। संसार के पदार्थों को, उनको देय उचित प्रेम, अवश्य दो उससे अधिक नहीं। ऋषियों में सर्वोपरि ज्ञानी और पवित्र शुकदेव सम्राट जनक सहित अपने कई शिष्यों को पढ़ा रहे थे। एक दिन उन्होंने बिलम्ब से प्रवचन प्रारम्भ किया, क्योंकि जनक देर से आये थे। शेष उपस्थित समुदाय ने शुकदेव की जनक के प्रति विशेष आसक्ति का विरोध किया; उन्होंने यहाँ तक कह डाला कि जनक उस क्षेत्र के सम्राट हैं इसीलिये उनकी प्रतीक्षा की गयी। उन्होंने कहा कि दुर्भाग्य से उनका गुरु भी इन पार्थिव क्षुद्र झुकावों से रहित नहीं है। शुकदेव जानते थे कि किस दिशा में उनके मस्तिष्क असत्य और पूर्वाग्रहों का ताना-बाना बुन रहे हैं। इसलिये उन्होंने इस ईर्ष्या का शिष्यों के हृदय से उन्मूलन करने का निश्चय किया।

जब जनक आ गये और कुछ देर तक प्रवचन चलता रहा, शुकदेव ने अपनी रहस्यपूर्ण शक्ति से ऐसा प्रबंध किया कि श्रोतागणों को कुछ ही दूर पर क्षितिज के समीप मिथिला, जो साम्राज्य की राजधानी थी, धू-धू करके

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

लपटों में जलती हुयी, भस्मसात् होती हुयी, दिखाई दी। शिष्य लोग आत्म-बोध के विषय में सुन रहे थे कि केवल आत्मा ही वास्तविक सत्ता है, शेष सब ग्राकार ग्रौर ग्राकृति मात्र है जो कि आत्मा पर माया ग्रौर ग्रज्ञान के कुहासे के रूप में आरोपित है। ग्रपनी कक्षा ग्रौर गुरु को छोड़-छोड़ सभी शिष्य अपनी-अपनी कोठरियों की ओर भागे। वे भयभीत थे कि इस वढ़ती हुयी ग्रग्नि की लपटों में कहीं उनके वस्त्र ग्रौर पुस्तकें न भस्म हो जावें। परन्तु जनक, जिनकी राजधानी राख हुयी जा रही, थी, टस से मस नहीं हुये। क्योंकि वें जानते थे कि जो कुछ ग्राग में भस्म हो रहा है वह आकृति और आकार मात्र है न कि वास्तविक चरम सत्य। स्वयं शुकदेव ने जनक से जाने को कहा ग्रौर ग्रग्निकांड से हुयी हानि का मूल्यांकन करने को कहा; ग्रौर जो कुछ बचाया जा सके उसे ही बचाने को कहा। परन्तु, जनक ने कहा कि उनका कोष तो वह ज्ञान है जो वे स्वामी से प्राप्त कर रहे थे ग्रौर वह सुरक्षित ही था, शेष की उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी; क्योंकि वह बाह्य जगत के पदार्थ थे ग्रौर वे इन्द्रियों के ग्रनुभव में ग्राने वाले पदार्थ थे। इस पर शुकदेव ने ग्रपनी रहस्यमयी शक्ति को बटोरकर पूर्ववत् स्थिति प्रकट कर दी ग्रौर कहा कि ग्रग्नि तो कल्पित थी ग्रौर लोगों को उनके वास्तविक ज्ञान ग्रौर बोध का मूल्य बताने के लिये थी कि जनक के ज्ञान की गहराई के सामने शिष्यों की विद्वत्ता कितनी छिछली थी।

इस प्रकार के गुरु ग्रौर जनक जैसे शिष्य को ही प्राचीन भारत आदर्श मानता था। ग्रब तुम समझ गये होगे कि भारत की प्राचीन काल में इतनी महिमा क्यों थी, क्यों वह संसार की बुभुक्षित मानवता को दीक्षा देने वाला गुरु माना जाता था। वही ग्रभिनय ग्रब पुनः भारत के ऊपर डाला जा रहा है। भारत की संतान को पुनः ग्रपने उदाहरण से सिद्ध करना है कि प्राचीन ज्ञान ग्रौर पाठ ग्राज भी उतने ही सत्य ग्रौर ग्रनुकरणीय हैं ग्रौर कभी भी समय के विपरीत ग्रनुपयोगी नहीं हो सकते। ग्रात्मा जो सभी का मूलाधार है, वह अवश्य ही सहानुभूति के कम्पन तुम्हारे हृदय में उत्पन्न करेगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इसलिये जब कि कोई दूसरा व्यक्ति प्रसन्न है तो तुम भी प्रसन्नता का अनुभव करो। जब दूसरा कोई कष्ट में हो तो तुम स्वयं कष्ट का अनुभव करो। यही प्रेम है जो अपनी चरम स्थिति में है और सच्चा है।

इस प्रेम को जब तुम विस्तृत कर लोगे तो यह क्रोध और द्वेष की घात-पात का उन्मूलन कर देगा। यह खिलकर शान्ति और स्थैर्य के पुष्प खिलावेगा। मेरा उपदेश प्रेम है, मेरा संदेश प्रेम है, मेरे कार्य-कलाप प्रेम हैं मेरे रहने-सहने का ढंग प्रेम है। संसार में अथवा कहीं भी प्रेम से बढ़कर कुछ नहीं जो मानव प्राप्त कर सकता है।

प्रेम का एक शब्द थके हुये चरणों की थकावट को दूर करने का उपचार होता है। तुम प्रशान्ति निलयम् रेल, बस, या सड़क पर पैदल चलकर आये हो, थके हुये परन्तु फिर भी उत्साह से पूर्ण हो। मैं बरामदे से पूछता हूं 'अच्छा तुम कब आये ?' अन्य लोग संदेह कर सकते हैं कि बाबा ने यह प्रश्न क्यो पूछा ? क्या वे जानते नहीं हैं ? निश्चय ही उन्हें हम सब के और उसके विषय में ज्ञात है। फिर यह पूछ-ताछ किस लिये ? परन्तु, जिससे यह प्रश्न पूछ लिया जाता है वह तत्काल प्रसन्न हो जाता है; सोचता है कि "पहुंचते ही बाबा ने स्वयं दर्शन देकर मुझसे संभाषण किया"। मैं तुम्हें आनन्द प्रदान करने के अवसरों की खोज में रहता हूं इसीलिये सब जानते हुये भी इस तरह के प्रश्न पूछ लेता हूँ। यदि मैं चुप रहूं और कुछ न पूछूँ तो तुम्हें एकाकीपन और कुछ-कुछ निराशा का अनुभव होगा, है न ? तुम जानते हो कि मैं किसी उत्तर पाने के लिये नहीं पूछता हूँ वह तो मुझे भी पहले ही से ज्ञात है; परन्तु मेरे शब्दों से तुम्हें संतोष मिलता है। इसीलिये मैं यह भी पूछ सकता हूं "कहो, कैसे हो ?" यद्यपि मैं जानता हूं कि तुम स्वस्थ हो तभी तो आ सके हो अथवा रुग्ण हो तभी तो स्वास्थ्य लाभ के लिये यहाँ आये हो। यह माया शक्ति है जो यदि संभाषण करती है अथवा नेत्र से देख भर लेती है या अन्य कुछ क्रिया करती है, तो लोगों पर सम्मोहन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

का प्रभाव होता है। जब मैं तुमसे पूछता हूं या अन्य कुछ करता हूँ तो योगमाया से तुम्हें प्रसन्नता प्राप्त होती है।

अन्य लोगों से उनकी जाति, धर्म, विश्वास, परम्परा और रीति-रिवाजों से संबंधित प्रश्न पूछकर अपने को मत उलझाओ; चाहे यहाँ निलयम् हो अथवा अन्य कहीं यात्रा में भेंट होने पर ऐसे प्रश्न पूछना असंगत है। यह कोई लाभदायक स्वभाव नहीं है। अपने उद्देश्य और लाभों को ही देखो। शेष सब छोड़ दो। प्रत्येक अपनी-अपनी आकांक्षा ही की पूर्ति के लिये प्रयत्न करे और उनके मार्ग को ठीक करने का भार मेरे ऊपर छोड़ो। अन्य किसी में इसका अन्वेषण मत करो; बाह्य संसार के पदार्थों में शान्ति और आनंद, संतोष और ज्ञान की खोज करना व्यर्थ है। अन्तर्दृष्टि को विकसित करो, बाहर दूर तक देखने की क्षमता नहीं सहायक होगी। भगवान् के आदेशों को समझने की चेष्टा करो, जिससे तुम्हारे चरण नीरवता, सतत् साधना के पथ पर दृढ़ता से पड़ सकें। हृदय की निष्ठा को बढ़ाओ, तुम एक लोहे के ठोस गोले जैसे गरिमामय हो जाओगे जिसे कोई भी वायु का झोंका अपने स्थान से हटा सकने में समर्थ नहीं होगा। इसी प्रकार तुम्हारा विश्वास इतना दृढ़ होवे कि शोक और दुःख के कैसे भी झोंके आवें परन्तु तुम भगवान् के आश्रय को दृढ़ता से ग्रहण किये रहो। कुछ लोग मेरे चित्र की पूजा बड़ी रुचि और उत्साह से करते हैं; परन्तु यदि उनकी भैंस जो दो सेर दूध देती हो और बाद में केवल एक ही सेर देने लगे तो वे इसका कारण मेरे चित्र या पूजा को ही समझने लगते हैं और पश्चात्ताप करते हैं कि वह दिन उनके दुर्भाग्य का था जब वह चित्र उनके घर पहुंचा। फिर वे चित्र का मुंह पलट कर दीवाल की ओर कर देते हैं। कुछ लोग मेरे पास यहाँ १०, १५, वर्षों से आ रहे हैं परन्तु उन्होंने अपने हृदय में कोई गंभीर भक्ति नहीं उपजा पायी है, उन्हें तो अविश्वास के झोंके लगेंगे ही। यदि तुम अपने कैमरे के लेंस को दुनियां की ओर घुमा दो तो 'क्लिक' करने पर (बटन दबाने पर) मेरा चित्र फिल्म पर कैसे प्राप्त कर सकते हो? हृदय को सही

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ढंग से 'फोकस' (केन्द्रित) करो और ज्ञान का बटन दबा दो; अपने हृदय-पटल पर मेरा स्पष्ट चित्र प्राप्त करने का यही उपाय है।

कन्नड संत बसवन्ना ने गाया है कि भगवान् न तो नाद (संगीत) और न वेद (ज्ञान) से ही जीता जा सकता है; परन्तु भक्ति से यह संभव है। भक्त ने अपने हृदय को भक्ति से जब स्वच्छ कर लिया हो तो भगवान् भी भक्त की रुचि के अनुसार रूप धारण कर वहाँ आसीन होते हैं। केवल औपचारिक, कर्मकाण्डी पूजा या कुछ स्त्रोत्र-पाठ, मंत्र-पाठ, जो यंत्रवत् प्रतिदिन कर लिये जाते हैं, के द्वारा भगवान् को हृदय में नहीं स्थापित किया जा सकता। ऐसे हृदय में तो क्षुद्र वस्तुयें, ईंधन, कवाड़ और मकड़ी के जाले बाधाओं के रूप में भरे रहते हैं। मैं ऐसी भक्ति से, जो दूसरों को प्रभावित करने, या अपना रोब जमाने के लिये की जाती हो, प्रभावित नही होता। मैं आडम्बर-भक्ति की सराहना नहीं कर सकता। मैं आनन्द-भक्ति की सराहना करता हूं (वह भक्ति जिसे शब्दों में व्यक्त न किया जा सके और जिसे प्रचार या प्रदर्शन की लेशमात्र आकांक्षा न हो)।

एक पत्र, चाहे वह एक रद्दी कागज पर घसीट कर ही क्यों न लिखा गया हो और उसमें उल्लिखित सूचना भी कितनी ही महत्त्वहीन क्यों न हो, पर यदि पर्याप्त डाक टिकटें चिपकाई गयी हैं तो वह डाक द्वारा ले जाया जावेगा और पाने वाले को सही स्थान पर सावधानी से पहुंचा दिया जावेगा। एक दूसरा पत्र चाहे जितने बहुमूल्य कागज पर सुन्दर अक्षरों में लिखा गया हो और उसमें कितना ही महान संदेश या साहित्य अंकित हो जिसका मूल्य सोने के टुकड़ों के समान हो, यदि उस पत्र पर पर्याप्त डाक टिकट नहीं चिपकाये गये हैं तो वह रद्दी की टोकरी में उपेक्षित पड़ा रहेगा, डाकखाने वाले उसे पहुंचाने का दायित्व स्वीकार नहीं करेंगे। 'भक्ति' का टिकट ही प्रार्थना को उसके गन्तव्य स्थान भगवान् तक पहुँचाने के लिये स्वीकार्य होता है; अन्य पूजा-सामग्री फूल, अक्षत आदि कुछ भी महत्त्व नहीं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रखते हैं। सरल निश्छल सच्चा हृदय हो वह मोहर (टिकट) है जिससे प्रार्थना शीघ्रता से यात्रा करती है।

शोकार्त होकर यह मत झींको कि मैं तो भगवान् को प्रेम करता हूं परन्तु वह उसका प्रतिदान नहीं करता है'। भगवान् तो प्रतिक्रिया करता है, प्रतिदान करता है, और प्रतिबिम्बित होता है। जितना प्रेम तुम भगवान् से करते हो उसका दसगुना वह तुम्हें प्रतिदान में देते हैं। आकांक्षा करो, अर्पित करो, शरणागत होओ। निरंतर आगे बढ़ते जाओ, आज २ कदम आगे बढ़कर कल पीछे मत लौटो। नन्हीं-नन्हीं चीटियाँ एक के पीछे एक पंक्ति-बद्ध होकर अपने गन्तव्य को ध्यान में रखते हुये, विघ्न-बाधाओं को पार करते हुये आगे बढ़ती रहती हैं। उपहास और घृणा का मुकाबला मुस्कान भरी निरपेक्षता से करो। अवतार भी तो ऐसी ओछी मनोवृत्तियों के आक्रमण से सुरक्षित नहीं रहे हैं। कृष्ण को भी तो स्वयं तक मणि की चोरी और सत्रजित् की हत्या का दोष लगाया गया था। सत्रजित् इस मणि को धारण कर वन में शिकार खेलने गया था। कृष्ण स्वयं ही इन निन्दकों को झूठा सिद्ध करने निकल पड़े। उन्हें पता लगा कि सत्रजित् को एक सिंह ने मार डाला था और वह रत्न जाम्बवान् नामक रीछ की गुफा में पहुँच गया है जिसने उस रत्न को अपनी पुत्री के झूले में बाँध दिया है जिससे रत्न के प्रकाश से बच्चे का मनोरंजन और क्रीड़ा होती रहे। दूसरों की कीर्ति पर कीचड़ उछालने के प्रलोभन के शिकार मत बनो। यह घृणित और जघन्य मनोवृत्ति है और परिणाम में विनाशकारी है। अपनी जिह्वा को मधुर, और परनिन्दा दोष से मुक्त रखो।

मैं विद्वत्ता का भी इतना प्रशंसक नहीं हूं कि कोई यह डींग मारे कि उसने गीता को १०० बार पढ़ा या भागवत के बीसों पारायण किये हैं। अपने दैनिक आचरण में यदि कोई एक श्लोक को भी उतार पाता है तो वह उसकी उन्नति के लिये बड़ा महत्त्वपूर्ण है। इकन्नी लेकर नाई सिर घोट

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

देगा और भगवा वस्त्र भी प्राप्त कर लेना सरल है। कुछ लोग हैं जो सहस्त्र नामार्चन या लक्षनामार्चन १००८ नाम उच्चारण करके ही अपने को धन्य मानने लगते हैं। आर्त और हार्दिक एक पुकार भी भगवान् को बुलाने को पर्याप्त है, उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए इतना ही पर्याप्त है। मैं देखता हूं कि कुछ लोग निलयम् के समक्ष नारियल तोड़कर उसके पटाके से शान्ति भंग करते रहते हैं। मुझे पता नहीं उन्हें इससे क्या लाभ होता है; सिवाय इसके कि वे भोजन के साथ खाने की चटनी बना लें।

मैं यहाँ 'धर्म संस्थापनार्थाय' आया हूँ। इसी से पृथ्वी अपने स्थान पर टिकी है, इससे मानवों और राष्ट्रों के बीच शांति समन्वय बने रहते हैं। धर्म में रहो, अपने कार्य, शब्द, विचारों से धर्म की उन्नति करो, मैं इसी प्रकार की पूजा की सराहना करता हूं; क्योंकि जिस उद्देश्य को लेकर मैं यहाँ आया हूं उसके प्रति सम्मान प्रकट करने का यही ढंग हो सकता है। धर्म का पालन करो, धर्म की वृद्धि करो, धर्म की उन्नति करो और धर्माचरण को उत्साहित करो, यह मेरा कार्य है मैं इससे प्रसन्न हो जाऊंगा।

जब तुम परस्पर मिलो तो 'हल्लो' शब्द उच्च स्वर से बोल कर मत मिलो और न 'बाई बाई' कहकर विदा लो। यह सब मूर्खतापूर्ण उद्घोष हैं। तुम्हारे मिलन का शुभ अवसर भगवान् के नाम का स्मरण करते हुये होना चाहिये। 'राम राम' या 'ओ३म्' साई राम, या 'हरि ओ३म्' जो इच्छा हो कहकर संभाषण प्रारम्भ करो। जिसे तुम एटीकेट (शिष्टाचार) कहते हो वह तो ए-टिकेट (एक टिकट) बरबरता (जंगलीपन) का टिकट है। तुम 'गुडबाई' को तेलगू भाषा के शब्द 'गुड्डी अब्बै' अर्थात् 'अंधा लड़का' के लिये उच्चारण करते हो। इस प्रकार का अटपटा शब्दोच्चार तुम्हारे अभीप्सित आनन्द को तुम्हें किस प्रकार दे सकेगा ? मृगमरीचिका से प्यास कैसे बुझेगी ? इसमें तरंगायित जल न तो किसी शिखर से वर्फ के द्रवित होने से निकला है और न उसकी पहुँच किसी सागर तक है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चूंकि तुम्हारे सुधार और सही मार्ग पर पथ-प्रदर्शन का उत्तरदायित्व मेरा है इसीलिए मैं तुम्हें "आँख के दोष" से सावधान करता रहता हूं। किसी अश्लील प्रदर्शन, संकेत, दृश्य और कामुकतापूर्ण हाव-भाव, जैसे कि आजकल सिनेमा की फिल्मों, चौराहों पर पोस्टरों में भरमार है, देखकर प्रसन्न मत होओ इनसे तो तुम्हारे मन को पाप और पापाचार में पड़ जाने का ही भय है। जिह्वा की बुराइयों से भी चौकन्ने रहो। 'कान की बुराई' जैसे बदनामी की बातें सुनना, घृणोत्पादक, लोभोत्पादक, नास्तिकों और दुष्टों के समाचार सुनना; उनके हृदय में न तो प्रेम होता है न कार्यों में भ्रातृत्व की भावना। हाथ की बुराई, मन की बुराई से भी दूर रहो। अर्थात् उन सभी से दूर रहना जिससे किसी का अहित, बदनामी होती हो या किसी को चोट पहुंचे। दुष्ट भावों और उद्वेगों से भी अलग रहो। जब यह उपर्युक्त कोई बुराइयाँ नहीं होंगी; तब तुम्हारा ध्यान अथवा आदर्श प्राप्ति में सफलता मिलेगी। इनका लेशमात्र भी शेष रह जाना तुम्हारे मन को दूषित करेगा और उसे अशान्ति और कोलाहल से भर देगा।

सभी कार्यों को भगवान् की पूजा के फूल समझकर उसी को अर्पित कर दो। उनमें से किसी को 'मेरा काम' और कुछेक को 'भगवान् का काम' ऐसी पृथक-पृथक श्रेणियों में विभाजित मत करो। सभी कार्य उसी के हैं। वही प्रेरणा देता है, वही सहायता देता है, वही करता है वही कार्य का आनन्द उपभोग करता है, वही प्रसन्न होता है, वही फसल काटता है क्योंकि फसल उसी के द्वारा तो बोई गई था। एकमात्र उसी का अस्तित्व है क्योंकि यह सब विविधता उसी की अभिव्यक्ति है जो प्रकृति के दर्पण में दिखाई पड़ती है। हर वस्तु का अस्तित्व उसी सर्वेश्वर की प्राप्ति के लिये और उसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिये है। किसी वस्तु को जैसी की तैसी समझ कर उसी के अनुसार मत प्रयोग करो। कोई 'पदार्थ' है ही नहीं यह सब 'परार्थ' है। उद्देश्य केवल यही है कि चरमतत्व का, आत्मा का, भगवान् का अनुभव या साक्षात्कार किया जावे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५० नामांकन उपाधि आरोपण है

(गुरुपूर्णिमा उत्सव (२) प्रशान्ति निलयम् १९-७-१९७०)

गुरु पूर्णिमा का दिवस अनेक कारणों से पवित्र है, आज के दिन ही उस साधक को, जो पार्थिव दुनियां को अपने समान ही माया के प्रभाव से सत्य मानता है, सत्य के पथ की दीक्षा दी जाती है; आज ही के दिन उनलोगों को, जिन्होंने अभी तक अपने ही अन्दर आनन्द के स्रोत की खोज की आवश्यकता नहीं अनुभव की है, चरमतत्त्व के अन्वेषण की प्रेरणा दी जाती है; आज के दिन शिष्य गुरु के चरणों में कृतज्ञता अर्पित करता है क्योंकि उसी ने ज्ञान का उपहार देकर उसके जीवन को आलोकित किया है; आज ही के दिन भक्त भगवान् के चरण कमलों का मार्ग दिखाने वाले ग्रन्थों और मान-चित्रो का अध्ययन करता है। जब सूर्योदय होता है विश्व को प्रकाश और ऊष्मा का वरदान मिलता है। जब गुरु आशीर्वाद देता है तो शिष्य शान्ति और आनन्द प्राप्त करता है। आगामी कल को भी गुरु पूर्णिमा समाप्त नहीं होती है। पत्रा या जंत्री में अंकित यह कोई तिथि मात्र नहीं है। यह तो उन सब दिनों में रहती है जबकि मानव का मस्तिष्क जिसका अधिष्ठाता देवता चन्द्रमा होता है, शीतल ताजगी देने वाली किरणों से पूर्ण होता है; यह किरणें तो मूलतः सूर्य (बुद्धि) से चलकर चन्द्रमा से परावर्तित होती हैं। मस्तिष्क को बुद्धि से प्रकाश प्राप्त करना चाहिये, वही तो विवेचन करने में समर्थ है। इन्द्रियों से प्राप्त संवेदन तो भ्रामक भी हो सकते हैं। जब इन्द्रियासक्ति से मन दूषित हो जाता है तो फिर यह शान्ति और आनन्द को प्राप्त नहीं कर सकता।

सांसारिक पदार्थों से अत्यधिक लगाव मत रखो, यह वस्तुयें तो मनुष्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की इन्द्रियों को उत्तेजित करने वाली और विलास की इच्छाओं को जगाने वाली होती है। अन्त में वह क्षण आ ही जाता है जब तुम्हें यहाँ से रिक्त-हस्त प्रस्थान करना पड़ता है, वह सभी पदार्थ जिन्हें तुमने बड़े परिश्रम से यहाँ जोड़ा है और बड़े गर्व से जिन्हें अपना कहते आये हो वे सब यहीं छूट जाते हैं। जो लोग प्रशान्ति निलयम् में रहते हैं और वे भी जो यहाँ कुछ काल तक निवास करने आते हैं, अपने साथ सामान के अनेकों पदार्थ लाते हैं; दर्जनों थैले, बक्स, बंडल, बर्तन विभिन्न आकार के—वास्तव में उनके सामान बर्तनों इत्यादि का बोझा लगभग एक 'ट्रक' भर हो जाता है। जरा इन अमेरिकन साधकों की ओर देखो। ये लोग भी समुद्र पार देश से हजारों मील की यात्रा के पश्चात् यहाँ आये हैं उनके पास एक झोला, एक कम्बल और एक बर्तन, बस वे इतने ही से काम चला लेते हैं। तुम्हारा अधिकांश समय उस सामान की चिन्ता, रक्षा में बीतता है कि जिस सामान का तुमने अपने आस-पास ढेर लगा रखा है।

प्रशान्ति निलयम् में निवास करने वालों के लिये मैं ५ अनुशासनों के पालन का आग्रह करता हूं। मैं तुम्हें भी उनके सम्बन्ध में बतलाना चाहूँगा जिससे उन पर आचरण करके तुम अपने घर, गाँव, नगर को भी प्रशान्ति निलयम् में बदल सको। (१) पहला नीरवता है। साधना में यह पहला चरण है। इससे अगले पग सरल हो जाते हैं। इससे आत्म-संयम में वृद्धि होती है, इससे क्रोधित होने के अवसरों में कमी होती है। घृणा, द्वेष, लोभ, अभिमान भी नहीं पनप पाते हैं। इसके अतिरिक्त जब मस्तिष्क में शान्ति होती है तभी भगवान् के पदचाप उस नीरवता में सुनाई पड़ सकते हैं। (२) स्वच्छता, यह तो धार्मिकता का द्वार है। भीतरी और बाहरी स्वच्छता परमावश्यक है यदि तुम भगवान् को अपने हृदय में अधिष्ठित करना चाहते हो। (३) सेवा, दूसरों को कष्ट से बिलबिलाते और दुखी देखकर तुम्हारे हृदय में जो टीस उठती है उससे मुक्त होने के लिये सेवा ही एक उपाय है। इससे तुम्हारे दृष्टिकोण में विशालता आती है, चेतना विस्तृत होती है, और दयालुता भी गहरी होती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाती है। सब उसी समुद्र पर, उसी से उद्भूत तरंगों के समान हैं। सेवा से तुम्हारा यह ज्ञान दृढ़ होता जाता है। (४) प्रेम, इससे उत्पन्न प्रतिक्रिया या प्रतिदान की तौल-नाप मत करो; न यह देखो कि इससे क्या लाभ या पुरस्कार प्राप्त हुआ। प्रेम ही पुकारता है और प्रेम ही प्रतिदान करता है। प्रेम ही भगवान् है; अतः प्रेम में ही निवास करो। (५) अद्वेष; 'अद्वेष्टा सर्व भूतानाम्' किसी भी प्राणी से घृणा नहीं करनी है, उसे नीच या क्षुद्र नहीं मानना है; घटिया महत्त्वहीन अथवा व्यय करने योग्य समझ कर अपमान नहीं करना है। भगवान् के इस नाटक में सभी का पहले से ही निश्चित पार्ट (अभिनय) है। किसी को चोट मारकर अपमानित कर या अनादर कर क्षुब्ध मत करो क्योंकि वह परमात्मा ही तो सब में है और तुम्हारे द्वारा की गयी धृष्टता उसी का अपमान है; पाप है।

मन्दिर में पाषाण की एक निर्मित मूर्ति की उपासना करते हुये तुम्हें प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। तो सोचो कि साक्षात् उस भगवान् की पूजा करने में तुम्हें कितना महान आनन्द मिलेगा जो प्रत्येक नर-नारी के और तुम्हारे हृदय-मन्दिर में विराजमान है। और न केवल मानवीय हृदयों में ही, वह तो प्रत्येक पक्षी, पशु, वृक्ष, कंकड़ और धूलि के कण में भी है। महाराष्ट्र के संत एकनाथ को ऐसा साक्षात्कार हो चुका है।

भगवान् की कृपा केवल उसके नाम-यश को दोहराने मात्र से नहीं प्राप्त होती है। भगवन्नाम उच्चारण के साथ ही, उसके अर्थों की आभा तुम्हारे मन में उदय हो, तुम्हारी भावनाओं और कार्यों को भी संपृक्त कर दे। अमरीकनों ने भजन गाने में ताल, राग, स्वर का भी ध्यान रखा। उन्होंने प्रत्येक गीत का अर्थ भी जान लिया है, और वे हृदय से गाते हैं। इसलिये वे भाव को भी महत्त्व देते हैं। इसीलिये भा (व) र (ाग) त (ाल)—भारत होने से वे भारतीय कहलाने के अधिकारी हैं। भारत की संस्कृति तो भगवान् में रति (प्रीति) रखने की है; इस आधार पर तो उनका दावा और अधिक दृढ़ हो जाता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

गुरु शिष्य को मृत्यु की अनिवार्यता का स्मरण कराता है और संसार में उसके जीवन की क्षण भंगुरता की ओर उसका ध्यान आकर्षित करता है। जब यज्ञवालक्य ने जंगल में तपस्या के लिये आने का संकल्प किया, तो उन्होंने अपनी दोनों पत्नियों को बुलाकर उनमें अपनी संपत्ति के बँटवारे का प्रस्ताव किया। अपना भाग स्वीकार करने के पूर्व मैत्रेयी ने अपने पति से पूछा "यह धन सम्पत्ति क्या मुझे सत्य का साक्षात्कार करने में सहायक होगी और अमरत्व प्रदान कर सकेगी ?" जब उसे बतलाया कि ये सब बाधक हैं साधक या सहायक नहीं; तो उसने इस बोझे को अस्वीकार कर दिया। नचिकेता ने साम्राज्य, वैभव और अनेकों वर्षों के स्वास्थ्य जीवन को भी अस्वीकार कर दिया था। प्रह्लाद भी अपने सहपाठियों को यही पाठ पढ़ाया करते थे। बुद्ध जो कष्ट और दुखों के रहस्य को सुलझाना चाहते थे उन्होंने भी जो साधना की उसमें आसक्तियों के त्याग को ही प्राथमिकता दी थी।

उन लोगों को भगवान् के अस्तित्व में पूर्ण विश्वास था। उनका जीवन इसी विश्वास की धुरी पर घूमा करता था। परन्तु, आजकल लोग अपने अविश्वास को गर्व के साथ घोषित करते हैं; वे उच्च स्वर से कहते हैं कि ईश्वर का कोई अस्तित्व नहीं है क्योंकि उनकी खोज में वह उन्हें मिला ही नहीं है। अब तो भगवान् या ईश्वर का नाम इतना चालू हो गया है कि अस्तित्व स्वतः सिद्ध है। लोगों की जिह्वा से कोई शब्द तभी उच्चारित होता है जब कि उसके अनुसार कोई वस्तु, क्रिया या विचार होता है कि जिसके लिये उस शब्द का प्रयोग किया जाता है। जिसका अभाव है उसका कोई नाम नहीं होता क्योंकि उसे पहचानने की कोई समस्या ही नहीं उठती। ऐसे शब्द जो अभाव मूलक हैं जैसे 'आकाश कुसुम' 'बाँझ माता' 'शशकशृंग' संयुक्त शब्द हैं। आकाश और कुसुम तो पृथक-पृथक अस्तित्व वाली वस्तुओं के नाम हैं परन्तु दोनों को मिलाकर संयुक्त शब्द एक अनहोनी की कल्पना भी असंगत है। इसी प्रकार से 'बाँझ और माता' शशक (खरगोश) और शृंग (सींग) भी पृथक-पृथक संगत और मिलकर असंगत।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रत्येक शब्द से कुछ अनुभव की अभिव्यक्ति होती है; हर अनुभव एक इच्छा का परिणाम होता है; हर इच्छा इन्द्रियों और वाह्य भोग्य पदार्थों के सम्पर्क से उत्पन्न होती है; और पार्थिव जगत उसी एक (भगवान्) पर वैविध्य की उपाधि या आरोपण मात्र है। यह माया है माया को भगवान् ने 'मेरी' 'माम् माया' कहकर मान्यता दी है स्वीकार किया है। यह तो उसी की 'लीला', दिव्य-क्रीड़ा, उस निरपेक्ष में अहं की तरंग वत् है। गुरू तुम्हें इसकी शिक्षा देता है और बतलाता है कि माया का आवरण कैसे फाड़ फेंका जावे।

मानव जो कि पशुओं के अधिक निकट है, वैदिक और अवैदिक दोनों में से किसी वन में विचर सकता है। अवैदिक वन में जीवन-जीविका से पोषित होता है, सर्वत्र उग्र उत्तेजना का वातावरण होता है। शिक्षकगण क्षुद्र समस्याओं में उलझे रहते हैं। उनके लम्बे हाथ तुम्हारी जेब तक पहुँचने को आतुर रहते हैं। उन्हें तुम्हारे हृदय या मस्तिष्क को टटोलने की लेश मात्र रुचि नहीं होती। वे तुम्हारे वैभव में अधिक, और भाग्य में कम, रुचि रखते हैं। वैदिक वन में नीरवता और शान्ति का साम्राज्य होता है। आत्म साक्षात्कार प्राप्त आत्मायें वहां आनन्दित 'मृगेन्द्रता' (अपने पराक्रम से प्राप्त पशुओं के राजा का पद) की शान से निवास करती हैं। नीरवता हृदयों में प्रवेश कर जाती है और सभी रहस्य स्पष्ट हो जाते हैं।

सच्चे और सरल बनो। यह तो धन का सरासर दुरुपयोग है कि लोग अपनी सम्पन्नता अथवा भक्ति के मात्र प्रदर्शन के लिये अपने घरों और मन्दिरों की मूर्तियों और चित्रों को मालाओं से लाद देते हैं, बहुमूल्य बर्तन और पात्र इत्यादि भी पूजा-गृह में संकलित कर रखते हैं। उनका नैवेद्य भी प्रायः इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए होता है। यह सब धोखा है; इससे 'दिव्यता' कलुषित होती है यदि तुम उसके नाम पर किसी ठाठ-वाट, या प्रचार की इच्छा जोड़ देते हो। मैं केवल हृदय की पवित्रता की माँग करता हूं और इतने से ही कृपा की वर्षा हो जाती है अपने और मेरे बीच दूरी को मत

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बढ़ाओ; गुरु-शिष्य संबंध की औपचारिकता भी न ठूंसो और भगवान्-भक्त का उच्चता सूचक विशिष्ट संबन्ध भी मेरे और अपने बीच में मत रखो। न तो मैं गुरू हूं और न भगवान्; मैं तो तुम हूं और तुम मैं हो यही सत्य है। दोनों में कोई अन्तर नहीं है। ऐसा प्रतीत होना ही भ्रम (माया) है। तुम सब तरंगे हो, मैं महासागर हूं। इतना जान लो और मुक्त हो जाओ, दिव्य बनो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५१ प्रकाश, प्रेम और आनन्द

जिस यज्ञ का आज शुभारम्भ किया गया है, वह वेदों के कर्मकाण्ड में 'काल' को पवित्र बनाने तथा मानव के इस पृथ्वी-तल पर शरीर धारण करने के लक्ष्य की पूर्ति के लिये विहित किया गया है। यज्ञ के द्वारा त्याग और दान करने के साँसारिक सुख और आध्यात्मिक उन्नति दोनों ही प्राप्त होते हैं। यह सामाजिक संगठन और दान की भावना में वृद्धि करने वाला होता है। प्रकृति के अधिष्ठाता देवता को यज्ञ प्रसन्न करता है, जिससे पृथ्वी पर वर्षा होती है, जिससे यहां फसलों के उगाने में सहायता मिलती है और मानव तथा पशु दोनों के लिये प्रचुर अन्न और चारा उत्पन्न होता है। जो कार्य आध्यात्मिक लक्ष्य से रहित, श्रद्धा और विनम्रता से रहित होता है उससे अभिमान और निरंकुशता में वृद्धि होती है। इससे मनुष्य क्रूर और घमण्डी हो जाता है। परन्तु भारत के ऋषियों ने निर्धारित किया है कि सभी कार्य यज्ञ की भावना से किये जावें; उसके फल भगवान् को अर्पित किये जावें, भगवान् के प्रति कृतज्ञता, पवित्रता, विनम्रता और श्रद्धा-भाव से किये जावें। समस्त कार्यों का एक ही लक्ष्य, मानव तथा समस्त प्राणिमात्र का कल्याण, सुख, शान्ति, रहता था। वैयक्तिक उत्थान और उत्कर्ष को निषिद्ध और निन्दित ठहराया गया था।

इसी साधुता और सेवा पर आग्रह करने के कारण भारत शताब्दियों तक विश्व के आदर का, सम्मान का पात्र रहा है। वेदों में कहा गया है कि "अमरत्व साहसिक कार्यों से नहीं; तेजस्वी सन्तानों से नहीं; विशाल धन-संग्रह से नहीं प्राप्त होता है बल्कि यह त्याग और समानभोग की प्रवृत्ति और आचरण से प्राप्त होता है।" इस अवसर पर यहाँ एकत्रित होने का यही उद्देश्य है कि जो अनेक लोग वेदों में विश्वास और श्रद्धा रखते हैं, वे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

लोग तुम्हारा ध्यान इन मौलिक सत्यों की ओर आकर्षित करें और इन कृत्यों को सम्पन्न करके दिखावें। क्योंकि अब जिस तर्कहीन झक्की मनोवृत्ति से लोग वेद की शिक्षाओं और कर्मकाण्ड की उपेक्षा और उपहास करने लगे हैं, उससे तो भारतीय संस्कृति विकृतियों और अर्धसत्यों का एक संग्रह मात्र रह गयी है।

महाभारत महाकाव्य में भूतकालीन महान आदर्शों का स्पष्ट वर्णन विशद रूप से किया गया है। पांच पाण्डवों को असंभव दुर्लंघ्य कठिनाइयों पर भगवान् की कृपा से विजय प्राप्त हुयी थी, यह प्रभु-कृपा धर्मराज ज्येष्ठ पाण्डव को अपने धर्माचरण, अनुज भीम के शक्तिशाली अनुसरण और तृतीय पाण्डव अर्जुन की पवित्रता की शक्ति, (अर्जुन का अर्थ पवित्र होता है) से प्राप्त हुयी थी। आजकल भी धर्म हमें पुस्तकों, और कदाचित् प्रवचनों में भी प्रचुरता से प्राप्य है। परन्तु विश्वास और समर्पण से प्राप्त शक्ति के बिना, आचरण और चरित्र की पवित्रता के बिना, धर्म भी प्रभु-कृपा अर्जित करने में असमर्थ है। आज हम इसी स्थिति में हैं।

फिर भी निराश होने की कोई बात नहीं है। जब सूर्य अस्त होता है, लोग पश्चाताप करते हैं कि वह चला गया है, परन्तु वास्तव में सूर्य तो कभी अस्त होता ही नहीं है। यह तो पृथ्वी द्वारा सूर्य को परिक्रमा के कारण हुआ है, वह पुनः कुछ काल बाद हमारे प्रत्यक्ष होकर हमें प्रकाश और उष्णता प्रदान करने लगेगा। जब आच्छादित अज्ञान को हटा दिया जावेगा, धर्म, पुनः प्रकाशित दीखेगा और संसार का रक्षण और पोषण करेगा। धर्म को पुनः आलोकित करने का एक साधन यह वेद-पुरुष ज्ञान यज्ञ भी होता है।

मनुष्य को भगवान् का सामीप्य प्रदान करने के लिये पाँच प्रकार के महायज्ञों को निर्देशित किया गया है; इनके लिये बिचौलिये पुरोहित, ऋत्विज और पण्डितों की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है; और न मूल्यवान् पदार्थों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

या श्रमसाध्य कर्मकाण्ड व्यवस्था ही अपेक्षित होती है। प्रत्येक गृहस्थ इन्हें सम्पन्न कर उत्तम फल को प्राप्त कर सकता है। (१) देव-यज्ञ, देवताओं के निमित्त यज्ञ होता है इसका अर्थ अपने कर्मफलों को भगवान् के चरणों में उत्सर्ग कर दो; अर्थात् मनसा, वाचा, कर्मणा भगवान् के लिये अर्पित हो जाओ। (२) पितृ-यज्ञ, पूर्वजों की संतुष्टि के लिये भोज्य, पेय-पदार्थों का उत्सर्ग करना; पूर्वजों से अभिप्राय माता-पिता, पितामह-पितामही, प्रपितामह-प्रपितामही इत्यादि हैं। ऐसे भी लोग हैं जो इस कृत्य का विद्रूप और उपहास करते हैं, वे कहते हैं कि यह उन्हें प्राप्त नहीं हो सकता है। परन्तु कृत्य के मध्य जिन मंत्रों का उच्चारण किया जाता है उनसे स्पष्ट है कि इन पूर्वजों को वसु, रुद्र, आदित्य आदि देवताओं के रूप में जानकर मानकर हव्य कव्य प्रदान किया जाता है। समस्त कृत्य ही इतने उच्चस्तर पर संकलित और सम्पन्न किया जाता है। यह तो उन महामानवों के प्रति अपनी कृतज्ञता को व्यक्त करना है कि उनके द्वारा हमारा इस घर में जन्म, पोषण और शिक्षण हुआ है जिससे हम अपना कर्त्तव्य यहां पूरा कर सकें। कृतज्ञता की भेंट ही पितृ-यज्ञ का सार है। (३) ब्रह्म-यज्ञ, यह यज्ञ ऋषियों और आध्यात्मिक ज्ञान के लिये होता है। यह धार्मिक ग्रन्थों, शास्त्रों के अध्ययन, मनन, जिससे मोक्ष के लिये आकांक्षा उत्पन्न होवे; द्वारा सम्पन्न होता है। (४) मनुष्य-यज्ञ; मानव जाति के लिये यज्ञ। यह अतिथियों के सत्कार तथा बीमारी, दरिद्रता और कष्ट से पीड़ितों को आराम पहुंचाने से सम्पन्न होता है। (५) भूत-यज्ञ, जीवित प्राणियों के लिए यज्ञ। जीवों पर दया, विशेष कर पालतू और दूध देने वाले पशुओं पर जो हमारी कृषि में भी सहायक होते हैं। पालतू पशु जैसे कुत्ता, खरगोश, बिल्ली, तोता आदि भी विशेष दया के पात्र हैं। चींटियों को चूंगा डालना तो उस कार्य का प्रायश्चित मात्र है जो असावधानी से ईंधन में रेंगती हुयी चींटियों की निरपराध हत्या से संबंधित होते हैं। वेद-पुरुष ज्ञान, यज्ञ, इन्ही उपर्युक्त पांच यज्ञों का सामूहिक सविस्तार और कर्मकाण्ड की सभी औपचारिकताओं के साथ सम्पन्न किया जाने वाला यज्ञ होता है। इसी यज्ञ के साथ प्रतिदिन सायंकाल को पंडितों के द्वारा हम सनातन धर्म के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सिद्धांतों की व्याख्या भी सुनते रहे हैं और उसमें समझाया गया है कि इन कृत्यों की महत्ता और प्रभाव क्या है ?

अब से ८ वर्ष पूर्व वैदिक पंडितों का एक संगठन अखिल भारतीय प्रशान्ति निलयम् विद्वान महासभा स्वर्गीय डा० बूर्गल रामकृष्ण राव की अध्यक्षता में स्थापित की गई थी। इसका उद्देश्य इस देश के तथा बाहर के निवासियों के वेद की शिक्षा के अनुसार जीवन यापन करने का प्रचार करना है। वेद अद्वैत ज्ञान की शिक्षा देते हैं। जो देखने में द्वैत है वह वास्तव में एक ही है, द्वित्व तो है ही नहीं। उस एक के बिना सौ में से एक भी न उत्पन्न हो सकता है न कोई घटना ही घट सकती है। वही एक मूलाधार है। तरुण में, जन्म के समय का शिशु विद्यमान रहता है और वही अधेड़, वृद्ध और अत्यंत वृद्धजन में भी रहता है। वही एक सभी परिवर्तनों, परिवर्धनों और प्रति-विम्बों में विद्यमान रहता है आज सभा का वार्षिकोत्सव है; उसी सभा का जो इस सत्य का मानवता में प्रचार करना चाहती है कि जिससे हमें प्रकाश, प्रेम और प्रसन्नता प्राप्त होवे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५२ महत्त्वपूर्ण वर्ष

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् ४-१०-१९७०)

देवताओं को हवि वैदिक मंत्र 'त्र्यंबकम् यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्' बोल कर दी जाती है, "मैं तीन नेत्रों वाले देव को जो सुवासित, शक्ति, माधुर्य प्रकाश और प्रसन्नता की वृद्धि करने वाला है, आहुति देता हूं"। त्रिनेत्र से कई वस्तुओं का, जो दिव्य हैं, बोध होता है; जिनमें सूर्य, चन्द्र, अग्नि जोकि ताप और प्रकाश का प्रतीक है; स्थूल, सूक्ष्म और कारण जोकि उसी एक की अभिव्यक्ति की तीनों अवस्थाओं के प्रतीक हैं, इच्छा, कार्य और ज्ञान जोकि उसी एक सर्वोपरि सत्ता की क्रियात्मक शृंखलाओं का तथा कर्त्ता, कर्म, कर्त्तव्य 'मैं' की तीन परछाइयों के प्रतीक हैं, जोकि अनेकों व्यक्तियों में प्रतिबिम्बित हो रही हैं।

मन तो इच्छाओं का एक नमूना है; यह योजनाओं और संकल्पों के ताने-बाने से बुना हुआ है। इसमें अनेक प्रकार की बहुरूपता धारण करने की अपार शक्ति है; इसीलिये इसे कल्पना भी कहते हैं। कल्पना सत्य को छिपा देती है; यह बुद्धि पर कुहासे का झीना आवरण डाल देती है, दृष्टि को विकृत कर देती है, साधक को सरल मार्ग से विचलित कर देती है। इच्छा से, जहाँ पहले कुछ भी न था, मृगमरीचिका उत्पन्न हो जाती है। जहाँ पहले कुछ भी न था इच्छा सौंदर्य अध्यारोपित कर देती है, यह वस्तुओं को वांछनीयता के परिधान से सुसज्जित कर देती हैं। इच्छा, जोकि संतान के रूप में क्रोध, घृणा, द्वेष, लोभ, ईर्ष्या, दलबन्दी, असत्य इत्यादि की जननी है, के चंगुल से बचने के लिये व्यक्ति को अपनी चेतना, सतत् प्रार्थना और सत्कर्म के द्वारा स्वच्छ रखनी पड़ती है। निस्वार्थ, निष्काम, सत्कर्म ही इसका उपाय है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इच्छाओं द्वारा प्रक्षिप्त मन पर दूषित आकर्षणों के प्रभाव से बचने के लिये सेवा सर्वोत्तम साधना है ।

राम ने आंजनेय (हनुमान्) से पूछा, "हमारा तुम्हारा क्या संबंध है ?" हनुमान ने उत्तर दिया, "जब मैं यह अनुभव करता हूं कि मैं यह शरीर हूँ तो मैं यह अनुभव करता हूँ कि मैं आपका दास हूं; जब मैं व्यष्टि रूप में एक जीवात्मा होने का अनुभव करता हूं तो मैं अपनी स्थिति दर्पण के प्रतिबिम्ब के समान समझता हूं कि वह मूल वस्तु आप ही हैं । जब मैं अपने को विश्वात्मा रूप में जानता हूं और अन्य आकृतियां व्यर्थ की कल्पनायें हैं तो लगता है कि मैं तुम हो और तुम मैं हूं" । इसलिये, जब तक तुम्हें यह भ्रम है कि तुम वर्तमान शरीर के पर्याय हो, और तुम्हारे ऊपर जो नाम की चिप्पी लगी है वह तुम्हारा नाम है, जिस शरीर में हो वह तुम्हारी आकृति है तब तक तुम्हें दास या सेवक का और भगवान् को स्वामी, अन्य सभी को स्वामी मान कर अहंभाव को मिटा देना चाहिये और मन की इच्छाओं की पूर्ति नहीं करनी चाहिये । इसीलिये मैंने अखिल भारतीय सत्य साई सेवादलों की कान्फ्रेंस बुलाई है जिससे वे लोग मुझसे सेवा का मूल सिद्धान्त समझ लें ।

जब कोई धनी ३० रु० मासिक वेतन पर कोई नौकर रखता है तो वह उसकी सेवा स्वीकार करता है और दूसरा सेवा अर्पित करता है; परन्तु उसके ध्यान में वेतन पाने की आशा भी जगी रहती है । उन दोनों में 'सेवक-सेव्य' भाव संबंध नहीं होता है। वहां तो 'नकद नारायण' संबंध बनाता है। परन्तु जब एक ओर से कर्म की अनिवार्यता नहीं होती है और दूसरी ओर से मजदूरी या पुरस्कार की कामना नहीं की जाती है, तभी वास्तव में सेवा शब्द की सार्थकता होती है । अनुभव करो कि प्रत्येक ही 'त्र्यंबकम्' है, उन सब में व्याप्त वही परमात्मा है जो कि तीनों लोकों से परे त्रिगुणातीत और परमेश्वर है उसी को अपनी सेवा, बिना किसी प्रतिफल या पुरस्कार की कामना से, अर्पित करो । यही वास्तविक सेवा है । कर्मयोग का यही रहस्य है जैसा कि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

गीता में वर्णन किया गया है, वही नकुल सेन (गोवा के राज्यपाल) ने तुम्हें स्पष्ट किया है।

यहां पर सेवा के विभिन्न कार्यों का उल्लेख किया गया था जो कि सेवा-दल के कार्यक्रम के अन्तर्गत आ जाती हैं जैसे अस्पतालों के खण्डों की मित्रता-पूर्ण यात्रायें, जेल और सुधार-गृहों में भजन-कीर्तन का आयोजन, रेल स्टेशन और बस अड्डों पर असहाय, असमर्थ यात्रियों की सहायता इत्यादि। निस्सन्देह यह सभी कार्य सत्कार्य हैं; परन्तु जो कुछ भी हो सके करो; चाहे जितनी सुखदायक सेवा का प्रदर्शन हो, मुख्य मूल्य तो उस भावना का होता है जो कि सेवा-कार्य की प्रेरक होती है।

जिस व्यक्ति की सेवा की है उसे अपना भाई या बहिन समझो चूंकि वे भी तो भारत माता के बच्चे हैं, जो तुम्हारी भी माता है। तुम्हारे भाई-बहिन का शरीर भी तो उन्हीं की तरह तुमसे पृथक् और भिन्न है, है न यही बात? परन्तु, फिर भी, तुम्हें उनसे विशेष लगाव रहता है, क्यों? यह तो प्रेम का परिणाम है। इन अन्य लोगों से भी ऐसा ही प्रेम करो। तुम मुझे प्रेम करते हो, पूजते हो, क्या ऐसा नहीं है? अच्छा, सभी में मुझे ही देखो, क्योंकि मैं उनमें हूं, सभी में हूं। जैसे विद्युत धारा हर बल्ब को, चाहे वह कम या अधिक प्रकाश देने की सामर्थ्य वाला हो, प्रकाशित कर देती है; तुम्हारा भगवान् भी हर जीवित प्राणी में है। अतः इस प्रकार मेरी पूजा करके कृपा प्राप्त करो क्योंकि मैं ही उनकी और उनमें गतिशीलता का कारण हूं।

तुम चाहे स्वयंसेवक का परिधान और बिल्ला धारण किये हुये हो अथवा नहीं, वह भी चाहे बीमारों के परिवेश में और कष्ट का बिल्ला लगाये हो अथवा न हो। उसके समीप इसी प्रकार बैठो जैसे तुम अपने बन्धु के समीप बैठते। रोगी का हाथ पकड़कर उसके नेत्रों में करुणापूर्वक देखो, उसकी अंजली प्रसन्नता से भर दो, पूछो कि तुम उसकी क्या सेवा कर सकते

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हो। उसकी प्रसन्न आंखों से कृतज्ञता के आंसू ढलकने दो। इसी पुरस्कार से तुम्हारा भी पोषण होगा। यदि धन्यवाद कहने का कोई भाव उसके मुख-मण्डल पर न भी हो, अरुचि और उदासीनतापूर्वक भी यदि तुमसे व्यवहार किया जावे, तब भी अपना कर्त्तव्य समझ कर अपना व्यवहार अच्छा, सहानुभूति पूर्ण ही रखो क्योंकि देना और क्षमा करना तो तुम्हारा स्वभाव ही है।

यदि तुम्हारे पास गणपति की चाँदी की मूर्ति हो और तुम उसके बदले में कृष्ण की मूर्ति चाहो तो यह मूर्खता होगी कि उस मूर्ति को किसी कपड़े से ढक कर भगवान् से प्रार्थना करना कि वह कृष्ण की मूर्ति में बदल जावे। इसके लिये तुम्हें उसके टुकड़े करके, चाँदी को पिघला कर दूसरे साँचे, कृष्ण के सांचे, में ढालना पड़ेगा। इसी प्रकार यदि तुम स्वयं को माधव में बदलना चाहते हो, तो तुम्हें अपने मन को ज्ञानाग्नि में पिघला कर ढालना पड़ेगा। मन को पिघलाने के पूर्व टुकड़े-टुकड़े करना पड़ेगा यह कार्य सेवा, संकीर्तन, जप, ध्यान जिसमें त्याग की तीखी धारें हों, के द्वारा करना होगा।

मानव जीवन इस समय आगे बढ़ता चला जा रहा है; मार्ग में कीचड़ गन्दगी को रौंदता हुआ, झुका हुआ, टूटा हुआ, रुग्ण, संकटग्रस्त और निराशा से मग्न हृदय है। इन जीवनियों का उद्धार करना और उन्हें उच्च मानव उत्तराधिकार धारण कर सकने के योग्य बनाने के लिये ही मैं यहाँ आया हूँ। तुम्हें सेवा के लिये उपयुक्त भावापन्न बनाने के लिये ही मैं इतना उत्साह प्रदर्शित कर रहा हूं; क्योंकि प्रेम ही तो सेवा के रूप में प्रकट होता है। सेवा द्वारा प्रेम बढ़ता है; प्रेम सेवा के गर्भ से ही उत्पन्न होता है और भगवान् ही प्रेम है। अवतार तो बच्चों में बच्चा, लड़कों में लड़का, मनुष्यों में मनुष्य, स्त्रियों में स्त्री है जिससे अवतार के संदेश का प्रत्येक हृदय तक पहुंच कर उत्साह पूर्वक स्वागत होवे कि आनन्द प्राप्त हुआ हो। अवतार की दयालुता ही अवतार के सभी कार्यों को प्रेरित करती है।

पक्षी, पशु और पादप कोई भी अपनी प्रकृति से विचलित नहीं हुआ है;

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वे इसे अब भी उचित मानकर चल रहे हैं। केवल मनुष्य ने ही इसे विकृत कर डाला है जबकि उसका दावा इसके सुधार का था। इसलिये अवतार भी मनुष्यों के बीच मनुष्य रूप में आया है और उनके मित्र, शुभचिन्तक, संबंधी पथ-प्रदर्शक, शिक्षक, सहयोगी और उद्धारक बनकर घूम रहा है। वह धर्म की पुनर्स्थापना करने आया है। इसीलिये जब मनुष्य धर्माचरण करता है, वह प्रसन्न और संतुष्ट होता है। ऐसा आचरण करो जिससे मानव के रूप में तुम्हारा आचरण कलंकित न समझा जावे, भ्रष्ट न समझा जावे। वक्षस्थल ठोंक कर कहो "मैं मानव हूं, दयालु हूं, मैं उज्ज्वल मानवता से संपृक्त हूं"। भगवान् न तुम्हें समीप खींचता है और न दूर हटाता है तुम्हीं भगवान् के समीप या उससे दूर जाते हो। भगवान् की कोई रुचि या अरुचि इस सम्बन्ध में नहीं होती है। अपनी प्रकृति की सर्वोत्तम प्रेरणा के अनुसार जीवन व्यतीत करो, निश्चय ही तुम भगवान् के समीप होगे।

सूर्य, चन्द्र, बादल, समुद्र से शिक्षा ग्रहण करो। ये सब अपना कर्त्तव्य पालन करने को प्रमुखता देते हैं और इसमें उन्हें कोई शिकायत भी किसी से नहीं होती। वृक्ष अपने फल और छाया बिना किसी भेद-भाव के सभी को प्रदान करते हैं; उनको भी जो वृक्ष पर पत्थर फेंकते हैं अथवा कुल्हाड़ी द्वारा शाखें काटते हैं। पर्वत, शीत, घाम, वर्षा, तूफान बिना किसी विरोध या कराहट के सहते रहते हैं और युगों से ध्यान में मग्न हैं। पक्षी भी अनेक वर्षों के लिये भोजन या घोंसला बनाकर संचित कर नहीं रखते हैं। वे न तो अपने बच्चों को अधिक प्यार करते हैं और न फिर उन्हें उनके लिये कभी पश्चात्ताप ही होता है। वे उतना ही करते हैं जितना उनके जीवन के लिये परमावश्यक होता है। प्रकृति तुम्हारा विद्यालय है, प्रयोगशाला है, मुक्ति का द्वार है और भगवान् की विविधता पूर्ण महिमामय भव्य झाँकी है। जो पाठ प्रकृति पढ़ावे उन्हें उत्साह से पढ़ लो। प्रकृति में की प्रत्येक वस्तु तुम्हारे समान ही ब्रह्म है। इसलिये हर कार्य दिव्य बनाकर करो। पूजा हो, या गृह-निर्माण, अपने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जीवन का प्रत्येक कार्य भगवान् की सुदृढ़ नीव पर करो कि यह जो कुछ है, हो रहा है प्रत्येक वस्तु, क्रिया आदि, सब ब्रह्म ही है।

साधु, संत, संन्यासी, मठाधीश और मण्डलेश्वर आजकल बड़े ठाठ-वाट और वैभव के वातावरण में, जनता में प्रचार करते हैं कि, "वेद अहंकार को शून्य कर डालने का आग्रह करते हैं, कुरान भगवान् के प्रति समर्पण का आग्रह करती है और बाइबिल विनम्रता और उदारता पर विशेष बल देती है", परन्तु वे स्वयं सदा धन, शक्ति, नाम और यश की कामना में ही मग्न रहते हैं। वे नाशवान पदार्थों, क्षण-स्थायी यश और सस्ती लोकप्रियता को पाने की चेष्टा करते रहते हैं। उन्हें केवल यह उपदेश करना है, "जब तुम यह अनुभव करो कि तुम जीव हो, तो भगवान् से पृथक् हो; जब तुम स्वयं को देव समझो तो भगवान् से युक्त हो; रस्सी को साँप समझने से ही शरीर में कंप आ जाता है, जब रस्सी को रस्सी समझा जाता है तो निर्भयता रहती है और तुम उस टुकड़े का उपभोग, क्रीड़ा, कुछ भी, कर सकते हो। इसमें न तो साँप था और न इस में से चला गया; रस्सी भी न कहीं से आई और न गयी। प्रकाश हुआ नहीं, कि अन्धकार छूमन्तर हुआ। अज्ञान का नाश हुआ, ज्ञान का आलोक विखरा—सब कुछ क्षण मात्र में हो गया।

जो (भगवान्) ज्योति स्वरूप है उसका आह्वान करो, परिणाम स्वरूप अज्ञान, भय तथा अन्य ऐसे ही दुर्बल भाव अदृश्य हो जावेंगे। सबसे बड़े, विख्यात और धर्मराज, पति ने जब द्रौपदी को जुए में हार दिया, तो उसकी दासी अवस्था का नीच उद्देश्यों की पूर्ति के लिये पाण्डवों के सगे चचेरे भाई दुर्योधन और दुश्शासन के द्वारा वह बाल पकड़ कर बलात् राज दरबार में खींचकर लाई गयी। उनके राक्षसी हाथों ने उसे भरी सभा में नग्न कर देने के उद्देश्य से वस्त्र खींचे। उसके पाँचों पति इस कुकृत्य के मूक-द्रष्टा बने शान्त बैठे रहे। अपनी इस मर्मान्तक वेदना में द्रौपदी ने उनमें से किसी को भी अपने उद्धार के लिये नहीं बुलाया यद्यपि उनमें से प्रत्येक उन दुष्टों की सम्पूर्ण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

टोली से बढ़कर शूरवीर और बलवान था। जो दिव्य अस्त्र अर्जुन ने देवताओं से प्राप्त किये थे उनपर भी उसकी आस्था न थी। उसे भीम की सशक्त गदा का भी भरोसा न था, जो कि सर्वश्रेष्ठ कवचधारी योद्धा को भी एक ही प्रहार से चूर्ण कर सकती थी। उसने भगवान् पर भरोसा किया और मानव पर नहीं। वह जानती थी कि उसके पांचों पति अपनी प्रख्यात शूरता के साथ थे तो मानव ही। स्त्रियाँ तो मुखर होती ही हैं, जब संकट होवे तो फिर क्या कहना, उसने कृष्ण को उनके शृंखलाबद्ध विशेषणों से पुकारा जैसे द्वारिका वासी, गोकुल वासी, गोपीवल्लभ, आपद्बान्धव! जब अंत में कृष्ण ने अपना दर्शन दिया तो उन्हें कहना पड़ा कि कुछ देर हो गयी सो भी इसलिये कि द्रौपदी ने भगवान् को अन्य-अन्य स्थानों से तो बुलाया परन्तु अपने हृदय से, जहाँ कृष्ण का निरंतर वास रहता था, नहीं बुलाया था। उसने द्वारिका वासी कहा इसलिये वे पहले द्वारिका गये और फिर वहाँ से लौटकर कौरव-सभा में आने में भरसक शीघ्रता करने पर भी कुछ विलम्ब तो हुआ ही। ऐसा मत सोचो कि भगवान् काशी या रामेश्वरम् या पुट्टपर्ती में ही रहता है। समझ लो कि वह तो तुम्हारे हृदय में ही रहता है; उसे वहीं से आह्वान करलो, तत्काल दर्शन मिलेगा। मैं तुम्हारे हृदय में ही हूं, तो तुम्हारी चालाकियों से वह भगवान्, जो तुममें है, भ्रमित नहीं होगा। तुम सत्य-स्वरूप हो इसीलिये मैं तुम्हें 'भक्त गणो या शिष्यो' कहकर कभी सम्बोधित नहीं करता। ऐसा करने से तो तुम्हें वह पद प्राप्त हो जाता है जो तुम नहीं हो। मैं तो तुम्हें 'आत्म-स्वरूपो' कहता हूं। यही तथ्य के अनुसार सत्य कथन भी है। कोई भी प्रयोग इसे असत्य नहीं सिद्ध कर सकता। तुमको भी इससे अवगत होना चाहिये। तुम ऐरे-गैरे, नत्थू-खैरे नहीं हो। तुम अजर, अमर, सदैव शुद्ध आत्मा हो। जब करुण्यानंद ने उनका आशीर्वाद मांगा तो गांधी ने कहा था, "मेरे आशीर्वाद से तुम्हें कोई लाभ न होगा, सत्य का आशीर्वाद प्राप्त करो वही तुम्हारा मूलाधार है। आवश्यकता पड़ने पर वही एक तुम्हारा साथ देगा"। तुम सत्य स्वरूप हो, अपने स्वरूप के अनुसार सत्य का वरण करो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रशान्ति विद्वान महासभा वेद उपनिषदों की पौष्टिक शिक्षाओं की व्याख्या करके समझाती है; सुनते तो बहुत लोग हैं; परन्तु विरले ही उनपर ध्यान देते और आचरण करते हैं। कुछ लोग मेरे पास आते हैं और 'उपदेश' या 'मंत्र' की मांग करते हैं जिसे वे जपा करें। वे आशा करते हैं कि मंत्र के स्पन्दनों के फलस्वरूप उनके बंधन मुक्त हो जावेंगे। वे मुझे बतलाते हैं कि उन्होंने बीसों बार गीता पढ़ी है उसकी व्याख्याओं का अध्ययन किया है, वे पूरे ७०० श्लोकों को आदि से अन्त तक और अन्त से आदि तक सुना सकते हैं, और उनकी व्याख्यायें अद्वैत, द्वैत और विशिष्टाद्वैत तीनों दर्शनों के अनुसार कर सकते हैं। मैं उनसे कहता हूं "यदि तुम्हें भगवान् के शब्दों को पढ़कर, रटकर, समझकर और वर्षों तक श्रद्धा करने के बाद भी, विश्वास नहीं आया है तो तुम्हें यह कैसे विश्वास है मेरे उपदेश या मंत्र देने से तुम्हारा उद्धार हो ही जावेगा ? मेरा तो कोई स्वदेश, देश या उपदेश नहीं है।"

मुक्ति का रहस्य मंत्र में, या उसके माला पर जमने में नहीं है। यह तो उस उपदेश के आचरण में उतारने, आगे जीवन में उसी पर चलने और इसी प्रकार लक्ष्य प्राप्ति तक तीर्थ यात्रा करते जाने में है। सबसे उत्तम गुरु तो तुम्हारे अन्दर स्थित दैवत्व है, उसकी वाणी सुनने को लालायित होओ, उसी का उपदेश ग्रहण करो। यदि तुम सांसारिक गुरुओं की खोज करोगे तो तुम्हें जगह-जगह भटकना पड़ेगा; जैसे कि ढोल के अन्दर बंद चूहा दाईं ओर थाप पड़ने पर बाईं ओर और बाईं ओर थाप पड़ने पर दाईं ओर भागा-भागा फिरता है।

भगवान् और उनके प्रबल प्रेम के प्रति सदा सावधान रहो, चाहे जो कुछ तुम करो या कहो। यही सर्वोत्तम परामर्श है जो मैं सेवादल के सदस्यों को देना चाहता हूं। इस प्राचीन देश का युवावर्ग अन्य देशों के फैशन और आदर्शों का अन्धानुकरण करता है। जबकि अन्य देशों का परिधान, वार्ता, वर्ताव, आचरण और मनोभावों में विदेशीपन विचित्रता और भोंडेपन की गंध आती है; उनकी संस्कृति छिछली है, वे सफल जीवन की कला में भी अभी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नौसिखिये हैं। भारत की संस्कृति की तुलना में उनका स्थान बहुत पीछे पड़ जाता है। जो लोग भारतीय संस्कृति के मूल्य को जानते हैं उन्हें इस भारतीय संस्कृति के अपनाने पर शोक और दुख होता है। एक ओर तो यह भ्रमित भारतीय अपने गौरवशाली पूर्वजों का गुणगान करते हैं और साथ ही माता-पिता की अवमानना भी करते हैं। माता-पिता के प्रति प्रेम रखने से ही देश और संस्कृति के प्रति प्रेम उत्पन्न होता है। जो प्रेम-भाव माता-पिता से रखते हैं, उनकी भाषा, धर्म, रहन-सहन से वही प्रेम संयुक्त होकर परिवार, जाति, गाँव, धर्म, भाषा, देश की मिट्टी से जुड़ जाता है; हम देश को प्रेम करने लगते हैं। क्योंकि देश हमारा पोषण करता है।

१६ से ३० वर्ष की आयु का भाग एक कठिन अवस्था होती है जबकि मानव की उपलब्धियाँ सर्वोत्तम होती हैं और वह इन्हें प्राप्त करने में कठोरतम परिश्रम भी करता है। एक बार यह अवधि योंही बीत जावे तो इसे पुनः नहीं प्राप्त किया जा सकेगा।

विचलित मार्ग को अपनाने की अपेक्षा अपने जीवन भर भगवान् और उनके भक्तों के मार्ग का अनुसरण करो। यह शरीर तो मिट्टी के एक लोंदे के समान है जिसे हम जन्म से मृत्यु पर्यन्त लादे-लादे फिर रहे हैं। हम जन्म के पूर्व आत्मा रूप थे और मृत्यु के बाद भी इस पृथ्वी पर के पड़ाव के बाद पुनः आत्म रूप में होंगे। शरीर को उसके सभी सम्बन्धित उपकरण बुद्धि, कल्पना, चातुर्य और ज्ञान के साथ उसी उद्देश्य की पूर्ति में लगाओ जिनका निर्देश मैं कर चुका हूं अर्थात् भगवान् की कृपा अर्जित कर लो।

अपने प्रयत्नों के होते हुए भी तुममें घृणा, क्रोध, पशुता की दुष्ट प्रवृत्तियां जग जाती हैं तो तुम यही निष्कर्ष निकालो कि यह सब दूषित भोजन, कुसंगति, अश्लील अध्ययन अथवा घृणित क्षुद्र मनोरंजनों में पड़ने का परिणाम है। इनसे दूर रहो और भगवान् से प्रार्थना करो, वही तुम्हारा संरक्षक और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अभिभावक है, कि वह तुम्हें पतन में गिरने से बचावे। आत्म-हत्या का विचार, मैं तुम्हें बता दूं, अत्यन्त घृणित प्रकार की भीरुता से उत्पन्न होता है। उसे कभी अपने ऊपर हावी न होने दो; साहसी बनो, इतने साहसी कि सभी प्रकार की विपत्तियाँ, जो भी तुम पर पड़ जायें, हंसते-हंसते झेल डालो। जब भगवान् तुम्हारे हृदय में आसीन है तो तुम्हारा विनाश कौन कर सकता है ?

जब भी तुम क्रोध, घृणा या अशान्ति से क्षुब्ध होओ तो ठंडा पानी पीलो, शान्त होकर लेट जाओ। एक दो भजन गाओ। अथवा अकेले ही लम्बी दूरी तक टहलने निकल जाओ; तेजी से चलो जिससे कष्टप्रद विचार भागकर मस्तिष्क के किसी शान्त एकान्त कोने में चले जावें। इससे रक्त संचार तीव्रता से होता है और विचारों की प्रखरता शिथिल हो जाती है। तुम्हें इसलिये भी चिन्ता हो जाती है कि किसी को तुमने कुछ वचन दिया है। परन्तु उससे मुकरना चाहते हो। अब संकोच करने की कोई आवश्यकता नहीं। जब तुमने प्रतिज्ञा की है कि तुम धूम्रपान नहीं करोगे अथवा सिनेमा नहीं देखोगे तो तुम्हारी प्रतिज्ञा स्पष्ट, दृढ़ और पूरी होनी चाहिये। मुझे तुम्हारी प्रतिज्ञा मात्र से कोई लाभ नहीं होता और तुम उसे भंग भी करते हो तो मेरी कोई हानि नहीं। तुम्हें आत्म-विश्वास का, शक्ति का, नैतिक-चरित्र की दृढ़ता का, आनन्द का लाभ होता है। हाँ, तुम्हारा आनन्द ही मेरा भोजन है। इससे मुझे भी लाभ होता है।

पर्वत शिखरों पर जमी हुयी बर्फ दिन में सूर्य के प्रभाव से मुलायम हो जाती है और रात्रि में पुनः कठोर हो जाती है; क्योंकि तब सूर्य की किरणें उस पर नहीं पड़ती हैं। इसी प्रकार तुम्हारे हृदय से मैं कठोर हो जाता हूँ; और तुम्हारे हृदय की मृदुता मुझे भी मृदु बना देती है। इसे समझ लो, तुममें से प्रत्येक एक ही मां के प्रेम से परिचित है। परन्तु मेरा प्रेम, मेरा स्नेह तुममें

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

से प्रत्येक के लिये हज़ारों माताओं के प्रेम के समान है। मुझे अपना प्रेम न देकर, अपने को उस प्रेम से वंचित मत करो।

किसी ने समर्पण की आवश्यकता की चर्चा की थी। कौन अर्पित करता है ? कौन प्राप्त करता है ? तुम तो स्वयं भगवान् हो, फिर तुम किसे किसका अर्पण कर रहे हो ? फिर भी तुम अर्पण, आत्मार्पितम् शब्द का प्रयोग करते हो। यह तो युगों-युगों की समस्या है। एक शब्द का प्रयोग करके उसका हल रद्द कर दिया जाता है। जब तुम्हें ज्ञात हो जाय कि तुम भगवान् हो फिर अर्पण और आत्मर्पितम् नहीं रह जाता है। ज्ञान सभी कुछ पोंछकर स्वच्छ कर देता है। केवल भगवान् की सत्ता रह जाती है।

ऐसे शब्दों के फेर में मत पड़ो जो समस्याओं को सुलझाने वाले प्रतीत होवें पर सुलझा न सकें। ज्ञान, भक्ति, कर्म—यह भी ऐसे शब्द हैं जो भाषण और तर्क-वितर्क की क्रीड़ा में बड़े उपयोगी होते हैं। एक बार धन और ज्ञान में दीर्घकाल तक युद्ध होता रहा कि दोनों में अधिक प्रशंसनीय कौन है; इसका निर्णय करना था। धन ने कहा कि यदि तुम्हें कहीं की यात्रा करनी है, घर से पुट्टपर्ती तक (मान लो) जाना है तो धन की आवश्यकता होती है। सिनेमा देखने, भोजन के लिये भी धन आवश्यक होता है। एक सिक्के के बिना दुनियां का काम एक क्षण भी नहीं चलता है। ज्ञान ने कहा कि बिना ज्ञान के १० रुपये के नोट और एक रुपये के नोट में अन्तर ही नहीं हो सकेगा। विनाशकारी अथवा कल्याणकारी कार्य को प्रारंभ करने से पूर्व निर्णय लेना आवश्यक होता है तो वह भी ज्ञान के बिना नहीं लिया जा सकता कि धन किसी काम में खर्च करें या न करें। उन दो बिल्लियों की तरह, जिन्होंने अपना न्याय बन्दर से कराया था, वे एक गुरु के पास गये और उसके समक्ष अपनी समस्या रखी। गुरु ने कहा दोनों ही समान रूप से अच्छे हो, प्रतिबन्ध यही है कि प्रत्येक के प्रयोग का उद्देश्य शुभ हो। प्रयोग ही से तो निर्णय लिया जा सकता है कि कौन बुरा है कौन अच्छा है। मनुष्य होना ही

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक महान संपत्ति है इसे सर्वोत्तम लाभ के लिये प्रयोग करो। ज्ञान हो, केवल इतना ही नहीं कि तुम मनुष्य हो, यह भी जानो कि तुम पशु नहीं हो, असभ्य वर्बर ग्रौर जंगली नहीं हो; तभी ज्ञान का काम पूरा होता है ग्रन्यथा ग्रधूरा रहता है।

सेवादल के नियम, उपनियम ग्रौर निषेध के विषय में कुछ कहना है। तुम्हें डिस्ट्रिक्ट प्रेसीडेन्ट और स्टेट प्रेसीडेन्ट के निर्देशों का पूर्णतया पालन करना है जोकि संयोजकों को मनोनीत करते हैं। यदि तुम्हें उनके शब्दों के ग्रौचित्य पर संदेह है तो स्मरण रहे कि वे भगवान् की कृपा और ग्राशीर्वाद प्राप्त करने के वाद इस स्थिति में ग्रा पाये हैं, क्योंकि उनको तो भगवान् ने ही मनोनीत किया है। जो ग्राज्ञा मिले उसके संवंध में जो भी निवेदन हो वह नम्रता, शिष्टता और मृदुता के साथ होवे। कठोर ग्रनुशासन का पालन करना ग्रावश्यक है, कोई छूट, रियायत या सुविधा सहन नहीं की जावेगी। एक शब्द, एक मार्ग—यही तुम्हारा ग्रादर्श (मोटो) होना चाहिये।

कुछ संघों ग्रौर समितियों में एक व्यक्ति के अथवा एक दल के लोभ से दलबंदी पैदा हो गयी है ग्रौर ग्राध्यात्मिक वातावरण दूषित हो गया है। राजनीति का संक्रामक विष इन संगठनों में भी घुस ग्राया है। यह इसलिये कि कुछ व्यक्तियों ने ग्रपने निज के बड़प्पन के प्रदर्शन के लिये समितियों को प्रारंभ किया है। ये शीघ्र ही मिट जावेंगी, चिन्ता मत करो। बड़े लोग नाम कमाने के लिये, यशस्वी होने के लिये कुछ भी करते रहें तुम ग्रपना सेवा-कार्य जारी रखो। सेवा तो तुम्हें करनी ही है, क्योंकि तुम्हारी अंत:प्रेरणा तुम्हें ऐसा करने को बाध्य करती है, क्योंकि इससे तुम्हें ग्रानन्द प्राप्त होता है। जब तुम्हें पता चले कि एक रोगी किसी विशेष दवा से ग्रच्छा हो सकता है जिसे वह खरीदने में ग्रसमर्थ है तो यदि डाक्टर उस दवा को ग्रावश्यक बत-लाये कि उसका जीवन उसी दवा पर निर्भर करता है तो संकोच मत करो उधार दे दो या उधार लेकर भी उसके प्राण बचाग्रो। समिति के किसी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सदस्य से मांग लो, या किसी अन्य से ले लो; क्योंकि जीवन का मूल्य अधिक है। जब सेवा की अत्यंत आवश्यकता हो, उस समय की सेवा अत्यंत लाभकारी भी होती है। दुग्ध-चूर्ण प्राप्त करने की चेष्टा करो, और निर्धन रोगियों को, जो अस्पताल में उपेक्षित पड़े हैं, दूध और फल पहुंचाओ। भगवान् दयालुता के पुष्पों से पूजा जाना पसंद करता है।

शुष्क रेतीले हृदयों में प्रेम के बीज बिखेर दो तो वह उजाड़ भूमि, प्रेम के अंकुरों से हरी-भरी हो जावेगी, वहां प्रसन्नता और प्रेम के सुरभित पुष्पों से वातावरण सुगंधित हो उठेगा। घाटियों में प्रेम की नदियां कलकल ध्वनि करती हुयी बहेंगी, हर बच्चा और पक्षी अपने नीड़ में प्रेम के गीत गायेगा। अभी तो केवल कुछ ग्रामों और नगरों में ही सेवादल हैं। उन्हें तो सभी ग्रामों, सभी नगरों में होना है; जिससे मानव की मानव द्वारा सेवा से मानव भगवान् की खोज पा सके जोकि उसकी वास्तविकता है, चरम तत्व है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५३ खोया पाया

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् ५-१०-१९७०)

दो पंडितों ने, जिन्होंने अभी भाषण दिये हैं, भक्ति मार्ग की उन मधुर, प्रेरणादायक शब्दों में, गार्गी, मैत्रेयी, जनक, नचिकेता के अनुभवों के उद्धरण देते हुये विस्तृत व्याख्या की है। उन्होंने उपनिषदों की विचारधारा का अमृत वर्षाया है, भगवान् के दिव्य सुन्दर रूप और नाम की महिमा का आनन्द-दायक आकर्षण भी समझाया है। परन्तु आजकल तो यह केवल कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रह गया है, विद्वान और धार्मिक व्यक्ति भी अपने आचरण से अपने कथन को झुठला रहे हैं। भाषण में भले ही वह कुछ कहा करें कि सत्य यह है परन्तु आचरण में वे भी गिर जाते हैं। भगवान् में विश्वास शिथिल होता जा रहा है इसका मुख्य कारण जितना धार्मिकों का पाखंड है उतना अधार्मिकों का धर्म द्रोह नहीं है। अब हमारे सामने "धर्म की असफलता" का संकट आ गया हैं। इसलिये तुम्हारे जैसे आस्तिकों को, जो धर्म और भगवान् की सत्ता में विश्वास करते हैं साहसपूर्वक अपनी निष्ठा से यह प्रदर्शित करता है कि भगवान् में विश्वास सच्चा और लाभप्रद भी हो सकता है। प्रशान्ति विद्वान महासभा को धर्म की जड़ों को सींचने और मुरझाते हुये उत्साह को पुनर्जीवित करने का भार सौंपा गया है कि वे अपने उदाहरण से अधिक, और थोड़ा बहुत उपदेश से भी, इस उद्देश्य की पूर्ति करे।

भगवद्गीता इस भ्रम का वर्णन करती है कि मानव का मन उसे भ्रमित करने की चेष्टा में लगा रहता है और कहती है कि यह मन लगभग अजेय है। पंडित सोमशेखर शास्त्री ने स्वीकार किया है कि वेद की कठिन भाषा पर इतना अधिकार पा लेने के बाद भी मन को जीतने का कार्य उन्हें असंभव

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ही लगा इसीलिये उन्होंने तुमको भक्ति-मार्ग का आश्रय ग्रहण करने का परामर्श दिया है। उन्होंने कहा कि मन की चंचलता को वशीभूत करने का सबसे प्रभावकारी मार्ग यही है कि इसे भगवान् के चरण कमलों से जकड़ कर बांध दिया जावे। उन्होंने कहा कि तब इसकी सब बुराइयां आतंक, स्वेच्छाचारिता उद्वेग और सनक रुक जावेंगे।

तब इस जंगली हाथी को भगवान् के चरणों से बांधने की क्या विधि है? सभी धर्मशास्त्रों की मोटी-मोटी जिल्दों का मंथन करके दो शब्दों में उत्तर दिया गया है, 'आत्मानं विद्धि' अपने को जानो। आज का हर छात्र जानता है कि सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र और अंतरिक्ष की सीमा के क्षेत्र क्या हैं; परन्तु विश्वकोष का प्रणेता विद्वान भी इस मौलिक प्रश्न का उत्तर नहीं जानता है "मैं कौन हूं?" 'मैं' तो अत्यधिक प्रयोग में आने वाला शब्द है। एक क्षण में वार्तालाप में यह अनेकों बार प्रयोग किया जाता है। मैंने कहा, मैंने देखा, मैं गया, मैंने सुना, यह मैं रखता हूं, मैं राजा हूं, मैं किसान हूं, मैं बच्चा हूं, मैं पंडित हूं, मैं लम्बा हूं, मैं दुबला हूं—परन्तु यह 'मैं' है कौन जिसके इतने विशेषण या अधिकार है? उपनिषद कहते हैं कि यह 'मैं' कोई विशिष्ट व्यक्तित्व वाला नहीं है यह तो एक भ्रम या माया है। यह उस शरीर तक जिसमें कि यह निवास करता है, सीमित नहीं है। यह तो सभी श्रेणियों में सबसे अधिक है, यह तो शाश्वत निरपेक्ष तत्व "परम-आत्मा" है। यह सर्वव्यापक, विश्व जनीन चैतन्य सच्चिदानंद हैं।

इस सत्य का विश्वसनीय अमिट अनुभव कैसे प्राप्त हो? यही तो मुक्ति की कुंजी है, शाश्वत आनन्द का साधन है और शोक को जीतने का उपाय है। कठिनाई यह है कि पूर्व जन्मों के प्रभाव से मनुष्य अपने में कुछ अधूरापन लिये हुये जन्म लेता है, उसे उत्तराधिकार में भी कुछ ग्रंथियाँ, मोड़, ऐठन और निषेध प्राप्त होते हैं। इस असुविधा पर विश्वास या धर्म और उस पर सतत् आचरण से विजय पायी जा सकती है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वह इस भ्रम से बोझिल रहता है कि सत्य झूठ है और अस्थाई शाश्वत। दीर्घकालीन संसर्ग से उसे यही प्रशिक्षण प्राप्त हुआ है। इसलिये उसे पुनः शिक्षा देकर सही दृष्टि प्रदान करना है। सबसे सत्य तथ्य, जोकि अद्यावधि अपरिवर्तित है, यह 'मैं' ही स्वयं है। शेष सब कुछ अवास्तविक है, परन्तु लगता वास्तविक है। तुम पूछ सकते हो कि यह 'मैं' कैसे सत्य हो सकता है ? मैं बढ़ता हूं, में एक दम स्वस्थ हूं, मैं बीमार पड़ता हूं, मैं वृद्ध होता हूं। परन्तु इस वृद्धि और क्षय के मध्य 'मैं' निरन्तर बना रहता है। सो चुकने के बाद तुम कहते हो "आज मैं खूब सोया" जब कि सुप्तावस्था में तुम्हें शरीर का इन्द्रियों का, मन तक का, (बाह्य जगत की तो बात ही क्या ?) कोई ज्ञान नहीं था।

तीन इच्छायें तो अनिवार्य रूप से प्रत्येक 'मैं' में होती हैं। मैं जीवित रहूं पहली है। जीवित रहने की इच्छा सर्वोपरि और मुख्य है। यही अमरत्त्व की आकांक्षा है। जानने की इच्छा दूसरी है। यह भी सदा अतृप्त पिपासा है और सर्वज्ञता की ओर संकेत करती है जिसका 'मैं' उत्तराधिकारी है। आनन्द की इच्छा तीसरी है जो मनुष्य को इन्द्रियों के द्वारा बाह्य जगत में 'मजे' की खोज में लगाती है। यह साक्षी सिद्ध करती है कि 'मैं' के अन्तस्तल में एक आनन्द का स्रोत है जो अपना साथी और तृप्ति की खोज में है। जब हम कपड़े का गज, शहद का लीटर कहते हैं तो फुट या गज़ की माप पहले ही निश्चित कर ली जाती है। तब वस्तु की नाप या तौल पूर्व निर्धारित माप-तौल की इकाइयों के आधार पर निर्णय कर बतलायी जाती है, है न ? इसी प्रकार 'मैं' सत् (शाश्वत अस्तित्व) चित् (विश्वजनीन ज्ञान) और आनन्द (निरपेक्ष पूर्ण सुख) है। व्यक्तियों को उपयु`क्त विश्वजनीन 'मैं' की समीपता के मापदण्ड से प्रत्येक को पृथक्-पृथक् आंका जाता है।

धर्माचरण ही ज्ञान की माप है। बौद्धिक ज्ञान, विश्व-चेतना का परिणाम, न केवल उन्नति, उल्लास और उत्साह होता है बल्कि नैतिकता भी भावना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भी शीघ्रता से विकसित हो जाती है। ज्ञानी का चरित्र नैतिकता का सर्वोच्च ग्रादर्श होता है, क्योंकि ज्ञान का प्रकाश प्राप्त कर चुकने के पश्चात् वह घटिया प्रकार का ग्राचरण करने में ग्रसमर्थ हो जाता है और उसमें प्रेरणा ही उच्च सदाचार की उठती है। अपनी वृत्तियों ग्रौर मनोविक.ों को अपनी शुद्ध स्वच्छ इच्छा के ग्राधीन करके ग्रौर इच्छा को सदाशयता ग्रर्थात् भगवान् के ग्राधीन कर देने से व्यक्ति धर्म की साक्षात् मूर्ति हो जाता है। इसी से तो भारत अन्य राष्ट्रों का नैतिकता के मार्ग का पथदर्शक बना है। जीवन धारा यहाँ त्रिवेणी के रूप में वही है। भा-व (शुद्ध भाव) रा-ग (मधुर तान) ग्रौर त-न (लय) इस प्रकार भारत शब्द बड़ा गहन ग्रौर व्यापक गंभीर अर्थ है। इस देश में जन्म लेना बड़े सौभाग्य की बात है ग्रौर इस संस्कृति का उत्तराधिकारी होना तो ग्रौर बड़े सौभाग्य की बात है। इसके ग्रादर्शों के ग्रनुसार ग्रपनी सामर्थ्य भर विकास कर पाना वास्तव में बहुत बड़ा सौभाग्य ही है।

व्यास ग्रौर वाल्मीकि ने ग्रपने काव्य की सुनहरी किरमिच पर धर्म के शाश्वत मूल्यों को चित्रित किया है। व्यास ने पाण्डवों का चित्र, खदेड़े गये, उत्पीड़ित, निर्वासित, सताये गये, बुभुक्षित, ग्रपमानित व्यक्तियों का सा चित्रित किया है परन्तु चित्र का दूसरा पार्श्व उन्हें ग्रपराजित, धर्मारूढ़, कर्मयोगियों के रूप में दिखलाता है जो सदा धर्म में विश्वास रखते थे ग्रौर अंत में विजयी भी वही हुये क्योंकि उन्हें पुरस्कार स्वरूप भगवान् की कृपा प्राप्त हो गयी थी। वाल्मीकि ने भी राम को पूर्ण शान्तिपूर्वक जीवन के उतार-चढ़ाव ग्रौर चरम विकराल झंझावात के मध्य भी धर्म की प्रज्जवलित ज्योति को ग्रडिग रहते हुये ले जाते हुये चित्रित किया है। 'धर्मो रक्षति रक्षितः' जो धर्म का पालन करता है धर्म सदा उसकी रक्षा करता है। व्यास ने महाकाव्य महाभारत ग्रौर वाल्मीकि की रामायण गान की यही 'टेक' है। निष्ठापूर्वक इसका ग्रभ्यास करो, इससे तुम्हारे रक्षण, पोषण ग्रौर शक्ति में वृद्धि होगी।

भगवद्गीता में कृष्ण ने ग्रर्जुन से कहा 'मामेकं शरणंव्रज' 'मेरी शरण में

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आजा, हर वस्तु को मेरे ऊपर छोड़ दे।' यह 'मेरी' भी 'मैं' है और कुछ नहीं है; वही तो भगवान् है जो सबके अन्दर है; यह 'मैं' ही प्रत्येक से कहलवाता है कि मैं यह करूँगा । यह मेरा है इत्यादि । यही 'मैं' एक कोषीय जीव अमीवा से लेकर अवतार तक को सक्रिय किये हुये है । यही शेर को अनुभव कराता है, "मैं भूखा हूँ, मुझे शिकार खोजना चाहिये" यही चील्ह को ऊँचाई पर आकाश में उड़ने को प्रेरित करता है जिससे कि नीचे कहीं पड़ा हुआ माँस का टुकड़ा दिखाई दे जावे । यही वट वृक्ष को विस्तृत भूखण्ड पर फैलने की प्रेरणा देता है जिससे इसकी पत्तियों पर सूर्य का अधिक प्रकाश पड़ सके। इसी से चमेली की लता वृक्ष के सहारे पौंड़ती है जिससे कि उसे भूमि पर न घिसटना पड़े, और वह वायु और धूप के पोषण को पा सके। वह 'मैं' कभी दुर्वल या बीमार नहीं पड़ सकता है; या सत् चित् या आनन्द से वंचित नहीं होता। यह सर्वत्र और शाश्वत है। कुछ निराश व्यक्ति क्रोध के आवेश में कबूल जाते है, "मैं आत्महत्या कर लूंगा और इस संकट से छुटकारा पा लूंगा। इसके वाद तो मुझे प्रसन्नता प्राप्त होगी ही ?" उसे विश्वास है कि इस मृत्यु के वाद भी 'मैं' जीवित रहेगा और प्रसन्नता प्राप्त करेगा । वह जानता है कि वह काल, देश और कारण से परे है। यह 'मैं' हर हृदय में स्पंदित होता है, हर व्यक्ति में प्रसन्नता अनुभव करता है और हर मस्तिष्क के द्वारा 'जानने' की क्रिया करता है। यह तो उसी विश्वात्मा की एक स्फुल्लिंग है जो कि परमात्मा है ।

पंडितों ने कहा है कि भक्तिमार्ग ही सबसे सरल है और इसे सभी अपना सकते हैं क्योंकि यह अर्पण का मार्ग है। फिर भी यह उतना सरल नहीं है कि जितना वे चित्रित करते हैं। क्योंकि व्यक्तिगत 'मैं' को उस विश्वजनीन 'मैं' में अर्पित करना कठिन कार्य है। इसके लिये स्फूर्ति और प्रसन्नता से कई वाधाओं को लाँघना पड़ता है। जव तुम पुट्टपर्ती आने की इच्छा करते हो तुम प्रसन्नता से सभी कठिनाइयों वाधाओं को पार कर जाते हो । परन्तु जब आकांक्षा ही नहीं होती है तो तुम्हें प्रत्येक कार्य ही महान कठिनाइयों से भरा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

दिखाई देने लगता है, कैसे गुन्टकल जंक्शन पर उतरेंगे, प्लेटफार्मों को कैसे पार कर पावेंगे। दूसरी गाड़ी में जगह मिलेगी भी या नहीं, तो धमविरम् कैसे पहुंचना होगा। बस अड्डे तक खुद ही सामान ढोकर पहुंचना तो बड़ा कठिन कार्य है फिर बस से पुट्टपर्ती पहुंचना है। यह सोचते-सोचते तुम यात्रा का विचार ही छोड़ देते हो कि यह तुम्हारे वश की बात नहीं है। पहले आकांक्षा को बलवती बनाओ, फिर सब कुछ सरल हो जावेगा।

जिन अंग्रेजों ने, बड़ों ने, उस आनन्द 'मैं' को जानने का, स्वाद चखा है उनके अनुभव से शिक्षा ग्रहण करो। 'मैं' तो असीम कृपा महासागर के वक्षस्थल पर उठने वाली एक तरंग है। अथवा, चूंकि तुम स्वयं को अथवा उस भगवान् को जानते हो जो तुम्हारे अन्दर है, उसकी अकेले ही खोज करो। जब तुम किसी दूसरे से प्रश्न करते हो, "मैं कौन हूं?" वह तभी उत्तर दे सकेगा यदि वह अपने को जानता है कि वह कौन है और तुम्हें भी जानता हो। कहने और व्याख्या करने में तो यह सरल लगता है 'सर्वब्रह्ममयम्' कि यह सब 'मैं' हूं परन्तु इसका साक्षात् अनुभव कर लेना कठिन है। तुम जानते हो कि तुम मरते हो, अन्य लोग भी मरते हैं और इसी से तुम्हें यह विश्वास करना कठिन लगता है कि 'मैं' नहीं मरता है। बर्त्तन मर सकता है परन्तु मिट्टी तो रहती ही है, यह चांदी का पानदान मर सकता है, परन्तु चांदी तो रहती ही है। शरीर मर सकता है परन्तु 'मैं' नहीं मरता। जीव मरणोपरान्त भी रहता है। वह तत्त्व, जिनसे शरीर का निर्माण हुआ है, पुनः अपने मूल रूप को प्राप्त होते जाते हैं।

भगवान् ने कहा है कि वे सभी प्राणियों के बीज रूप हैं, "बीजं माम् सर्व भूतानाम्।" एक वृक्ष को देखो, उसकी जड़ें, तना, शाखायें, टहनियाँ, अंकुर, पत्तियाँ, फूल, फल, सभी की आकृति, स्वाद, कड़ापन, गंध भिन्न हैं और वृक्ष के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार से उनकी उपयोगिता है और हमारे लिये भी उनकी उपयोगिता भिन्न है। परन्तु, विविधतापूर्ण यह सब अंग वृक्ष के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक ही बीज से अंकुरित होकर रक्षरण और पोषण पाते हैं। वही बीज वृक्ष के प्रत्येक अवयव में विद्यमान है। प्रत्येक फल में तो वही बीज उत्पन्न होता है। वही वृक्ष है वही फल है। प्रेम ही बीज है प्रेम ही वृक्ष है। सृष्टि रूपी वृक्ष आकाश या स्वर्ग में अपनी जड़ें जमाये हुये नीचे की ओर उल्टा लटका हुआ है। अन्यथा, पोषण न पाने से कभी का सूख गया होता। इसे अश्वत्थ कहा जाता है, अर्थात् 'घोड़े का वृक्ष' क्योंकि भारतीय विचारधारा में घोड़ा चंचलता, अनिश्चितता और उत्तेजना का प्रतीक हैं। वट वृक्ष, जोकि अश्वत्थ है, की पत्तियां वायु के हल्के से हल्के झोंके से सदैव प्रकम्पित रहती हैं। तुमने अश्वमेध यज्ञ का नाम अवश्य सुना होगा, पहले युगों में यह कृत्य बहुत किया जाता था। इस यज्ञ का आन्तरिक अर्थ यही है कि चंचल मन (घोड़े) का नाश। अर्जुन ने कृष्ण से प्रार्थना की थी कि मन की चंचलता को कैसे रोका जावे। कृष्ण ने 'अभ्यास' ही उपाय बताया। तुम बात करना, चलना, खाना, खिलाना, सभी क्रियायें शनैः शनैः लगातार अभ्यास करके ही तो सीखते हो, ऐसी बात है न ? मां बच्चे को खिलाती है, अनेकों गीत गाती है और अभिप्राय सहित स्पष्ट शब्दों का उच्चारण भी करती है, ध्यान भी बँटाती है; परन्तु दैनिक अभ्यास के स्वभाव से बच्चा भी स्वतः खाना प्रारम्भ कर देता है; उनके हाथ भोज्य पदार्थों को अपने मुंह तक पहुँचाने लगते हैं चाहे कितना ही सघन अंधकार क्यों न होवे। मन को भगवान् तक ले जाकर इसे वहीं कुछ काल के लिये छोड़ दो, यह क्रिया प्रतिदिन प्रातः सायं किया करो।

भगवान् इतना दयालु है कि यदि तुम एक पग उसकी ओर बढ़ो तो वह १० पग तुम्हारी ओर आगे बढ़ आता है। रावण के भाई विभीषण ने हनुमान से पूछा कि क्या राम उसकी प्रार्थना स्वीकार करेंगे और उसे अपनी शरण प्रदान करेंगे। उसने कहा, "मैं उनके सबसे घोर शत्रु रावण का अनुज हूँ। राक्षस परिवार का हूँ, राम ने राक्षसों का नाश करने की प्रतीज्ञा की है मैं आर्यों के वेद, शास्त्र और उनके धार्मिक कृत्यों से भी अपरिचित हूँ"। तब

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हनुमान ने उत्तर दिया, "अरे अज्ञानी ! क्या तुम समझते हो कि वे शास्त्रीय कर्मकाण्ड, कृत्यों, पारिवारक स्थिति या विद्वता से प्रभावित होते हैं ? यदि ऐसा होता तो वे मुझ 'वानर' को क्यों स्वीकार करते ?" वस इतने से ही मामला सुलझ गया। विभीषण को प्रभु-कृपा प्राप्त होने का आश्वासन मिल गया। जब बाद में वे राम के पास पहुंचे तो राम ने वयोवृद्ध और उच्च पदाधिकारी वानरों से जो उनके समीप ही बैठे थे पूछा, क्या वे विभीषण को अपनी शरण में स्वीकार कर लें ? वास्तव में उन्हें किसी की सहमति या परामर्श की कोई आवश्यकता न थी। वे दूसरों से कभी प्रभावित होते भी नहीं थे। फिर भी केवल उनका मान बढ़ाने के लिये, उनसे परामर्श किया और ऐसा दिखाया मानों उन्होंने कोई तब तक निश्चय न किया हो। जब सुग्रीव ने 'नहीं' कहा तो राम ने स्मरण दिलाया कि, तुम भी तो इसी प्रकार अपने बड़े भाई बाली को त्याग कर आये थे" जब लक्ष्मण ने कहा कि, "इन्हें तो पुनः लंका में फेंक दिया जाना चाहिये, इनके लिये सर्वोत्तम व्यवहार यहीं उचित है"। राम ने कहा, 'हाँ' मैं भी यही सोच रहा हूँ कि इन्हें रावण की मृत्यु के बाद लंका का राजा बना दूंगा जो भी शरण में आता है, राम तत्काल बिना किसी प्रतिबंध के वहीं उसे शरण देता है"। जब किसी ने सुझाया कि कम से कम विभीषण को अभी राजगद्दी का आश्वासन तो नहीं दिया जाना चाहिये था, क्योंकि संभव है कि रावण भी भगवान् की शरण में आजावे और अपने पूर्व कृत्यों के लिये क्षमा प्रार्थी होवे। राम ने उत्तर दिया, "तब तो मैं भरत के सामने दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करूँगा कि वह विभीषण को अयोध्या की राजगद्दी पर बैठा दें यह तो अपनी ही बपौती है, मैं और भरत दोनों अपना शेष जीवन प्रसन्नता से वन में बिता लेंगे"।

तुम्हें अपने स्वरूप का ज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिये। तभी तुम्हें शान्ति प्राप्त होगी। अभी तो एक ऐसे व्यक्ति हो जो अपना नाम, पता और जीवन का उद्देश्य ही भूल गया है। इसे अनुभव करो और आत्मा की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

गहराई में उतर जावो जिससे तुम्हें अपने स्वरूप का ज्ञान हो जावे। तभी तुम्हें सुरक्षा प्राप्त होगी और शान्ति मिलेगी। इसी उद्देश्य के लिये अपनी बुद्धि का विकास करो, अपनी चेतना को सत्संग, जप, ध्यान, नामस्मरण इत्यादि द्वारा स्वच्छ करलो। मैं यही परामर्श आपको देता हूँ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५४ अपने को पहचानो

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् ६-१०-१९७०)

तुम सब उन्नति करके, विकसित होकर, आज मानव जीवन पाकर धन्य हुये हो। परन्तु, प्राणियों की इस उच्च स्थिति की पात्रता तभी सिद्ध होगी जब तुम अपनी जल में अमीबा की स्थिति से विकास की तीर्थयात्रा में चलकर अन्तिम लक्ष्य भगवान् में लीन हो जाओ। अपने उस लक्ष्य में दृढ़ विश्वास और उसी ओर सतत प्रगति ही यह प्रदर्शित करते हैं कि व्यक्ति अपने उत्तर-दायित्त्व के प्रति कितना सजग और बढ़ा हुआ है। उस दैवत्व की गूंज प्रत्येक हृदय में सुनाई देती है, इससे व्यक्ति के हृदय में श्रद्धामिश्रित भय, सम्मान, प्रेम, स्नेह और बलिदान—सभी भक्ति के उपकरण, जागृत हो जाते हैं। यह पूजा के कार्यों में रूपान्तरित होने लगती है, भगवान् के यश का गायन तथा आराधना के अन्य कृत्य होने लगते हैं। जिससे भगवान् की महिमा का दिग्दर्शन होता है। इस प्रकार दिव्य विचारों से मस्तिष्क संपृक्त होने लगता है, वह दिव्यता के सांचे में यहाँ तक ढलता रहता है कि अन्ततोगत्वा आनन्द का अक्षय स्रोत प्रवाहित होने लगता है।

प्रार्थना तो धर्म की प्राणप्रद वायु है; क्योंकि यह मानव, माधव को समीप लाती है और हर निःश्वास में बीच की दूरी कम होती जाती है। ध्यान वह क्रिया है जिसमें कृष्ण की बांसुरी की दिव्य तान सुनाई दे जाती है यदि व्यक्ति के मानसिक कर्ण उसकी प्रतीक्षा में सावधान हों। योग आत्म विस्मरण के आनन्द में लीन होने का नाम। जब चेतना संगीत से भर जाती है तो इस प्रकार के शब्द उस अनिर्वचनीय दिव्यानंद को पूरी तौर से व्यक्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करने में असमर्थ होते हैं कि जो आनन्द लम्बे वनवास के पश्चात् "घर लौटने" से प्राप्त होता है।

आध्यात्मिक जागरण प्रदान करने वाले मंत्र की चन्द्रमौलि शास्त्री ने चर्चा की है। जो ध्वनि और स्पंदन इससे उत्पन्न होते हैं उनसे व्यक्ति के मनोविकार और उद्‌वेग प्रभावित होते हैं, स्वच्छ होते हैं, गतिशीलता आती है, उनमें रासायनिक क्रिया सी उत्पन्न हो जाती है, उथल-पुथल मचती है, उनके साथ जिस अज्ञेय सूक्ष्म प्रकार से क्रिया करती है उसका ज्ञान केवल साधक को ही हो पाता है। तुम 'आओ' शब्द का प्रयोग अनेक प्रकार से स्पष्ट रूप से कर सकते हो, और जिस को संबोधन करके उच्चारण करोगे उसपर विभिन्न प्रभाव पड़ेगा और उसकी प्रतिक्रियायें भी भिन्न-भिन्न होगीं। ध्वनियां कंठ, जिह्वा, वक्षस्थल, नाभि, हृदय और नीरव योगिक शक्ति से उत्पन्न होती हैं। परन्तु मंत्र जाप से अथवा उससे उत्पन्न स्पंदनों से अधिक सरल मार्ग भगवान् की महिमा का तालस्वर से, भाव सहित गान करने से, अर्थों को साक्षात्कार करते हुए, तज्जन्य मधुरता का आस्वादन करते हुये जो प्रभाव होता है वह सभी रोगों की रामबाण औषधि है। 'रसो वै सः' वह मधुरता का स्वरूप है। मंत्र की मिठास नवसिखियों की पहुंच से परे होती है। परन्तु संकीर्तन की मधुरता तो पहली बैठक में ही अपना प्रभाव डाल देती है।

आधुनिक सभ्यता का आधार तकनीकी उन्नति है, परन्तु एक और उच्च तकनीक होती है वह चेतना का ज्ञान और उस चेतना का ज्ञान द्वारा शक्ति के स्रोत में परिणत कर लेना। इसे विज्ञान से पृथक सुज्ञान करना चाहिये। पुनः इसके आगे प्रज्ञा होती है, वह चेतना के भी आगे मानव को उस एक, सर्वव्यापक, सर्वोपरि सत्ता, जिसे भगवान् कहते है तक पहुँचा देती है। यही अद्वैतवाद है; आत्मा की आध्यात्मिक मात्रा का अंतिम गन्तव्य है। वेदों को भगवान् की श्वांस कहा गया है; क्योंकि शब्द या ध्वनि ही श्वांस होती है। वेद अक्षर ब्रह्म है, अविनाशी है; वह उस स्पंदन का प्रतीक है जो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ब्रह्मांड में प्रसारित होता है और सदा के लिये उसे प्रभावित करता है। शब्द तो सदा ही सत्य और अपरिवर्तनशील होता है; अतः इसे 'अक्षर' कहा गया है और यह दृश्य प्रतीक है। अस्ति—भांति—प्रियम् (सच्चिदानंद) के रजत-पट पर नाम-रूप की फिलम प्रक्षेपित की जाती है। तुम्हें रजत-पट विस्मृत हो जाता है; तुम्हारा ध्यान उसपर प्रक्षिप्त क्रियाओं, घटनाओं, और परिवर्तनों पर जम जाता है; उन्हें तुम सत्य और स्थायी मान बैठते हो और स्थाई (रजतपट) को अस्तित्व हीन मान लेते हो। इस नाम-रूप जटिलता को काट कर मन को रजतपट पर केन्द्रित करो; क्योंकि वही सत्य है।

मंत्र का अर्थ है; वह जो ध्यान करने से रक्षा करे। भगवान् के असंख्य नामों में से किसी एक का आश्रय लेने से इस उद्देश्य की पूर्ति हो सकती है। नाम तो उस अंकुश की तरह होता है जो हाथी को लीक पर चलने, घुटने टेकने, और अपने दाँतों पर लकड़ी का लट्ठा उठाने को बाध्य करता है।

अर्जुन युद्ध क्षेत्र में पूरी तरह सुसज्जित होकर शत्रुओं का नाश करने को कृत संकल्प होकर गया था। परन्तु जब वह दोनों सेनाओं के मध्य में अपने रथ पर बैठा हुआ था जिसके संचालक कृष्ण भगवान् थे, उसने अपने गुरुजन, पितामह, संबंधी, चचेरे बन्धु-बान्धवों, को देखा वह द्रवित हो गया उसका 'ममत्व' क्रन्दन कर उठा। उसने धनुष-बाण रथ में डाल दिये और रथ लौटाने की इच्छा प्रकट की। उसे निर्धनता और पराजय की स्थिति भी स्वीकार्य थी। उसने कहा कि 'इससे तो यही अच्छा है कि भगवावस्त्र धारण कर भिक्षान्न से जीवित रह लूंगा परन्तु इस रक्त रंजित राजगद्दी पर अधिकार करना मुझे स्वीकार नहीं है"। वह 'मैं' जिसका वास्तव में सांसारिक सम्पत्ति से कोई संबंध नहीं है भ्रमित होकर उन वस्तुओं से तादात्म्य अनुभव करने लगता है जो कि वास्तव में अप्रासंगिक है। यही मोह है, जिससे भगवद् गीता के द्वारा अर्जुन को बचाया गया था। द्वित्व या द्वैतम् से अप्रभावित रहो यही शिक्षा ग्रहण करने की है। जय, पराजय तुम्हारी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रान्तरिक शान्ति, ग्रानन्द को न स्पर्श कर सकें। ग्रपने को ग्रात्म रूप में समझो, इसका पार्थिव वस्तुग्रों से कोई संबंध नहीं है। जब तुम्हें इस प्रकार का बोध हो जाता है, तुम बन्धन-हीन, मुक्त हो जाते हो। मोक्ष कोई 'शान-शौकत पूर्ण होटल' या सैलानियों (पर्यटकों) का 'सुखदायक राजसी विश्राम गृह' भी नहीं है। यह तो तुम्हारी वास्तविकता का स्पष्ट ग्रनुभव हैं ग्रौर इसमें ग्रन्य कोई संकल्प-विकल्प की आस्थायें नही होती हैं। तुम शीघ्रता से ग्रौर स्पष्टता से अपने को पहचान सकते हो; यदि तुम मंत्र द्वारा ग्रथवा भगवान् की महिमा का गान करके अपने हृदय को पवित्र कर लो। दोनों से एक यही उपलब्धि प्राप्त होगी।

नाद तो वेदों की 'टेक' कहा गया है, धर्म शास्त्रों की देवी सरस्वती का चातुर्य, कृष्ण की वंशी-ध्वनि, विष्णु के शंख का ऊंकार, शिव के डमरू की ताल है। देवर्षि नारद की जो सदा कीर्तन के ग्रानन्द में मग्न रहते हैं, एक समस्या थी। वे घबराहट में थे कि "भगवान् के दर्शन कहाँ हो सकते हैं मैं कहाँ जाऊं? क्या मैं तिरूपति, भद्राचलम्, काशी, बदरी, पुट्टापर्ती, पंढरपुर, मथुरा अयोध्या जाऊं? तब नारायण ने उत्तर दिया, "किसी विशेष स्थान पर जाने की ग्रावश्यकता नहीं है। मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद। जहाँ कहीं भी मेरे भक्त मेरा यशोगान करते हैं मैं वहाँ उपस्थित होता हूं। इसलिये सच्चे हृदय से, प्रत्येक शब्द के अर्थों को समझने हुये, गाओ। भगवान् तुम्हारे हृदय में ही ग्रधिष्ठित हो जावेगा।

जिस प्रकार ग्रपने स्वास्थ्य की उन्नति ग्रौर रक्षा के लिये तुम प्रतिदिन व्यायाम करते हो, भोजन में पर्याप्त शक्ति, उष्णता, विटामिनों ग्रौर षोषक तत्वों की होशियारी से गणना करके भोजन करते हो, इसी प्रकार सावधानी से मन पर पड़ने वाले प्रभाव—क्या ये प्रभाव पथभ्रष्ट करने वाले या मन को लोभ, ईर्ष्या, घृणा, ग्रभिमान, द्वेष आदि के प्रतिरोध करने में सहायक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हैं, जान कर ही त्याग या ग्रहण करो। सेवा के सत्कार्यों, दिव्य विचारों का भोजन प्रेम रस का पेय ग्रहण किया करो जिससे अच्छा परिपाक होवे और उत्तम जीवन रस बने। तब तुम्हारा मानसिक स्वास्थ्य, प्रसन्नता और पौष्टिकता ओजस्वी और कान्तिमान होगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५५ सप्ताह यज्ञ

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् ७-१०-१९७०)

आज प्रातःकाल हम सप्ताह यज्ञ की समाप्ति का विदाई समारोह मना रहे हैं। सम का अर्थ ब्रह्म होता है और आप्ति का अर्थ प्राप्ति (पाना) होता है। इस प्रकार यह केवल काया के अंत का ही नहीं बल्कि सफल उपसंहार 'बलिदान' का भी द्योतक है। यज्ञ शब्द का अनुवाद 'बलिदान' भी होता है। तुम धन, सुख-सुविधा, शक्ति (सभी अहं के पोषक तत्त्वों) का बलिदान कर अनन्त में विलीन होते हो। यही उपलब्धि और यही अंत हैं। यज्ञ इसीलिये लाभदायक हैं क्योंकि वे बलिदान के आदर्श का समर्थन करते हैं और संग्रह, अधिग्रहण की निन्दा करते हैं। वे संयम पालन का आग्रह करते हैं और घबड़ाहट से बचने को कहते हैं। वे मन की एकाग्रता, जिह्वा और हाथों की दिव्यता, पर जोर देते हैं। झक्की लोग यज्ञ में प्रयुक्त अनाज के बोरे, घी के किलोग्राम मनो ईंधन की गणना करते हैं और अधिक बोरे, किलोग्राम और मनों सन्तोष, और सुख बदले में चाहते हैं। चरित्र और चेतना पर जो यज्ञ का प्रभाव पड़ता है उसे मीटरों या ग्रामों में नहीं नापा तोला जा सकता है। यह तो अपरिमेय है यद्यपि करणीय और अनुभव गम्य है। इसके अतिरिक्त ये सर्व-द्वेषी लोग उस अन्न, घी, ईंधन की गणना नहीं करते हैं जो स्वयं इनके शरीर पर व्यय हो जाते हैं और इनसे किसी को भी कोई संतोष या प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती। जो अनाज और घी वेद मंत्रों के साथ यज्ञ की अग्नि में आहुति के रूप में छोड़ा जाता है, उसका हजारों गुना शुभ परिणाम प्राप्त होता है। वे समस्त विश्व के वायुमंडल को शुद्ध करते हैं, अन्यथा अवतार इन यज्ञों के पुनर्प्रचलन का समर्थन न करता।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जब तुम्हें कोई एक प्याला काफी (अथवा चाय) का भेंट करता है तो तुम उसका धन्यवाद करते हो; तो फिर भगवान् के प्रति, जिसने तुम्हें यह अद्भुत विश्व प्रदान किया है रहने के लिये; और शरीर दिया है इस विश्व को समझने और भोगने के लिये, और भगवान् की महिमा का अनुभव करने के लिये तुम्हें कितना अधिक कृतज्ञ होना चाहिये। क्या तुम्हें नहीं लगता है कि गृहपति तुम्हारे द्वारा समुचित सम्मान और श्रद्धा, आज्ञा पालन से प्रसन्न नहीं होगा ? तब फिर इस विस्तृत अपरिमेय आकाश से लेकर सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमाणु के स्वामी के संबंध में क्या कहा जा सकता है।

अपने इन सात दिनों के अनुभवों पर विचार करो। इससे तुम्हें विश्वास हो जावेगा कि यज्ञ एक बहुत कल्याणकारी धार्मिक आयोजन होता है। तुमने अपने सुख का त्याग किया, तुम धूप, वर्षा में बैठे रहे और सोये; देवताओं को प्रसन्न करने से उनकी स्तुति करने से जो आनन्द प्राप्त होता है उसे प्राप्त करने के आकाँक्षी रहे। तुमने यह सब सहन किया क्योंकि तुमने इस कठोरता से त्राण पाने के लिये प्रेम का कवच धारण कर रखा था। इसी प्रकार हानि-लाभ, शोक और प्रसन्नता, को भी शान्तिपूर्वक सहन करो तो इस समस्त द्वन्दात्मक संसार को पार कर निश्चय ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लोगे। प्रह्लाद के अन्दर इतना दृढ़ विश्वास था कि अपने ऊपर इतनी विपत्तियों के पड़ने और अत्याचारों के होने से कभी नहीं तिलमिलाये वह भगवान् में इतने लीन रहते थे कि उन्हें भगवान् के अतिरिक्त अन्य कोई भान ही नहीं रहता था।

यह यज्ञ लोक-कल्याण के लिये किया गया था, जिससे समस्त मानवता, पूरे विश्व का कल्याण होवे। तुम्हें अपना कल्याण विश्व-कल्याण में निमज्जित कर देना चाहिए। जब तुम्हारा पड़ोसी पीड़ित है तब तुम कैसे प्रसन्न हो सकते हो ? इसलिए मैं तुमसे आग्रह करता हूं कि तुम केवल अपनी वैयक्तिक या पारिवारिक उन्नति के ही लिये प्रार्थना न किया करो। बिना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

किसी भेदभाव के समस्त मानवता, सम्पूर्ण विश्व की शान्ति, समृद्धि प्रसन्नता के लिए सदा प्रार्थना किया करो। प्रार्थना सदा गम्भीरता से और निष्ठा-पूर्वक होवे। तब तुम्हें कृपा अवश्य प्राप्त होगी। जब हृदय प्रेम से सिक्त होता है तो फिर यह अहंकार अथवा उसके दुष्परिणामों से दूषित नहीं होता। जैसे तुम शारीरिक स्वास्थ्य, जिसका अर्थ शरीर के अंग-प्रत्यंगों का अवयवों का स्वास्थ्य है, की कामना करते हो उसी प्रकार तुम्हें समस्त मानवता के स्वास्थ्य की कामना करनी चाहिये, इसका तात्पर्य सभी राष्ट्रों के सभी वर्गों और साम्प्रदायों की शान्ति और प्रसन्नता से है। यदि तुम इस वृहत्तर दृष्टि-कोण का विचार किया करो तो तुम्हें अपने कष्ट और चिन्ताओं से इतनी परेशानी नहीं हुआ करेगी, दूसरों के दुखों का अधिकाधिक चिन्तन तुम्हें अपना दुख भुला देगा। जीवनरूपी महायज्ञ में यह तुम्हारी प्रारम्भिक आहुति होगी। इक्ष्वाकुवंशी महाराज अज स्वर्ग की देव-दूती इन्दुमती पर मोहित हो गये; और जब वह उनके साथ कुछ काल तक निवास करने के पश्चात् एका-एक स्वर्ग चली गयी, तो उनका हृदय निराशा से चूर-चूर हो गया और अपने भाग्य पर इतना अधिक विलाप किया कि राजपुरोहित वशिष्ट को उन्हें धैर्य और ढाँढ़स बंधाना पड़ा। वशिष्ट ने उन्हें आसक्ति की मूर्खता और ऐसे क्षणस्थायी सुखों की नश्वरता का बोध कराया। उन्होंने वास्तविकता और प्रतीति के विषय में, सापेक्ष और निरपेक्ष के सम्बन्ध का, प्रकृति और पदार्थ तथा आत्मा का ज्ञान देकर पुनः स्वस्थ चित्त किया।

तुम्हें मसिशोषक (सोखते) पत्र के टुकड़े की तरह सभी उद्वेगों, मनो-विकारों, प्रसन्नताओं, दुःखों आदि को, जो प्राकृति रूपी नटी जीवन के रंगमंच पर प्रस्तुत करती है, सदा आत्मार्पित या आत्मसात नहीं करते जाना है। जैसे आकाश में सूर्य के उदय होने से कमल की पंखुड़ियां स्वतः खिलती जाती हैं और वह उस दलदल या कीचड़ से अप्रभावित रहता है कि जहां उत्पन्न होता है; और यहाँ तक कि जल से भी, जो इसका पोषक है, उसी प्रकार तुम्हें भी इस विश्व में रहते हुए भी इससे बिना प्रभावित हुये अपने हृदय को भगवान् की कृपा प्राप्त करके खिलाना है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५६ 'मैं' और 'माया'

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् ८-१०-१९७०)

प्रशान्ति विद्वान महासभा के पंडित तुम्हें प्रतिदिन जागृत, सुप्त, सुषुप्त तीनों स्थितियों के साक्षी के सम्बन्ध में बोध कराते रहे हैं। उन्होंने धर्मशास्त्रों के अनेक श्लोकों के उद्धरण दिये हैं कि तुम इनके साक्षी हो न कि भोक्ता। तुम्हें तो अज्ञान निद्रा से जागकर इसका स्वयं अनुभव करना है। दिन में कभी-कभी तुम्हें दिवा-स्वप्नों की अनुभूति हो सकती है। रात्रि में या तो तुम्हें स्वप्न आते हैं अथवा 'मैं' की एकाकी चेतना मात्र में ही चुपचाप पड़े रहते हो, जिसका कि भान भी नहीं रहता है।

यह मौलिक अज्ञान, जिसे माया कहते हैं, तुम्हारे साथ अनेक छल करता है। इसी से तुम्हें रस्सी में साँप की प्रतीति होती है और तुम भय से कांपते हुए दूर हट जाते हो। चिलचिलाती धूप में उत्तप्त बालू के स्थान पर तुम्हें जल का भ्रम होता है और तुम शुष्क जिह्वा लिये अपनी प्यास बुझाने के लिये उस ओर दौड़ जाते हो। तुम इसे "माया" "मेरे द्वारा" "मेरे लिये" और अपने आपको इससे संयुक्त करते हुये कहते हो; मानो कि यह वास्तविक और कल्याणकारी हो। जिस क्षण तुम्हें यह प्रतीत होवे कि यह माया है तो फिर यह तुम्हें चिन्तित या परेशान नहीं कर पाती है।

कुत्ता नदी में अपनी परछाईं देखकर और यह समझ कर कि यह उसी का प्रतिबिम्ब है कोई अन्य कुत्ता नहीं है, नहीं भौंकेगा। सभी तो परछाइयाँ हैं, इसलिये हम किससे घृणा करें और किसे वरण करें? ज्ञानी का क्या दृष्टि-कोण होता है? आसक्ति और सम्बद्धता त्याग दो, वेदों के कथनानुसार केवल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

त्याग से ही मुक्ति प्राप्त होती है। अपने पार्थक्य के बोध का त्याग कर दो, सभी प्राणियों में स्वयं को देखो और स्वयं को सभी में देखो। सर्वोच्च त्याग इसी अहं भावना का त्याग होता है जिसके कारण तुम इस अस्थायी निवास, यह अस्थि मांस मज्जा की पोटली जिसके ऊपर एक नाम-रूप की चिप्पी भी चिपकी है, से चिपके हुये हो। आध्यात्मिक अभ्यास में दो ही बातें होती हैं; भगवान् का चिन्तन् और आत्म साक्षात्कार।

अग्नि की सत्यता या प्रमाण उसकी वाहक शक्ति है, पानी की आर्द्रता और पत्थर का भारी होना उनके वास्तविक या असली होने के प्रमाण हैं। मानव की असलियत का प्रमाण यही है कि वह जिज्ञासु हो। अर्थात् उसमें 'जानने' की आकांक्षा रहे। यह भाव मानव में उसी क्षण से आया है जब से कि उसने शरीर धारण किया है और इस रंगमंच पर अपना अभिनय करने को उतरा है। इस समय तुम्हारा विश्वास यही है कि जो अभिनय तुम कर रहे हो वही तुम वास्तव में भी हो; और इसी से तुम्हें सुख या दुःख की अनुभूति भी हो रही है। स्वप्न में सर्पदंश की पीड़ा से तुम जागते हो पूर्णतया मुक्त हो जाते हो, इसी प्रकार जब तुम माया से जाग जाते हो तो अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित होते ही तुम्हारे भय और शोक अदृश्य हो जाते हैं। जब कोई अभिनेता रंगमंच पर रोता या हंसता है वह स्वयं अपने रोने और हंसी को देखता है और प्रयत्न करके उसे वास्तविक और सच्ची बनाकर दिखाता है जिससे दर्शकों पर प्रभाव पड़े। इसी प्रकार तुम अपने कार्यों और विचारों के स्वयं साक्षी बनो, परन्तु उनसे किसी प्रकार का लगाव या घृणा से बहुत दूर रहो।

विज्ञान 'क्या' और 'कैसे' प्रश्नों को हल करने की चेष्टा करता है। वह इन प्रश्नों के उत्तर पार्थिव जगत में नाम रूप की चिप्पी लगे पदार्थों से खोजता है; जिन्हें कि इन्द्रियों के द्वारा देखा, सुना, सूंघा, चखा और स्पर्श किया जा सकता है। पुनः तर्क के द्वारा इनका वर्गीकरण करता है। परन्तु

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अध्यात्म विज्ञान प्रश्न करता है, क्यों ? किसलिये ? इसे पता लगता है कि 'माया' ही 'क्यों' का उत्तर है। उलझन से भरे तर्कों से और विविधतापूर्ण भ्रमोत्पादक दृश्यों में क्या आनन्द है ? भाप और वर्फ दोनों ही पानी हैं यद्यपि उनमें अनेक अन्तर हैं; हीरा भी कोयले का ही विशिष्ट रूप है; आभूषणों के नाना प्रकार होने पर भी वह सब सोना ही होता है; बर्त्तन भी मिट्टी ही होते हैं। यदि सत्य का अन्वेषण किया जावे तो इस विविधता की जड़ में एक ही होता है। ब्रह्म ही वह एक हैं शेष अन्य सब ऊपरी और अध्यारोपण मात्र हैं। सत् चित् आनन्द तत्व के ऊपर भिन्न-भिन्न नाम-रूपों की चिप्पियाँ और आकृति के आरोपण हैं।

अपनी चेतना को उसी एक के विचारों से संपृक्त कर लो। यदि चेतना को विविध विचारों से आक्रान्त कर लोगे तो इसमें से घृणा, पक्षपात, पूर्वाग्रह और ईर्ष्या की दुर्गन्ध आवेगी। संसार तुम्हारे मन की ही उपज है, गंभीर निद्रा (सुषुप्ति) में चले जाओ, संसार का अस्तित्व समाप्त हो जावेगा। इसलिये निद्रा को भी एक प्रकार की समाधि कहते हैं; जबकि 'घी' अर्थात् बुद्धि 'सम' अर्थात् साम्यावस्था या संतुलन में स्थित हो जाती है, शान्ति प्राप्त करती है। अर्जुन ने कहा, "भगवान् आपकी माया का पार पाना कठिन है"। माया उसकी लीला है, उसकी क्रीड़ा है। इसलिये उस भगवान् में शरण ले लो; क्योंकि वह तुम्हें अपनी माया की चालों से वचा सकता है। ऐसा सामर्थ्य केवल एकमात्र भगवान् में ही है।

साधना के लिए तुम्हें हिमालय की किसी कन्दरा में भाग जाने की आवश्यकता नहीं है। जहाँ भी हो, बने रहो केवल जीवन ने जो कर्त्तव्य तुम्हारे भाग में डाल दिये हैं उन्हें सच्चाई से और अपनी सम्पूर्ण योग्यता से पूरे करते रहो। अपने हृदय की गुफा में अनुभव करो कि वही (भगवान्) कर्त्ता है, वही भोक्ता है, तुम केवल दृष्टा हो क्योंकि आँख के पीछे भी उसी की शक्ति कार्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करती है। आत्मा ही इस शरीर रूपी टार्च में 'सेल' है और आँख ही 'बल्ब' हैं बुद्धि 'स्विच' है।

जब तुम किसी छोटे अधिकारी से, जिसे कुछ अधिकार प्राप्त हैं; भेंट करने जाते हो तो तुम आदर से माथा नवाते हो और भय से चीनी ढंग से दण्डवत (काउटाउ) करने लगते हो, अथवा श्रद्धा और भय से सम्मान पूर्वक मिलते हो कि कहीं तुम्हारी त्रुटियों के लिये वह तुम्हें फटकारने न लगे। इसके प्रतिकूल जब तुम भगवान्, जो कि सर्व शक्तिमान् है और जिसके संकेत मात्र से इस विश्व के समस्त कार्य संचालित होते हैं, से मिलना चाहो तो तुम्हें कितना विनम्र, ईमानदार, सच्चा और श्रद्धा, भक्ति और पवित्रता से युक्त होना चाहिये। स्मरण रहे भगवान् तो तुम्हारा अभिभावक है; जब तुम सोये हुये होते हो, असहाय होते हो, तुम चाहे उसे भुला दिये हो या उपेक्षा की हो अथवा तिरस्कार किया तब भी वह तुम्हारा संरक्षक बना ही रहता है। जो कुछ तुम भेंट करते हो, या भेंट करने की प्रतिज्ञा करते हो, उसे किसी की भी आवश्यकता नहीं है। वह सदा सन्तुष्ट, आनन्दमय, पूर्ण स्वतन्त्र रहता है। अपना कर्त्तव्य अपने प्रति पालन करो, यही भेंट उसे संतुष्ट और प्रसन्न करने को पर्याप्त है।

यदि तुम मानवों में प्रेम के प्रसार के लिये समय नहीं देना चाहते हो तो फिर ४-३० प्रातः उठने का कष्ट मत करो। तुम इसके एक घंटा बाद भी उठ सकते हो। इससे दूसरे लोग तुमसे निश्चिन्त रहकर अपने एक घंटे का सदुपयोग कर सकेंगे। यदि तुम सत्कार्यों द्वारा समय का सदुपयोग करना चाहते हो तो ४ बजे प्रातः उठ जाओ, इसमें कोई हानि नहीं। यदि तुम पर निंदा किये बिना नहीं रह सकते हो तो कुछ देर और सो लो। यदि नगर संकीर्तन में तुम किसी दल के साथ जा रहे हो, और अपने मित्रों या पड़ोसियों से उस दिन घरों में बनने वाले भोज्य पदार्थों की चर्चा चले, अथवा तुम्हारी सासें जो दुर्व्यंहार तुमसे करती हों उसका दुखड़ा रोते जाओ, तो अच्छा हो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कि नगर संकीर्तन के लिये मत जाओ। दूसरों को, जो इस कार्य को उत्सुकता और सच्चाई से करना चाहते हैं, अपने साथ बुराई में मत घसीटो। जब १०८ अथवा १००८ नामों से पूजा-अर्चना चल रही हो तो कान में शब्द मात्र पड़ जाने से मत संतुष्ट होओ। शब्द की ध्वनि पड़ते-पड़ते उसके अर्थों पर भी विचार करो जिससे तुम भगवान् की महिमा का चिन्तन कर सको; हर नाम कुछ न कुछ अर्थ रखने वाला और भगवान् की महिमा को संकेत करने वाला होता है। जब तुम्हें फोन पर अपने पौत्र-जन्म की सूचना मिलती है तो तुम्हें असीम प्रसन्नता होती है; परन्तु यदि सूचना देने वाले शब्दों का अर्थ न समझ सको तो तुम्हें उसका संदेश ध्वनियों का अस्पष्ट अर्थ हीन शोर जैसा प्रतीत होगा और तब क्या तुम्हें रंच मात्र भी प्रसन्नता होगी ? तो फिर भजन में भाग लो। इससे तुम दिव्यानन्द की उच्च भूमिका में उठ कर सदैव आनन्दित रहोगे। जितना ऊँचा उठते जाओ उतना ही अधिक शान्त और शीतल वातवरण मिलेगा। जितना नीचे उतरो उतना ही उष्ण वायुमंडल मिलेगा। इसलिये ध्यान और जप के द्वारा अपने को उच्च मनःस्थिति में बनाये रखो। इन अमेरिकन और अन्य विदेशियों से एक शिक्षा ग्रहण करो। उनके साथ भारतीय संस्कृति, संगीत, धर्म, ज्ञान, दर्शन आदि की पृष्ठ भूमि भी नहीं है। उनकी निष्ठा और लगन ने उन्हें यहाँ की संस्कृति, संगीत का मर्मज्ञ बना दिया है। वे उसी ताल, स्वर, लय से समान उत्साह से, संभवतः तुमसे भी अधिक उत्साह से, भजन गाते हैं; यह ढंग भले ही उन्हें पहले अटपटा लगता रहा हो; परन्तु अब तो वे इसमें निष्णात् हो गये हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५७ तलवार और म्यान

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् ६-१०-१९७०)

यदि कोई पात्र रिसता है और उसमें से पानी टपक जाता है तो तुम कुम्हार को दोष देते हो, यदि किसी खेत में फसल अच्छी नहीं उगती है तो तुम किसान को दोष देते हो जिसे इतना ज्ञान न था कि अच्छा बीज चुनता; खेत को अच्छी तरह जोतता; पौधों को समय-समय पर उचित ढंग से सींचने की व्यवस्था करता, कीटाणुओं से फसल की रक्षा करता, समय पर खाद डालता; आवश्यकता के अनुसार ही, न अधिक न कम, और समय पर फसल काट लेता जबकि दाना पका होता और फसल कटने के उपयुक्त होती। जब शरीर में बीमारी होती है तो तुम व्यक्ति की भोजन सम्बन्धी गलत आदतों की ओर उंगली उठाते हो, अन्य मिथ्या आहार-विहार की चर्चा करते हो; कुसंग और क्षुद्र मनोरंजन की चर्चा उठती है। यदि मनुष्य का मन उद्वेलित और भारी होता है; चाहे कोई चिन्ता हो या उदासी के कारण, तो तुम्हें उस व्यक्ति को ही दोष देना होगा कि उसने शान्ति और सदा क्षोभ रहित जीवन बिताने वाले ढंग की उपेक्षा की है। जो भी शरीर की चिन्ता करने वाला हो उससे यह पूछो कि "तुम किस लिये इस शरीर की इतनी सेवा-शुश्रूषा करते रहते हो ? इससे तुम्हें किस प्रकार के लाभ की आशा है ? शरीर तो म्यान है, खोल है जिसमें तलवार रखी जाती है वह तलवार 'जीवात्मा' 'मैं' है; परंतु वह इस शरीर का कोई अंश या अंग नहीं है। इस म्यान में 'मैं' की स्थिति का सर्वोत्तम उद्देश्य विश्व में निहित एकता—अद्वैतम् का ज्ञान प्राप्त करना है। जब तुम कहते हो कि यह सभास्थल है, तो इसकी एक ही कल्पना मन में उठती है यद्यपि इसमें अनेक खम्भे, पटाव, तखते, ईंटें, गारा, बुलट, पेंच, रंग इत्यादि की विविधता रहती है। तुम्हारा शरीर ही स्वयं अनेक अंगों,

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रत्यंगों, खाल, रक्त, मांस, मज्जा, बाल ग्रादि का संश्लिष्ट व्यक्तित्व वाला शरीर है परन्तु इसकी एकता में कोई संदेह नहीं करता। इसी प्रकार ब्रह्माण्ड भी एक ही है भले ही इसमें नक्षत्र, ग्रह, चट्टानें, वृक्ष, पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े अनन्त योनियां निवास करती हैं। जो कुछ भी है 'सर्वं ब्रह्ममयम्' सब कुछ ब्रह्म से युक्त और परिपूर्ण है। यह सब सत्, चित्, आनन्द है न कम, न ग्रधिक। इस सत्य का साक्षात्कार कर लेना ही मानव जीवन का उद्देश्य है।

तलवार को म्यान के ग्रन्दर रखते हुये तुम्हें इस उद्देश्य में सफलता के लिये सुख-दुःख, संपत्ति-विपत्ति, यश-अपयश, लाभ-हानि, जय-पराजय, शत्रुग्रों के विरुद्ध ग्रभियान पर जाना है। यह दुनियाँ ही युद्ध-क्षेत्र है; इसे तो विजय करना ही है, संघर्ष चाहे जितना लम्बा चले, चाहे जितना तीव्र युद्ध क्यों न होवे। इस ग्रद्वैत ज्ञान की चेतना को प्रबुद्ध करने के लिये वेद उत्साहित करते हैं। वेद माता प्रत्येक बच्चे को इस उत्तराधिकार भार को, जिसे 'भूमा' 'अनन्त' का नाम दिया गया है, प्राप्त करने का ग्राह्वान करती है। वह कहती है, "बच्चे ! तुम्हीं वह ग्रनंत हो, जो ग्रस्थाई रूप से इस ग्राकृति में सीमित हो गया है" 'तत्त्वमसि' वह तुम्हीं हो। परन्तु विरले बच्चे ही माँ की पुकार पर आचरण करते हैं। क्यों; जब वास्तविक नारायण स्वयं ग्राकर घोषणा करता है 'पुत्र ! तुम्हीं ब्रह्म, ग्रनंत, निरंजन ग्रौर शाश्वत हो' विरले ही इस ग्राह्वान पर ग्रनुकूल प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। तुम्हारा ग्रज्ञान ग्रथवा धृष्टता वेद की इस पवित्र घोषणा की सत्यता को कम नहीं कर सकते। वेमन ने इसी को कितनी उत्तमता से कहा है, "वह जो कुत्ते को खा जाता है वही दीक्षा देने वाला गुरु है ग्रौर जो शूकर का बच्चा खा जाता है वह ग्रादर्श योगी होता है, वह जो हाथी को ही चट कर जाता है सभी में से परम बुद्धिमान ज्ञानी हैं"। निस्संदेह वेमन का तात्पर्य क्रोध रूपी कुत्ते, ग्रहं भाव के रूप में शूकर का बच्चा ग्रौर हाथी का ग्रर्थ ग्रभिमान तथा ग्रनियंत्रित क्रोध है। जब इन्हें समाप्त कर लिया जाता है तो ग्रनन्त का दर्शन करने के लिये दृष्टि स्वच्छ हो जाती है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वेद शब्द का अर्थ 'वह जो शिक्षा दे' होता है। वे क्या शिक्षा देते हैं? वे 'सत्यस्यसत्यम्' की शिक्षा देते हैं। यह जगत या दृश्यमान विश्व सत्यों की 'गपशप' है। उन सत्यों का सार यह आत्मा है। मानव तो एक जंगली हाथी की तरह जीवन रूपी जंगल में विचरण कर रहा है। वह खाता है, लड़ता है और अपनी इच्छानुसार स्थानों पर विचरण करता है। परन्तु, उसे तो एक सिंह के सदृश होना चाहिये, जो कि जंगल के सभी पशुओं (नागरिकों) का एकछत्र सम्राट् है। वह अपनी शान से दहाड़ता है मानो वह अजेय स्वामी है। परमाणु बम की चेतना रखते हुये भी निर्भय विचरण करो। कुछ लोग जामाताओं जैसा व्यवहार करते हैं। जब तक बहू की विदा नहीं करदी जाती है वे भीगी बिल्ली बने रहते हैं। ज्योंही वधू उन्हें सौंप दी जाती है वे मानुष-भक्षी चीते में बदल जाते हैं और अपने श्वशुर का शोषण करने की चेष्टा में लग जाते हैं। जब तक उनकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो जाती वे भगवान् की पूजा करते रहते हैं; भजन कीर्तन सभी कार्यक्रमों में सोत्साह भाग लेते हैं, ज्योंही पूर्ति हो जाती है वे भगवान् से मुंह मोड़ लेते हैं और भगवान् में विश्वास के विरुद्ध आन्दोलनकारियों का नेतृत्व करने लगते हैं। साधना को छोड़ना तो बहुत सरल होता है परन्तु साधना में लगा रहना एक कठिन व्रत का पालन करना होता है। परन्तु, एक सीढ़ी चढ़ने में कोई लाभ नहीं, और आगे चढ़ते चले जाओ और शुद्ध पवित्र वायु तक पहुंच जाओ। इतनी ऊँचाई तक चढ़ जाओ कि फिर वहाँ से शिखर और घाटी एक सपाट मैदान जैसा दिखाई देने लगे। तुम बातें तो ऐसी करते हो मानो पूर्णतया भगवान् को अर्पित हो चुके हो, परन्तु यदि एक कलम भी खो जाय तो थाने में जाकर रिपोर्ट लिखाये बिना नहीं मानते हो मानो कि पुलिस वाले तुम्हें कलम खोज कर दे ही देंगे। तुम तो एक शूरवीर हो और वनराज सिंह के समान हो यदि तुम जय-पराजय और सुख-दुःख से हर्षित या विचलित न होते होओ।

विनायक को दो माताओं, गौरी और गंगा, का पुत्र कहा जाता है। तुमतो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चार माताओं के लाड़ले हो वह मातायें सत्य, धर्म, प्रेम, और शान्ति हैं। अपने कार्यों से उनका उपहास मत करो; उनका सम्मान करो, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करो। अन्याय, कुकर्म, असत्य और अनाचार को अपनी मातायें मत घोषित करो। अपने हृदय को इतना विशाल या उदार बनाओ कि पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े, वृक्ष और पौधे भी तुम्हारे पारिवारिक संबंधी की परिधि में आ जावें। वैदिक प्रार्थना 'बृहते करोमि' मैं अपने को विशाल बनाता हूं; ऐसी प्रार्थना प्रत्येक साधक का हृदय कह सके। विशालतम ही ब्रह्म है, जोकि 'ब्रह' अर्थात् बढ़ना धातु से बना है।

ध्यान में एकाग्रता की वृद्धि होवे; इसके लिये तुम्हें अपनी आवश्यकतायें घटाना चाहिये और इच्छाओं का त्याग करना चाहिये। अनासक्त भाव से प्रत्येक वस्तु को साक्षी बना कर देखो, उसमें धंसने और फंसने की आवश्यकता नहीं है। जब बंधन शिथिल हो जाते हैं तो तुम्हें प्रसन्नता और हल्कापन भी अनुभव होगा। जब तुम पुराना मकान छोड़ कर नये में जाते हो तो ठेलों में सामान भरते हो जिसमें अनेक पुराने बेकार जूतों के जोड़े, चटाइयां, झाड़ू के अवशिष्ट और अन्य अनेक कूड़ा-कबाड़ की वस्तुयें भी भर ली जाती हैं। उन्हें फेंक देने की तुम्हारी इच्छा ही नहीं होती। इतने दीर्घकालीन संबंध के कारण तुम्हें उनसे मोह हो जाता है। जीवन की यात्रा में भी हल्के होकर (कम से कम बोझा लेकर) यात्रा करो।

उन्हें पूर्ण रूप से नष्ट कर दो। जब रावण धराशायी हो गया तो उसकी रानी मन्दोदरी उसके शव के समीप गयी और विचार करने लगी कि वह कौन सा प्रहार था जो घातक सिद्ध हुआ। जिसने चार वेद, छः वेदांगों सहित अध्ययन करके पूर्ण पांडित्य प्राप्त किया हो, जो देवताओं की प्रसन्नता के लिये सदा कर्म काण्ड और उपासना में लगा रहने वाला हो उसका अंत इतना अपमान पूर्ण क्यों हुआ ? एक चतुर और प्रेम से युक्त रमणी होने के नाते उसे शीघ्र अनुभव हो गया कि उसके पति के पतन का क्या कारण बना। उसने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वलाप किया, "शोक ! कि आपने अपनी इच्छाओं का दमन न किया, उन्हें निर्मूल नहीं किया"। काम की क्षुद्र इच्छा शीघ्रता से बढ़ी जबकि आकर्षण शक्तिशाली था। जब वर्षा ऋतु आई तो जो प्रदेश पहले शुष्क और पीतवर्ण दिखलाई देता था वह अब भूमि के नीचे दबे हुये बीजों और घास की जड़ों के कचकचा कर अंकुरित होने के कारण हरा भरा प्रदेश बन गया, क्योंकि घास-पात की जड़ें न तो खोदी गयी थीं और न उन्हें जला दिया गया था।

लोग मेरे पास आते हैं और निवेदन करते हैं कि वे मेरी सेवा का अवसर चाहते हैं; परन्तु तुरन्त ही यह भी प्रार्थना करते है कि वे अपनी नवजात पौत्री के विवाह को देखने का अवसर भी पा जावें। इच्छा की अवांछनीय घास को निर्मूल करना एक लम्बी और परिश्रम-साध्य क्रिया है। कुचेला को उसकी पत्नी ने प्रभु के समीप भेजा कि कम से कम सप्ताह भर का भोजन तो मांग लावे। वह वहां गया और उससे अत्यन्त उदारतापूर्वक व्यवहार किया गया; परन्तु वह कुछ भी माँग न सका। उसे लगा कि यदि भगवान् की इच्छा होती है तो वे सब कुछ दे सकते हैं; यदि वे नहीं देते हैं तो अवश्य ही इसके कुछ न कुछ महत्त्वपूर्ण उचित कारण रहते हैं।

एक बात और। भगवन्तम् ने अपनी अमेरिका यात्रा और वहां के भक्तों द्वारा उनसे मेरे संबंध में पूछे गये प्रश्नों की तथा अपने भाषणों की चर्चा की है। स्वामी की बातों की व्याख्या करना या उनका महत्त्व पूरी तौर से समझ पाना तो किसी के लिये भी संभव नहीं है। जिस स्थिति तक तुम लोग पहुँच सकते हो वहां से इस अभिव्यक्ति तक पहुंच सकने का कोई संभव उपाय नहीं है। यह तो एक अवतार है, साक्षात् मूर्तिमान दैवत्व है, जो किसी के भी बोध से परे है। मेरे संबंध में कुछ समझाने या व्याख्या करने का प्रयत्न इतना ही निरर्थक होता है जितना कि निरक्षर व्यक्ति के द्वारा किसी गंभीर ज्ञान की पुस्तक को पढ़ने का प्रयत्न करना अथवा सागर को गागर में भर लेने की चेष्टा। अधिक से अधिक तुम इतना ही कर सकते हो कि अपने को उस

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आनन्द की प्राप्ति और उससे लाभान्वित होने के योग्य बना लो कि जिस आनन्द को मैं तुम्हें देता हूं ।

साई तत्व तुम्हारे अन्दर भी है, अन्तर तो केवल शक्ति-सामर्थ्य (वोल्टेज) में है । शून्य वाट क्षमता से लेकर प्रचण्ड चकाचौंध प्रकाश दे सकने वाले बल्बों की अनेक श्रेणियां होती हैं । परन्तु सब में से होकर जाने वाली बिजली की धारा एक ही होती है इसमें भी कोई सन्देह नहीं है परन्तु एक 'अणु' के लिये 'ब्रह्माण्ड' का समझ सकना बड़ा दुस्तर कार्य है ।

मंदिर में सुलगने वाली धूपबत्ती के सिरे पर अग्नि की चिनगारी होती है, उससे बड़ी चिनगारी तुम्हारी सिगरेट के सिरे पर होती है, भोजन बनाने के लिये प्रयुक्त होने वाले स्टोव में उससे बड़ी अग्नि होती है । दावाग्नि की विशाल लपटें भी वही अग्नि है । परन्तु, धूपबत्ती की चिनगारी तो दीवाल से अचानक छू जाने पर ही बुझ जाती है । जबकि दावाग्नि तो हरे-भरे वृक्षों की भी राख की ढेरी में बदल देती है क्योंकि उसकी उष्णता की गणना नहीं की जा सकती । इसी प्रकार अवतार में का दैवत्व अवर्णनीय, अनिर्वचनीय, अगम्य और अद्भुत होता है । यह तो प्रेमाग्नि, ज्ञानाग्नि विश्व के सृजन की अग्नि तथा सृष्टि-संहार की अग्नि चारों का एक पुंजीभूत मिश्रण है ।

गीता में कृष्ण ने क्षुद्र शक्तियों की उपासना का निषेध किया है । उन्होंने कहा है 'जो देवताओं की उपासना करते हैं वे देवताओं को प्राप्त होते हैं; जो अन्य भूतगणों की उपासना करते हैं वे उन्हें प्राप्त होते हैं; परन्तु जो मेरी आराधना करते हैं वे मुझे ही प्राप्त होते हैं । उन्होंने कहा है, "मन्मना भव, मद्भक्तो मद्याजी माम् नमस्कुरु" । अपने मन को मेरे चिन्तन से भर कर मेरे भक्त बन जाओ, मेरे लिये त्याग करो, मेरी शरण में आ जाओ । क्षुद्र इच्छाओं का त्याग कर दो । निम्नकोटि के देवताओं की, जो क्षुद्र इच्छाओं की पूर्ति कर सकने में समर्थ हों, उपासना से क्या लाभ ? सर्वोच्च ज्ञान, आनन्द और शक्ति

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की प्राप्ति की आकांक्षा करो। इससे कम कुछ भी मत चाहो और सर्वशक्ति-मान दाता से ही मांगो। विश्वास रखो कि साई बाबा तुम्हारी आत्मा के रूप में तुम्हारे हृदय में ही है, प्रेम से पूर्ण है। क्षुद्र अहंकारी व्यक्तियों के दावों को उत्साहित मत करो जो यह कहते हैं मैं उन पर आता हूं अथवा मुझे किसी मंदिर या कमरे की आवश्यकता है जिसके लिये वे लोग धन संचय करते हैं। मुझे तो केवल एक मंदिर चाहिये, वे तुम्हारे हृदय में है चाहे जो कोई मांगे, चाहे तुम्हें भी यह लगे कि मैंने मांगा होगा, उसे एक पैसा भी मत देना। नये मंदिरों का निर्माण करने की यह सनक और पुरानों के निर्माण की यह सनक, दोनों ही एक सनक मात्र हैं, और इनका उद्देश्य कुछ धन या यश कमाना होता है। इसे उत्साहित नहीं करना चाहिये। अपने-अपने हृदयों की पवित्रता बनाये रखो जिससे साई उनमें निवास करे। इतना ही पर्याप्त होगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५८ मेरी तिकड़ी

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम् १०-१०-१९७०)

करुण्यानंद ने अर्जुन के संशय और भय के समुद्र में डूबने की चर्चा की है। वह तो निराश, पतवारहीन नौका की भांति झंझावात में फंसा अनुभव करने लगा था। युद्ध क्षेत्र में आते ही अर्जुन विषाद योग से अभिभूत हो गया था; मोक्ष प्राप्ति से पूर्व यह स्थिति अनिवार्यतः आती ही है। गीता को सुनने और भगवान् के विश्वरूप में दर्शन प्राप्त करने के पश्चात् अर्जुन ने स्वीकार किया कि वह भ्रम से रहित "नष्टो मोहः" हो गया था। माया मोह भ्रम का नष्ट हो जाना ही तो वह मुक्ति है जिसकी सभी कामना करते हैं। मोक्ष तो 'मोह के क्षय' को ही कहते हैं।

आज यज्ञ समाप्त हो रहा है, परन्तु स्मरण रहे कि इस यज्ञ से जो शिक्षा त्याग की मिली है वह सदा सर्वदा तुम्हारे जीवन में प्रेरणा के स्रोत के रूप में बनी रहे। इन सात दिनों में 'रामायण' का पारायण किया गया। रामायण की शिक्षायें भी तुम्हारे अंतःकरण पर अंकित रहनी चाहिये। सबसे महत्त्वपूर्ण यह कि काम से पतन होता है राम से सफलता सुनिश्चित होती है। दशरथ ने अपने प्रिय पुत्र को वन में भेज दिया और इसलिये कि उन्हें अपनी दुष्ट पत्नी की इच्छा की पूर्ति करनी थी। राम ने अपनी उसी पत्नी को वन में भेज दिया, जिसके रावण के हाथों से पुनरुद्धार के लिये उन्होंने वर्षों खोजा और भयंकर युद्ध में लगा रहना पड़ा था, यह सब इसलिये कि धर्म पालन की ऐसी ही माँग थी। रावण को स्वयं ही यह कठोर पाठ पढ़ना पड़ा कि काम से व्यक्ति क्षीण होता है और धर्म से शक्तिवान् बनता है। उसने अनुभव किया कि राम तो साक्षात् धर्ममूर्ति हैं इसलिये उनकी योजना में कुछ भी विघ्न

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

डालने में कोई समर्थ था। यही ग्राधार है जिन पर इस देश की संस्कृति ग्रौर जन-जीवन का उत्थान हुग्रा है। परन्तु जो ग्राजकल राष्ट्र की योजना के रचयिता हैं वे केवल सड़कों, वांधों, निर्माण-शालाग्रों, कृषि-क्षेत्रों की योजना बनाते हैं उनकी योजना में ग्रात्मा का मार्ग, वह क्षेत्र जिसे मैं प्यार करता हूं ग्रौर जहां मानवता सेवा, बलिदान की खेती की जा सकती है। वे ऐसे विकास कार्यों पर ग्राग्रह करते हैं जिनकी प्रगति ग्रौर विस्तार को मापा जा सकता है, देखा जा सकता है, ग्रौर जिसके ग्राँकड़े सांख्यकी-विशेषज्ञों की ग्रध्ययन सामग्री बनते हैं। उस योजना में ग्रदृश्य उद्देश्यों ग्रौर प्रेरणाग्रों को जिससे मनुष्य शान्ति ग्रौर भाईचारे का जीवन व्यतीत कर सके, कोई स्थान नहीं दिया गया है।

ग्राज मानव बाह्य अंतरिक्ष में उड़कर चन्द्रमा पर पहुंचने में सक्षम है। पृथ्वी ग्रौर ग्राकाश उसके क्रीड़ांगन बन गये हैं। परन्तु, यद्यपि वह ग्रनंत ग्राकाश ग्रौर अगाध जलराशि के नीचे ग्रपना मार्ग निर्देशन स्वयं करने की बुद्धि रखता है, ग्रन्तर्महाद्वीपीय प्रक्षेपणास्त्रों का प्रयोग कर सकता है उसमें पड़ोसी के साथ शान्तिपूर्वक रहने की नैतिकता नहीं है। कुछ मुट्ठी ग्रन्न से उसकी उदरपूर्ति, थोड़े कपड़े से उसकी शरीर-रक्षा ग्रोर लज्जानिवारण, कुछ वर्ग फीट सायेदार स्थान उसे धूप ग्रौर वर्षा से बचाने के लिये आवश्यक होते हैं। परन्तु वह ग्रपने भाई-बहिनों की हत्या करता है, वह चुराता है वह षड्-यन्त्रों की योजना करता है, वह ग्रसत्य ग्रौर कानून की मर्यादा-भंग में उत्साह और प्रसन्नता व्यक्त करता है, वह ग्रपने हृदय की तथा समाज की शान्ति को भंग करता है। विद्यालय, महाविद्यालय ग्रौर शिक्षण संस्थाग्रों की बाढ़ ग्रा रही है, परन्तु शिक्षित लोग ग्रपने ग्रौर देश के लिये एक संकट सिद्ध हो रहे हैं। ग्रस्पताल, ग्रारोग्य-अनुसंधान शालायें, दवाइयां ग्रौर वेदना निग्रह पदार्थों की वृद्धि हो रही है, परन्तु पागलपन ग्रौर बीमारियों का प्रतिशत भी बढ़ता जा रहा है। हर ग्रोर ग्राशंका, चिन्ता के काले बादल, भय, ग्रसन्तोष, पीड़ा की घटायें, धनी, निर्धनी, संसार के सभी राष्ट्रों को ग्रातंकित कर रही हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वेदों के अनुसार वास्तविक शान्ति की नींव तो मेरी तिकड़ी की गुणवत्ता में है; मैत्री-भाव, दयालुता और उदारता में है। इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि 'मेरी तिकड़ी' से आशय मेरे विचार, वचन और कार्य जो कुछ मैं सोचूं वही वाणी द्वारा व्यक्त करूं और तदनुकूल ही आचरण किया जावे और यह सब क्रियायें बिना किसी प्रकार की दलबन्दी की भावना से, प्रेमपूर्वक बिना किसी प्रकार का झगड़ा उठाये समझदारी से की जावें। आज की दुनिया में इसी की आवश्यकता है, यही मेरी तिकड़ी है।

आज पिता-पुत्र में, पति-पत्नी में, मित्र और मित्र में प्रेम कृत्रिम और कलात्मक है; परन्तु हार्दिकता से दूर है। पुत्र न्यायालय में पिता पर अभियोग चलाता है; पति-पत्नी के मध्य आकर्षण भी चिरस्थायी नहीं रहता हैं, जब स्वार्थों में टकराव होता है तो कल के मित्र आज परस्पर छुरेवाजी करते हैं। भाई-भाई का विश्वास नहीं करता है, मानव-मानव के बीच समस्त संबंधों को संदेह और भय बिगाड़ते रहते हैं।

एक पार्क में टहलते हुये एक नव-दम्पति की कल्पना करो। पुरुष सड़क पर एक काँटा देखता है, जिस पर रमणी का पैर पड़ सकता है, वह एकाएक झपट कर उसकी ओर आकर उसे एक ओर हटा कर कहता है "भगवान् का धन्यवाद मैंने इसे समय से देख लिया" ! तीन महीने के बाद ये पुनः टहलने जाते हैं और मनुष्य एक काँटा देखता हैं। क्या होता है ? वह कहता हैं, "देखना दायीं ओर वही काँटा है। उस पर पाँव मत रख देना"। अगले तीन माह बीतने के बाद पुनः टहलने के समय सड़क पर काँटा देखने पर वही व्यक्ति चिल्ला कर कहता है, "क्या तुम्हें वह काँटा भी नहीं दिखाई देता ? अठखेलियाँ करने के लिये समूची सड़क तुम्हारे ही लिये सुरक्षित नहीं कर दी गयी है ?" यह उस प्रेम का इतिहास है जिसका वर्णन इतनी आंतरिक भाषा में किया जाता है। जो प्रेम तुम भगवान् से करते हो अथवा जो प्रेम भगवान् तुमसे करता है वह इतना अहं भावापन्न या क्षणस्थायी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नहीं होता है। भगवान् कभी तुम्हारा त्याग नहीं करेंगे, और तुम्हें भी भगवान् पर से अपनी निष्ठा नहीं समेटनी चाहिये।

जो यज्ञ आज पूर्ण हुआ है वह मंत्र से स्पंदनों और शक्ति के निर्गमन का प्रदर्शन है। ऐसे-ऐसे शक्ति शाली मंत्र हैं, जो व्यक्तित्व का पुर्नानिर्माण करने और भगवान् की कृपा साधक पर उतारने में समर्थ हैं। 'ॐ' अथवा प्रणव ही एक ऐसा मंत्र है। बच्चों को एक तीन पहिये वाली गाड़ी से चलना सिखाया जाता है। वे इस गाड़ी को अपने हाथों से ठेलकर आगे बढ़ाते हैं और स्वयं गाड़ी के पीछे खड़े होते हैं। ॐ भी एक ऐसी ही तीन पहिये की गाड़ी है। तीन अक्षर अ, उ, म ही इसके तीन पहिये हैं। आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर सुरक्षा पूर्वक शीघ्रता से चलना सीखो यह गाड़ी तुम्हारी सहायता करेगी। अथवा राम भी एक दूसरा मंत्र है इसके भी गणनात्मक स्पंदन वही हैं। अ का मान ० उ का मान २ और म का मान ५ इस प्रकार ओ३म् का मान ७ होता है; जब कि राम में र+आ+म का मान २+०+५=७ होता है। इस प्रकार दोनों शब्द ध्वन्यात्मक और आध्यात्मिक मानों में समान क्षमता वाले हैं। प्रत्येक जीव कोहम् ? प्रश्न के साथ जन्मता है। उसके ओठों पर यही प्रश्न रहता है। यही प्रश्न मैं कौन हूँ ?' सभी के अंतःकरण को बोझिल बनाये हुये है। और इसका उत्तर प्रत्येक श्वास "सोऽहम्" 'वह मैं हूं' कह कर देती है। परन्तु उतावला मन अन्दर जाने वाली श्वास का 'सो' और बाहर निकलने वाली श्वास का 'हम' एक ओर हटा देता है और विश्व के दृश्यमान पदार्थों को अपनी क्रीड़ा के खिलौने समझकर उन्हीं में मग्न हो जाता है। इस प्रकार प्रश्न का उत्तर समझ में आने ही नहीं दिया जाता है क्योंकि व्यक्ति का अहं अस्थाई मनोरंजनों में लिप्त हो जाता है। अनुभव करो तुम्हारी प्रत्येक श्वास उस आदि प्रश्न का सही उत्तर दोहराती है और अपने को उसी (भगवान् रूपी महासागर) की एक तरंग मानते हुये रहो अर्थात् तुम्हारी चेतना भी उसी असीम अनंत महा चेतना अर्थात् भगवान् का अंश ही है। तुम कह सकते

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हो कि तुम भगवान् की सत्ता में विश्वास ही नहीं करते जब तक कि तुम्हें स्थूल अनुभव स्वयं नहीं हो जाता है। अच्छा, तुम यह तो विश्वास करते हो कि तुम्हारा जन्म अमुक तिथि को अमुक मास में अमुक वर्ष में हुआ था। तुमने तो इसका विश्वास स्वीकार कर लिया है, इसी प्रकार की अनेक बातों का बिना स्थूल अनुभव स्वयं किये मान लेते हो। हर जगह और हर काम का स्थूल अनुभव ही नहीं प्राप्त किया जाता है और कभी-कभी ऐसा करना वांछनीय भी नहीं होता है; तभी जीवन सरल गति से चल पाता है। अनेक ऋषियों की साक्षी पर संतों और वैज्ञानिकों की साक्षी पर कि उन्होंने स्वयं ऐसा अनुभव प्राप्त किया, तुम भी इसे स्वीकार करो इसी में कल्याण है।

जिनकी सत्यता और सच्चरित्रता में तुम्हें अडिग और अटूट विश्वास है वे गुरु होते हैं। वे स्वयं परीक्षण कर सत्य ज्ञान की शिक्षा देते हैं जिसे कि उन्होंने सच्ची साधना के फलस्वरूप प्राप्त किया हुआ होता है। एक दिन महर्षि गौतम ने अपने शिष्यों को बुलाकर कहा, "तुम जानते हो कि जिस सूखा ने इस क्षेत्र पर अधिकार कर लिया है वह बढ़ ही रहा है, उसके उतार के अभी कोई लक्षण नहीं हैं, यह शीघ्रता से बढ़ रहा है। इसलिये इस आश्रम के पशु चारे-पानी के अभाव से कष्ट पा रहे हैं, इन मूक पशुओं की पीड़ा मुझसे नहीं देखी जाती कि ये तड़पते रहें और मैं शान्ति से पठन-पाठन का कार्य पूर्ववत् करता रहूं। तुममें से कोई एक इन्हें कहीं अवश्य बाहर ले जावे, जहाँ प्रचुर चरागाह और जल की सुविधा हो। जब यह आपत्ति काल समाप्त हो जावे तब इन्हें यहाँ वापस लाना"। अनेक शिष्यों ने इस महत्कार्य को सुनकर अपना सिर नीचा कर लिया, वे काँप उठे और एक दूसरे की आड़ में छिपने का प्रयत्न करने लगे, जिससे गुरु को उनका ध्यान ही न आवे। परन्तु सत्यकाम उठकर सामने आये और उन्होंने पशुओं को बाहर ले जाने के अवसर को बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया। अन्य शिष्य उसके आस-पास सहानुभूति प्रकट करते हुये खड़े हो गये, परन्तु सत्यकाम को इसकी कोई आवश्यकता ही न थी। उन्होंने कहा कि वह

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

(सत्यकाम) अकेला ही दूर जंगल में रहेगा ग्रौर वहाँ आश्रम की कोई सुविधा उसे नहीं प्राप्त होगी। यहाँ तक कि अनिश्चित दीर्घ काल तक उसे पौष्टिक भोजन भी न मिल सकेगा। उसने उत्तर दिया कि गुरुजी की शुभकामनाओं और आशीर्वाद से उसे पर्याप्त सुरक्षा और पोषण प्राप्त होता रहेगा। उसे किसी साथी की आवश्यकता ही नहीं थी क्योंकि वह स्वयं ही अपना सर्वोत्तम मित्र और साथी था। कुछ मित्रों ने साथ चलने की इच्छा भी प्रकट की परन्तु उसने सभी को रोक दिया क्योंकि गुरु ने इसको आवश्यक नहीं समझा होगा तभी तो नहीं कहा। (यदि आज का दिन होता तो कोई न कोई सुझाता कि एक ट्रांजिस्टर रेडियो साथ लेते जाओ जिससे अपनी प्रिय फिलम के गीत सुनते रह सकोगे।)

चार सौ पशुओं के साथ प्रस्थान करते हुये सत्यकाम ने गुरुजी से आशीर्वाद माँगा और पूछा वह कब लौटेगा। गुरुजी का स्पष्ट उत्तर था कि ज्योंही पशुओं की संख्या १००० तक पहुंचे तो आश्रम को प्रस्थान कर आवे। उसने अपना नाम सत्यकाम सत्य सिद्ध कर दिखाया। वह पशुओं को हाँक कर एक हरी-भरी घाटी में ले गया और वहीं वह उनके साथ रहने लगा। वह प्रातः काल ब्राह्ममुहूर्त में उठ जाता प्रार्थना में गाता, सूर्य नमस्कार के लिये दण्ड प्रणाम करता और अधिकांश समय जप, ध्यान में बिताता साथ ही पशुओं की देख-रेख में भी कोई कमी नहीं रहने पाती थी। उसमें घर लौटने की कोई व्यग्रता भी नहीं थी और अपना समय बड़ी शान्ति से बिता रहा था। (यदि आज का दिन होता तो वह नित्य पशुओं की गिनती करता और आवश्यकता से अधिक एक दिन भी बाहर न बिताता। अथवा संभव होता तो कुछ इधर-उधर से पशु येन-केन प्रकारेण मिलाकर संख्या १००० पूर्ण कर लेता चाहे फिर कुछ कमी ही रह जाती तो उसके लिये कुछ न कुछ कारण बता सकना कौन कठिन कार्य होता।)

एक दिन प्रातःकाल जब सत्यकाम नित्य कृत्य से निश्चिन्त हुआ देवराज

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इन्द्र उसके समक्ष प्रकट हुये, क्योंकि इस अकेले चरवाहे की देखरेख देवगण रख ही रहे थे। इन्द्र ने उसे बतलाया कि पशु संख्या अब १००० की हो गयी है इसलिये अब वह लौट सकता था। इन्द्र ने प्रस्ताव किया कि वह उसे सुरक्षित सुखपूर्वक वापस पहुँचा देगा। मार्ग में उन्होंने चार भिन्न-भिन्न ग्रामों में चार रात्रि पड़ाव किया। प्रत्येक रात्रि को इन्द्र ने उन्हें एक-एक वेद पढ़ा दिया; इस प्रकार आश्रम पहुंचते-पहुंचते सत्यकाम को चारों वेदों का भी असाधारण ज्ञान हो गया। उसका मुखमण्डल अलौकिक आभा से दीप्त था, क्योंकि अब वेदों का ज्ञान उसको आलोकित कर रहा था, और यह ज्ञान और किसी के नहीं स्वयं देवराज इन्द्र द्वारा दिया गया था। जीवन के उद्देश्यों का साक्षात्कार करने के लिये उपर्युक्त प्रार्थनायें ऋग्वेद में संग्रहीत हैं। यजुर्वेद में समयोपयोगी कृत्य और कर्मकाण्ड का विधि-विधान पूर्वक वर्णन है। सामवेद में काव्य और संगीत के द्वारा भगवान् की प्रसन्नता के लिये स्तुतियों का संग्रह है। अथर्ववेद स्वास्थ्य दीर्घ, जीवन और जातीय सुरक्षा के गुप्त मंत्रों का संग्रह है। वह अब इन चारों का अधिष्ठाता हो चुका था।

विनम्रता और श्रद्धा का पुरस्कार यही होता है। अब इन नगरों और उपनगरों से ये गुण बड़ी शीघ्रता से अदृश्य होते जा रहे हैं; और विनाशकारी कीटाणु देहातों की फसल को भी नष्ट करने को फैलते जा रहे हैं। परन्तु, ये अभी तक ग्राम्य-जीवन की सरलता और हार्दिकता को प्रभावित नहीं कर पाये हैं। इसी कारण से मैं ग्रामों को अधिक पसंद करता हूं। मैं पुट्टपर्ती को छोड़ कर किसी अन्य स्थान या नगर में नहीं जाऊँगा। ग्राम में मनुष्य की सहायता करने को यदि उसके मकान में आग लग जावे, या कुंआ बैठ जावे, तो हर व्यक्ति आगे बढ़ आता है और वश भर सहायता करता है।

नगरों में तो तुम उस समय भी लोगों को आमोद-प्रमोद में, कोलाहल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करते हुये मग्न पाओगे जब कि उनके पड़ोस के घर में कोई प्राण त्याग कर रहा हो। बड़ों के प्रति सम्मान, दैवत्व में विश्वास अब भी ग्रामों में विद्यमान है। धर्म की पुनर्स्थापना में वे ही सहायक होंगे। मेरे आने का भी तो यही उद्देश्य है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

५६ मेरे सन्देश की व्याख्या

(दशहरा, प्रशान्ति निलयम्, ११-१०-१९७०)

दशहरा के त्यौहार ने तुम्हारे नेत्रों, कानों और मन को १० दिन तक आनन्द से सिक्त किया है। और, इस मूल्यवान अनुभव से प्रभावित शरीरों को लिये हुये, तुम अब अपने घरों को लौट रहे हो। आओ मैं कुछ बता दं जिससे तुम्हें प्रकाश मिले और जीवन यात्रा के भार में भी कमी होवे।

मानव ने सदा प्रकृति को जीतने का प्रयास किया है। इस कार्य में उसने अपनी शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक सभी दक्षताओं का प्रयोग किया है। प्रकृति त्रिगुणात्मक है, शुद्ध सतोगुण सम्पन्न, क्रियाशील राजसिक, और जड़ अपरिवर्तन वादी निष्क्रिय तमोमयी। इसलिये सत्य, प्रेम और सहन-शीलता इन तीन गुणों का विकास करके ही हम इस पर विजय पा सकते हैं। जब मनुष्य अपने में दैवी शक्ति का आह्वान करता है तो वह सरलता से प्रकृति पर विजय प्राप्त कर लेता है, जो कि स्वयं भगवान् की ही अभिव्यक्ति है।

जो दैवत्व तुम्हीं में निहित है, उससे शक्ति प्राप्त करने की शिक्षा गीता से मिलती है। मन में जब तुम दो पहियों वाले रथ में, जिसमें ४ श्वेत घोड़े जुते हैं और कृष्ण जिसके सारथि हैं, बैठे हुये अर्जुन की कल्पना करते हो; कृष्ण के हाथ में घोड़ों की बागडोर है वे अर्जुन के प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं; तो उस दृश्य के महत्त्व का अधिकांश भाग भूले रहते हो।

अर्जुन 'जीव' और कृष्ण 'देव' हैं। जब दोनों संयुक्त होते हैं तो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रकथनीय परिणाम होते हैं । तुम्हारे पास कितनी ही अपार विद्युच्छक्ति हो; परन्तु जब कोई माध्यम हो तभी वह कार्य रूप में व्यक्त होती है । इसीलिये कृष्ण को ग्रर्जुन के माध्यम की आवश्यकता थी । जिससे कि धर्मसंस्थापन का कार्य पूरा होवे। ग्रर्जुन का ग्रर्थ 'श्वेत' 'पवित्र' 'निष्कलंक होता है ग्रतः वे उपयुक्त यंत्र थे। ग्रन्य चारों भाइयों को चार घोड़े ही समझ लो। वे भी निष्कलंक ग्रौर श्वेत थे। ग्रर्जुन ने उपयुक्त हृदय मन्दिर प्रस्तुत किया जिसमें भगवान् स्वयं ग्रासीन हुये। पाँचों भाई पाँच महाभूतों के प्रतीक थे; पृथ्वी, जल, ग्रग्नि, वायु ग्रौर आकाश। वे मानव की सक्रियता की प्रतीक पंचवायु के भी प्रतीक थे। १०० के १०० सभी कौरव बन्धु नाश हो गये क्योंकि वे इस सिद्धान्त को मानते थे कि साध्य प्राप्ति के लिये साधन कुछ भी हो सकते हैं ग्रौर वे व्यक्तिगत बड़प्पन के ग्राकांक्षी थे। पाण्डवों ने ग्रपने ग्रापको पूर्णतया भगवान् की इच्छा पर छोड़ दिया था; इसलिये वे दैवत्व से शक्ति प्राप्त कर सफल हुये। अंत में वे सर्वस्व त्याग करके हिमालय की नीरवता के पथ के पथिक बन गये ग्रौर एक-एक करके शरीर को त्यागते गये। केवल ज्येष्ठ पाण्डव ही स्वर्ग तक पहुंचने में सफल हुये। उनका नाम धर्मराज सार्थक ग्रौर सत्य था।

धर्म के क्षेत्र में भी लोग कल्पित चर्या को ही दोहराते हुए संतुष्ट रहते हैं। किसी से पूछो भगवान् कहाँ है, वही उत्तर मिलेगा 'सर्वत्र'। परन्तु अनेकों के हृदय उससे पूर्ण नहीं हैं। संभवतः 'सर्वत्र' शब्द के ग्रर्थ में उनके हृदय का ग्रन्तस्तल शामिल नहीं है। संभवतः उनकी जिह्वा ही शामिल है। सफलता का राजपथ 'भगवान् की पूजा' है। यह एक दूसरा ही कथन है। परन्तु भगवान् की पूजा केवल चित्रों, मूर्तियों के द्वारा ही की जाती है। उसे सभी जीवित प्राणियों में नहीं देखा जाता है और न मान्यता दी जाती है, सौंदर्य, सामाञ्जस्य, संगीत, सत्य ग्रौर सत्कार्य भी उसके अस्तित्व का उन्हें बोध या स्मरण नहीं कराते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बहुत अधिक आशा करने के प्रतिकूल चेतावनी देने के लिये मैं तुम्हें एक तथ्य बतलाता हूं। इस प्रकार पूजा करो, धूपदेना, पुष्पार्पण, नाम या यशोगान द्वारा भगवान की प्रशंसा करना तथा अन्य कृत्य समय का सदुपयोग देने वाले सत्कार्य और सराहनीय हैं। परन्तु जब तक हृदय की स्वच्छता, सहानुभूति का विस्तार, अपने दैवत्व में गहरी निष्ठा नहीं होती तब तक इन सब को साधना का नाम देना अनुचित रहेगा। जो लोग अपने को आस्तिक कहते हैं उनमें से ९९-३/४ प्रतिशत लोग यह कहते सुने जा सकते हैं, "मैं तो भगवान् में विश्वास करता हूँ, परन्तु वही मुझे कष्ट में रख रहा है; और अमुक व्यक्ति नास्तिक है; उसी पर भगवान् अपनी कृपा की वर्षा कर रहा है।" क्या यह भक्ति अथवा समर्पण है ? भक्ति तो अविचलित ही रहनी चाहिये चाहे जो भी घटना घटे। प्रह्लाद की भक्ति और विश्वास अचल और अडिग थे। उन्होंने इस सीमा तक अपने को समर्पित कर दिया था कि किसी प्रकार का अत्याचार या उत्पीड़न उनकी निष्ठा को विचलित न कर सका। जब तुम विचारना और निर्णय देना प्रारम्भ करते हो तो तुम्हारे निर्णय सदा तुम्हारे पूर्वाग्रहों, और सूचनाओं के आधार पर ही दिये जाते हैं; इससे तुम केवल यही प्रदर्शित करते हो कि तुम्हारा विश्वास छिछला है, वह तो केवल अच्छे मौसम की अनुकूल घटना मात्र है।

जो भगवान् से संयुक्त हैं, भगवान् के साधक हैं, भगवान् से अवगत हैं, भगवान् की पूजा करते हैं, उनमें कुछ स्पष्ट चिन्ह होते हैं जिससे वे पहचाने जा सकते हैं। इस प्रकार के शीघ्र निर्णय देना समर्पण की भावना के सर्वथा प्रतिकूल है। फिर ऐसे लोगों का हृदय सदा दयालु होता है। यदि एक व्यक्ति हाथ में माला को संचालित करता हुआ नासाग्र पर दृष्टि रखे और अपने चतुर्दिक्र संकट के तांडव नृत्य की उपेक्षा करता रहे तो अधिक से अधिक हम उसे आलसी ही कह सकेंगे इससे अधिक उसका कोई महत्त्व नहीं। उठो माला को थैले में रखो ओर स्वयं सचेत होकर संकट का सामना करो—लोगों के दुख में हाथ बटाओ, यही सच्चा आध्यात्मिक मार्ग है। अपना सारा समय

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पत्थर की मूर्तियों, चित्रों और प्रतिमाओं के साहचर्य में ही मत बर्बाद करो। प्रत्येक जीवित, सक्रिय व्यक्ति में उस भगवान् का, जो सर्व शक्तिमान, अनुपम, सुन्दर और कल्याणकर्त्ता है, दर्शन कर सको। भगवान् आकाश से भी अधिक सूक्ष्म है वह हर स्थान को अपनी महिमा से भर रहा है। इसे स्मरण रखो और उसकी अभिव्यक्तियों (यानी जीव मात्र) की जहां जब अवसर मिले सेवा करते रहो।

कुछ संस्थायें लोगों को 'ध्यान' की शिक्षा देने का दावा करती हैं, और 'ध्यान' की कक्षायें चलाई जाती हैं। इनमें कैसे कोई विश्वास कर सकता है? हाँ, यह संभव है कि यहां मेरूदंड सीधा रख कर बैठना सिखा दिया जावे, अन्य और आसन और शारीरिक व्यायाम सिखा दिये जावें। परन्तु कोई किसी की एकाग्रता में कैसे वृद्धि करा सकता है? भगवान् को प्रेम करो, फिर कोई तुम्हारा ध्यान उस पर से नहीं हटा सकेगा। वाल्मीकि तो एक प्रख्यात डाकू थे, यात्रियों को आतंकित करना और क्रूरतापूर्वक उनकी हत्या करना ही उनका व्यवसाय हो गया था। उनके व्यक्तित्त्व में रजोगुण का प्राधान्य था। जब वे सप्तर्षियों के सम्पर्क में आये और उनका उपदेश सुना तो उनकी शूरता साहसिकता और लगन क्षण भर में ही भगवान् की ओर मुड़ गयी; वे इतने कठोर तपस्या में लग गये कि उनके अचल समाधिस्थ शरीर पर चींटियों ने मिट्टी जमाकर अपनी बाम्बीं का निर्माण कर लिया। फिर भी वे अविचलित रहे; और वाल्मीकि नाम से ऐसे विख्यात हुये कि अब तो उनका पूर्व नाम ही अज्ञात हो गया है।

तुम्हें जप और ध्यान की सफलता के लिये किसी पर भरोसा न करना चाहिये और न मंत्र दीक्षा के लिये किसी ऋषि से सम्पर्क करने की आवश्यकता है। अपने हृदयस्थित भगवान् से प्रार्थना करो और तुम्हें आवश्यक पथ-प्रदर्शन मिलेगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भगवान की ओर अपने मन को मोड़ो, अपने को भगवान् के लिये अर्पित कर दो। तभी तुम्हारा जीवन आनन्द की एक निरंतर जारी रहने वाली धारा के समान हो जावेगा। एक पंखा लेकर जब तुम अपने ऊपर डुलाते हो तो तुम्हें सुख प्राप्त होता है। इसी प्रकार मन को यंत्र बनाकर उत्साह और तेजी से भगवान् की ओर इसे चालित करो तो तुम्हें मुक्ति का आनन्द मिल सकेगा।

राम का अर्थ आनन्द भी होता है जो कि प्रत्येक हृदय में निहित है; इस नाम का जाप करो और आनन्द की तरंगों के रूप में जाप की प्रतिध्वनि गूंजने लगेगी। झूठा बहाना करके मत दिखाओ, इससे तो दम्भ और पाखण्ड की ही वृद्धि होगी। शुद्ध, सच्चे, और निष्ठावान बनो। भारतीय संस्कृति के उत्तराधिकारियो! तुम्हें प्रतिमा, चित्र और मूर्ति से आगे भी बढ़ना है; ये तो आध्यात्मिक विद्यालय की किंडर गार्टेन कक्षायें (बच्चों के कक्षा १ से पूर्व शिक्षा की कक्षा) हैं। दैवत्य की शक्ति जिसका कोई नामरूप नहीं है, उसे जानने का प्रयास करो। उस निरुपाधि सर्वोपरि एक ब्रह्म के दिव्यलोक में प्रवेश करने के लिये अधिक ऊंचे उठते जाओ।

लोग मेरे विषय में कुछ भी कहें मैं इससे बाल बराबर भी अपने पथ से विचलित नहीं होऊंगा। मैं किसी व्यक्ति या वस्तु से भयभीत नहीं हूं। सत्य को भय नहीं होता है, असत्य ही प्रत्येक परछाईं से कांपता रहता है। इस शरीर का नाम 'सत्यनारायण' है और इसमें जो तत्व है वह भी सत्य है। इस प्रकार सत्य के आवरण में सत्य स्थित होने से यह 'सत्यस्यसत्यम्' हो गया है। यह शरीर मानव जाति को असत्य से सत्य की ओर ले जाने के लिये ही धारण किया गया है।

मैं तुम्हारी तरह खाता-पीता हूं, चलता-फिरता हूं, तुम्हारी भाषा में बात करता हूं और व्यवहार करता हूं कि तुम स्वयं पहचान सको यह तुम्हारी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रावश्यकता के कारण है, ग्रन्यथा मेरी तो कोई ग्रावश्यकता ही नहीं होती। मैं तुम्हें दैवत्व की ग्रोर मोड़ता हूं, तुम्हारा विश्वास, प्रेम, ग्राज्ञापालकता को तुम्हारे मध्य में रहकर जीतता हूं, तुम्हीं में से एक होकर, जिसे तुम देख सकते हो, सुन सकते हो, बात कर सकते हो, स्पर्श कर सकते हो, श्रद्धा-भक्ति भी कर लेते हो, मैं तुम्हारा विश्वास प्राप्त कर सकता हूं। मेरी योजना तुम्हें सत्य के ग्रन्वेषकों में बदल देने की है। मैं सदा सर्वत्र विद्यमान रहता हूं। मेरी इच्छा सभी विघ्न-बाधाओं के रहने पर भी पूर्ण होगी। मैं तुम्हारे सावधानी से छिपाये गये गुप्त भूत, भविष्यत, वर्तमान तीनों का ज्ञाता हूं। मैं सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ हूं। फिर भी मैं इन शक्तियों को ग्रकारण, ग्रसमय, अनुचित ढंग से केवल प्रदर्शन या खिलवाड़ के लिये ग्रभिव्यक्त नहीं करता हूं। क्योंकि मैं एक उदाहरण ग्रौर प्रेरणा हूं जो कुछ मैं करता हूं या नहीं करता हूं दोनों स्थितियों में। मेरे संदेश की व्याख्या मेरा जीवन है।

उदाहरण के लिये तुमने ग्रवश्य देखा होगा कि मैं कभी किसी स्त्री को ग्रकेले 'साक्षात्कार' के लिये नहीं बुलाता हूँ। मैं स्त्रियों को १०,१५ की टोलियों में बुलाता हूँ, मैं चाहता हूँ तुम इसे ध्यान से समझ लो कि व्यक्ति को भिन्न लिंग से अत्यधिक सावधानी से व्यवहार करना चाहिये। क्योंकि, यद्यपि मैं त्रिगुणातीत हूँ ग्रौर चूंकि यह शरीर पुलिंग धारी है, मैं पुरुषों ग्रौर स्त्रियों दोनों को ही शिक्षा देना चाहता हूँ कि वे अपना सामाजिक व्यवहार ऐसा रखें कि वह लेश मात्र संदेह या 'घुसपुस' वार्ता का पात्र न रहे।

फिर, सदा पूरे २४ घण्टों में सक्रिय ग्रौर व्यस्त रहता हूं। प्रतिदिन डाक ग्राती है, हजारों पत्र ग्राते हैं, इनके ग्रतिरिक्त हाथ में भी तुम लोग सैकड़ों पत्र देते हो। फिर भी मैं किसी की सहायता लिफाफा खोलने तक में नहीं लेता हूं। क्योंकि तुम मुझे ग्रपनी व्यक्तिगत समस्याग्रों का विवरण इस विश्वास से लिखते हो कि तुम्हारा मुझमें ग्रटूट विश्वास है कि इसे मैं ही ग्रकेला पढ़ूंगा। यद्यपि तुम एक-एक पत्र लिखते हो, इतने से ही प्रतिदिन एक बड़ा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पुलिन्दा पत्रों का हो जाता है, और मैं इन सभी को पढ़ता हूं। तुम चाहो तो पूछ सकते हो कि मैं कैसे प्रबन्ध करता हूं ? सुनो, बात यही है कि मैं एक क्षण भी व्यर्थ नहीं जाने देता हूं।

ग्रौर इतना सब मैं किसी व्यक्तिगत लाभ के लिये नहीं करता हूं क्योंकि मैं तो तुम्हारे ही लिये ग्राया हूं। मैं कभी किसी की सहायता नहीं लेता हूं। मैं तो सहायता देता हूं लेता नहीं। मेरे हाथ देते हैं, लेते कभी नहीं। इससे यही निष्कर्ष निकालो यह अवश्य ही दैवी शक्ति है केवल मानवीय नहीं।

तुममें से कुछ को ग्राश्चर्य होता होगा कि, "स्वामी जी इतने विशाल पैमानों पर इतने त्यौहारों और उत्सवों का प्रबन्ध कैसे कर लेते हैं ? वे किसे-किसे क्या-क्या कार्य सौंपते होंगे ? मैं इस-उस व्यक्ति को कार्य नहीं सौंपता और न किसी से सुझाव लेता हूं या विचार-विमर्श करता हूं। यह सब दैविक शक्ति से होता है जो प्रेम की शक्ति के माध्यम से कार्य करती है। उदाहरण के लिये यहां हजारों ही एकत्रित होते हैं, फिर भी पूर्ण शान्ति बनी रहती है। कौन सी शक्ति इन सब को बाध्य करती है ? यह केवल प्रेम की बाध्यता है। ग्रन्य स्थानों पर जहां १०० व्यक्ति इकट्ठे होते हैं वहाँ १५० सिपाही उन्हें शान्त ग्रौर व्यवस्थित रखने को मौजूद रहते हैं। यहां शान्ति रखने के लिए किसी की ग्रावश्यकता ही नहीं पड़ती है जो यह देखे कि लोग शान्त रहें। क्योंकि यहाँ ईश्वर ही स्वामी है ग्रौर सृष्टि ग्रानन्द से नृत्य करती है। तीसरी सत्ता तो यहाँ है हा नहीं। यहां तो केवल पुरुष ग्रौर प्रकृति हैं। आंख के कोने से एक संकेत मात्र से ही वस्तुयें ग्रौर व्यक्ति सही परिणाम देने के लिए सही दिशा में सही क्रिया करने लगते हैं। प्रेम ही सक्रिय बनाता है, ग्रौर प्रेम ही उन सब को पूर्ण किये हुए है।

जब कृपा करने वाला यहीं उपस्थित है, तो तुम उन व्यक्तियों के पीछे भागते हो जो यह दावा करते हैं कि उन्हें मुझसे ग्रमुक वस्तु प्राप्त हुयी है या

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उन्हें आशीर्वाद दिया गया है। जब तुम्हारे पास यहां कामधेनु है, फिर एक गाय की खोज और रखने की इच्छा क्यों करते हो ? कामधेनु तो तुम्हारी सभी इच्छाओं की पूर्ति कर सकती है। जब तुम्हारे पास यहीं कल्प-वृक्ष है तो फिर किसी वृक्ष के पास फलों के लिए क्यों जाते हो ? कल्प-वृक्ष तो तुम्हें जो माँगो सो वह सब दे सकता है। जब तुम्हारे पास यहां सुमेरु पर्वत (सोने का पहाड़) है तो तुम अन्य लोगों से, जो स्वयं भिक्षुक हैं, क्यों सोने चाँदी के लिये घिघियाते और चाटुकारी करते हो ? जब तुम्हारे बीच में स्वयं भगवान् तुम्हें सहारा देने और पोषण करने को आया है तो तुम क्यों उजड्ड, कठोर अस्तित्वों के समक्ष नतमस्तक होते हो ? उन जगहों से बचो जहां दान, दक्षिणा, उपहार लेकर आध्यात्मिक उत्थान के लिये उपदेश और आशीर्वाद दिया जाता है।

सच्चे मार्ग पर सीधे चले जाओ, इधर-उधर गलियों में धूर्तों और नीम-हकीमों द्वारा मत आकर्षित होओ। मद्रास और मैसूर की कुछ घटनाओं की तीखी निन्दा होनी चाहिये। मैं जानता हूं कि कुछ लोग ऐसे हैं जो यह घोषित करते हैं, "अब भक्तों की संख्या बहुत बढ़ गई है विशेष कर इस क्षेत्र में; इसलिये बाबा ने यह क्षेत्र मुझे सौंप दिया है और आदेश दिया है कि शिक्षा देने और पथ-प्रदर्शन करने का कार्य मैं संभाल लूं; इसलिये मेरे कार्यों की सराहना करो और मेरी पूजा करो।" मैं इस ढंग से कभी किसी को कार्य नहीं बांटता हूं, और न किसी को शक्ति देता हूं; और ऐसी क्षुद्र प्रकृति और निम्न कोटि की विचारधारा के लोग मेरी कृपा के पात्र नहीं बन पाते हैं। नहीं, कभी नहीं। मैं जो इस विश्व का भार उठाये हुये हूं, क्या एक क्षेत्र या कुछ अधिक संख्या में भक्त बढ़ जाने से कार्य-भार सीमातीत हो जावेगा ? मैं तुम लोगों की मूर्खता पर भी आश्चर्य करूंगा यदि तुम ऐसे लोगों की उपर्युक्त मूर्खताओं को मान्यता दोगे, मैं तो ऐसे लोगों और दयनीय नीम-हकीमों के पीछे लगने वालों को दया का पात्र ही समझता हूं। इससे तो उनके लिये यही अच्छा था कि भिक्षा-पात्र लेकर द्वार-द्वार भिक्षान्न के लिये

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाते और उदरपूर्ति कर लेते तो इस पाखण्ड और पापपूर्ण जीवन से तो बच ही जाते !

ऐसे लोगों की बात पर मत ध्यान दो और न पथभ्रष्ट होओ। एक स्थिति से ऊपर उठ कर उच्चस्थिति में पहुंचने के लिये अपनी साधना जारी रखो। भगवान् स्वयं ही तुम्हारे गुरु बनकर अन्दर से पथप्रदर्शन करेंगे। वह मीरा और हेमरेड्डी के स्वयं ही गुरु बन गये थे।

ऐसा मत घोषित करो कि भगवान् का यह नाम अन्य नामों की अपेक्षा श्रेष्ठ है। यह कहना कि 'राम' श्रेष्ठतर है या 'शिव' श्रेष्ठतर है अथवा यह कि साई बाबा अवतार है और वह सभी से अधिक पूर्णत्व युक्त है—इस सबसे यही पता चलता है कि तुम अभी तक यह नहीं समझ पाये हो कि 'दैवत्व' होता क्या है। राम एक ऐसा शब्द है जिसमें नारायण का 'रा' और नमः शिवाय का 'म' संयुक्त है; ये दोनों वैष्णवों और शैवों के मंत्र हैं। इसलिये राम का अर्थ 'शिव और विष्णु दोनों के गुण और शक्तियाँ' है। अथवा राम में 'हर' अर्थात् शिव का 'रा' और 'उमा' का (शिव की शक्ति का) म है; इस प्रकार राम 'शिवशक्ति' का नाम है। जब सभी नामों की एकता के स्वर से प्रत्येक नाम निनादित है तो दलबंदी या संप्रदायवाद का कहां अवसर रह जाता है ?

कुछ लोग मुझसे प्रार्थना करते हैं, "स्वामी जी, मेरे परिवार के सभी लोग तिरुपति की तीर्थ यात्रा पर जाते हैं, आप उनके मन ऐसे क्यों नहीं कर देते कि वे यहाँ आपके पास आवें ?" कैसा मूर्खतापूर्ण प्रश्न है ? भगवान् की विविधतापूर्ण महिमा और मेरे वास्तविक स्वरूप के विषय में इन लोगों का अज्ञान कितना बढ़ा हुआ है !

अपने मस्तिष्क को घृणित और क्षुद्र विचारों से स्वच्छ कर लो। मैं देखता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हूँ कि कुछ लोग अपने रूमाल बिछा कर दरियों पर बैठ पाते है। तुम्हें लगता है कि असंख्य भक्तों के चरण पड़ने से उनकी धूलि से यह गंदी हो गयी हैं। अच्छा, जब तुम्हें स्वच्छता का इतना ध्यान है कि बैठने की जगह धूलि-मैल से रहित हो तो तुम्हें अपने हृदय, जहाँ मुझे बिठाना चाहते हो, की स्वच्छता पर कितने गुना अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। जप, तप के स्वच्छताकारक पदार्थ को लेकर प्रेम के जल से इसे धोकर स्वच्छ करो। बिना जल के भी सफाई नहीं हो पाती है वह भी आवश्यक है। अपनी स्थिति के सभी कर्त्तव्यों की पूर्ति करते रहो। मान लो कि भगवान् ने ही तुम्हें उन कार्यों के लिये उस स्थान पर नियुक्त किया है। जो कार्य तुम मुझे अर्पित करते हो वह मुझे प्राप्त हो जाता है। इस बात का पश्चाताप मत करो कि तुम पुट्टापर्ती मेरे दर्शन को नहीं आ सके। जहाँ हो वहीं नमस्कार कर लो वह मुझे उसी क्षण प्राप्त हो जाता है, मुझ तक पहुँच जाता है।

जब तुम्हारा मन चिन्ता या शोक से क्षुब्ध होवे, नाम कीर्तन करने लगो। एक प्याला काफी तैयार करने के लिये एक प्याला में काफी का काढ़ा और दूसरे प्याले में दूध का ले लेना ही पर्याप्त नहीं होता है। तुम्हें एक प्याले का पदार्थ दूसरे में डाल कर लौट-पौट कर अच्छी तरह मिलाना पड़ता है। वैराग्य का काढ़ा श्रद्धा भक्ति के दूध में अच्छी तरह मिलाओ। तब संतोषप्रद पेय तैयार हो पाता है। अपने हृदयों में इन शब्दों की अच्छी तरह गाँठ बाँध कर साथ लेते हुये अपने-अपने घरों को लौट जाओ। एकान्त में शान्ति से इन पर मनन भी करना। तब तुम्हारे लिये इनमें से कुछ विचारों को कार्य रूप में परिणत करना सरल हो जावेगा। इसी प्रकार दैनिक साधन से आध्यात्मिक उपलब्धियों के शिखर पर कदम, कदम चढ़ते जाओ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६० भगवान् की किरण

(दीपावली, प्रशान्ति निलयम् २९-१०-१९७०)

उपनिषद कहते हैं कि पांच कोषों, अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय के अन्दर मनुष्य की आत्मा 'दैवी प्रेम' की एक चिनगारी है। यह उसी प्रेम की सुगन्धि है जो उससे, वस्तुओं और व्यक्तियों और विचारों के प्रति प्रेम के रूप में, निकलती है। वह प्रेम तो सदा अभिव्यक्ति के लिये उमड़ता-घुमड़ता और तरंगित होता रहता है कि बाहर फैलकर सभी कुछ अपने में डुबा लेवे। परन्तु भय, लोभ, अहंकार और महत्त्वाकांक्षा की उलझनें उस चिनगारी को बढ़ने, कोषों को प्रकाशित करने और विश्व में आलोक फैलाने से रोकती रहती हैं।

आज दीपमालिका—प्रकाश का त्यौहार है। अर्थात् प्रेम, ज्ञान, जिसे प्रकाश बतला कर प्रशंसा की गयी है, का त्यौहार है। परन्तु प्रायः यह ज्ञान कुहासे की बदली, अपराधों के अस्त्र, सिर पर बोझा, उदारता के हाथ को पीछे खींच लेना, पैरों में बेड़ी के रूप में उपस्थित होता है। यह ज्ञान तभी उद्धारक बन पाता है जबकि यह प्रेम के द्वारा अर्जित किया गया हो और प्रेम पूर्वक ही इसका अभ्यास किया जावे। केवल प्रेम से ही प्रकाश उत्पन्न होता है।

सर्वप्रथम माता की गोद में ही प्रेम व्यक्त होता है। प्रेम की भूखी आंखें माता की दुलराती हुयी आँखों से अटक जाती हैं। फिर यह पिता और भाइयों-बहनों और कुटम्बियों तक आगे बढ़ता जाता है। आगे बढ़ कर खेल के साथियों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सहपाठियों, ग्राम नगर, राष्ट्र, सहभाषी विश्व और उसके सृष्टा तक विस्तृत होकर पहुंच जाता है। शरीर में निवास करने वाला 'मैं' गुफा में रहने वाले सिंह की तरह होता है। यह तो जंगल का राजा है, परन्तु फिर भी चट्टानों के कुछ वर्ग फीट स्थान (गुफा) में ही अपने को सीमित कर लेता है। इसे बाहर आने दो, अपने क्षुद्र अधिकार (गुफा) का त्याग करने दो। जब तक तुम देह-चेतना से ही जकड़े हुये हो (कि मैं यह शरीर हूं) तुम गुफा में बंद सिंह के समान हो। मत अनुभव करो 'देहास्मि' मैं यह शरीर हूं। दहाड़ो "ब्रह्मास्मि" (मैं ब्रह्म हूं, यह सब मैं ही हूं, मैं इसके अतिरिक्त भी और रहूंगा)। क्षुद्रता, काल, स्थान, अहंभाव, सभी तुम्हारे हृदय से भाग जावेंगे। तुम प्रेम के अतिरिक्त कुछ नहीं, शुद्ध प्रेम के खजाने के रूप में रहोगे। अर्थात् तुम दैवत्व होकर उसी एक से संयुक्त होगे।

विस्तारण ही जीवन है। विस्तारण प्रेम का सार है। प्रेम भगवान् है। प्रेम में रहो। दीपावली का यही संदेश मैं तुम्हें देता हूं। जब एक दीपक दूसरे से प्रज्वलित किया जाता है तो एक के स्थान पर दो हो जाते हैं। पहले नें प्रकाश देना बन्द नहीं किया। तुम एक से लाखों दीपक प्रज्वलित कर सकते हो, फिर भी पहले वाले में रंचमात्र भी कमी नहीं आवेगी। प्रेम भी ऐसा ही होता है। लाखों के साथ इसे बांट लो फिर भी यह उतना ही चमकीला रहेगा जैसा अकेले होने के समय था। एक दूसरी शिक्षा और भी जोकि दीपमालिका के अवसर पर की गयी रोशनी से मिलती है। गली के प्रत्येक मकान से कुछ दीपक आलोकित कर घर की देहरी पर, मुंडेर पर, छज्जे पर, कुंए पर रख दिये जाते हैं, और इसका क्या प्रभाव पड़ता है ? नगर आलोक से भर जाता है, निवासी प्रसन्न होते हैं, बच्चे उत्साह से उछलते, नृत्य करते है और पार्थिव प्रसन्नता से आकाश भी चमकने लगता है। प्रकाश फैलता है, वह प्रकाश के अन्य स्रोतों से निर्गत प्रकाश से संयुक्त होता है, इसकी कोई सीमा नहीं रहती, कोई भेद-भाव भी नहीं रहता है, प्रकाश के कोई अपने-पराये भी नहीं होते

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है । अपने पड़ोसी को तुम न भी चाहो, परन्तु तुम्हारे बरामदे में रखे दीपक का प्रकाश पड़ोसी के बरामदे में रखे दीपक के प्रकाश के साथ हाथ में हाथ डालकर चमकता है । तुम इसे नहीं रोक सकते हो ।

दीपमालिका तुम्हें यह प्रेम और प्रकाश का पाठ पढ़ाने आती है । बाहर निकलो, मिलो-जुलो, फैलो और 'मेरे तेरे' की सीमा को भंग कर दो । 'उसके-उनके' जाति और धर्म के बंधनों से मुक्त होकर एक असीम प्रेम की धारा में बहने लगो । समस्त आध्यात्मिक साधनाओं का पर्यवसान इसी में होता है। प्रतियोगिता, प्रतिपक्षी को पराजित करने और अभिभूत करने की इच्छा, उसके पतन के लिये कुछ भी साधन अपना लेना, धन, यश, बड़प्पन कमाने का लोभ इन सबने मानव के हृदय में आज प्रेम के दीपक को बुझा दिया है । आज इस त्यौहार के दिन इसे पुनः आलोकित करने का संकल्प करो । जब पूजा घर में देवता की पूजा प्रारम्भ करते हैं तो सबसे पहले दीपक ही प्रज्वलित करते हैं, है न ? प्रज्वलित दीपक के विना कोई शुभ कार्य नहीं प्रारंभ किया जाता है । जब प्रेम का दीपक आलोकित होता है तो भगवान् प्रकट होता है । इसे शुद्ध और तीव्रता से आलोकित रखो । भगवान् विद्यमान रहता है । सभी को अपने दीपक इससे आलोकित करने दो । भगवान् कृपा की वर्षा करता है ।

सबसे पहले भगवान् उसके बाद जगत और सबके अंत में मैं; साधकों के लिये यही क्रम ठीक है; फिर साधक कौन नहीं है ? देर-सबेर सभी को चलना तो इसी मार्ग पर है जिससे इस जन्म-मृत्यु के बंधन से मुक्त हो सकें । परन्तु मनुष्य ने अपने कल्याण के प्रति उदासीनता से इस क्रम को उलट दिया है । "पहले मैं बाद में दुनियाँ और भगवान् सबके अंत में" । इसीलिये भगवान् भी उसके हाथ से निकल गया है । भगवान् को कस कर पकड़े रहो; तभी तक सुरक्षित रहोगे ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भगवान् का तुम ज्ञान, भक्ति, कर्म किसी भी साधना से, अंचल पकड़े रह सकते हो। रेल में तुम चाहे प्रथम, द्वितीय, तृतीय किसी भी श्रेणी से क्यों न यात्रा करो; सभी का गन्तव्य एक ही है। भगवान् सर्वव्यापक और सबसे परे है, इस मान्यता के साथ ज्ञान आगे चलता है। 'भगवान् ही सृष्टा, पालन कर्त्ता और संहारकर्त्ता है। उसकी पूजा करना चाहिये। उसे ऐसे कार्यों से प्रसन्न करना चाहिये जिन्हें वह सराहना के योग्य समझे। भगवान् सबका मालिक है और यह हमारा सौभाग्य है कि हमें उसकी सेवा-भक्ति का अवसर मिला। कर्म तीसरी सत्ता प्रकृति को भी साथ लेकर चलता है! केवल भगवान् और मानव दो ही नहीं, मानव को प्रकृति से भी काम पड़ता है, प्रकृति में रहो, प्रकृति के द्वारा रहो—अपने कार्यों की महिमा को भगवान् की महिमा को अर्पित करते चलो, अपने कर्मों के फल को त्याग कर, सदा आराधना कार्यों में लगे रह कर उसी की इच्छा पर अपने को छोड़ते हुये कर्म करो, फलों की आशा मत करो वे तो भगवान् के हाथ में हैं। केवल अपना कर्त्तव्य पालन करो और शेष सब कुछ भगवान् पर छोड़ दो। इन्द्रधनुषी सतरंगी चकई जब शीघ्रता से घुमाई जाती है तो श्वेत प्रतीत होती है। इसी प्रकार ज्ञान, भक्ति, कर्म तभी तक प्रकट है जब तक कि भगवान् का श्वेत प्रकाश मानव तर्क और मन के त्रिपार्श्व में से होकर निकलती है। उन्हें शीघ्रता से सक्रिय बना दो तो वे फिर एक ही किरण के अंग हो जावेंगे।

ज्ञान से देखो तो सभी भगवान् हैं। फिर भी दया तुम्हें प्रेम करने और सेवा करने को बाध्य करती है। विश्वास करो भगवान् स्वामी या पिता है और तुम उसके सेवक या बच्चे हो या भक्त हो। तब भी भगवान् का आदेश है कि दुखियों के आँसू पोंछो, बीमार की सेवा करो, लंगड़े को दया करके सहानुभूति से सीढ़ी पर चढ़ने में सहायता करो। कर्म के द्वारा विश्वास करो कि भगवान् की पूजा समर्पण से करना है; तब भी प्रेम कहता है कि प्रेम से की गयी सेवा ही भगवान् की सर्वश्रेष्ठ पूजा है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इस प्रकार प्रेम तो साधक का जीवन-प्राण है। मैं तुमसे खा-पीकर, पटाके दाग़ कर, पड़ोसियों की शान्ति भंग करके नहीं, बल्कि नीरवता से दीपक आलोकित कर और नीरव रहकर प्रेम से सेवा करते हुये दीपमालिका मनाने का आग्रह करता हूँ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६१ मानव का जीर्णोद्धार

(अखिल भारतीय कान्फ्रेंस २०-११-१९७०)

प्रशान्ति निलयम् में सत्य साई संगठनों की सभी इकाइयों के प्रतिनिधियों की इस कान्फ्रेंस की योजना से मुझे बड़ी प्रसन्नता हुयी है। मुझे विश्वास है कि यहाँ उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति को इस संगठन के उद्देश्य और महत्त्व ज्ञात हैं; क्योंकि अब तो यह संस्था संसार भर में विस्तृत हो गयी है। अतः यह भी आवश्यक है कि लोग कर्त्तव्यों का भी स्मरण रखें।

मनुष्य के प्रयासों में सफलता के लिये अनुशासन का होना अत्यंत आवश्यक है; कोई भी क्षेत्र हो, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक या केवल भौतिक और सांसारिक। आध्यात्मिक प्रयास में सफलता के लिये तो यह अत्यंत आवश्यक है। उदाहरण के लिये, एकाग्रता का अनुशासन तो सामान्य कार्य : जैसे टहलना, बात करना, पढ़ने-लिखने के लिये भी अपरिहार्य है।

आध्यात्मिक उन्नति, आध्यात्मिक आनन्द, अनुशासन और एकाग्रतापूर्वक किये गये प्रयास पर निर्भर करते हैं। यह सरलता से सुखपूर्वक विधि से नहीं यह तो कठोर कठिन परिश्रम के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। जब मनुष्य की आदतें अनुशासित, मन एकाग्र, ऐन्द्रिक भोगों का त्याग और आत्म विश्वास रहते हैं तो जीवन जीने योग्य रहता है।

नदी के फालतू पानी को हानि रहित और फलदायक नाले में प्रवाहित करने के लिये उसके किनारे पर अनुशासन और एकाग्रता के बाँध बनाये जाते हैं जो पानी को संयमित करके उपयोगी दिशामें प्रवाहित करते हैं। तुम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

साधना और आत्मान्वेषण में लगे हो; इन दोनों कार्यों में एकाग्रता और अनुशासन बहुत सहायता करते हैं। जो मार्ग से अनभिज्ञ होता है वह लक्ष्य पर नहीं पहुंच सकता। और जो लक्ष्य को नहीं जानता है वह उचित मार्ग चुन सकने में असमर्थ रहता है और उस पर चल भी नहीं सकता। तुम्हें अपने गन्तव्य और सही मार्ग दोनों का ठीक-ठीक ज्ञान होना चाहिये, तब यात्रा पर कदम रखो।

पुनः लोग सत्ता के लाभों को प्राप्त करने की आकाँक्षा रखते हैं। वे उस उत्तरदायित्व से बचते हैं जो सत्ता द्वारा उन पर डाला जाता है। यह मत समझो कि ऐसा केवल भारत वर्ष में ही होता है। आज तो समस्त विश्व के अभ्यर्थियों का यही दृष्टिकोण रहता है। शक्ति तो चाही जाती है; परन्तु जो भार शक्ति के साथ आ पड़ता है उसका स्वागत नहीं किया जाता है। आज की दुनिया में जो अव्यवस्था और दुख है वह उन्हीं लोगों की करतूत है जो सत्ता को तो ग्रहण कर बैठे हैं; परन्तु उस पद के कर्त्तव्यों का निर्वाह नहीं करते हैं। जो व्यक्ति सत्ता के पद से संबंधित उत्तरदायित्व का भार उठाने का अनिच्छुक अथवा असमर्थ होता है अथवा जो उन कर्त्तव्यों का पालन सच्चाई से नहीं करता है वह उस पद के अयोग्य होता है। उनका सामाजिक स्तर कितना ही ऊंचा हो, उनकी विद्वत्ता चाहे जितनी उच्च कोटि की हो, वे चाहे जैसे धनी हों वे उस पद के, जिसे प्राप्त करना चाहते हों, या कार्य कर रहे हों अयोग्य होते हैं।

इस संस्था की इकाइयों पर भी यही सिद्धान्त लागू होता है। जिसमें योग्यता नहीं है उसे इसमें स्थान नहीं दिया जाता है क्योंकि उसमें क्षमता और उत्तरदायित्व वहन करने की इच्छा का अभाव रहता है। संस्था में प्रवेश करने अथवा पद ग्रहण के पूर्व अच्छी तरह से विचार करलो कि तुममें आकांक्षा और क्षमता है भी या नहीं; यदि तुम शामिल होते हो या किसी व्यक्ति या कार्यक्रम के विरुद्ध शिकायत करते हो तो इस प्रकार तुम अपनी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

क्षुद्रता या दुर्बलता ही व्यक्त करते हो। पहले अच्छी तरह जांच करलो, पूरी तरह विचार करलो तब बाद में संस्था में शामिल होने का निर्णय पक्ष या विपक्ष में करो। शामिल होने के पश्चात् अन्य लोगों से उत्साह पूर्वक सहयोग करो और अपने सभी कर्त्तव्यों का सच्चाई से पालन करो।

इस संगठन का प्रचार अब दूर-दूर तक हो गया है, परन्तु, मुझे कहना पड़ता है कि यह अपने मूलभूत उद्देश्यों, जिनके लिये यह प्रारम्भ किया गया था, से भटक कर अलग जा पड़ा है इससे कोई भी लाभ नहीं हुआ है।

क्योंकि आध्यात्मिक मार्ग में पहला कदम 'निस्वार्थ सेवा' का होता है। निस्वार्थ सेवा से मनुष्य दैवत्व को प्राप्त कर लेता है जो कि इस सृष्टि के रूप में भी व्यक्त हुआ है।

निस्संदेह सभी व्यक्ति और वस्तुयें दिव्य हैं—परन्तु, बुद्धिमत्तापूर्ण विश्लेषण से, तुम्हें उन वस्तुओं और व्यक्तियों का चुनाव करना है जो सहायक हों, और जो बाधक हों उन वस्तुओं और व्यक्तियों से बचते रहो। बुद्धिमानी का यही मार्ग है। आग या बिजली को लेलो या तेज चाकू का उदाहरण लेलो। यदि तुम इनका उपयोग नहीं जानते हो तो यह हानिप्रद हो सकते हैं; यदि तुम्हें इनका उपयोग करना आता है तो यह बड़े लाभदायक भी हैं। ये शत्रु-मित्र दोनों ही हो सकते हैं। ऐसी ही इन्द्रियाँ होती हैं। यदि हम इन्द्रियों को अपने ऊपर अधिकार कर लेने दें तो वे घातक शत्रु हो जाती हैं; यदि हम उन्हें अपने वश में रखें तो वे हमें अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सहायता देती हैं।

इन्द्रियाँ हमारे ध्यान को बाह्य ससार के पदार्थों की ओर ले जाती हैं; हमें उन पर अधिकार करना है। मनुष्य अपने को द्वन्द्वात्मक चक्र से तब तक मुक्त नहीं कर पाता है जब तक वह इन्द्रियों के वशीभूत रहता है। आत्मा के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उस मार्ग में इन्द्रियाँ बाधा के रूप में ग्रा खड़ी होती हैं, जो तुम्हें, बाह्य जगत नहीं, अंतर चेतना में ले जाता है। पशु पक्षियों को ग्रात्मा की ऐसी कोई प्रेरणा नहीं होती है अतः उन्हें कोई परेशानी भी नहीं होती है; परन्तु मनुष्य को होती है। उसे ही भगवान् की कृपा जैसा महान पुरस्कार भी प्राप्त हो सकता है।

मानव जन्म-मृत्यु के बन्धन से, इन्द्रियों से ग्रनासक्ति ग्रौर आत्मा के ग्रन्वेषण से ग्रासक्ति रखने से, छूट सकता है। तुम ऐसे व्यक्तियों को जानते होगे कि जो ग्राज शत्रु या मित्र हैं तो कल को मित्र या शत्रु में बदल सकते हैं। परन्तु इतना सुनिश्चित है कि 'काम' या 'इच्छा' स्थायी शत्रु ही है ग्रौर सदा रहेगा। जितना ग्रधिक हम इस शत्रु के समक्ष घुटने टेकेंगे उतना ही ग्रधिक यह प्रबल होता जाता है और उसी ग्रनुपात से तुम इसकी दासता के बंधनों में जकड़े जाते हो।

ग्राज सिर से पाँव तक प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी प्रकार की इच्छाग्रों से संपृक्त है—धन, सामाजिक स्थिति, यश, विलासपूर्ण जीवन इत्यादि, छोटी-मोटी इच्छाग्रों से तो मनुष्य चारों ओर से सदैव घिरा ही रहता है। वे निरंतर संख्या ग्रौर वेग में बढ़ती ही जाती हैं। कर्त्तव्य और ग्रनुशासन के बाँध इच्छाओं की बाढ़ में बह जाते हैं।

इसलिये वैराग्य, त्याग की वृद्धि करो ग्रौर इच्छा को रोको। मानव जीवन का लक्ष्य धन ग्रथवा वैभव प्रदर्शन, सोना या सांसारिक यश नहीं है। नैतिक ग्रौर सद्गुणी बनो। मनसा, वाचा, कर्मणा सच्चे बनो। ग्रपने प्रति ईमानदार बनो। धन तो आता जाता रहता है। परन्तु नैतिकता आती है, ग्रौर बढ़ती जाती है। इसलिये मनुष्य को धन की लिप्सा त्याग देना चाहिये ग्रौर ग्रधिकाधिक नैतिकता का आकांक्षी होना चाहिये।

सत्य साई संगठन सभी धर्मावलम्बियों के द्वारा चलाया जा रहा है। ऐसा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इसलिये है कि ईसाई, पारसी, हिन्दू, बौद्ध, जैन, मुसलमान सभी के मौलिक सिद्धान्तों में प्रेम और अहिंसा हैं। इन गुणों का विकास और वृद्धि करो। तभी तुम अन्य लोगों में इनके प्रचार के अधिकारी हो पाओगे। यह देश भारत तो युगों युगों से जीवन का उद्देश्य यही घोषित करता रहा है कि "इस शोक, कष्ट, कोलाहल से पूर्ण संसार सागर को पार कर लेने पर तुम्हें औरों को भी पार करने में सहायता करनी चाहिये"। अतः आत्म साक्षात्कार करो फिर अन्य लोगों की सहायता करो। स्वयं एक उदाहरण बन जाओ। सिखाने का सबसे अच्छा उपाय यही है।

भारत को पवित्र देश माना जाता है क्योंकि यहाँ लोगों ने अपनी इच्छाओं का त्याग करके जीवन सफल किया है। सन्तों ने मुक्ति प्राप्त की और प्रेम शान्ति का जीवन व्यतीत किया। उन्होंने सर्व साधारण को भी प्रेरणा दी और उनके जीवन को प्रेम और धर्मनिष्ठा के माधुर्य से भर दिया। वे अहंकार रहित होकर, निर्लोभ होकर, आनन्द पूर्ण जीवन के वर्षों को छलांगते हुये शताधिक आयु को पूर्ण करते थे। परन्तु आजकल वैयक्तिक इच्छाओं के धक्के से जीवन छोटा और अधिक दुखी हो रहा है।

सत्य साई संगठन, प्रेम और अहिंसा के सिद्धान्तों को दैनिक जीवन के आचार में उतारने के लिये स्थापित किया गया है।

इसे चार समस्याओं के अन्वेषण में लगाना है : (१) शरीर–यह क्या है ? (देहम्) (२) शरीर—'मैं' शरीर नहीं हूं (नाऽहं) (३) फिर मैं कौन हूं ? (कोऽहम्) (४) अच्छा, 'मैं' वही हूं (सोऽहम्)

पहले शरीर को लो, विचारो यह क्या करता है, क्या वास्तव में यह हमारे लिये ठीक है या लाभप्रद है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक आदमी की कहानी में ऐसा आया है कि जब वह मार्ग पर जा रहा था तो उसे मार्ग के बीच में मनुष्य की विष्ठा पड़ी दिखाई दी। उसने घृणा से मुंह पिचकाया और एक ओर हट गया, परन्तु विष्ठा को क्रोध आ गया। उसने मनुष्य को कृतघ्न और बेवफा कह कर संबोधित किया, "कल तो मैं एक सुगंधित मधुर रसीला फल था, मैंने तुम्हें शक्ति और पोषण दिया; मैंने अपनी शक्ति, सौंदर्य और अस्तित्व को तुम्हारे लाभ के लिये बलिदान कर दिया। इसके बदले में तुमने मुझे इस दुर्गन्ध युक्त पदार्थ में बदल दिया और अब मुझे आहत और अपमानित करने के लिये घृणा से मुँह पिचकाते हुये दूसरी ओर फेर रहो हो। तुम्हारे सम्पर्क से ही मेरी यह दुर्दशा हुयी है"। मानव ने सुना और विचार मग्न हो गया कि वह इतना गंदा क्यों, कैसे हो गया।

इससे एक विचार उसके मन में उभरा कि जिस शरीर में वह स्थित है उसकी प्रकृति क्या है, वह सोचने लगा। हम कहते हैं, 'मेरा हाथ', 'मेरी पुस्तक', 'मेरा मन', 'मेरा कार्य', 'मेरा विचार', क्योंकि एक 'मैं' है जो इन सब का स्वामी है और वह इन सब का अपने अधीन यंत्रों की तरह प्रयोग करता है। यह 'मैं' कौन है? उस विद्युत धारा की तरह जो मशीन को अनुप्राणित करती है, संचालित करती है। (इसके सभी पेंच ढिबरी पहिये पट्टे को भी) 'मैं' भी इसी प्रकार शरीर और उसके सभी भीतरी बाहरी अवयवों, को सक्रिय बनाती है। मेरे सामने यह ध्वनि विस्तारक यंत्र है एक तार है जो इसमें लगा है। परन्तु चाहे यह यंत्र आधुनिकतम हो और तार भी सर्वोत्तम श्रेणी का हो यदि, बिजली की धारा नहीं आ रही है तो मेरी वाणी तुम तक नहीं पहुंचेगी। शरीर में भी इस 'मैं' को होना चाहिये; यह दिव्य शक्ति हाथ, आंख, मस्तिष्क सभी को अनुप्राणित और क्रियाशील बनाती है। तुम अपनी इकाई के कार्यों को करते रहो और विश्वास रखो कि एक दिव्य शक्ति ही वह प्रेरक शक्ति है जो तुम्हारी योजनाओं और कार्यों को चला रही है। तुम कौन हो? तुम वह दैवी इच्छा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हो जो तुम्हें जीवन, उत्साह, इच्छा और वृद्धि प्रदान करती है। यह अनुभव करना ही जीवन का उद्देश्य है। यह अज्ञान, भ्रम और माया की समाप्ति है।

ऋषियों ने मनुष्यों के इस पृथ्वी पर चार लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष बतलाये हैं। अर्थात् मनुष्य धर्माचारण करते हुये धन कमावे और इस द्वन्दात्मक (सुख-दुख, हानि-लाभ, जय-पराजय आदि) जीवन से मुक्त होने की इच्छा करे। जीवन के समस्त कार्यों का पर्यवसान मोक्ष में होना चाहिये। शेष तीनों को इसी के सहायक या पूरक होना चाहिये।

यदि तुम्हें किसी वृक्ष या पौधे के फूल, फलों की आवश्यकता होती है तो तुम शाखाओं, टहनियों, और पत्तों को न सींच कर सीधे जड़ों को सींचने के लिये थले में पानी डालते हो। अंकुरों और कलियों को भी नहीं सींचते हो। इसलिये यदि तुम इन चारों में से अंतिम मोक्ष को चाहते हो तो धर्माचारण करो, उससे तुम्हारा अर्थ (धन) पवित्र होगा और काम पवित्र होगा और वह मोक्ष, जिसके तुम आकांक्षी हो, प्राप्त हो जावेगा। धर्म की वृद्धि करो इससे अपने अर्थ और सुख प्राप्ति के प्रयासों को सम्पृक्त करो।

इस संगठन के प्रत्येक कार्यकर्त्ता को पार्थक्य और विशिष्टता की भावना का त्याग कर देना है। उसे जाति, धर्म, कुल, रंग, धनी-निर्धनी के आधार पर किसी मानव से भेदभाव नहीं करना है। उसे सदैव दूसरों के दुखों—और उससे भी कठिन, सुखों का समान भागीदार बनने का प्रयत्न करते रहना चाहिये।

मेरी इच्छा है कि जब कभी लेशमात्र मी मतभेद तुममें अंकुरित होवे तो तुम अपने ही में मिल बैठकर उसे मिटा डालो और आपस में प्रेम और सहनशीलता को बढ़ावा दो। तुम्हें मतभेदों पर कभो ताव नहीं खाना चाहिये कि बाद में वाद-विवाद के फलस्वरूप लपटें उठने लगें और दलबन्दी में विभक्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हो जाओ। स्मरण रहे कि तुम तो हृदय की विशालता में वृद्धि करने के अभियान में लगे हो और प्रेम की अभिव्यक्ति से भगवान् के चरण कमलों तक पहुंचना चाहते हो। जब तक तुम प्रेम, सहन शीलता, विनम्रता विश्वास और श्रद्धा की वृद्धि नहीं कर लेते हो तो तुम्हारे लिये भगवान् को पा लेना कैसे संभव होगा ?

इस समय जब कि समूचे देश भर में घबराहट, भय, चिन्ता व्याप रही है प्रत्येक कार्यकर्त्ता को अपनी आहुति शीतल, शान्त प्रेम की, जितना भी हो सके, क्रोध और ताव को शान्त करने के लिये डालनी ही चाहिये। जितने अच्छे ढग से, शीघ्रता से तुम प्रेम और भाई चारे से उसे शमन कर सकते हो वैसा किसी भी राजकीय सत्ता ओर योजना द्वारा झगड़े को शान्त नहीं किया जा सकता।

संसार की रक्षा आत्म-शक्ति से ही हो सकती है। यह आत्म-शक्ति हर व्यक्ति में निहित रहती है। इसे व्यक्तिगत साधना द्वारा जागृत कर प्राप्त किया जाता है अथवा भगवान् की कृपा से व्यक्ति के प्रेम, पवित्रता और सेवा कार्य के फलस्वरूप प्राप्त होती है। यदि इन दोनों का अभाव है; तो विनाश अथवा प्रलय निश्चित है; यह अपरिहार्य है।

आज प्रेम अत्यन्त दुर्लभ पदार्थ है। घर में पिता-पुत्र में, पति-पत्नी में, भाई-भाई में प्रेम, नहीं है। क्या हमारी इकाइयों के सदस्यों में भी प्रेम दुर्लभ पदार्थ रहना है ? नहीं, तुम्हें अपने आचरण और मनोभाव से यह सिद्ध करना है कि आत्म साक्षात्कार के आधार पर प्रेम संसार की समस्याओं का समाधान कर सकता है, क्योंकि सब में एक ही आत्मा का निवास है।

आजकल का जीवन बहुत ही कृत्रिम हो गया है। मानव भय से अंधा होकर चल रहा है कि न जाने अगले कदम पर क्या से क्या हो जावे। तुम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

स्वय को ग्रालोकित दीपक के समान वना लो ,जिससे लोगों को ठीक-ठीक पथप्रदर्शन मिल सके ।

प्रेम के दीपक बनो । इसी में सब कुछ है । फिर जप, या तप की कोई ग्रावश्यकता नहीं है । प्रेम, दूसरों की प्रेममय सेवा (जो कि 'दैवत्व' द्वारा अंगीकृत ग्राकृतियाँ हैं) से तुम्हें भगवान् की कृपा प्राप्त होगी ।

इसलिये ग्राज ही संकल्प करके प्रेम को अपने हृदय में स्थापित करो, इसकी वृद्धि करो, इसे विश्वव्यापी बनाओ, ग्रौर स्वार्थ ग्रौर इच्छा से रहित कर लो । प्रेम स्वरूप हो जाग्रो ।

मुझे इस वात से कोई उत्साह नहीं होता है कि इस या उस जिले में इतनी इकाइयाँ सत्य साई संगठन की हैं ग्रौर अमुक जिला इसमें ग्रग्रणी है । मैं तो कार्य में रुचि रखता हूं, प्रेमी हृदय से ग्रौर निस्वार्थ सेवा से प्रसन्न होता हूँ । ऐसी भी इकाइयाँ हैं जो केवल नाम मात्र को हैं । ऐसी हैं जो हमारे ग्रादर्शों ग्रौर उद्देश्यों के प्रतिकूल कार्य करती हैं । इन्हें चालू रहने देने की ग्रपेक्षा कहीं ग्रच्छा हो यदि इन्हें समाप्त ही कर लिया जावे ग्रौर जितनी जल्दी किया जावे उतना ही ग्रच्छा है । केवल दो या तीन, जो ठीक-ठीक ढंग से अच्छी तरह कार्य कर सके, कहीं ग्रच्छी इकाइयाँ होंगी । बजाय उन सैकड़ों के जो बुरी तरह से कार्य करें अथवा कोई कार्य ही न करें । गाय का छटाँक भर दूध गधी के घड़े भर दूध से कहीं अच्छा है ।

यदि ये इकाइयाँ प्रारंभ की जाती हैं, ग्रथवा इसी उद्देश्य के कार्य करती रहती हैं कि इनके ग्रधिकारियों को इन कान्फ्रेंसों में बैठने का, भाग लेने का ग्रवसर मिल जावे, यदि सदस्यों में कोई निष्ठा या भक्ति नहीं है, यदि वे संगठन के ग्रादर्शों को प्राप्त करने के लिये लगातार प्रयास नहीं करते हैं, तो यह ग्रावश्यक है कि ऐसी इकाइयों को समेट लिया जावे । यदि हम ऐसी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

संस्थाओं को आगे चालू रहने देते है तो वे संगठन में ठीक वैसी हड़बड़ी उत्पन्न कर देंगी जैसी राजनैतिक संस्थाओं में आज देखने में आती हैं।

उन गुणों पर अच्छी तरह विचार कर लो जो कि तुम्हें अपने में रखना है और उन पर भी विचार करो जिन्हे त्याग देना है। और आज से इस पर आचरण प्रारंभ कर दो। जो त्यागना है उसे त्याग दो, जो वांछनीय है उनकी वृद्धि करो। आगे देखो, अपना जीर्णोद्धार करो और आगे बढ़ो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६२ अपराध और असफलतायें

(प्रशान्ति निलयम् अखिल भारतीय कान्फ्रेंस २१-११-१९७०)

लोग कह सकते हैं कि वेद तो कुछ ध्वनियों का संग्रह मात्र या अक्षरों की श्रेणियाँ ही तो है; वे इससे कहीं अधिक हैं। वेद ज्ञान है; ज्ञान ब्रह्म है। भारतीय संस्कृति, जो वेदों पर आधारित है, इसी सत्य का प्रतिपादन करती है और इसका अभ्यास करने के लिये आग्रह करती है। इसी सत्य को दैनिक जीवन में उतारना है जिससे वे भीषण समस्यायें, जो व्यक्ति और समाज को प्रभावित कर रही हैं, हल की जा सकें।

इस संस्कृति में आचरण और व्यवहार के कई ढाँचे या नमूने इतिहास के परिवर्तनों के साथ जुड़ते गये हैं। इन्हें स्वच्छ करके सुलझाकर, (और अनावश्यक को रद्द करके) दृष्टिकोण को पवित्र और स्पष्ट बना लेना चाहिये। इस संगठन का यह एक प्रमुख कार्य है। आर्थिक विकास और पंचवर्षीय योजनायें लोगों के जीवन स्तर को भले ही उन्नत करने में सफल हो जावें; परन्तु जब तक इनके साथ-साथ वेदों में संग्रहीत ज्ञान को लोग आत्मसात् नहीं करते हैं, ऐसी उन्नति का अंत विनाश में होगा।

नैतिकता, एवं सद्गुणी चरित्र, यह दोनों ही उन्नति का आधार और मौलिक आवश्यकतायें हैं। ये आध्यात्मिक क्षेत्र में उगते हैं। परन्तु, आज, आत्मा की ही उपेक्षा की जाती है। भौतिक और जैवी आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है, उन्हें ही जीवन का लक्ष्य मान लिया गया है; और सभी प्रयत्न इसी दिशा में किये जा रहे हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कृत युग में धर्म को जीवन का मूलाधार मानकर उसी को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता था। उसके बाद त्रेता युग में, घटघट वासी भगवान् को मान कर उसी की प्राप्ति के लिये प्रयत्न किया जाता था। द्वापर युग में मित्रों और संबंधियों से सम्पर्क बनाये रखना, विकसित करना उनसे प्रेम करना, सुरक्षित और सुखी जीवन के लिये आवश्यक था। कलियुग में, आधुनिक युग में, भोजन और पोषण ही जीवन का सार माना जाता है।

आजकल लोगों का विश्वास दवा में बहुत है (जिसने कि अच्छे भोजन का स्थान ले लिया है) 'देव' में उतना नहीं है। जीवन कैप्सूल और गोलियों से चलाया जा रहा है। भगवान् जाने कि इन गोलियों के सहारे कहां की यात्रा के लिये शक्ति प्राप्त करने की आशा है। जीवन यात्रा का पाथेय तो कुछ और ही होता है। किसी कार्यालय जाने वाले की जेब टटोल कर देखो। उसमें भगवद्गीता या भगवान् का चित्र नहीं होगा, परन्तु अधिक संभावना है कि तुम्हें 'एस्पिरीन' या 'सरिडॉन' की गोलियां मिल जावें। चाहे छात्र विद्यालय जा रहे हों अथवा उनके पिताजी सिनेमा जावें, दोनों के पास वही वस्तुयें होंगी। यहाँ तक कि रमणियों के हाथ में रहने वाले 'नफ़ासत' के झोले में भी कैप्सूल और गोलियाँ होती हैं। चाहे तुम उत्तम भोजन क्यों न करो गोलियों से निश्चय ही स्वास्थ्य गिर जाता है। इन अस्थाई, काम चलाऊ, उपायों को स्थाई स्वभाव मत बनाओ।

बड़ी बड़ी महान विभूतियाँ, जो आध्यात्मिक ज्ञान के भंडार और आध्यात्मिक संयम-नियम की शिक्षा देने का दावा करते हैं, भी अस्त व्यस्त हो जाती हैं जबकि उन पर हावी आदतों की पूर्ति में कुछ व्यतिक्रम आ जाता है। यदि उन्हें प्रातःकाल एक प्याला काफी कुछ मिनट देर से मिले तो उनका जप, ध्यान सदा की भाँति निर्बाधगति से नहीं चल पाता है। देखो! कैसे दुर्बल ये लोग हैं। ये लोग क्या प्राप्त कर सकते हैं? वे अपने चरम तत्व के रूप में आत्मा का साक्षात्कार कैसे कर सकेंगे? उन्हें उस शरीर की चिन्ता बहुत रहती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है जिसमें वे रहते हैं, न कि अपने में। जिस आत्मा का साक्षात्कार वे करना चाहते हैं उसमें उनका विश्वास ही नहीं होता है। उन्हें ज्ञानार्जन की वास्तविक इच्छा नहीं होती है। जो लोग पहले निकल गये हैं, उन्हीं के शब्दों और ढंगों की ये लोग नकल करते रहते हैं। प्रेम की अभिवृद्धि करो, प्रेम को कार्य रूप में परिणत करके दिखाओ, अपने आसपास से अपने लिये प्रेम प्राप्त करो; इन्हीं ढंगों से नेतृत्व प्राप्त होता है।

बहुत से ऐसे लोग होते हैं जो देश में घूम-घूम कर जप, ध्यान का प्रचार करते रहते हैं और अपने को इन क्रियाओं में उच्चकोटि का दक्ष अभ्यासी घोषित करते हैं। वे अपने को स्वामी कहते हैं जिससे कि उनके यहां श्रोता-गणों की खूब भीड़ होवे और वे अपनी दक्षता का प्रदर्शन करें। परन्तु दक्षता का ऐसा प्रदर्शन आध्यात्मिक उपलब्धियों का चिन्ह नहीं है। आध्यात्मिक उपलब्धियों वाले ऐसे प्रदर्शनों और प्रचार से सदा दूर रहते हैं। आध्यात्मिक अभ्यास, सदा जनता से पृथक, एकान्त में ही शान्ति से किये जाने चाहियें। मीरा ने भगवान् के नामरूप को बहुमूल्य 'रत्न' कहा था। बहुमूल्य रत्नों को बाजार में अन्य सामानों की तरह प्रदर्शित नहीं किया जाता है, सब्जियाँ ही सर्वसाधारण को दिखाने के लिये सजाकर खुले आम रखी जाती हैं। हमारे संगठन की इकाइयों को ठाटबाठ और दिखावट को उत्साहित नहीं करना चाहिये क्योंकि आध्यात्मिक मार्ग के लिये ठाटबाठ और प्रदर्शन विदेशी क्रियायें हैं।

ज्योंही तुम जगो और समय जानने के लिये घड़ी पर दृष्टि पड़े तो स्मरण करलो कि घड़ी ५ बातों का स्मरण कराती है। 'डब्ल्यू' से शब्दोंकी, 'ए' से कार्यों की, 'टी' से विचारों की, 'सी' चरित्र की और 'एच' से हृदय की, पवित्रता का। इनका सदा ध्यान रहे इनमें दूषण न आने पावे। हाथ घड़ी सुस्त या तेज होने पर सुधारक को दी जाकर सुधरवाई जाती है परन्तु यह दूसरी 'वाच' की वाच (देखभाल) तुम्हें ही स्वयं करनी है क्योंकि यह तुम्हारा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पथप्रदर्शन करती है, कभी धोखा नहीं देती है और पशुता के स्तर पर फिसल जाने से रोकती रहेगी।

यह साई संगठन प्रेम की वृद्धि और प्रसार करने के लिये संगठित किया गया है। यह किसी दबाव से नहीं संगठित हुआ है; यह हृदय से उत्पन्न हुआ है और हृदय का ही विस्तार करता है। हृदय की आंतरिक इच्छा कि 'प्रेम मिले और प्रेम का विस्तार होवे' से ही इस संगठन ने बाह्य रूप ले लिया है।

हमारे विचार रुई के समान हैं, इनसे जो इच्छायें उत्पन्न होती हैं वह धागा या सूत है, इन इच्छाओं का परस्पर स्थिर व्यवस्थित संगठन ही वस्त्र है जो ताने-वाने के संयोग से उत्पन्न हो जाता है। यदि इन सूत्रों (इच्छाओं) को एक एक करके अलग कर दिया जावे तो वस्त्र (मन) भी अदृश्य हो जाता है। सबसे अच्छी बात तो यह होगी कि इच्छायें कम से कम रखी जावें। "बोझा कम, आराम अधिक यात्रा सुखमय सर्वाधिक" यही तो तुम्हें रेल अधिकारी सुझाते रहते हैं। यदि थोड़ी दूर की यात्रा के लिये तुम्हें रेल में कम बोझा लेकर चलने से आराम मिलता है तो जीवन-यात्रा तो एक लम्बी यात्रा है; इसमें तो बहुत ही कम बोझा रखना चाहिये। बोझा घटाने की यह क्रिया आध्यात्मिक भाषा में वैराग्य (अनासक्ति) कही जाती है।

जब अनाम, अरूप आत्मा सतोगुण (शुद्ध और क्षोभरहित) के माध्यम में प्रतिबिम्वित होती है तो यह ईश्वर के रूप में व्यक्त होती है। जब यह राजसिक (सक्रिय और उत्साहपूर्ण) माध्यम में प्रतिविम्बित होती है तो इसकी संज्ञा 'जीव' या 'व्यक्ति' कही जाती है। जब यह तमोगुण (निष्क्रिय, जड़) माध्यम में व्यक्त होती है तो इसे ही 'पदार्थ' कहते हैं। है सब कुछ आत्मा ही, परन्तु यह भिन्न माध्यमों में व्यक्त हुयी है। आत्मा ही एकमात्र अद्वैत और अद्वितीय वास्तविक सत्ता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मानव के चरित्र की कुछ विशेषताय ऐसी हैं जिनसे हम कुछ अच्छी शिक्षायें ग्रहण कर सकते हैं। जब मनुष्य कुछ अच्छा कार्य करता है, जैसे दरिद्र नारायण को भोजन कराना, या किसी मन्दिर का निर्माण कराना, तो वह अपने इस आनन्द को अन्य लोगों के साथ मिलकर भोगना चाहता है। परन्तु जब वह कोई अशोभनीय कार्य करता है तो वह अपनी लज्जा को छिपाता है। फिर एक और विशेषता की ओर ध्यान दो। जब मनुष्य कुछ अच्छा काम करना चाहता है तो वह इसे कुछ काल तक स्थगित रखना चाहता है मानो कोई उससे कहता है कि अभी क्या जल्दी है फिर कभी शोभा के साथ करना अभी तो बहुत दिनों तक जीना है। परन्तु जब वह कोई बुरा कार्य करने का निश्चय करता है तो वह तत्काल कर डालता है। उसे लगता है "कल की कौन जाने, मौत का क्या ठिकाना न, जाने कब आ जावे।" सभी अशोभनीय कार्य मृत्यु की ओर ले जाने वाले होते हैं; सभी अच्छे कार्य अमरत्व प्रदान करने वाले होते हैं। इससे तुम्हें यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

प्रातःकालीन छाया तुम्हारे आगे-आग (यदि सूर्य की ओर पीठ करके दौड़ो) दौड़ती है तुम इसे नहीं पकड़ सकते; न मैदान में और न पहाड़ पर ही। और यदि तुम इससे दूर भागना चाहो तो यह तुम्हारा पीछा करती है और तुम इससे नहीं बच पाते हो। इच्छा का यही स्वभाव है। चाहे तुम इसका पीछा करो अथवा यह तुम्हारा पीछा करे, परन्तु तुम इसे वशीभूत अथवा पकड़ नहीं पाते हो। इच्छा तो एक अपदार्थ छायामात्र है। परन्तु, इच्छा को अन्दर की ओर आध्यात्मिक कोष की ओर मोड़ दो, तब इसका परिणाम महत्त्वपूर्ण लाभकारी होता है। जब तुम इस संगठन के विभिन्न कार्यों में संलग्न हो तो इन इच्छाओं को भगवान् को सौंप दो, और हर काम को भगवान् का आदेश मानकर करो; वह तो तुम्हारे हृदयों में ही अधिष्ठित है।

सभी इकाइयों के पदाधिकारी यहां एकत्रित हैं, अब तुम्हें विभिन्न

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नियमों, उपनियमों और प्रस्तावों पर विचार कर स्वीकृत करना है। परन्तु, पहले तुम एक मूलभूत प्रश्न पर विचार करो और उस का निश्चित उत्तर खोजो, हम इस संगठन में क्यों हैं ? उद्देश्य क्या है ?

तुम्हें यह दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि इस संगठन का उद्देश्य उन विघ्न-बाधाओं को हटाना है जो 'मानवत्व' और 'माधवत्व' को दूर-दूर बनाये हुये है और उनका एकत्व नहीं होने देते। मानव कहाँ हो सकता है ? यह सब 'दैवत्व' ही है। इस संस्था को मानवत्व को उठा कर दैवत्व तक पहुंचाना है।

हमारे संगठन में कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जो दलबंदी और मतभेदों की स्थिति में आनन्दित होते हैं; कुछ ऐसे हैं जिन्हें इसमें और इसके कार्यों में कोई विश्वास ही नहीं है, अन्य लोगों में कार्य के प्रति कोई उत्साह नहीं है, वे ईर्ष्या, द्वेष से जलते रहते हैं। अगर बबूल के वृक्ष को सींचते रहोगे तो उससे आम के मीठे फल पाने की आशा मत करो। भक्ति का जल साधना वृक्ष की जड़ में डालो, तुम्हें निश्चय ही आनन्द के मधुर फल प्राप्त होंगे।

प्रत्येक को उसी दैवत्व की मूर्ति मानकर व्यवहार करो जिसकी तुम उपासना करते हो। तुम्हारा प्रत्येक शब्द और कार्य उस पुष्प के समान खिला हुआ और सुरभित होवे जिसे तुम अपने इष्टदेव को समर्पण करने योग्य मान सको। तभी तुम ईर्ष्या और द्वेष, असत्य, लोभ, क्रोध या अहंकार के कलंक से बच सकते हो। इस संगठन के किसी भी व्यक्ति में इन बुराइयों के कलंक चिन्ह नहीं पाये जाने चाहिये।

इस संगठन में यदि तुम अपने प्रिय व्यक्तियों को ही रखना चाहो और भक्ति निष्ठा रखने वाले व्यक्ति को, यदि वह तुम्हें पसंद नहीं है, न आने दो तो तुम भगवान् के प्रति भ्रष्टता फैलाने के पाप के दोषी होगे। यह संगठन किसी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पदाधिकारी की प्रसन्नता और अप्रसन्नता को कोई महत्व नहीं देता है। यह केवल भक्ति और विश्वास पर ही आधारित है। जिसमें यह दोनों हों और जो संगठन को अपने जीवन के समान प्रेम करता हो, ऐसे सभी लोगों को इसमें स्थान दिया जाना चाहिये, उन्हें इसमें होने का अधिकार है।

एक दूसरी बात और भी है। हम लोग कल इसका निश्चय करेंगे, परन्तु मैं तुम्हें इसका कुछ आभास आज ही देना चाहूंगा। प्रत्येक इकाई के लिये एक प्रेसीडेन्ट, एक सेक्रेटरी, एक सहायक सेक्रेटरी और एक कोषाध्यक्ष होता है। परन्तु, मुझे कोषाध्यक्ष की कोई उपयोगिता ही नहीं समझ में आती है क्योंकि हम धन संग्रह करते ही कब हैं। इस पद के रहने से लगता है कि हमारे पास कोष होता है, जिसे हमने धीरे-धीरे जोड़ा है, हम उसकी रक्षा करते हैं, और जिस पर हम निर्भर करते हैं। हम तो धन से भी अधिक मूल्यवान् वस्तु से व्यवहार करते हैं, वह है प्रेम। जहाँ कहीं भी धन एकत्रित करके संचय किया जाता है, गलतफहमी बढ़ने लगती है, दलबंदी उभर कर सामने आती है और प्रेम विदा हो जाता है। धन और उन सब ढंगों से जिनके पीछे-पीछे मनुष्य भटकता फिरता है, संसार में अव्यवस्था फैल गई है। अपने सभी कार्यों को धर्म के आधार पर आयोजित करो, अपने हृदय को प्रेम से पूर्ण करलो, फिर मैं कृपा करूंगा और सदा तुम्हारे साथ रहूंगा।

भजन, ध्यान और नगर संकीर्तन के लिये धन की क्या आवश्यकता है? नगर संकीर्तन के लिये तो केवल टाँगों की आवश्यकता है, जिह्वा गाने के लिये और हृदय भगवान् की कृपा प्राप्त करने के लिये चाहिये। विशेष अवसरों पर विशेष उद्देश्यों के लिये धन केवल समिति के सदस्यों से ही एकत्रित किया जाता है। यही नियम प्रारम्भ से रहा है, यही इस संगठन का आधार है। अन्य कार्यों के लिये तुम्हें धन की कोई आवश्यकता ही नहीं है। तुम्हें केवल पवित्र, प्रेमपूर्ण और उदार हृदय रखने की आवश्यकता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इस संगठन की कुछ इकाइयों में कुछ दोष है, जिन्हें मुझे बता देना है। इस बात को मैं इसी समय इसलिये कह देता हूं कि जब मैं राज्य के आधार पर प्रतिनिधियों से पृथक-पृथक भेंट करूं तो तुम उपयुक्त भावना के साथ अपना प्रतिनिधित्व कर सको। यदि मैं तुम्हें अब चेतावनी देता हूं तो इसलिये कि तुम्हारा मनोभाव अधिक शान्त और अधिक स्वच्छ हो जावे।

जिला के और राज्य के प्रेसीडेन्ट का निर्वाचन मेरे द्वारा किया जाता है परन्तु मैं तुम्हारी इच्छाओं को भी टटोल लूंगा। प्रेम और सहनशीलता का वातावरण तो ठीक है; परन्तु ईर्ष्या, उत्तेजना या महत्त्वाकाँक्षा का वातावरण ठीक नहीं है जबकि नामों पर विचार न किया जा रहा हो। जब किसी को शान्ति और प्रेम के वातावरण में चुन लिया जावे तो सहयोग और सहनशीलता सभी ओर से प्रदर्शित की जावे और प्रत्येक को उसके आदेशों का पालन करना चाहिये और पथ-प्रदर्शन स्वीकार करना चाहिये। तभी आप लोगों को दिव्य कृपा प्राप्त होगी।

कुछ स्थानों की इकाइयां कुछ कार्य नहीं करतीं। अथवा, यदि वे कुछ करती भी हैं तो उनके कार्य, प्रशान्ति निलयम् के सिद्धान्तों और परम्परा के प्रतिकूल होते हैं, अथवा संगठन के लिये निर्धारित नियमों की अवहेलना करने वाले होते हैं। जहाँ कहीं भी ऐसी इकाइयां हों, जिला प्रेसीडेन्ट अथवा स्टेट प्रेसीडेन्ट को तत्काल कदम उठाकर उन्हें संगठन से निकाल बाहर करना चाहिये।

कुछ समितियों में कुछ सदस्य बैठकों में उपस्थित नहीं होते हैं। कुछ समितियों के सदस्य ५० प्रतिशत बैठकों में भी उपस्थित नहीं होते हैं। वे तो १०० प्रतिशत बैठकों से अनुपस्थित रहते हैं। कुछ समितियों की बैठक कभी नहीं होती है जिससे उनकी उपस्थिति का प्रतिशत कभी गिना ही नहीं जा सकता। ऐसी समितियों के लिये कोई नियम, उपनियम लागू ही नहीं हो पाते हैं। यदि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उन नियमों का, जोकि स्पष्ट रूप से निर्धारित हैं, पालन नहीं किया जाता तो संगठन में गड़बड़ी और अव्यवस्था फैल जावेगी ।

इसी समय तुम्हें कुछ और अपराध बता देने का अवसर है । कुछ इकाइयाँ तो संस्थाओं के लिये पैसा कमा कर देने के उद्देश्य से ही स्थापित की जाती हैं यही उनका एक मात्र उद्देश्य होता है । जब एक नाम या व्यक्ति विश्व भर में विख्यात हो जाता है और सभी उसका सम्मान करने लगते हैं, तो पूर्वोक्त प्रकार के व्यक्ति उस विख्यात नाम का प्रयोग अपनी जेबें भरने के लिये अथवा स्वयं नाम और यश कमाने के लिये करने या अपनी करतूतों को उस नाम से जोड़ने लगते हैं । यह चाल से स्वाभाविक है । हर स्थान पर कुछ व्यक्ति ऐसे निकल ही आते हैं । जब ऐसा होता है तो संगठन बदनाम हो जाता है ।

यह भी स्पष्टतया उल्लेख किया जा चुका है कि जो लोग हमारे संगठन में हैं उन्हें अन्य आध्यात्मिक या धार्मिक किसी संस्था से कोई संबंध नहीं रखना है । हां, जहाँ तक सेवा करने की बात है, सदस्यों को सभी की सहायता और सेवा बिना किसी भेदभाव के करनी चाहिये । संकट में ग्रस्त हर व्यक्ति तुम्हारी सहायता का पात्र है । परन्तु समिति के किसी सदस्य को अन्य इसी प्रकार की किसी संस्था या संगठन से कोई संबंध न रखना चाहिये ।

उदाहरण के लिये तुम्हारे पड़ोस में एक साई समाज हो सकता है । "साई सो सत्य साई और सत्य साई सो साई ।" मैंने अनेक बार कह दिया है और तुमभी जानते हो, और इस सत्य को अनुभव भी कर चुके हो । फिर तुम पूछ सकते हो कि क्या साई समाज सत्य साई समाज से भिन्न कुछ और है ? अच्छा, यह नाम-रूप, सत्य साई, उन सब संस्थाओं पर, जो इस नाम से संयुक्त हैं, अधिकार रखता है । 'साई समाज' के लिए तो कोई नाम-रूप धारी है नहीं, जो उस पर अधिकार या अनुशासन रखे, इसलिये यदि धन एकत्रित

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

किया जाता है, उपयोग या दुरुपयोग किया जाता है तो इस शरीर को साई समाज पर कोई प्रकट रूप से अधिकार नहीं है। इसलिये सबसे उत्तम यही है कि दोनों को अलग-अलग चलने दिया जावे, जो जैसा करे करने दो। कुछ अन्य संस्थाओं को स्वामी या संन्यासी लोग भिन्न-भिन्न प्रकार से चलाते हैं। यदि हम में से कोई ऐसा है जो उन संस्थाओं से सम्बन्ध रखता है तो जिला प्रेसीडेन्ट या स्टेट प्रेसीडेन्ट को उनका नाम तत्काल हटा देना चाहिये। लोगों को यह अधिकार है कि वे किसी नाम-रूप की उपासना पूजा करें जिसमें भी उनकी रुचि हो, परन्तु संगठन में हमें दोहरी निष्ठा वाले व्यक्ति नहीं रखने चाहियें। केवल वे लोग ही, जिन्हें इस नाम-रूप में विश्वास और श्रद्धा हो, इस संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये उत्साह से कार्य कर सकते हैं, रखे जावें।

निस्सन्देह हर व्यक्ति दैवत्व से पूर्ण है परन्तु दैवत्व की अभिव्यक्ति के अनेक स्तर या कोटियां हो सकती हैं। एक सुलगती सिगरेट के सिरे पर अग्नि तथा अगरबत्ती के सिरे पर अग्नि की चिनगारी दोनों में से कोई भी सूखी लकड़ी तक को जलाने में असमर्थ होती है। परन्तु, दावाग्नि अपनी लपटों से हरे से हरे वृक्ष को लपेट कर भस्म कर देती है। इस प्रकार दैवी तत्व की अभिव्यक्ति की श्रेणी में अन्तर होता है। बल्बों की प्रकाशोत्पादकता में अन्तर हुआ करता है जो कि विद्युतधारा को प्रकाश में बदल देते हैं। कुछ लोग अपने को महान या सर्वोच्च होने का दावा कर सकते हैं, परन्तु यदि वे ऊंचाई पर पहुँच भी गये हों तो भी गृद्धों की तरह ऊपर मंडराते हुये भी, उनके नेत्र नीचे मैदानों में अपने लिये भोजन ढूंढते ही रहते हैं। उनके नाम और रूप तो उच्चकोटि के स्वामियों जैसे होते हैं, परन्तु उड़ने के विचार नीच होते हैं। ऐसे लोगों से सम्पर्क मत रखो, उनकी स्थिति चाहे जैसी ऊंची हो उनकी दृष्टि तो क्षुद्र पदार्थों की ओर रहती है। अपने प्रयत्न से स्वयं बचो, विवेक प्राप्त करो और सत्य का साक्षात्कार करो। तभी तुम बाहर निकल कर दूसरों को भी साक्षात्कार में सहायता दे सकोगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रार्थना-भवन में प्रतिराज्य के आधार पर बैठकें होंगी। जब मैं उधर आऊं तो तुम मुझे बिना किसी उद्वेग के या दलबन्दी की भावना के डिस्ट्रिक्ट प्रेसीडेन्टों और स्टेट प्रेसीडेन्टों, जिन्हें तुम उस पद के उपयुक्त समझो, के नाम सुझाना उन जिलों और राज्यों के लिये जहाँ अभी तक किसी प्रेसीडेन्ट की नियुक्ति नहीं की गयी है। उन स्थानों पर भी, जहां के लिये नाम पहले से ही चले आते हैं, तुम परिवर्तन सुझा सकते हो यदि तुम्हें ऐसा करने की अन्दर से प्रेरणा होती हो तो। परन्तु ऐसा परस्पर परामर्श और सहमति से करना। व्यक्तिगत द्वेष को त्याग देना और व्यक्तिगत गलतफहमी को कोई स्थान मत देना। याद रखो सदस्यों के लिये विश्वास और भक्ति का होना आवश्यक योग्यता है। यह भी स्मरण रखो कि इस संगठन के विस्तार से विश्व में, जो इस समय अस्तव्यस्तता से पीड़ित है, शान्ति और सुव्यवस्था आवेगी। केवल आध्यात्मिक उन्नति से ही दुनिया को सुधारा जा सकता है और बचाया जा सकता है; यह सब प्रयास आध्यात्मिक संगठनों को ही करना है।

लोग यह दावा कर सकते हैं कि वे समाज सेवा में संलग्न हैं, यह कि राज्य द्वारा जनता के कल्याण के लिये जो कार्य आयोजित किये गये हैं उनमें वे भाग ले रहे हैं, निर्देशन कर रहे हैं। परन्तु जो भी कार्य, नौकर की तरह या बिना किसी त्याग और प्रेरणा से किया जाता है और जिस कार्य में हृदय से प्रेम नहीं होता है वह 'सेवा' नहीं हो सकता है। मैं लोक संग्रह के लिये आया हूं, लोक संग्रह का अर्थ है संसार की प्रसन्नता और कल्याण की अभिवृद्धि करना। इसलिये, जब तुम लोगों में प्रेम और मेल इस संगठन के माध्यम से विस्तृत करते हो, तो तुम्हारे कार्य से निश्चय ही मुझे प्रसन्नता होगी। यदि सभी इकाइयाँ प्रेम, सहनशीलता और पारस्परिक सहयोग से सेवाकार्य में जुट जावें तो इस देश में शान्ति और समृद्धि आ सकती है।

कुछ स्टेट प्रेसीडेन्टों और जिला प्रेसीडेन्टों ने मुझे लिखा है कि लोग उन्हें गलत समझ रहे हैं, और दोषारोपण भी करते हैं, और उन्हें ऐसे पत्र प्राप्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हो रहे हैं जिनमें उनकी ईमानदारी पर भी ग्राक्रमण किया गया है। किसी साधक का इस प्रकार के पत्रों से क्षुब्ध होना दुर्बलता का लक्षण होता है। इस प्रकार के दोषारोपण पर ध्यान देकर सावधान ग्रपनी शान्ति न खो बैठना ! सत्य को सुनो, सत्य के सुनने से शान्ति ग्राती है। तब तुम्हारी साधना सफल होगी। मैं भी तो इस प्रकार के दोषारोपण से मुक्त नहीं हूँ। तुम देख सकते हो मेरे कान बालों से ढके रहते हैं। भक्तों से मुझे सूचनायें मिलती रहती हैं, उन लोगों से भी जो दूसरों पर दोषारोपण करते हैं या पर-निन्दा करते हैं ग्रौर झूठे भय का प्रचार करते हैं। यह बाल इन सूचनाओं को 'छानने' का कार्य करते हैं ग्रौर जो सत्य सूचनायें और ग्राख्यायें होती हैं वे ही मेरे कानों में प्रवेश कर पाती हैं ग्रौर ग्रानन्द देती हैं।

ग्राज मैंने इन ग्रपराधों ग्रौर ग्रसफलताग्रों की चर्चा कठोरता से की है, इसकी कसर मैं कल, तुमको ग्रपने चातुर्य ग्रौर ग्रपनी ग्राध्यात्मिक उन्नति की क्षमता का सर्वोत्तम प्रयोग करने की विधि बताकर, पूरी कर दूंगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६३ प्रश्नों के उत्तर दिये

(प्रशान्ति निलयम्, अखिल भारतीय, कान्फ्रेंस. २२-११-१६७०)

इस पृथ्वी पर मानव जीवन की सार्थकता इसी में है कि वह अपना जीवन भगवान् के प्रति प्रेम से पूर्ण करले और उस प्रेम को मानव, जोकि भगवान् की ही मूर्ति है, की सेवा में परिणत करे। यदि मानव में प्रेम नहीं है और जो कुछ हो भी उसे सभी प्राणियों के प्रति न व्यक्त करे, तो वह इस पृथ्वी पर भार स्वरूप है।

अपने भावों को शुद्ध रखो, अपने मस्तिष्क को इतना शक्तिशाली बनाओ कि वह अज्ञान और इन्द्रियों की दुष्टता की सम्मिलित शक्ति का सामना सफलतापूर्वक कर सके। तभी तुम्हें शान्ति और आनन्द पाने का निश्चित भरोसा होगा। व्यायाम से तुम शारीरिक स्वास्थ्य बनाये रखते हो, इसी प्रकार मानसिक स्वास्थ्य (क्योंकि मन ही तो बन्धन और मोक्ष का कारण होता है) भी कुछ अभ्यासों के द्वारा ही बनाये रखा जा सकता है।

शुद्ध भोजन पाने से मस्तिष्क भी शुद्ध और कुशाग्र हो जाता है। तब यह आकर्षणों और बाधाओं को काटकर भ्रम को छिन्न-भिन्न करने में समर्थ होता है। तुम्हें सतत् प्रयत्न करके भी सदा सत्संग या आध्यात्मिक संगठन के वातावरण में रहना चाहिये।

आध्यात्मिक संगठन में सदस्य लोग इस पर वाद-विवाद नहीं करते कि क्या देखा, सुना, चखा जासकता है या स्पर्श किया जासकता है; वे लोग तो अदृष्ट के अन्वेषण में रुचि रखते हैं। जो अतीन्द्रिय सत्य है, जहां इन्द्रियां, और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मन बुद्धि भी पहुँचने में असमर्थ रहते हैं अर्थात् भगवान् की प्राप्ति की तीर्थ-यात्रा पर चलते रहते हैं।

मस्तिष्क को 'करण' एक यंत्र कहते हैं। इन्द्रियां भी यंत्र होती हैं जोकि पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रकृति से संपर्क करके सूचना एकत्रित करती हैं। मन इन सबके ऊपर देख-रेख करने वाला यंत्र है जो इन्हें दिशा निर्देश करता है और इन पर अधिकार रखता है। इसे अन्तःकरण या आन्तरिक यंत्र कहते हैं। मन से उच्चतर बुद्धि का स्थान है जो इन्द्रियों के माध्यम से मन के द्वारा संग्रहीत संवेदनाओं और सूचनाओं का विश्लेषण और वर्गीकरण करती है। बुद्धि चित्त (अथवा चेतना) के अधीन होती है और यही व्यक्ति का अहम् या 'मैं' भाव होता है। मन को बुद्धि के अधीन ही होना चाहिये परन्तु यह प्रायः इन्द्रियों के संकेत पर क्रिया करने लगता है, जोकि इसकी सेविकायें होती हैं। यही कारण है कि मन मनुष्य को बंधन में डालने का कारण बन गया है।

अनेक लोगों ने मन की प्रकृति जानने के लिये मुझे लिखित प्रश्न दिये हैं। इसलिये, यद्यपि मैं इस बात को अपनी वार्ता में अनेक बार समझा चुका हूं, मैं पुनः इसके संबंध में चर्चा करूंगा। इस समय तुम सब यहाँ प्रशान्ति निलयम् में एकत्रित होकर हाल में बैठे हो, परन्तु यदि तुम्हारा मन मद्रास या कलकत्ता में भटक रहा हो तो तुम अगली पंक्ति में अपने सामने बैठे व्यक्ति को नहीं देख सकोगे, न मेरी वार्ता ही सुन पाओगे, यद्यपि मैं इतने उच्च स्वर से बोल रहा हूं। यद्यपि तुम्हारे आंख, कान यहीं उपस्थित हैं, स्वस्थ और कार्य करने में सक्षम है, यदि तुम्हारा मन उनका नियंत्रण और निर्देशन नहीं कर रहा है तो इन्द्रियां असमर्थ रहती हैं; वे अन्तःकरण को कोई सूचना नहीं प्रेषित कर पाती हैं। सुनने, सूंघने, देखने, चखने या स्पर्श करने की क्रियायें, मन के अन्यत्र संलग्न होने की दशा में, प्रभावी और अर्थपूर्ण ढंग से नहीं हो पाती हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यह शरीर तो एक टार्च के समान है। इसमें नेत्र बल्ब हैं, बुद्धि स्विच है। परन्तु आवश्यक सेल मन होता है। नवीन बल्ब लेकर और स्विच दबाकर नई टार्च से भी प्रकाश नहीं किया जा सकता यदि सेल ठीक कार्य न करे।

परन्तु मन, तर्क, चेतना और अहंभाव के परे आत्मा होती है, वही चरम तत्त्व सत्, जगदात्मा या भगवान् है।

तर्क सम्मत ज्ञान, अथवा इन्द्रियों के माध्यम से संग्रहीत, तर्क और विवेचना द्वारा विश्लेषण और वर्गीकृत ज्ञान केवल भ्रामक ज्ञान होता है। यह तो पार्थिव और भौतिक ज्ञान है इसमें तो समयानुसार संशोधन और परिवर्त्तन की सदा गुंजायश रहती है। यह तो पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आकाश) का ज्ञान पंचेन्द्रियों के माध्यम से पंच महाभूतों की तन्मात्राओं (गंध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द) का संग्रह करके किया गया ज्ञान है। फिर प्रश्न उठता है कि इस भ्रामक संसार में रहते हुये, भ्रामक ज्ञान को संग्रह और इस पर विश्वास करके तुम कैसे संतुष्ट रह सकते हो? इस सब भ्रामक दृश्य के परे पुरुष का साक्षात्कार करो, जो इस भ्रम, छलना या माया का स्रष्टा है और जिसने अपने आपको इसी में, इसी के माध्यम से व्यक्त किया है। सांसारिक ज्ञान तो अस्थाई, विशिष्ट, सीमित और व्यक्तिगत होता है, यह शाश्वत, अनंत, असीम, निरपेक्ष और ब्रह्म को कैसे व्यक्त कर सकता है? इसी का उत्तर वेद है।

यह हमसे अपनी सुप्तावस्था के स्वप्नों का विश्लेषण करने को कहता है। स्वप्न तो अवास्तविक और भ्रामक होते हैं। परन्तु, फिर भी, जब तक हम सोये हुये रहते हैं यह अनुभव वास्तविक और सत्य तर्क सम्मत ही लगता है। प्रायः इन स्वप्नों में भ्रामक अनुभवों के आधार पर इतनी सीमातीत उत्तेजना भय या आतंक की अनुभूति होती है कि कष्ट या वेदना से स्वप्न देखने वाला जाग पड़ता है और जागते ही सब अनुभूति छू मंतर हो जाती है। यह जागना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

किसके कारण हुआ है ? स्वप्न ने ही स्वप्न के नाश हो जाने में सहायता की है । इसी तरह इस मायामय संसार में 'जागृत स्वप्नावस्था' में जो अनुभव प्राप्त होते हैं वे भी सत्य और उचित प्रतीत होते हैं; कुछ अन्य अनुभव अथवा वेदों के महाकाव्यों की दहाड़ मनुष्य को उच्च चेतना में प्रतिष्ठित कर देते हैं, तब मनुष्य को जागृतावस्था के सभी अनुभव और क्रिया में हास्यास्पद और स्वप्न-वत् असत्य प्रतीत होने लगते हैं ।

कुछ दिये हुये प्रश्नों में सृष्टि रचना के संबंध में जिज्ञासा की गयी है । अच्छा, यदि तुम यह समझ सके हो कि तुम्हारा स्वप्न कैसे अस्तित्व में आता है, तो तुम यह भी समझ सकते हो यह सृष्टि कैसे उत्पन्न हुयी । निद्रा से स्वप्न उत्पन्न होते हैं । भगवान् की माया ने यह सृष्टि उत्पन्न की है । यह विश्व स्वप्न के समान ही असत् है । यह तो सापेक्ष सत्य है, यह निरपेक्ष सत्य नहीं है । वैदिक ऋषियों ने अपनी शुद्ध बुद्धि के प्रकाश में आनन्दित होकर सभी मानवों के ज्ञान के लिये घोषित किया 'तत्त्वमसि' (तू वही है) 'प्रज्ञानम् ब्रह्म' (बुद्धिमत्ता, ज्ञान ही ब्रह्म है); मैं ही सब कुछ हूं, मैं ही सर्वोपरि हूं, मैं एकमेवाद्वितीयम् हूं । जब यह अन्तरतम को छूने वाली घोषणायें हृदय में स्पंदित हो उठती हैं तो मानवों को सत्य के दर्शन हो जाते हैं ।

इसे भूमा भी कहा जाता है, जो विस्तृत और निस्सीम है, अपरिवर्तनीय, देश काल के प्रभाव से परे है, भूमि सीमित है । इसका भूत, भविष्यत और भिन्न वर्तमान भी है । इसलिये यह कभी सत्य को व्यक्त नहीं कर सकती । केवल भूमा ही उसे व्यक्त कर सकता है । इसलिये भूमा में निवास करो, भूमा को श्वास के साथ अन्दर ले आओ, सोचो, योजना बनाओ और उसी असीम, अपरिवर्तनीय में कार्य करो; वह तुम्हीं में है ।

अपनी इच्छाओं और कार्य के तुम्हीं केन्द्र हो । तुम अपने लिये ही आनन्द की आकांक्षा करते हो । तुम्हारा सत्य स्वयं तुम्हीं में है । जब तुम दूसरों की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रसन्नता के लिये भी कार्य करते हो तब भी यह अपनी ही प्रसन्नता के लिये किया गया प्रयास होता है; तुम टेरीलीन की कमीज चाहते हो, तब भी तुम टेरीलीन की कमीज के लिये नहीं अपनी निज की प्रसन्नता के ही लिये चाहते हो। तुम्हें एक मीठे की तश्तरी चाहिये, निश्चय ही वह चाहना तश्तरी के लिये नहीं अपने लिये होता है। मां बच्चे को अपनी तृप्ति के लिये दुलराती है। यह 'तुम' कौन है जो इच्छा करता रहता है, जो सेवा करता है, जो प्रयत्न करता है, जो आकाँक्षा करता है और अन्ततोगत्वा जो प्रसन्न, हर्षित और संतुष्ट होता है। यह 'मैं' है जो प्रत्येक चेतन जीव 'मैं' 'मैं' 'मैं' कहकर व्यक्त करता है। अब तुम इस 'मैं' की उपेक्षा करके इस बात की पुष्टि करते हो कि तुम उसके सभी साज़-सामान, उपकरण और यंत्रों सहित शरीर हो।

यह भ्रान्त धारणा और अज्ञान भी उसी से प्रारंभ हुआ है जिसने तुम्हें बुद्धि और प्रकाश प्रदान किया है। सूर्य से ही प्रकाश उत्पन्न होता है उसी से वह बादल का टुकड़ा भी जो दर्शक और सूर्य के मध्य स्थित होकर सूर्य को देखने वाले की आंख से छिपा देता है। जो नेत्र देखता है वही मोतियाबिन्द उत्पन्न करता है, जो दृष्टि को धूमिल, और कभी कभी पूर्णतया समाप्त कर देता है। उसी आत्मा से, जो प्रकाश देती है, ज्ञान देती है, माया उत्पन्न होती है जो आत्मदर्शन की बाधा बन जाती है और भ्रमित करती है। जलते हुये लाल तप्त कोयले ही से राख उत्पन्न होती है जो कुछ देर बाद कोयले के ऊपर जम जाती है और उसका लाल स्वरूप ही अवगुंठित हो जाता है।

हम चाहें तो फूंक कर राख उड़ा देते हैं और जलते कोयले पुनः प्रकट हो जाते हैं। मोतियाबिन्द भी हटाया जा सकता है, आँधी बादलों को उड़ा ले जाती है। इसी प्रकार साधना भी भ्रम और माया के आवरण को, जो आन्तरिक 'मैं' को चेतना से छिपाये हुये है, हटा देती है और हमें आत्मा की चेतना या बोध प्राप्त हो जाता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

साधना के सम्बन्ध में भी मुझे अनेक प्रश्न प्राप्त हुये हैं। लोग पूछते हैं; हम दूसरों की सेवा करके उनके दुख दूर करते हैं। हम भूखों को, निर्धनों को खिला रहे हैं; और भी अनेक सत्कार्यों को करते हैं, क्या यह सब साधना नहीं है? परन्तु, यह तो दूसरों की सेवा नहीं है यह तो तुम अपनी ही सेवा करते हो। एक व्यक्ति तुम सब पदाधिकारियों को भोज के लिये आमंत्रित करे और बाद में घोषणा करे कि "मैंने सभी प्रतिनिधियों को प्रीति-भोज दिया हैं"। वह भी साथ बैठकर सभी प्रतिनिधियों के साथ भोजन करले। इस प्रकार उसने स्वयं भी तो भोज का आनन्द लिया; लिया कि नहीं? जिस भोज का आयोजन उसने किया उससे उसे भी आनन्द मिला। इस प्रकार अन्ततोगत्वा यह भी अपनी ही सेवा थी।

जब तुम यह अनुभव करो कि तुम्हारी सेवा प्राप्त करने वाला 'कोई अन्य' नहीं बल्कि तुम स्वयं हो; तभी तुम्हारी सेवा उच्च कोटि की और प्रभावशाली होगी। अपने मन में इसी सिद्धान्त को दिनोंदिन दृढ़ता से जमाते जाओ।

नेकी करने वाले को अपने आस-पास वालों से नेकी ही बदले में मिलती है। और जगदातमा भगवान् भी उसका कल्याण करता है। यदि तुम बुराई करोगे तो बदले में वही प्राप्त भी होगी। दैवत्व तो केवल प्रतिध्वनि, परावर्तन और प्रतिबिम्ब ही डालता है। भगवान् किसी से पक्षपात् नहीं करता है। विचार से इच्छा उत्पन्न होती है, इच्छा वह रूप लेकर प्रकट होती है जैसा कि चाहा जाता है। अच्छे विचार रखो, अच्छी इच्छायें उत्पन्न होंगी जो अच्छे रूप में व्यक्त होंगी।

अहिल्या अनेक वर्षो से शिला खण्ड के रूप में पड़ी हुयी थी क्योंकि उसके पति ने उसे यही शाप दिया था। उस पत्थर में एक मानवीय विचार था जो राम के चरण स्पर्श मात्र से पुनः मानवाकार में व्यक्त हो गया। यदि अहिल्या 'विचार शून्य' होकर पत्थर में बदल गयी होती तो पुनः स्त्री के रूप में नहीं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रकट होती। इसलिये जंव तक विचार का लेशमात्र भी शेष रहता है; तो उसमें से पुनः आकृति उभरेगी, बढ़ेगी और क्षीण होगी, अर्थात् जन्म और मृत्यु अपरिहार्य है।

विचार शक्ति का रामायण एक और उदाहरण प्रस्तुत करती है। रावण एक महान व्यक्ति था जिसने धर्मशास्त्रों को कंठ कर लिया था और जो कर्म-काण्ड को पूरी तरह से सम्पन्न करता था। वह प्रति दिन कई शिव मंदिरों की परिक्रमा करता था। उसे चारों वेद और छः शास्त्रों पर असाधारण अधिकार प्राप्त हो गया था। इसीलिये उसकी प्रशंसा की जाती थी और उसके १० सिर चित्रित किये जाते थे। उसकी रानी मन्दोदरी ने अपने पति की मृत्यु, और बन्दरों की भीड़ जोड़ कर लाने वाले एक मानव के हाथों पराजय, पर विलाप किया। उसने शास्त्रों से जान लिया था कि डूबने, वृक्ष से गिरने या बन्दरों के हाथ से मृत्यु को प्राप्त होने वाला प्रेत योनि में जाकर अंधकार में भटकता रहता है। इसलिये उसे आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े महापंडित, धार्मिक भक्त रावण का अंत इतनी निम्न कोटि का क्यों हुआ। तव उसे स्मरण आया कि रावण के हृदय में काम की एक चिनगारी थी जिसमें उसकी समस्त विद्वत्ता और भक्ति जलकर राख हो गयी थी। वह अपनी इन्द्रियों को न तो वश में रख सका और न उन्हें किसी अच्छी दिशा में मोड़ ही दे सका था। वह बैल जो जुये को नहीं अंगीकार करता है, घोड़ा जो लगाम को नहीं मानता है, एक कार जिसमें ब्रेक न हो और आत्म-संयम हीन व्यक्ति, ये सब अंततोगत्वा विनाश को ही प्राप्त होते हैं।

अपनी इन्द्रियों और उद्वेगों को संयमित रखने के लिये नियमित रूप से साधना करो। ऐसे लोगों की वातों पर मत ध्यान दो जो तुम्हारे परिवर्तित जीवन की खिल्ली उड़ाते हों। वे अन्य लोगों को संवोधन कर तुम्हें संकेत करके हंस कर कहेंगे, "इस व्यक्ति की ओर देखो, ये भी बड़े भारी साई भक्त हो गये हैं।" "इनका जप और भजन तो देखो" ! परन्तु तुम अपनी दृष्टि और भजन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

स्थिर और भावपूर्ण बनाये रखो। विचलित मत होओ, सीधे आगे बढ़ते चलो।

कुछ प्रश्न नाम जप के सम्बन्ध में भी मुझे दिये गये हैं कि जप में कौन-सा नाम जपा जावे। रामनाम या पंचाक्षरी 'नमः शिवाय' या अष्टाक्षरी मंत्र 'ॐ नमो नारायणाय' या मैं कोई और नाम या मंत्र बताऊँ उसे जपा करें। शास्त्रों में इसका स्पष्ट उत्तर दिया गया है। ईश्वर एक और अद्वितीय है। तुम अपनी कल्पना और रुचि के अनुसार उसकी पूजा कर सकते हो। वह नहीं बदलता है। तुम जिस नाम से जिस रूप में चाहो पूजो; परन्तु वह नहीं बदलता है। मिठाइयाँ अनेकों नाम रूप वाली होती हैं। परन्तु उन सब में मिठास उत्पन्न करने वाली शकर एक ही होती है। तुम चाहे एक मिठाई को दूसरी से अधिक पसन्द करो; तुम्हें ऐसा करने का पूर्ण अधिकार भी है; परन्तु अन्य लोगों की पसंदगी या रुचियों की निन्दा मत करो। चूंकि तुम्हें कृष्ण के नाम और रूप में अधिक रुचि है तुम उसी की उपासना करो और आनन्दित होओ। इससे तुम्हें सर्वाधिक रोमांचकारी आनन्द प्राप्त होने पर भी उस भाई से मत झगड़ो या बहस करो जो उसी भगवान् की राम, शिव, विष्णु या अन्य किसी नाम से अराधना करता है। तुम्हारी ही तरह उसे भी अपनी रुचि के नाम, रूप वाले भगवान् की उपासना करने की उतनी ही स्वतन्त्रता और अधिकार है। पूजा की सफलता या प्रभविष्णुता, नाम, रूप या किसी मंत्र विशेष में नहीं होती है। यह तो हृदय की आकांक्षा और तृषा में निहित रहती है जिस रूप और नाम की तुम्हारी तृषा होगी भगवान् वही रूप धारण कर तुम्हारी उपासना को सार्थक करता है। उसकी कृपा का माप दण्ड यही है। जब पालने में पड़ा बच्चा रोने-चिल्लाने लगता है तो मां चाहे छत की मुंडेर पर ही क्यों न हो वह सीढ़ियाँ उतर कर बच्चे को थपकी देने आती ही है, वह यह पता लगाने में देर नहीं करती है कि बच्चा किस ताल स्वर से रोया। इसी प्रकार जगदम्बा भी अपने उच्च सिंहासन से उतर कर अपने बच्चे को दुलराने और थपकी देने आती है प्रतिबन्ध केवल इतना है कि

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पुकार सच्चे भक्त-हृदय से निकली हुयी और स्वेच्छा से भक्ति से पूर्ण होवे। वह यह नहीं देखती है कि मंत्र का उच्चारण शुद्ध और उचित स्वरों से हुआ अथवा भक्त के मन में भगवान् की मूर्ति ध्यान के समय कैसी थी। हृदय की भावना का ही महत्त्व होता है। पूजा कार्य में व्यय किये जाने वाले समय और धन का कोई महत्त्व नहीं होता है।

साधना सच्चाई से करो। दूसरों का अनुकरण मात्र मत करो। यह तो तुम्हारी सच्ची आकांक्षा से ही प्रारम्भ होवे। तुम्हें प्रतियोगिता अथवा रोब जमाने के उद्देश्य से प्रेरित साधना से कुछ लाभ न होगा। "वह भजन मंडली तो सप्ताह में दो बार नगर संकीर्तन करती है तो आओ हम भी सप्ताह में दो बार नगर संकीर्तन निकालें, अथवा उनसे बढ़कर हम तीन बार प्रति सप्ताह नगर संकीर्तन करने जाया करेंगे"। इस प्रकार की होड़ या प्रदर्शन त्याग देना चाहिये। कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो अच्छा कार्य करने वाली इकाइयों को अकारण ही नीचा दिखाना चाहते हैं क्योंकि उन इकाइयों को जो यश प्राप्त होता है उसे वे सहन कर सकने में असमर्थ होते हैं। इसलिये केवल द्वेष के कारण वे इन इकाइयों को हानि पहुंचाने का प्रयास इसीलिये करते हैं कि वे अपने अच्छे कार्यों को आगे उतना न कर पावें।

परन्तु उन इकाइयों का नाम नीचे लाने का और अपनी इकाई का नाम ऊंचा करने का एक और ढंग भी है। अध्यापक श्यामपट पर एक रेखा खींच कर शिष्यों से कहता है कि कोई भी श्यामपट तक आकर इस रेखा को बिना स्पर्श किये इसे अधिक छोटा करदे। शिष्य इस पर विचार तो बहुत करते हैं, तब अंत में अध्यापक एक और रेखा, पहली वाली से अधिक लम्बी, खींचकर पुनः पूछता है कि दोनों में से अधिक छोटी कौन है। सभी शिष्य इस हल से चमत्कृत होते हैं। तुम्हारी इकाई अपने सेवा कार्यों का विस्तार करे, उन्हें अधिक दक्षता से और अधिक लोगों को लाभान्वित करने वाला बनावे। कार्यों को उत्तमता से करने का यही ढंग है—बदनामी करना या आलोचना करना नहीं, बल्कि ठोस और उपयोगी कार्य होवे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक और प्रश्न का उत्तर अब मैं देना चाहता हूं जो मुझे दिया गया है। संभव है इससे तुममें से कुछ को सुनकर दुख होवे, परन्तु मैं सोचता हूं कि सत्य को बता देना ही चाहिये। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो इस प्रकार के विभिन्न कार्यों, जैसे हठयोग, क्रियायोग या राजयोग जोकि लोगों को आत्म साक्षात्कार कराने का दावा करते हैं, की ओर आकर्षित होते हैं। परन्तु मैं साफ-साफ कहना चाहता हूं कि इनमें से कोई भी भगवान् का साक्षात्कार नहीं करा सकता है। इस बात को मैं बहुत जोर देकर स्पष्ट कर रहा हूं। प्रेम योग ही एक ऐसा है जो तुम्हें भगवान् तक पहुंचा सकता है। वे अन्य योग मस्तिष्क को अस्थाई शान्ति दे सकते हैं, और मन के विक्षोभों को शान्त कर सकते हैं स्वास्थ्य सुधार सकते हैं अथवा जीवन की अवधि में कुछ साल की वृद्धि कर सकते हैं, बस इससे अधिक कुछ नहीं कर सकते। उस बढ़ी हुयी आयु के उन वर्षों में तुम कौनसा भला काम करने की आशा करते हो ? यदि प्रेम का अभाव है तो तुम इस बोझे के नीचे अपने को दबा हुआ अनुभव करोगे, यदि प्रेम को बढ़ाया जा सकता है और शरीर का उपयोग अन्य लोगों की सेवा के लिये किया जा सकता है तो अपने स्वार्थ की चिन्ता नहीं होनी चाहिये।

शरीर का रक्षण और पोषण पर-सेवा के लिए किया जाना चाहिये, अथवा आत्म साक्षात्कार के लिये किया जाना चाहिये। कुछ लोग आध्यात्मिक साधना में कड़ाई के साथ अनुशासन का पालन करते हैं, एक कठोर दिन चर्या का नियमित रूप से पालन करते हैं। जप, ध्यान इत्यादि उसी क्रम से उतना ही प्रतिदिन चलता है। निस्सन्देह यह अच्छी बातें हैं। जब तुम्हें दूसरे का दुख दूर करने या सहायता देने के लिये, यदि उसकी परिस्थिति कठिन और तात्कालिक होवे तो जप ध्यान छोड़कर भी जाना चाहिये। इससे तुम्हें उसकी सेवा से उस समय जप ध्यान न करने पर भी अधिक लाभ रहेगा। यदि तुम्हें पड़ोस के व्यक्ति की चीख पुकार अपने जप ध्यान में बाधक प्रतीत होवे और तुम वह स्थान उस 'कोलाहल' के कारण छोड़कर किसी शान्त स्थान पर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

निकल जाओ जहाँ निर्बाध रूप से ध्यान कर सको; तो तुम्हें ऐसी साधना से कोई पुण्य लाभ न होगा। ऐसा करना निश्चय ही एक कुकृत्य है और इससे तुममें भगवान् की कृपा प्राप्त करने की पात्रता नहीं आ पाती है। भगवान् तो स्वयं ही परोपकार के लिये आता है; और मानव जाति की सेवा करने आया ही है; वह निश्चय ही प्रसन्न होगा यदि तुम भी सेवा में लग जाओ। जो कार्य भगवान् को प्रसन्न करें उनमें लग जाओ बजाय इसके कि अपनी प्रसन्नता के कार्यों में लगे रहो। भगवान् सत्य से प्रसन्न होते हैं, धर्म से प्रसन्न होते हैं। जो धर्म की रक्षा करते हैं धर्म उनकी रक्षा करता है। अपना धर्म पहचानो और उसका पालन करो।

भक्त होने का झूठा दावा मत करो और न अपनी भक्ति की, धर्माचरण की, डींग मारो। तेलगू में एक कहावत है कि ऐसे भक्त प्रवचन या फटकार सुनने के समय तो बड़े नियम पालक और धर्माचरण का समर्थन करने वाले बने रहते हैं परन्तु ज्योंही वे सभा स्थल छोड़कर घर जाने लगते हैं तो पुराना स्वभाव और कुप्रवृत्तियां पुनः उनके मन पर हावी हो जाते हैं और वह पुनः पुराने मार्ग पर ही चलने लगते हैं। जब तुम प्रेम, सहनशीलता, विनम्रता और श्रद्धा के वातावरण से दूर हटने लगते हो तो इस बात की बड़ी संभावना रहती है कि तुममें से उपर्युक्त गुण भी खो जावें। इसलिये इन्हें कस कर ग्रहण किये रहो, दृढ़ रहो। दूसरों को प्रसन्न करने की लालसा, उनसे प्रशंसा प्राप्त करने की आशा, अथवा उनके मन में अपने सम्बन्ध में असत्य धारणा उत्पन्न करने का प्रलोभन, ऐसे भाव अपने मन में न उत्पन्न होने दो।

जब तुम दूसरों को धोखा देने का प्रयत्न करते हो तो याद रखो कि कोई न कोई ऐसा भी होगा जो तुम्हें भी धोखा दे जावेगा। एक चोर अपने व्यवसाय की सभी चतुराइयों में दक्ष था। ऐसी कोई तिकड़म या चतुराई न थी जो उसे न आती हो। एक दिन चोरी की बहुमूल्य वस्तुओं पर हाथ साफ करके उन्हें एक बंडल में बाँध कर लिये हुये वह एक सूनी सड़क से होकर जा रहा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

था, चोरी का माल उसके कंधे पर था। उसने एक बच्ची को सड़क के किनारे एक तालाब के किनारे खड़ा देखा, जो फूट-फूट कर रो रही थी। चोर ने उसके समीप जाकर पूछा, "तुम क्यों रो रही हो? तुम्हें क्या हो गया है"? बच्ची ने कहा (और यहाँ पर तुम्हें स्मरण रखना चाहिये कि चतुराई और बुद्धि का आयु से विशेष सम्बन्ध नहीं है) "मैं यहाँ नहाने आई थी मेरा स्वर्ण हार जल में गिर गया है—ठीक उसी जगह पर जहाँ मैंने डुबकी मारी थी वह जगह मेरे लिये सीमातीत गहरी थी"। चोर ने सोचा कि लगे हाथ इस स्वर्ण हार को भी लेता चलूं। यह नन्ही लड़की ही तो उसके और हार के बीच में है। इसलिये बंडल को किनारे रखकर हार खोजने के लिये वह जल में घुस गया। इसी बीच में लड़की बंडल उठाकर कुछ दूर दौड़ लगाने के उपरान्त बन में अदृश्य हो गयी।

निराश होकर चोर बाहर निकल आया, क्योंकि हार तो एक छलना थी, उसे मालूम हुआ कि कोई उसे भी ठग ले गया है। जो कोई किसी को ठगता है उसे एक दिन कोई ऐसा भी मिल जाता है जो उससे अधिक चतुर होता है और वह उसे बुद्धू बना कर चला जाता है।

एक प्रतिनिधि के द्वारा दी गयी पर्ची में एक सुझाव दिया गया है कि सदस्यों को ध्यान का प्रशिक्षण देने के लिये यहाँ प्रशान्ति निलयम् में नियमित कक्षायें लगायी जावें; क्योंकि बाद में इन्हीं प्रशिक्षणार्थियों के द्वारा ध्यान की क्रिया समस्त देश भर में फैलाई जा सकती है। जब मैंने यह सुझाव पढ़ा तो मैं हंसा। क्या कोई किसी अन्य व्यक्ति को ध्यान करना सिखा सकता है? या सिखाने का दावा कर सकता है? यह संभव है कि व्यक्ति को मुद्रा, बैठने का ढंग, टांगों की स्थिति, हाथ, पैर, गर्दन, सिर, रीढ़ को साधना, श्वास लेने का ढंग और गति की शिक्षा दी भी जा सकती है। परन्तु ध्यान तो एक आन्तरिक मानव का कार्य है, इसमें गंभीर शान्ति ध्यान करने वाले के मन में उतर आनी चाहिये। उसका मन अन्य क्षोभों और अवांछनीय प्रवृत्तियों से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रिक्त हो जावे और आन्तरिक दिव्य तत्त्व से निसृत आलोक से भर जावे। यह वह अनुशासन है जिसे न कोई पाठ्य पुस्तक सिखा सकती है और न कोई कक्षा ही इस प्रकार की शिक्षा दे सकती है। ध्यान की कक्षायें : जो लोग ऐसी कक्षायें लगाते हैं उन्हें यह भी पता नहीं कि ध्यान क्या होता है, जो सीखने जाते हैं उन्हें सीखने की कोई अभिलाषा भी नहीं होती है ! अपने मनोभावों को शुद्ध करो, अपनी वृत्तियों को स्वच्छ करो और प्रेम की वृद्धि करो। तभी तुम अपने स्वामी बन सकोगे। ध्यान की क्रिया का उद्देश्य ही व्यक्ति को इस प्रकार अपनी इन्द्रियों, मन, बुद्धि का स्वामी बनाना होता है।

मां बच्चे के समीप बैठकर कुछ शब्द बोल कर बच्चे को बोलने के लिये उत्साहित कर सकती है; परन्तु बच्चे को अपनी जिह्वा का प्रयोग करते हुए स्वयं प्रयत्न करना पड़ता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति तुम्हें आसन और मेरु-दण्ड को सीधा रखना, पालथी मारना, सीधे फैले हाथ घुटनों पर, उंगलियाँ फंसी हुयी, श्वास की गति स्थिर धीमी रखना तो सिखा सकता है; परन्तु मन की चंचलता को रोकना कौन सिखा सकता है ?

मन अत्यन्त सूक्ष्म और विस्तार में जाने वाला है। यह बहुत ही हल्का और सर्वत्र पहुंचने की क्षमता वाला, इधर-उधर फिरने वाला और किसी भी इच्छा के झोंके के साथ निकल जाने वाला है। यह कपास की गेंद के समान है जिसमें बिनौलों का बोझा स्थिर रखने को नहीं है। यह हल्के पदार्थ से भी हल्का है, यह दूर-दूर तक भ्रमण करने वाला है। यदि तुम इसे अनुशासित करना चाहो तो इसमें कोई भारी वस्तु बाँध दो। मन का खोल शरीर है; वह भी निस्सन्देह भारी होता है; परन्तु मन तो चंचल और स्वतन्त्र होता है। यह तो दूर-दूर तक कल्पना के साथ ही उड़ता फिरता है।

मन को कोई भारी कार्य सौंपना चाहिये जिससे यह स्थिर हो सके। इसी कार्य का नाम ध्यान है। मन को ऊपरी ओठ पर दोनों नथुनों को जोड़ने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वाले सेतु के ठीक सामने केन्द्रित करो। बायें नथुने से श्वास अन्दर ले जाओ और उस समय अंगूठे से दायाँ नथुना बन्द रखो। जब श्वास अन्दर जाती है तो यह 'सो' उच्चारण करती है, तब श्वास दाहिने नथुने से बाहर निकालो और उस समय दाहिने अंगूठे से बायां नथुना बंद किये रहो। जब श्वास बाहर जाती है तो यह 'हम्' उच्चारण करती है। इस प्रकार मंद गति से श्वास को अन्दर-बाहर गतिमान बनाये रहो और इच्छा के साथ कल्पना करो कि 'वह' (भगवान्) और 'मैं' (तुम स्वयं) एक हैं यह तब तक जारी रहे कि अन्त में श्वास की क्रिया और चेतना मिलकर एक अचिन्तित प्रक्रिया में परिणत हो जावें। मन को चौकीदार की जगह पर यह ताकने के लिये नियुक्त कर दो कि वह श्वास का आना जाना और 'सोऽहम्' की ध्वनि को अपने अन्तः कर्णेन्द्रिय से सुनता रहे। और तुम्हारे वही दिव्य तत्त्व होने की घोषणा का साक्षी बना रहे। वही दिव्य तत्त्व तो इस जगत का आधार है। यही ध्यान है इसी से विजय प्राप्त होगी।

जब यह 'सोऽहम्' ध्यान तुम्हारे मन में स्थिर होने लगे तो तुम अपने मन में अपने इष्टदेव के रूप का ध्यान करने लगो। उनकी आकृति पहले ऊपर सिर से प्रारम्भ कर पैरों तक कल्पना करो इस क्रिया में १५ से २० मिनट लग जावें। इसी बीच में शरीर के प्रत्येक अंग और अवयव की कल्पना से चित्र बनाते जाओ और इसे हृदय में अंकित करने की चेष्टा करो, फिर नीचे पैरों की कल्पना से प्रारम्भ कर सिर तक जाओ उसी प्रकार का चिन्तन कल्पना करते हुये विलोम गति से ध्यान करो। इस प्रकार से हृदय की वेदी पर इष्ट का रूप अंकित कर स्थिर करने की चेष्टा करो। इसे वहीं अमिट छाप से मुद्रित कर दो।

फिर तो तुम सर्वत्र वही रूप देख सकोगे, सभी व्यक्तियों में उसी के दर्शन होंगे। उसी एक को तुम अनेक रूपों में देख सकोगे। शिवोऽहम्, सोऽहम् मैं शिव हूं, मैं वही हूँ। केवल वही हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एक मुसलमान ने, जो अपने नगर की सत्य साई समिति का उपाध्यक्ष है, एक प्रश्न पूछा है। समिति के द्वारा जो नगर संकीर्तन ध्यान पूजा के कार्य चलाये जावें क्या वह उसमें भाग ले सकता है। यदि उसकी इच्छा है तो वह ऐसा कर सकता है; यदि उसे लगता है कि यह उसके आन्तरिक विश्वास के विपरीत है, तो उसे इनकी कोई आवश्यकता नहीं है। किसी को भी अपना विश्वास उपहास, व्यंग और उत्पीड़न के भय से नहीं त्यागना चाहिये। वह अपने विश्वास के अनुसार अपने घर के एकान्त में अपनी पूजा ध्यान जारी रख सकता है। उस पर इसके लिये कोई दबाव नहीं है कि वह अपने कामों का विज्ञापन, दूसरों के लिये जो दूसरे बाहर हैं, अवश्य करे। सभी धर्म परस्पर संबंधित हैं और जिन सिद्धान्तों की वे शिक्षा देते हैं अथवा जो संयम नियम पालन करवाते हैं, उसके लिये परस्पर एक दूसरे के ऋणी भी हैं। समय की श्रृंखला में वैदिक धर्म पहले, बौद्ध धर्म उसके बाद अब से २८०० वर्ष पूर्व हुआ था उसका पुत्र हुआ, ईसाई धर्म, जो बहुत कुछ पूर्वी विचार-धारा से प्रभावित है, पौत्र है। और इस्लाम, जिसके आधार में ईसाई धर्म के धर्म गुरु रहे हैं, वह प्रपौत्र है। सभी धर्मों में मन के लिये प्रेम एक मौलिक अनुशासन या सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया गया है, जिससे मानव पवित्र रहे और उसी दैवत्व में लीन हो सके।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६४ सत्यस्य सत्यम्

(प्रशान्ति निलयम् अखिल भारतीय कान्फ्रेन्स
श्री सत्य साई सेवा संगठन के कार्य-कर्त्ताओं की २२-११-१९७०)

विचार शब्द के रूप में व्यक्त होता है, शब्द कार्य का रूप धारण करते हैं और कार्यों का विकास व्यक्ति का स्वभाव बन जाता है। यह स्वभाव ही उसके चरित्र का निर्माण करता है। इस लिए विचार और उसकी प्रक्रिया पर सदैव दृष्टि रखो। विचार को प्रेम से प्रेरणा लेने दो, प्रेम सभी जीवों के प्रति सम्मान की भावना रखने से उत्पन्न होता है। सभी प्राणिमात्र, दैवी-गुण युक्त हैं। तुम सब दिव्यता की मूर्ति हो। इस सत्य को कभी न भूलो।

दो दिन से तुम धार्मिक वार्ताओं को सुन रहे हो और पवित्र विचारों में मग्न रहते हो। यह अखिल भारतीय कान्फ्रेंस, जिसमें भाग लेने के लिये तुम यहां आये हो, एक निमित्त मात्र है, जिससे कि तुम यहां बुलाये गये हो। कारण यह है कि तुम्हें कृपा की नूतन शक्ति से आविष्ट करना है, जिससे तुम अपने कर्त्तव्यों को और अधिक उत्साह और समझदारी से पूर्ण कर सको। उन इकाइयों के माध्यम से, कि जिनके पदाधिकारी तुम लोग हो, तुम भगवान् की उपासना कर रहे हो क्योंकि मानव-सेवा भगवान् की सेवा है; और जब भगवान् नराकार में मानव की सेवा करने आता है तो उसे यह देख कर कितनी प्रसन्नता होती है कि मानव मानव की सेवा बन्धुभाव से, उसे बीमारी संकट, या संशय से मुक्त करने के लिये, कर रहा है।

जब तुम दूसरों की सेवा कर पाते हो तो भी गर्व करने का कोई औचित्य नहीं है। क्योंकि तुम्हारे धन, शक्ति, चातुर्य और अधिकार या साहस तो ईश्वर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रदत्त उपहार सेवाके अवसर के प्रयोग के लिये हैं; तुम चाहे इसे मानो या न मानो। तुम इस दैवी उपहार को दूसरे अन्य दैवी उपहार, अर्थात् निर्धन, अशिक्षित, दुर्बल और बीमार, को अर्पित कर रहे हो क्योंकि वे निराश, दुखी और तुम्हारी सहायता के अभिलाषी हैं। एक व्यक्ति गंगा या गोदावरी में घुटनों तक जल में खड़ा होकर वेद मंत्रों का उच्चारण करते हुये, नदी की प्रशंसा करते हुये, जलाञ्जलि देता है; उस नदी का पानी उसके हाथों द्वारा उठाया जाकर पुनः उसी नदी में गिर जाता है क्योंकि नदी उस देवता का प्रतिनिधित्व करने लगती है। उसका जल उसी में भगवान् का उपहार भगवान् को ही, यही सब तो मनुष्य कर पाता है, इसी के करने की आवश्यकता भी है। उस भगवान् ने तुम्हें यह अद्भुत शरीर दिया है, यह मृदुभाषिणी जिह्वा और यह आश्चर्यजनक यंत्र मस्तिष्क भी तो दिया है। उसने तुम्हें बुद्धि, विश्लेषण और संश्लेषण की शक्ति, संग्रह-त्याग की क्षमता, भूल जाने और स्मरण रखने के गुण भी दिये हैं। इसे कृतज्ञता पूर्वक स्वीकार करो और इनका उपयोग सर्व-साधारण के सर्वश्रेष्ठ सर्वाधिक लाभ के लिये करो। इनका प्रयोग उस भगवान् का सर्वत्र, सभी व्यक्तियों में दर्शन पा सकने में करो। जीवन के सभी उत्थान-पतन के दिनों में, सुख-दुःख में, संशय और निर्णय के क्षणों में उन का प्रयोग करो और भगवान् को स्मरण रखो।

यह द्वन्दात्मक अनुभव उसी मन की अस्थिरता की देन है। नाम रूपों की विविधता से मन हर्षित होता है, इसे अनुशासन पालन द्वारा अद्वैत को पहचानने और मानने का प्रशिक्षण देना चाहिये। यह मूल्यों की मिथ्या कल्पना में रत रहता है और उसी का तिरस्कार करता है जो इसके लिये लाभप्रद है। बच्चे को मुलायम और कठोर दोनों प्रकार के खाद्य पदार्थों की पहचान कराई जाती है। प्रारम्भ में वह इस प्रकार के प्रयत्नों को अरुचिकर मानता है। इसी प्रकार मन को भी उस असीम, अनंत, विस्तृत, सर्वेश्वर का चित्रण करने के लिये उत्साहित किया जाता है जो देश, काल और कारण से भी परे और सभी अस्तित्वों का मूल कारण है। पहले मन को सगुण, साकार में रुचि पूर्वक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

लगाओ बाद में निराकार, नाम रूप उपाधि रहित, जिसमें सभी नाम रूपों का मन के द्वारा पर्यवसान है, ब्रह्म की उपासना में लगाओ। भजन, ध्यान, नाम-स्मरण, नगर संकीर्तन ये सब मन को शिक्षित करने के विभिन्न प्रकार हैं। जो आनन्द भगवान् में लीन होने पर प्राप्त होता है, वहीं पर इस शिक्षा की पूर्णता होती है।

जो व्यक्ति रोगी होता है उसे ही औषधियों का मिश्रण पेय पीना पड़ता है, वह भी तब तक जब तक कि वह पूर्ण स्वस्थ न हो जावे, वह मिश्रण चाहे जैसा कटु और अरुचिकर क्यों न हो। एक व्यक्ति जो अज्ञान के रोग से पीड़ित है इसी लिये उसे अहंकार और असंतोष सताते हैं, उसे जप-ध्यान की औषधि लेनी ही पड़ती है। सांसारिक पदार्थों से असाधारण आसक्ति का रोग तभी दूर होगा जब मन को भगवान् से संयुक्त कर दोगे। जप और ध्यान से भगवान् के प्रति अनुराग पैदा होता है।

कुछ लोग वर्षों दवा खाते और यह अनुभव करते हैं कि दवा से उन्हें कुछ लाभ नहीं हुआ है। वे निराश हो जाते हैं और उस दवा और चिकित्सक में ही विश्वास खो बैठते हैं। इसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्र में भी निराश साधक गुरु, साधना की क्रिया, मंत्र और यहां तक कि भगवान् में भी दोषारोपण करने लगते हैं। वे नास्तिक और उससे भी गये बीते हो जाते हैं। परन्तु, पानी एक छिद्रों वाले बर्तन में कैसे संग्रह करके रखा जा सकता है? जप, ध्यान के द्वारा तुम अपने हृदय को विश्वास और भक्ति से भले ही पूर्ण करलो, परन्तु भय, धर्मान्धता, भ्रम और संशय के छिद्रों से वह भक्ति और विश्वास रिक्त होते जाते हैं। यदि तुम भगवान् का साक्षात्कार करने में असफल भी रहते हो तो भी तुम नास्तिक, या उसकी सत्ता से इनकार कैसे कर सकते हो? यह तो निपट मूर्खता का चिन्ह है। जब पानी में तुम्हीं ने स्वयं शकर के बदले नमक मिला दिया है तो फिर उसके नमकीनपने की निन्दा क्यों करते हो? तुम्हें उसमें मिठास नहीं लगती है क्योंकि तुमने नमक मिलाया है। तुम चाहते हो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

मीठा परन्तु मिलाते हो नमक। तुम मुक्ति चाहते हो परन्तु बन्धन कसते जा रहे हो। तुम शान्ति चाहते हो परन्तु अपने में द्वन्दात्मक गड़बड़ी को बढ़ाते रहते हो।

तुम्हें बड़ा असन्तोष इस बात से है कि तुम्हारे पड़ोसी, जिसने अभी दो वर्ष पूर्व ही आध्यात्मिक साधना को प्रारंभ किया है, जबकि तुम २० वर्ष से नियमित रूप से आध्यात्मिक चर्या का निर्वाह करते चले आरहे हो; परन्तु उसे प्रसन्नता प्राप्त हुयी है और तुम दुखी ही बने हुये हो। तुम्हें लगता है कि तुम यहाँ मेरे पास वर्षों से आरहे हो ; परन्तु मैं उन लोगों को अपने पास बुलाता हूँ जो अभी कुछ समय पहले आये हैं। तुम्हारी प्रतिक्रियाओं में अन्याय और पक्षपात का स्वर मुखरित होने लगता है ; परन्तु इसका उत्तर तो भूतकाल में ही निहित है और उसके विषय में तुम्हें कुछ भी ज्ञान नहीं है। किसी पत्थर पर २० हथौड़े की चोटें पड़ीं और वह नहीं टूटा। एक अन्य व्यक्ति वहाँ आता है और उसकी दूसरी चोट पड़ते ही पत्थर टूट जाता है। जो व्यक्ति २० चोटों में पत्थर न तोड़ सका निराश हो जाता है, और दूसरा व्यक्ति, जो २ चोटों में ही सफल हो गया, प्रसन्न और उत्साहित हो जाता है। वास्तविकता यह है कि पत्थर २२ चोटों के उत्तरोत्तर संग्रहीत प्रभाव से टूटा था। तुम्हारे पड़ोसी के खाते में पहले की २० वर्ष की साधना जमा थी जो वह अपने पूर्व जन्मों से कारण शरीर के साथ संस्कार रूप में लाया था। तुमने अपने पिछले अनेक जन्मों में जिस मनोवृत्ति और झुकाव के साथ जीवन बिताये हैं उन्हीं के प्रतिफल स्वरूप तुम्हें वर्त्तमान शरीर और परिस्थितियाँ प्राप्त हुयी हैं।

कच्चा फल खट्टा और कड़ुआ भी होता है, परन्तु जैसे जैसे यह पकता जाता है खट्टापन या कड़ुआपन मिठास में परिवर्तित होने लगता है। आज की इन्द्रियासक्ति और सांसारिक पदार्थों की आसक्ति, आत्मा के प्रति आसक्ति में परिणत होजानी चाहिये, भगवान् के प्रति हो जानी चाहिये, जिससे तुम्हें आनन्द की मधुरता प्राप्त हो सके। एक बार तुम आनन्द में स्थित हो जाओ

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तो फिर देखने, चखने, सुनने सभी अनुभवों में आनन्द की अनुभूति होगी । ईशावास्यमिदं सर्वम् — यह सब ब्रह्म ही तो है !

परन्तु, फिर भी प्रश्न पूछा जाता है — कि तब वह (भगवान्) दिखाई क्यों नहीं देता है ? अच्छा समझलो कि जैसे दूध में मक्खन प्रत्येक बूंद में होता है । यदि मक्खन देखना है तो देखना तभी होगा जब उससे पहले कुछ क्रियायें पूर्ण कर ली जावेंगी, उबालना, दही जमाना, मथना इत्यादि । इसी प्रकार कुछ निश्चित आध्यात्मिक क्रिया जैसे जिह्वा द्वारा भगवन्नाम का, जो हृदय में भी निवास करता है जप करने से विश्वव्यापी भगवान् का निश्चित और तुष्टिदायक दर्शन होता है । अनुभव भी होता है ।

मनुष्य में भगवान् के लिये जन्मतः पिपासा होती है । वह ऐसे सर्वोत्तम आनन्द के लिये जो सदा बना रहे, घटे भी न, आकांक्षी रहता है । भगवान् को पाकर ही वह तृषा शान्त होती है, वह इसके स्थान पर अन्य कुछ पीकर या स्वाद चख कर शान्त नहीं होती है । चातक काले बादलों या उनकी गरज या चपला के कौंधने, या घनघोर वर्षा से भी, अपनी आन से विचलित नहीं होता है । वह चंचु खोले हुये आकाश में पृथ्वी और आकाश के मध्य कतिपय प्रथम और अछूती बूदों को सीधे ही मुँह में प्राप्त करने को उड़ान भरता है ऐसी है उसकी पिपासा; यही उसकी आकांक्षा और लक्ष्य भी होता है ।

जब वर्षा की बूंदें पृथ्वी तल को स्पर्श कर रजोमय हो जाती हैं वे चातक के लिये अपेय हो जाती हैं, ऐसा उसका विश्वास होता है । उसी प्रकार प्रेम, सेवा, अभिव्यक्ति, विस्तार, तृप्ति की शुद्ध आकांक्षा भी स्वार्थ पूर्ण उद्देश्यों लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, काम, घमंड से सम्पर्क होते ही अपवित्र और इन्हीं धूलिकणों से गंदली होजाती है । व्यक्ति के अहंकार और उस पर होने वाले दोषारोपण अथवा प्रशंसा से जो प्रतिक्रिया होती है उससे उसकी आकांक्षा मलीन हो जाती है । सर्वोत्तम तो यही है कि इस आकांक्षा को संचित रखा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जावे, इसे एकान्त और शान्ति में बढ़ाया जाये जब तक कि यह सफलता या असफलता दोनों में अविचलित शान्ति से शक्तिशाली न होजाये। इसके लिए अपने ही हृदय की शान्ति और एकान्त में नामस्मरण बड़ा ही लाभ प्रद होता है। जब प्रश्न उठते हैं तो उनका समाधान भी तुम्हें ज्ञात हो ही जावेगा; जब संदेह उभरते हैं, विश्वास को दृढ़ करने के लिये, गहरा करने के लिये उभरना ही चाहिये, तो उनके शमन के लिये अकाट्य तर्क भी ज्ञात हो जा जावेंगे।

नगर संकीर्तन में भी नामस्मरण की अभिवृद्धि की जा सकती है। इसके वैयक्तिक और सामाजिक दोनों ही परिणाम होंगे। जब तुम्हें गन्दी वायु में श्वास लेना पड़ता है तो तुम बीमार हो जाते हो। जब लोग घृणापूर्ण, कामुकतापूर्ण नारे लगाते हैं तो उनसे वायुमण्डल भी दूषित हो जाता है; वायु का दूषण तो प्रेम और श्रद्धा विहीन वार्तालाप से भी होता है। इसलिये वायुमण्डल की शुद्धता के लिये लोगों के खुले वातावरण में आने से पूर्व ही प्रातः काल सूर्योदय से पूर्व पवित्र, स्वास्थ्यप्रद, प्रसन्नता पूर्ण स्पन्दनों से, वायु-मण्डल को व्याप्त कर देना एक पवित्र और कर्त्तव्य परायणता का कार्य है। जब कुछ भद्र पुरुषों की या सुशीला धार्मिक प्रवृत्ति की स्त्रियों की टोली मोहल्ले के एक सिरे से दूसरे सिरे तक उच्चस्वर से भगवन्नाम कीर्तन करती हुयी निकलती है; भगवान् का हर नाम उनके यश से सुगंधित और प्रेम से अनुनादित होने के कारण वायु को स्वच्छ करके उसे दिव्य स्पन्दनों से भर देता है, ऐसे वाता-वरण में श्वास लेने से बाह्य और आन्तरिक दोनों स्वास्थ्य सुधरते हैं। गली की दोनों पंक्तियों में मकानों के निवासी जगकर अपने दैनिक कार्यों में लग जाते हैं, उस समय भगवान् का मधुर नाम उनके कानों में गूंजता रहता है, और भगवान् की मोहनी मूर्ति उनके हृदय पटल पर उभरने लगती है।

वे डाक्टर लोग, जो रोगियों के सम्पर्क में आते हैं, कहते हैं कि शक्तिशाली परमाणु बमों के विस्फोट से उड़ी हुयी धूलि; चाहे विस्फोट रूस द्वारा किया गया हो अथवा अमेरिका द्वारा, समस्त विश्व भर के वायुमण्डल को दूषित कर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

देती है। इससे मानवीय और दैवी जगत पर प्रभाव पड़ता है—वह विकृत हो जाता है। घृणा, लोभ, घमंड, ईर्ष्या, जो असंतोष और शत्रुतापूर्ण नारों से उत्पन्न होते हैं, के स्पंदन भी वायु को उतनी ही गंभीरता से दूषित करते हैं।

मानव युद्ध क्षेत्र में, जल, थल, नभ में साहस पूर्ण अभियानों में महान शारीरिक और मानसिक साहस प्रदर्शित करता है। इतिहास साक्षी है कि आवश्यकता पड़ने पर मानव ने अपनी अन्तरात्मा से, विघ्न-बाधाओं को दूर करने के लिए; साहस की विशाल कुमक जुटाई है और सफलता से बाधाओं पर विजय प्राप्त की है। परन्तु भौतिक पदार्थों के आकर्षण और आसक्ति को त्यागने में कहीं अधिक साहस अपेक्षित होता है। वाल्मीकि एक ऐसे डाकू थे जो सैकड़ों यात्रियों को लूट कर वध कर चुके थे और इस कार्य में उन्हें कोई हिचक या संकोच नहीं होता था। वह उद्वेगों और मनोविकारों के दास थे, परन्तु सप्तर्षियों ने, जिनको एक दिन वाल्मीकि ने घेर लिया था, उन्हें परामर्श दिया कि वे धैर्य, सहनशीलता और आत्मान्वेषण में तत्पर हो जावें। वे राम के मार्ग पर शूरवीरता से बढ़ चले और अमरत्व, (रामायण के रचयिता के रूप में अमर यश प्राप्त करके) प्राप्त किया। रामका मार्ग तभी प्राप्त होता है जब काम-(इच्छाओं के) मार्ग को छोड़ दिया जावे। वे रजोगुणी प्रवृत्ति से सतोगुणी प्रवृत्ति वाले साधक में परिणत हो गये। आध्यात्मिक साहसिकता, अंधकार से आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाश में एक छलाँग के लिए असाधारण साहस की आवश्यकता होती है और इसका पुरस्कार होता है भगवत् कृपा।

स्त्री, पुरुष, सभी इस साहसिकता के अभ्यर्थी हैं। पृथ्वी पर जीवन यात्रा के लिए ही आत्मा इस बाहरी आवरण लिंग को धारण करती है। आत्मिक जीवन को यह प्रभावित नहीं करता, क्योंकि आत्मा शाश्वत और अतीन्द्रिय स्तर का तत्त्व है। स्त्री, पुरुष दोनों को ही अपनी अन्तर चेतना को पवित्र बनाना है जिससे उसमें दैवत्व की अपने सम्पूर्ण वैभव के साथ अभिव्यक्ति हो सके। कुछ मूढ़ व्यक्ति सोचते हैं कि स्त्रियों को पवित्र 'ॐ' शब्द के उच्चारण करने का

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अधिकार नहीं है, परन्तु यह संकीर्ण और धूर्तता पूर्ण सिद्धान्त है एक स्वर से तो ये लोग 'मातृदेवो भव' कहते हुये मां की वंदना करते हैं और दूसरे स्वर से मां को अपने उद्धार का अधिकार न देकर उसका अपमान करते हैं। यह पाखण्ड है। अ, उ, म, तीन अक्षर 'ॐ तत् सत्' 'वह सत्य है' 'मैं सत्य हूं' सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करते हैं, 'सत्य एक है' इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। 'ॐ' वह प्रतिध्वनि है जिससे हृदय की गुहा में से दैवी तत्त्व सदा तुम्हारा आह्वान करता रहता है। इसे सुनो, हर्षित और रोमांचित होओ यह अभ्यान्तरिक पूजा है जिसका बाहरी रूप परम्परागत कर्म काण्ड द्वारा शास्त्रीय पूजा का विधान है। जब तक अहं उद्वेलित और चंचल है तब तक मन संतुलित और निष्ठा दृढ़ कैसे हो सकते हैं ? 'ॐ' का चिन्तन करो, जो कि आन्तरिक ज्योति का प्रतीक है; जो ज्योति जाग्रतावस्था के रूप में चमकती है, स्वप्नावस्था उसका उषाकाल और है निद्रा रात्रि है। इस प्रकार तुम प्रचुर परिमाण में भगवत् कृपा प्राप्त सकते हो।

प्रभाव अथवा सत्ता के प्रत्येक पद के साथ कुछ उत्तरदायित्व भी संलग्न होते हैं। अधिकांश ग्रामीणों को तहसीलदार ही सर्वोच्च अधिकारी ज्ञात होता है; उसे ग्रामीणों के पालन-पोषण का उत्तरदायित्व मिला होता है और उसे उनके प्रेम और सहयोग को अपने सद्व्यवहार से जीतना होता है। सत्य साई संगठन की इकाइयों के प्रेसीडेन्ट और सैक्रेटरी के रूप में तुम जिन पदों का भार ग्रहण किये हुये हो उससे तुम पर जो कर्तव्य भार आगया है वैसा कोई संगठन अपने सदस्यों पर भार नहीं डालता है। इन्हें उपसमितियों द्वारा प्रस्तावित और मेरे द्वारा संशोधित किया गया है और अब इन्हें पढ़कर सुनाया जावेगा। अब बाल-विहार के संचालन का भार महिला विभाग पर है। एक नियम यह बना दिया गया है कि महिला विभाग के अतिरिक्त किसी इकाई में स्त्री सदस्य नहीं होंगे। सेवा समिति महिला विभाग की सहायता और पथ प्रदर्शन करेगी और महिला विभाग इसके अधीन एक इकाई के रूप में कार्य करेगा। एक सेवा दल को संगठित करके प्रशिक्षित किया जावे और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सेवा कार्यों के लिये उसका उपयोग किया जावेगा। समिति का ही एक सदस्य सेवादल का संयोजक रहेगा। हर सदस्य को सेवा कार्य के लिये सक्रिय और उत्साहित रहना चाहिये।

सेवा और अध्ययन के द्वारा तुम साधना पथ पर अग्रसर बने रहो, इसके लिए तुममें यह विश्वास, कि मैं सर्वत्र, सदैव तुम्हारी प्रत्येक गति विधि पर दृष्टि रख रहा हूं, दृढ़ बना रहे इसी से तुम सदा सही मार्ग पर सीधे ढंग से चलते रहोगे। मैं चाहता हूं कि प्रत्येक समिति (अपनी सहायक इकाइयों सहित) अपने द्वारा किये गये सत्कार्यों से प्राप्त प्रसन्नता से उमड़ती रहे और निकट भविष्य में दूसरे सत्कार्य के लिए उत्साहित रहे। प्रत्येक सदस्य के हृदय से प्रेम, आदर-सम्मान, सहनशीलता, पारस्परिक सहयोग और सहिष्णुता सभी के लिए प्रवाहित होते रहें। पद प्राप्त करने की लालसा और उत्सुकता नहीं होनी चाहिये जबकि कोई दूसरा उस पद पर आरूढ़ होवे; और जब कोई दूसरा उपयुक्त व्यक्ति उस पद के लिए तैयार होवे तो पदारूढ़ व्यक्ति को पद से चिपके भी रहने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। इकाइयों को भी समिति से तथा परस्पर आपस में सदा सहयोग करते रहना चाहिए। उनमें प्रतिद्वन्दिता या दल-बन्दी नहीं होनी चाहिए। तुम सब एक ही शरीर 'साई शरीर' के अंग और अवयव हो। समितियों को सदा जिला प्रेसीडेन्ट के द्वारा निर्देशित और आवश्यकता होने पर, संशोधित भी होना चाहिए, इसी प्रकार स्टेट प्रेसीडेन्ट के द्वारा जिला प्रेसीडेन्टों का निर्देशन और आवश्यक होने पर संशोधन होना चाहिये। स्टेट प्रेसीडेन्टों को केन्द्र से परामर्श और पथ प्रदर्शन के लिए सदा सम्पर्क रखना चाहिए।

कान्फ्रेंस ने तय कर दिया है कि स्त्रियां महिला विभाग के अतिरिक्त किसी यूनिट का सदस्य नहीं हो सकतीं। यदि वे किसी सार्वजनिक उत्सव या कार्यक्रम का आयोजन करना चाहें तो सेवा समिति से सहायता और पथ प्रदर्शन प्राप्त करना चाहिये। प्रत्येक समिति को तत्काल अनिवार्य रूप से एक महिला

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

विभाग प्रारंभ कर देना चाहिये, और महिला विभाग को बाल विहारों का संचालन अपना एक प्रमुख, लाभदायक और महत्त्व पूर्ण कर्त्तव्य मानना चाहिए।

सेवादल, भजन मंडली, अध्ययन केन्द्र, प्रशान्ति विद्वान् महासभा, इन सब को सेवा समिति के किसी न किसी सदस्य, जो उसी कार्य के लिए चुना गया और नाम निर्देशित किया गया हो, के द्वारा पथ-निर्देशन और प्रदर्शन दिया जावे। वे सब स्थानीय समिति के ही अवयव हैं। इन सदस्यों की संख्या ११, १५ या २५ तक हो सकती है।

समिति या सेवादल के साधारण दैनिक व्यय की सदस्यों द्वारा मिल बाँट कर आपस में से ही पूर्ति कर लेनी चाहिये। जो सदस्य नहीं हैं उनसे धन प्राप्त करने का कोई प्रयास न किया जावे विशेष उत्सवों और अवसरों के लिये भक्तों से भौतिक सहायता और सेवा उपहार रूप में प्राप्त की जा सकती है। परन्तु कोषाध्यक्ष की कोई आवश्यकता नहीं है। जो भी हिसाब और लिखा-पढ़ी का कार्य हो वह सहायक सेक्रेटरी कर सकता है। समिति के हर सदस्य को कुछ न कुछ स्पष्ट कार्य अनिवार्य रूप से ऐसा दिया जाना चाहिये जिससे उसमें अपने को समिति का सदस्य अनुभव करने का भाव जगे और वह अपने चातुर्य, बुद्धि, निष्ठा और भक्ति के द्वारा समिति के उद्देश्यों की उन्नति के लिये कार्य कर सके।

सेवा समिति के सदस्यों को अनिवार्यतः सभी को नगर संकीर्तन में भाग लेना चाहिये। यदि उनमें इतना दृढ़ विश्वास नहीं है तो क्यों वे अपने नामों को सूची में रखवाये हुये हैं? उन्हें साधना में सक्रिय रहना चाहिये और समिति के द्वारा आयोजित साधना-कैम्पों में उपस्थित होना चाहिये।

दिव्य आत्मा की साकार मूर्तियो! यह भारत देश तो प्राचीन काल से, युगों-युगों में आध्यात्मिक उन्नति का केन्द्र रहा है; यहाँ धर्म की पुनर्स्थापना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ग्रौर मानवता के कल्याण के लिये ग्रवतार होते रहे हैं। अपने वैभव ग्रौर शक्ति से परिचित कराने के लिये कि मैं एक दैवी तत्त्व हूं, कुछ क्षेत्रों में कई ग्रवसरों पर चमत्कारिक घटनायें होती रहती हैं। कुछ लोग अपने व्यक्तिगत प्रचार ग्रौर महत्व के लिये उन घटनाग्रों से ग्राकर्षित जन समुदाय का दुरुपयोग करने लगते हैं। जब उनके यहां के चित्रों से विभूति गिरती है तो वे इस घटना से व्यापारिक लाभ उठाने की भी चेष्टा करते हैं। वे लोगों में कुछ ऐसा प्रदर्शन करते हैं कि मानो वे "उच्चकोटि के भक्त" हैं, ग्रथवा उन्हें किसी को वरदान या प्रभु कृपा देने की शक्ति ग्रा गयी है, इस प्रकार ग्रपनी धाक जमा कर भोली जनता को ठगते हैं। कुछ लोग झूठे ही यह दावा करने लगते हैं कि उनके यहां बाबा के चित्रों से विभूति ग्रा रही है, उनसे ग्रमृत चू रहा है अथवा अन्य भौतिक पदार्थ उन चित्रों से गिर रहे हैं, जैसे प्रश्नों के लिखित उत्तर। समितियों को ग्रौर ग्रन्य इकाइयों को ऐसे धूर्तों ग्रौर ठगों से कोई संबंध नहीं रखना चाहिये। जो भी ऐसी बातों को प्रोत्साहन दे ग्रथवा उनसे ग्रासक्ति रखे उसे अविलम्ब हटाया जा सकता है।

कुछ ऐसे लोग भी हैं जो यह दावा करते है कि मैं उनके माध्यम से बोलता हूं, ग्रौर पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देता हूँ। ऐसे लोगों को या तो पागल या मृगी ग्रौर ग्रपस्मार के रोगी समझना चाहिये (या तो वे भूत प्रेतादि से पीड़ित हैं ग्रथवा धनोपार्जन के लोभ से ऐसा करते हैं)। मैं तो तुम्हें यही विश्वास दिला सकता हूं कि उनके माध्यम से मैं नहीं बोलता हूं। मुझे किसी बिचौलिये, ग्राढ़तिये या माध्यम की आवश्यकता ही नहीं है, और न मुझे किसी ग्रपने प्रतिनिधि सहायक या सहकर्मी की ही ग्रावश्यकता पड़ती है। कुछ ऐसे भी मक्कार लोग हैं जो यह विज्ञापित करते हैं कि मैंने उन्हें कुछ क्षेत्र ग्रपने स्थान पर धर्म प्रचार के लिये इसलिये सौंप दिया है कि उनके कथनानुसार मेरे भक्तों की संख्या असाधारणरूप से बढ़ गयी है ग्रौर ग्रब अकेले मैं उन सब की देख भाल कर सकने में असमर्थ हूं! यह तो स्पष्टतः एक सफेद झूठ है। इसके अतिरिक्त एक दूसरा पहलू भी है। वे लोग भी, जो वास्तविक शुद्ध ग्रार्तस्वर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

से साई, साई, साई, पुकारते हुये ग्राकाँक्षी हैं ग्रौर निस्वार्थ पवित्र जीवन बिता रहे हैं, मुझे प्राप्त (आत्म साक्षात्कार) कर सकने में कठिनाई ग्रनुभव करते हैं तो फिर यह क्षुद्र षड्यंत्री, असंस्कृत लोग जो किसी साधना, सच्चाई, लगन, सत्य और मानवता से परिचित भी नहीं हैं, यह दावा कैसे कर सकते हैं कि मैंने उन्हें ग्राशीर्वाद या वरदान दिया है ? वे उसी प्रकार का परिधान पहन सकते हैं; भाव भंगिमा, बोल-चाल ग्रौर संकेतों का अनुकरण कर सकते हैं; परन्तु इन सब कर्मों से उनका असत्य ही उभर कर लोगों के सामने आ जावेगा । यह कि मैं लोगों पर ग्राता हूं, मैं उनके माध्यम से बोलता हूं अथवा उन पर कृपा वर्षा करता हूं, ऐसी कल्पनायें हैं कि जिनके लिये लोगों को लज्जित होना चाहिये । मुझे ग्राश्चर्य है कि कोई ऐसी बातों पर विश्वास कैसे कर सकता है ?

दुष्ट शक्तियां जो, सीधे-सरल, निश्छल लोगों की भक्ति और विश्वास को ग्टाने के लिये ग्रथवा हटाने के लिये, कुचक्र रचती हैं वे लोगों का ध्यान ग्रपने शैतानी से भरे कार्यों द्वारा सन्मार्ग से हटाने का प्रयास करती हैं । वे साधकों को ग्राध्यात्मिक मार्ग से विचलित कर लोभ ग्रौर द्वेष के सांसारिक कुमार्गों पर डाल देती हैं । साई शक्ति ग्रौर इन घटिया शक्तियों के बीच एक बहुत बड़ी खाई है । चूंकि ग्रवसर ग्रा गया था मैंने इसको कह डालना ही लाभप्रद समझा ।

साई शक्ति की कोई सीमा नहीं है, उसके लिये कुछ भी बाधा नहीं है, न कोई प्रतिरोध या अड़ंगा ही हो सकता है । चाहे तुम्हें विश्वास हो या न हो परन्तु साई शक्ति जमीन को ग्राकाश ग्रौर ग्राकाश को पाताल में बदल सकती है । सिर्फ कसर इतनी है कि ऐसे परिवर्तन का अभी कोई ग्रवसर नहीं ग्राया है । घटिया शक्तियों की चालाकियों और क्षुद्र प्रदर्शनों की तुलना में यह दिव्य ग्राचरण बहुत विशिष्ट ग्रौर ग्रलौकिक है । यह तो स्वेच्छया दिव्यता की ग्रभिव्यक्ति है, जबकि वे ग्राहकों को ग्राकर्षित करने के लिये ग्रौर ग्रज्ञानियों को ठगने के लिये जानबूझ कर खेली गयी चालाकियां हैं । घटिया शक्तियां

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

परिधान, भाव मुद्राओं की नकल कर सकती हैं, क्योंकि नकल करना रोका नहीं जा सकता। परन्तु तुम अपने से तो प्रश्न करो "क्या हरे पंखों वाले सब सुग्गे हो सकते हैं ? अथवा पंखड़ियों पर रेंगने वाले सभी कीड़े तितलियाँ बन जावेंगे ? क्या सिंह की खाल ओढ़े रहने से गधा सिंह हो जावेगा। अथवा अत्यन्त विशालकाय मोटा शूकर हाथी हो सकेगा ? वस्त्रों, वाणी या चालाकियों से ठगे जाने से सावधान रहना। साथ ही तुम्हें चिन्तित और इनसे क्रोधित होने की भी कोई आवश्यकता नहीं है।

क्योंकि सत्य सदा सत्य ही रहता है। असत्य कभी सत्य नहीं हो सकता, चाहे जैसी चालाकी क्यों न चली जावे। यह तो सत्य की साक्षात् मूर्ति है। इसमें असत्य और अवास्तविकता का लेश मात्र भी नहीं है।

परन्तु जो लोग पीलिया से पीड़ित होते हैं उन्हें सभी वस्तुयें पीली ही दिखलाई पड़ती हैं। जिन्हें अग्निमान्द्य या अपच हो जाता है उन्हें फिर स्वादिष्ट भोजन भी कडुआ लगता है। ऐसे व्यक्ति वस्तु की वास्तविकता न जानकर वह उन्हें जैसी लगती है वैसा कहने लगते हैं। परन्तु इससे मैं रंच-मात्र भी न तो क्षुब्ध होता हूं न मुझमें कोई परिवर्तन होता है।

कुछ लोग जिन्हें बड़ा और सम्माननीय समझा जाता है, उन्होंने मस्तिष्क को भ्रमित करने वाली कुछ समस्यायें उठायी हैं। वे कहते हैं कृष्ण ने अनेकों अद्भुत चमत्कार प्रकृति के नियमों की अवहेलना करके दिखलाये थे, इसीलिये, उनके कथनानुसार, कृष्ण का अन्त एक बहेलिये के वाण द्वारा हुआ। जीसस, ने, जैसा कि ये कहते हैं, भी अनेकों चमत्कार किये थे, इसीलिये उसे भी शूली दी गयी। उनका तर्क है कि चूंकि मैं प्रकृति के नियमों को चुनौती दे रहा हूँ, मुझे भी उन्हीं की तरह यहाँ से विदा होना पड़ेगा। वे झूठा आतंक उत्पन्न करना चाहते हैं। परन्तु यह दुर्बलता, असमर्थता और ईर्ष्या पूर्ण बकवास है। यह कभी सत्य नहीं हो सकती। जिस महिमा को वे समझ नहीं पाते अथवा सहन नहीं कर पाते उसकी निन्दा करके घटाना या मिटाना चाहते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चाहे जो ऐसे अभियान में भाग लें, चाहे जैसी चालें वे लोग चलें, चाहे चौदहों लोक भी एक हो जावें वे सफल नहीं हो सकते। उनका मुझ पर लेशमात्र प्रभाव नहीं पड़ता है। और चाहे १० संसार और या कुल २४ भी मिलकर उनकी सहायता करें उनका असत्य कभी भी सत्य नहीं हो सकेगा और न माना ही जावेगा।

सत्य सदा सत्य ही रहता है। वह न कलंकित होता है और न असत्य में परिणत होता है। तुम पर चाहे जितना दबाव डाला जावे और प्रचार किया जावे, तुम इस पाखण्ड और चालाकी से आर्कषित भी हो जाओ, तब भी साहस न छोड़ना। अपनी भक्ति, विश्वास, और दृढ़ता को मत घटने देना। जो साधना तुमने अपने लिये स्वीकार की है उसमें सफलता प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प बनाये रखो। तब यह सत्य भी, निश्चयपूर्वक तुम्हारे अपने सत्य के रूप में व्यक्त होगा।

मैं वाह्याचार या इन्द्रियगम्य अभिव्यक्ति पर उतना नहीं निर्भर करता हूँ। मेरा तुम्हारा सम्वन्ध आन्तरिक प्रेम के सिद्धान्त पर आधारित है। यदि तुम बाह्य आकर्षणों से आर्कषित होते हो तो फिर विज्ञापन का प्रभाव भी पड़ेगा ही। उदाहरण के लिये इस प्रकार की कान्फ्रेंस या उत्सव कहीं और किया जावे तो निमंत्रण पत्र छपाना होगा और उन्हें भेजना पड़ेगा, लोगों से व्यक्तिगत रूप से प्रार्थना करनी पड़ेगी कि यह-वह व्यक्ति वहां उपस्थित हो सकें। इस बात पर विचार करना पड़ेगा कि अधिक से अधिक संख्या में लोग वहाँ किस प्रकार उपस्थित होवें और वह उत्सव सफल कैसे होवे। परन्तु यहाँ प्रशान्ति निलयम् में कभी कोई निमंत्रण पत्र न छापा गया है और न किसी को भेजा गया है कि लोग आवें ही आवें। किसी से भाग लेने की कभी विशेष प्रार्थना भी नहीं की गयी है। यह तो प्रेम ही, हृदय की ओर से हृदय को, प्रेषित किया जाता है, जिससे तुम लाखों व्यक्ति यहां आ जाते हो। प्रेम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

की वैधता और सत्यता तुम्हारे द्वारा सत्य सिद्ध की जाती है। मेरी शक्तियों में प्रेम सर्वोपरि शक्तिशाली है।

जब तुम अपने घर में दीपक आलोकित करते हो, तो तुम्हें दूसरों के घर जाकर उन्हें आमंत्रित करना पड़ता है कि वे पधारें और उसकी सराहना करें। परन्तु, जब सूर्य अपनी सम्पूर्ण प्रभा से उदय होता है, तो फिर उस घटना की ओर संसार का ध्यान आकर्षित करने की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाती है। अब तो यह सूर्य का ही प्रखर प्रकाश फैल रहा है। यह स्वयं ही बलात् सभी को आकर्षित कर लेगा। किसी को भी इधर ध्यान देने के लिये आमंत्रित करने की आवश्यकता नहीं है।

निस्सन्देह, यह स्वाभाविक है कि तुम्हारे मन में भी कभी-कभी मेरी आकृति, शब्द या कार्यों को लेकर कुछ संशय उत्पन्न होवें। जब तुम मेरी वास्तविकता को जानने को उत्सुक होओ तो तुम मेरी शिक्षाओं पर आचरण करो और मेरा अनुकरण करो। तब निश्चय ही मेरी दिव्य वास्तविकता तुम्हें अनुभूत और ज्ञात हो जावेगी। इस आकृति को अपने नेत्रों से स्वयं देखकर तुम अनुमान करने लगते हो, और परिणाम निकालते हो जैसा कुछ तुम्हारी चंचल कल्पना में आता है और अपनी मानसिक और बौद्धिक शक्ति को व्यर्थ नष्ट करते हो। तुम अपनी भक्ति और निष्ठा को गलत दिशा में भी बहने देते हो। मैं तुम्हें इसके विरुद्ध परामर्श दे रहा हूँ और इसे बतौर आज्ञा के तुम्हें बता रहा हूँ।

स्वामी करुण्यानन्द ने कल घोषित किया कि वह एक दीर्घ काल तक यही विश्वास करते रहे कि जो लोग पिछले युगों में जन्मे थे वे अब के जन्मे लोगों की अपेक्षा बड़े भाग्यशाली थे क्योंकि उन्हें भगवान् के अवतारों के दर्शन प्राप्त हो गये थे। परन्तु, उन्होंने कहा कि, अब उन्हें स्पष्ट हो गया है कि इस

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

युगकी पीढ़ी की अपेक्षा कोई पीढ़ी अधिक सौभाग्यशाली नहीं है। वह घोषणा सत्य है। यह तिगुनी सत्य है।

क्योंकि इससे पूर्व किसी युग में मनुष्य को ऐसा अनुपम अवसर नहीं प्राप्त हुआ था। इस प्रकार का कोई संगठन नहीं स्थापित किया गया था, इस प्रकार की कोई कान्फ्रेंस कभी अवतार की उपस्थिति में आयोजित नहीं की गयी थी। भूतकाल में इस प्रकार के निकट सम्बन्ध बना कर आनन्द प्राप्त करने की, सभा संगठन, या वार्तालाप या सामूहिक गान द्वारा, योजना नहीं की गयी थी। निस्सन्देह तुम सब लोग बड़े ही भाग्यशाली हो।

इसलिये अवसर को अपने हाथ से मत खिसकने दो। इसे कस कर पकड़े रहो और पूरा-पूरा लाभ उठाओ। दृढ़ विश्वास और उत्साह पूर्ण भक्ति भाव के कार्यों को करते रहो और उस परमतत्व भगवान्, जो तुम्हारा लक्ष्य है, का साक्षात्कार कर सको और सफल होओ।

मैं तुम्हें वह आत्म साक्षात्कार प्राप्त करने का, आनन्द प्राप्त करने का आशीर्वाद देता हूँ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६५ अद्भुत परिशेषिका

(काबो, राजनिवास, गोआ, १२-१२-१९७०)

प्रत्येक व्यक्ति इस संसार रूपी जंगल जिसमें हर्ष-शोक, वृद्धि-क्षय, आशा-निराशा इत्यादि द्वन्दात्मक प्रवृत्तियां हैं, अपने घर से बहक कर आ गया है और अब वह पुनः उसी उद्गम स्थान, जहाँ से आया है, पहुंचना चाहता है। इस कार्य को इसी अवधि, जितने दिन का यहाँ जीवन है, में पूरा कर लेना चाहिये। इस अवधि में से प्रतिदिन सूर्य उदय होकर कुछ कमी ही कर देता है। परन्तु, मनुष्य इस जंगल के पैशाचिक आलोक और कोलाहल से आकर्षित होता है; इसके सम्पर्क की छद्म मधुरता से, आसक्ति रखने से वह अपने भव्य भाग्य की पुकार को अनसुनी कर देता है। इन्द्रियाँ उसे भुलावे में डालकर आगे-आगे ले जाकर भूलभुलइयों के गहरे गर्त्त में गिरा देती हैं; वहीं वह कराहता हुआ, गिड़गिड़ाता हुआ प्राण त्याग करता है। जबकि चाहिये यह था कि वह कृतज्ञता और मुस्कान के साथ यहाँ से विदाई लेता। जन्म से मृत्यु के बीच के वर्ष व्यर्थ की उपलब्धियों और थोथी सफलताओं में बिता दिये जाते हैं; क्योंकि पूरी अवधि पर उसका हृदय अतृप्त इच्छाओं और अस्वास्थ्यकर उद्वेगों, जो उसकी शान्ति को, वास्तविक तत्व को, उद्विग्न करते हैं, से दुखी रहता है। यही भ्रम मनुष्य को आक्रान्त किये रहता है; मानव में दिव्यता के तत्त्व को माया सदा आच्छादित किये रहती है।

वैराग्य की वृद्धि करके, विषय भोगों, जिनके लिये इन्द्रियां सदा व्याकुल रहती हैं, का संयम करके, आत्मा की गहराइयों में गहन चिन्तन द्वारा और इस विश्वास से कि तुम में भी गहराइयां जो तुम्हारे अन्वेषण को पुरस्कृत करेंगी, मनुष्य उस शान्ति का आनन्द प्राप्त कर सकता है। यही सर्वोच्च

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नैतिकता है क्योंकि जब यह किया जाता है; तो मनुष्य प्रेम से संयुक्त हो जाता है, तब उसमें द्वेष, घृणा, लोभ, या काम का लेश भी नहीं रहता है। उसी एक में सब का पर्यवसान समझने से, अद्वैत बोध से, आदर्श को देखने से उसकी दृष्टि निर्मल और शुद्ध हो जाती है। घृणा, द्वेष और लोभ की वृत्तियों से वैयक्तिक और सामाजिक संघर्ष और कुंठायें उत्पन्न होती हैं इन्हें योग, त्याग, क्षोभरहित रहने के अभ्यास, आवश्यकताओं और मानसिक लालसाओं में कमी करके दूर किया जा सकता है। भारत का युगों-युगों से यही घोषित और आचरण द्वारा प्रदर्शित, संदेश रहा है। यहां के ऋषियों और संतों के अगणित उदाहरण इसे प्रमाणित करते हैं।

यह अनुभव करना कि यह क्रिया 'मेरी' है और यह कुछ न कुछ लाभप्रद है इसका लाभ 'मुझे' मिलना चाहिये—इसी भावना के कारण समस्त मन-मुटाव, दुख और बीमारियां उत्पन्न होती हैं। अहं ही हर्ष-शोक का अनुभव करता है, यही रोता है, हंसता है, यही सुस्त पड़ा रहता है, यही होड़ करता है, यह हर्ष और शोक के मध्य घड़ी के लोलक की भांति दोलायमान रहता है। यह मनुष्य को क्षण भर भी शान्ति से नहीं बैठने देता है। जब आशा के प्रतिकूल अथवा मात्रा में कम परिणाम प्राप्त होता है तो यह क्षुब्ध होता है, उत्तेजित होता है। इसीलिये तो श्रुतियों ने निर्धारित किया है कि सभी कार्य भगवान् को समर्पित किये जावें क्योंकि वही जानता है कि इसका क्या लाभ दिया जाना चाहिये और वही फिर उचित प्रतिफल समय आने पर देता है। सब उसी की इच्छानुसार होता है।

परन्तु बहुत से ऐसे व्यक्ति भी होते हैं जो भगवान् के अस्तित्व पर सन्देह करते हैं, अथवा उससे इनकार करते हैं। भगवान् को तो वह सब ज्ञान, शक्ति, सद्गुण, प्रेरणा जो किसी क्रिया से संयुक्त होते हैं, पूजा भाव से अर्पित किया जाना चाहिये। क्योंकि ऐसों के लिये ही वह भगवान् कभी कभी अपनी स्वाभाविक करुणा के वशीभूत होकर अपनी महिमा को मानवीय सीमा के ऊपर भी व्यक्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करता है। सन्देह करने वालों को तो अयाचित ही प्राप्त होता है; बिना द्वार खटखटाये ही उनके लिये द्वार खुला रहता है, उत्तर सभी के सुनने को घोषित कर दिया जाता है।

उदाहरण के लिये इस शरीर में आई हुयी बीमारी को ही ले ले। मानव शरीर का यह लक्षण है कि यह दूषित भोजन और मूर्खतापूर्ण स्वभाव के कारण अपने में बीमारियां उत्पन्न करता रहता है। इससे सामान्य जन की बीमारियों का कारण तो स्पष्ट हो जाता है, परन्तु जो बीमारी तुमने अंतिम दो दिनों में इस शरीर में देखी है उसके कारण ये नहीं हैं। वह तो स्वयं अपने ऊपर ली गयी बीमारी थी, इच्छा करके ली गयी थी; इस उद्देश्य से कि इसका शिकार संभवतः दम तोड़ देता, या शान्ति से कष्ट भुगतने में असमर्थ था। यह भी दैवत्व का एक कार्य होता है कि जिसके लिये वह अवतार ग्रहण करता है, कि भक्तों पर कृपा की वर्षा करे। परिशेषिका में सूजन आकर फोड़ा बन गया था। डाक्टरों की सम्मति में उसकी तत्काल शल्यक्रिया होना ही उचित उपचार था। भक्त उस मर्मांतक पीड़ा को सहने में असमर्थ था। मैं इस शरीर में इसीलिये आया हूं कि अन्य शरीरों को कष्ट और पीड़ा से त्राण मिले। यह शरीर तो सदा ही रोग और पीड़ा से मुक्त रहता है, रोग कभी इस पर प्रभावी नहीं हो सकता। वास्तविक सत्य तो यही है।

एक दिन कृष्ण ने अपने में कष्टकारक उदरशूल उत्पन्न कर लिया। दैवात् उस समय नारद मुनि वहीं थे और उन्होंने वह कष्टकारक दृश्य देखा। उन्हें व्याकुलता हुयी। उन्होंने प्रार्थना की कि जिस औषधि से कष्ट दूर हो सके उसका नाम बतला कर उन्हें लाने की आज्ञा दी जावे। कृष्ण ने कहा, "औषधि केवल एक है जिससे कष्ट दूर हो सकेगा, पर क्या तुम उसे ला सकोगे?" नारद ने कहा, "मुझे बता भर दीजिये मानो कि काम हो गया"! भगवान् ने कहा, "किसी सच्चे भक्त की चरणधूलि ला दो, उसी से यह शूल शान्त हो जावेगा।"

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नारद बड़ी शीघ्रता से उसे लाने के लिये चल पड़े। परन्तु द्वार पर आते ही उन्हें स्मरण हो आया कि वे भी तो भगवान् के बड़े सच्चे और हार्दिक भक्त हैं। इसलिए उन्होंने भगवान् से निवेदन किया कि "मेरे चरणों की धूलि भी प्रयोग में ली जा सकती है"। परन्तु भगवान् ने कहा, "यह तो अहंकार से दूषित है इसलिए औषधि भी दूषित हो गयी है"। अतः बाध्य होकर नारद को बाहर जाकर खोजना पड़ा कि कौन सच्चा भक्त है जो चरणरज दे भी सके। बड़े प्रसिद्ध भक्तों के यहां गए जिन्हें वह सच्चा भक्त जानते और मानते थे; परन्तु उनमें से किसी ने भी उन्हें धूलि न दी। कुछ भयभीत थे, कुछ लज्जित थे, कुछ पाप कर्म समझ कर पीछे हटे, कुछ ने कहा कि वे तो केवल साधक हैं भक्त नहीं हैं।

तब नारद वृन्दावन गये जहाँ सरल हृदया गोपियां रहती थीं। उन्होंने उनसे कृष्ण की दयनीय दशा का वर्णन किया। इस पर उनमें से प्रत्येक ने पैरों की धूलि एकत्र की और क्षण मात्र में नारदके हाथ इस धूलि की पुड़ियों से भर गये, 'इसे लेकर शीघ्र जाओ जो कष्ट तो दूर होवे" गोपियों की यही हार्दिक इच्छा थी। उच्चता-तुच्छता, घमंड-विनम्रता, लज्जा या भयके क्षुद्र विचार उनके मस्तिष्क में प्रवेश भी नहीं कर पाते थे। 'भगवान् को कष्ट है, वह शीघ्र ही दूर होना चाहिये' इतना ही उन्हें ज्ञान था इसके अतिरिक्त वे और कुछ जानना भी नहीं चाहती थीं उन्होंने नारद को रोककर यही पूछाकि क्या भगवान् भी बीमार हो सकते हैं; अथवा क्या उनकी चरण धूलि में कुछ आरोग्य दायक शक्ति भी है, अथवा जिस उद्देश्य को लेकर नारद वहां गए उसका दुनिया में कुछ और भी गंभीर उद्देश्य था। उन्होंने सुनते ही धूलि दी, प्रार्थना की, उन्हें प्रसन्नता हुयी। कृष्ण को जो कष्ट था उसकी अनुभूति उन्हें हुयी, उन्होंने कृष्ण की आज्ञा का पालन किया। वे सब समान रूप से प्रभावित हुयीं और उन सबकी प्रतिक्रियायें उतनी ही सच्ची और आकस्मिक थीं।

तुम्हें अपना निर्णय भी भगवान् पर छोड़ना चाहिये, तब भगवान् उसका

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पूरा भार उठा लेंगे और संरक्षक, पथदर्शक और प्रेरक हो जावेंगे। ऐसे ही एक भक्त को, जिसने कि अपना निर्णय तथा सर्वस्व मुझे सौंप दिया था, मुझे उसकी बीमारी अपने ऊपर लेकर बचाना था, वह इस शरीर ने भोग डाली। आज उस बीमारी के लक्षण भी अदृश्य हो गये, और अब कभी पुनः प्रकट नहीं होंगे।

इस घटना के पीछे एक और कारण भी है। केवल सुविज्ञ व्यक्ति ही इस विशाल, वैभवशाली, सुन्दर, शक्तिशाली और शानदार, महान भगवान् का अनुभव विश्व में कर पाते हैं। परन्तु, सामान्य जनसमुदाय में, जो चेतना है वह ईश्वर कृत चमत्कार है, उसकी हर श्वास भगवान् की दयालुता की साक्षी है और हर घटना उसके अस्तित्व को सिद्ध करने वाली है, इतनी समझ बहुत ही कम लोगों में जग पाती है। जब यह शरीर, जो प्रकट रूप से नराकार है, ऐसे बरतता है कि मानों इसमें अतिमानवीय शक्ति और क्षमता है; तो आश्चर्य सभी लोगों का ध्यान उस दैवी तत्व की ओर आकर्षित करता है जो इसकी प्रकृति में निहित है। मानवता को जब-तब यह पाठ पढ़ाना आवश्यक हो जाता है, इसलिए उन्हें भगवान् को पहचानने की शक्ति और भगवान् में विश्वास के गुण और बढ़ा दिये जाते हैं। तभी मनुष्य का मन संसार से घुमाकर अनंत कोटि ब्रह्माण्ड नायक की ओर किया जा सकता है।

मंगलवार के दिन हजारों गोआ निवासी जो नगर में एकत्रित हुये थे और मेरी वार्ता सुनने को इच्छुक थे, निराश हो गये थे। परन्तु मैं बहुत शीघ्र ही उनसे भेंट करूँगा और जिस आनन्द की उन्हें तृषा है वह प्रदान करूँगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६६ उद्धार के लिये दौड़

(पंजिम, गोग्रा, १८-१२-१९७०)

भगवान् जो सत्यं शिवं सुन्दरम् रूपमें व्यक्त हुग्रा है, उन सभी पुकारों ग्रौर प्रार्थनाओं को सुनता है जो उसके ग्रनंत नामों में से किसी भी एक को संबोधित करके की जाती हैं। वह असीम धैर्य, दयालुता से युक्त है; यद्यपि, इस समय नराकार में ग्रभिव्यक्त होने से उसमें मानवीय विशिष्टतायें ग्रौर दुर्बलतायें ी पायी जाने की ग्राशा की जा सकती है, क्योंकि इस शरीर को मानवीय ,र्बलताग्रों से भी काम पड़ जाता है ग्रौर मानव को स्वयं उसी से त्राण करना ड़ता है। मनुष्य को यह प्रदर्शित करना है कि वह किस प्रकार ग्रपने प्रेम की परिधि का विस्तार करे ग्रौर ग्रपने ज्ञान की ज्योति को दूर दूर तक फैलावे। जब तक मनुष्य सम्पूर्ण मानवता को एक इकाई के रूप में नहीं देख पाता उसे भगवान् का भक्त नहीं घोषित किया जा सकता, क्योंकि समग्र मानवता भगवान् की ही संतान है। वह दैवत्व ही सूत्र है जिसके सहारे यह सब विविध पुष्प एक साथ पिरोये हुये होने से एक माला के रूप में वर्तमान हैं। योग ही वह पद्धति है जिससे आन्तरिक सम्बन्ध स्पष्ट, और विश्व प्रेम अनुभव किया जा सकता है। ग्राजकल हर प्रकार के व्यवसाय के लिये उद्योग शब्द का प्रयोग किया जाता है, परन्तु व्युत्पत्ति के अनुसार यह तो मनुष्य का सर्व श्रेष्ठ कार्य है जिसमें प्रयत्नशील होना चाहिये, यह तो इसी आन्तरिक संबंध का अन्वेषण ग्रौर पुष्टि करना है।

निस्सन्देह, प्रथम दृष्टि में, सभी वस्तुओं ग्रौर व्यक्तियों में प्रच्छन्न दैवत्वम् न तो स्पष्ट होता है, न दृष्टिगोचर ही होता है। कोई ग्रक्षर 'भ' को 'भा' कैसे पहचाने और उच्चारण करे; जब तक कि कोई शिक्षित व्यक्ति उसे उच्चारण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

न सिखावे और 'भ' की आकृति की न पहचान करावे ? साथ ही सीखने वाले को शिक्षक का पूर्ण विश्वास भी होना चाहिये । क्रमशः भ,ग,वा,न चारों अक्षरों का उच्चारण और पहचान सीख लेने के बाद ही मिलाकर भगवान् कहने और पहचानने लगेगा । गुरु ही इस क्रिया और ज्ञान के मर्मज्ञ हैं उनमें तुम्हें पूर्ण विश्वास होना चाहिये । और हम यह कैसे जानें कि शब्द भगवान् की ध्वनि अज्ञेय, सर्वव्यापक, सर्व तत्व जो परमाणु से नक्षत्र तक में व्याप्त है सबका, ठीक ठीक प्रतिनिधित्व करती है ? पुनः गुरु ही ने तो हमें यह शिक्षा दी है और विश्वास कराया है ।

परन्तु केवल गुरु से ही जान लेना पर्याप्त नहीं है । व्यक्ति को स्वयं अन्वेषण करते हुये आगे बढ़कर उस चरम तत्व का साक्षात्कार करना चाहिये । वह सत्य जो परमाणु से लेकर सुदूरवर्ती नक्षत्र तक की व्याख्या करे और यह व्याख्या भूत, वर्तमान भविष्य तीनों कालों के लिये सत्य होवे । केवल क्षेत्रज्ञ ही क्षेत्र को जानता है। भगवान् ही एक मात्र ऐसे हैं जो इस ब्रह्माण्ड को जानते हैं । अतः इस ब्रह्माण्ड को जानने के लिये व्यक्ति को भगवान् ही होजाना होगा । वास्तव में भगवान् 'होना' क्या ? व्यक्ति की आत्मा ही परमात्मा है जो कि व्यष्टि में सोहन लाल, सुन्दरलाल या इन्दुलाल, का मुखौटा धारण किये हुये है । 'मैं' जो कि तुम अपने लिए अनुभव करते हो, 'मैं' जो तुम अपनी शैशवावस्था में थे, लड़कपन में, तरुणाई में, अधेडावस्था या वृद्धावस्था में, कंपित असमर्थ वृद्ध के रूप में भी जो 'मैत्व' होती है वह इस शरीर दर्पण में भगवान् का प्रतिबिम्ब ही तो है । तुम तो महासागर के वक्षस्थल पर एक तरंग मात्र हो, वह महासागर भगवान् ही है । इसको जानो, अनुभव करो, यही लक्ष्य की प्राप्ति और पूर्णत्व है । जानो कि यह सब तरंगें हैं और तब अनुभव करो कि लहर महासागर के अतिरिक्त कुछ और नहीं है इसका नाम-रूप जो व्यक्त होता है वह अस्थाई होता है और थोड़ी देर बाद अदृश्य भी हो जाता है ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इस दृष्टि (विज्ञान) को प्राप्त करने के लिये मनुष्य को अपने पाँच कोषों में से तीन को उतार फेंकना होगा—अन्नमय, प्राणमय और मनोमय; इन तीन कोषों को जो स्थूल शरीर जिसमें इन्द्रियाँ भी शामिल हैं, तथा सूक्ष्म शरीर जिसमें पंचवायु और स्नायु जाल है तथा कारण शरीर जो इच्छाओं, उद्देश्यों, संकल्पों के साथ मन को भी शामिल करता है, इन सब को पार करने के बाद विज्ञानमय कोष आत्मस्फुरण का होता है उसके भी परे आनन्दमय कोष होता है। परन्तु मानव तो पहले तीन कोषों में ही उलझा रहता है और वह उनसे आगे, गहनतर क्षेत्र में जाने का साहस ही नहीं करता है, इसीलिये मानव को उस सत्य के दर्शन नहीं हो पाते हैं जोकि विज्ञान-मय क्षेत्र से ही दिखलाई पड़ सकता है—वह तो आनन्दमय कोष से भी परे है।

दिव्यात्मस्वरूपो ! प्रेम की वृद्धि और विस्तार करने से ही हृदय की विशालता प्राप्त होती है तभी हृदय इन शाश्वत, निरपेक्ष अनुभवों को प्राप्त करने में समर्थ होता है। सत्याचरण करने से ही उस महा सत्य का अनुभव प्राप्त होता है। यहाँ अनेक गुरु ऐसे हैं जो हाल ही में प्रत्येक अपने-अपने आध्यात्मिक साधन की प्रशंसा करते हुये प्रकट हुये हैं जिसके द्वारा उनका दावा है कि वे उस दिव्य सर्वोच्च आनन्द की अनुभूति कर सकने में समर्थ हैं। इन साधनाओं के उन्होंने बड़े आकर्षक और प्राचीनता की सुगन्धि युक्त नाम जैसे क्रियायोग, हठयोग, कर्मयोग, अन्तर्योग इत्यादि नाम हैं। परन्तु आत्म साक्षात्कार के लिये कोई 'लघुमार्ग' नहीं है। लक्ष्य तो केवल चरित्र की पवित्रता, और निस्वार्थ प्रेम की वृद्धि से ही प्राप्त किया जा सकता है। वह कोई भी योग हो जिससे यदि मनोविकार और उद्वेग संयमित और शान्त नहीं हो जाते हैं, अहंभाव मूलक प्रवृत्तियां, आत्मसम्मान का लोभ, यशो कामना, इत्यादि शान्त नहीं हो जाती हैं तो वह योग न होकर भोग होता है। शरीर तो आत्म साक्षात्कार के लिये यंत्रों का एक संग्रहमात्र है, इन सभी पूर्व जन्मों के पुण्य के फल स्वरूप यह मानव योनि इसी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

महत्कार्य को पूरा करने के लिये प्राप्त हुयी है। वृक्ष का पूर्णत्व फल और उसकी मधुरता में होता है।

विश्व प्रेम के साक्षात् मूर्तस्वरूपो ! मुझे तो कुछ दिन पूर्व ही यहाँ आकर तुम्हें दर्शन और संभाषण का सुअवसर देना चाहिये था। उस दिन तुम आये थे और निराश वापस लौट गये थे। मुझे ज्ञात है कि कुछ प्रचारित कहानियों को सुनकर तुम्हारी चिन्ता भी बढ़ गयी होगी कि मैं उस दिन क्यों नहीं आ सका। और जो लोग असली कारण भी जान पाये उन्होंने भी इसे चमत्कार या सम्मोहन (मेस्मेरिज्म) अथवा कुछ इसी से मिलता-जुलता कारण बताया, जिसके लिये उन्हें दोषी ठहराया गया है। किसी घिसे पिटे कारण या बहाने या शब्दावली से 'दैवत्व' को समाप्त कर देना कोई हँसी ठट्ठा नही है; परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि तुमने इससे इनकार नहीं किया, अथवा इसे समझ ही गये थे।

एक व्यक्ति ने भगवान् की शरण लेकर आत्मसमर्पण कर दिया है; उसे एक घातक रोग का दौरा पड़ा। उस रोग को मैंने अपने ऊपर ले लिया था। उसकी पुकार इतनी आर्त और सच्ची थी कि मुझे तत्काल ही उसको निबटाना पड़ा। मैं संभवतः उसे तब तक के लिये स्थगित नहीं कर सकता था जब तक मेरे उस दिन के सभी कार्य क्रम पूरे न हो जाते। तुम ऐसी घटनाओं पर तो विश्वास कर लेते हो जो राम या कृष्ण या किसी अन्य नाम के साथ संयुक्त हैं क्योंकि उस विश्वास से तुम पर कोई कर्त्तव्य भार नहीं आ पड़ता है। परन्तु वर्तमान अवतार के संबंध में, तुम्हें यह आशंका है कि यदि अवतार को स्वीकार कर लिया गया तो उसके कुछ परिणाम ऐसे होंगे जिनसे तुम बचना चाहते हो। परन्तु, मैं 'भक्तरक्षण' का अपना कार्य तो करता ही रहता हूं, दुनिया इसके विषय में कुछ भी क्यों न सोचे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

९७ कष्टों को मुझे बताओ

(धर्मक्षेत्र बम्बई, २५-१२-१९७०)

निःस्वार्थ भाव से, बिना किसी प्रत्युपकार की आशा से मनुष्य जो सेवा करता है जीवन की सार्थकता और सफलता उसी में है। इस भाव से की गयी सेवा मनुष्य के अन्तस्तल को आलोक से भर देती है, इससे हृदय में उदारता आती है, इससे उद्वेग पवित्र होते हैं और स्थाई आनन्द प्राप्त होता है। यह देश मानव मात्र की मौलिक एकता का पृष्ठ पोषक रहा है; इस सत्य को, अर्पित सेवा करके, अनुभव में उतारा जा सकता है। भारत सुगंधित, रंग बिरंगे पुष्पों का उद्यान है; यहाँ अनेक धर्म, पंथ और मजहब हैं; सभी इस एकता का, सेवा का समर्थन करते हैं, कि जिससे यह अनुभव भी की जा सके। यहाँ के सभी धर्मों का कथन है कि प्रत्येक प्रत्येक का भाई या बहिन है—यही इस देश के संतों और ऋषियों का संदेश है।

कालचक्र के प्रभाव से, विदेशी संस्कृति और अधार्मिक दृष्टिकोण के कारण इस संदेश की उपेक्षा की गयी है और हम दयनीय दलबंदी और भ्रातृ-युद्ध में पड़ गये हैं। अंधे मनोविकार और उद्दाम उद्वेगों का भूकम्प के समान विनाशकारी प्रभाव होता है, आज राष्ट्र का हृदय इन्हीं से भर गया है, इससे पूर्व हृदय सेवा और भाई चारे की पुकार पर साहस पूर्वक प्रतिक्रिया करता रहा है। बदली हुई परिस्थिति के दुष्परिणाम दूर-दूर तक प्रभाव डालते हैं। हमें उत्तेजनाओं को ठंडा करना और संतुलन, शांति, सौम्यता के भाव मानव मस्तिष्क में भरना है। यह तो प्रेम की अभिवृद्धि के द्वारा ही हो सकेगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यह वह देश है जहाँ संत तुकाराम ने उस गंगाजल को जिसे वह काशी से रामेश्वर स्थित शिवलिंग पर सम्पूर्ण औपचारिक पूजा के साथ स्वयं चढ़ाना चाहते थे, प्यास से तड़पते हुये एक गधे को इसलिये पिला दिया था क्योंकि उन्हें आत्मा की एकता का बोध हो चुका था—गधे में भी वही तत्व देख सके। यही उनकी दृष्टि की विशालता और निर्मलता का प्रमाण था। यहाँ की लोक परम्पराओं में ऐसा विश्व प्रेम निहित है। इसे प्रगाढ़ निद्रा से जागृत कर युवा वर्ग में स्थापित करना है क्योंकि आगे चलकर देश की वागडोर इन्हीं के हाथों में आवेगी।

इस समय, विश्व रूप में व्यक्त भगवान् नहीं, संसार ही सभी के ध्यान का केन्द्र बिन्दु बना हुआ है। जिस भाव से व्यक्ति संसार में कोई कार्य करता है, संसार की प्रतिक्रिया भी उसी से प्रभावित होती है। और भावनायें, अभी तक प्राप्त अनुभव से प्रभावित होती हैं, अनुभव मनुष्य की इच्छा, जिससे वह दूसरे व्यक्ति अथवा वस्तु के सम्पर्क में आता है, से रंजित होता है। इस संसार की वास्तविक प्रकृति न जानने के अज्ञान पर इच्छा आधारित होती है। यह संसार तो मायारूप, सत्यासत्य का मिश्रण है; परन्तु इसे सत्य मान कर मूल्यांकन किया जाता है। यह तो तथ्य के आधार पर गढ़ी गई कहानी के समान है। तथ्य 'दैवत्व' है कहानी विविधता है। इस भ्रम को उत्पन्न करने वाला अभिकर्त्ता भगवान् है। क्योंकि, तथ्य, भगवान् की लीला के द्वारा छिपाया जाता है। निराकार परमात्मा, जो नाम-रूप उपाधि रहित अस्पर्श्य, व्यापक और निरपेक्ष है, वहीं साकार होकर नाम रूपधारी भगवान् बनकर लीला करता है, वही मानव और सभी प्राणियों के हृदयाकाश में, पंचमहाभूतों में आद्यंतहीन और सर्वतंत्र स्वतंत्र स्थिति में होता है।

आकाश अपने शब्द गुण से पहचाना जाता है! पहले शब्द होता है। वह शब्द ही वस्तु का रूप धारण करता है अथवा मूर्त, स्थूल बनता है। इसीलिये तो वस्तु को पद-अर्थ (पदार्थ) भी कहते हैं। पद का अर्थ शब्द होता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है, अर्थ का मतलब उसका आशय या उद्देश्य। इस प्रकार वस्तु ही वह उद्देश्य है कि जिसके लिये शब्द उच्चारण किया जाता है; अर्थ से ही शब्द की सत्यता, वैधता का बोध होता है। उदाहरण के लिये 'वृक्ष' शब्द को लो, वह साकार मूर्त पेड़ जो सामने खड़ा है, वही इस 'वृक्ष' शब्द का अर्थ है। हम 'मानव' कहते हैं और उसका अर्थ तुम हो। शब्द और उनके अर्थ अभेद्य तथा एक दूसरे से पृथक् करके समझे नहीं जा सकते। शब्द के बिना वस्तु और वस्तु के बिना शब्द की सत्ता नहीं होती।

ईश्वर शब्द भी यह संकेत करता है कि कोई पद-अर्थ है और ईश्वर का अस्तित्व है। यदि ईश्वर न होता तो यह शब्द ही उत्पन्न, प्रयुक्त और समझा न जाता। चाहे तुम्हें ईश्वर का दर्शन हो या न हो, परन्तु यह शब्द ही इसका प्रमाण है कि ईश्वर है।

भगवान् सर्वव्यापक है। वह भूत, भविष्यत, वर्तमान तीनों कालों में तथा कालातीत भी है। मैं इस माला को उंगली पर रख रहा हूं। इस उंगली से बाई ओर का भाव भविष्यत है, दाहिनी ओर का भाग भूत है, उंगली के ऊपर का बिन्दु मात्र वर्तमान है। अब मैं इस माला को उंगली पर दाहिनी ओर को घुमाता हूँ। भविष्य ही आकर वर्तमान बन जाता है, वर्तमान भूत-काल की ओर खिसक जाता है, फिर भी वर्तमान सदा वर्तमान रहता है। भगवान् सदा वर्तमान रह कर भविष्यत को भूतकाल में मिलते देखता रहता है।

और भगवान् तो एक ही है वह अनेक नहीं हो सकता। "भगवान् एक है और वह सर्वत्र, सर्वव्यापक है। धर्म एक है वह प्रेम का धर्म है। जाति एक ही है, वह मानवता की जाति है। भाषा एक है और वह हृदय की भाषा है"। इसी भगवान् का अविरल आध्यात्मिक साधनों के द्वारा साक्षात्कार करना है। अपने आप को संशय और संकोचों से मत लिप्त होने दो। यदि तुम संयम अनुशासन का पालन करके अपनी चेतना को शुद्ध कर लो तो तुम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अपने हृदय में स्थित भगवान् के दर्शन कर सकते हो। प्याले में नीचे शकर के होने पर भी ऊपर का जल फीका लगेगा क्योंकि तुम शकर को अच्छी तरह चलाकर जल में घोल नहीं सके हो। संसार में भगवान् है, उसी दैवत्व को प्रत्येक बिन्दु, परमाणु में अच्छी तरह चला कर इस संसार को मधुर, रहने योग्य निवास स्थान में बदल सकते हो। बुद्धि चम्मच है, साधना चलाने की क्रिया है; जीवन का प्रत्येक क्षण भगवान् से संपृक्त कर लो, इससे यह मधुर हो जावेगा।

वास्तविकता यह है कि इस समय तुम सर्वस्व भगवान् को अर्पण कर रहे हो; इतना है कि केवल तुम जानबूझ कर ऐसा नहीं करते हो और इसीलिये वह आनन्द जो तुम्हें मिलना चाहिये नहीं मिलता है। तुम कहते हो, मैं इसे अपनी प्रसन्नता के लिये करता हूं। मैं वहां आनन्दित होने जाता हूँ। मैं इसे अपने सन्तोष के लिये पढ़ता हूँ, उन्नति के लिये पढ़ता हूं। यह 'मैं' कौन है जो करने, जाने, पढ़ने, प्रसन्न होने, अभिनय करने की क्रियाओं का कर्त्ता है? यह 'मैं' देखता, सुनता, सोचता है और वही आंख, कान, मस्तिष्क का प्रयोक्ता है। यह 'मैं' कह कर ही रतनलाल, सोहनलाल, प्राणलाल, इन्दुलाल सभी 'मैं' 'मैं' कह कर संकेत करते हैं। यह 'मैं' प्रत्येक में है। यह प्रत्येक की आत्मा है, यही जगदात्मा का, जो एक है, व्यष्टि में प्रतिबिम्व है। इसलिये जब तुम कहते हो कि यह मैं अपने आनन्द के लिये कर रहा हूं, तो वास्तव में उसी 'मैं' जो तुम्हारे अन्दर भगवान् के रूप में स्थित है, आनन्द के लिये करते हो, इसलिये तो गीता में कहा गया है, "माम् अनुस्मर, माम् एकम् शरणंब्रज," 'मेरी' शरण में आजा यह 'मेरी' कौन है? भगवान्। उसे 'मैं' क्यों कहा जाता है? क्योंकि वही तो 'मैं' होकर इन सब प्राणियों में स्थित है।

अन्नमय कोष में, अर्थात् जब मानव स्थूल शरीर में अपने को केन्द्रित मानता है, और प्राणमय कोष में, जबकि वह स्नावयिक और प्राणिक संस्थान में अपने को अनुभव करता है, मनुष्य को भोजन, मनोरंजन और एक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सुखदायक संतुष्ट अस्तित्व में जीवन की सफलता का अनुभव होता है। इनके आगे जब वह मनोमय कोष में जागृत होता है तो उसकी कल्पना का विस्तार क्षेत्र बढ़ जाता है, अब उसे दैवत्व की महिमा और वैभव की झलक कभी-कभी मिलने लगती है, जिससे प्रभावित होकर वह भगवान् की पूजा, आराधना करने लगता है। अगला कोष विज्ञानमय मानव की जिज्ञासा को उठाता है। वह प्राप्त अनुभवों की सत्यता का अन्वेषण करने लगता है; यहीं से उसे पाँचवें कोष आनन्दमय कोष में प्रवेश मिलता है; उसे भगवत्तत्व का बोध होने लगता है और वह बुद्धि के द्वारा, ज्ञान के द्वारा जो अनुभव सोचता था वह साक्षात्कार के द्वारा स्वयं अनुभव करता है। अब मनुष्य भय और संशय से मुक्त हो जाता हैं। ज्ञान ही से मुक्ति प्राप्त होती है। जैसे संस्कृति का सत्प्रभाव उन्नति में होता है, शिक्षा का सत्प्रभाव चरित्र में तथा ज्ञान का प्रेम होता है इस क्रम ै ज्ञान के द्वारा मोक्ष प्राप्त होता है।

केवल धन संग्रह करने और भौतिक ऐश्वर्यों को अधिकृत करने में ही जीवन समाप्त मत करदो। ये सब तो जीवन पक्ष के रोड़े हैं और अवरोधक हैं। धन तो आता जाता रहता है। नैतिकता तो आती है और बढ़ती रहती है! धन वास्तव में सम्पत्ति नहीं है इसका मूल्य गिर भी जाता है, यह अहंकार की वृद्धि करता है और हृदय को कठोर बना देता है। यदि यह (धन) प्रचलन में नहीं रहता है तो रक्त की तरह स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है।

दिव्यात्माओ! किसी भ्रम में मत रहो, क्योंकि मैं यह तुम्हारे प्रति पूर्ण प्रेम रखने के ही कारण कर रहा हूँ। देश में मुक्ति का लघुमार्ग बताने वाले अनेकों हैं जो उन बातों का घूम-घूम कर प्रचार भी करते हैं; यह मार्ग उनको कल्पना के हैं, शिष्यों को आकर्षित करते हैं और जमातें खड़ी करते हैं। वे इन को हठयोग, क्रियायोग, राजयोग और सूक्ष्म वेदान्त का नाम देकर स्वयं ही इनके प्रचारक, पथदर्शक और प्रशिक्षक बन जाते हैं। परन्तु इन सबका परिणाम क्षीण और अस्थाई मात्र होता है। उससे मुक्ति नहीं प्राप्त होती है केवल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भक्तियोग, जैसा शास्त्रों में वर्णित हुआ है और शताब्दियों तक जिसपर अभ्यास किया गया है उसी से पोषण और मुक्ति प्राप्त हो सकती है। भगवान् प्रेम से ही प्राप्त होते हैं। बिना प्रेम वाले हृदय को भगवान् शुष्क मरुस्थल मान कर नहीं रहते हैं। अन्य मार्गों से आत्मवंचना, मनुष्य का मनुष्य से दुराव मनुष्य और अन्य पशुओं से पार्थक्य बढ़ता जाता है। वे सिकुड़ते हैं, दैवत्व की चेतना के तुम्हारे क्षेत्र घटते चले जाते हैं। प्रेम ही आत्मविस्तार है । और आत्मविस्तार कर लेना दिव्य जीवन है। प्रेम का बीजारोपण करो यह दयालुता और सहनशीलता के रूप में खिले और इसमें शान्ति के फल लगें । भगवान् ही प्रकृति के माध्यम से हर वस्तु में व्यक्त होता है; उसके प्रतिबिम्ब को सभी में पहचान लेना चाहिये। यदि माध्यम सात्विक शुद्ध है तो भगवान् जैसा जगदात्मा के रूप में दिव्य है वैसा ही व्यष्टि में भी शुद्ध दिव्य प्रतिबिम्वत होगा। यदि यह राजसिक माध्यम में प्रतिबिम्वित होता है, चूंकि यह माध्यम सक्रियता और तत्परता का होता है, तो प्रतिबिम्ब 'जीव' के रूप में व्यक्तिगत में व्यक्त होता है; जब तामसिक अथवा निष्क्रियता और जड़ता के माध्यम में प्रतिबिम्बित होता है तो यही 'पदार्थ, 'वस्तु' के रूप में व्यक्त होता है। चन्द्रमा एक है, यह इतनी दूर और अलिप्त रहता है ; परन्तु इसके प्रतिबिम्ब भिन्न-भिन्न माध्यमों के कारण भिन्न-भिन्न जल पात्रों में पड़कर स्थिरता और चमकीले पन में भी भिन्नता प्रदर्शित करने लगते हैं, जिसमें जैसा स्वच्छ और शान्त जल होता है, उसमें पड़ा प्रतिबिम्ब भी तदनुकूल ही होता है। सात्विक स्वर्णघट, राजसिक ताम्रघट और तामसिक लौहघट के समान होते हैं। उनके मूल्य में भिन्नता है, परन्तु सब में एक ही चन्द्र समान रूप से उनमें रखे गये जल में प्रतिबिम्बित होता है। स्वर्णघट महात्मा, ताम्रघट आस्तिक और लौहघट नास्तिक को समझना चाहिये; परन्तु इन तीनों में प्रेरक आत्मशक्ति घट-घट वासी के रूप में एक ही है। इसलिये हर एक का सम्मान करो, क्योंकि वही आत्मा सभी में है।

उपदेशक को स्वयं ही उन सब शिक्षाओं पर आचरण करना चाहिये जो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कि वह उपदेश करता है और जिस-जिस के निषेध के लिये श्रोताओं से अपेक्षा करता है उनसे स्वयं भी दूर रहे। तभी उसकी शिक्षाओं का श्रोताओं पर अच्छा प्रभाव पड़ सकता है। यदि गुरु ही इच्छाओं के बोझ से लदा हुआ है; परन्तु वह अपने शिष्य को इच्छा को त्याग देने का उपदेश करता है ! वह स्वयं तो सिगरेट पीता है परन्तु शिष्यों को धूम्रपान की आदत छोड़ने का उपदेश देता है ! ऐसे गुरु तो मंच से आत्म विज्ञापन, प्रचार के लिये भाषण दिया करते हैं। उन्हें इन पर ईमानदारी से आचरण करने की कोई चिन्ता नहीं होती। सत्य साई संगठन को अपनी श्रेष्ठता विज्ञापित करने की कोई लालसा नहीं है। यह तो आदर्शों को उन्नत रखने का प्रयास है; कुछ आध्यात्मिक सिद्धान्तों की सत्यता का साक्षी रहना चाहता है और उन संयमों, अनुशासनों की वैधता, सत्यता का प्रमाण बनना चाहता है।

दिव्यता के मूतस्वरूपो ! इस अवतार के सम्बन्ध में तुम्हें कुछ प्रामाणिकता बतला देने का यह सर्वोत्तम अवसर है। मैं अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिये या इस शरीर का महत्व बतलाने के लिये यह सब नहीं कह रहा हूँ। मैं तो तुम्हें सत्य से परिचित कराने मात्र के लिये यह बता रहा हूँ । अनेकों ऐसे हैं जो मेरे प्रकाश की चकाचौंध को सहने में असमर्थ हैं, जो दैवत्व अनेक कार्यों से झलकता है जो सैकड़ों चमत्कार और अद्भुत घटनायें घटती हैं वे सब कृपा के परिणाम हैं परन्तु ये लोग उन्हें जादूगरी, मेस्मेरिज्म (सम्मोहन) इत्यादि कह डालते हैं; वे इन सब का महत्व जनता की दृष्टि में गिराना चाहते हैं, इनका सम्मानित होना उन्हें सह्य नहीं है। मैं तुमसे स्पष्ट घोषणा करता हूँ कि मेरे यह सब कार्य कोई सम्मोहन या जादू के खेल नहीं हैं मेस्मेरिज्म नहीं हैं। यह मेरी शुद्ध सत्य दैवी शक्ति है।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो इनकी निन्दा करते हैं और कानाफूसी करते हैं कि आध्यात्मिक विकास के पथ पर चमत्कारों से कोई अच्छा परिणाम नहीं निकलता। सिद्धियों का प्रदर्शन भगवान् के साक्षात्कार के मार्ग में बाधक बन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाता है, यह तो तुम्हें सही मार्ग से विचलित कर पथभ्रष्ट कर देती हैं। ये इतने दुर्बल व्यक्ति हैं कि इन्हें भगवान् की कोई कल्पना भी नहीं है। उनमें कोई क्षमता या शक्ति भी नहीं होती है कि वे भगवान् की महत्ता या वैभव को समझ सकें। उनके मस्तिष्क और बुद्धि क्षुद्र सामर्थ्य के होते हैं। कृष्ण के मामा कंस को ज्ञात था कि उसका कृष्ण के हाथ से वध होगा। इसलिये वह इतना भयभीत था कि सदैव और सर्वत्र उसे कृष्ण का ही दर्शन होता था। वह मुक्के तान कर अपनी देखी हुयी कृष्ण की मूर्ति से कहता, "कृष्ण, तुम्हारी जादूगरी को धिक्कार है ! मुझे भयभीत करने की तुम्हारी सभी चालाकियों को मैं ठुकराता हूँ"। उसकी दर्पोक्ति थी कि उसके भौतिक शक्ति सामर्थ्य अत्यंत शक्तिमान् जादू को भी समाप्त कर देंगे। परन्तु जब यह सप्त वर्षीय नन्हा बालक उचक कर कंस के मंच पर चढ़ गया और उसकी गर्दन दबोच ली और वक्षस्थल पर चढ़ बैठा और उसे मार मार कर यम लोक भेज दिया और उसके कान में उच्च स्वर से कहा, "मामा यह जादू है ! जादू है !! जादू है !!!"। तुम यह नहीं घोषित कर सकते हो कि तुमने क्रिया को या घटना को समझ ही लिया है, तुमतो अपने शब्दों द्वारा उसका महत्व घटाने का प्रयास करते हो।

भगवान् कुछ भी कर सकता है। उसकी मुठ्ठी में सब शक्ति है। मेरी शक्ति क्षणिक नहीं है कि कुछ कालके बाद न रहे ! इन्द्रजालमिदम् — भगवान् की इच्छा मात्र से यह सब बाह्य लीला होती रहती है। अन्य सभी शरीरों की तरह मेरा यह शरीर भी अस्थाई निवास स्थान मात्र है ; परन्तु मेरी शक्ति शाश्वत है, सर्वव्यापिनी और सदा रहने वाली है। यह शरीर तो एक उद्देश्यपूर्ति के लिये धारण किया गया है ; धर्म की स्थापना और शिक्षा के लिये है। जब उद्देश्य पूरा हो जावेगा, यह शरीर भी नहीं रहेगा ; ठीक उसी प्रकार जैसे जल का बुलबुला जल में मिल जाता है। अभी उस दिन शरीर पर गोआ में बहुत गंभीर रोग आ गया था। जब उन्हें इस विषय में ज्ञात हुआ तो मेरे अनेक भक्त चिन्ता मग्न हो गये ! बीमारी इस शरीर पर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कभी हावी नहीं हो सकती, वह इसके पास भी नहीं फटक सकती। यदि यह कमी होती भी है, तो क्षणस्थाई और घटने वाली घटना की तरह निकल जाती है। वह तो किसी और की ही होती है परन्तु मेरे पास जैसे आ जाती है, और उसी प्रकार चली भी जाती है। जब वह आती है तो यह शरीर बीमार जैसा 'प्रतीत' होता है। परन्तु मुझसे बीमारी का सम्पर्क तक नहीं होता है, कोई वेदना नहीं होती है! जब ऐसा होता है तो कुछ लोग दुस्साहस कर मुझे यह बतलाते भी हैं कि मैं इससे कैसे निबट लूं! स्थिति को किस प्रकार सँभालूं।

वे मुझे बतलाते हैं, "स्वामी जी, आप दूसरे के रोगों को क्यों आने देते हैं? यदि वह इस रोग से कष्ट पाता है तो केवल एक व्यक्ति दुखी होता है! परन्तु जब आप इस रोग को अपने ऊपर ले लेते हैं तो लाखों लोगों को कष्ट होता है! इसे उसी के पास जाने दो, स्वामी जी", ऐसा लोग कहते हैं। जब यह शरीर "कष्ट पाता है" तो भक्तों का स्वभाव है, वे सामूहिक रूप से दुखी होते हैं; परन्तु मुझे तो अपना कर्तव्य करना ही है। जिन्होंने आत्म समर्पण कर दिया है उनके दुखों को अपने ऊपर ले लेना मेरा कर्तव्य है। मैं अपना कर्तव्य करता हूँ, तुम अपना कर्त्तव्य पालन करो। परन्तु, यदि और जब, तुम सत्य को समझोगे तो जान जाओगे कि न तो मुझे कष्ट होता है और न तुम्हें दुखी होना चाहिये। यह सब प्रेम का खेल मात्र है। मैंने तो प्रेम के वशीभूत होकर ही इसे अंगीकार किया है; इस लिये मुझे कोई दुख या कष्ट नहीं होता है। तुम भी प्रेम के कारण ही तो दुखी होते हो। यह तो प्रेम, केवल एकमात्र प्रेम के ही कारण होता है। दुख, कष्ट और यातना के लिये कोई स्थान ही नहीं है।

प्रेम को उपजाओ, उसी की मस्ती में मस्त रहो। यहाँ लाखों की भीड़ है, ये लोग अपने को भक्त कहते हैं; परन्तु यदि तुम इनकी भक्ति की गंभीरता का पता करना चाहो तो तुम्हें पता लगेगा कि ९९ प्रतिशत भक्ति अस्थाई और अल्पकाल के लिये है, वे पूरे समय के भक्त नहीं हैं। यदि तुम्हें मेरे बारे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

में सत्य ज्ञान होता तो तुम रंच मात्र भी दुखी न होते और गोआ राजभवन से प्रसारित बीमारी की उस सूचना से तुम्हें कोई आश्चर्य, या आशंका न होती। कुछ लोगों का तो विश्वास इस सूचना से बुरी तरह से हिल गया था। भक्तों को अपने दृढ़ विश्वास के आनन्द से सदा प्रफुल्लित और दीप्तिमान रहना चाहिये। एक मां और बेटे में सम्पत्ति के अधिकार के लिये बड़ी गंभीरता से और शीघ्रता से मतभेद बढ़ता गया, यहाँ तक कि एक दूसरे से संबंधों का विच्छेद पूर्णतया हो गया; वे न्यायालय में आमने-सामने वादी और प्रतिवादी के स्थानों पर न्यायाधीश के सामने खड़े हुये। न्यायाधीश ने महिला से पूछा, "क्या तुम उस व्यक्ति को जानती हो?" उस महिला ने उत्तर दिया, "हाँ, वह तो मेरा पुत्र है" वह चाहे जितनी जोर से घृणा करती हो उसे मानना ही पड़ता है कि वह उसी का पुत्र है! इसी प्रकार जब नवयुवक से पूछा गया तो उसने भी यही कहा "हाँ यह मेरी माता है"! तुमको भी, चाहे जो हो, उस विश्वास से विचलित नहीं होना चाहिये कि तुम और भगवान् अलग-अलग हो जाओ।

इस कोटि का दृढ़ विश्वास तो अब दिनों दिन दुर्लभ होता जा रहा है। जब तुम्हारी इच्छायें पूर्ण नहीं हो पातीं तो तुम ईश्वर की सत्ता से ही इनकार करने लगते हो; जब इच्छायें पूरी होती हैं तो तुम भगवान् की भक्ति पूजा बड़ी धूम धाम से करते हो और अपने मंदिर के चित्रों में कुछ और चित्र बढ़ा लेते हो। धूप, फूल और प्रसाद पर कुछ अधिक धन व्यय कर डालते हो। भगवान् का कोई प्रिय या अप्रिय नहीं होता है, वह तो प्रतिक्रिया करता है, प्रतिबिम्बित होता है और प्रतिध्वनित होता है। वह आनन्द देने, आनन्द वृद्धि करने, आनन्द प्राप्ति के ढंगों की शिक्षा देने को आता है, तुम्हें इसके लिये सक्रिय बनाता है। वह संसार के दुखों, यातनाओं को अपने ऊपर ले लेता है, जिससे मनुष्य के हृदय प्रेम करने योग्य होजावें।

आज ईसाई संवत् के प्रचलन का वर्ष दिन है। ईसा के सन् का दिन है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ईसा ने उन लोगों के लिये, जिन्होंने उसपर ग्रास्था प्रकट की थी, अपना जीवन बलिदान कर दिया। उसने यह प्रचार किया था कि सेवा ही भगवान् है, बलिदान ही भगवान् है। चाहे तुम भगवान् की भक्ति में चूक जाग्रो परन्तु जीवित भगवान् की सेवा में, जोकि ग्रनेकों मानवों के रूप में तुम्हारे चारों ओर चल-फिर रहा है अनेकों प्रकार के वस्त्रों को धारण किये है, अनेक भाषायें बोलता है, कोई भूल या उपेक्षा न होने पावे। केवल वे लोग जो ग्रपने जैसे ही मानव मात्र के लिये दयालुता रखते हैं वे ही भगवत्कृपा के उपयुक्त पात्र हैं। यही सर्वोच्च ग्राध्यात्मिक ग्रनुशासन है। यह तुम्हें मानव समाज की एकता ग्रौर भगवान् की सर्वव्यापकता का बोध कराता है। जो अनुशासन, संयम सेवादल ने ग्रपने ऊपर सच्चाई से, स्वेच्छा से, ले रखा है, वह इस समूचे देश भर में फैल जावे; यह देश समृद्ध होवे, शान्ति, आनन्द ग्रौर प्रेम पूर्ण विश्वास को प्राप्त करे। यह मेरा ग्राशीर्वाद है। मैं चाहता हूँ कि तुम समस्त मानवता के कल्याण के लिये, समृद्धि के लिये प्रार्थना किया करो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६८ ढिबरी और पेंच

(कुरला, बम्बई, १-१-१९७१)

आज एक शुभ दिन है; नववर्ष का बड़ी धूम-धाम से स्वागत किया जाता है। उससे बड़ी-बड़ी शुभ आशायें होती हैं जबकि गत वर्ष को शानदार विदाई दी जाती है। प्रतिवर्ष मानव स्वागत और विदाई के उत्सवों में भाग लेता रहा है। यह सब मानव के इतिहास के प्रारंभिक वर्षों से होता रहा है। पर इस सब का अभी तक क्या सुफल निकला है? केवल निराशा और संकट, आशंका और पागलपने का भय। आज एक अवसर है जब यह समीक्षा की जावे कि ऐसा किस कारण से होता है।

हर व्यक्ति चाहता है, प्रयत्न भी करता है कि स्वयं शान्ति से रहे और समाज (जिस स्थानीय मानव समुदाय में वह रहता है) के साथ भी उसके संबंध शान्ति के हों तथा वह अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सके। उसने इस शान्ति को प्राप्त करने के लिये धन संग्रह किया; धन उसे वह शक्ति देता है जिससे वह अन्य लोगों पर धाक जमा लेता है, तथा उसे सुख-सुविधा के अन्य साधन खरीदने में सहायता करता है, इस प्रकार सम्पन्न जीवन से शान्ति पाने की आशा करता है। उसने अपने को सत्ता और प्रभाव के उच्च पदों पर आरूढ़ करने का प्रयत्न किया है जिससे कि वह अपनी इच्छानुसार अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये घटनाओं को मोड़ दे सके। परन्तु अब उसने अनुभव किया है कि ये दोनों मार्ग भयावह हैं और इनसे वह जिस शान्ति को पाता है वह शीघ्र और कभी कभी तो भीषण रूप से समाप्त हो जाती है।

फिर मानव शान्ति कैसे प्राप्त करे? केवल प्रेम से! शान्ति तो जीवन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रूपी वृक्ष का फल है, इस फल के विना वृक्ष ठूंठ है। उसका कोई मूल्य या महत्व नहीं है। तुमने भी अनुभव किया होगा कि यह फल कटु त्वचा के अन्दर स्थित है जिससे इसका मधुर रस डाकुओं के हाथ न पड़ने पावे। मधुर रस आस्वादन करने के पूर्व तुम्हें इसका छिलका उतारना होगा और अपने को शक्तिशाली बनाना होगा। मोटा छिलका, षड्रिपुओं का प्रतीक है जिनसे मनुष्य का प्रेमी हृदय घिरा रहता है। वे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, घृणा हैं। जो इस छिलके को हटा कर अन्दर की मधुरता से निरंतर कठोर अनुशासन पालन के द्वारा सम्पर्क कर पाते हैं उन्हें ही हम सबकी प्रिय वस्तु शान्ति मिल पाती है। वह शान्ति अपरिवर्तनशील, स्थायी और आनन्द से अभिभूत कर ने वाली होती है।

मोटर कार, बैंक में जमा धन, बंगला(जो कि नगर के वाहर स्वच्छ विस्तार में बना है) इन सब से क्या लाभ है ? यदि तुम्हारे पास यह सब हो परन्तु हृदय में प्रेम न हो तो हृदय एक परित्यक्त अंधेरे मंदिर के समान सुनसान हो जाता है जहाँ काम क्रोध के चिमगादड़ स्थायी रात्रि के अंधेरे में पनपते रहते हैं। ऐसे हृदय दूषित तथा भय और भूलों से रुग्ण हैं।

कमानी संगठन के कार्यकर्त्ताओं की एक विशाल सभा यहाँ एकत्रित है, यहाँ इस संगठन के विभिन्न उद्योगों और क्षेत्रों के कार्यकर्त्ता एकत्र हैं। औद्योगिक, कृषि संबंधी, व्यापारिक, राजनैतिक और प्रशासकीय—यह उन पांच प्राणवायु के सदृश हैं जो शरीर के अन्दर होने वाली क्रियाओं को बनाये हुये हैं। इन पाँचों में परस्पर विवाद नहीं होना चाहिये। परस्पर प्रेम और सम्मान की भावना से इनको मिलकर कार्य करना चाहिये। तभी समाज को शान्ति, सुरक्षा और प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है। यदि ये परस्पर एक दूसरे को न समझें, न सहयोग करें, अथवा इनमें से एक दो फूट कर पथ से अलग जा पड़ें, तो विनाश अपरिहार्य है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वर्तमान समय में दुर्भाग्य से यह सहयोग दिखाई नहीं देता है। इसके प्रतिकूल दलगत स्वार्थ और प्रतियोगितामूलक संघर्ष वृद्धि पर हैं; और सभी क्षेत्रों में ऐसा है चाहे वह श्रमिक वर्ग, राजनैतिक, प्रशासकीय, वाणिज्य, कृषि क्षेत्र, कोई भी हो। यही कारण है कि आशंका और असुरक्षा की भावना ग्रामीण और नागरिक दोनों क्षेत्रों में व्याप्त हैं। लोग अपने-अपने कारोबार में मृत्यु और विनाश की धमकी भरे वातारण में सर्वत्र कार्यरत हैं। आशंकापूर्ण अनिश्चितता की छाया उन पर पग पग पर पड़ती रहती है। इसके उपचार के लिये मनुष्य प्रायः हिंसा और क्रान्ति की ओर भाग देते हैं।

परन्तु इससे कुछ भी नहीं बनता, यह तो बीमारी को और संगीन बना देते हैं। उत्तेजना से विवेचना की शक्ति जाती रहती है। हिंसा, उद्वेग और निर्दयता से अन्य नयी नयी समस्यायें उठ खड़ी होती हैं; पुरानी कोई समस्या हल नहीं हो पाती है। आज देश में इनकी बाढ़ आयी हुयी है। जिन लोगों में न कोई प्रशिक्षण है, न उत्तरदायित्व वहन करने की हार्दिक आकांक्षा है कि अपने पद के आपेक्षित कर्त्तव्यों का पालन करें, वे ही उच्च पदों पर, सत्ता के स्थानों पर आरूढ़ हो जाते हैं। योग्यता, कर्तव्य पूरा करने की इच्छा और उत्तरदायित्व की भावना का वहन करना, इन्हीं तीन के आधार पर मनुष्य दूसरों पर अधिकार जमा सकता है। कर्त्तव्य ही परमात्मा है कार्य ही पूजा है। पद से प्राप्त शक्ति को कृतज्ञता और श्रद्धा की भावना के साथ प्रयोग करना चाहिये।

यदि इसे स्मरण रखा जावे तो प्रत्येक कार्यकर्त्ता को चाहे वह किसी भी पद पर क्यों न हो, कार्य से प्रसन्नता, संतोष और शान्ति प्राप्त होंगे। ये दोनों ही व्यक्ति को और उस समाज को, जिसका वह एक अंग है, प्राप्त होंगे। कमानी कार्यकर्त्तागण देश भर में प्रसारण के स्तम्भ खड़े करते हैं। जब प्रत्येक पेंच और ढिबरी अपने अपने स्थान पर कस कर, सच्चाई से बिठा दिये जाते हैं, तभी ये स्तंभ वायु, मौसम की कठोर परीक्षाओं को सह पाते हैं और सुरक्षित खड़े रहते हैं, है न यही बात? हम में से कौन और किस तर्क से कह सकता है

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कि किसका इस निर्माण में महत्व कम या अधिक है। प्रत्येक का कार्य आवश्यक और मूल्यवान् है जहां तक कि उसका क्षेत्र और उत्तरदायित्व है। इस सामान्य संयुक्त उद्योग में प्रत्येक को अपनी योग्यता, चातुर्य और अपने कर्त्तव्य को स्वेच्छा से पूर्ण करने के आधार पर विभिन्न पद प्राप्त होते हैं। तुम किसी कार्य को ऊँचा कार्य और किसी को निम्न कोटि का नहीं कह सकते। इससे तो द्वेष और घृणा ही फैलेगी। दोनों में से कोई भी अच्छी या स्वीकार्य नहीं है।

सड़क पर जाता हुआ एक व्यक्ति किनारे पर के वृक्ष में एक पका फल देखता है। मन फल के लिए लालायित होता है; परन्तु मन स्वयं अपनी लालसा को तृप्त नहीं कर सकता। पैर उसे वृक्ष के पास ले जाते हैं। परन्तु इससे भी बात नहीं बनती है। उसका धड़ झुकता है हाथ पत्थर उठाता है, कंधों के सहयोग से पत्थर को निशाना साधकर फल पर चोट की जाती है। फल भूमि पर गिरता है। यहाँ पर भी कहानी का अंत नहीं होता है। उंगलियों से फल उठाना पड़ता है फिर इसे मुंह के समीप ले जाना पड़ता है, दाँतों को इसमें से काटकर चबाना पड़ता है तब जिह्वा इस कार्य को अपने ऊपर लेती है और उसे आमाशय तक पहुंचाने का कार्य होता है। इस प्रकार खाने की क्रिया सम्पन्न होती है।

परन्तु फल की लालसा की कहानी अभी अधूरी है चूंकि शरीर के विभिन्न अंग सहयोग करते हैं तब यह तृप्ति होती है अतः प्रत्येक को उसके सहयोग के लिये कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिये। इसलिए उदर से सभी अंगों को तृप्ति और शक्ति उस साहसिक अभियान में सहयोग के लिये प्रेषित किये जाते हैं। आँख, पैर, हाथ, उंगलियाँ, कंधे, जिह्वा, दाँत, गला सभी को शक्ति प्राप्त होती है। किसी की भी उपेक्षा अथवा किसी से भेदभाव नहीं किया जाता है।

हर अवयव को दक्षतापूर्वक ठीक अवसर पर अपने सौंपे हुये स्वीकृत कार्य

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को कर्त्तव्य की भावना से करना चाहिये। जिससे शरीर स्वस्थ, दक्ष और स्फूर्तिवान् बना रहे। उसकी क्षमता, चातुर्य और शक्ति कार्य के लिये सुरक्षित रहे यही सभी उद्योगों के लिये भी, जिन्हें मनुष्य दूसरों के सहयोग से लाता है, सत्य है। प्रत्येक को अपना कर्त्तव्य अपने चातुर्य और बुद्धि के सहयोग से पूरा करने का संकल्प लेना चाहिये।

मानव इस दुनिया के रंगमंच पर कुछ दिन खाने-पीने, मौज उड़ाने के लिये ही नहीं आया है। मानव दुनिया में इसलिये आया है कि वह भगवान् की उपस्थिति रूपी धूप का आनन्द लेवे, इसके लिये उसे प्रेम का अभ्यास करना चाहिये, प्रेम की वृद्धि करनी चाहिये। यह पृथ्वी ही एक महान उद्योग है, एक व्यस्त निर्माणशाला है जिसमें 'प्रेम' का ही उत्पादन होता है। साधना के द्वारा यह संभव है कि प्रचुर मात्रा में प्रेम का उत्पादन करके इसका निर्यात भी उन लाखों लोगों के हित में किया जा सकता है कि जिन्हें इसकी आवश्यकता होवे। जितना ही इसका अधिक आस्वादन किया जाता है, उतना अधिक यह गंभीर होता जाता है। स्वाद अधिक मीठा होता है और आनन्द की सीमा का विस्तार होता जाता है। प्रेम के द्वारा व्यक्ति भगवान् तक पहुंच सकता है, उसकी उपस्थिति में ठहर सकता है; क्योंकि भगवान् ही प्रेम हैं और जब कोई प्रेम से प्रेम में रहता है तो वह भगवान् में ही निवास करता है। यदि क्रोध के वशीभूत होकर तुम भगवान् की सत्ता से ही इनकार कर दो तो तुम अपने हृदय के प्रेम स्रोत को ही सुखा रहे होगे। यदि तुम कहो कि ईश्वर है ही नहीं; तो तुम अपने हृदय में रात्रि का अंधकार सहेज रहे हो और वही अंधकार में कुत्सित योजनाओं का कुचक्र रचते रहोगे। तदनुकूल दुष्टता के कार्य करोगे।

एक बार एक गेरुआ वस्त्रधारी साधु किसी ऐसे ग्राम में गया जहाँ नास्तिक ही रहते थे। वह कुछ उद्धत नवयुवकों के दल में फँस गया। उन लोगों ने उसको चुनौती दी कि उस भगवान् को; जिसकी वह साधु नित्य पूजा आराधना करता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है, उन्हें दिखावे और सिद्ध करे कि भगवान् है। उसने कहा कि वह सिद्ध तो कर सकता है परन्तु पहले तो उसे एक प्याला दूध चाहिये।

जब दूध उसके समक्ष लाया गया तो उसने इसे पिया नहीं, बैठा-बैठा ताकने लगा और दिखलाया कि वह दूध को ध्यान से देख रहा है। नवयुवक लोग अधीर हो उठे, वे आग्रह पूर्ण ढंग से कोलाहल करने लगे। साधु ने कहा "एक मिनट ठहरो, मैंने सुना था कि दूध में मक्खन होता है, परन्तु मुझे कहना पड़ता है, कि इस प्याले में मक्खन नहीं है; क्योंकि वह मुझे इसमें दिखलाई ही नहीं पड़ता है; मैं बड़े ध्यान से खोजता हूँ"। वे लोग इस भोलेपन पर हँसे और बोले, "मूर्ख, इतने शीघ्र ऐसे निर्णय नहीं किया जाता है। दूध की हर बूंद में मक्खन है वही तो इसे इतना पौष्टिक बनाये हुये है। यदि तुम अलग से मक्खन देखना चाहते हो, तो तुम्हें दूध को खौलाना, ठंडा करना, जामन देना और दही जम जाने पर मथने के परिश्रम करने के बाद मक्खन ऊपर तैरता हुआ दिखाई देगा"। साधु बोला, "अरे अब तो मेरे तुम्हें भगवान् के दर्शन कराने का कार्य सरल हो गया है। भगवान् तो हर वस्तु और हर व्यक्ति में इस विश्व के प्रत्येक परमाणु में व्याप्त है, उसी के कारण तो इन सबका अस्तित्व है और हम उन्हें पहचान पाते हैं और आनन्द उठाते हैं। उस भगवान् को स्थूल मूर्त रूप में देखने के लिए तुम्हें भी निर्धारित पद्धति का हार्दिक रूप से कड़ाई के साथ कुछ समय तक पालन करना होगा। फिर इस सबके पश्चात् अंत में तुम्हें उसकी महिमा और कृपा का अनुभव होगा।"

जो प्रकृति हमारे साथ है, हमारे चतुर्दिक् जिसका विस्तार है वह भगवान् की ही अभिव्यक्ति है। हम उसके सौंदर्य, भद्रता, बुद्धिमत्ता और शक्ति के प्रमाण अपने चारों ओर, जहाँ भी देखते हैं पाते हैं। परन्तु उसे पहचान पाने की कला से हम अपरिचित हैं इसलिए हम इसके अस्तित्व से इनकार करते हैं और अंधकार में रह रहे हैं। संसार के सभी प्रसारण केन्द्रों से प्रक्षिप्त संगीत ध्वनियाँ हमारे चारों ओर के वातारण में व्याप्त होती हैं परन्तु वे तुम्हारे कानों को कभी नहीं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सुनाई पड़ती हैं तुम्हें किसी भी केन्द्र के कार्यक्रम का पता नहीं चल पाता है परन्तु यदि तुम्हारे पास इन ध्वनियों को ग्रहण करने वाला रेडियो या ट्रांजिस्टर हो तो तुम किसी भी विशेष केन्द्र के कार्यक्रम को सुन सकते हो, यदि तुम सेट को ठीक-ठीक उसी तरंग को ग्रहण करने योग्य स्थिति (घुंडी घुमाकर) में नहीं ला पाये तो समाचारों के स्थान पर कर्णकटु ध्वनियों का कोलाहल ही सुनाई पड़ेगा। इसी प्रकार वह दैवत्व भी ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, अन्दर-बाहर दूर-समीप सर्वत्र विद्यमान है। इसे पहचानने के लिए तुम्हें किसी यंत्र की नहीं बल्कि मंत्र, (मनोवैज्ञानिक और रहस्यमयी शक्ति युक्त शब्द योजना) की आवश्यकता होती है। ध्यान करना ही घुंडी घुमाकर ध्वनि तरंग में रेडियो सेट को मिलाना है, प्रेम की ध्वनि ही सही ध्वनि है, इस प्रकार आत्म तत्व का साक्षात्कार करने से आनन्द प्राप्त करना ही कार्यक्रम को स्पष्ट रूप से सुनना होता है।

प्रेम की भावना से काम करो, इससे तुम्हें पूजा करने की प्रेरणा प्राप्त होगी; अर्थात् कार्य करते हुये यह न सोचो कि उससे तुम्हारा क्या विशेष स्वार्थ साधन होगा। कार्य करो क्योंकि ऐसा करना तुम्हारा कर्त्तव्य है, कार्य करो क्योंकि तुम्हें कार्य करना प्रिय है, कार्य इसलिए भी करो कि इसी प्रकार कार्य करके ही तुम भगवान् के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हो उन गुणों और चातुर्य के लिये जोकि भगवान् ने तुम्हें प्रदान किये हैं। इसी प्रकार के कार्य से बुद्धिमत्ता प्राप्त होती है। बुद्धिमत्ता का अर्थ है उस व्यापक भगवान् को सभी में देख सकना और पहचान सकना।

कार्यकर्त्ता और नियुक्तिकर्त्ता में हृदय और शरीर के जैसा संबंध होना चाहिये। दोनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। वे एक दूसरे पर अवलंबित हैं कि उनका अस्तितत्व सुरक्षित रहे। नियुक्ति कर्त्ता पिता का और कार्यकर्त्ता पुत्रों की तरह अभिनय करें। जिस प्रकार इन दोनों में परस्पर प्रेम का संबंध होता है वैसा ही संबंध यहां भी होवे। नियुक्ति कर्त्ता प्रेम और रक्षण का

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ध्यान अपने कर्मचारियों के लिए रखे और कर्मचारी संतान की तरह कृतज्ञता और श्रद्धा का भाव नियुक्तिकर्त्ता के प्रति रखें । दोनों के बीच घृणा और द्वेष के लिए स्थान न रहे । यदि कुछेक लोगों के क्रोध और अश्रद्धा को छूट दी जाती है और अन्य लोग अंधे बनकर उपेक्षा करते हैं तो सभी को कष्ट उठाना पड़ेगा ।

इस सामुदायिक कक्ष, जिसका मैंने अभी उद्घाटन किया है, में साप्ताहिक अथवा मासिक भजन-सत्संग की बैठक हुआ करे । कभी-कभी अच्छी आध्यात्मिक वार्तायें अथवा ऐसे ही विषयों पर वाद-विवादों का भी आयोजन हुआ करे । मैं यह भी चाहता हूँ कि तुम अपने बच्चों के लिए एक बाल-विहार का भी संचालन करो जहाँ कि वे महाकाव्यों और धर्म शास्त्रों की कहानियां, संतो और ऋषियों की जीवन गाथायें भी सुना करें । बच्चों को स्वच्छता, शारीरिक परिश्रम और पारस्परिक सहयोग और सहायता का स्वभाव भी सीख लेना चाहिये । उन्हें भजन गाना, छोटे छोटे नाटक भी जो धार्मिक शिक्षा के सिद्धान्त की व्याख्या करने वाले हों, इन बच्चों से अभिनय कराये जावें । उन्हें अनुशासन पालन का स्वभाव डालना चाहिये क्योंकि इसीसे व्यक्ति की और सामाजिक प्रसन्नता सुरक्षित होती है ।

दिव्यात्मकस्वरूपों ! मैं तुम सब से मिलकर प्रसन्न हूँ । यह नववर्ष तुम्हें मानसिक शान्ति प्रदान करे, तुम्हें अपने लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति हो तुम्हें सभी सुख-संतोष की प्राप्ति होवे । यही मेरा आशीर्वाद है ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

६६ आधुनिक प्रह्लाद

(धर्मक्षेत्र, बम्बई ३-१-१६७१)

यदि मैं प्रश्न करूँ कि तुम कौन हो तो तुम यही उत्तर दोगे, "हम अध्यापक हैं" अथवा तुममें से कुछ ऐसा भी कह सकते हैं कि, "हम छात्र हैं"। परन्तु दोनों वक्तव्य एक साथ सत्य नहीं हैं। तुम साधक हो, वास्तविक सत्य यही है। मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारी साधना संतोषप्रद गति से चल रही है। तुम मुझे अपने मध्य में लाये हो। यह तुम्हारी सच्चाई और उत्साह के कारण ही हो सका है। बच्चों के प्रति की गयी सेवा से मैं विशेष रूप से आकर्षित होता हूँ और मुझे कहना पड़ता है कि तुमने उन्हें अच्छी और प्रेम पूर्वक शिक्षायें दी हैं। तुममे से कुछ लोग सीमातीत उत्साही हैं। तुमने उन्हें बहुत लम्बी-लम्बी कहानियाँ रटा दी हैं। उनकी स्मृति को इतना अधिक बोझिल मत बनाओ। २०, २५ पंक्तियों की लघु कथायें सर्वोत्तम होती हैं। उन्हें रटाया मत करो। क्योंकि जब उन्हें बल प्रयोग से रटाया जाता है इसलिये कि मैं आने वाला था, और एक कहानी प्रतियोगिता की व्यवस्था की जाने को थी, तो शीघ्रता में सीखी बात कार्य के अंत होते ही शीघ्रता से भुला भी दी जाती है। मस्तिष्क को इन कहानियों से भर लेने पर भी वह बदलता नहीं है। जो शिक्षायें और घटनायें उनमें वर्णित हैं, उन्हें हृदयपटल पर अंकित कर लेना चाहिये; परन्तु यह सब उन्हें 'मुखाग्र' याद नहीं करना चाहिये; बल्कि हृदय के लिये और हृदय में धारण करने के लिये होना चाहिये।

मुझे ज्ञात हुआ है कि तुम बच्चों को भजन, कहानी कहना और कहानी तथा निबंध लिखने की शिक्षा देते हो। जो कहानियाँ वे लिखते या कहते हैं वे महाकाव्यों और उपनिषदों से ली जाती हैं। यह ठीक है। परन्तु उन्हें ध्यान

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करना भी सिखाओ; प्रतिदिन, कुछ समय तक ध्यान किया करें। वह स्वभाव तो इन्हें इसी अवस्था से डालना चाहिये। पाँच मिनट प्रार्थना, पाँच मिनट ध्यान यह अभ्यास ठीक रहेगा। इनसे मिलने वाला आनन्द ही बच्चों को इसे स्वभावतः करने के लिये प्रेरित करेगा। कोमल मस्तिष्क को कोमलता से ही साधना चाहिये।

शबरी का हृदय बड़ा कोमल और दयालु था। वह मतंग ऋषि के यहाँ कैसे आई और वहीं ठहर गयी, यह बड़ी रोचक कहानी है। उसका विवाह उसके माता-पिता ने करना निश्चित किया। आदिवासियों में जैसी परम्परा थी उसी के अनुसार एक बकरे का बलिदान जातीय देवी को भेंट करना चाहिये था। विवाह से एक रात्रि पूर्व नव दम्पति के लिये आशीर्वाद प्राप्त करने के लिये यह बलिदान किया जाता था। जब शबरी को इस हत्या का पता चला, वह रोई और माता-पिता के चरणों में गिर कर बकरे की जान बचाने की प्रार्थना की। उसने कहा कि, "वैवाहिक जीवन, जिसका प्रारंभ बकरे के मिमियाने से प्रारंभ हो, कैसे सुखमय हो सकता है?" परन्तु पिता ने उसे एक ओर ठेल कर हटा दिया और क्रूर परम्परा की तैयारी में लग गया। उसी रात शबरी अत्याचार की उस गुफा से चुपके-चुपके भाग आई और घने जंगल में कहीं समीप ही छिप गयी।

जब सूर्योदय हुआ तो उसके माता-पिता और बारात वाले सब चिन्ता और शोक में डूब गये। उन्होंने वह सब क्षेत्र, जहाँ वह घनी झाड़ियों के नीचे दुबकी हुयी थी छान डाला और आपस में यह कहते हुये लौट गये, "कि वह साधु की कुटिया में तो जा नहीं सकती क्योंकि वहाँ स्त्रियों को ठहरने ही नहीं दिया जाता है"। शबरी ने इन शब्दों को सुना और निश्चय किया कि कुटिया ही उसके लिये सबसे सुरक्षित स्थान है। उसने सोचा कोई न कोई साधु उसके ऊपर दया करेगा ही और उसे वापस नहीं लौटावेगा। मतंग ऋषि ने उसे देखा और अपनी कुटी में रहने की आज्ञा दे दी। उन्होंने उसे बतलाया कि एक दिन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वहाँ रामचन्द्र के रूप में भगवान् आने वाले हैं, क्योंकि उन्हें १४ वर्ष का बनवास दिया गया है और वे तपस्वियों और साधुओं की राक्षसों के अत्याचारों से रक्षा करने के लिये उत्सुक हैं। राम एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र को बढ़ते हुये आ रहे हैं; साथ में उनकी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण हैं।

उस दिन से शबरी के हृदय में राम के अतिरिक्त और कोई विचार ही शेष न रहा। राम के दर्शनों की इच्छा के अतिरिक्त कोई इच्छा ही न रही, वह उनके चरणस्पर्श करना और संभाषण करना चाहती थी। उसका हृदय रामरस से संपृक्त था, राम की मधुरिमा का वह निरंतर आस्वादन करती रहती थी। वह इसके अतिरिक्त अन्य कोई जप, ध्यान या आध्यात्मिक साधना नहीं करती थी। वह अपना सम्पूर्ण समय कुटिया में राम की भेंट और शुभागमन की तैयारी में बिता रही थी। वह जब मार्ग स्वच्छ करती तो साथ ही अपना हृदय भी स्वच्छ करती जाती थी। कंकड़, पत्थर और काँटे (मार्ग और उसके हृदय) दोनों से ही अदृश्य होते जा रहे थे, यही उसका प्रयास था। वह नीचे की घास-पात और ऊपर से लटकने वाली लताओं और जड़ों को काटकर आश्रम को स्वच्छ और सुन्दर बनाने में संलग्न थी। वह कल्पना करती थी कि राम ने अपने वालों में कंघी नहीं की होगी, वह इन कंटीली झाड़ियों से कहीं उलझ न जावें। उसने भूमि को खोद कर, गड्ढे भर कर समतल किया कि सीता के कोमल चरणों को कुटिया की असम भूमि पर चलने में कष्ट न हो। वह प्रतिदिन जंगल से कंद, मूल, फलों को इकट्ठा कर राम के स्वागत के लिये रखती थी, क्योंकि न मालूम राम किस दिन पधारें। और वह उसके लिये कोई संकट न उठाकर, सदैव तैयार रहती थी। वह प्रत्येक फल को चख कर देखती कि वह कड़ुआ है या मीठा या खट्टा जिससे राम को केवल उत्तम फल ही भेंट कर सके। जंगली मार्ग के इधर-उधर पड़े हुये पत्थरों को भी उसने घिस कर चिकना बनाया था, क्योंकि वह सोचती थी कि राम, लक्ष्मण या सीता, कोई भी थक कर न मालूम कब कहाँ किस पत्थर पर बैठना चाहें। वह

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

स्थान उन्हें सुखदायक हो, इसके लिये वह सचेष्ट थी। इस प्रकार निरंतर चिन्तन से उसका हृदय रामहृदय बन गया था।

सत्य साई बाल-विहार के बच्चों को जानना चाहिये कि सत्य साई उनके हृदय में ही निवास करता है। अध्यापक इसे भी साई राम की पूजा ही समझें। उनके हृदयवासी साई राम को बच्चों के लिये कैसे स्पष्ट या व्यक्त किया जावे ? यह समस्या ही तुम्हारे कार्यों का निर्देशन करे। साई राम को तुम्हारे हृदय के जगत में विचरण करना है, इसलिये मार्ग को चौड़ा और चिकना कंकर, पत्थर और काँटों से रहित बनाओ।

शबरी राम के चिन्तन में इतनी मग्न थी कि तपस्वियों को उसके स्त्रीत्व का ध्यान ही न रहा उन्होंने उसे कुटिया में रहने दिया, जबकि मतंग ऋषि ने उसको उच्च कोटि की लगन और भक्ति की प्रशंसा की। मतंग ने न केवल शरीर त्याग किया बल्कि उन्होंने अपनी कुटिया को भी शबरी को यह कह कर सौंप दिया कि तुम्हीं अकेली राम के दर्शन पाने और स्वागत करने की उपयुक्त पात्र हो। जब वे आवें तो उनकी पूजा करना।

जो साधना शबरी ने राम की कृपा प्राप्त करने के लिये की वही तुम भी इन बच्चों की सेवा करके साई राम की सेवा करते हो। इस सेवा के द्वारा तुम आत्म साक्षात्कार करते हो।

लोग कहते हैं कि वे परोपकार और लोकोपकार करते हैं। वास्तव में यह दर्पोक्ति खोखली है। कल्पना करो कि तुमने १० व्यक्तियों को भोजन के लिये आमंत्रित किया। जब १० व्यक्ति भोजन करने बैठे तो एक ओर तुमने भी आसन लगा लिया और ११वें स्वयं हो गये। इस प्रकार भोज्य सामग्री का एक भाग स्वयं भी खाया। फिर इसे दूसरों का भोज (दावत) कैसे कहते हो, आतिथ्य कैसे कहते हो ? जब तुम दुनियां का कल्याण करते हो, तो तुम इस कल्याण में

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

स्वयं भी भागीदार हो फिर यह केवल परोपकार ही नहीं है यह तो अपना उपकार पहले है और दूसरों की सहायता बाद में है । जो कर्त्तव्य तुमने अंगीकार किया है, उसे पूरा करके तुम भगवान् की कृपा के अधिकारी होते हो । भगवान् तुम पर कृपा वर्षा करेगा ।

तुम शिक्षक और विद्यार्थी दोनो ही हो, स्मरण रहे तुम इन बच्चों को शिक्षा देते हो और स्वयं मुझसे शिक्षा ग्रहण करते हो । तुम्हें यह भान नहीं होना चाहिये कि ये बच्चे किसी और के हैं । उन्हें अपनी संतान ही समझ कर व्यवहार करो ।

जब तुम बच्चों को कहानी सुनाओ, ता सुनाने के लिये ऐसी कहानियों का चयन किया करो जो बच्चों की पारिवारिक परिस्थितियों से संबंधित हों । उन्हें ऐसी कहानियाँ सुनाओ जो कुविचारों के विरुद्ध बच्चों के मन में घृणा उत्पन्न करने वाली हों । भोंड़े दृश्यों, घृणित मनोरंजन, कुकृत्यों, बुरी आदतों के विरुद्ध बच्चों में घृणा उत्पन्न करने वाली हों । उन्हें बताओ कि यदि किसी ने उनसे दुर्व्यवहार किया है तो उसे भूल जावें और साथ ही उन भलाइयों को भी, जो वच्चे किसी के साथ करें । वे कुछ धनात्मक कार्य अपनी स्वेच्छा से ले लें तो निषेधात्मक दृष्टिकोण अपने आप छूट जावेगा । अच्छा स्वभाव, कुटेवों को दूर भगा देता है ।

एक दुष्ट व्यक्ति एक गुरू के पास आध्यात्मिक जीवन के लिये दीक्षा लेने के लिये गया । गुरू ने उससे तीन में से कम से कम एक बुराई त्यागने के लिये कहा, उसने झूठ बोलना छोड़ दिया । उस रात्रि को जब वह राजमहल में चोरी करने गया, उसे मंडेर पर एक और व्यक्ति दिखाई दिया, जिसने बताया कि वह भी चोर है । दोनों मिलकर राजकोष के अन्दर घुस गये वहाँ का धन और हीरे परस्पर बाँट लिये दूसरा व्यक्ति राजा ही चोर का अभिनय कर रहा था । उसे ज्ञात था कि कोषागार की चाबियाँ कहाँ रखी हैं, उसी ने चाबियाँ

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

लाकर कोषागार के अन्दर प्रवेश करने का कार्य सरल कर दिया था। बँटवारे के समय जो ईमानदार था, राजा के प्रति दयालुता के भाव से एक हीरा कोष में ही छोड़ना चाहता था क्योंकि राजा का तो सर्वस्व ही लुट गया था। उसने अपने साथी से एक हीरा छोड़ देने का प्रस्ताव किया था, वही तिजोरी में पड़ा रह गया। इसे दूसरा भी मान गया।

दूसरे दिन जब यह खबर फैली कि राजकोष में चोरी हो गयी तो राजा ने (जो रात्रि में स्वयं ही चोर बना था) मंत्री को हानि का ब्यौरा ज्ञात करने के लिये भेजा। मंत्री ने वहाँ एक हीरा पाया, जो उसके विचार से चोरों की निगाह से बच गया था। मंत्री ने उसे शीघ्रता से अपनी जेब में रख लिया और दरबार में आकर सूचना दी कि सभी हीरे चले गये।

पिछली रात उस ईमानदार चोर से राजा ने उसका पता पूछ लिया था जबकि वे परस्पर अलग हुये थे और अपने-अपने थैले ले जा रहे थे। इसलिये, उसने इस चोर को भी बुलवा लिया। जब वह दरबार में राजा के सन्मुख उपस्थित हुआ तो उसने स्वीकार किया कि एक हीरे को छोड़ कर शेष हीरे उसने एक अज्ञात चोर के साथ बाँट लिये थे। वह हीरा मंत्री की जेब से बरामद किया गया, और राजा ने मंत्री को झूठ बोलने के अपराध में निकाल दिया और उसके स्थान पर ईमानदार चोर को मंत्री नियुक्त किया। समयाभाव और सपम्न्नता के कारण उसकी शेष दोनों बुराइयाँ, जुआ खेलना और चोरी, भी छूट गयीं और गुरु भी उससे प्रसन्न हो गये क्योंकि अब उसका सुयश 'धर्मात्मा मंत्री' के रूप में दूर-दूर तक फैल गया था।

यदि एक बुरी लत पड़ जाती है, तो उससे धीरे-धीरे सारी बुराइयाँ आ जाती हैं और मनुष्य का मन विकृत हो जाता है। इसकी भी एक कहानी है। तुम बच्चों को इसे सुना सकते हो। एक बार राजा ने घोषणा की कि वह, बहुत बड़ा पुरष्कार उस ब्राह्मण को देगा जो तीन में से कोई एक बुरा काम करने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को सहमत हो जावे (१) वह घोषणा करे कि वेद असत्य हैं (२) वह शराब पी ले (३) वह किसी दूसरे की पत्नी को भगा ले जावे। दीर्घ काल तक सातों समुद्र के बीच के प्रदेश से एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं निकला जो इन तीन जघन्य कार्यों में से किसी एक को भी करने के लिये तैयार होता। अंत में एक निर्धन, भूखों मरता, ब्राह्मण राजा के दरबार में आया और शराब पीने को सहमत हो गया, इसी बुराई को उसने सबसे छोटी समझा था, परन्तु ज्यों ही वह नशे में हुआ, वह सुध-बुध खोकर नशे की उत्तेजना में गालियाँ बकने लगा। वह गालियों में चिल्ला चिल्ला कर कहने लगा कि वेद झूठों का पुलिन्दा है; वह अपने पड़ोसी के घर घुस गया और उसकी पत्नी पर आक्रमण कर दिया, मानों कि देश का सबसे निकृष्ट अपराधी वही हो। एक वस्तु से दूसरी पर स्वतः पहुंच गया। एक दूसरी कहानी में एक शुभ-कार्य से अपने आप अगले शुभ-कार्य तक पहुंच हो जाती है।

मैं जानता हूँ कि तुम लोग बच्चों को सभी नैतिकता सिखाने वाली कहानियाँ सुनाते हो इन कहानियों का प्रभाव अपने आप और चुपचाप ही होता रहता है। वे प्रकृति और जीवन में संयम और प्रेम का महत्व जान जाते हैं। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे उत्तरदायित्व और भी हैं, इसीलिये तुम जितनी सेवा बच्चों की करना चाहते हो समयाभाव से नहीं कर पाते हो। जो सुविधा तुम्हें है उसी की सीमा में रहते हुये अधिक से अधिक बच्चों को शिक्षित करो। समिति तुमसे इससे अधिक कुछ करने को नहीं कह सकती।

यह कोई ऊपर के अधिकारी द्वारा थोपा गया कार्य नहीं है। यह तो अन्तःकरण की प्रेरणा से किया जाने वाला कार्य है। तुम इतने अनेकों कार्य करते हो उनसे कोई सुफल नहीं निकलता। तुम्हें ऐसी टोलियों में भी जाना पड़ता है जो तुम्हें पसंद नहीं हैं। वर्तमान परिस्थितियों में यह अपरिहार्य हैं। इस लिये, इस पवित्र सेवा-कार्य से अपने को पवित्र बनालो। इससे तुम्हें जो पुण्य प्राप्त होगा वह तुम्हारी रक्षा करेगा। इन बच्चों को दिव्य ज्ञान से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

संयुक्त करके जो तुम इनका भविष्य निर्माण कर रहे हो उससे इनके माता-पिता की सहायता भी हो रही है, उनके मन भी सही दिशा में कार्य करने लगेंगे; इस प्रकार तुम इन शिष्यों के घर को भी स्वच्छ करके चमका रहे हो।

उस नन्हें बालक ने भाव-विभोर होकर गीता की कहानी को इतने सुन्दर ढंग से सुनाया कि सभी दर्शक द्रवित हो गये थे। अंत में उसने मेरी ओर मुड़कर कहा, "अब यह साई कृष्ण हमारे मध्य में है……" वह आनन्द से इतना अभिभूत होकर छलछलाई आंखों से सुबकने लगा। संभवतः उसे कृष्ण की झाँकी देखने को मिल गयी हो। उसकी निष्ठा और हार्दिकता इस सीमा तक बढ़ी हुयी थी। उसके मुख से निकलने वाले प्रत्येक भाव के अनुकूल ही उसका हृदय तरंगित हो रहा था। इसी लड़के की तरह के बच्चों की भारतवर्ष को इस समय आवश्यकता है। प्रह्लाद, ध्रुव तथा ईश्वर भक्ति वाले अन्य बच्चों के बारे में तुमने पढ़ा है, वे तो बीते हुये युगों के बच्चे थे। तुमने देख लिया कि ऐसे बच्चे अब भी यहाँ हैं इस युग में भी हैं। मुझे विश्वास है कि वे अनेक हिरण्यकश्यपों को अपनी दृढ़ निष्ठा, भक्ति और निर्मल स्फटिक समर्पण से सुधार देंगे, बदल देंगे।

कुरुक्षेत्र के युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन ने घोषणा की, "मैं इन लोगों से युद्ध नहीं करूँगा"। तब कृष्ण ने उनसे कहा, "मैं चाहता हूं वह तुम नहीं करोगे ?" और उनसे यही उत्तर बन पड़ा, "हाँ, वह तो करना ही होगा"। तब भगवान् ने उन्हें समझाया, "देखो, मैं यहाँ नराकार में धर्म स्थापना हेतु आया हूं। तुम्हारा क्षत्रिय धर्म है। अतः तुम्हारा कर्त्तव्य अधर्म के विरुद्ध युद्ध करना है। तुम मेरी इच्छानुसार ही करोगे। यदि क्षत्रिय धर्मानुकूल पूर्व योजना के अनुसार युद्ध करते हो"। जो वह (भगवान्) चाहे सो करो अपनी इच्छा से कुछ काम मत करो—भगवान् की कृपा प्राप्त करने का यही मार्ग है। वह चाहता है कि तुम सभी जीवों का सम्मान करो, किसी का अपमान या हानि न करो। जब तुम्हारे हृदय में किसी के प्रति लेशमात्र भी द्वेष न होवे तो वह (भगवान्) तुम्हें पसंद करता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जो बाल-विहार स्कूल के खाली घन्टों में या स्कूल के कार्यक्रम के उपरान्त चलाये जाते हैं वे घरों में चलाये जाने वाले बाल-विहारों के समान सफल नहीं हुये हैं। मैं जानता हूं कि स्कूल के बाल-विहार बच्चों को एक ही समय में दो घोड़ों की सवारी करने में सफल करना चाहते हैं—नियमित पाठ्यक्रम और सत्य साई के आदर्श। तुम भरसक प्रयत्न कर रहे हो, मैं जानता हूं, इतना ही पर्याप्त है आपस में घनिष्टता बढ़ाओ, परस्पर अनुभवों और सुधार की योजनाओं पर विचार-विमर्श करो। साई परिवार के सदस्यों की शान्ति परस्पर मेल जोल बढ़ाने और अनुभव करने का प्रयास करो। एक अध्यापिका दूसरी की बहिन तो होती ही है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७० कड़ी कड़ी करके

(धर्म क्षेत्र, बम्बई, ५-१-१९७१)

मुझे प्रसन्नता है कि बम्बई संगठन की सभी इकाइयों के पदाधिकारी यहाँ उपस्थित हैं और वे मुझसे साधना के सम्बन्ध में कुछ सुनना चाहते हैं। साधना का जीवन वह होता है जिसमें सभी कार्यों को भगवान् के प्रति अर्पण कर दिया जाता है, क्योंकि जो कुछ सोचता है, कहता है, करता है वह सब भगवान् के चरणों में अर्पण कर दिया जाता है। तुम यह तभी कर सकते हो जब कि तुम्हें सदा भगवान् की उपस्थिति का अनुभव होता रहे कि वह तुम्हारे अन्दर और बाहर चारों ओर है। तुम्हारी चेतना भगवान् से एक क्षण के लिये भी विचलित न होवे। मन उसी केन्द्र, भगवान्, के चारों ओर घूमता रहे। तुम्हारी एकाग्रता दृढ़ और स्थिर होनी चाहिये।

अभी तुम्हारी एकाग्रता चलते, बात करते, लिखते और साइकिल आगे चलाते समय बनी रहती है। परन्तु, तुम कहते हो कि जब भगवान् में एकाग्रता करने की बात उठती है तो असहाय हो जाते हो। इसे प्राप्त करने के लिये तुम्हें क्यों संघर्ष करना पड़ता है? कारण यह है कि तुम्हें भगवान् की कोई आकांक्षा नहीं है। उससे कोई मधुर संबंध या प्रेम भी नहीं है। परन्तु फिर भी प्रयत्न करके इसे जलाते रहो। निरन्तर प्रयास के फल स्वरूप संभव है कि तुम इसे प्राप्त कर लो। गीता कहती है 'श्रेयोहि ज्ञानं अभ्यासात्' समस्या का हल अभ्यास में है। उसी के द्वारा विजय प्राप्त हो सकती है। एकाग्रता तो ध्यान के द्वारा पुष्ट की जा सकती है और इससे मनुष्य अपने कर्मों की फलासक्ति का त्याग करने लगता है; क्योंकि उस दशा में कर्म व्यक्ति के न रह कर भगवान् के हो जाते हैं। तो फल भी व्यक्ति के नहीं रहते हैं;

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

वे भी भगवान् के होते हैं। जब तुम अपने कर्मों के फलों से विरक्त होते हो, परन्तु कर्म करने में लगे रहते हो और उन्हें भगवान् के अर्पण करते जाते हो, तो तुम्हें मन की शान्ति, प्रशान्ति प्राप्त होने लगती है। यदि तुम सांसारिक पदार्थों में आसक्ति की वृद्धि करते हो जैसे भूमि, मकान, बैंक में रक्षित धन और शक्ति का अधिकार; तो भगवान् के प्रति प्रेम में कमी होती जाती है और ध्यान भी असफल रहता है।

ईमानदारी से किया गया प्रयत्न और वास्तविक कर्म से तुम भगवान् की कृपा के अधिकारी होते हो। जब ईसा जेरुसलम के मंदिर की सीमा में घुसे उन्होंने देखा कि लोग फाख्ता, अन्य चिड़ियाँ और पशुओं को भगवान् के लिये बलिदान कर रहे थे, उन्होंने चिड़ियों को मुक्त करवा दिया और लोगों के रक्त रंजित कार्यों की निन्दा की। विद्वानों और पुजारियों ने ईसा के इस कार्य का विरोध किया और तर्क किया कि जिस भगवान् में उनका विश्वास है वह उन बलिदानों को स्वीकार करता है और इस कार्य से संतुष्ट होता है। उन्होंने ईसा से प्रमाण मांगा कि उसे क्या अधिकार है और वह धर्म के मामलों और परम्पराओं में क्यों हस्तक्षेप करता है। ईसा ने उन्हें एक कहानी सुनाई। एक किसान के दो बेटे थे। उसने प्रथम पुत्र से खेत पर जाने को कहा कि देखो क्या फसल कटने के लिये तैयार है। उसने इनकार कर दिया। इस पर उसने दूसरे से कहा, और वह तुरंत ही सहमत हो गया। परन्तु वास्तव में हुआ यह कि दूसरे ने सोचा कि इससे उसके सोने और आराम करने में कितनी बाधा पड़ेगी, उसे कितना जागना और रखवाली करनी पड़ेगी; वह भी नहीं गया। पहले पुत्र को बाद में आज्ञा न मानने का पश्चात्ताप हुआ, वह बाद में चला गया और फसल की रखवाली की। ईसा ने पूछा कि बताओ कि दोनों में से कौन पिता को प्रसन्नता देने में समर्थ हुआ—वह कि जिसने मुंह से शब्द उच्चारण किया अथवा वह कि जिसने उसकी आज्ञा को कार्य रूप में पालन किया? तुम तो शब्दों से आज्ञा मानते हो; परन्तु क्रिया करने में उल्लंघन करते हो। मेरा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कार्य प्रकट करता है कि मैं भगवान् की आज्ञा का पालन करता हूं। तुम स्वयं अपने कर्मों के साक्षी हो कि क्या तुम उस दिव्य पिता की आज्ञा का पालन करते हो ? मुझे तुमसे अधिक अधिकार है क्योंकि तुम्हारे कार्य से स्पष्ट है कि तुम उल्लंघन करते हो जब कि मेरा काम सिद्ध करता है कि मैं उसके आदेशों का पालन करता हूँ"।

तुम पदाधिकारी हो इसलिये यह तुम्हारा उत्तरदायित्व है कि मेरे द्वारा निर्धारित इन नियमों-निषेधों और संस्तुतियों को व्यावहारिक रूप देकर अपने जीवन में उतारो। मैं तुम्हें प्रदर्शन और दिखावटी पने के विरुद्ध चेतावनी देता हूं। संसार में अनेकों ऐसे हैं जो यह इच्छा करते हैं कि अन्य लोग प्रशंसा और सराहना करें; इसीलिये वे जप और ध्यान में बैठते हैं कि जहाँ उन्हें अनेक लोग देख सकें। उनका उदासीनतापूर्ण वह रवैय्या नहीं होता है कि "मुझे चिन्ता नहीं कि लोग क्या कहते हैं, कौन मुझे देखता है अथवा कौन नहीं देखता है" उनकी हार्दिक अभिलाषा रहती है कि लोग उन्हें देखें और उनकी आध्यात्मिक उपलब्धियों का प्रचार होवे। वे तो श्रोताओं और दर्शकों के लिये आतुर रहते हैं। परन्तु साधना तो एक अनुपम, सुनिश्चित कृत्य है जो लोगों की दृष्टि पड़ने से गँवारपन में बदल जाती है। मछली खुली दूकानों पर बिकती है, दिनदहाड़े खुले-मैदान, सड़क के किनारे बिकती है। हीरे दूकानों के अन्दर बिकते हैं जहां कि केवल वास्तविक ग्राहकों को ही प्रवेश मिल पाता है, उन्हें भूगर्भ गृहों में सुरक्षित सन्दूकों में बन्द रखा जाता है। साधना तो हीरे से भी अधिक मूल्यवान है। खुले में तो यह कुम्हला जाती है, धूमिल पड़ जाती है।

इसी कारण साधकगण पर्वत की निर्जन कन्दराओं में एकान्त वास करते थे, अथवा हिमालय प्रदेश के सूने मन्दिरों का आश्रय लेते थे, अथवा घने जंगलों में निकल जाते थे। परन्तु तुम्हें उनका अनुकरण करने की आवश्यकता नहीं है। तुम अपने घर में ही पर्याप्त एकान्त बना सकते हो। किसी कमरे में

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पर्दा डाल कर एकान्त बना लो। वहाँ तुम अपनी आत्मा के ध्यान में मग्न होकर उस चरम तत्त्व जगदात्मा का साक्षात्कार करने का प्रयत्न करो ! तुम्हें बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि पति-पत्नी में पूर्ण मतैक्य होना घरेलू शान्ति के लिये परमावश्यक है। जब उनमें झगड़े होते हैं तो घर नरक बन जाता है। मानवाकार में आत्मापति है और उसकी मनोवृत्तियाँ पत्नियाँ हैं। प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य व्यक्ति की मुक्ति के लिये सहायक होना चाहिये। यह तभी संभव है जबकि आत्मा का सार्वभौम अधिकार स्वीकार किया जावे। उस निर्गुण निराकार, निरपेक्ष ब्रह्म ने इच्छा (संकल्प) से विवाह किया तो 'मन' की उत्पति हुयी। मन ने दो विवाह किये एक आन्तरिक विवेचन और दूसरा वाह्य क्रिया कलाप से। पहली से ५ सन्तानें सत्य, धर्म, प्रेम, शान्ति और अहिंसा हुयीं, यही पंच पाण्डव हैं। मन दूसरी पत्नी पर बहुत लट्टू था। इसलिये उस दूसरी के १००, सन्ताने हुयीं, वे कौरवगण थे। इनमें से प्रत्येक 'यथा नाम तथा गुण' अपने नाम के अनुसार ही बुराई और दुष्टता के लिये हुये था। भगवान् पाण्डवों के पक्ष में रहे, इसी से उनकी विजय हुयी।

गीता में अर्जुन के चरित्र में तुम्हें लेशमात्र भय नहीं दिखाई पड़ता है। कृष्ण ने उसकी प्रशंसा की और स्वयं उसके रथवान बनकर सेवा की। क्योंकि वह धर्म का आकांक्षी था। कुरुक्षेत्र के युद्ध के विरोध में अर्जुन का सबसे प्रबल तर्क यही था कि युद्ध में लाखों की संख्या में नर संहार हो जाने से, समाज में लाखों विधवाओं की उपस्थिति से, बलात् ब्रह्मचर्य पालन करना कठिन होगा। फलस्वरूप नैतिक जीवन का अधःपतन होगा। भगवान् ने वेदों के कथनानुसार ब्राह्मणों को पठन-पाठन और मुक्तिमार्ग की शिक्षा देने को उत्पन्न किया है (ब्राह्मणो मुखमासीत्)। क्षत्रिय उस (भगवान्) के कंधे हैं (भुजायें हैं) उन्हें भद्र जीवन के लिये आवश्यक शान्ति बनाये रखने का कार्य दिया गया वैश्य, ऐसा कहा जाता है कि वे भगवान् का उदर हैं क्योंकि उन्हीं से समाज को शक्ति और पोषण प्राप्त होता है। शूद्र चरण हैं क्योंकि वे ही तो इधर-

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उधर जाकर भगवान् के सन्देश को घर-घर पहुंचाते हैं। यह सन्देश उपदेश और आचरण के द्वारा प्राप्त होता है। चारों जातियाँ धर्म की स्थिति को बनाये रखने के लिये हैं। इसलिये जब अर्जुन ने धर्म के आधार पर आपत्ति की तो भगवान् प्रसन्न हुये, उन्होंने हतोत्साह नायक के मन से भ्रम को निर्मूल करने का निश्चय किया।

ध्यान से ज्ञान विकसित होता है, जप से भक्ति; दोनों से तुम अपने हृदय को अहंभाव निकाल कर स्वच्छ और पवित्र बनाते हो। तुम प्रेम की शृंखला से अपने को भगवान् से संयुक्त कर सकते हो। एकान्त शान्त स्थान में भगवान् के किसी नाम का, उसके अर्थ और प्रभाव का स्मरण करते हुये, जाप करने से संयोग किया जा सकता है। प्रत्येक साई राम, हरे कृष्ण, हरे राम या विट्ठल एक कड़ी है; जितनी अधिक कड़ियां उतनी ही लम्बी शृंखला और उससे उतना ही दृढ़ बन्धन हो सकेगा। परन्तु प्रत्येक कड़ी अच्छी तरह उत्तम लौह से ढाली जावे। एक भी असत्य कड़ी, अर्थात् एक बार भी सुस्ती या बेमन से लिया हुआ नाम क्रोध, विरोध, ईर्ष्या, द्वेष से लिया हुआ नाम एक दुर्बल कड़ी होता है और शृंखला भी उतनी दृढ़ता से बन्धन नहीं करेगी।

सावधान किसी के धर्म (विश्वास) की खिल्ली मत उड़ाना। प्रत्येक हृदय से आनन्द के केन्द्र, अर्थात् भगवान् तक, एक सड़क जाती है। हर व्यक्ति अपना पूरा समय लेकर, अपनी गति से, अपनी अंतः प्रेरणा से उस मार्ग पर, जो भगवान् उसे सुझावे, चलकर अपने लक्ष्य को प्राप्त होगा। तुम अपने घर में ही पूजा का स्थान बनाकर अपनी रुचि के नामरूप के सहारे अपना अभ्यास कर सकते हो! परन्तु जहाँ तक इस संगठन को सदस्य के रूप में तुम्हारे कार्यों का सम्बन्ध है, तुम्हें पूर्ण हार्दिकता में उस प्रत्येक त्यौहार और उत्सव में भाग लेना चाहिये, जो तुम्हारी भक्ति, विश्वास और समर्पण भाव को पुष्ट करने वाला हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सभी के प्रति प्रेम भाव रखो । शान्ति की फसल को घमंड और ईर्ष्या की घास-पात से मत ढकने दो । भजन के पूरे सम्मान पर तुम्हीं मत अधिकार किये रहो, एक ही गीत को ८,१० मिनट तक गाते रहना और बार-बार वही पंक्ति दोहराने से तुम अधिक समय ले लेते हो । हर पंक्ति को केवल दो बार दोहराओ, अधिक नहीं । केवल दो गतियाँ हों, धीमी गति और तीव्र गति । इस प्रकार भजन के घंटे में तुम अधिक भजन, अधिक नामरूप, अधिक तर्जों के विविध भजन और अनेक लोगों को अवसर दे सकोगे । मैं तुमसे कहे देता हूँ कि यदि नारद और तुम्बरु जैसे स्वर्गीय संगीतकार भी जोड़े में लगातार गाते रहें तो इससे ऊब कर अनेक श्रोताओं को सिर दर्द की गोली खानी पड़ेगी । चाहे सुब्बु लक्ष्मी या अन्य कोई कलाकार ही क्यों न हो, जो इस क्षेत्र की रुचि से अवगत हों; परन्तु निरंतर एक-रूपता से सरदर्द का होना निश्चित है ।

यदि एक नामावली शिव की महिमा का वर्णन करने वाली गायी जावे तो उसके बाद कृष्ण पर होनी चाहिये, अगली राम पर हो और इसी प्रकार समझ लो । जिस व्यक्ति का इष्ट राम या शिव का रूप है वह अपने को उपेक्षित समझेगा यदि तुम प्रमाद से या भूल से ही एक नाम की महिमा गाते रहोगे । भजन का वातावरण प्रतियोगिता, दलबंदी और धर्मान्धता से दूषित न होने पावे । यही मेरा परामर्श है ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७१ खारा मीठा हो गया

(धर्म-क्षेत्र, बम्बई, ७-१-१९७१)

कैसी दुःखान्तकारी घटना है कि सत्य को शत्रु और असत्य को मनुष्य का मित्र मान कर व्यवहार किया जाता है। शराब मधुशाला में बिकती है उसे लेने के लिए लोग मीलों चल कर आते हैं; परन्तु दूध गली, गली और द्वारे-द्वारे मारा-मारा फिरता है, बेचने वाले गला फाड़-फाड़ कर आवाज़ लगाते फिरते हैं कि गली के निवासी उनसे दूध खरीद लें, इतने पर भी कभी-कभी उन्हें बिना बिका माल घर लौट के ले जाना पड़ता है। मानव ने वस्तुओं के मूल्य में कितना उलट-फेर करके रख दिया है।

इस वैकुण्ठ एकादशी के पवित्र दिन इसका स्मरण हो आता है कि इस प्रकार के त्यौहार इसीलिए निर्धारित किये गये हैं कि मनुष्य अपनी आध्यात्मिक उन्नति का मूल्यांकन करे और अगले कदम के लिए संकल्प करे जब तक लक्ष्य प्राप्ति न होवे, विश्राम न ले।

आज का दिन तिगुना शुभ है। यह तीन पवित्र धाराओं की त्रिवेणी है। वृहस्पतिवार तो साई भक्तों के लिए वैसे ही शुभ है; क्योंकि गुरुवार है, आज बारह घन्टे का अखण्ड भजन आयोजित किया गया था जो कुछ मिनट पूर्व समाप्त हुआ, है वैकुण्ठ का त्यौहार भी आज ही है जिसके लिए तुम सब यहाँ एकत्रित हुये हो।

वैकुण्ठ का अर्थ है कुण्ठा रहित अर्थात् जहाँ लेशमात्र शोक या कष्ट न हो। वह स्थान जहाँ पूर्ण शान्ति विराजती है, और वहाँ भय नाम को न हो।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

एकादशी का अर्थ है चान्द्र पक्ष का ११वाँ दिन । चन्द्र पक्ष की कलायें गिनी हुयी होती है; दशमी के बाद एकादशी की गणना की जाती है। परन्तु'एकादशी का वास्तविक अर्थ दूसरा ही है। पाँच कर्मेंद्रियाँ और ५ ज्ञानेन्द्रियाँ जब भगवदोन्मुखी हो जावें तभी ११वाँ मन भी भगवान् में लगता है, तभी वास्तविक अर्थों में एकादशी होती है । यह नमस्कार का भी अर्थवाचक शब्द है । तुम दोनों हाथ जोड़कर, अर्थात् दशो उंगलियाँ एकत्र कर, नमस्कार शब्द बोलते हो और पुनः हाथों को वक्षस्थल से जहाँ हृदय है, स्पर्श कराते हो । इसका अर्थ है कि नमस्कार करने वाला अपनी दसों इंद्रियों समेत उस व्यक्ति का, जिसे नमस्कार किया जाता है, हार्दिक रूप से वास्तव में सम्मान करता है । इस पवित्र श्रद्धा-पूर्ण क्रिया का विद्रूप आज भी अनेक क्षेत्रों में शुष्क नमस्कार के रूप में चलता ही है । लोग परम्पराओं में श्रद्धा तो रखते नहीं, फिर भी अनिच्छापूर्वक जब हथेलियों को एकत्र करते हैं तो लगता है मानों वे सूर्य की किरणों से आंख बचाते हैं अथवा उस व्यक्ति के, जिसका सम्मान करना है, मुंह के सामने ही हाथों को वेग से झकझोरते हैं ।

आज के दिन व्यक्ति को अपनी तामसिक और राजसिक निम्न प्रवृत्तियों से उठने वाले मनोविकारों से ऊपर उठने का प्रयत्न करना चाहिये । सात्विक प्रवृत्तियों के उत्कर्ष को प्रोत्साहित करना चाहिये । मानव सत्कार्य, सद्विचार और सद्वाणी का प्रयोग करते हैं; परन्तु वे अपने लक्ष्य का विचार करने का प्रयास नहीं करते है । मनुष्यों को २६ श्रेणियों पर अपना ध्यान देना पड़ता है । ५ कर्मेन्द्रियाँ, ५ ज्ञानेन्द्रियां, ५ प्राणवायु, ५ पंचभूतों की तन्मात्रायें (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द) ४ मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार की चौकड़ी और २५वां जीवात्मा और २६वाँ परमात्मा । इनमें २५वें को विचार करना है,, २४ एक और २६ वाँ दूसरी ओर रहता है । जब ज्ञान का आलोक पड़ता है तो वे २४ हो जाते हैं; क्योंकि प्रकाश में वे ठहर ही नहीं पाते, वे माया की संताति हैं । अज्ञान और अंधकार की संतान हैं ।

जब इन २४ पर विचार करते हैं, विश्लेषण करते हैं तो कुछ भी लाभ

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नहीं होता है। क्योंकि वे सापेक्ष सत्य हैं, निरपेक्ष सत्य नहीं। वे जगत अर्थात् निरंतर परिवर्तनशील, अस्थाई, असत्य और गतिमान हैं। वेद, शास्त्र, पुराणों में इनकी उत्पत्ति, विनाश का विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है कि उसमें कोई निश्चित एक सिद्धान्त हो। कारण है कि वे 'मैं' के उद्धार से अधिक सम्बन्धित हैं जो कि उन २४ के बन्धन में पड़ा है और साथ ही यह भी प्रमाणित करते हैं कि इनका कोई स्थाई महत्त्व नहीं है। अपने को जानो, 'आत्माने विद्धि' तुम दुनिया को जानते हो; वह तो 'मन' का विस्तार या फैलाव है। यही शिक्षा उनसे प्राप्त होती है।

तुमने ब्राह्माण्ड को नाप लिया, अब पिण्ड को नापो। तुमने बर्त्तनों, प्यालों, तश्तरियों, घड़ों के विषय में सब कुछ ज्ञात कर लिया अब मिट्टी के बारे में भी कुछ जानने का प्रयास करो। तुमने ऊपरी आरोपण-आकार के विषय में बहुत जान लिया है अब आधार के विषय में भी जानो। पानी के विषय में जानो। तुम जानते हो कि वर्षा, बादल, भाप, धार और नदी ये सब पानी के ही विभिन्न अपरूप हैं। चांदी की एक मात्रा से आज तश्तरी तो उसी से कल चम्मच, अगले दिन प्याले बनाये जा सकते हैं। आकारों को बदल कर नवीन नाम दे दिये जाते हैं, प्रत्येक का उपयोग भी दूसरे से भिन्न होता है, परन्तु प्रारंभ में जो चांदी की थकिया थी, अन्त में आकार समाप्ति के बाद वही थकिया फिर बन जाती है। हर एक के हाथ में उतनी ही चान्दी भिन्न भिन्न आकार धारण कर घूमती रही है। आधार सदा वही ही एक सत्य रहा है। अज्ञान के अंधेरे में यह नानात्व की प्रतीति होती है। क्योंकि तब तुम्हें पहचानना, विश्लेषण करना या विभिन्न श्रेणी देने का कार्य धारण किये हुये नाम रूप के आधार पर करना पड़ता है।

मानव व्यवहार का नियमन करने के लिये दो संहितायें हैं, एक नैतिकता से रहित और दूसरी नैतिकता से संबंधित। नैतिकता से रहित नियम यह है कि तुम्हें निश्चित समय पर हवाई अड्डे पर उपस्थित होना है, क्योंकि एक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

विशेष हवाई जहाज़ से यात्रा करनी है। जब एक पिता की संपत्ति दो पुत्रों में बांटनी होती है। आधा एक को, शेष आधा दूसरे को मिल जाता है। दोनों का भाग बराबर रहता है; आत्मा के आधार पर सभी व्यक्ति बराबर हैं।

जब व्यक्ति आत्म साक्षात्कार के मार्ग पर चल पड़ता है तो वह 'नेति' 'यह नहीं' कहता हुआ हर वस्तु को नकारता चला जाता है। तब कहीं यात्रा के अंत में केवल आत्मा ही रह जाती है तो उससे साक्षात्कार हो जाता है, इसकी कोई परिभाषा, वर्णन या पद की व्याख्या नहीं है। यह तो जिज्ञासा का अंत है, सभी प्रयत्नों की चरम सर्वोत्कृष्ट परिणति है; यह वह शान्ति है जो समस्त वाणी को उदरस्थ करके बैठ गयी है। ज्ञान का मौलिक बीज है "मैं शरीर नहीं हूँ"। इसमें तीन विचार हैं 'मैं' 'शरीर' 'नहीं'। मैं ही आत्मा है, वही एक केवल सत्य है। 'मैं' का विचार उसी जगदात्मा 'मैं' पर आरोपित अस्थाई ऊपरी आवरण 'मैं' है यह आरोपण कार्य अज्ञान के द्वारा भ्रमित मान्यता के कारण है। फिर दूसरा विचार शरीर (देह) का आता है।

देह वह है जिसका अंत में विनाश (दाह) होना है। यह ७ बालिश्त का पुतला जिसमें हड्डी, माँस, स्नायु, मस्तिष्क, इन्द्रियां, पांच प्राणवायु और मन निवास करते हैं। मन के द्वारा नाना प्रकार की कल्पनायें की जाती हैं, बुद्धि प्रत्येक समस्या का ऊहापोह करती है; कर्म करती है चित्त ही वैकल्पिक चुनी जाने वाली वस्तुओं में निर्णय करता है, और अहंकार बाहर और भीतर की ओर प्रधावित होता है; यह सब मनुष्य के उपकरण मात्र हैं। देह का अर्थ केवल यही नहीं। यह तो पंच महाभूतों (अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी और आकाश) का संमिश्रण भी है। विशृंखलन होने पर इसके तत्व पृथक् होकर अपने मूल पंच महातत्वों में लय हो जाते हैं। यह उन पांचों से निकट संबंध रखती है। इस प्रकार देह का आशय उन पंच महाभूतों के समस्त क्षेत्र अर्थात् देश। माया के नाना रूप गंध वाले पुष्पों का समूह, आदि संकल्प (एकोऽहं बहुस्यामि) जो इस जगदाकार में व्यक्त हुआ है—यह सब इन्हीं पाँच तत्वों की विविध

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रचना है, जिसे पहचानने के लिये, परिचित होने के लिये, मनुष्य को ५ ज्ञानेन्द्रियां दी गयी हैं । इसीलिये जैसा कि कहा गया है, "मैं देह नहीं हूं" अर्थात् यह घोषित किया जाता है कि प्रकृति, जगत, अथवा यह सब सृष्टि और व्यक्ति "मैं" या आत्मा नहीं है यह केवल आत्मा की अभिव्यक्तियां हैं ।

मानव अपना लक्ष्य तभी प्राप्त कर सकता है जब कि वह उसे कोई अपने से भिन्न और दूर मान कर उसकी प्रार्थना पूजा और आवाहन करे, यह सब क्रियायें केवल एक सीमा तक मन की निम्न प्रवृत्तियों की शुद्धि में सहायक होती हैं, ऐन्द्रिक इच्छायें आत्म-चिन्तन से स्वतः शान्त हो जाती हैं और व्यक्ति सत्य के मार्ग पर आगे बढ़ जाता है ।

उपदेशों, प्रवचनों को सुनने, परामर्श लेने, शास्त्रों का अध्ययन करने से या तपस्या करने से किसी को साक्षात्कार नहीं प्राप्त हो जाता है । नारद भी इसी समस्या से उद्विग्न होकर सनत्कुमार के पास पहुंचे और इन नाशवान् शरीर और अल्पबुद्धि के द्वारा ही असीम अनादि का दर्शन प्राप्त करना चाहा। मनुष्य उस असीम आनन्द के लहराते हुये महासागर की अवधारणा, जो कि निरपेक्ष के साक्षात्कार के साथ संयुक्त है, नहीं कर सकता है । वास्तविक अनुभव से जो ज्ञान प्राप्त होता है वह निर्मल वर्षा की एक बूंद के समान है जबकि शास्त्रों का पुस्तकी ज्ञान खारे महासागर के समान होता है, वह अपेय होता है । सूर्य की किरणों के प्रभाव से उस खारे जल का खारापन नीचे रह जाता है और शुद्ध जल ऊपर वाष्प के रूप में उठ कर बादल बन जाता है । पुनः वही जल नीचे बरसने पर मीठा और पोषक बन कर प्राप्त होता है । साधना जोकि भौतिक को दार्शनिक में परिवर्तित कर देती है, वही सौर शक्ति का प्रभाव है जो अपेय को पेय बना देती है ।

गंभीर निद्रा की प्रायः समाधि से तुलना की जाती है; क्योंकि उसमें इन्द्रियां, मन, तर्क सभी अदृश्य हो जाते हैं; अहंभाव ही शेष रहता है जो स्वयं

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अपने में ही निमज्जित रहता है। यद्यपि वह आनन्द में होता है, पर उसे इस आनन्द की चेतना नहीं रहती है। क्योंकि केवल जागृत अवस्था में ही यह ज्ञान हो पाता है। इसलिये, साक्षात्कार केवल इतना कर पाता है कि जागृत अवस्था की चेतना और प्रसुप्ति का आनन्द दोनों की एक ही समय में अनुभूति हो जाय। उसी बिन्दु पर ध्यान एकाग्र किया जावे जहां से दोनों की इकट्ठी अनुभूति होवे; वही विजय का क्षण होगा।

समाधि एक ऐसा शब्द है जो प्रायः ग़लत अर्थों में प्रयोग किया जाता है। सभी प्रकार के मनोविकारों का एकाएक विस्फोटन, अपस्मार या मृगी का दौरा, उन्माद, स्नायुदौर्बल्य, मूर्च्छा आदि को उन्नत नाम देकर समाधि कह दिया जाता है। शब्द की व्युत्पत्ति पर ध्यान दो। सम+धी इन दो से समाधि शब्द व्युत्पन्न होता है। इसके अर्थ हैं कि सभी अवस्थाओं को समान रूप से ग्रहण करने की बौद्धिक क्षमता। ऐसी बुद्धि जो शान्त, उद्वेग रहित, विवेकी सुख-दुख, जय-पराजय, शीत-उष्ण, हर्ष-विषाद आदि सभी अवसरों पर समान बनी रहे। जिस किसी ने वह स्थिति प्राप्त कर ली है, वह एकाकी अद्वितीय है उसे न भय होता है न प्रेम। घृणा या प्रेम का भी उस पर प्रभाव नहीं पड़ता है। जहां केवल एक मात्र है वहां संकल्प भी कैसे, किसका, क्यों उठे। यही समाधि है, आत्मा है, आनन्दानुभूति है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७२ तृषा और अन्वेषण

(धर्मक्षेत्र, बम्बई, ७-१-१९७१)

'न श्रेयो नियमम् विना' विना संयम नियम के कोई उन्नति नहीं होती है। संयम से शक्ति में वृद्धि होती है, नियमन् से इसका उत्तम सदुपयोग होता है। जिस प्रकार एक प्रशिक्षित स्वयं-सेवक सेवाकार्य के लिये, जहां भी अवसर मिले, उत्सुक रहता है; उसी भाव से तुम भी उन प्राचीनकालीन ऋषियों के शिष्यों की तरह तैयार रहते हो। प्राचीनकाल के ऋषिकुलों में छात्र गुरु के आश्रम में ही उनकी प्रेमपूर्ण देख-रेख में शिक्षा प्राप्त करते थे। आज कल तो इन ऋषिकुलों की 'ऋ' खो गयी है और उच्चारण की विकृति से शब्द अपभ्रंश होकर 'स्कूल' हो गया है। संकट काल में त्राण के लिये 'अनुशासन' का आश्रय लिया जाता है; जबकि संसार तुम्हारी ओर घृणा और विद्रूप की एक काली बाढ़ के सदृश बढ़ा चला आ रहा है, अथवा संकट इसलिये है कि जिन लोगों में तुमने विश्वास और भरोसा किया वे सम्पर्क से घृणा करते हैं और अलग निकल गये हैं। अनुशासन के विना मनुष्य का मन मतवाले हाथी की तरह गड्ढे में गिर गया है। तुम्हें इस गजेन्द्र-शिशु को पकड़ कर ऐसा प्रशिक्षित करना है जिससे शक्ति और चातुर्य मानव को लाभदायक हो और आस-पास के जीवन के लिए निरापद रहे।

जीवन के इस भाग में, जबकि तुम तरुण हो, तुम्हारी शक्ति, बुद्धि और मानसिक क्षमता अपने चरम विकास पर है, तुम्हें संकल्प करना चाहिये कि तुम सदा इसको सद्व्यवहार और सदुपयोग में ही लगाओ। न इनकी हानि करोगे और त प्रयोक्ता 'मैं' की कोई हानि होने पावेगी। अनुशासन का स्वागत किया जाना चाहिये, किसी बाहरी शक्ति के द्वारा इसे परिवर्तित नहीं किया

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाना चाहिये जैसे 'समिति' या तुम्हारे माता-पिता या मित्रगण। यह तो स्वयं स्वेच्छा से ग्रहण करना और सत्यता से पालन करना चाहिये।

तुमने यह जन्म इसलिये धारण किया है कि दयालुता की शूली पर ग्रहं को बलिदान कर दिया जावे। मानव सेवा का ग्रवसर जो तुम्हें मिल पावे उसे दैवी उपहार समझो। कृतज्ञता की भावना से सेवा करो; क्योंकि ईश्वर ही स्वयं तुम्हारी सेवा को प्राप्त कर रहा है। दूसरों की सेवा के लिये ग्रपने को तैयार करो। प्राथमिक सहायता कर सकने में ही 'इति श्री' नहीं होनी चाहिये। ग्रौर न केवल सड़क के नियम पालन, रक्त-दान की तकनीक, ध्वनि विस्तारक यंत्र को संचालन करने की कला, बिजली के तार, स्विच, फ्यूज आदि का ठीक करना इत्यादि भी तुम्हारी सेवा की अंतिम सीमायें नहीं हैं; जब तुम किसी सेवा कार्य में सक्रिय न होग्रो तो ग्रपना ध्यान जप, ध्यान, नामस्मरण में लगाकर ग्रपने को भगवत्तत्व से भरते रहो। जिससे कि तुम शुष्क ग्रौर कठोर न हो जाओ।

मन को सदा इनसे व्यस्त रखो; क्योंकि यदि यह भटक कर संसार की गलियों में चला गया तो यह बुराइयों से दूषित हो जावेगा। कष्ट में पड़े हुग्रों के प्रति जगने वाली सहानुभूति की छोटी ज्योति को कंजूसी, लोभ ग्रौर झक्कीपने के झोंकों से बचाये रखो। पर सेवा तो समाज के प्रति तुम्हारा कर्त्तव्य है इसीलिये कि उसी समाज ने तुम्हें इस स्थिति में ग्रा सकने की संस्कृति प्रदान की है, उसी संस्कृति की वायु में श्वास लेते हो, ग्रौर जिस अपनत्व की ऊष्मा को चाहते हो वह समाज ही दे पाता है, वह रक्षा भी जो तुम चाहते हो समाज से ही प्राप्त करते हो। मानव तो ग्रसहायावस्था में जन्म लेकर समाज की गोद में ग्राता है। समाज उसका नामकरण ग्रौर व्यक्तित्व का ग्राकार प्रदान करता है ग्रौर उसके विकास का ग्रवसर जुटाता है। उसके विश्वासों का कवच ग्रौर संयम ग्रौर विकल्पों का क्रीड़ा-क्षेत्र भी प्रदान करता है। केवल मानव ही एक ऐसा प्राणी है कि जो जानता है मृत्यु

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अवश्यंभावी है। और मृत्युंजयी होने या उससे कतराकर निकल जाने की चेष्टा करता है कि मृत्यु के विषदंत से बच जावे। मानव में ही अमृत प्राप्त करने की तृषा है। अमृत, अमरता प्रदान करता है। यही मनुष्य का विशेष कार्य है, विशेष अन्वेषण है कि वह सत्य जो मुक्तिदाता है, की तलाश करे।

सेवा के गहन महत्व को समझो, इससे तुम एक ऐसे आदर्श नेता बन सकोगे कि जिनकी आज संसार में नितान्त आवश्यकता है। तुम सहगामी बनकर अपने को पूर्ण करते हो, छीना झपटी करके अपने को रिक्त करते हो। ऐसा व्यवहार मत करो कि लोग तुमसे ऊब जावें। खुलकर मिलो, तुम्हारे नेत्रों से दूसरों को निरापद और निर्भय मिलन का आश्वासन प्राप्त ोता रहे। कान भी कामुकतापूर्ण, जिह्वा असत्य, मस्तिष्क गंदगी और हाथ ातक कार्यों से कलंकित न होवें। तुम्हारे नेत्र तुम्हारा भेद शीघ्र खोल देते । सब की ओर कामुकता और निन्दा से रहित दृष्टि डालो। सभी से सबके बारे में प्रेमपूर्ण वार्ता करो; भक्तिभाव से खिला हुआ दीप्तिमान तुम्हारा मुखड़ा होवे। तुम्हारे हाथ सदा देते ही रहें और जो तुम्हारा नहीं है उसे मत स्वीकार करो। संकटग्रस्त, रोगग्रस्त, वृद्ध, असहाय और बच्चे के साथ विशेष सम्मान और बुद्धिमत्तापूर्ण विचार से व्यवहार करो।

सरल जीवन यापन करो। आभिजात्य जीवन, विदेशी तड़क-भड़क वाली पोशाक और आचार-व्यवहारों को मत अपनाओ। जिन्हें तुम्हारी सहायता की अपेक्षा हो वे तुम्हारे प्रति श्रद्धा सम्मान के भाव से आकर्षित हों यदि तुम्हारी चाल-ढाल से दर्प और बातचीत गला बैठालकर बोली से शान बघारने वाली और कसम खाने की होगी तो लोग तुमसे दूर ही रहेंगे। अपने संकेतों, व्यवहार, प्रत्येक सनक पर तीखी दृष्टि स्वयं रखो। कसौटी यह कि क्या बाबा इसका समर्थन कर सकेंगे? इसी से अपना व्यवहार संशोधित कर लिया करो।

यह एक नवयुवक है जिसे मैं भला लड़का कहूंगा। जानते हो क्यों? कल

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जब मैं पंडाल में एकत्रित हजारों व्यक्तियों के मध्य विचरण कर रहा था वह खड़ा था—एक स्वयंसेवक के रूप में बाहरी झालर के पास था। मैंने अपनी नन्हीं उँगली उसकी ओर हिलाई। आज प्रातः जब मैं उधर गया तो उसी स्थान पर अपनी ड्युटी पर डटा हुआ था परन्तु उसने मेरे संकेत को समझकर तदनुकूल संशोधन कर लिया था। वह जानता है कि बाबा क्या पसन्द करते हैं और तत्काल उसने अपने में सुधार कर लिया था। मैं इस बात की सराहना करता हूं। वह तो एक साधारण सी बात थी, इससे कहीं अधिक आपत्तिजनक व्यवहार देखने में आते हैं, और तुम जानते हो कि मैं ऐसी बातों को उत्साहित नहीं करता हूं। ऐसे प्रत्येक कार्य से मुक्त हो जाओ। जब तुम मुझे अन्तर्यामी और घट-घट वासी मानते हो, तो यह बातें अवश्य दूर हो जावेंगी; तुम आत्मज्ञान, आत्मविश्वास, आत्मसंतोष और आत्मसाक्षात्कार के मार्ग पर चल पड़ोगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७३ आम की वन्दन-वार

(प्रशान्ति निलयम्, १४-१-१९७१)

जिन ऋषियों ने हिन्दू पत्रा की व्यवस्था की है, उन्होंने वर्ष भर में पवित्र त्यौहारों की मानसिक शक्ति के पोषण तथा भावात्मक पवित्रता को उत्पन्न करने के लिये व्यवस्था की है। मकरसंक्रान्ति उस दिन होती है जिस दिन सूर्य मकर-रेखा से दक्षिणाभिमुखी गति बदलकर उत्तराभिमुखी होना प्रारम्भ करता है। उस दिन मानव को उच्च उद्देश्य दैवत्व की प्राप्ति के लिये अपने कार्यों को भगवदार्पण करना चाहिये। जैसे स्वयं सूर्य उत्तरायण पथ ग्रहण करता है, मानव को भी उसी दिन से उत्तरायण पथ ग्रहण करना चाहिये। धनुष की संक्रान्ति वाले दिन सौर मास का अंत हो जाता है। धनुष का अर्थ केवल कमान ही नहीं होता है बल्कि गन्ना भी होता है जो प्रेम के देवता की कमान या धनुष होता है।

अब फसल घर में आ गयी है; जो फसल बख़ारी में संचित की गयी है, उसमें से हर परिवार भगवान् के लिये भोग तैयार करता है। बच्चों ने गन्ने चूसे हैं और अब आनन्द से कल्लोल कर रहे हैं। कृषकों के साथी सहायक और मानव के दास बनकर जिन पशुओं ने खेतों में कठोर श्रम किया है वे अब साये में विश्राम कर रहे हैं। आज उन्हें जुआ से छुट्टी मिली है उसका आनंद ले रहे हैं। भूमि भी पीले पुष्पों की साड़ी पहने है जिसमें जहां-तहां लाल मिर्चें हरी पत्तियों के बीच गुच्छों में लटक रही हैं, ऐसे लाल टप्पे सजे हुये हैं। प्रकृति भी प्रसन्न है कि अब सभी प्राणी कृतज्ञता से भगवदोन्मुख हो जावेंगे और उसकी लीला की विविधता पर गंभीर चिन्तन करेंगे। अब से छः माह आगे तक देवायन—तीर्थयात्रा का मौसम रहेगा। यह उत्तरायण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अर्थात् श्रेष्ठतर मार्ग है। गीता में कहा है कि जो उत्तरायण में शरीर त्याग करते हैं वे शान्ति और समृद्धि में मृत्यु को प्राप्त होते हैं, वे अधिक शुद्ध आध्यात्मिक उपलब्धियों वाले स्तरों में उठ जाते हैं। कुरुक्षेत्र के मैदान में यद्यपि भीष्म संघातक बाणों से मर्माहत थे, फिर भी वे इस दिन की प्रतीक्षा करते रहे थे कि उत्तरायण का शुभ काल आवे तो प्राण त्याग करें जिससे उनकी आत्मा जगदात्मा में लीन हो सके।

आज दान करने का दिन है, यह दिल-बहलाव या उड़ाने-खाने का भ्रष्ट दिन नहीं है। आज जुआ खेलना, दावतें उड़ाना और निम्न इन्द्रिय भोगों में लिप्त होना भूल होगी। आज छुट्टी या अवकाश का दिन नहीं बल्कि सही अर्थों में पवित्र दिन है। इस पवित्र दिन का संदेश है कि स्वस्थ कार्यों और विचारों में रत रहते हुये पूर्ण बनो। केवल एक लट्टू की तरह चक्कर काटते-काटते अंत में निष्क्रिय होकर तुम्हारा गिर जाना एक उदासी और विनाश-पूर्ण अस्तित्व का जीवन सिद्ध होगा। लट्टू को आत्मविश्वास नहीं होता, इसे तो कोई दूसरा हाथ ही सक्रिय करता और नचाता है। आत्मविश्वासी बनो, अर्थात् अपने में विश्वास रखो, क्योंकि वह आत्मा ही तो दैवत्व है; उसमें आत्मा की समस्त शक्ति और मधुरता है; वह भी तो परमात्मा रूपी महासागर की एक तरंग ही है।

देश में प्रसन्नता और शान्ति के लिये प्रशासकों ने कई पंचवर्षीय योजनायें चलाई हैं और अनेक पुल, बांध, निर्माणशालायें और स्कूलों का निर्माण हुआ है। परन्तु यह सब कार्य आत्मा की स्वच्छता, वैराग्य को शक्तिशाली बनाना, दयालुता और स्वजन भावना को प्रोत्साहन देने की उपेक्षा करके किये गये हैं। केवल आर्थिक उन्नति, घृणा, ईर्ष्या और दलबन्दी को बढ़ाती है। आत्म-विश्वास, आत्म-संयम और आत्मज्ञान, केवल इन्हीं बातों से मनुष्य शान्ति और आनन्द प्राप्त करता है। 'न श्रेयो नियमम् विना' बिना संयम के समृद्धि नहीं। अनुशासन के बिना उन्नति नहीं; यही ऋषियों की शिक्षा है। इन्हीं पवित्र

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

दिनों पर मनुष्य भूत, भविष्यत पर विचार करता है और सही मार्ग पर अपने जीवन को वर्तमान में नवीन स्फूर्ति प्रदान करता है।

पृथ्वी पर की इस तीर्थयात्रा में सृष्टा, पालनकर्ता, हर्ता और रूप-रेखाकार में विश्वास रखना ही तीर्थयात्रा की आवश्यक सामग्री है। यही पाथेय है। पाप का भय और भगवान् से प्रेम, इन्हीं दो से मानव को शान्ति और आनन्द मिलता है। यह मनुष्य को दुख से बचाते हैं और प्रसन्नता प्रदान करते हैं। सुषुप्ति में मनुष्य को देश, काल और सृष्टि का बोध नहीं रह जाता है। केवल 'मैं' जो सत्, चित् और आनन्द है वही रह जाता है। परन्तु सुषुप्ति में 'मैं' को निज का या आनन्द का बोध नहीं रहता है। केवल जगने के बाद ही मनुष्य कह पाता है कि 'आज बड़ी सुखद निद्रा सोया।' स्वप्नावस्था में मन सक्रिय रहता है, यद्यपि बुद्धि, इन्द्रियाँ सब सोये रहते हैं। स्वप्न क्षणमात्र में एक बंगला बनाकर खड़ा कर देता है, तुम इस पर अधिकार करके निवास करने लगते हो। तुम्हारा आनन्दपूर्वक जीवन भूकम्प आने तक चलता रहता है, जो उसी स्वप्न में ही आकर तुम्हारे सिर के ऊपर वस्तुओं को गिराने लगता है और तुम जीवन की सुरक्षा के लिये हड़बड़ा कर खड़े होते हो। बंगले की रचना (सृष्टि) निवास और विनाश की सम्पूर्ण कहानी केवल मन के संकल्प (विक्षेप) का प्रतिविम्ब मात्र थी। यह अहं के निवास की पीठिका है और मानसिक सामग्री से स्वप्न में अहं नाना प्रकार के खिलवाड़ करता है जबकि इन्द्रियां और बुद्धि अस्थाई तौर से निष्क्रिय रहते हैं। मन इच्छाओं, संकल्पों, विकल्पों, सन्देहों और संकोचों का एक पुलिन्दा होता है। जब इस अहं के आधार अर्थात् मन को आध्यात्मिक प्रयासों से, जिनका साहसपूर्ण उद्देश्य यही होता है, अदृश्य कर दिया जाता है तो नामरूप का यह सब लीलाभिनय अदृश्य में तिरोहित हो जाता है।

सूर्य जल को भाप बनाकर, ऊर्ध्वगामी बनाकर उसे बादल का नामरूप प्रदान करता है। वही वर्षा, धारा, नदी, बाढ़ के नाम बदलता हुआ पुनः सागर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

में मिल जाता है और अपने विविध पूर्व नामरूपों को जो देश, काल और कारण-कार्य सम्बंध से उत्पन्न हुये थे, खो देता है। तुममें से प्रत्येक सत्य है जिसे असत्य के कुहासे ने ढक रखा है। यही सत्य प्रत्येक को स्वयं के लिये अन्वेषण कर लेना है।

भूमिगत बीज अंकुरित होकर उगता है। उसमें शाखायें फूटती हैं और पत्तियाँ निकलती हैं, वह पुष्पों से सज जाता है जिनसे आकर्षित होकर ऊपर मधुमक्खियां आती हैं, फिर इनमें फल लगते हैं जो वृक्ष की सेवा करने वालों को मधुरता और पोषक शक्ति प्रदान करते हैं। इन फलों के अन्दर ही बीज होते हैं जो दूर-दूर पहुँच कर बिखर कर पुनः भूमि तक पहुंचते हैं और अंकुरण आदि क्रियायें उसी प्रकार दोहरायी जाती हैं। यही जन्म-मृत्यु, आवागमन की कहानी है। बीज जड़, निष्क्रिय नहीं होता है, वह तो चेतन, जीवित और सक्रिय होता है। सम्पूर्ण जगत ही दैवत्व से व्याप्त है, वह दैवत्व जो सत् चित् आनन्द है! सत् का रूप "बीज-पौधा-वृक्ष" है। चित् वह क्रियायें हैं जिनसे अंकुरण, वृद्धि अभिव्यक्ति और प्रस्फुटन होते हैं और आनन्द इसके पूर्णत्व तक पहुंचने में है। तुम भी तो सत्, चित्, आनन्द हो। अपने रुतबे को यह कह कर, रो-झींक कर म तघटाओ कि "मैं अभागा हूं", "मैं घृणित हूं", "मैं निराश हूँ।" नहीं तुम प्रसन्न हो; तुम गद्दीनशीन हो, तुम महान हो। वास्तव में तुम यह सब हो परन्तु तुम्हें इसका भान नहीं है क्योंकि माया से भ्रमित हो। माया तुम्हारी कुयें में पड़ी छाया के समान है। यदि तुम कुयें में न झाँको, तो वह वहां नहीं है। जब तुम कुयें में झाँकते हो तभी वह भी वहीं होती है।

आदि अज्ञान और आदि ज्ञान का तो जन्मतः एक दूसरे से संबंध है। दिन का प्रकाश तारागणों को अन्धकार में ठेल देता है, इसलिये हम उन्हें नहीं देख पाते हैं, यद्यपि वे हमारे सर के ऊपर ही होते हैं। रात्रि का अंधकार उन ज्योतिकणों को व्यक्त कर देता है जिन्हें हम तारे कहते हैं। स्पदंन, गति, प्रकाश, अंधकार—सभी एक दूसरे से सम्बद्ध हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नाम रूप की आराधना वेदान्त की शिक्षाओं के प्रतिकूल है; क्योंकि उस दशा में व्यक्ति को नाशवान्, अस्थायी और छिछले की उपेक्षा करने की शिक्षा ग्रहण करनी होती है। जब तक व्यक्ति अपने और अन्य सांसारिक पदार्थों और व्यक्तियों से तादात्म नहीं कर पाता और उन सबको अपने में नहीं देख पाता उसे शान्त, निर्विकल्प, स्थिर आत्मतत्व का दर्शन नहीं प्राप्त होता, त्यागने के "अमृतत्त्वम् आसुः" विचित्र अद्भुत् भौतिक जगत् की कल्पना त्याग दो, इसका सर्वथा त्याग करो जब कि तुम उस स्थिति तक न पहुंच जाओ जब कि "दाता-दान-देने" का पार्थक्य ही न रहे। जबकि स्थिति 'आद्यंत हीन' हो जावे। नारद ने ऋषि सनत्कुमार से शिक्षा ग्रहण की कि वह तभी शान्ति प्राप्त कर सकते हैं जब कि उन्हें यह ज्ञान हो जावे कि वह (भगवान्) ही शान्ति है और उसके अतिरिक्त कुछ नहीं है। अशान्ति कुछ ऐसी है जिसने उस पर अधिकार कर लिया है; एक अनर्गल भय की शान्ति कि जिसका कोई अस्तित्व नहीं है। इसे झिटक कर उतार फेंको। इस भावना का अभ्यास करो। वह मुक्त, स्वतंत्र है। दिया हुआ अभिनय दुखदायी है न कि अभिनेता व्यक्ति को बार बार सोचना चाहिये कि वह तो एक अभिनय कर रहा है, भले ही यह अभिनय एक दुखान्तकारी पात्र का हो। नारद ने इसे समझ लिया, पुनः उनकी शान्ति कभी भंग नहीं हुयी।

आज प्रत्येक घर झाड़ बुहार कर स्वच्छ किया जाता है, फर्श धो-पोंछकर चमकाये जाते हैं, दीवालें पोती जाती हैं, चित्रित की जाती हैं। स्त्रियाँ प्रत्येक घर के सामने मंगल चौक आटे से पूरती हैं। इसके बीच में गाय के गोबर का एक ढेर रख कर उस पर एक तोरई का पीला फूल खोंस दिया जाता है। गाय के गोबर का ढेर ही क्यों? यह गाय का प्रतीक है। गौ, जिसे गोपाल चराते और रक्षा करते हैं। गौ का अर्थ व्यक्तियाँ, आत्मायें, व्यष्टियाँ होता है। इसलिये गोपाल वह है जो आत्माओं को चराता है, उनकी रक्षा करता है और उन्हें शान्ति में चरने को उत्साहित करता है; और जब पृथ्वी पर सायंकाल होता है तो उन्हें हाँक कर वापस रक्षागृह में लाता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

व्यक्तिगत आत्मायें भी भगवान् की प्रेम-पूर्ण देख-रेख में रहती है। वे जानते हैं कि इन आत्माओं के लिये हितकर क्या है और विनाश से इनकी रक्षा करते हैं। इस प्रकार त्यौहार के छोटे से छोटे कार्य का कुछ अर्थ है, जिससे भाग लेने वाला उचित समय पर स्पंदित हो उठता है।

आज के दिन तुमसे खीर खाने का आग्रह किया जाता है। यह सात्विक भोजन है। इस से उच्च विचार, मृदुता और विनम्रता आती है। परन्तु, मुंह द्वारा खाये जाने के अतिरिक्त भी कुछ भोजन और होता है जिसे तुम नेत्रों से, कान से, नाक से, त्वचा से अपनी उत्तेजना की भूख मिटाने के लिये लेते रहते हो। इस भौतिक जगत की विविधता के आस्वादन की पिपासा यह सब भोजन ही तो है। इसका प्रत्येक कण और अणु सात्विक होना चाहिये। जिससे आत्म साक्षात्कार की दिशा में तुम्हारी प्रगति शीघ्र और फलदायिनी होवे।

तुम वास्तव में भाग्यशाली हो जो कानों से दैवत्व की महिमा के प्रवचन पान करते रहते हो। वेदान्त ही सर्वोत्तम और सबसे महान भोजन है जो मनुष्य प्राप्त करता है, इससे तुम्हारे उद्वेग पवित्र रहते हैं, तुम्हारा शरीर स्वस्थ और स्फूर्तिवान रहता है; तुम्हारे मनोविकार स्वच्छ और निर्मल रहते हैं, तुम्हारे विचार सरल और सच्चे होते हैं। दूध, शहद फलों और मेवाओं से भी अधिक लाभकारी भोजन सत्संग से प्राप्त होता है। इससे तुम सदा तरुण, ताजे, पूर्ण और स्वाधीन रहोगे। देश काल का क्षयकारी प्रभाव तुम पर नहीं पड़ेगा।

ये पवित्र दिन अनुशासन और संयम का स्मरण दिलाने के लिये होते हैं कि जिस संयम से तुम बहक कर पृथक् हो गये हो उसे पुनः अंगीकार कर लो। इस भयानक विश्व में से तुम्हें किसी प्रकार निकल कर मुक्ति और अपने पूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करना है। एक पूरे वेग से सीटी देकर जाती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हुयी रेलगाड़ी को, जिसे दानवाकार इंजिन खींचे जा रहा है, दस लाख हाथ भी उसे रोक नहीं सकते परन्तु एक बटन दबाने से वह रुक जाती है, चालक उसे रोककर खड़ी कर सकता है। उस प्रकार के एक बटन का तुम्हारे मन में लग जाना, जो कि इन्द्रियों के पीछे भागने वाले मन को रोक सके, यही तो साधना का उद्देश्य होता है कि उसे लगाया जावे और समयानुसार उससे काम लिया जावे।

तुम्हीं अपने भाग्य के निर्माता हो और तुम चाहो तो सतत् प्रयत्न से इसका पुनर्निर्माण अथवा पोषण कर सकते हो; अपने जीवन को तुम सदा उन्नत या अवनत बनाते रहते हो; यह ज्ञान सदा तुम्हेंम हान प्रेरणा देता रहेगा यदि तुम इसका सदुपयोग कर सको।

राम, लक्ष्मण और सीता के निर्वासन की जंगल में पहली रात्रि थी। गुह, जो कि मछली मारने वालों का मुखिया था और जिसने इन लोगों को नौका द्वारा गंगा पार पहुँचाया था, लक्ष्मण से धीरे-धीरे बात करने लगा। उस समय राम और सीता नदी की तलेटी के रेत पर सोये हुये थे। गुह को इससे बड़ा ही दुख था कि युवराज राम को रेत पर खुले आकाश के नीचे सोना पड़ा है। उसने रानी और उसकी दुष्टा दासी की बहुत निन्दा की कि उन्होंने यह हृदय विदारक काण्ड किया। परन्तु लक्ष्मण ने उसे इस निन्दात्मक वार्ता को समाप्त करने के लिये समझाया। "इस दुखदायी काण्ड के लिये उत्तरदायी लोगों के लिये मैं भी इसी प्रकार के तीखे शब्दों और निन्दात्मक उद्गारों को व्यक्त करता था। क्योंकि तब मैं राम के इतिहास के इस अध्याय का आन्तरिक उद्देश्य नहीं जानता था। वे तो इस नराकार में राक्षसों के कुल का नाश करने आये हैं, इसलिये स्वयं उन्हीं की इच्छा से यह बनवास दिया गया है, जिससे अपने उद्देश्य की पूर्ति तक शासन के उत्तरदायित्व से मुक्त रह सकें। प्यारे गुह, हम लोग भगवान् के रहस्यों को क्या जान सकते हैं, या ऐसे मनुष्य के रहस्य को जो भगवान् है, कैसे पता लगा सकते हैं?

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

या किसी भी प्राणी अथवा जड़ पदार्थ के ही रहस्य का पता कैसे लग सकता है, क्योंकि ये सब उस अज्ञेय भगवान् के ही ऐसे व्यक्त स्वरूप हैं जिनका बोध हमें इन्द्रियों के द्वारा होता है। इन इन्द्रियों की सीमित क्षमता से हम सीमित बोध या सीमित ज्ञान ही प्राप्त कर सकते हैं। उनका वास्तविक स्वरूप और स्वभाव हम इन अदक्ष ज्ञान यंत्रों से कैसे प्राप्त कर सकते हैं?"

बिना उपयुक्त कारण के संसार में कभी कोई घटना नहीं घट सकती है, ऊपर से वह चाहे जैसी अचानक या रहस्यपूर्ण भले ही प्रतीत होवे। प्रत्येक घटना की जड़ें गहराई तक गयी हुयी और अदृश्य होती हैं। यही बात मैं बम्बई में हिस्लॉप को धर्मक्षेत्र में बता रहा था। जलडमरूमध्य के ऊपर लंका पहुँचने के लिये सेतु का निर्माण इसलिये हो रहा था कि राम और उनकी सेना इस पुल से समुद्र पार कर राक्षसों के राजा रावण के क्षेत्र में, जहां सीता को रोक रखा गया था, प्रवेश कर सकें। महान बलशाली और साहसी वानर बड़े-बड़े पर्वत शिखरों को दूर दूर से उखाड़ कर, वायु में छलाँग लगाकर, उसे अपने कन्धों पर रखे हुये सेतु निर्माण के लिये लाते जा रहे थे। उन्होंने हिमालय से धुर दक्षिण समुद्र तक एक पंक्ति का निर्माण कर लिया था। जब कार्य पूरा हो गया तो सभी को एक साँकेतिक शब्द द्वारा और अधिक शिखरों को न लाने का आदेश भेज दिया गया। हर एक वानर ने अपने हाथ के पर्वत को जहाँ का तहीं रख दिया।

एक पहाड़ी को इससे संतोष नहीं हुआ। वह अपने दुर्भाग्य पर विलाप करने लगी। "जहां मैं थी वहाँ से मुझे क्यों हटाया गया और अब मुझे कार्य में प्रयोग भी क्यों नहीं किया गया? शोक है! मैं तो इससे बड़ी प्रसन्न थी कि दैवी कार्य के लिये मेरा सदुपयोग किया जा रहा है। मैं प्रसन्नता से फूली नहीं समाती थी कि रामादल और स्वयं राम मेरे ऊपर चरण रख कर पार जावेंगे। अब तो मैं कहीं की भी न रही।" उसने बहुत अधिक अश्रुपात किया। राम को भी यह समाचार सुनाया गया, उनकी दया तो महान होती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है । उन्होंने आश्वासन कहला भेजा कि अगले अवतार में उन्हें नराकार में आना है और अपना उद्देश्य पूरा करना है, तब वे निश्चय ही इस दुखी पहाड़ी को सौभाग्य प्रदान करेंगे । यह गोवर्धन शिखर था, जिसे राम ने (बालक कृष्ण के रूप में) अपनी उंगली पर ऊंचा उठाया और पूरे सात दिन तक गोकुल के ग्वालों को इसी के नीचे खड़ा करके इन्द्र की घनघोर वर्षा और बाढ़ से उनकी रक्षा की थी ।

जब हिस्लॉप ने मुझसे पूछा कि क्या निर्जीव वस्तुओं को भी मनोविकार और उद्वेग, निराशा और दुख होते हैं, तो मैंने यह कहानी सुनाई थी । धर्मक्षेत्र का अवसर था मैंने लगभग १०० साड़ियाँ अनन्तपुर में निर्माणाधीन सत्य साई विद्यालय की स्त्री कार्यकर्त्ताओं में वितरण के लिये मंगवाई । मैंने ९६ साड़ियों को चुन लिया और शेष ४ को दूकानदार को लौटा देने को कहा । उन चारों को अलग रखा और ९६ को मेरे कमरे में पहुंचा दिया गया । बाद को मैं हिस्लॉप के सामने उस मेज के पास से निकला जिस पर वे चार साड़ियां रखी थीं, यह देखा गया कि पट्टे के उस डिब्बे से जिसमें वे ४ साड़ियाँ थीं, आँसू टपक रहे हैं । साड़ियां रो रही थीं ! कि वे मेरा अनुमोदन पाने में विफल रही अतः अयोग्य समझकर लौटायी जा रही थीं । हाँ ! उन्होंने आंसू बहाये । तुम पूछ सकते हो कि यह कभी संभव हो सकता है । मैं कहता हूँ कि इस संसार में कोई ऐसा नहीं है जिसमें हृदय न हो; जो सुख-दुख अनुभव करने में असमर्थ हो । केवल तुम्हारे नेत्र हों जो देख सकें, और कान हों जो सुन सकें, और हृदय हो जो सहानुभूति दे सके ।

आज जब सूर्य पूर्व में उदय हुआ तो उसी समय पश्चिम में चन्द्रमा अस्त हो रहा था, इसलिये दोनों गोलों के एक ही समय दर्शन हुये । चन्द्रमा मन का प्रतीक और सूर्य बुद्धि का प्रतीक है । दोनों को मानव में संतुलित होना चाहिये । इसमें मन अथवा बुद्धि में चुनने का प्रश्न नहीं है । परन्तु भावों को बुद्धि के द्वारा संयमित रखना चाहिये । तब तुम भय, क्रोध, कल्पना या दिखावे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के झोंकों को दृढ़ता पूर्वक अडिग रह कर सह लोगे। जो कुछ प्राप्त होगा— लज्जा या सुयश, उसे स्वीकार कर सकोगे। हर आने वाली घटना का सदा "जो भगवान् की इच्छा" कह कर स्वागत किया करो, चाहे यह शुभ हो या अशुभ हो, चाहे इससे प्रशंसा मिले या निन्दा हो।

तुम द्वन्द्वात्मक भावों के झूले में स्थित हो, क्रोध-प्रसन्नता, घमंड और आत्म-निन्दा, आनन्द और शोक। आज मकर-संक्रान्ति के दिन भीष्म का स्मरण करना चाहिये। वे भीष्म शर-शय्या को गुलाब के पुष्पों की शय्या के समान सुखदायक मान कर लेटे रहे। उन्होंने इसे स्वेच्छा से वरण किया था, अतः उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ। अपने एक भक्त के प्रति अनुग्रह के कारण उसकी परिशेषिका की सूजन मैंने स्वेच्छया अपने ऊपर ले ली थी। डाक्टरों और अन्य सब लोगों का अनुमान था कि मुझे मर्मान्तिक पीड़ा का अनुभव होना चाहिये था, परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगा। भीष्म ने जो कुछ हुआ उसे 'प्रभु का प्रसाद' मान कर स्वीकार किया। यह आन्तरिक भगवान् की इच्छा थी, बाहर वाले भगवान् की इच्छा थी, उस बाहर वाले भगवान् की जिसे कभी कुछ हो ही नहीं सकता।

सूर्य आज से उत्तरायण होता है, यह श्रेष्ठतर मार्ग है। इसलिये सन्तति को भी पूर्वजों के चरण चिन्हों का अनुसरण करना चाहिये। उत्तर में हिमालय अपनी अचलता में पवित्रता, शीतलता और उज्ज्वलता में स्वागत करता है। जब भी मन इन चारों का आकांक्षी होकर इन्हें प्राप्त करना चाहता है तो वह सदा उत्तराभिमुख होकर हिमालय की ओर जाता है, जिसे देवताओं का निवास बताया गया है। बुद्धि के प्रकाश के सूर्य का अनुसरण करने का यही समय होता है।

आज संकल्प करो और घटघट वासी भगवान् की ओर पहला पग बढ़ाओ। यही कारण है कि आज लोगों ने आम की वन्दनवार अपने अपने द्वार के सामने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बाँध रखी है; वे अपने घरों में आज देवताओं का स्वागत करते हैं । परन्तु तुम्हारा घर तो तुम्हारा हृदय है । यह सीमेंट, लोहे, ईंट से बना अम्बार घर नहीं है कि जिसमें तुम्हारा शरीर निवास करता है । अपने हृदय के द्वार पर हरी वंदनवार लटकाओ । वहीं उस दैवत्व का स्वागत करो, उसकी पूजा सच्चाई से, अपने कर्म, वचन और विचार के पुष्पों से करो ।

तुम संक्रान्ति को एक भोज का आयोजन करके मनाते हो । इस भोज में एक व्यजंन हरे चने, चावल और गुड़ का होता है । चना भगवान् विष्णु, चावल लक्ष्मी (समृद्धि और सम्पन्नता) और गुड़ दैवी प्रेम का प्रतीक है । इसलिये यह व्यंजन ही त्यौहार का प्रमुख अंग नहीं, चन्चल मन में भगवान् की मूर्ति स्थापित कर त्यौहार मनाओ और मन को शान्ति प्रदान करो ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७४ प्रेम करो, सेवा करो

(अनन्तपुर, १८-१-१९७१)

इस देश के राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षिक, नैतिक और भौतिक क्षेत्रों में कल्याणकार्यों के उद्देश्य से अनेक संस्थायें स्थापित की गयी हैं। इनमें से कइयों के धार्मिक और सामाजिक संबंध होते हैं। परन्तु जब तक इनके कार्यों के अंतस्तल में आध्यात्मिक उत्साह की धारा प्रवाहित नहीं होती है, जो कि भगवान् के प्रति प्रेम से ही उत्पन्न होती है, इन संस्थाओं के कार्य अंधेरे में टटोलने के समान अथवा ज्योतिहीन दीपक को हाथ में लेकर चलने के समान होंगे। प्रेम और प्रकाश, दोनों ही मनुष्य के लिये सहायक और आवश्यक होते हैं। बिना इनके आध्यात्मिक सगेपन के संबंधों की अनुभूति नहीं हो पाती।

मुझे ज्ञात हुआ है कि रोटरी क्लब के उद्देश्य परोपकार मुख्यतः निर्धनता के कष्टों को दूर करना, बीमारी में आराम पहुंचाना और शिक्षा प्रसार हैं। मैं अनेक रोटरी क्लबों और लायन्स क्लबों में भारत तथा उसके बाहर पूर्वी अफ्रीका में भी गया हूँ। मैंने पाया कि इसके सदस्यों में मुख्यतः साहसी उद्योगपति, विशेषज्ञ, धनी पुरुष, उच्च शिक्षा प्राप्त विभिन्न व्यवसायों, जैसे विधि, औषधि, इंजीनियरिंग, व्यापार, निर्माण विभाग, के व्यक्ति हैं।

मैं देखता हूँ कि तुम लोग पारस्परिक मित्रता को पक्का करने पर विशेष ध्यान देते हो, उतना ध्यान अपने प्रेम के क्षेत्र का बाह्य विस्तार करने, भूखों के प्रति, नहीं देते हो। तुम शानदार भोज, पार्टियों, सैर करने पर प्रचुर धन व्यय करते हो। ऐसे अवसरों पर सदस्यों को बहुमूल्य भोज्य सामग्री प्रायः सामाजिक औपचारिकता के नाते परोसी जाती है; संभवतः

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उसका संबंध सदस्यों की भूख मिटाने से कम ही होता है। यह तो कोरा प्रदर्शन और दिखावा है। इसके स्थान पर मेरा आग्रह तो यह होगा कि तुम लोग कुछ भूखों को भोजन दो और स्वादिष्ट व्यंजन परोसो जैसे कि उन्हें अपने जीवन में कम ही प्राप्त हुये हों जब उन्हें भर पेट भोजन परोसा गया हो, स्वादिष्ट की तो बात ही क्या है। प्राय: लोगों के सोचने का ढंग कुछ ऐसा होता है, कि इस सबसे मुझे क्या लाभ होगा, इसकी सदस्यता से मुझे क्या लाभ होगा, इससे मेरी सामाजिक स्थिति, व्यवसाय और सम्पर्कों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस विचारधारा को ठीक उल्टे चक्र में घुमा देना होगा। अब समस्या यह होगी, मैं अपने समाज के लिये कितना कुछ कर सकता हूँ, इस सदस्यता के माध्यम से मैं अपने साथी अन्य मानवों को क्या कुछ दे पाता हूं? इसके आदर्शों की पूर्ति के लिये मैं क्या कर सकता हूं?

सभी लेने को तो व्यग्र हैं पर देने को कोई उत्सुक नहीं। कारण वास्तविक प्रेम का अभाव है, वह प्रेम जो जाति, धर्म, वर्ण तथा मानव निर्मित अन्य घिरौंदों से ऊपर उठ कर सार्वभौम, सार्वजनीन स्तर पर पहुंच चुका हो। अपने हृदय को प्रेम से अप्लावित करलो और सभी को उसका वितरण करो। प्रेम की प्रत्येक भेंट से प्रेम बढ़ता जाता है। वह हृदय जो प्रेम का दान करता रहता है सदा पूर्ण रहता है। वहाँ प्रेम के रूप में भगवान् ही उपस्थित रहता है, और तुम उसी (भगवान्) से ही तो प्रेम की भेंट लेते रहते हो जबकि दूसरों को यह भेंट देते हो। भगवान् तो सदा पूर्ण रहने वाले हैं ही। इसीलिये वह भंडार कभी रिक्त नहीं होता।

आत्म विस्तार ही प्रेम है, जीवन है। सीमित और संकुचित होना ही मृत्यु है, घृणित है। सभी के कल्याण के लिये, सभी की समृद्धि के लिये, प्रार्थना करो। एक व्यक्ति, एक संस्था या एक राष्ट्र के लिये प्रार्थना को मत सीमित करो। अधिकार लिप्सा, यदि एक व्यक्ति को घर दबोचती है तो वह विकृत

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

होकर सनक बन जाती है उसके पीछे ही महान् अव्यवस्था और संकट आते हैं। स्वामी नहीं, सेवक बनो। कोई व्यक्ति किसी अन्य दूसरे व्यक्ति को अपनी व्यक्तिगत सेवा जैसे अपमानजनक कार्य में लगा कर कैसे आनन्द का अनुभव कर पाता है — इसको मैं बिलकुल नहीं समझ पाता हूं। इस दुखदायी परि-स्थिति से जहां तक संभव हो बचो।

इस देश के लोग निर्धनता, बीमारी, उचित शिक्षा के अभाव से पीड़ित हैं। इस प्रकार के क्लब भोजन और दवाइयाँ देकर बुद्धिमत्तापूर्ण सहायता प्रदान कर सकते हैं। मुझे बताया गया है कि जिन गावों में पेय जल की अपर्याप्त व्यवस्था है वहाँ कुयें भी खुदवाये जाते हैं। ऐसे स्थानों पर जहाँ प्रशासन भी यही सहायता कर रहा है, सहायता का दोहरा कार्य करने की अपेक्षा, मैं यह परामर्श देना चाहूंगा कि तुम ऐसे क्षेत्रों को खोज कर ऐसी सहायता दो जो प्रशासन के द्वारा न दी जा रही हो। वहाँ पर तुम्हारी सेवा कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार की जावेगी।

भारत भिक्षा पात्र लेकर अन्य राष्ट्रों के द्वार पर जीवन की सबसे महत्त्व-पूर्ण दैनिक आवश्यकता 'भोजन' के लिये उपस्थित है। यह इस कारण है कि इस समय किसान का ध्यान भोज्य फसलों की अपेक्षा, नकद पैसा दिलाने वाली फसलों की ओर अधिक है। इस प्रकार भिक्षा पर एक राष्ट्र कब तक निर्भर करेगा ? इस राष्ट्र की भोजन सूची एक और भी है जिसकी दीर्घकाल से पैसा देने वाली फसलों के लिये दौड़ के कारण उपेक्षा की जा रही है। उनमें से उपनिषद्, गीता, भागवत हैं। उनकी उपेक्षा की गयी है, मनुष्य उनकी खेती नहीं कर रहा है और शान्ति, आनन्द देने वाली फसल न काट कर अंतः करण की बरबादी भर रहा है।

वेद, शास्त्र भारत माता के दो नेत्र हैं। दीर्घकालीन उपेक्षा के कारण यह दोनों नेत्र लगभग गये जैसे हो रहे हैं। वे अब अमेरिकन, रूसी या चीनी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

नेत्रों से देखने का संघर्ष कर रही है। अपनी आँखों से, आत्मा के नेत्रों से, देखो, क्योंकि आत्मा जानती है कि तुम्हारा सर्वाधिक कल्याण किस में है।

क्लबों और इस प्रकार की अन्य संस्थाओं में सभापति या अध्यक्ष ही हृदय होता है अन्य सदस्यगण मिल कर शरीर बनते हैं। हृदय को उत्साह से भरना चाहिये जिसे शेष शरीर लाभदायक कार्य रूप में परिणत करे। इसमें पूर्ण निष्ठा और हार्दिक सहयोग का वातावरण होना चाहिये। डाक्टर सदस्य गंदी बस्तियों के क्षेत्र में प्रति सप्ताह एक बार अवश्य जावें, वे एक परामर्श देने वाले केन्द्र पर प्रति सप्ताह निश्चित समय पर उपस्थित रहा करें। समय के पाबंद, मृदु, विनम्र और नियमित बनो। यदि तुम प्रसन्न मुद्रा से संभाषण करोगे तो गोली का प्रभाव अधिक होगा। वकील लोग, अदालती प्रपत्रों को दक्षतापूर्ण ढंग से लिखकर उनकी सहायता कर सकते हैं — ऐसे अभिलेख नियमानुकूल और सत्य पर आधारित होवें। आजकल की बहुत कुछ मुकदमे-बाजी असत्य और त्रुटिपूर्ण लेखों के कारण होती है। वे ग्रामीणों और निर्धनों को यह भी बता सकते हैं कि कौन कौन सी सरकारी समितियाँ या एजेन्सियाँ किस प्रकार उनकी सहायता कर सकती हैं। वे उन्हें वह सहायता प्राप्त करने में सहायक बन सकते हैं। प्रस्तुत सहायता के अज्ञान के कारण ही बहुत सी धनराशि प्रतिवर्ष अप्रयुक्त (लैप्स) रह जाती है। और इस प्रकार अनेक सद्‌विचार वाष्प बन कर अदृश्य हो कर शून्य में विलीन हो जाते हैं।

वस्त्र का टिकाऊपन (शक्ति) इसीलिये है कि पतले पतले अनेक सूत्र व्यवस्थित होकर परस्पर, अनुशासन पूर्ण ढंग से, संकल्प से, एक वस्तु—कपड़े—के रूप में परिणत हो गये हैं। एक अकेला सूत्र तो चींटी के खिचाव को भी न सह पावे, परन्तु अनेक संगठित होकर जब रस्सी बन जाते हैं तो वे एक हाथी को भी बाँधे रख सकने में समर्थ होते हैं। अनुशासन हीनता, दलबंदी, फूट का अभिशाप आज भारत की सभी संस्थाओं में प्रवेश कर गया है। प्रत्येक अपने स्वार्थ की उन्नति के लिये षड्यन्त्र रचता रहता है, चाहे उसमें उस

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उत्कर्ष की पात्रता उत्पन्न हो चुकी हो अथवा नहीं । तथा कथित बड़े और ख्याति प्राप्त लोगों को आमंत्रित कर उनसे मीठी वातें, और उनके अपने विचार और पक्षपातपूर्ण सुझावों की अपेक्षा विद्वान और अनुभवी लोगों से आध्यात्मिक प्रवचन सुनना कहीं अधिक श्रेयष्कर होगा । वे तुम्हें मानसिक शान्ति प्राप्त करने का रहस्य, जीवन में संतुलन प्राप्त करने का ढंग और शुद्ध आनंद उपभोग करने के साधनों की शिक्षा दे सकते हैं । लक्ष्य तक पहुंचने की, जीवन की दौड़ में अनेक विघ्न बाधायें रोड़े बन कर मार्ग अवरुद्ध करती हैं, उनका सफलतापूर्वक सामना करने की चतुरता और शक्ति का वे तुम्हें उपदेश देंगे । मैं तुम्हें परामर्श और आदेश देता हूं कि तुम सदस्यों को साहित्यक भोजन अपनाने और मादक पेयों के वहिष्कार के लिये प्रोत्साहित करो । ये तो मानव के उच्च आदर्शों को पतनोन्मुख बनाते हैं । मनुष्य को मादक पेयों के प्रभाव में दुर्गति में पड़े देखना कितना दयनीय होता है । कोमल मस्तिष्क को ऐसे मार्गों पर न जाने दो जिससे भौतिक और नैतिक दुर्घटना होने की आशंका होवे । दूध पियो, फल खाओ, मेवे खाओ, दही की लस्सी पियो । इनसे रचनात्मक सद्‌गुणी और आध्यात्मिक विचार उत्पन्न होते हैं ।

मैं परामर्श देता हूं कि तुम नन्हें शिशुओं और बच्चों के लिये बाल-विहार और सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना और संचालन करो । उन्हें इस देश की संस्कृति का ज्ञान कराओ और तद्‌नुकूल जीवन बिताने का उत्साह जागृत करो । आजकल विद्यालय इस प्रकार के कार्यों को नहीं करना चाहते हैं । इस लिये बच्चे शुष्क (संस्कृति विहीन) और जड़ों से रहित उपज के समान तरुणों में विकसित हो रहे हैं । वे जैक और जिल की तुकबंदियाँ गुनगुनाते रहते हैं । उन्हें राम और सीता संबंधी कोई श्लोक या पद्य याद नहीं होता है न उसमें उनकी रुचि होती है । वे रॉबिन और वनकौआ तो जानते हैं परन्तु मयूर और काक से अपरिचित होते हैं । आजकल बच्चे ब्रेक रहित मोटर कार (रोकने के यंत्र से रहित गाड़ी) की तरह इधर-उधर स्वच्छन्द घूमते फिरते हैं । लड़के और लड़कियाँ बड़ों के अनुशासन के प्रति द्रोह की भावना लिये हुये बढ़

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रहे हैं, उनमें आक्रोश की भावना भी पनप रही होती है। सेवा के द्वारा जो आनंद प्राप्त होता है उसका क्रियात्मक रूप से प्रदर्शन कर उन्हें स्वयं अनुभव कराओ। उन्हें सामयिक सेवा की विधि सीखने दो, और उन्हें सेवा के साथ शीघ्रता से सेवा के स्थानों पर पहुंचने की शिक्षा भी दो; जहाँ कहीं भी इसकी आवश्यकता हो पहुँचें। बाढ़, आग, अकाल और उत्सवों का आयोजन, जहाँ भी वृद्ध और बीमार विशेष देखरेख और सुविधा पाने की इच्छा करें वहाँ उपयुक्त सहायता, सेवा करो। तरुणों पर इन कार्यों के प्रशिक्षण में किया गया व्यय धन का सदुपयोग ही होता है।

यह मत समझना कि मैं कोई बाहरी व्यक्ति हूं जो इस प्रकार उपदेश और शिक्षायें लुटाने का व्यवसाय किये हुये हूं। मेरे तो सभी हैं। जो सेवा करते हैं और जो सेवा प्राप्त करते हैं दोनों ही मेरे हैं। मैं सभी का हूँ। नाना रूप-रंग और भिन्न-भिन्न सुगंधियों के पुष्पों के रूप में यहाँ एकत्र हो कर तुम एक माला के रूप में गुंथकर भगवान् की पूजा में अर्पित होने को कटिबद्ध हो। इस महान् उद्देश्य की पूर्ति करो। आज मेरा तुम लोगों को यही आशीर्वाद है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७५ भोजन के विविध रूप

(हैदराबाद, २८-१-१९७१)

मनुष्य का मन एक ऐसा अवयव नहीं होता है जिसका भौतिक आकार प्रकार हो; इसे न तो छुआ जा सकता है और डाक्टर इस पर शल्य क्रिया भी नहीं कर सकता है। यह तो संकोचों, संकल्पों, इच्छाओं और लालसाओं, विकल्पों का एक ऐसा पुलिन्दा होता है जिसे हम हाथ नहीं लगा सकते। यह जागतिक पदार्थों और संवेदनों के प्रति जो हमारी इच्छायें होती हैं उन्हीं के ताने बाने से बना हुआ है। यह बड़ी शीघ्रता से बाह्य सुखों से आकर्षित हो कर उनके पीछे भागता है और उसी के तद्रूप हो जाता है। आन्तरिक संतोष और आन्तरिक आनंद की खोज में लगाकर इसे सांसारिक पदार्थों के पीछे भागने से लौटाल कर अन्तर्मुखी बना सकते हैं। इसीलिये तो मन को बन्धन और मोक्ष दोनों का यन्त्र बतलाया गया है। यदि इन्द्रियाँ इसे वहिर्मुखी बनाकर बाहर भटकाती हैं तो यह बंधन का कारण बनता है। बुद्धि जब मन को अपने अधीन कर इसे अन्तर्मुखी करती है तो यह मोक्ष दिलाने का साधन हो जाता है।

मनुष्य जैसा भोजन करता है वैसा ही मन का निर्माण होता है। जिस भोजन को मनुष्य खाता है उसी के सूक्ष्म प्रभाव से यह विशेष प्रकार का बन जाता है। भोजन से इच्छाओं की दिशा का निर्देशन होता है उसी दिशा में मन भी भागता है। इसीलिये गीता तथा अन्य धर्मशास्त्रों में भी उच्च, आध्यात्मिक, गति चाहने वालों के लिये सात्विक भोजन की संस्तुति की गयी है। मन का अर्थ इच्छा, संकल्प या अभीष्ट वस्तु होता है। जब उस निराकार ने साकार होना चाहा तो सृष्टि की रचना हो गयी; अतः मन एक सृजनात्मक सिद्धान्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है, माया है जिसने प्रथम इच्छा की 'एकोऽहं बहुस्यामि' बहुत हो जाऊँ। अब जब इसे राजसिक भोजन, इच्छा और मनोभाव, सक्रियता, साहसिकता प्राप्त होते हैं तो यह द्रुतगति से संसार की ओर प्रधावित होता है और इच्छा में डुबकी लगाता है। यह मानव को गहरे दलदल में फँसा देता है। जब मन को तामसिक भोजन पर रखा जाता है तो इसमें निष्क्रियता आती है। तर्कना शक्ति क्षीण होती है, सुस्ती आती है और मन उदासीन, जड़, और मानव की उन्नति के लिये अनुपयोगी हो जाता है।

कुछ लोगों के अनुसार दुग्ध और फलाहार ही सात्विक भोजन होता है। परन्तु सात्विक भोजन में कुछ और भी होता है, हो सकता है कि उसमें फल और दूध न भी हो। मुख से जो भोजन ऊष्मा शक्ति के लिये खाया जाता है वह मनुष्य के खाद्य का एक लघु अंश मात्र होता है। इन्द्रियों के द्वारा भी जो भोजन हम ग्रहण करते हैं उससे भी शरीर का, व्यक्तित्व का निर्माण होता है। शब्द और ध्वनियाँ सुनी जाती हैं, दृश्य देखे जाते हैं, अनेक वस्तुओं का स्पर्श प्राप्त होता है, वायु श्वांस द्वारा अपने वातावरण के साथ शरीर के अन्दर जाती है, बाह्य वातावरण ध्यानाकर्षित करता है, प्रशंसा की अपेक्षा करता है; अंगीकार होना चाहता है—यह सब ही तो भोजन है। इन सबका मनुष्य के चरित्र और भविष्य पर गंभीर प्रभाव पड़ता है।

भोजन की गुणवत्ता उन स्पंदनों से निर्धारित होती है जो इन पदार्थों के साथ संयुक्त होते हैं। यह स्पंदन भोजन को तैयार करने, स्पर्श करने और परोसने वाले व्यक्ति के विचारों से प्रभावित होते हैं। गीता का १७वाँ अध्याय इन तीनों प्रकार के भोजनों की स्पष्ट और विशद व्याख्या करता है; मनुष्य जैसा भोजन करता है उसी के अनुसार उसके प्रेम, सद्गुण, शक्ति, प्रसन्नता, हार्दिकता की वृद्धि होती हो तो वह भोजन सात्विक होता है; जो भोजन उत्तेजना पैदा करता है, मदमस्त करता है, क्षुधा, पिपासा में वृद्धि करता है वह राजसिक होता है; जो भोजन निरुत्साहित करता है, ध्वंस

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करता है, बीमारी उत्पन्न करता है; वह तामसिक होता है। जिनके साथ बैठ कर भोजन किया जाता है, जिस स्थान पर, ग्रासन पर ग्रौर जिन पात्रों में भोजन तैयार किया जाता है ग्रौर परोसा जाता है, इन सबका सूक्ष्म प्रभाव भोक्ता के स्वभाव ग्रौर मनोविकारों पर पड़ता है। इसीलिये यहाँ के ऋषियों ने यह सब ग्रनुभव करके भोजन संबंधी विधि-निषेध ग्राध्यात्मिक प्रगति को ध्यान में रखकर ही निश्चित किये हैं।

हमारे कान में जो शब्द ग्रौर ध्वनियाँ ग्राती हैं उसी दिशा में हमारे विचार दौड़ने लगते हैं। जब इन ध्वनियों के माध्यम से फटकार, प्रशंसा, चाटुकारिता या चुनौती प्राप्त होती है तो उसी के ग्रनुसार विचारों की प्रतिक्रिया होती है। जब ध्वनियाँ 'सत्यं शिवं सुन्दरं' के भावों वाली होती हैं तो मन भी सत्य की नीरवता, सौंदर्य ग्रौर सामंजस्य की मधुरता तथा भद्रता की शक्ति का ग्रन्वेषण करता है।

मैंने ग्रादेश दिया है कि तुम ग्राज का दिन नगर संकीर्तन से प्रारम्भ करो। क्योंकि यह व्यक्तिगत ग्रौर सामाजिक वातावरण के दूषण का प्रबलतम शोधक ग्रौर निःसंक्रामक है। घर के मंदिर में पूजा, श्लोकों ग्रौर मंत्रों का गायन, भजन पर सब पवित्र स्पंदनों का प्रेक्षण करते हैं जिससे वायुमंडल शुद्ध होता है, ग्रौर जो भोजन तुम ग्रहण करते हो वह भी दूषण रहित हो जाता है।

भगवान् की महिमा की कहानियों को परीक्षित ने सुना, इसलिये मोक्ष के मार्ग पर शीघ्रता से सप्ताह भर में ही पार कर गया। इसी प्रकार मंदिरों, गिर्जाघरों, मस्जिदों आर भगवदीय स्पंदनों से युक्त मकानों के दृश्य मात्र से, मूर्तियों ग्रौर धर्म शास्त्रों के दर्शन से, जिनमें भगवान् की महिमा विविध नाम रूपों के ग्राधार पर वर्णन की गयी है, तुम्हारे मन में ग्रपनी लघुता ग्रौर भगवान् तथा उसकी सृष्टि की विशालता का जो बोध उत्पन्न होता है

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उससे मनुष्य के चरित्र, स्वभाव और दृष्टि कोणों पर भी अमित प्रभाव पड़ता है। इन्द्रियों को वशीभूत करना ही है; मुख्यतः इसलिये कि वे विनाशकारी अनुभवों के लिये भागती हैं; इनसे मानव को संकट और हानि का सामना करना पड़ता है और अंत में उसका पतन होता है। आन्तरिक शान्ति खो जाती है जब मनुष्य निरंतर बढ़ती हुयी आवश्यकताओं की पूर्ति में संलग्न हो जाता है और निष्फल इच्छाओं का अनुसरण करता है। साधक—और साधक होने से कौन बच पाता है?—के लिये तो सभी खाद्य पदार्थ सदा पवित्र, सात्विक, निर्दोष ही होना चाहियें। ध्वनियाँ, दृश्य ने संवेदन, विचार, शिक्षायें, सम्पर्क और प्रभाव—सभी श्रद्धा, विनम्रता, संतुलन, शान्ति और सरलता की वृद्धि और पोषण करने वाले हों। यदि प्रभाव राजसिक है तो मन उत्तेजित, क्षुब्ध, अमर्षपूरित, भयभीत और धर्मान्ध बनेगा। यदि ये तामसिक होंगे तो मन को अपनी अज्ञता, बाधा और स्वाभाविक वृत्तियों का भी ज्ञान न होगा। यह तो सात्विक भोजन से ही एक समतल धरातल पर रहकर आत्मा के ऊपर केन्द्रित किया जा सकता है, ऐसा करने से ही शान्ति प्राप्त की जा सकती है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७६ पग पग से

(प्रशान्ति निलयम्, २१-२-१९७१)

मुझे प्रसन्नता है कि पश्चिमी घाट से इस स्थान तक ४०० मील की यात्रा पूर्ण करने का तुम्हारा संकल्प शिव रात्रि से एक दिन पहले ही पूरा हो गया है। यह प्रेम और विश्वास के दृढ़ संबंध के आधार पर तुम्हारे २५ तीर्थ यात्रियों के दल ने एक इकाई की भाँति चल कर पूर्ण किया है। यह उस दृढ़ अनुशासन पालन के कारण हो सका है जिसे तुमने स्वेच्छा से भोजन, निद्रा और विश्राम के लिये निर्धारित किया था। यह ठीक था कि यात्रा भर तुमने अपना भोजन प्रतिदिन स्वयं ही तैयार किया था। क्योंकि सभी प्रकार का राजसिक भोजन अथवा राजसिक मनोवृत्ति के लोगों के द्वारा पकाया भोजन या राजसिक लोगों के साथ बैठकर भोजन करने से तुम्हारी आध्यात्मिक शक्ति और आकांक्षा संकट में पड़ जाते हैं। जो भोजन तुमने तैयार किया उसे पहले भगवान् को अर्पित किया इसलिये तुमने यात्रा भर केवल भगवान् के प्रसाद का ही भोजन किया। मैं समस्त यात्रा भर प्रथम पग से अंतिम पग तक तुम्हारे साथ रहा हूं। होलेनरसीपुर में जब तुम्हारे सामान, बर्त्तन और खाद्य पदार्थों से लदा ठेला एक संयोग से ठीक ऐसी दुकान के सामने क्षतिग्रस्त हुआ जो ऐसी गाड़ियों की मरम्मत करती थी तो तुममें से कुछ लोगों ने इसे केवल संयोग ही माना। परन्तु इससे तुम्हें एक दिन का विश्राम मिल गया, जिसकी तुम्हें नितान्त आवश्यकता थी। १४ दिन तुम्हें सड़क पर चलते हुये बीते; एक दिन गाड़ी की मरम्मत में लगा तब तुमने भी विश्राम किया इस प्रकार केवल १३ दिन में ४०० मील की यात्रा एक अच्छी प्रगति सूचक है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तुम्हारी दैनिक चर्या निश्चय ही तुम्हारी सहन शक्ति को प्रदर्शित करती है। संभवतः तुमने प्रशान्ति निलयम् के दैनिक कार्यक्रमों को अपनाया होगा, जहाँ तुम दो बार प्रतिदिन भजन गाते थे, ४.३० बजे प्रातः ओंकारम् और नगर संकीर्तन करते हुये गाँव की गलियों में, जहाँ पिछली रात्रि निवास किया था, निकले होगे। परन्तु भगवान् का नाम तो एक महान पौष्टिक होता है। 'विटामिन जी' टांगों को ३० मील प्रतिदिन चल सकने की शक्ति देता रहता है। कल्पना करो कि वे गाँव जहां से होकर तुम निकले, न केवल दिव्य अनुभवों से रोमाञ्चित हुये होंगे बल्कि तुम्हारे भजन और प्रवचनों से, वे लोग जो तुम्हारे पड़ाव के आसपास स्वतः इकट्ठे हो जाते थे, अवश्य ही शिक्षा ग्रहण करते होंगे। मैं उस समय भी तुम्हारे साथ था जब तुम्हें किसी ने नये लम्बे मार्ग पर चला दिया था। मैं जानता था कि कुछ गाँव जो मुख्य सड़क से कुछ हटकर बसे हैं, मेरे बारे में भजन और वार्ताओं को इसी प्रकार सुन सकें।

तुम्हारा यात्रा करने का ढंग अनूठा नहीं था। इसमें कोई नवीनता न थी। तुम्हारे पूर्वज पितामह आदि, चाहे विवशता के कारण ही सही, इसी प्रकार पैदल काशी, बदरी, तिरुपति या पंढ़रपुर की तीर्थ यात्रायें किया करते थे। वे एक परिवार, भाईचारे की भाँति सत्संग में तीर्थ यात्रा के मार्ग पर उत्साह, प्रेरणा, शिक्षा, दयालुता, सहनशीलता की वर्षा करते हुये आगे बढ़ते थे। वे विभिन्न भाषा-भाषी क्षेत्रों से होते हुये यात्रा करते थे, उनका सर्वत्र स्वागत सत्कार होता था जहां-जहाँ से होकर वे निकलते थे। उस समय भाषायी, या प्रान्तीय कोई भेदभाव डालने वाले अवरोध न थे। रामेश्वरम् से केदारनाथ तक यह एक ही ईश्वर का, जिसके अनेक नाम है, देश था। वे लोग शिखरों पर चढ़कर मंदिरों में देव मूर्तियों का अपने उत्साह वर्धन के लिये 'हरि बोल' 'गोविन्द' नामों का यथारुचि उच्चस्वर से घोष करते हुये दर्शन करते थे। तिरुपति की सात पहाड़ियों पर प्रत्येक पग पर गोविन्द का नामोच्चार किया जाता था; परन्तु अब तो अधिकांश मन्दिरों तक मोटर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सड़कें बन जाने से लोग ठीक सीढ़ियों तक सवारी में बैठे हुये पहुँचते हैं, शायद ही किसी के ओठों से कभी एक दो बार गोविन्द शब्द का उच्चारण निकलता हो। वे सीधे मोटर का दर्वाजा खोलकर मन्दिर की सीढ़ियों पर उतरते हैं और हाथ में पकड़े सिगरेट के ठूँठ को फेंक देते हैं जिसे कि उतरते समय तक धूम्रपान के लिये ओठों में दबाये हुये थे। मुझे प्रसन्नता इस बात की है कि तुम भगवन्नाम लेते हुये पैदल चल कर इस युग में आये हो जब कि यदि तुम चाहते तो तुम भी मोटर कार या बस द्वारा प्रशान्ति निलयम् की सीढ़ियों तक आ सकते थे।

पाँचवीं शताब्दी में शंकराचार्य पैदल ही काँची से काशी, बद्री, काश्मीर, केदारनाथ, कैलाश, पुरी, शृंगेरि और कलडी की यात्रा कर आये थे। और तब, जबकि वे केवल ३२ वर्ष की ही आयु तक जीवित रहे थे। कितना असाधारण और विशाल कार्य उन्होंने इसी अवधि में पूर्ण कर डाला था। निरंतर लिखना, शास्त्रार्थ करना, प्रचार करना, संगठन करना, प्रेरणा देना, उपदेश देना, यह सब उन्होंने केवल १४, १५ वर्षों के सक्रिय जीवन में ही पूरा कर लिया था। तुम जब किसी पवित्र मंदिर की ओर चलते हो तो तुम्हारी टाँगें दुखती हैं। तुम भगवान् से जो तुम्हारा पथप्रदर्शन करता है, प्रार्थना करते हो, तुम्हारे विचार इस उच्च आकांक्षा से नहीं विचलित होते हैं। तुम आये, मैं जानता हूँ, साई राम का स्मरण करते हुये सदा इसी विचार में मग्न रहे हो। मैं जानता हूं कि ७५ प्रतिशत तुम्हारा समय भगवत् चिन्तन में बीता है और २५ प्रतिशत समय, क्यों ठीक है न ? तुमने अपनी वैयक्तिक, घरेलू चिन्ताओं में परिवार के लोगों और उनकी समस्याओं के चिन्तन में, अब और आगे कितना चलना है, कितना चल चुके हैं, इसके निर्णय में बिताया है। कुछ सुझाव अधिक शीघ्रता से, शान्ति से यात्रा करने के लिये हैं। सक्रिय रहो, सक्रियता का स्वागत करो, यही संदेश भगवान् मानव को जन्म के समय देता है। श्वास तुम्हें 'सोऽहम्' सब काल में सिखाती है। 'सो' जब श्वास अन्दर जाती है और 'हम्' जब बाहर निकलती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है। सक्रियता ही तो जीवन का चिन्ह है। तुम्हें यह कार्य स्वयं चुनना होगा जिससे तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति हो यह तुम्हें अपने वर्तमान जीवन की स्थिति को ध्यान में रखकर ही निर्णय करना होगा। कार्य में कुछ भी ऊँचा या नीचा नहीं होता है। आँख अरबों खरबों मील दूर आकाश के नक्षत्रों को देखती है परन्तु आंख, कानों को नहीं देख पाती है जो केवल कुछ अंगुलों की ही दूरी पर स्थित होते हैं। आँख को देखना ही चाहिये, कान को सुनना ही चाहिये और हाथ ग्रहण ही करें। यह उनका धर्म है। प्रत्येक अपने-अपने धर्म का, कर्त्तव्य का पालन अवश्य करे।

केले के एक वृक्ष के अनेकों उपयोग होते हैं; पत्ता भोजन परोसने के काम आता है, फूल से कई स्वादिष्ट व्यंजन तैयार किये जाते हैं; तने की बाहरी छाल सामान बाँधने की रस्सी का काम देती है; परन्तु मुख्य लाभ तो केले के फलों के गुच्छे का होता है। केले को रोपने, सींचने का लक्ष्य केले के मीठे पके फल होते हैं; न कि पत्ते, रस्सियाँ, भीतरी श्वेत गूदा या पुष्प। इसी प्रकार से इस मानव शरीर का मुख्य लक्ष्य तो मोक्ष-प्राप्ति है। शेष अन्य उपयोग तो घटना प्रसंग वश ही समझना चाहिये।

प्रह्लाद ने प्रार्थना की, "भगवान्! मैं आपकी आराधना करता हूं और दोनों हाथों से पुष्पाञ्जलि अर्पित करता हूँ"। तुम कहते हो अरे! हाथों से तो अनेक काम लेने हैं। परन्तु अनेक कार्य लेते हुये भी मनुष्य को हाथ देने का मुख्य उद्देश्य यही है कि वह प्रार्थना करे, पूजा करे, इनसे भगवान् के चरण कमलों को पकड़े। कान भगवान् की महिमा को श्रवण करने के लिये दिये गये हैं; आँखें भगवान् की सृष्टि रूप में, अवतार की अभिव्यक्ति का दर्शन करने के लिये दी गयी हैं। चाहे जिह्वा को परनिन्दा अथवा सत्ता-धारियों की चाटुकारिता के लिये प्रयोग किया जावे, परन्तु यह तो निश्चय ही दुरुपयोग है। भगवान् ने जिस उद्देश्य से इसे प्रदान किया है उसी के लिये—भगवान् की महिमा के दिव्य श्लोक पद्य गायन के लिये, इसका प्रयोग

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करो। जिस प्रकार सीता ग्रशोक वृक्ष के नीचे भयंकर राक्षसियों से घिरे होने और धमकाये जाने पर भी निरंतर भगवान् के ध्यान में मग्न रहती थीं जिससे उन्हें यह सब ग्रत्याचार और उत्पीड़न को सह लेने की शक्ति राम नाम से प्राप्त ग्रानंद से होती रहती थी, चारों ग्रोर दाँतों से, जो किसी भी क्षरण जिह्वा को छेद, काट कर रक्त रंजित कर सकते हैं, घिरी रहने पर भी बड़ी तेजी से जिह्वा इधर-उधर मुँह में डोलती रहती है। जिह्वा को भगवान् की महिमा ग्रौर सुयश का गान करना ही है, ग्रन्य सभी कार्य गौरा और इसके ग्रधीन हैं। टाँगें तुम्हें भगवान् के मंदिर ग्रौर तीर्थ यात्रा पर ले जाने के लिये हैं। धन कमाने ग्रथवा ग्रश्लील प्रसन्नता के लिये उन स्थानों पर यदि टाँगें ले जाती हैं तो इससे क्या लाभ ? जैसा कि घुड़ दौड़ के मैदान में जाने से होता है, धन जीतते हो, हार भी जाते हो। ग्रब तुमने इनका सदुपयोग किया है। क्या तुम्हें इनमें कुछ कष्ट या पीड़ा का ग्रनुभव होता है ? मांसपेशियों में कुछ तनाव है ? नहीं, तुम तो ग्रानन्द से पूर्ण हो। ग्रौर सव कार्य ग्रौर उद्योग तो इसी आनन्द की प्राप्ति के लिये थी। क्या तुम मेरे लिये इस कुल पद यात्रा को करके ग्राये हो ? नहीं, यह तो तुमने केवल ग्रपने ही लिये, यहाँ बैठ कर समीप से मेरी वार्ता सुनकर ग्रानन्दित होने के लिये किया है। इस कमरे से बाहर हजारों व्यक्ति मुझसे कुछ शब्द सुन पाने को लालायित हैं; परन्तु तुमने ग्रपने अंगों का सदुपयोग करके यह शुभ ग्रवसर प्राप्त कर लिया है।

कल तुमने मुझसे कहा था "स्वामी जी ! हम लोग ग्रापके पास दस वर्षों से ग्रा रहे हैं। आपने इतनी बार हमसे वार्ता की है, ऐसा क्यों है कि हम लोग ग्रपनी साधना में कुछ भी उन्नति नहीं कर पाये हैं, और न शान्ति ग्रौर ग्रानन्द ही पाया है ? ग्रच्छा, सुनो रसोई घर में सुस्वादु व्यंजन बनाना ग्रौर सुव्यवस्थित करके रख देना ही पर्याप्त नहीं होता है। उन्हें तो तुम्हारे पात्रों में परोसना, तुम्हारे द्वारा उसका भोजन करना ग्रौर पचा लेना भी शेष रह जाता है। इसी प्रकार, मैं बोलता हूं, तुम सुनते हो, इतना ही पर्याप्त नहीं है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तुम्हें स्मरण रखना है कि मैंने क्या कहा, उसे अपने हृदय की कोठरी में सुरक्षित रखो, विचार करो और उसे अपने दैनिक आचरण में भी उतारो! तुममें से कुछ लोग अनुभव करते हैं कि मैंने उनकी उपेक्षा की है; जबकि उन्हें कुछ निराशा या असफलता का अनुभव होता है। तुम्हें ऐसे अवसरों का स्वागत करना चाहिये क्योंकि इन्हीं से तो चरित्र में दृढ़ता आती है और तुम्हारा विश्वास दृढ़ होता है। जब तुम कोई चित्र लटकाना चाहते हो तो एक कील दीवाल में ठोंकने के बाद उसे हिलाकर देख लेते हो कि वह चित्र के भार को उठा सकने के लिये दृढ़ता से गड़ गयी है। इसी प्रकार भगवान् का चित्र गिर कर चूर चूर न हो जावे वह कील (भगवन्नाम) भी तुम्हारे हृदय की दीवाल में दृढ़ता से गड़ गयी है इसके परीक्षण के लिये कुछ असफलतायें और निराशाओं के झोंके आया करते हैं। अच्छा कल्पना करो मैं तुमसे कहूं कि इस छत पर से नीचे कूद पड़ो, तो तुम्हें आगा पीछा सोचना या संकोच नहीं करना चाहिये और चोट खा जाने के भय से नहीं खिसक जाना चाहिये, कि तुम्हारे पैर टूट जावेंगे। यह तो खूंटी की दृढ़ता का परीक्षण है कि यह दृढ़ता से गड़ गयी है। तुम तो इसे मेरी लीला मान कर कूद पड़ो। यदि तुम ऐसा करोगे तो कोई चोट नहीं लगेगी! अन्यथा मैं तुमसे ऐसा करने को कहता ही नहीं।

जब तुम भगवान् की ओर बढ़ते हो, इससे जो भी बाधक बनता है उसे बचाकर निकल जाना चाहिये। प्रह्लाद को पिता के विरुद्ध जाना पड़ा, विभीषण को भाई के विरोध में जाना पड़ा और जामदग्नि (परशुराम) को स्वयं अपनी माता का हनन करना पड़ा, मीरा अपने पति की अवज्ञा करती रही क्योंकि वे लोग भगवान् के भक्त थे इस लिये जिसने उनके मार्ग में बाधा डाली उसका उन्हें विरोध कर और बाधा नष्ट कर आगे बढ़ना पड़ा। तुम्हारे जैसे नवयुवकों की भी समस्यायें होती हैं, मैं समझता हूं, तुम्हें इच्छा के प्रतिकूल विवाह करने को विवश किया जाता है; माता-पिता शीघ्र ही तुम्हें वैवाहिक बन्धनों से सुरक्षित करना चाहते हैं। तुम्हें उनका हृदय जीतकर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उनका अनुमोदन प्राप्त करना है; जैसा कि शंकर ने संन्यासी होने के लिये अपनी माता की स्वीकृति प्राप्त की थी ।

परन्तु एक बात मैं तुम्हें बता देना चाहता हूं कि विवाहित जीवन, एक सद्गृहस्थ का जीवन तुम्हारे आत्मसाक्षात्कार में बाधक नहीं होगा । पत्नी और बच्चों को एक पवित्र थाती समझो, इसी भाव से उनकी सेवा करो । पचास वर्ष की आयु से अपने आप को ब्रह्मचर्य और आध्यात्मिक संयम का जीवन बिताने के लिये तैयार करो । जीवन की पांच दशाब्दियां पूर्ण होते होते पाँच इन्द्रियों को वशीभूत कर ही लेना है । छै दशाब्दियों का अर्थ अपने षड्रिपुओं पर विजय प्राप्ति होना चाहिये । वे षड्रिपु काम, क्रोध, मोह, लोभ, घमंड और ईर्ष्या हैं । जब तक सत्तर वर्ष के होओ तो अपने को सप्तर्षियों में लीन होने योग्य, सप्त सिन्धुओं, और सूर्य की सप्त-रंगी किरणों में समा सकने योग्य बना लो । अर्थात् समस्त पार्थिव और सांसारिक इच्छाओं, आदर्शों से ऊपर उठकर भगवान् में लीन होने के इतने समीप हो जाओ कि जितना साधना के द्वारा हो सके । अस्सी की आयु पूर्ण करने पर प्रमुख आठ अधिकारी देवताओं के समान हो जाओ जो कि अपनी विशेषताओं और गुणों में दिव्य होते हैं । नव्वे वर्ष की आयु में तुम्हें नवग्रहों के क्षेत्र में, उच्चस्तर पर पहुंचने के योग्य हो जाना चाहिये । जब मनुष्य शतायु होवे, दश दशाब्दियां पूर्ण कर लेवे उस समय तक उसे दशों इन्द्रियों : पांच कर्मेन्द्रियों और पांच ज्ञानेद्रियों पर अधिकार करके बुद्धि का मूर्तस्वरूप बन जाना चाहिये । उस समय उसमें किसी कर्म की, उसके फल की इच्छा नहीं रहनी चाहिये । वह और निरपेक्ष ब्रह्म एक और अविभाज्य हो जावें ।

परन्तु यह सब पद यात्रा, जीवन की तीर्थयात्रा के संबंध में कहा गया । अब मैं तुम्हें तुम्हारी ४०० मील की यात्रा के संबंध में कुछ कहना चाहता हूं । कुरुक्षेत्र के युद्ध में अर्जुन को अपने सारथी के रूप में कृष्ण को प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । परन्तु उन्हें यह ज्ञान नहीं हुआ कि कृष्ण तो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सदा से प्रतिक्षण जीवन भर उसके सारथी बने रहे। तुमने भी सोचा होगा कि मैं ४०० मील की लम्बी यात्रा में तुम्हारे साथ रहा ! मानो कि इससे पूर्व और इसके बाद मैं तुम्हारे साथ नहीं हूंगा। कृष्ण ने महान धनुर्धर अर्जुन को आदेश दिया, कार्य भार सौंपा कि वे यादवों की स्त्रियों को सुरक्षित स्थान पर पहुंचायें क्योंकि तब उनके पार्थिव शरीर छोड़ने का समय हो गया था। मार्ग में दल पर जंगली लोगों ने आक्रमण किया अर्जुन ने उनको नष्ट करने के लिये अपने धनुष बाण का सहारा लिया, वह गांडीव धनुष और अक्षय तूणीर जो कि उन्हें देवताओं से कठोर तपस्या के फल स्वरूप में प्राप्त हुये थे। परन्तु अब सारथी कृष्ण जा चुके थे, उनकी शक्ति भी नष्ट हो गयी थी। अब तो उन्हें बाण प्रयोग के, देवताओं की शक्ति के आवाहन करने के, मंत्र भी स्मरण न रहे। गांडीव पर प्रत्यंचा भी न चढ़ा सके, जिस गांडीव को सैकड़ों बार महान से महान शक्तिशाली शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध में उन्होंने प्रयोग किया था, वह अब उनके काम न आया। तब उन्हें अनुभव हुआ कि उनके जीवन चक्र को घुमाने के पीछे कृष्ण की ही शक्ति थी उनके बिना अर्जुन एक दग चुके कार्तूस की तरह हो चुके थे। जंगलियों ने अर्जुन के दल को पराजित कर स्त्रियों का अपहरण कर लिया, जिनके करुण-चीत्कार और क्रन्दन से अर्जुन का हृदय विदीर्ण हो रहा था।

इस लिए विश्वास रखो कि जो भी उपलब्धियां, सफलतायें तुम्हें मिलती है वे भगवत्कृपा से ही प्राप्त होती हैं। भगवान् से शक्ति, बुद्धि, नम्रता, वैराग्य, प्रकाश और प्रेम पाने के लिये प्रार्थना करते रहो। जीवन की तीर्थयात्रा के प्रत्येक पग के साथ निश्चयपूर्वक दृढ़ता से भगवान् के समीप से समीपतर होते जाओ।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७७ सफरमैना पल्टन

(प्रशान्ति निलयम्, ४-१०-१९७०)

प्रशान्ति निलयम् में मनाये जाने वाले उत्सव के पूर्व सबसे पहली सभा सत्य साई सेवा दल के सदस्यों की जुड़ती है। ये सदस्य भारत के सभी प्रान्तों से आकर एकत्रित होते हैं। जब हजारों व्यक्ति यहाँ आते हैं, अधिकांश को यहाँ का वातावरण नये अपरिचित अनुभवों का कराने वाला लगता है, तो तुम्हारे जैसे नवयुवकों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि सेवाकार्य के लिये अपने को अर्पित कर उनकी सेवा करो जिससे उन्हें यह अनुभव हो कि उनकी सेवा प्रेमपूर्वक ऐसे की जा रही है कि मानो सेवा करने वाले उन्हीं के सगे भाई और बहनें हों जिनके यहाँ वे पधारे हैं। यह आध्यात्मिक दुर्बलता का चिन्ह है यदि कोई सेवा करने के लिये भेदभाव करके धनी अथवा निर्धन, शिक्षित अथवा अशिक्षित, देशी या विदेशी में से अपनी रुचि के अनुसार सेवा किये जाने वाले पात्रों का चुनाव करे। आने वाले सभी मुमुक्षु और साधक होते हैं, अतएव उन सब को स्वागत और सहायता पाने का अधिकार है जो यहाँ भाग लेने या आनन्द लेने की योजना बनाकर पधारते हैं। उनमें से प्रत्येक आनन्द का भंडार है; यही कारण है कि वे इसका अधिकाधिक मात्रा में आस्वादन करने आये हैं। प्रत्येक ने अपने हृदय में साई को प्रतिष्ठित कर रखा है, इसीलिये वह सगा है, भाई है। इसलिये अपने सेवा कार्य को अभिमान के स्पर्श से दूषित न होने दो। नम्र बनो कि जीवन में सेवा करने का तुम्हें ऐसा दुर्लभ स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ है, तुम्हारे जीवन के ये कुछ दिन सेवा में बिताने से धन्य हो रहे हैं। भक्ति की ९ सीढ़ियाँ हैं जिन पर साधक को पूर्ण-रूपेण शरणागत होने और अपने इष्ट आदर्श में लीन होने से पूर्व चढ़ना पड़ता है। इनमें ७वीं सीढ़ी 'भगवान् के चरणों की सेवा' है। तुम्हारा सौभाग्य है

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

कि तुम सीढ़ी के लिये उपयुक्त पात्र के रूप में चुन लिये गये हो। भगवान् के लाखों चरण हैं, इस प्राँगण में इधर से उधर प्रधावित भगवान् के ही सब चरण हैं। उनकी सेवा करो जिससे कि तुम अगली दो सीढ़ियों पर चढ़ने के पात्र सिद्ध होओ और अपने लक्ष्य को प्राप्त करो।

एक विशाल और महान सत्संग का लाभ तुम्हें आज से ही मिलना प्रारंभ हो गया है। इस स्थान पर हजारों ही पधार रहे हैं, वे दैवत्व को देखने, संभाषण सुनने और सम्पर्क करने की उत्कट इच्छा रखते हैं। जिनकी इच्छायें संबंधियों के समान हैं उनके लिये इस आत्म-समुद्र में विचरण करना वास्तव में एक भगवत्कृपा का स्पष्ट चिन्ह है। पवित्र स्थानों में मेले और त्यौहारों पर होने वाला यही लाभ है कि उत्साह, उल्लास और प्रसन्नता की लहरों में मनुष्य बह जावें और उच्चस्तरों के आनन्द सौंदर्य का ऊपर उठ कर भोग करें।

सत्य साई सेवक की दो उपलब्धियाँ महान होती हैं, अहंकार का अभाव और छलकता हुआ प्रेम। जिन्हें सहायता की आवश्यकता है उनकी सेवा करने से तुम सभी के साथी बन जाते हो, अन्य कोई आधार हो या न हो। सदा अपने चारों ओर, यहाँ तक कि निर्धारित सेवा क्षेत्र के पार भी, सेवा करने का अवसर खोजते रहो। एक वृद्ध को धूप में ही स्थान मिल पाया हो, एक लकवे का रोगी टकटकी लगाये किसी कुर्सी की खोज में हो, बच्चा अपने माता पिता के लिये रो रहा हो, एक माँ अपने सूखे गले को तर करने के लिये दो घूंट पानी चाहती हो, अन्य कोई केवल इसलिये निराश हो गयी हो कि उसे मंच पर होने वाला कार्यक्रम अपने स्थान से नहीं दिखाई पड़ रहा है—ऐसों की खोज करो और मुस्कराते चेहरे से उनकी ओर लपक कर पहुँचो और दो मीठे बोल बोलो। कोई मूर्च्छित हो गया हो तो या तो डाक्टर को वहीं ले जाओ या रोगी को सावधानी से, फुर्ती से औषधालय तक ले जाकर उपचार कराओ इसी बीच रोगी में साहस, आत्म-विश्वास की भावना की वृद्धि करते जाओ। जब वे अपने स्थान को लौटे तो वे कह सके कि ऐसी सेवा तो उनके सगे संबंधी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भी नहीं कर सकते थे जैसी कि तुमने चतुराई और प्रेम से की है। तुममें दयालुता, प्रेम, अपने सुख के त्याग की तत्परता, और धैर्य होवे। तभी तुम सेवा-दल के सफल सदस्य बन सकोगे।

इसका अर्थ है कि तुम स्वयं नाम स्मरण में सतत् लगे रहो जिससे तुम भगवान् के सच्चे सेवक बने रहोगे चाहे मनुष्य की सेवा करो या मनुष्य में भगवान् का निवास जान कर जो सेवा करोगे वह भगवान् की ही सेवा होगी। यदि तुम्हारा दृष्टिकोण ऐसा नहीं बन सका है तो इन विभिन्न दैवी अभिव्यक्तियों में एकता या अद्वैत के दर्शन करने में असफल रहोगे। इस विविधता से तुम और उलझन में पड़ जाओगे।

जो आदेश है उसी का पालन करो; भक्त के लिये सच्चा मार्ग यही है। न तो कभी संदेह करो और न संकोच करो। चाहे कैन्टीन या अस्पताल कहीं भी तुम्हें कार्य भार दिया जावे, उदास मत होओ कि अब तुम्हें हर समय दर्शन नहीं प्राप्त होगा। मुझे इससे कोई बाधा नहीं होती है, तुम चाहे जहाँ भी होगे, तुम्हें मेरे दर्शन प्राप्त हो सकेंगे। जब तुम ध्यान में संलग्न हो और पड़ोस में किसी के कराहने की आवाज सुनो तो उठ जाओ और पता लगाओ कि किस कारण से कौन दुखी है। कराहने वाले को कोसते हुये उपेक्षा मत करो। इस प्रकार तुम्हें कहीं अधिक आध्यात्मिक लाभ मिल जाता है जितना कि तुम स्वार्थ बुद्धि से अपने दरी के आसन या मृगचर्म पर डटे हुये ध्यान करके प्राप्त कर पाते।

मृदु वाणी और कोमल हृदय वाले बनो। दूसरों के ज़ोर से बोलने पर झिड़कते हुये स्वयं मत चिल्लाओ। दूसरों के लिये अपना आचरण व्यवहार एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत कर सको, केवल निन्दक या झिड़कने वाले होकर नहीं। उदाहरण ही सर्वोत्तम शिक्षक होता है। दूसरे लोग यदि अज्ञान-वश तुम्हारे प्रति कठोर शब्दों का व्यवहार करें तो उनके लिये तुम बहरे बन

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाओ और सुना अनसुना कर जाओ। यदि तुम विनम्रता से उन्हें इस स्थान के नियम और प्रतिबंध समझा दोगे तो वे भी पिघलेंगे कि यह तो बाबा ने इस लिये नियम के रूप में सभी के लिये रखा है। यदि अपने प्रति क्रोधित व्यक्ति के प्रति भी तुम मृदुता से कोमल शब्दों का प्रयोग करोगे तो तुम्हें अपने अन्दर आनन्द की लहर का अनुभव होगा। और उसमें पश्चाताप का उदय होना ही तुम्हारे कार्य का पुरस्कार है।

एक बात और है। तुम्हारी वेष-भूषा सादा होवे। आधुनिक फैशन की विदेशी लगने वाली बुशर्ट और चुस्त मोहरी का पतलून पहन कर आभिजात्य वर्ग के अभिमान से फूले हुये सेवा नहीं की जाती। ऐसे अफसर दिखाई देने वाले व्यक्ति से कोई ग्रामीण कुछ सहायता के लिये कैसे कह सकेगा, जो कि सामाजिक स्तर में उससे कहीं ऊंचा दिखाई देता हो ? तुम्हारा मुखड़ा, सूरत-शक्ल, मुद्रा और परिधान सभी से विश्वास, सहानुभूति, विनम्रता टपकती प्रतीत होवे जिससे संकटग्रस्त, असुविधा में पड़ा हुआ, वृद्ध और असमर्थ प्रसन्नता से निःसंकोच तुम्हारे पास आ सके और अपनी समस्या के समाधान में सहायता ले सके। यह सब बातें महिला सेवादल के सदस्यों पर भी लागू होती हैं। वे भी अपने भव्य वस्त्रों, प्रसाधनों और केश विन्यास से लोगों को आतंकित कर अपने से दूर दूर ही रख सकती हैं।

सब के अंत में, परन्तु सबसे ऊपर, तुम्हें यह स्मरण रखना है कि तुम सेवा दल के सदस्य साईयुग की "सफरमैना की पल्टन" हो। तुम्हें सब के प्रति समान रूप से प्रेम से संपृक्त होकर व्यवहार करना है। तुम्हें सुख-दुख में सदा धैर्य पूर्वक रहना है। अचानक अवसर पड़ने पर जिस सेवा की आवश्यकता पड़ जाती है उसकी कला में तुम्हें पारंगत होना चाहिये। मेरा नाम 'बाबा' है इसमें अंग्रेजी के अक्षर बी, ए, बी, ए, आते हैं अर्थात् मैं दोगुना ग्रेजुएट (स्नातक) हूं, यह तो तुम भी देख सकते हो ? इन अक्षरों का क्या अर्थ है ? 'बी' का अर्थ 'बीइंग' अर्थात् सत् है और 'ए' का अर्थ एवेयरनेस अर्थात् चित् है;

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

दूसरी 'वी' का अर्थ 'ब्लिस' आनन्द है और दूसरे 'ए' का अर्थ आत्मा है। पूरे शब्द का अर्थ है कि मैं "सच्चिदानन्द आत्मा" हूं। और तुम भी सत्, चित्, आनन्द आत्मा हो। अन्तर केवल इतना है कि तुम्हें इसका भान या बोध नहीं है; तुमने इसे अभी नहीं जान पाया है; नहीं प्रकट किया है। जिस प्रकार मैंने इंगित किया है उस प्रकार सेवा करना भी उस अन्वेषण का ढंग है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७८ तत् त्वम्

(प्रशान्ति निलयम्. २२-२-१९७१)

वेदोंमें मंत्रों और कर्मकाण्ड के द्वारा उस एक ब्रह्मकी पूजा उसके नाम रूपों से (भिन्न भिन्न लोगों के अपने भिन्न भिन्न आध्यात्मिक और बौद्धिक विकास के कारण उनकी रुचि भिन्न होती है) करने की आज्ञा दी गई है। इन विभिन्न नाम रूपों की एकता वेद में सर्वत्र प्रतिपादित की गई है। प्रत्येक नाम-रूप की उपासना करते हुये उसे सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक इत्यादि कहकर वर्णन किया जाता है इसलिये किसी भी द्वार से प्रवेश करके व्यक्ति उसी चरम तत्व, जो सब में अनुस्यूत है, को प्राप्त होते हैं। परन्तु मानव की संकीर्णता ने उसकी हृदय की विशालता पर विजय प्राप्त कर ली है। विभिन्न नाम रूप वास्तव में भिन्न भिन्न समझे जाने लगे हैं और एक एक नाम रूप को एक दल विशेष ने अपना लिया और अपने को अन्य दलों से पृथक् समझने लगा। इस प्रकार गाणपत्य, सौर्याज, शैव, वैष्णव, वीर शैव, वीर वैष्णव, पृथक् पृथक् सम्प्रदाय बन गये। आध्यात्मिक कर्मकाण्ड उपासना और मंत्रों का प्रयोग जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अर्थात् आनन्द को प्राप्त करने के लिये, वह अपेक्षा उपेक्षित हो गया है और अब निन्दा, झक्कीपन, संघर्ष की अवांछनीय घास-पात ने मुख्य फसल, आनंद, को ढक लिया है और खेत भर में फैल गयी है।

इस दुखान्त नाटक का मूल कारण काम है। गीता में कहा है कि जहाँ वेदों में इच्छाओं के पोषण और अस्थाई प्रेरणाओं की पूर्ति की आज्ञा दी गई है उतने के लिये वेदों के भी ऊपर उठ जाना वांछनीय है। यह उसी श्लोक के मानव को 'आत्मवान्' आत्मा संबंधी ज्ञान रखने वाला; आत्मा की शक्ति

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को रखने वाला, बनने का उपदेश दिया गया है। शब्द 'आत्मवान्' ध्यान देने योग्य है। गीता में बलवान या धनवान् बनने की प्रेरणा नहीं दी गई है बल्कि आत्मवान् होने के लिये कहा गया है। आत्मवान् वह है जिसे स्वयं आत्म स्वरूप होने से साहस हो और जिसे मृत्यु से भय न हो, जो यश, अपयश, शोक, हर्ष इत्यादि सांसरिक द्वन्द्वों से ऊपर हो। उसी श्लोक में दूसरा शब्द-निर्योगक्षेम आया है। इसके अर्थों पर भी कुछ विचार कर लें। यह स्थायी शान्ति प्राप्त करने का मार्ग सुझाता है—प्रसन्नता के उपार्जन या रक्षण की चिन्ता न करके यह स्वयं आत्म स्वरूप हो जाने की प्रेरणा देता है। आत्मा को स्थित होकर कभी प्रसन्न होने की चिन्ता नहीं करनी पड़ती है, (क्योंकि आत्मा तो स्वयं ही आनन्द मय होती है) गीता में यही विधान है। निर्द्वन्दो (संसार के पस्रपर विरोधी द्वन्दों से पृथक् अथवा ऊपर उठकर) नित्यसत्वस्तो (सदा शान्ति में स्थित) निर्योगक्षेम आत्मवान्—गीता में मोक्ष का यही मार्ग बतलाया गया है।

गीता के अध्याय ५, श्लोक २८ में कहा गया है कि जो मुनि मोक्ष प्राप्त करने का इच्छुक है उसे अपनी इंद्रियों, मन, बुद्धि के ऊपर अधिकार प्राप्त करना चाहिये। उसे इच्छा (राग, द्वेष) भय (किसी प्रिय अथवा अप्रिय घटना की आशंका से) और क्रोध (निराशा, असफलता देने के कारण पर क्रोध) से रहित होना है। "विगतेच्छा, भय क्रोधो" शब्द का प्रयोग किया गया है। श्लोक में यह भी कहा गया है कि ऐसा व्यक्ति तो मुक्त है उसे अब किसी की भी कामना नहीं होती है।

सदा साधनों की पवित्रता पर ध्यान रखते हुये कर्म के फल की चिन्ता न करे; और योग का वर्णन चेतना की सभी गति-विधियों को एकाग्र करके एक ध्येय पर केन्द्रित करना—इन दोनों में भगवान् ने एक ही परामर्श दिया है। इन्द्रियों के संयम नियम से बुद्धि शुद्ध होती है तब वह (बुद्धि) साहस पूर्वक शीघ्रता से भोक्ता-भोग्य संबंधों का वास्तविक संबंध विवेचन करने में

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

समर्थ होती है। स्व-पर के संबंध में विचार करने पर ज्ञात होता है कि 'मैं' (वही एक) ही सब कुछ है। तब शान्ति, अचल शान्ति, प्रशान्ति प्राप्त होती है।

(इच्छा) काम का एक भी बीज, हृदय की भूमि में दवा रह जाता है; तो उसे निकालना बड़ा कठिन होता है। वर्षा की हल्की फुहार, परिस्थिति में किंचिन्मात्र भी अनुकूलता, से वह बीज अंकुरित होकर अपना विस्तार करने लगता है। 'काम' का उच्छेदन और शमन केवल 'राम' (भगवत्प्रेम) और प्रेम (सभी व्यक्तियों के प्रति होने से उनके लिये अपनी प्रसन्नता और सुविधाओं का त्याग उनकी प्रसन्नता और सुख के लिये) से हो सकता है। राम और प्रेम का दृढ़ आश्रय ग्रहण न करने से काम तुम्हारे नैतिकता विषयक व सदाचार संबंधी मापदण्ड में विपर्यय डाल देगा। यह नाना प्रकार के लम्बे चौड़े तर्क देकर तुम्हारी आत्मा की पुकार को दबा देगा, तर्क और कर्त्तव्य भावना को दासत्व के बंधन में डाल देगा।

प्रतिवर्ष दशहरा के अवसर पर मैं एक यज्ञ की व्यवस्था करता हूं। जिससे तुम वेदों के अध्ययन की महत्ता से परिचित हो सको, जिन असत्य आसक्तियों को मूल्यवान समझ कर तुम चिपके हुये हो उनके त्याग की आवश्यकता समझाने के लिये, कुछ दिनों के लिये प्राचीन संयम नियम के वातावरण में रहकर अपने मनोविकारों को शान्त और उत्तेजनाओं को जीवनोपयोगी धारा में मोड़ सको इसीलिये यह सब आयोजन है। इस क्रिया से उत्पन्न किसी भी हर्ष अथवा विषाद अथवा अन्य किसी भी परिणाम से मैं सदा अछूता रहता हूं। मक्खन का पिण्ड यद्यपि मट्ठे पर ही तैरता रहता है और मट्ठे में होता है वह उससे पृथक् रहता है उसका एक अंश बनकर नहीं रहता है। गतिविधि और क्रियाओं से मेरी प्रकृति में कुछ भी अन्तर नहीं आता है। मैं तुम सब में घुल मिल कर बातचीत करता, रहता हूं। मैं व्यवस्था करता हूं, निर्देशन करता हूं, परामर्श और फटकार भी देता हूं, परन्तु यह सब

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करते हुये भी मैं किसी भी ग्रासक्ति से दूर रहता हूं। बंधन में पड़े हुये मरण-धर्मा से दैवत्व पृथक् और विशिष्ट स्थिति में नहीं रहता है। अपने मन को ऐसा प्रशिक्षित करो कि वह भटकाने वाले मार्ग पर न जाकर भगवान् के मार्ग पर चले, जिसकी व्याख्या मैं तुम्हें व्यक्त करके समझाता रहता हूं।

एक स्वच्छ निर्मल मन पूर्णतया विकसित सुगंधित गुलाब के पुष्प सदृश है। वह चाहे मेज पर हो या दीवाल पर, दायें ग्रथवा बायें हाथ में हो उससे ताजगी ग्रौर प्रसन्नता बिखरती रहती है। तब वह (मन) स्वर्गस्थित भगवान् के सिंहासन के समीप भी पहुंच सकता है। परन्तु दुष्ट मन दुर्गन्ध फैलाता है, सभी सगे-संबंधी उससे दूर रहना चाहते हैं। यह जिसके भी सम्पर्क में आता हैं उसे कलंकित करता है। मन से वृत्ताकार क्षेत्र में दूर-दूर तक पहुंचने वाली तरंगें, तालाब की तरंगों की तरह, निकलती हैं ग्रौर जहाँ-जहाँ जिसके सम्पर्क में आती हैं उन्हें प्रभावित करती हैं। अपने मन को तरंग रहित कर डालो। इसे नीरव, शान्त, समतल कर लो जिससे हंस (श्वेत धवल परों वाला पवित्र पक्षी जो नीर-क्षीर विवेक में समर्थ होने के कारण सदा शुभ ग्रौर धर्मानुकूल का वरण ग्रौर ग्रसत् त्याज्य का त्याग करता है) ग्रौर वह पक्षी सोऽहम् का प्रतीक होता है। सः (वह) ग्रहम् ग्रर्थात् मैं। इस प्रकार सोऽहम् ॐ का ही सिद्धांत होने से ग्रपने में 'वह ग्रौर मैं' 'मैं ग्रौर सब' दोनों को संयुक्त करता है, मैं ग्रौर वह मिलाने से हम या केवल मैं हो जाता है) उसमें क्रीड़ा करै सको कल्लोल कर सको ! मेरा प्रत्येक संकेत, शब्द ग्रौर क्रिया, वह चाहे जैसी ग्रचानक प्रतीत होवे, सदा तुम्हें तुम्हारे लक्ष्य की पूर्ति की दिशा में ठेलने वाली होती है ग्रौर तुम्हें आत्मिक आनन्द प्रदान करने वाली होती है।

तुम रामायण पढ़ते हो ग्रथवा विद्वान पण्डितों से रामायण की व्याख्या सुनते हो; परन्तु तुम इसकी शिक्षाग्रों का ग्रपने कार्यों के द्वारा ग्रनुमोदन नहीं करते हो इसके लिये तुम्हारे पास समयाभाव रहता है। ग्रशिक्षित व्यक्ति

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

'वागवुताम' उच्चारण करता है जबकि उसे 'भागवतम्' कहना चाहिये। वागवुताम का अर्थ है हमें भद्र बनने दो। हां इसी भावना से तुम्हें 'भागवतम्' का अर्थ लेना चाहिये। पाठ की भावना में प्रवेश करो और वह साहस प्राप्त करो जिससे मन की शान्ति प्राप्त होती है। तभी तुम सरलता से मानव के बजाय माधव के मार्ग पर चल सकोगे। माधव का अर्थ मायापति होता है। (मा=माया+धव=पति, अर्थात् माया का स्वामी)। भगवान् का अनुसरण करो फिर तुम्हें कोई भ्रमित नहीं कर सकेगा; चाहे वह सत्य का ही ऊपरी आवरण धारण करके क्यों न आया हो।

ध्वनि तीन प्रकार की सामान्य, वर्ण और मूक होती है। सामान्य की श्रेणी में वे सब ध्वनियां आती हैं जो प्राकृतिक, अथवा वस्तु की टूट-फूट और गतिशीलता से उत्पन्न होती हैं। वर्षा, गरज, झरने व नदी के प्रवाह, आंधी, भूंचाल, बर्तनों की झनकार, प्याला, तश्तरी आदि के रखने, टूटने आदि की तथा ओस की बूंदों के गिरने या पुष्पों के खिलने से उत्पन्न सूक्ष्मतम ध्वनियाँ भी इसी श्रेणी में आती हैं। पक्षी के डैने से एक पर के हवा में तैरन से भी उत्पन्न ध्वनि इसी कोटि की होती है। दूसरी श्रेणी की ध्वनि 'वर्ण' कही जाती है। बोले गये शब्द इस कोटि में आते हैं। इसका कुछ अर्थ या अभिप्राय होता है। यह सूचना देने, शिक्षा या प्रेरणा देने के लिये बोली गयी ध्वनि है। यह तो एक हृदय के स्पंदन दूसरे हृदय तक पहुंचाने का माध्यम है। तीसरी मूक ध्वनि नीरवता की ध्वनि है। जबकि व्यक्ति उस नीरवता की गहराई में डुबकी लगाता है तो वह अपनी आत्मा की ध्वनि, ब्रह्माण्ड की आदि ध्वनि 'ॐ' को श्रवण करता है जो प्राण से उत्पन्न होती है। यह प्राण के स्पंदन समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। उस ध्वनि को सुनने के लिये व्यक्ति को अपने अस्तित्व के आधार के अति समीप होना पड़ता है। इसीलिये उपनिषद का नाम सार्थक है। यह तुमको समीप आने का आह्वान करते हैं, झील की तली तक गहराई में डुबकी लगाने की प्रेरणा देते हैं। उप का अर्थ समीप, निषद् का अर्थ बैठना होता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

जाग्रो ग्रौर निकट ग्रासन ग्रहण करो जिससे जगदात्मा की वाणी को ग्रात्मा सुन सके। 'ॐ' वेद और उसकी शिक्षाग्रों का सार है। गीता कहती है "ॐ तत्सत्"। तत् वह, सत् ग्रस्तित्व, 'ॐ' वही एक। तत् का ग्रर्थ पार्थिव जगत् तो मैं से पृथक् है; जिसका अनुभव इन्द्रियों के माध्यम से होता है। सत् ग्रर्थात् 'है' यही 'है' यह ! जब तुम तत् को है या सत् के स्थान पर स्वीकार करते हो तो वह 'यह' हो जाता है। फिर यह बाह्य पदार्थ न रहकर स्वयं कर्त्ता-कर्म के एकत्व का प्रतीक बनकर 'ग्रो३म्' शब्द के द्वारा व्यक्त होता है।

ग्रविकसित बुद्धि के कारण ही ग्रन्तर या भेद का ग्रनुभव प्रतीत होता है। समस्त विश्व में एक ही सूर्य देखा जाता है, माना जाता है और पूजित होता है। तुम ग्रमरीकन सूर्य, ग्रनंतपुर का सूर्य या पुट्टापर्ती के सूर्य का पृथक्-पृथक् उल्लेख नहीं करते हो। वह तो सभी के लिये एक ही है। इसी प्रकार संसार भर के बच्चे चांदनी में खेलते हैं, ग्रौर चन्द्रमा का स्वागत करते हैं। क्योंकि बच्चे चाहे जहां विचरण करें चन्द्रमा उनके साथ बना रहता है। सूर्य ग्रौर चन्द्रमा इतनी दूर ग्राकाश में स्थित रहकर भी सभी की पूजा, सम्मान ग्रहण करते हैं। भगवान् इतना ऊँचा इतनी दूर है कि वह सभी के लिये एक बना हुग्रा है। जब तुम अपने ग्रौर मेरे ईश्वर के सम्बन्ध में तर्क करते और झगड़ते हो ग्रौर कहते हो कि 'वह' ग्रनेक है, इस प्रकार तो तुम भगवान् का ग्रपमान करते हो और उसकी महिमा, ऐश्वर्य का स्तर नीचा करते हो।

जब तुम अन्तर को बहुत तूल देते हो तो घृणा, क्रोध, द्वेष ग्रौर ईर्ष्या के उद्गार निकलने लगते हैं, दौड़ पड़ते हैं ग्रौर तुम इनसे ग्रभिभूत हो जाते हो। क्रोध के ग्रावेश में रक्त मस्तिष्क की ग्रोर दौड़ने लगता है। शरीर का तापमान बढ़ जाता है, रक्त की संरचना में ग्रन्तर ग्रा जाता है; इसमें विजातीय मल इतनी मात्रा में उत्पन्न हो जाता है कि उससे स्नायुजाल को हानि पहुंचती है ग्रौर तुम्हें समय से पूर्व ही बुढ़ापा आ घेरता है। एक माँ ग्रपने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शिशु को स्तन्य पान करा रही थी। एकाएक वह अपने पड़ोसियों से उलझ पड़ी। झगड़ा भयंकर रूप धारण कर गया। अपनी अश्लील गालियों की बौछार करते हुये वह बच्चे को गोद से उतारना भूल गयी। अपद्रव्य मिला दूध बच्चा पीता रहा, जब क्रोध की ज्वाला शाँत हो गयी तो मां को पता चला कि वह तो एक शव को छाती से चिपकाये हुये है। जिस इच्छा से तुम्हारी आसक्ति सीमातीत होतीं है उसी से क्रोध और विनाशकारी पश्चाताप भी उत्पन्न होता है। इससे रहित हो जाओ और तुम चिर-युवा रहोगे। जो आनन्द आत्मा से विकीर्ण होता है उससे ज्वर और जरा दोनों ही नष्ट होते रहते हैं।

राम ने वशिष्ट से यह शिक्षा ली (अवतार की यह लीला थी कि गुरु को महत्व देने के लिए वशिष्ट से मोक्ष प्राप्ति का उपाय सीखा) कि इच्छाओं को जीतने की क्या विधि है? तत्पश्चात् निर्विकार भाव से वन को प्रस्थान करके अपनी आन्तरिक शान्ति को प्रदर्शित करके दिखा दिया कि उन्हें राजतिलक और बनवास की आज्ञा से रंचमात्र भी हर्ष-विषाद नहीं हुआ। राम का अर्थ प्रेम से उत्पन्न प्रसन्नता है। वे पशु, पक्षी, देव, दानव सभी को समान रूप से प्रेम करते थे। उन्होंने विश्व को यह सिद्ध करके दिखा दिया कि भगवान् उनकी रक्षा करता है जो उस (भगवान्) के बच्चों को प्रेम करते हैं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

७९ अनिवार्य कर्तव्य

(प्रशान्ति निलयम्, २३-२-१९७१)

प्रातः कालीन उदीयमान सूर्य की किरणें कलियों को सुगंधित सुन्दर पुष्प के रूप में खिलने को प्रेरित करती हैं। आज वे तुम्हारे अन्तर के दैवत्व को प्रेरित करती हैं कि तुम भी एक सुगंधित, शुद्ध, पवित्र प्रयास में लग जाओ। आकाश और पृथ्वी स्वर्णिम आभा से दीप्त हो उठते हैं और हमें "हिरण्यगर्भ" का स्मरण कराते हैं; जिससे यह अखिल ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ है। इस देश की परम्परा के अनुसार यह एक पवित्र दिवस है। यह अनन्त शताब्दियों से मनाया जाता है, सम्मानित किया जाता है। परन्तु आज के युग में तो लोग इसका महत्व सुनकर और उसी तरह कर दूसरों को तोता रटंत करके दोहरा देने से ही संतुष्ट हो लेते हैं। वास्तव में महत्वपूर्ण तो उस, आनन्द का स्वयं अनुभव करना होता है कि जिसके लिये आज के दिन की महिमा है। जिन्हें आत्म-स्फुरण होती है और जो उसके लिये तैयार होते हैं उन्होंने अवश्य ही अनुभव किया होगा कि आज के निराहार व्रत और जागरण से निश्चित फल अवश्य ही प्राप्त होते हैं। परन्तु, वास्तव में व्रत करने वाले नगण्य हैं; वे भी अपने हर्षातिरेक को गुप्त ही रखते हैं; इसीलिए सांस्कृतिक पर्वों में निष्ठा और विश्वास की इतनी अवनति है; अब तो लोग व्रतों की सत्यता को भी चुनौती देने लगे हैं।

जो लोग देशाटन करते हैं उन्होंने विशाल जनसमुदायों को मंदिरों में, भजन मंडलियों के पीछे, नाम संकीर्तन करने वाले दल, जहाँ कि भगवन्नाम की महिमा प्रचारात्मक उत्साह से गायी जाती है और यह सब कृत्य किसी आदरणीय व्यक्ति की अगुआकारी में, जोकि भगवान् का मार्ग दिखाने और प्रचार करने

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

का दावा करते हैं, किया जाता है, में देखा है; वे इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यह पुण्य भूमि धर्मात्मा लोगों का देश है जो कि तीर्थ यात्रा करके दैवत्व प्राप्त करने में संलग्न हैं। परन्तु, यह सब थोथे और खोखले कृत्य हैं, रिक्त अभ्यास है, यह प्रदर्शनात्मक सैर-सपाटा या पर्यटन है; तीर्थयात्री बाज़ारू सौदा-सलफ क्रय करने में अधिक रुचि लेते हैं चाहे मंदिर हो या बाज़ार हो, उन्हें धर्म द्रोही भगवान् द्रोही अपनी आदतों के सुधारने में कोई उत्साह या रुचि नहीं होती है। वे ऐसी आदतों से चिपके रहना ही पसंद करते हैं। उन्हें भगवान् के मौलिक सिद्धान्त का भी ज्ञान नहीं होता है, और वे इस ज्ञान को प्राप्त करने के भी इच्छुक नहीं होते क्योंकि इसके लिए अनुशासन और संयम का कठिन मार्ग चलना पड़ता है। दैवी तत्व के मौलिक सिद्धान्तों के ज्ञान के बिना, सभी व्रत, उपवास और जागरण नक़ल, अभिनय, दैनिक यान्त्रिक चर्या के समान है; इनमें केवल समय और शक्ति का अपव्यय ही होता है। सबसे उत्तम बात तो तब होगी यदि आज इस महाशिवरात्रि को तुम केवल अपने को इस आधार भूत सिद्धान्त में दृढ़ कर लो; क्योंकि यह रात्रि आत्म-साक्षात्कार का प्रभात लाने वाली है।

आज इस महाशिवरात्रि को तुम अपनी चेतना में यह बात अच्छी तरह से दृढ़ कर लो चूंकि ईश्वर जीवन है, इसलिए प्रकृति जीवित है। चूंकि भगवान् शाश्वत है इसीलिए प्रकृति भी आद्यंतहीन प्रतीत होती है। प्रकृति तो भगवान् का ही प्रतिबिम्ब है। वही व्यवस्था, उद्देश्य, सक्रियता के रंग का पुट इस जड़ प्रकृति में देता है। बिना उस प्रेरक शक्ति के प्रवृत्ति शक्तिहीन और असहाय होती है। व्यक्त जगत तो वास्तविक चरमतत्व का बाह्य प्रतिबिम्ब मात्र है। स्वयं ईश्वर भी ब्रह्म का, जोकि सभी की चेतना का मूल कारण है, प्रतिबिम्ब है। शिवरात्रि हमें इस मौलिक सिद्धान्त के सीखने की प्रेरणा देती है और इस ज्ञान के प्रकाश में अपना जीवन सुधारने का उत्साह प्रदान करती है।

भागवान् की कृपा, बौद्धिक व्यायाम तर्क और शास्त्रार्थ के द्वारा अथवा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

योग द्वारा शरीर को तोड़-मरोड़ करने से या तपस्या द्वारा शरीर को सुखा डालने से नहीं प्राप्त होती है । केवल प्रेम से ही यह प्राप्त की जा सकती है; वह प्रेम जो प्रतिदान की उपेक्षा नहीं करता है, प्रेम जो लेन-देन की सौदेबाजी से रहित हो, प्रेम जो सभी जीवधारियों के प्रति, उस भगवान् के प्रति, जो सभी को प्रेम करता है; भेंट के रूप में अर्पित किया जावे, वह प्रेम जो अडिग हो । विघ्न-बाधायें चाहे जैसी विकराल और शक्तिशाली हों, उनपर केवल प्रेम ही विजय प्राप्त कर सकता है । पवित्रता से बढ़कर कोई शक्ति प्रभावकारी नहीं होती, प्रेम से बढ़कर कोई आनन्द अधिक तृप्तिदायक नहीं होता है, भक्ति से बढ़-कर कोई प्रसन्नता पौष्टिक नहीं होती है, भगवान् की शरणागति प्राप्त होने से बढ़कर कोई विजय अधिक प्रशंसनीय नहीं होती है ।

जिस वेदान्त की प्रशंसा इस देश के सभी मुमुक्षुओं और ऋषियों ने की है, उसकी यही शिक्षा है कि प्रेम के द्वारा जो आनन्द प्राप्त किया जाता है वह सर्वश्रेष्ठ प्रेम का सर्वोत्तम उपहार होता है । वेदान्त के दर्शन को प्रायः लोग गलत समझ बैठते हैं । यह न तो किसी महान विशाल ग्रन्थ का अथवा प्राणायाम विधि का अध्ययन है, कि किस नथुने से कितनी मात्रा में वायु अन्दर ली जावे या बाहर निकाली जावे । न कुत्ते की तरह भोजन या गीदड़ की तरह सोना जैसी कि कहावत कही जाती है । (बिना किसी घर मकान की व्यवस्था किये निरुद्देश्य भोजन की खोज में निरंतर भटकना)। वेदान्त का आदेश सदाचारी, संतुलित और सत्याचरण के जीवन के लिए है । वेदान्त का सुन्दर नाम धर्मान्ध और मूर्ख व्याख्याकारों द्वारा विकृत किया गया है । वेदान्त के स्वयं-सिद्ध सिद्धान्तों की मनमानी व्याख्या करके वे स्वयं गलत अर्थों के जंगल में भटक गये हैं । जहां सब कुछ स्पष्ट था वहाँ उन्होंने संदेह और संशय उत्पन्न कर दिये हैं इसीलिए लोगों की निष्ठा और श्रद्धा आध्यात्मिक संयम-नियम से उठ गयी है । वेदान्त तो असीम प्रेम है, वह उस प्रेम की दार्शनिक पृष्ठभूमि है ।

प्रेम की जाति, धर्म, आर्थिक स्थिति या बौद्धिक उपलब्धियों के आधार

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

पर सीमित मात्रा में 'राशन' की तरह नाप-तौल कर नहीं देना है। इसे तो परिणाम की चिन्ता बिना किये स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होना चाहिये; क्योंकि प्रेम करना तो व्यक्ति का स्वभाव है, उसे शुष्क, मरुस्थल और पर्तीभूमि की भूमि को प्रेम की जलधारा से सींच कर उर्वर ग्रौर उपयोगी भूमि में बदल देना है। जिस किसी हृदय में रिक्तता हो उसे प्रेम ग्राप्लावित करके प्रसन्न होता है कि वह रिक्तता प्रेम ने पूर्ण कर दी। प्रेम रोका नहीं जाता है, यह तो बिना किसी दिखावे या धोखाधड़ी के प्रचुर मात्रा में भेंट किया जाता है। इसे ग्रसत्य या चापलूसी या भय के ग्रावरण को धारण करने की ग्रावश्यकता नहीं होती। प्रेम के तन्तु केवल भगवान् के वस्त्रों से ही लिपटते हैं। यह समझता है कि प्रत्येक हृदय में भगवान् ग्रपनी असीम, ग्रलौकिक, दिव्य प्रभा से विराजमान है, इसलिये यह अपने ग्रास-पास के व्यक्तियों के हृदय की अन्तरतम गहराइयों में प्रवेश करके भगवान् के ग्रासन को खोजता है जिससे कि यह वहां खिल सके। यही वास्तविक भक्ति है। जब तन्तु बाह्य जागतिक पदार्थों से लिपटते हैं तो वह 'मुक्ति' होती है भक्ति नहीं। यह निर्देशन ही कठिन है, महत्वपूर्ण है।

जब प्रम ऐसे पदार्थों की ओर निर्देशित होता है जो इन्द्रियों की ग्रथवा शारीरिक प्रसन्नता को देने वाले होते हैं तो यह उस दशा में सूख जावेगा जबकि उन पदार्थों से ग्राशा के ग्रनुकूल आनन्द नहीं प्राप्त होगा। जब केवल लाभ से प्रेम है तो हानि ग्रवश्य ही इसे खोखला कर देगी। ग्रसंतोष उन स्रोतों को सुखा देगा जबकि तुम सांसारिक संतोष के लिये प्रेम करोगे। चाहे करोड़ों निराशायें भी इकट्ठी होकर तुम्हें संकट में डालें तो भी प्रेम का त्याग मत करो, इसे प्रेम के उद्गम केन्द्र पर ही एकाग्र कर दो, वही तो प्रेम का सर्वश्रेष्ठ सर्वोच्च केन्द्र स्थान भगवान् का है। चाहे जैसी बाधा हो, ग्रौर तुम्हें भगवान् पर ग्रपनी पकड़ ढीली करने के कितने ही प्रलोभन दिये जावें फिर भी भगवान् से ग्रपना दृढ़ संबंध बनाये रखो, तूफान के बाद सदा एक नीरव शान्ति ग्राती ही है। गर्म ऋतु की एक कठोर लहर के बाद सुखदायी फुहार

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

में वर्षा आती ही है। प्रेम सभी कार्यों को आनन्द और शान्ति से भर देता है। प्रेम क्षुद्रातिक्षुद्र को भी महानता दे जाता है। स्वयं अपने को भी इसलिये प्रेम करो कि वहाँ भी भगवान् का निवास है; दूसरों को भा इसीलिये प्रेम करो कि उनमें भी भगवान् का निवास है जो कि उन्हीं के माध्यम से बोलता और क्रिया करता है।

यही वह कठोर पृष्ठभूमि है जिस पर तुम अपनी प्रसन्नता का भवन निर्माण कर सकते हो; दैवत्व की यह स्वीकृति है कि वही तुम्हारे अन्दर प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य करती है। इस समय मेरे सामने हजारों ही हैं, तुम अपने को भक्त कहते हो; तुम्हारे हृदय भक्ति और प्रेम से पूर्ण हैं। तुम उंगलियों से माला फेर रहे हो और जिह्वा से भगवान् का नाम लेते हो, तुम प्राणायाम और यौगिक आसन भी करते हो, परन्तु जब तक तुम सभी के प्रति सम्मान, सभी के प्रति पूज्य भावना, और निस्वार्थ प्रेम नहीं व्यक्त करते हो तो तुम इस देश की अनुपम परम्परा का अपमान करते हो। क्रोध, कामुकता आदि के वेग, क्षोभ और चिन्ता से मानव प्रकृति का स्तर गिर जाता है। ये तो घृणा, लोभ, द्वेष या ईर्ष्या से उत्पन्न होते हैं, इन्हें केवल प्रेम से ही अप्रभावी बनाया जा सकता है। जब तुम्हें अपने सबसे अधिक प्यारे निधि के रूप में प्रेम का मूर्तिमान स्वरूप यहां प्राप्त है तो तुम अपने हृदयों में घृणा, दलबंदी, भय और संदेह की तरंगों को क्यों प्रवेश करने देते हो? इन हृदयों को क्रूरता और दुष्टता के ज्वालामुखी क्यों बनने देते हो जबकि तुम सुगंधित पुष्पों की हरी-भरी घाटी की तरह मुस्करा सकते हो? जब तुम्हारे हृदय में भय है तो बाहर भी तुम्हें उसी भय की प्रतिक्रिया द्वारा स्वागत प्राप्त होगा। जब तुममें घृणा है तो जिससे भी तुम्हारा सम्पर्क होगा उसी से इसकी प्रतिध्वनि सुनने को मिलेगी। जो भाव तुम अपने हृदय में लिये हुये होगे वे ही बाहर के वायुमंडल में गूंजते हुये सुनाई देंगे। 'यद् भावम् तद् भवति' जैसा स्वयं अनुभव करते हो वैसे ही बनोगे। बनना या बिगड़ना तुम्हारे अपने मन की करतूत है। जब तुम किसी को बुरा या दुष्ट कहते हो तो तुम अपनी दुष्टता या पाप को

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ही मुखरित कर रहे हो। तुम्हारी अपनी अपवित्रता ही उस पर यह संदेह उत्पन्न करती है। कोई किसी पर निर्णय नहीं दे सकता है क्योंकि जब दूसरे का निर्णय किया जाता है तो तुम्हारी भर्त्सना स्वयं हो जाती है।

तुम पूछ सकते हो कि जब व्यक्ति का शरीर भगवान् का मन्दिर है तो यह कैसे संभव हो पाता है कि कोई दुष्ट या दुराचारी हो जाय। उसके शब्द कठोर और आचरण निन्दनीय हो सकते हैं, उसका व्यवहार विरोधी होवे फिर भी वह स्वयं "दिव्य" ही है। क्योंकि, उसे कोई शरीर या नाम रूप मात्र मान कर मत निर्णय करो अथवा एक दुष्ट मन जिसमें तीव्र उद्वेग और भावनायें या संकल्पों और निर्णयों सहित तर्कों का पुलिन्दा है, मत मानो वह तो आत्मा है; जगदात्मा मैं व्यष्टि में मैं प्रतिबिम्बित है वह पवित्र, शान्त, आलोकित और विस्तृत है ठीक उसी मैं की तरह कि जिसकी वह एक तरंग मात्र है। प्रत्येक को इसी प्रकार समझने का दृष्टिकोण स्थिर कर लो। तुम्हारे मन के पक्षपात और पूर्वाग्रह तभी नष्ट हो सकेंगे। उसमें की 'मैं' और तुम्हारे में की 'मैं' में सर्वसमता है क्योंकि दोनों अपनी सत्ता, ज्ञान और आनन्द उसी एक निरपेक्ष परमात्मा से प्राप्त करती हैं। यदि अपने चतुर्दिक चलते-फिरते शरीर-दर्पणों में भगवान् के प्रतिबिम्बों का सम्मान करने के अवसर पर तुम्हारी भक्ति तुम्हारा साथ नहीं दे पाती है, जब तुम अपने सामने विद्यमान लोगों के नेत्रों में झाँकते हो या उनके सामने दण्ड प्रणाम करते हो जो कि भगवान् की ही मूर्तियाँ हैं तो फिर तुम उस भगवान् के भक्त होने का दावा कैसे कर सकते हो कि जिसकी यह धुंधली अधूरी प्रतिध्वनियाँ हैं ? मैं यही साधना तुम्हारे लिये निर्धारित करता हूं।

बिना इस साधना में दृढ़ विश्वास के और इस साधना के हार्दिक अभ्यास के यदि तुम केवल मिल बैठ कर, दल बना कर, (भगवान् को खाद्य, नैवेद्य अर्पित करके) प्रसाद का मनमाना आनन्द लेते हो; और कोई ऐसा अवसर जब प्रसाद बांटना संभव बना सकते हो तो नहीं चूकते हो; चाहे वह कुछ देर का नाम संकीर्तन और भजन ही क्यों न हो। मुझे कहना पड़ता है कि तुम्हारे

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रयत्न सब बेकार जाते हैं। अपने हृदयों को विस्तृत करो, दृष्टिकोण विशाल बनाओ, स्वजनों का वृत्त बड़ा करो, उसमें अधिकाधिक मानवों को प्रवेश देते जाओ; उन्हें अपनी हृदय की वेदी पर आसीन करो। प्रेमपूर्ण पूजा भाव से उनका सम्मान करो। सर्वोच्च शिखर पर बुद्धिमत्ता, दयालुता में परिणत हो जाती है, क्योंकि सहानुभूति से ही तुम दूसरे के हृदय में प्रवेश कर सकते हो; और उसे पूर्ण रूप से समझ सकते हो; तुम बहानेबाजी, परम्परा, रीति-रिवाज और विद्वत्ता के पर्दे में छिप जाते हो, तुम शिष्टाचार और सभ्यता और लोगों के फैशन की ओट ले लेते हो जिन्हें लोग शेष दुनिया की दृष्टि से अपनी पीड़ा और अज्ञान को छिपाने के लिये धारण किये होते हैं। चरित्रों की इस विविधता के पीछे एकता को खोज लेना ही सच्ची बुद्धिमत्ता है।

तुम शिवरात्रि को एक महान अवसर मानते हो, एक पवित्र त्यौहार मानते हो; कारण कि इस शिव शरीर से शिवलिंग प्रकट होता है और शास्त्र कहते हैं कि ब्रह्मा और विष्णु इसकी महिमा को पूर्णतया जानने में असफल रहे। कुछ छिछले ज्ञान वाले विद्वान कहते हैं कि आज के दिन ही शिवजी उत्पन्न हुये थे, मानो कि सच्चिदानन्द स्वरूप की भी आदि और अंत होते हैं। कुछ कहते हैं कि उन शिवजी ने आज के दिन तपस्या प्रारंभ की थी; कुछ लोगों का विचार है आज का दिन उनकी तपस्या का उपसंहार था। यह सब उस दैवत्व को मानवीय स्तर पर उतार लाने का प्रयत्न है। इसलिये कि मानव उसके मुखड़े का दर्शन पा सके और उस (भगवान्) के सेवक या दास के रूप में जीवन अर्पण कर सके।

भगवान् सर्वशक्तिमान है, भगवान् सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है। इतने महान असीम निरपेक्ष ब्रह्म की उपासना के लिये मनुष्य २४ घंटों में से कुछ मिनट की साधना एक छोटी सी मूर्ति या चित्र या कल्पित चित्र के सामने करके संतुष्ट हो जाता है। यह तो वास्तव में हास्यास्पद है और व्यावहारिक रूप से निरर्थक है। जब तक बदन में श्वास है उसकी पूजा करते रहो, जब तक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चेतना साथ देवे उसी का चिन्तन करो। भगवान् के अतिरिक्त कोई विचार मन में न आवे; उसके आदेश जानने के अतिरिक्त कोई लक्ष्य न रखो; उसके आदेशों के पालन के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य न करो। आत्म समर्पण का अर्थ तो यही होता है। अपने को उसी के हवाले कर दो।

जब तुम किसी यात्रा पर जाने की इच्छा करते हो तो गाड़ी की चाबी गाड़ी चलाने वाले को देकर निश्चिन्तता और सुरक्षा की भावना से गाड़ी में पिछली सीट पर बैठ जाते हो। उस समय तुम्हें मार्ग में किसी बाधा या दुर्घटना की आशंका नहीं होती। तुमने उस व्यक्ति के हाथ, बुद्धि, मुस्तैदी और दक्षता को अपना जीवन सौंप दिया होता है। कुछ लोग पूर्णतया आत्म समर्पण नहीं करते हैं; वे अधिक अहंकारी होते हैं इसीलिये समर्पण करने में असमर्थ होते हैं। वे रह रह कर उसे आदेश, सुझाव, सलाह गाड़ी के चलाने के संबंध में देते रहते हैं; उससे यात्रा, कार की दशा संबंधी, मार्ग संबंधी, प्रश्न पूछते हैं; संदेहों का निवारण करते रहते हैं। आश्चर्य कि इन सबसे वे उसे भी संदेह और अनिश्चय की दशा में धकेल कर उसका आत्म विश्वास डगमगा देते हैं; यहाँ तक कि उनकी गाड़ी दुर्घटना में फंस जाती है। दृढ़ रहो और विश्वास रखो और अपने लक्ष्य पर सुरक्षित पहुंचो। जीवन कार है, तुम्हारा हृदय कार की चाबी है और भगवान् ही चालक या सारथी हैं। उसी के प्रति समर्पण करके आगे की चिन्ताओं से मुक्त हो जाओ। सुरक्षित यात्रा करते हुये प्रसन्नता से लक्ष्य तक पहुंच जाओ।

ऐसे बहुत लोग हैं जो कहा करते हैं कि उन्होंने अपने जीवन का सब भार मेरे हाथों में सौंप दिया है। वे इसके लिये 'अर्पण' शब्द का प्रयोग किया करते हैं। वे घोषणा करते हैं कि उन्होंने तन, मन, धन सभी कुछ अर्पण कर दिया है। परन्तु फिर भी कहते हैं कि 'मैंने किया' 'मैं अनुभव करता हूँ' 'मैं सोचता हूँ' 'मैं इसे पसंद करता हूं' 'मैं इसे नहीं पसंद करता' इत्यादि। यह 'मैं' अपना फन इसलिये उठाता है कि इसे कुछ सम्मान और प्रशंसा प्राप्त हो जावे। तो

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यह कहना कि तुमने समर्पण कर दिया है एक घोर असत्य है। यह तो निरी झूठ है। अर्पण तो एक ऐसा शब्द हो गया है जिसे बिना समझे ही इधर-उधर प्रयोग कर लिया जाता है, इसका न कोई अर्थ होता है न उद्देश्य, यह उन लोगों को धोखा देने के लिये होता है जो इसकी सत्यता का पता लगाने के लिये गहराई में जाना नहीं चाहते। जिस वस्तु पर तुम्हारा अधिकार नहीं है उसे कैसे समर्पण कर सकते हो ? तुम तो अपने मन के दास हो, अपने काम, क्रोधादि भावों के चेरे हो, अपने पक्षपात और मनोवृत्तियों के अनुसार चलने वाले हो फिर भी तुम्हें यह कहने का साहस होता है कि तुमने अपना मन, विचार, योजनायें भगवान् के हाथों में सौंप दी हैं ! अभी तो तुम मन की पकड़ या फन्दे से निकलने के लिये छटपटा रहे हो, उपर्युक्त मनोभावों की जकड़ से बचना चाहते हो फिर तुम मुझे अर्पण कैसे और क्या अर्पण करते हो ? नहीं, तुम ऐसी बहादुरी की शेखी मत मारो, ऐसा बलिदान और भक्ति अभी तुममें नहीं जागृत हुये हैं, तो क्यों घोषणा करते हो। मुझे ऐसी घोषणाओं की न कोई आवश्यकता है और न मैं ऐसी घोषणायें कराना चाहता हूँ। इतना ही पर्याप्त हैं कि तुम यह विश्वास कर लो कि भगवान् सर्वत्र सदव रहता है और तुम स्वयं भी भगवान् से पृथक् कुछ भी और नहीं हो। जब तुम स्वयं भगवान् हो तो फिर किसको क्या समर्पण करना है ? इस पर गंभीरता से विचार करो और उस आत्मज्ञान को प्राप्त करो।

संसार के कोने-कोने से यहाँ हजारों व्यक्ति एकत्रित हुये हैं। तुमने यहाँ अनेक असुविधाओं को सहा है, कठिनाईयाँ और दुख भी झेले है कि तुम्हें भगवान् की कृपा प्राप्त हो सके। तुम सबके लिये यह यात्रा प्रेम, सहिष्णुता, साहस और धैर्य का एक पाठ पढ़ाने वाली सिद्ध हुयी है। तुम्हारी मौलिक वृत्ति प्रेम करने की है उसी ने तुम्हें प्रेम और शान्ति के उपभोग के लिये समर्थ बनाया है। प्रेम ने ही तुम्हें पूरा-पूरा सभी के प्रति आस्तिक बना दिया है। तुम्हें नास्तिक कहना ही पड़ेगा यदि तुम्हारे हृदय में प्रेम नहीं है, फिर तुम्हारी धार्मिकता चाहे जितनी प्रदर्शनात्मक या प्रचारात्मक क्यों न होवे। यदि तुम

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सोचते हो कि व्रतों, उपवासों और दावतों या स्तुतियों को गा-गाकर या पुष्पार्पण इत्यादि से तुम भगवान् की कृपा पा सकते तो हो तुम भयंकर गलती करते हो। प्रेम एक अनिवार्य कर्तव्य है।

गीता कहती है कि तुम 'अद्वेष्टा सर्वभूतानाम्' सभी प्राणियों से द्वेष न करने वाले बनो; परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है। एक दीवाल भी तो किसी प्राणी से द्वेष नहीं रखती। परन्तु, क्या यही आदर्श है? नहीं, तुम को तो धनात्मकरूप से सभी प्राणियों को प्रेम करना ही चाहिये, सक्रिय होकर प्रेम, पूर्ण कार्यों में लग जाओ। केवल इसी प्रकार से तुम अभीष्ट भगवत्कृपा पाने के पात्र बन सकोगे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८० आजीवन भजन

(महाशिवरात्रि, प्रशान्ति निलयम् २४-२-१९७१)

पिछली रात्रि भर तुमने भजन गाये और जागरण किया यह सब महाशिवरात्रि के उत्सव का एक कार्यक्रम था। भजन के कार्यक्रम के समापन के रूप में यह आरती की जाती है; परन्तु यह तो बाह्य, सामूहिक और मुखर कार्यक्रम है; न कि उस आन्तरिक एकान्तिक शान्त भजन का समापन है; वह तो आजीवन तुम्हारी श्वास के साथ ही जारी रहेगा। वेदान्त तुमसे इन्द्रियों और मन के कार्यों का अन्वेषण करने का आग्रह करता है जोकि अन्तरात्मा को प्रतिबिम्बित करने की इसकी क्षमता पर निर्भर करता है। मानव के ज्ञानार्जन के सभी आन्तरिक मंत्र और उसका अन्तर्साक्षी उसमें उच्चतम बुद्धिमत्ता के उन्नायक होते हैं; यद्यपि अज्ञान के कारण उनका दुरुपयोग किया जाता है; परिणामतः मनुष्य संशयग्रस्त और उसकी उन्नति अवरुद्ध हो जाती है। जबकि मानव इस चिरंतन सत्य से अवगत है कि वे अविनाशी आत्मा हैं और अस्थाई रूप से कुछ कोषों के अन्दर एक जीर्णशीर्ण मकान में निवास करते हैं जिसका कुछ नाम और आकार है, वे कोषों और मकान के कुछ भी हो जाने पर, निर्विकार बने रहते हैं। प्रह्लाद एक ऐसे ही ज्ञानी थे। कितने ही क्रूर और अमानुषिक अत्याचार उस पर किये गये परन्तु, यह सदा शान्त क्षोभरहित बने रहे; क्योंकि वह नारायण में अधिष्ठित थे, वही उनका वास्तविक सत्य था।

अर्जुन को यह स्थिति प्राप्त करने में बहुत समय लगा। इसका तो भगवान् कृष्ण के महाप्रयाण के द्वारा उन्हें नाटकीय ढंग से बोध कराया गया तो उनकी समझ में आया। जब अवतार के कार्य का समापन हो गया और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अर्जुन को यादवों की स्त्रियों, बच्चों व वृद्धों को द्वारिका से हस्तिनापुर सुरक्षित पहुँचाने का भार सौंपा गया; क्योंकि द्वारिकापुरी समुद्र में समा गयी और कृष्ण के न रहने पर वे लोग एक प्रकार से अनाथ ही हो गये थे। अर्जुन इस उद्विग्न दल को असभ्य जातियों से बसे हुये प्रदेश से होकर ले चले क्योंकि उन्हें अपने उस गाण्डीव धनुष पर, जिससे उन्होंने कुरुक्षेत्र का भयानक संग्राम ११ अक्षौहिणी सेना और उसके महाबली सेनापतियों से जूझ कर विजय किया था, बहुत भरोसा था कि वे सुरक्षित और सफलतापूर्वक पार पहुंच जावेंगे। परन्तु जब कुछ बर्बर जत्थे उनके दल पर टूट पड़े, अर्जुन अपने धनुष पर डोरी भी न चढ़ा सके ! वे बाणों को मंत्राभिषिक्त करना भी भूल गये जिससे कि वाण प्रचण्ड होकर लक्ष्य भेद करते थे। उन्हें पराजय का मुंह देखना पड़ा, उन स्त्रियों का, जिनकी रक्षा की प्रतिज्ञा अर्जुन ने की थी, उसी के सामने अपहरण किया गया। जब कृष्ण का अवतार उद्देश्य पूरा हो गया तो अर्जुन का उद्देश्य भी समाप्त हो गया था। अब उसमें कोई जीवन नहीं रह गया था। कृष्ण ही उसके प्राण थे, उसकी शक्ति धनुर्विद्या उसकी दक्षता, उसकी शूरता और सभी कुछ वे ही थे। यह सत्य अर्जुन को पराजय के द्वारा ही विदित हुआ; न कि विजयोल्लास के गान से।

मन तो तुम्हारे साथ कितने ही छल करता है, प्रमुख छल यही है कि वह अहंकार को पुष्ट करके अन्तर्शक्ति और उत्प्रेरक को छिपा देता है। तुमने यमराज के दरबार के लेखाधिकारी चित्रगुप्त का नाम सुना होगा; वह प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा किये गये शुभाशुभ कार्यों का लेखा एक पत्रिका में अंकित करते जाते हैं। वे व्यक्ति के मृत्यु के पश्चात् यह पत्रिका दरबार में जमा नाम के स्तंभों का जोड़ लगाकर और शेष में क्या (शुभ या अशुभ) कितना बचा इसका चिट्ठा तैयार करके मनुष्य के पुरस्कार या दण्ड व्यवस्था के लिये प्रस्तुत करते हैं। यमराज जो दण्ड देते हैं वह पाप को निवृत्त करने वाला और शिक्षा देने वाला भी होता है। चित्रगुप्त का कार्यालय मानव के मन में ही सदा सावधान रह कर कार्य करता है। चित्रगुप्त शब्द का अर्थ 'गोपनीय चित्र'

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

होता है। वह इतना करते हैं कि मनुष्य की सभी गुप्त प्रेरणाओं को, जिनके वशीभूत होकर क्रिया की जाती है, चित्र के समान प्रकट करते हैं, वे चेतावनी के संकेतों को भी अंकित करते हैं और उन अवसरों को भी लिखते जाते हैं जबकि उपर्युक्त चेतावनियों की उपेक्षा की गई है अथवा उनका जान-बूझ कर उल्लंघन किया गया है। तुम्हें मानवीय या पाशविक वृत्तियों के विरुद्ध दैवी चेतावनी प्राप्त हो तो उस पर ध्यान दो और उसका पालन करो।

भजन के द्वारा तुम मन को शाश्वत मूल्यों के महत्व को समझने के लिये प्रशिक्षित कर सकते हो। मन को भगवान् की महिमा में मग्न रहने की शिक्षा दो, क्षुद्र सुखों की दिशा से मन को हटा लो। पूजा, भजन, व्रत से इतना ही हो सकता है। भजन से तुममें सत्य का अनुभव, भगवान् जो स्वयं सौंदर्य हैं, के दर्शन की इच्छा का आत्मा के आनंद के आस्वादन की, इच्छा का उद्रेक होता है। यह मानव को अपने अन्तर में डुबकी लगाने के लिये प्रेरित करता है और अपने सत्य आत्मस्वरूप का दर्शन कराता है। एक बार जब अन्वेषण की इच्छा जाग जावे तो पथ सुगम हो जाता है। व्यक्ति को केवल स्मरण कराने की आवश्यकता है कि वह दिव्य है क्योंकि रोग यही है कि उसे यह पहचान ही नहीं रह जाती है। चैतन्य को एक बार तीव्र ज्वर १०५° या १०६° तक चढ़ गया। फिर भी उन्होंने शास्त्रानुमोदित औषधि के अतिरिक्त कुछ भी लेने से इनकार कर दिया। उन्होंने एक ब्राह्मण की चरण-रज मांगी, उसका चरणामृत मांगा! वे लोग केवल ऐसे ब्राह्मण को ला पाये जोकि शास्त्रविहित संयम-नियम का पालन नहीं करता था जोकि ऐसे उच्च कुलीन ब्राह्मण को करना चाहिये; जिसे आत्म साक्षात्कार के आध्यात्मिक मार्ग पर समाज को ले चलने का उच्च, गरिमामय उत्तरदायित्व सौंपा गया हो। परन्तु चैतन्य ने कहा कि उसकी मान्यता के लिये कड़ी छान-बीन न की जावे, क्योंकि कितना ही पतित हो जावे ब्राह्मण फिर भी पवित्र ही होता है। वह उसी परम्परा में से है जिसकी पीढ़ी दर पीढ़ी वेदाध्यन और साधना में संपृक्त

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

रह चुकी हैं। गाय चाहे जैसी दुर्बल, ठठरी मात्र हो, दूध तो उसी से प्राप्त हो सकता है। आवश्यकता तो उसे दाना, चारा और लाड़-प्यार देने की है। इस प्रकार चैतन्य ने ब्राह्मण को समाज में उसके उच्च स्थान का महत्व समझा कर उत्साहित किया कि उसे अपने उच्च आदर्श और परम्पराओं, जिन्हें इतिहास ने ब्राह्मण समाज से संयुक्त कर रखा है, का पालन करना चाहिये। मानव भी एक उच्च भविष्य को लेकर आया है, वह एक पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिये जन्मा है, उसे विशिष्ट गुणों और वृत्तियों से उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिये भगवान् ने उपयुक्त पात्र बनाया है, परन्तु वह इन बहुमूल्य उपहारों की अवमानना कर धूलि में रेंगता है और जन्म से मृत्यु तक ऐसे ही समय बीत जाता है, वह पशु से भी अधम आचरण करने लगा है। भजन जैसे अभ्यास से मन ऊँचा उठता है, व्यक्ति को शाश्वत आनन्द, जो उसी के अन्दर है, खोजने का उत्साह पैदा होता है।

जब मैंने अपनी समिति के सदस्यों के दलों को प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में नगर की गलियों में भगवान् की महिमा को, जोकि उनके नामों में सूक्ष्मरूप से सन्निहित है, गाते हुये जाने का निर्देश दिया तो किसी ने मुझसे प्रश्न किया, "क्या भक्ति में इसकी भी गणना होती है? क्या हमें सबके साथ सड़कों पर उच्च स्वर से गाना चाहिये?" ऐसे प्रश्न झूठे अभिमान से उत्पन्न होते हैं। भजन जोकि नगर संकीर्तन का एक भाग है, गायक को और श्रोता को, दोनों को ही आनन्द प्रदान करता है। यह जीवन के स्पंदनों से वायुमण्डल को शुद्ध करता है, स्वच्छ करता है। यह शिक्षा देता है, प्रेरणा देता है, यह तो पुण्य का आह्वान करता है और सबको सुखी करता है।

जीवन में उतार-चढ़ाव, परीक्षा और संकट की घड़ियों में भी अपने इष्टदेव में आस्था बनाये रखो। आज शुक्ल पक्ष के नवीन चन्द्र दर्शन का दिन है; अब चन्द्रमा क्रमशः बढ़कर पूर्णत्व को प्राप्त होगा; परन्तु ज्यों ही पूर्ण बिम्ब बन पाता है, यह क्षीण होना प्रारंभ हो जाता है; अंत में पूर्णतया

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अदृश्य हो जाता है और तब पृथ्वी पर भी अंधकार छा जाता है, फिर भी कोई निराशा की स्थिति नही आती है, पतली हंसिये की धार के समान ज्योतीत वक्र पुनः लगातार बढ़ता जाता है और एक बार फिर पूर्ण गोलाकार बिम्ब बन जाता है। भाग्य भी इसी प्रकार चन्द्रमा के समान घटता बढ़ता रहता है। कोई भी वस्तु सदा स्थिर या भंगुर नहीं रहती है। भगवान् शाश्वत, निरपेक्ष, अटल होते हैं। मेरा नाम सत्य है, मैं सत्य हूं और चूंकि मैं तुममें से प्रत्येक में हूं, तुम भी शाश्वत सत्य हो। इसमें संशय मत करो और संकट में मत पड़ो। अडिग नेत्र और संशय रहित मन प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करो।

अब तुम सब लोगों को प्रसाद दिया जावेगा, इसलिये शान्त होकर पंक्तियों में बैठे रहो। निस्सन्देह, मेरा तात्पर्य प्रसाद से उस खाद्यपदार्थ से है जो भजन के पश्चात् नैवेद्य के रूप में अर्पित कर वितरण किया जाता है। प्रसाद का अर्थ कृपा भी होता है जो भगवान् से प्राप्त होती है। जबकि वे प्रसन्न होते हैं। मेरी कृपा तो सदा ही तुम्हें प्राप्त है; यह ऐसी नहीं है कि जब-तब दे दी और ले ली जावे। यह तो सदा ही दी जाती है और उस चैतन्य के द्वारा स्वीकार की जाती है जो इसके महत्व को जानते हैं। अपने अचेतन की कृपा स्वयं प्राप्त करो, जिससे वह भगवान् की कृपा को स्वीकार कर ले। जो सदा ही प्राप्य है। भगवान् किसी को वंचित नहीं करता है, यह तुम्हीं हो जो भगवान् को भी नट जाते हो। जब कोई भेंट प्रस्तुत की जाती है, तो तुम्हें एक छोटी सी क्रिया करनी पड़ती है, जिससे कि तुम उसे अर्जित कर सको—तुम्हें हाथ बढ़ाकर ले लेना होता है। यही तो अचेतन की कृपा है; इसे भगवान् की कृपा के महत्व की शिक्षा देकर अर्जित कर लो मेरी कृपा तो तुम्हारे ऊपर तब भी बरसती है, तुम चाहे जहां होओ, और असीम प्रेम ऐसा ही है। मैं यह भी नहीं हिसाब लगाता और जाँच करता हूं कि तुम्हारा अचेतन किस सीमा तक कृपा प्राप्त करने के योग्य हो पाया है। कृपा स्वयं तुम्हें विश्वास और शक्ति प्रदान करेगी; वह बुद्धि और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आनन्द प्रदान करेगी। मैं सदा तुम्हारे हृदय मैं रहता हूं, चाहे तुम जान पाओ या न जानो। द्रोपदी ने द्वारका नाथ श्रीकृष्ण को पुकारा; जब कि उसके देवर ही उसे क्रूरता और दुष्टता से अपमानित करने पर तुल गये थे, इसीलिये भगवान् ने कुछ देर से उसकी प्रार्थना स्वीकृत की। उन्हें द्वारका जाकर हस्तिनापुर लौटना पड़ा जहाँ कि द्रोपदी थी। उन्होंने उसे बतलाया कि वह तो उन्हें अविलम्ब एक सेकेन्ड के अंश में ही पा सकती थी यदि वह "ऐ मेरे हृदय के वासी" कहकर पुकारती; क्योंकि वह तो वहाँ भी रहते हैं जैसा कि और कहीं हैं।

महाशिवरात्रि का पर्व समाप्त हुआ। परन्तु आज का संदेश अभी तुम्हारे व्यवहार, आचरण, विचार और कार्यों में प्रतिफलित होने को शेष है। एक रात्रि भर भजन कर लेने मात्र से संतुष्ट मत होओ। इसे आजीवन भजन बना लो। अन्तर्साक्षी भगवान् की तीर्थ यात्रा में जीवन भर भजन चलता रहे।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८१ भगवान् के अतिरिक्त कुछ नहीं

(प्रशान्ति निलयम् २४-२-१९७१)

वेदान्त की शिक्षा, कि ब्रह्म और जीव एक हैं, ही सच्चा ज्ञान है। बिना इस दिशा में प्रगति किये मनुष्य आनन्द, प्रकाश और शान्ति के अचूक श्रोत से अपने को दूर रख रहा है। इसके बिना वह विविधता का दर्शन करता है और उससे भयभीत होता है, और विविधता के बीच में अपने को पाकर संदेह ग्रस्त हो जाता है। वह प्रेम करता है, घृणा करता है, वह आकांक्षा करता है, ठुकराया जाता है, वह एक सिद्धान्त का निरूपण करता है और दूसरे का खण्डन करता है। वास्तव में वह माया के, मोह के चक्कर में फंस जाता है। जब मोह को जीत लिया जाता है तो मनुष्य सत्य से परिचित होकर स्वतंत्र या मुक्त हो जाता है।

कुरु-क्षेत्र तो भोजन का क्षेत्र है, क्योंकि कुरु का अर्थ भोजन भी होता है। भोजन से तात्पर्य उन सब वस्तुओं से है जो मनुष्य अपने अन्दर ले लेता है, आत्मसात करता है, चाहे वह मुख द्वारा, नासिका द्वारा या इन्द्रियों द्वारा किसी प्रकार से क्यों न हो। यह आहार या अन्न ही व्यक्ति के उद्वेगों, मनोविकारों, भावों और उत्तेजनाओं को गहन रूप से प्रभावित करता है, उत्पन्न करता है। इन्हें तो उचित दिशा में ही निर्देशित किया जाना चाहिये, और भय तथा शोक से मुक्ति की दिशा में उच्चता की ओर निर्देशित करना चाहिये और लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होना चाहिये।

इस प्रकार से क्षेत्र या शरीर को धर्म-क्षेत्र में बदल देना चाहिये जो कि वैराग्य, सद्गुण, सदाचार, सद्वृत्ति का क्षेत्र होता है। तब वह भगवान् सारथी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यह भार संभाल लेता है और मनुष्य मुक्त हो जाता है, शरीर—ब्रह्म क्षेत्र बन जाता है। आत्म साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति की यही जीवन गाथा है।

आत्म साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति आत्मिक आनन्द में मग्न रहता है। वह बाह्य घटनाओं से चिन्तित या क्षुब्ध नहीं होता है। वह अकेले आत्मानन्द के संसार में आनन्दित होकर विचरण करता है। यदि तुम ऐसे किसी व्यक्ति का अनुगमन करो और उससे मार्गदर्शन की प्रार्थना करो, संभवतः वह तुम्हारी ओर दृष्टिपात भी न करे। फिर महापुरुषों का नम्बर आता है। वह लक्ष्य प्राप्त किया हुआ व्यक्ति नहीं होता है परन्तु उस दिशा में बहुत आगे बढ़ चुका होता है, वह जहाँ तक पहुंच चुका है वहाँ तक के मार्ग से सुपरिचित है। इसलिये साधक को वह पूरा-पूरा पथ प्रदर्शन नहीं दे सकता है। अवतार पुरुष तो केवल इसीलिये, मानव जाति का उद्धार करने के लिये आया है। वह तीर्थ यात्रा, उसका मार्ग और गन्तव्य सभी से सुपरिचित है। वह सृष्टि का ईश्वर होता है। उसे अपनी शक्ति का पूरा ज्ञान होता है। वह सभी का त्रिकालज्ञ होता है। वही मार्ग दिखाता है और मोक्ष प्रदान करता है।

मन ही भ्रम, या माया का उद्गम स्थान है। वही भ्रमित करता है और बंधन में डालता है। यदि मन को बुद्धि के आधीन कर दिया जाता है तो वह विश्रृंखलित हो जाता है और अदृश्य हो जाता है और क्षेत्र को प्रकाश (ज्ञान) से भरने के लिये रिक्त कर जाता है और तब "हम और वे केवल वह (भगवान्) ही है" ज्ञान की सत्यता प्रकट हो जाती है। जब तक संसार की विविधता का बोध आता रहे, साधना की, इस दोषपूर्ण दृष्टिकोण को सुधारने के लिये, नितान्त आवश्यकता है।

सुषुप्ति अवस्था में इन्द्रियाँ, मन, कोई कार्य नहीं करते हैं और उस समय व्यक्ति विविधता के बोध से रहित होता है, वह केवल 'मैं' चेतना में डूबा रहता है; कहा जा सकता है कि वह समाधि अथवा आनन्द की दशा में मग्न होता

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है। अन्तर केवल इतना है कि व्यक्ति को इस स्थिति का इतना स्पष्ट ज्ञान नहीं होता है जैसा कि समाधि में होता है। जागृत अवस्था में, ज्ञान होता है परन्तु आनन्द की प्रगाढ़ प्रतीति नहीं होती है। सुषुप्ति में आनन्द रहता है पर ज्ञान नहीं रहता है। इसीलिये कहा जाता है कि जिस क्षण मनुष्य अपने को ऐसी अवस्था में, जहां जागृत और सुषुप्ति दोनों का अनुभव एक साथ ही हो सके, स्थित होता है, उसे मोक्ष प्राप्त होता है।

प्रेम शब्द से उस प्रयत्न का बोध होता है जिसके द्वारा मानव विविधता के असत्य का साक्षात्कार करने का प्रयत्न करता है और अद्वैत का दर्शन करता है। प्रेम एकीकरण करता है जबकि घृणा पार्थक्य के अन्तर को बढ़ाती है। प्रेम दूसरों पर अपनी आत्मा की छाप डालना होता है और तब दोनों एक ही स्वर में बोलते, विचार करते और एक रूप में क्रिया करते हैं। जब प्रेम अपनी परिधि में अधिकाधिक व्यक्तियों को ले लेता है तो वे सब एक ही हो जाते हैं। जब तुम मुझे प्रेम करते हो, तो तुम सभी को प्रेम करते हो, क्योंकि उस दशा में तुम यह भी तो अनुभव करने, जानने लगते हो कि मैं सभी में हूं। ध्यान के द्वारा तुम यह अनुभव कर सकते हो कि मैं ही सभी हृदयों में वास करता हूं, इस प्रकार मैं ही प्रेरणा, उद्देश्य, पथदर्शक और लक्ष्य बना हुआ हूं। उस दृष्टि की आकांक्षा करो, उस चेतना को विकसित करो और उसे अपनी बहुमूल्य निधि बना लो। तब तुम्हें वह प्राप्त होता है जिसे तुम मुझ से प्रायः माँगते हो—अर्थात् साक्षात्कार। तुम्हारे प्रेम को मेरे प्रेम की तरह पवित्र, विस्तृत और अहंकार से शून्य होना है जिससे यह मुझमें लीन हो सके।

निस्सन्देह यह साधना कठिन है, अभी तो मन तुम पर पूरी तौर पर छाया हुआ है। व्यक्ति को अनेक आशाओं को त्यागना है, उसे अपनी आत्मा की गहराई में जाना है, जन्मजन्मान्तर की सांसारिक वस्तुओं की आसक्तियों की धारा के प्रतिकूल दिशा में तैरना है और इनमें वह शरीर भी है जिसे व्यक्ति ने धारण कर रखा है। गोपियाँ सर्वश्रेष्ठ उच्चतम प्रकार के प्रेम से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इतनी पूर्ण थीं, कि उन्हें हर वस्तु और व्यक्ति में कृष्ण के ही दर्शन होते थे "जित देखूं तित श्याममयी है। श्याम कुंजवन, यमुना श्यामा, श्याम गगन घन घटा छयी है"। कृष्ण-प्रेम से समस्त विश्व ही कृष्णमय हो उठा था। अन्य हर वस्तु का निषेध करके केवल कृष्ण का दर्शन करने से ही समस्त विश्व में कृष्ण को देखने की यह विधि है। सभी कुछ एक इकाई में सन्निहित है। इसी को पुनः जब दोहराते हैं तो हमें दो का बोध होता है। यह विविध रूप की सृष्टि में भी वही (भगवान्) है, प्रत्येक वही है, और एकमात्र वही है। तुम भी अपवाद नहीं हो। इस सत्य का साक्षात्कार, एकरूपता, यह सभी का एक में लीन होना, यही तो साक्षात्कार है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८२ मन्दिर नहीं, मनमन्दिर की देखरेख करो

(वृन्दावन मैसूर ८-३-१९७१)

तुममें से प्रत्येक डिस्ट्रिक्ट प्रेजीडेन्ट (जनपद अध्यक्ष) है। तुम्हें भजन मडलियों, महिला विभाग, वाल-विहार अध्ययन केन्द्र, सेवा समितियों, सेवा-दलों, की जो तुम्हारे अनुमोदन से स्थापित हुये हैं, देखरेख, पथप्रदर्शन और सहायता करनी पड़ती है, तुम्हें देखना पड़ता है कि उनका कार्य अवाधगति से चलता रहे। वे सव स्वामीजी के आदर्शों और आदेशों की पूर्ति के लिये उन नियमों और उपनियमों के अन्तर्गत कार्य करें जो स्वामी जी के आशीर्वाद और उनके पथप्रदर्शन में कानफ्रेंसों द्वारा निर्धारित किये गये हैं। निस्सन्देह, तुम्हें अपने ऊपर भी दृष्टि रखनी है, और देखना है कि तुम स्वयं उन आदर्शों के अनुकूल कार्य करते हो, नियमों का पालन करते हो और उस अनुशासन के अंतर्गत रहते हो, जो इन कान्फ्रेन्सों द्वारा प्रति वर्ष नियत किये जाते हैं।

वहुत से लोग ऐसे होते हैं कि जब समाज सेवा का अवसर आता है तो वे झट आगे आ जाते हैं; उनमें से अधिकांश अपने प्रचार के लिये लालायित रहते हैं; जब भी वे कोई सेवा-कार्य करते हैं तो वे चाहते हैं कि कोई केमरा लिये हुये उनका चित्र लेता जावे और ये चित्र समाचारपत्रों में प्रचारात्मक शीर्षकों के साथ छापे जावें। जब समाचारपत्रों में उनके कार्यों की आख्या नहीं प्रकाशित होती तो उन्हें निराशा होती है। ऐसे व्यक्ति ठेलकर आगे वढ़ते हैं, और इसलिये सत्तारूढ़ होते हैं कि वे अपना महत्व जनता को प्रदर्शित कर सकें। वे भूल जाते हैं कि सेवा ही पूजा है। सेवा का प्रत्येक कार्य वह पुष्प है; जो भगवान् के चरणों में अर्पित होता है। और यदि वह कार्य अहंकार से मुक्त होने के कारण कलंकित है तो वह कीटाणुयुक्त पुष्प के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

समान है, ऐसे गंदे पुष्प को अर्पित कर भगवान् के चरण कमलों को कौन गंदा करना चाहेगा ! जब तुम अपने जनपद के लोगों की सेवा करो तो तुममें किसी प्रकार का अहंभाव नहीं होना चाहिये । उनके आध्यात्मिक संघर्ष का नेतृत्व करो । अपने क्षेत्र के लोगों में भगवान् के प्रति दृढ़ विश्वास को पुष्ट करो; इस विश्वास के आधार पर तुम किसी भी प्रकार का आध्यात्मिक संगठन खड़ा कर सकोगे । नहर के किनारे जो वृक्ष उगते हैं वे फलते-फूलते हैं, उनमें घनी हरियाली और फल लगते है । इसी प्रकार भजन मंडलियां तथा इसके संगठन की अन्य इकाइयां भी सफलता पूर्वक पनप सकेंगीं, जबकि धार्मिक विश्वास उनकी जड़ों को सींचता रहेगा ।

तड़क-भड़क, ठाठ-बाट के बजाय सादगी, सच्चाई पर अधिक जोर दो । मन को ही मन्दिर बनाओ । मन्दिर नहीं, मनमन्दिरों का निर्माण करो । मन्दिरों और विशाल प्रार्थना भवनों के निर्माण को निरुत्साहित करो । जो मंदिर और प्रार्थनास्थल पहले से ही बने हुये हैं उन्हीं का सदुपयोग करने का प्रयत्न करो । जिन मन्दिरों और देवालयों का तीर्थयात्रियों के न जाने के कारण सदुपयोग नहीं हो रहा है; उन्हें पुनः एक बार आध्यात्मिक स्पंदनों का केन्द्र बना दो । बाहरी सजावट और धूम-धड़ाके से मन आवश्यक और महत्वपूर्ण बातों की ओर से हट कर इनकी ओर चला जाता है । लोग इन कामों में इसी लिए भाग लेते हैं कि जनता पर उनकी महत्ता की धाक जम जावे । उत्सवों और त्योहारों, यहाँ तक कि दैनिक चर्या में भी, लोगों को प्रदर्शनात्मक दिखावे के कार्यों में नहीं भाग लेना चाहिए । यदि किसी कार्य में धन की प्रधानता हो जाती है तो वह कुरूप और क्षुद्र हो जाता है । तुम्हें संगठन के नियमों का अवश्य पालन कराना और करना चाहिये, क्योंकि वे नियम प्रेम के कारण ही गठित किये गये हैं; न कि उत्पीड़न करने के लिए । वे तो नदी के किनारे पर दोनों ओर बनाये गये बांधों की तरह हैं जिससे नदी की बाढ़ का जल सुरक्षित समुद्र तक पहुँच जावे । दैवी कर्त्तव्य मानकर भक्तों का पथप्रदर्शन करो । दुनिया के कार्य निःस्वाद जल की तरह है उसमें भगवद् भक्ति की शकर को डालकर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अच्छी तरह हिलाओ तो अच्छा पेय तैयार हो जावेगा । यह विश्वास रखो कि यह कार्य स्वामी जी की आराधना का ही एक भाग है जो तुम कर रहे हो और यह काम तुम्हारे हिस्से में करने के लिए डाला गया हैं; तब यह भी साधना का रूप हो जाता है और इसके द्वारा तुम कृपा प्राप्त कर सकते हो।

तेलगू भाषा में बड़ों के संबंध में एक कहावत हैं, 'पेड्डलु काडु गड्डलु' 'जिनमें संस्कृति नहीं वे गीध हैं'। वे ऊँचे अवश्य उठ जाते हैं परन्तु सड़े मांस की खोज में। यदि सयाने और वृद्ध जन वास्तव में सच्चाई से लोगों की सेवा को उत्सुक होते (केवल सेवा की चर्चा और व्याख्या के लिए ही नहीं) तो दुनियां में कभी का स्वर्णयुग आ गया होता।

सेवा की भावना जगाने का एक व्यावहारिक ढंग यह हो सकता है। अपने जिलों की मंडलियों को यह समझा दो। प्रतिदिन जब गृह स्वामिनी घर भर के लिए मध्यान्ह कालीन भोजन के लिए चावल या आटा निकाले तो एक मुट्ठी और निकाल कर किसी अलग रिक्त पात्र में डाल दिया करे और इन शब्दों का उच्चारण कर लिया करे 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'। सप्ताहांत में वह उस चावल या आटे को तुरन्त खाने योग्य भोजन में अलग पकाकर उसे जितने निर्धनों में वितरण करने योग्य हो, बाँट देवे। यह दैनिक दान-सेवा का कार्य होगा ।

बाल-विहार के बच्चों पर विशेष ध्यान दो, उनके लिए उपयोगी कक्षायें लगाओ। यह बड़ा ही मूल्यवान कार्य है। क्योंकि यह स्कूल के कार्यों की पूर्ति करने वाला है। क्योंकि स्कूल के पाठ्यक्रम में इसका कोई स्थान ही नहीं रखा गया है। बाल-विहार का कार्यक्रम ही बच्चों को भारत माता की संतान कहे जाने के योग्य बनावेगा । इस देश की माताओं के द्वारा बच्चों को भारतीय संस्कृति का उत्तराधिकार सौंपा जाना चाहिये। अनुशासन और सत्ता का अधिकार तो रहना ही चाहिये; परन्तु वह प्रेम के द्वारा संशोधित होना चाहिये। जब तक कुछ अनुशासनात्मक संयम ओर सत्ता का प्रयोग (जिससे कुछ अनिच्छुक मनों पर दबाव भी डाला जा सके) नहीं होगी तो उन्नति भी नहीं होगी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

बच्चे को तो उसकी इच्छा के विपरीत भी कढ़ी-भात खाने को फुसलाना ही पड़ेगा, क्योंकि उसे इन खाद्य पदार्थों से परिचित कराना है। यदि रोगी रोग मुक्त करने वाली औषधि को नहीं लेता है तो उसे डाँटना भी पड़ सकता है। क्यों, तुम्हें भी तो अपने ऊपर कठोर संयम की चर्या अपनानी पड़ती है। जहां तक साधना का प्रश्न है ऐसा ही करना पड़ता है।

प्रशान्ति निलयम् में उत्सवों और विशेष आयोजनों के अवसर पर वही सुपरिचित मुखड़े दिखाई देते है जिन्हें तुम पहले भी अनेक बार देख चुके होगे। सबसे पहले वे दुनियादारी की इच्छाओं से भरे हुये थैले लादे हुये थे। जब उन्होंने बार-बार प्रतिवर्ष मेरे प्रवचनों को सुना तो वे इन भौतिक इच्छाओं की जकड़न से बाहर निकल आये और अब उनकी एक ही इच्छा रह गयी है कि वे मानसिक शान्ति कठोर साधना के द्वारा प्राप्त कर सकें। इसीलिए वे बार-बार यहां प्रेरणा और नवीन निर्देश, आध्यात्मिक सफलता के लिये, प्राप्त करने आते हैं।

आओ, मैं तुम्हें साधना के प्रारंभिक चरण बता दूं। नीरवता का अभ्यास करो। तब तुम्हें सांसारिक, भौतिक पदार्थों के पीछे मन की दौड़ का पता लगेगा। इसकी गति पर अंकुश लगाओ। इसे आनन्द के सागर में, जो तुम्हारे हृदय की गहराई में भरा हुआ है, निमज्जित होने के लिए अन्तर्मुखी बनाओ। अद्वैत में अपने मन को दृढ़ करके भय से मुक्ति पा लो क्योंकि भय तो किसी दूसरे से ही होता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के एक जिज्ञासू ने हाल में पूछा था 'विश्वास कैसे दृढ़ होवे ?' मैंने उत्तर दिया, 'जब सत्य का ज्ञान हो जाता है तो विश्वास अपने आप ही दृढ़ हो जाता है' और जब यह पता चल जाता है कि यह रस्सी है, तो उसके हानिरहित होने में विश्वास दृढ़ हो जाता है और उसके सर्प होने का भय अपने आप मिट जाता है।

लोगों को सत्य से परिचित होने दो, तब उनका विश्वास दृढ़ हो जावेगा। विश्वास दृढ़ हो जाने से उन्हें महान शक्ति और उत्साह प्राप्त होगा। शेष तो अपने आप आ जावेगा; और इस देश तथा विश्व में धर्म की वृद्धि होगी।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८३ नववर्ष का परिधान

(युगादि नवसंवत्सर दिवस २७-३-१९७१)

नये वर्ष के प्रवेश के साथ साधना में भी नया संयम जुड़ना चाहिए। पुराने वर्ष को घंटियाँ बजाकर विदाई दे दो और नववर्ष का घंटियाँ बजाकर स्वागत करो। हम नवसंवत्सर दिवस कैसे मनाते हैं ? हम झाड़-बुहार करते हैं, मकड़ी के जाले छुटाते हैं, दीवालों पर सफेदी की जाती है, वंदनवार और कागज की झंडियाँ बाँधी जाती हैं। पुष्प मालायें और हरी (क्रोटन की) पत्तियाँ लटकायी जाती हैं; हम नये वस्त्र धारण करते हैं। हम नये-नये व्यंजनों का स्वाद लेते हैं। एक दिन के लिये हमें नूतनता और ताजगी का अनुभव होता है। वर्ष के इस अवसर पर प्रकृति भी नवीन हरे वस्त्रों से सजती है। हर वृक्ष में प्रसन्नतादायक पुष्प खिलते है। पृथ्वी पर बिछे हुये हरे गलीचे में पत्र तक बहुरंगे पुष्प खिल उठते हैं। इस पुनर्नवीकरण के त्योहार में केवल मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी रहता है जो अपने प्राचीन पक्षपातों, मनोवृत्तियों, घिसी-पिटी आदतों और जीर्ण-शीर्ण सिद्धान्तों से चिपका हुआ है। क्या मानव को अपने मन के जाले नहीं साफ करना चाहिये ? क्या मानव को उन सम्मतियों और मन्तव्यों को जो उसे कलंकित करते और क्षुद्र बनाते हैं, त्याग नहीं देना चाहिये ?

'युगादि' शब्द का अर्थ है वह दिन कि जिस दिन नया युग प्रारंभ होवे। धर्मशास्त्रों में प्रत्येक युग के लिए आध्यात्मिक संयम निर्धारित किया हुआ है। कृतयुग के लिए ध्यान, त्रेता के लिये धर्म, द्वापर के लिये अर्चना या कर्म काण्ड और वर्तमान युग कलि के लिए नाम-स्मरण, भगवान् के नाम का जप। इसलिए इस युगादि के दिन तुम्हें पुनः नई भावना से निर्धारित अनुशासन के लिए अपने को अर्पित करने का संकल्प दोहराना चाहिये। और इस पर भरसक आचरण

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भी करना चाहिये । इसका अर्थ यह है कि भगवान् के नाम-स्मरण में जो आदतें बाधक हों उनका सर्वथा त्याग कर देना चाहिये ।

वास्तव में जीवन स्वीकृतियों और अस्वीकृतियों की आसक्तियाँ और उपरति की, प्रसन्नता और शोक की, लाभ और हानि की एक शृंखला है। इस वर्ष का निषेधात्मक और आशंकापूर्ण नाम 'विरोधीकृत' अर्थात् शत्रु उत्पन्न करने वाला है । इससे आशंकित होने की कोई बात नहीं है; अब जिन शत्रुओं का तुम्हें सामना करना है वे दुष्ट स्वभाव और निरर्थक व्यसन हैं; जिन्हें तुम त्याग रहे हो ।

जो कुछ भी तुम्हारे साथ घटे उसे भगवान् की देन, उपहार मानो। निस्संदेह, जहाँ तक तुम्हारा संबंध है, तुम्हें अपनी संपूर्ण चतुराई और लगन के साथ अभिनय करना है। जैसे भगवान् की पूजा करते हो उसी निष्ठा के साथ सच्चाई के साथ इस कार्य को करो। फिर कर्मफल को सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ और परमदयालु परमात्मा के प्रति अर्पण कर दो । जो कुछ होना है होने दो। तुम अपने पर क्यों उसका दायित्व लेते हो ? उसी (भगवान्) ने प्रेरणा दी, उसी ने तुम्हारे द्वारा कार्य कराया, वही तुम्हें जो फल देना उचित समझेगा, देगा।

दुःख के बिना सुख में कोई आनन्द ही नहीं होता है । नारंगी का छिलका कड़ुआ होता है, यही कटुता अन्दर के मधुर रस को लुटेरों से बचाता है मधुर फल के लिये मधुर छिलका नहीं हो सकता । तब तो हर कोई उसे छिलका समेत वहीं का वहीं खा जावेगा । फल के बीज की इच्छा दूर की यात्रा की होती है, जिससे खुले मैदान में अन्य वृक्ष दूर-दूर उत्पन्न होवें; न कि पितृ वृक्ष के साये में। वृक्ष अपनी संतति को दूर-दूर तक फैलाने का इच्छुक होता है। इसलिये छिलका कड़ुआ होने से खाने वाला फल को साथ लेकर दूर यात्रा करेगा। फिर छिलका उतारते-उतारते कई पग आगे जाकर बीजों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को फेंक देगा। तुम स्वर्ण को सोने के संदूक में सुरक्षित नहीं रख सकते। तुम्हें तो उसके लिये लोहे की तिजोरी आवश्यक होगी। प्रसन्नता का उपहार शोक की डिब्बी में बन्द होकर आता है। भगवान् से केवल सुख के लिये प्रार्थना न करो, यह तो मूर्खता का कार्य होगा। उनसे सहन शक्ति पाने के लिये प्रार्थना करो, और यह प्रार्थना करो कि तुम दुख और सुख को एक ही सिक्के के दोनों पार्श्व समझ सको।

आज प्रत्येक घर में पण्डित नववर्ष का फल पत्रे से पढ़कर सुनाते हैं उसे पंचाङ्ग कहा जाता है "पांच अंगों वाला" यह पांच अंग कौन-कौन से होते हैं? यह सूर्यादि नवग्रहों की स्थिति की बात नहीं है; बल्कि मनुष्य की पांच इन्द्रियों की बात है। उन्हीं के माध्यम से तो मानव को ज्ञान प्राप्त होता है—ध्वनि, स्पर्श, दृश्य, स्वाद और गन्ध का। इन्हें शुद्ध होना चाहिये जिससे शुद्ध ज्ञान प्राप्त होवे।

शुभ साइत, शुभ घड़ी का विचार किया जाता है जिससे परिणाम भी शुभ होवे। इसीलिये पत्रा का सावधानी से अध्ययन किया जाना चाहिये। ग्रहों का कोई प्रभाव भगवान् की कृपा के विरुद्ध नहीं पड़ सकता है जो कि मनुष्य की रक्षा और पथप्रदर्शन के लिये सर्वोपरि शक्तिशाली है। त्यागराज ने गाया है कि राम की कृपा से ग्रहों की घोरतम स्थिति भी कुछ विगाड़ नहीं कर पाती। लोग विपत्ति के कुप्रभाव को टालने के लिये नानाप्रकार के व्रत, यज्ञ आदि करते हैं उनसे दुष्ट ग्रहों के कुप्रभाव से बचने की चेष्टा तो की जाती है परन्तु भगवान् की कृपा प्राप्त करने की चेष्टा नहीं की जाती। ठाठ-बाट और पूजा का सांगोपांग विधान और विस्तार केवल ऊपरी दिखावा होता है, उनसे कोई स्थाई लाभ नहीं होता है, अधिक से अधिक यही कि उतनी देर का तुम्हारा समय और धन का किसी कुकृत्य में लगने से बचाव हो जाता है। इन कृत्यों का 'क्यों' अधिक महत्वपूर्ण है न कि "किस प्रकार से।" इस 'क्यों' का उत्तर खोजते-खोजते व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार पा लेता है जो कि 'सार्वभौम सत्य' ही होता है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

उसी सार्वभौम तत्व की भक्ति में लग जाओ, उसी के तद्रूप वन जाने का प्रयास करो। जब तुम भगवान् से नौकरी पाने, एक पुत्र अथवा पुरस्कार पाने की प्रार्थना करते हो तो तुम भगवान् के भक्त नहीं बल्कि नौकरी, पुत्र या पुरस्कार के भक्त होते हो। भगवान् से प्रेम के लिये प्रार्थना करो क्योंकि प्रेम करना तुम्हारी प्रकृति है, इसके अतिरिक्त तुम्हें ज्ञान ही क्या है, तुम प्रेम किये बिना नहीं रह सकते। आत्मविस्तार करो सब कुछ अपने में आत्मसात् कर लो। प्रेम में वृद्धि कर लो। वही नवीन परिधान तुम्हें धारण कर आज सुशोभित होना है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८४ रामायण परिवार

(वृन्दावन, ४-४-१९७१)

रामायण तो भारतीयों के जीवन-रक्त के समान ही महत्वपूर्ण है। कुछ वर्ष तक पूर्व भारत भर में एक भी गांव ऐसा न था जहां राम की उपासना के लिये कोई एक मन्दिर न हो, कोई घर ऐसा न था जहाँ राम के चित्र की पूजा न की जाती हो, कोई जिह्वा ऐसी न थी जिसपर राम नाम न चढ़ा हुआ हो। समूचा देश ही राम-सौरभ से सुगन्धित था। ऐसा सौभाग्य शाली देश अब एक ऐसे क्षेत्र के रूप में पतित हो गया है जो 'काम' से दूषित है। इसे पुनः 'राम' से व्याप्त बना दो, तुम्हारी सुरक्षा इसी में है। यदि तुम इसके प्रतिकूल 'काम' से दूषित होना चाहोगे तो यह तुम्हारा दुर्भाग्य ही होगा।

मानव के इतिहास के त्रेता युग में निराकार, निर्गुण, सच्चिदानन्द इतना दया से द्रवित हो उठा कि वह नराकार में होकर साक्षात् धर्ममूर्ति बनकर राम के रूप में अवतरित हुआ (रामो विग्रहवान् धर्मः) मानव के आदर्श चरित्र को व्यक्त करने के लिये कई पात्रों ने अभिव्यक्त होकर धर्म की और उसमें सन्निहित शक्ति की पुनरस्थापना की; तत्पश्चात् पुनः उसी निरपेक्ष में, जहां से आये थे, लीन हो गये।

वेदों में उस दैवी तत्व का माधव नाम से वर्णन किया गया है। 'मा' के माने माया और 'धव' के माने स्वामी अर्थात् वह (भगवान्) जो इस सब सृष्टि का, जो जन्मती और इसीलिये मृत्यु को प्राप्त होती, परिवर्तित होती और असत्य है, स्वामी है ईश्वर है। जीवन और मृत्यु तो माया के ही अंग हैं, जिसका वह (भगवान्) स्वामी है। इसलिये उन सभी को, जो इस द्वन्दात्मक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

शृंखला (जन्म-मृत्यु) से जकड़े हुये हैं, भगवान् के प्रति निष्ठावान् होना चाहिये, उसके प्रति सम्मान प्रकट करना चाहिये; उसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिये। आनंद और प्रसन्नता प्राप्ति का यही मार्ग है । परन्तु माया का अभिकर्ता (एजेन्ट) जो मन के रूप में उसी में विद्यमान है, उसके इस सत्प्रयत्न में सहायक नहीं होता है। वह तो छाया, सारहीन चमक-दमक के पीछे स्वर्ण का तिरस्कार कर दौड़ता है। वह इन्द्रियों के माध्यम से बाह्य जगत में मारा-मारा फिरता है और बुद्धि और तर्क के न्यायपूर्ण विश्लेषण और त्याग की पुकार की उपेक्षा करता है। इस प्रकार मन सर्वत्र ही उस स्तर के बहुत नीचे, जिसे वह प्राप्त करने और आनन्द लेने में समर्थ है, लज्जा का जीवन व्यतीत कर रहा है।

दशवीं मंजिल पर के निवासी से भेंट करने के लिये तुम्हें ६ मंजिलें ऊपर चढ़ना होता है। माधव के साहचर्य का आनन्द अनुभव करने के लिये तुम्हें उस पवित्रता, उस प्रेम, उस सत्य और उस शान्ति के स्तर तक उठ जाना है। दयालुता से पूर्ण होकर सभी से प्रेम करो, सभी की सेवा करो, अपने कर्त्तव्य का सत्यता और प्रसन्नता से पालन करो, नेक बनो, नेकी करो और इस प्रकार भगवान् प्राप्ति के पात्र बनो। जब तुम सत्य के इस मार्ग पर आरूढ़ होगे तो राम तुमसे प्रसन्न हो जावेंगे। क्योंकि यह मार्ग उन्हीं के द्वारा निर्धारित किया गया है। रामायण के सिंहावलोकन से (सरसरी तौर के अध्ययन से) तुम्हें उसकी भूसी ही प्राप्त होगी। असली सार (गूदा) तो तभी प्राप्त होगा यदि तुम रामायण के प्रत्येक शब्द के अर्थों पर, प्रत्येक घटना पर गंभीरता से विचार करोगे। भारतीय संस्कृति ने सदा ही इन प्रतीकों, नामों और कहानियों के अर्थों पर विचार करने के लिये उत्साहित किया है। ऐसा कहा गया है कि "दशरथ के चार पुत्र राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न थे।" अच्छा, यह दशरथ कौन है ? किस राज्य पर वे शासन कर रहे थे ? यदि यह कोई अयोध्या नाम के नगर के एक राजा दशरथ थे जिनके राम नामक एक पुत्र था, तो हमारा उस घटना से क्या संबंध है ? हम उस घटना को उत्सव के रूप

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

(रामजन्म) में क्यों मनावें जबकि हमारे ग्रौर राम के देशकाल में इतना व्यवधान आ चुका है ?

कहानी में कुछ गहराई तक प्रवेश करो तो तुम्हें विदित होगा कि दशरथ किसी दूर देश के राजा नहीं हैं, और उनकी राजधानी उत्तर भारत के मान-चित्र में नहीं है, ग्रौर चार भाई ऐसे मानव नहीं जो जन्मे ग्रौर मृत्यु को प्राप्त हो गये हों। ग्रयोध्या का ग्रर्थ एक ऐसा नगर जो अजेय है, वहाँ शत्रु प्रवेश नहीं कर सकता, वह तो ग्रभेद्य किला है। वह आत्मा की प्रतीक है, हृदय का प्रतीक है कि जहाँ भगवान् निवास करता है, जो ग्रासक्तियों, मनोविकारों और उद्वेगों, मनोवृत्तियों ग्रौर क्षोभों जैसे सूक्ष्म शत्रुओं से सुरक्षित है। ग्रौर दशरथ ? वह व्यक्ति जिसका रथ, पाँच कर्मेंद्रिय, पाँच ज्ञानेंद्रिय युक्त, शरीर है। उसके तीन पत्नियाँ थीं, यह व्यक्ति जोकि सभी व्यक्तियों का प्रतीक है। ग्रब, चूंकि प्रत्येक विवाहित व्यक्ति के एक विवाहित पत्नी भौतिक शरीर वाली हो सकती है, फिर भी ग्राजीवन उसके साथ पृथक्-पृथक् तीन गुण सात्विक, राजस्, तमस् मृत्युपर्यंत संयुक्त रहते हैं। यह तीन प्रकृतियाँ सौम्यता, सक्रियता ग्रौर निष्क्रियता, ये तीन रानियों की प्रतीक हैं। कौशल्या सात्विक, सुमित्रा राजस (सक्रियता ग्रौर भावुकता) ग्रौर कैकेयी तामसिक (ग्रज्ञानावस्था, निष्क्रियता, ग्रविवेक) की प्रतीक हैं। कोई भी इन तीन गुणों से युक्त जीवन ग्रौर उनके सम्पर्क और संयोग से प्राप्य विभिन्न अनुभवों से बच नहीं सकता है। समय पाकर यह ग्राकांक्षा उत्पन्न होती है कि इसका कोई स्वामी होवे जिसकी यह ग्राज्ञा माने ग्रौर सम्मान करे। यह पीड़ा इतनी प्रखर हुयी कि परात्पर ब्रह्म, दैवत्वम्, ग्रपनी कृपा वर्षा के लिये साकार पायस (खीर) बनी। उसे देवताओं का एक प्रतिनिधि यज्ञ की ग्रग्नि से प्रकट होकर लाया। वह कृपा का उपहार जो पायस के रूप में प्राप्त हुग्रा उसे तीनों गुणों ने ग्रात्मसात किया जिसके फलस्वरूप धर्म, ग्रर्थ, काम, मोक्ष, मनुष्य के चार पुरुषार्थों के प्रतीक चार पुत्र उत्पन्न हुये। ज्येष्ठ पुत्र राम धर्म का शेष तीन ग्रन्य तीनों पुरुषार्थों का प्रतिनिधित्व करने वाले हुये।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

यदि तुम चाहते हो कि धर्म तुम्हारे हृदय में उत्पन्न हो तो उसके लिये तुम्हें बहुत कुछ बलिदान करना होगा। इसीलिये दशरथ को पुत्रकामेष्टि यज्ञ, एक महान बलिदान करना पड़ा था। दैवत्व तो साक्षात् धर्म की मूर्ति होता है, उसकी उपासना तो धर्म के द्वारा ही की जा सकती है। और धर्म पवित्र सत्कार्यों, सद्विचारों और सच्छब्दों की पुष्पमाला के समान होता है। सत्कार्य करते हुये सज्जन, सेवापरायण और सत्कार्यों में दक्ष होने की ख्याति अर्जित करो। जो सन्तानें इस प्रकार अपने माता-पिता को सुखी नहीं करती हैं, उन्हें तो माता केवल प्रसव-पीड़ा के रूप में ही स्मरण करती है। "जननी यौवन विटप कुठारू", वह माता की युवावस्था रूपी सुन्दर वृक्ष को काटने वाली कुल्हाड़ी के समान होते हैं।

इस समय हर कोई शान्ति, सुरक्षा, प्रसन्नता खो जाने की पीड़ा से कराहता दिखाई देता है। चारों ओर से, सभी स्थानों से करुण चीत्कार, आर्तनाद सुनाई पड़ रहा है। परन्तु इस दुखान्तकारी घटना का कारण खोजने का कोई प्रयत्न नहीं करता है। कारण यह है कि जो करना चाहिये वह नहीं किया जा रहा है, जो मानना चाहिये उसकी मान्यता नहीं की जा रही है। कथनी और करनी में कोई तारतम्य नहीं है। घरों में, ग्रामों में, दफ्तरों में राष्ट्रीय परिषदों में, सर्वत्र कपट और पाखंड का बोलबाला है। अध्यात्मिक क्षेत्र में भी यह बहुत उच्च पदासीन है। जो जिह्वा से भगवन्नाम जपते और माला फेरते दिखाई देते हैं वे भी भगवान् विरोधी व्यवसायों में, लतों में संलग्न हैं। भगवद्गीता हाथ में पकड़े हुये वे परनिन्दा और कुचक्र रचने में व्यस्त रहते हैं। हाथ में माला पकड़े होने पर नौकरों से फुफकारते दिखाई देते हैं; जरा-जरा सी बात में क्रोध से आपे से बाहर हो जाते हैं। यह तो कोई व्रत नहीं है, अध्यात्म का कोई संयम ऐसा करने से अवश्य रोकेगा।

जो भक्त सच्चा होने का दम भरता है उसे निरंतर सावधान रहना पड़ता है; और सदा भगवान् की उपस्थिति में रहने योग्य संयम नियम का अभ्यास

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

करना पड़ता है। भगवान् जोकि तुम्हारी चेतना में अभी प्रसुप्तावस्था में प्रतीत होता है, उसे मान्यता दो। उसे पुनः चैतन्य करो जिससे तुम्हारा प्रत्येक कार्य दिव्य आभा से युक्त होवे। व्यक्त के अर्थ स्पष्ट; अतः व्यक्ति का अर्थ संस्कृत भाषानुसार वह जो अपने में निहित दिव्य तत्व को व्यक्त करे।

जब तुम्हें यह चैतन्य प्राप्त हो जावे कि भगवान् का निवास तुममें हैं, तुम्हारे साथ है; तुम्हारे लिये है। ऐसी चेतना को तुम्हारे विचार, शब्द और कार्यों को नयी प्रेरणा देकर उन्हें सद्विचार, सद्वाणी, सत्कार्यों में बदल देना चाहिये। जिन लोगों ने अपने को प्रदर्शनात्मक रूप से धार्मिक संयमों के लिये अर्पित किया हुआ है, वे तो विश्व के रंगमंच पर चहल कदमी करने वाले अभिनेता मात्र हैं। कुछ लोगों की भक्ति बड़ी पतली होती है। जरा सी भी निराशा हुयी कि उनकी भगवान् में निष्ठा जाती रहती है। परन्तु, वास्तविक भक्ति तो भयंकर संकटों में भी अविचलित रहती है।

आओ, रामायण में प्रस्तुत आदर्श उदाहरणों पर कुछ विचार कर लें। राम का परिवार ही स्वयं बहुमूल्य उच्चतम धार्मिक आचरण का आदर्श प्रस्तुत करता है। जो पुत्र समान भाव से राजतिलक और बनवास की आज्ञा को शिरोधार्य कर सका है वह तो वास्तव में आदर्श पुत्र कहा ही जावेगा। उस आदर्श सती सीता का चरित्र कितना महान है जिसने राजमहल और बनवास सर्वत्र अपने पति और भगवान् राम की सेवा की और उनका अनुगमन किया और स्वयं आग्रह करके बन में राम के साथ गयीं। अपने सभी सुखों का त्याग किया और सभी विपत्तियों को स्वेच्छा से भोगना स्वीकार किया। यदि सभी पत्नियाँ सीता के समान पति परायणा होतीं तो निस्सन्देह भारत सुखी गृहस्थों का देश होता, यहाँ के घर हार्दिक हास्य और संतोष के आनन्द से भरे-पूरे रहते। हर घर के द्वार पर हरी वन्दन वार बंधी होती।

जहाँ तक भाइयों का प्रश्न है आज तक भरत और लक्ष्मण की समता कोई नहीं कर सका है। उनकी मां ने भरत के लिये विशाल साम्राज्य की

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

राजगद्दी सुरक्षित कर ली थी, परन्तु भरत ने उसे इसीलिये ठुकरा दिया कि न्यायानुकूल उस पर बड़े भाई राम का अधिकार होना चाहिये था। आजकल प्रत्येक छल-बल से सत्ता पर अधिकार करना चाहता है। परन्तु भरत एक ऐसा आदर्श है जिसने अपने पिता से, अपनी माता द्वारा, प्राप्त वैध अधिकार त्याग दिया जिससे कि वह सत्ता उसी व्यक्ति को वनवास से लौटने पर मिले जो कि नैतिक रूप से भी उचित पात्र है; वही उस पद को सुशोभित करे। और लक्ष्मण ? उन्होंने तो भोजन और निद्रा को, इतनी लम्बी अवधि तक, केवल इसीलिये त्याग दिया था जिससे वे अपने अग्रज राम और पूजनीया भाभी की रक्षा में सदैव तत्पर रह सकें और वनों जंगलों को स्वाभाविक आपदाओं का निवारण करते रहें। उनका त्याग भाई के चरणों में कितनी प्रसन्नता से कितनी स्वेच्छा से था।

और स्त्रियाँ ? जब लक्ष्मण अपनी माता सुमित्रा के पास राम के साथ जाने से पूर्व आशीर्वाद प्राप्त करने गये, तो सुमित्रा ने कोई तर्क-वितर्क नहीं किया कि "तुम क्यों जा रहे हो ? तुम्हारे पिता की तुम्हारे लिये तो कोई ऐसी आज्ञा है नहीं। यहीं महल में रहो और सुख से काल क्षेप करो; मुझे और अपनी नव परिणीता वधू को सुखी करो"। उन्होंने कहा, "पुत्र ! ऐसा मत सोचना कि तुम वन को जा रहे हो और हम अयोध्या नगरी में हैं। राम के बिना तो यह भी जंगल है; और उनके वहाँ होने पर जंगल भी अयोध्या है"। नवोढ़ा उर्मिला ने अपने पति लक्ष्मण से क्या कहा ? उसने सीता की तरह अपने पति से साथ चलने को न तो आज्ञा मांगी और न आग्रह किया, उसका आधार कितना उत्तम था। उसने कहा, "यदि मैं भी साथ चलूं तो आप राम और सीता की सेवा एकाग्रता से नहीं कर सकेंगे। मैं यही रहकर चौदह वर्ष बाद आपके लौटने की प्रतीक्षा करती रहूंगी"। त्याग के कैसे-कैसे उत्कृष्ट आदर्श और उदाहरण हैं। यदि प्रत्येक परिवार में ऐसे पुत्र, माताएँ, भाई और पत्नियाँ हों तो देश में दुख और चिन्ता के लिये कोई स्थान ही न होता, और देश प्रसन्नता और शान्ति से आलोकित रहता।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८५ विश्वविद्यालय के बीज

(अनन्तपुर, ८-७-१९७१)

भारत वह देश है जिसने समुद्र पार के महाद्वीपों में भी अपनी साहसिक उपलब्धियों के लिये, भौतिक और आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों में, महान ख्याति कमाई है। इसने बलशाली साम्राज्यवादी विजेता आक्रमणकारियों को विफल कर लौटा दिया; यह प्रसिद्ध विद्वानों और मन के रहस्यमय क्षेत्र में अन्वेषकों की शिशु-शाला रहा है; यह देश संगीत, नृत्य, चित्रकारी, मूर्तिकला और स्थापत्य की उन्नत परम्पराओं का सदा पोषक रहा है। इन कलाओं की जड़ें इस देश की प्राचीन संस्कृति, साहसिक अभियान और उपलब्धियों में स्थित हैं, यह वह उन्नत उत्तराधिकार है जो इस देश के पुत्र-पुत्रियों को प्राप्त है और जिसकी उन्नति का भार उन पर है। यह दुर्बलों के उठाने का कार्य भार नहीं है। इसे कौशल्या जैसी माताओं की एक पीढ़ी की आवश्यकता है, जिसने राम जैसे पुत्र को उत्पन्न किया, सीता जैसी माता ने लव और कुश जैसे सुन्दर सुयोग्य युगल पुत्रों का पालन पोषण किया, जीजाबाई जैसी महिलाओं की आवश्यकता है जिसने शिवाजी जैसे महान शूरवीर को, जो महाभारत कालीन योद्धाओं की तरह सच्चरित्र और दानी थे, उत्पन्न किया, और पुतलीबाई जैसी आदर्श गृहिणी ने अपने सीधे सच्चे पुत्र को महात्मा गांधी बना दिया। इन माताओं ने बच्चों को अपनी गोद में गीतों और लोरियों के माध्यम से, संकेतों और कहानियों से पालने झुलाते हुये, सुलाते हुये शिशुओं के पवित्र हृदयों को वेदों, उपनिषदों और भारत के विभिन्न योगों के अमृत से भर दिया। उन्होंने शिशुओं को शक्ति से भरकर उन्हें शाश्वत आनन्द और शान्ति के सन्मार्ग पर आरूढ़ कर दिया। शिशु उत्पन्न होकर पहला शब्द 'मां' उच्चारण करता है और

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अंतिम समय में मनुष्य यही शब्द बोलता है। वह लड़खड़ाते हुये शिशु को चलना सिखाती है और वही उसे मुक्ति की लंबी यात्रा पर भी चला देती है।

आज माताओं के लिये कालेज के नवीन भवन का उद्घाटन हो रहा है। यह कालेज ऐसी ही माताओं के लिये जो धर्म का पुनर्जागरण करें जिसकी भारत और दुनिया को आज परम आवश्यकता है, अर्पित किया गया है। आज जीवन के सभी विभाग चिन्ता, भय, अनिश्चय, असुरक्षा के कर्ण-भेदी कोलाहल से गूंजता रहा है। जीवन का मुख्य उद्देश्य आनन्द की प्राप्ति और उसे दूसरों के साथ मिला बाँट कर उपभोग करना है। यह तो अब नीचे दब गया है; और अनेक नवीन इच्छायें, जिनका जीवन के मुख्य उद्देश्य (व्यक्ति का अर्थ जो अपने में सन्निहित उस दैवत्व को व्यक्त करे) से कोई संबंध नहीं है, लावा की तरह ज्वालामुखी के अन्दर से फूट रही हैं। गुरु तो चेतावनी देता है और तुम्हारी चौकसी भी करता है, परन्तु उसके शब्दों की उपेक्षा की जाती है। मानव विधि के प्रति उदासीनता और असत्य से अनुराग रखता है; वह बुराइयों को सुनता है, दुष्टताओं को अपने ऊपर आमंत्रित करता है।

व्यक्ति की शिक्षा से वर्तमान दुर्व्यवस्था न तो सुधरती है और न किसी सीमा तक कम ही होता है। स्कूल, कालेज, जिन्हें पहले समस्त समाज सरस्वती के मंदिरों के रूप में आदर देता था, अब लक्ष्मी देवी के मन्दिरों में परिवर्तित हो गये हैं। इन विद्यालयों में प्रवेश पा सकने के लिये धन की मांग की जाती है, चन्दे चाहे जाते हैं। निश्चित धन राशि देकर कक्षा में पाठों की आवश्यक उपस्थिति का प्रमाण पत्र प्राप्त हो जाता है। परीक्षा में सफलता भी पैसे के जोर से प्राप्त करने का उपक्रम किया जा सकता है। नैतिकता के पतन के परिणाम स्वरूप अनुशासन तो समाप्त प्राय है, चरित्र का अवमूल्यन हो गया है और शिक्षा तो एक व्यापारिक प्रक्रिया हो गयी है। जैसा कि श्रीमती सरस्वती गिरि ने कहा है, कि डिग्री डिप्लोमाओं का इतना

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

ही मल्य रह गया है कि उनके सहारे व्यक्ति को किसी पद या नौकरी के योग्य समझ लिया जाता है। वे तो भिक्षा पात्र हैं जिसे लेकर तुम कार्यालय या निर्माण शालाओं के द्वार पर आवाजें लगा-लगा कर नौकरी मांगते हो।

श्रीमती गिरि ने कहा है कि इस संबंध में कुछ वेरोजगार स्त्रियों की दशा उनके पुरुष वन्धुओं की अपेक्षा अधिक दयनीय है। शिक्षित, शिक्षक, और छात्रों ने शिक्षा के वास्तविक महत्त्व को भुला दिया है; इसीलिये ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है। शिक्षा को आनन्द, प्रेम, शान्ति, जो कि प्रत्येक हृदय में निहित है, के स्रोतों को शक्तिशाली बनाना चाहिये। अध्ययन के धूल-भरे वर्षों में स्रोत सूखने न पावें। सैद्धान्तिक रूप से मनुष्य शाश्वत आनन्द, शान्ति, प्रेम और भक्ति का स्रोत है। उपदेश आचरण और अभ्यास के द्वारा इनकी वृद्धि अपने विकास काल में कर लो। तभी शिक्षितों को आजीवन सुरक्षा और मधुरता प्राप्त होगी।

निस्सन्देह जीविका तो कमानी ही है; परन्तु, जैसा कि आजकल हो रहा है पति, पत्नी दोनों ही घर से दूर कार्यालय को जाते हैं, वच्चों को धाय पालती है, नौकर खिलाते हैं, वच्चे उन्हीं के रंग ढंग और भाषा सीखते हैं। माता पिता तो आकस्मिक भेंट कर्त्ता जैसे हो जाते हैं। जो भोजन वच्चे खाते है वह न तो उन्हें प्यार करने वाले हाथों से बना होता है और न प्यार करने वाली मुस्कराहट से परोसा ही जाता है; अतः स्वाद तो जाता ही रहता है, साथ ही यह नीच स्पंदनों से संयुक्त हो जाता है। माँ एक अध्यापिका होकर विद्यालय जाती है और अपने स्वाभाविक कर्तव्य—अपने बच्चों की शिक्षिका होने—की उपेक्षा करती है! यह तो वास्तविक दुखान्तकारी घटना है! ऐसे माता-पिता वाला घर वह घर कभी नहीं बन सकता जिसकी सुखद स्मृति बच्चों के मानस पटल पर सदा अंकित रहे।

नौकरियां प्राप्त करना शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य को पददलित नहीं कर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सकता। स्त्रियों को बलिदान और अनासक्ति का भाव, सद्गुण और दृष्टि कोण की विशालता, सच्चाई और ईमानदारी, धर्म और न्याय को विकसित करना है, जिससे वे अपने बच्चों और पतियों को बदलकर साधक और मुमुक्षु बनने में सहायता करें। इस समय विद्यालय चिन्ता, आशंका और उलझनों, असंतोष और अनुशासनहीनता, अश्रद्धा और निष्फलता से आक्रान्त और व्याप्त हैं। विद्या मंदिरों का उनका पद अब जाता रहा है, जहां कि पहले युवकों को आत्मनिर्भर, संतुष्ट, साहसी नायकों में प्रशिक्षित किया जाता था। जब मैंने इन त्रुटियों और दोषों को देखा और भावी संकटों का अनुमान किया जो कि देश में उग्ररूप से सामने आ रहे हैं तो मैंने रायल सीमा में अनन्तपुर में इस कालेज की स्थापना का निश्चय किया।

केवल पवित्र संकल्पों की घोषणा से मैं कभी संतुष्ट नहीं होता हूं। उन्हें कार्य रूप में परिणत करने से जो आनन्द प्राप्त होता है उसका आस्वादन मुझे प्रिय है। मैं प्रत्येक क्रिया तथा इच्छा द्वारा अपना प्रेम व्यक्त करता हूं चाहे धुंआधार भाषण और लाखों शब्द उस इरादे की प्रशंसा में व्यक्त किये जावें, उसकी व्याख्या में लिखे जावें; मैं तो स्वयं अपने उदाहरण द्वारा, उसकी अविलम्ब तत्काल और पूर्ण रूपेण पूर्ति के लिये आग्रह करता हूं। यह गुरुकुल परम्परा है, जहाँ अध्यापक और शिष्य ज्ञान और प्रेम में साथ साथ प्रगति करते हैं। यह सब आश्रम की प्राचीन परम्पराओं और आदर्शों के अनुकूल, आज की इन परिस्थितियों में जहां तक संभव है, किया जावे। आज गुरुवार है। आज गुरुपूर्णिमा भी है, जो कि गुरु की पूजा के लिये एक पूर्व निश्चित पवित्र तिथि है। गुरु का अर्थ दीक्षा देने वाला होता है। यह अभी कहा जा चुका है कि यह संस्था महिला विश्वविद्यालय का नायिक बने—परन्तु मैं इस संभावना से चमत्कृत नहीं हूं, मैं ता केवल तभी प्रसन्न हूंगा जब यहां गुरुकुल का शुद्ध वातावरण और भावना बनाये रक्खी जावेगी।

इस विद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाओं में, अनिवार्य रूप से

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

सद्गुणों की जड़ें गहराई तक पहुंची हुयी और, जैसा कि हमारे पवित्र धर्म शास्त्रों में निर्धारित किया गया है, स्त्रीत्व के उन आदर्शों के प्रति अडिग निष्ठा भी होनी चाहिये। तभी वे माताओं के रूप में अपनी संतानों को प्रतिभाशाली, सुन्दर, सद्गुणी, शक्तिशाली और विश्व-नागरिक बना सकेंगी। उस आतंक से, जिसमें आज का विश्व भय से प्रकंपित हो रहा है, बाहर निकलने का एकमात्र यही उपाय है।

अभी तो वर्तमान् कन्या विद्यालयों और महिला कालेजों में इस प्रकार की शिक्षा दी जा रही है कि वे "वांछनीय पत्तियाँ" बन सकें कि "वाँछनीय मातायें"। माता का कर्त्तव्य, जो कि स्वाभाविक और देश काल की आवश्यकता की पूर्ति करने वाला है, उसी की उपेक्षा की जाती है। गौण, अस्थायी और चमक दमक को उछाला जा रहा है। मुझे प्रसन्नता है कि आज छात्रावास के भवन का श्रीमती सरस्वती गिरि ने उद्घाटन किया है, जो कि स्वयं एक आदर्श महिला हैं, जैसा कि इन छात्राओं के सम्मुख रखना चाहता हूं जो इस छात्रावास में अभी और भविष्य में निवास करते हुये अध्ययन करेंगी। जो चेतावनी उन्होंने विदेशी संस्कृति के अनुकरण से उत्पन्न संकटों के संबंध में और इस देश के प्राचीन नैतिक मूल्यों की वैधता के समर्थन में जो उद्बोधन दिया है वह सदा ही स्मरण रक्खा जावे। उसे एक प्रेरणा के रूप में लिया जावे। जो भारत का प्राचीन पद जगद्गुरु का था उसे भारत पुनः प्राप्त कर सकता है।

भारत शताब्दियों तक कर्म-भूमि के रूप में विख्यात रहा, जहाँ मानव का प्रत्येक कार्य उच्च आदर्श और दान भावना से अनुप्राणित और प्रेरित रहता था इसी लिये इस देश को योग-भूमि भी कहा जाता था, अर्थात् वह देश जहाँ के निवासी भगवान् की प्रसन्नता के आकांक्षी होते थे; इसका त्याग भूमि के रूप में सम्मान किया जाता था, जहाँ कि तपस्वी साधु, नग्न फकीर, का आदर्श एक सरल ऋषि द्वारा ज्ञान के सम्पन्न सम्राट् के रूप में उपदेश और आचरण दोनों से स्पष्ट किया जाता था।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

आजकल इस देश को भोग भूमि के रूप में विकसित किया जा रहा है, आकाशचुम्बी अनेक मंजिलों के भवन, वातानुकूलन, डिब्बा बंद भोजन, एक नकलची, विरोधी और अनुशासन विहीन जनता, मानों जड़ों समेत उखाड़कर कहीं विदेशी भूमि में रोपी गयी हो। यह तो हमारे भव्य भूतकाल का निष्ठुर विद्रूप है, इतिहास को चुनौती दी जा रही है यह समय की पवित्रता का उल्लंघन और पाप है, मानव शरीर की पवित्रता, प्रत्येक कार्य की संभावित महत्ता का उपहास रह गयी है। इसी लिये मैं इस प्राङ्गण में गुरुकुल भावना के लिये आग्रह करता हूं, उस भव्य अतीत और मनोरम भविष्य की प्रेरणा से अपने हृदयों को पूर्ण कर लो। इसी लिये यह संभावना व्यक्त की गयी है कि समय पाकर यह संस्था महिला विश्व विद्यालय के रूप में विकसित हो सके, परन्तु मैं तो तभी संतुष्ट हूंगा यदि यह गुरुकुल भावना बनायी रखी जावे और विकसित की जावे। मैं विकास और आकार की विशालता का इच्छुक नहीं हूं, केवल आकार वृद्धि और संस्थाओं में तड़क भड़क, ठाठ-बाट का वातावरण ही उनकी वास्तविक उन्नति के परिचायक नहीं होते हैं।

आज बीजारोपण सम्पन्न हुआ है, इसे अंकुरित होकर विशाल दृढ़ वृक्ष के रूप में उगना है, फलों से लदी हुयी भूमि की ओर झुकी हुयी शाखाओं से इसे सबको सुरक्षा और तृप्ति प्रदान करने वाला महान वृक्ष बनना है। श्रीमती सरस्वती गिरि ने कहा है कि यद्यपि इससे उन्हें प्रसन्नता है कि इस नगर में, जो उनकी जन्मभूमि का नगर है, इस महान संस्था का जन्म हुआ है, उन्हें पूर्ण सन्तोष तभी होगा जब वे सब लोग, जो निर्धन और दरिद्र हैं, भोजन, वस्त्र और आवास की सुविधा प्राप्त कर लेंगे। निस्सन्देह ये मानव की आधार भूत आवश्यकतायें हैं; परन्तु मैं पूछना चाहता हूं कि जिन लोगों को यह सब सुविधायें प्राप्त हैं, इनकी प्रचुरता में भी, क्या उन्हें मानसिक शान्ति का आनन्द मिल सका है ? क्या वे चिन्ता, भय, द्वेष और घृणा से मुक्त हो सके हैं ? शान्ति तो मानव की अत्यन्त मूल्यवान निधि है। यह तो सदाचरण का प्रतीक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है, सेवा-कार्य के लिये उत्सुकता, त्याग के लिये तत्परता, भगवदेच्छा पर अपने को छोड़ देने की शान्त भावना, भौतिक पदार्थों की नश्वरता की चेतना ही शीतल क्षोभ रहित हार्दिक आनन्द है। तुम सब धूप में झुलस रहे हो, मैं तुम्हें और अधिक दुखी नहीं करना चाहता हूं; हम पुनः सायंकाल मिलेंगे तब मैं गुरुपूर्णिमा के अर्थों पर और कुछ प्रकाश डालूंगा।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

८६ प्रेम की किरणों को विकीर्ण करो

(अनन्तपुर ८-७-१९७१)

दिव्यात्मस्वरूपों विद्यालय भवन के उद्‌घाटन समारोह की प्रसन्नता में आज प्रातः तुम सबने, अनंत असीम आनन्द से लबालब हृदय और उमड़ती हुयी कृतज्ञता और आशा से भाग लिया है। सामान्यतया ऐसे समारोहों में तीन अवांछनीय दोष हर जगह पाये जाते हैं; स्वय की प्रशंसा, अन्य लोगों की निन्दात्मक आलोचना और निरुद्देश्य शुष्क वार्ता। परन्तु उत्तम जीवन और स्थायी आनन्द के लिये जो कहना चाहिये, जिसकी आकाँक्षा होनी चाहिये वह आध्यात्मिक क्षेत्र में ही पाया जाता है। वही अकेला (आध्यात्मिक क्षेत्र) शान्त रहते हुये दृढ़ता से, अन्दर से ही उन बुराइयों को सुधार सकता है जो वर्तमान में व्यक्ति और समाज को अपने बन्धनों में जकड़े हुये हैं।

जब हम समाज या जाति की चर्चा करते हैं, हम केवल संख्या पर ही हिसाब लगाते हैं। हमारे मन में लोगों के दलों का, जो परस्पर स्नेह के सूक्ष्म तन्तु से जुड़े हुये हैं, चित्र उभरता है। परन्तु, संस्कृत भाषा में प्रयोग होने वाले शब्द 'समाज' पर ध्यान देते हैं। हम भी इसे समाज ही कहते हैं। सम का अर्थ वही या समान, विभाजन से रहित, यही इसकी व्याख्या की कुंजी है। ये लोग जो समान भावना, एकत्व की भावना से ओतप्रोत हों; यह भावना कि सब के सब उसी एक की प्रतिमूर्ति, परछाईं है जो कि 'दैवत्वम्' है। ऐसों को ही समाज कहा जा सकता है, अन्य लोगों को नहीं। उसी एक के साक्षात्कार को ही अद्वैत का अनुभव करना कहते हैं। वह एक सभी में प्रतिबिम्बित होने पर भी अपने एकत्व से च्युत नहीं होता है; क्योंकि विविधता तो केवल ऊपरी, आकृति मात्र की है जो कि अवास्तविक और बाह्य नाम-रूप का वास्तविक

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

चरम तत्व पर बाह्य क्षेपरण मात्र है। समाज इन सूक्ष्म प्रभावों को मन पर इस प्रकार डालता है कि अद्वैत का लक्ष्य समीप से समीपतर होता जाता है। पार्थक्य के भ्रम से 'मैं' पन की उत्पत्ति होती है। जब वास्तविकता की ज्योति जगती है तो 'मैं' पन पिघलकर अदृश्य हो जाता है। गुरु शब्द में 'गु' अक्षर 'मैं' पन के अन्धेरे का वाचक है (पार्थक्यबोध, एक के आधार पर विविधता का भ्रम, रस्सी में सर्प का भ्रम अथवा अंधेरे में माला का भ्रम) दूसरा अक्षर 'रु' उस भ्रम को दूर करने का द्योतक है; वह प्रकाश जो ब्रह्म (रस्सी) को प्रकट करता है जो भ्रम अभी तक सूर्य अथवा माला का आवरण धारण कर भय और चिन्ता को उत्पन्न कर रहा था, मिट जाता है। जब वास्तविक गुरु प्रकट होता है तो विविधता उसी एक में लीन हो जाती है। जब एक होता है, दूसरा है ही नहीं तो फिर कौन और किससे भय खावे ? स्वयं भय शब्द का कोई अर्थ या अस्तित्व ही नहीं रहता है। फिर न तो कुछ इच्छा ही रहती है न कुछ प्राप्त करने को शेष रहता है। आज गुरुपूर्णिमा के अवसर पर सत्य पर विचार करो और सशरीर निर्भयता के क्षेत्र में अन्वेषण हेतु विचरण करो।

केवल कैनवस के थान, रंग के डिब्बों और तूलिका से क्या बनता है, यदि कोई कल्पनाशील चित्रकार हाथ न लगावे ? यदि निष्ठावान मूर्तिकार के हृदय में कोई चित्र न हो तो केवल रुखानी हथौड़े और संगमर्मर की शिलाखण्ड से क्या बन सकेगा ? वह कल्पना और वह चित्र ही तो दैवी स्फुल्लिग है। तुम सभी मानवाकृति में हाड़-मास में आवृत 'दैवी स्फुल्लिग' ही हो। यह आत्मा ही नश्वर माँस के शरीर में बन्द है। इसे जानो और असीम निर्भयता और प्रसन्नता का अनुभव करो। अहंकार से पीछा छुड़ा लो उसी बाड़े में तो तुम अपने आप को बंदी समझते हो, तब तुम अस्तित्व हीन कारागार से मुक्त हो जाओगे जो कि वर्तमान में तुम्हें कसकर जकड़े हुये है मानो कि कारागार वास्तविक हो। यह उच्च ज्ञान है, आध्यत्मज्ञान है। निम्न ज्ञान वह होता है जो केवल मन तक सीमित रहता है, मन को स्वच्छ करता है और उसके क्षोभों

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

को शान्त कर देता है। वह जप, ध्यान, नाम संकीर्तन और इसी प्रकार के पुण्य कार्यों से प्राप्त होता है।

मुझे तुमको बता देना चाहिये कि सेवा-कार्य द्वारा, प्रारंभ में निम्न ज्ञान, और कालान्तर में, उच्चतर ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है।

किसी भी अन्य क्रिया की अपेक्षा सेवा अधिक शीघ्रता और गहराई से उस अद्वैत भावना को भरती है। वास्तव में न केवल आन्ध्र प्रदेश के सेवादल बल्कि समस्त देश के सेवादलों द्वारा जो सेवा की गयी है उसकी चर्चा मैं तुम लोगों के मुंह पर नहीं करना चाहता हूं, क्योंकि केवल शब्दों में वर्णन करने से मुझे संतोष नहीं होता है। इससे बढ़कर अन्य कोई तपस्या हो ही नहीं सकती, इससे अधिक लाभदायक कोई कार्य नहीं। सेवा ही मनुष्य के नेत्रों को खोल कर सृष्टि की एकता का दर्शन कराती है। जब तुम नेत्र खोलते हो तभी संसार देखते हो, नक्षत्र, नीहारिकायें और आकाशगंगा के धुंधले सुदूरवती तारा पुंजों को भी देखते हो। जब आंखें बन्द करते हो तो वह दृश्य अदृश्य हो जाता है। फिर रिक्तता और अंधकार शेष रहता है। नेत्र उसी (भगवान्) को विश्व के रूप में व्यक्त करता है जो विस्तार, भव्यता, व्यवस्था, सुषुमा, शक्ति, विश्व-विराट् रूप में व्यक्त होता है। यह तो एक चित्र की भांति प्रकट होता है और एक चित्र की ही तरह अदृश्य भी हो जाता है। देखने से संरचना होती है; दृष्टि ही सृष्टि है। नेत्र ही शास्त्र है। (धर्मशास्त्र जो कि ज्ञान का प्रकाश देता है)। जब तुम केवल अपनी ही प्रसन्नता और दुखों से परिचित होते हो तो दूसरों के सुख-दुख से अपरिचित होते हो। तुम पृथक हो; अन्य लोग भी दूर होते हैं। फिर अद्वैत नहीं रहता है। असमान अस्तित्व कोहरे के धुंधलके में मंडराते रहते हैं जो कि प्रत्येक ठूंठ और परछाईं से भय-भीत होते हैं। समाज सेवा का अर्थ है, उसी एक की सेवा करना जो कि अपने हजारों प्रतिबिम्ब उत्पन्न करने में समर्थ है।

यदि मानव को सेवा से जो साधना का उच्च आदर्श है प्रेरित करना है

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

तो शिक्षा की अनिवार्यता अनुभव होने लगती है। सूचना से मस्तिष्क को बोझिल बनाना या कला कौशल सीख लेना ही नहीं बल्कि भावोद्रेकों, उद्वेगों, और मनोविकारों का उर्ध्वगमन, मन की चंचलता पर अधिकार होना, व्यष्टि के जगदात्मा में स्थित होने के लिये भी शिक्षा की आवश्यकता है। तुम्हें अपने वास्तविक स्वरूप को जानने के लिये उत्साहित करने, और अपने असीम आधार को खोजने के लिये भी प्रेरणा देना आवश्यक है। सापेक्ष सत्य में अपने को मत उलझाओ, अपनी जीवन नौका का लंगर निरपेक्ष से जोड़ दो। इसी शिक्षा की आवश्यकता है। यह तुम्हें जगदीश्वर से एकाकार कर देगी। तुम उसी से यह सब प्रेम, शक्ति और ज्ञान प्राप्त करते हो। जब तक तुम मातृत्व न प्राप्त करो तब तक मातृ-प्रेम की गहराई को (यदि तुम दैवत्वम् में नहीं प्रतिष्ठित होते हो) नहीं नाप सकते हो, तुम भगवान् के उस उच्च आह्लाद को नहीं जान सकते हो।

एक मानक माप दण्ड होता है जिससे प्रत्येक वस्तु का मूल्यांकन किया जाता है। कुछ सुनिश्चित मात्रा या स्थिति—जो अवश्य ही प्राप्त करना चाहिये, उसी की तुलना तक पहुंचना ही प्रमाणित होना है। प्रमाण के 'प्र' का अर्थ पूर्व निश्चित और 'मान' का अर्थ माप-तौल। मानव की माप क्या है, यह पहले ही निर्धारित हो चुका है। उसे कैसे जीना ह जिससे कि उसका स्तर नीचे न गिरे ? उसे सदा ही स्मरण रखना चाहिये कि यह शरीर और उसके समस्त अवयव तो मानव का अस्थाई निवास है, वह तो शाश्वत और दिव्य है, आत्मा है, जो कि स्पष्ट रूप से इस भौतिक पींजड़े में, जैसे चन्द्र का प्रतिबिम्ब घड़े के जल में होवे; बन्द रहता है।

इस विद्यालय के छात्रों को इस सत्य की झलकियां अवश्य प्राप्त होंगी—ऐसी झलकियों से वे अपनी साधना में और आगे बढ़ेंगे, जो इस सत्य को पूरे तौर से व्यक्त कर देंगी। यह विद्यालय राष्ट्र की प्रसन्नता और कल्याण में अपना योगदान देगा क्योंकि पौराणिक काल की माताओं की तरह ये मातायें

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

अपनी संतान के हृदयों को शान्ति और आनन्द के स्वर्गों में परिणत कर देंगो । जिन आदर्शों को हमने अपने लिये निर्धारित किया है वे सच्चाई और शीघ्रता से कार्य रूप में परिणत किये जावेंगे ।

वेदों में माता-पिता को देवता समान ही आदर देने का आदेश है। उन्हें बच्चों को भी दिव्य मानकर उनमें उसी देवत्वम् को पूर्णरूप से विकसित करना है। कोई इस कार्य को सच्चाई से कर रहा है या नहीं इसे उसी के आत्मा के निर्णय पर छोड़ दिया जावे। अपनी ईमानदारी को जाँचने के लिये तुम्हीं सर्वश्रेष्ठ न्यायाधीश हो। शिशु सबसे पहले अपनी माँ का मुंह देखता है, माँ ही वह पहला शब्द खण्ड है जो बच्चा उच्चारण करता है, वही जीवन के अंत में बोला जाता है। बच्चे के न रहने से माँ की वेदना समाधान की सीमा के बाहर हो जाती है। अर्जुन और सुभद्रा के षोडस वर्षीय पुत्र अभिमन्यु का जब चक्रव्यूह में फंसकर कौरव पक्ष के योद्धाओं द्वारा प्रतिशोध लेने के लिये वध कर दिया गया तो अर्जुन फूट-फूट कर रोये और पुत्र शोक में व्याकुल हुये। "मैं क्यों राज्य के लिये युद्ध करूँ जबकि पुत्र, जो उत्तराधिकारी होता है, ही नहीं रहा है ?" उन्होंने अपने से प्रश्न किया। उसने युद्ध को धिक्कारा जिसने युद्ध से लाभान्वित होने वालों को पहले ही निगल लिया। सुभद्रा, जोकि माता थी, ने स्मरण किया कि त्रेतायुग में राम के शासनकाल में कभी किसी माता को पुत्रशोक से नहीं रुदन करना पड़ा। उस काल में माता-पिता के जीवित रहते पुत्र की मृत्यु नहीं होती थी। उसने इसे युग का दोष बतलाकर विलाप किया और कहा कि कलियुग की काली परछाईं अभी से द्वापरयुग पर पड़ने लगी है। जो कि अब समाप्त होने के निकट आ गया है। परन्तु किसी मानवीय दुर्बलता और दुष्टता के लिये युग-धर्म या अन्य किसी पर दोषारोपण करना असंगत है ।

प्रत्येक का अपने प्रति यही कर्त्तव्य है कि वह अपने हृदयों को भय और शोक से मुक्त और स्वच्छ रखे और उसे प्रेम और उत्सर्ग की भावना से सदा

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

भरता रहे। तुम्हें काल के युगानुसार बंटवारे से कोई विशेष लगाव नहीं होना चाहिये। तुम्हें तो मनोवैज्ञानिक स्वरों से जहां तक तुम्हारी पहुंच होवे संबंध रखना है। तुम्हें अधिक लगाव तो सौमनस्यता, प्रशान्ति की प्राप्ति है। यही एक महत्त्वपूर्ण और दुर्लभ प्राप्य है। इसलिये हर वस्तु और व्यक्ति को उसी एक भगवान् की प्रतिमूर्ति मानकर देखो। हर वस्तु, हर व्यक्ति उसी का प्रतिबिम्ब है। तमोगुण में यह प्रतिबिम्ब 'पदार्थ' रूप में है। रजोगुण में वह 'जीवन' के रूप में तथा सतोगुण में 'दैवत्वम्' के रूप में प्रतिबिम्बित होता है। ऐसा ही सोचो, अनुभव करो, कहो और व्यवहार द्वारा प्रदर्शित करो। फिर तुममें लोभ, काम, घृणा और द्वेष नहीं रहेंगे। इस मानवता के लबादे को उतार फेंको और अपने निर्मल शुद्ध रूप 'दैवत्व' में चमकने लगो। प्रत्येक को 'दैवत्व' के रूप में ही देखो, उनके मानवीय रूप तो रंगमंच के अभिनय के लिये भरे हुये रूप हैं।

अपने वनवास के ११वें वर्ष में जब ४ अनुज भिक्षाटन के लिये गये हुये थे, द्रोपदी धर्मराज के चरणों में बैठी हुयी थी। उनके नेत्रों से आँसुओं की धार बह कर गालों पर से गिर रही थी; वह उनके चरणों की थकान दाबकर दूर कर रही थी। रोने का कारण पूछने पर उसने उत्तर दिया. "आप तो इसलिये विलाप करते हो कि भिक्षाटन पर गये हुये भाई नहीं लौटे हैं, क्योंकि आप भूखे हो। मुझे उस दिन की याद आती है जब हम लोग इसी राज्य के स्वामी थे, हजारों ब्राह्मणों को इच्छानुसार स्वादिष्ट भोजन के लिये आमंत्रित करते थे, ऋषियों, साधुओं, विद्वानों, छात्रों और तपस्वियों की आवभगत करते थे। और अब हम स्वयं एक-एक ग्रास भोजन के लिये व्याकुल हैं।" उसी समय भीम ने वहाँ प्रवेश किया और वे द्रौपदी की वेदना देख क्रोध से आग बबूला हो गये। उन्होंने इसके लिये धर्मराज को ही दोषी ठहराया, जिनके धर्मारूढ़ रहने से वे लोग इस दयनीय दशा को प्राप्त हो गये थे। परन्तु, धर्मराज ने कहा, "भाई, चूंकि हम धर्मारूढ़ रहे इसीलिये भगवान् हमारा रक्षक और पथ-प्रदर्शक बना हुआ है। कौरव लोग अधर्म का आचरण करते

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

हैं; उनका दुर्भाग्य और विनाश रक्त से लिखा हुआ होगा, शैतान भले ही उनके नेत्रों के समक्ष आशा कुसुम खिलाये रखे, परन्तु उनके विनाश को कोई टाल नहीं सकता।" धार्मिक आचरण से प्राप्त शक्ति के बिना शारीरिक और अस्त्र-शस्त्रों की शक्ति भी शून्य हो जाती है। भीम में शारीरिक शक्ति थी वे पर्वतों को चूर्ण कर सकते थे। अर्जुन के पास उस युग का भयंकरतम धनुष था और अनेक दिव्यास्त्र थे। परन्तु दोनों ही धर्म के नियमों के बन्धनों को स्वीकार करने वाले और धर्म के निर्देशन में चलते थे जिससे भगवान् उन्हें भावी संग्राम में विजय प्रदान करें। आज धर्म की सबसे सरल और सबसे अधिक फलदायक अभिव्यक्ति सेवा के माध्यम से होती है उसी से तुम्हारे चतुर्दिक् विद्यमान दैवत्व की पूजा हो जाती है। अपने सम्पूर्ण चातुर्य, क्रिया-कुशलता, धन, विद्वत्ता आदि को दैवत्व के जीते-जागते प्रतीकों के लिये अर्पित कर दो। इसी धर्मशक्ति के प्रभाव से तुम प्रभु कृपा प्राप्त कर सकोगे।

मैं एक उद्देश्य लेकर आया हूं, उसकी पूर्ति का प्रथम और सबसे महत्त्व-पूर्ण कार्य वेद और वैदिक कर्मकाण्ड का पुनरावर्तन है और उसके आन्तरिक महत्त्व से लोगों को अवगत कराना है। अगला पग ऐसे दीपकों को आलोकित करना है जिनसे प्रकाश उन सब मोड़ों, कोनों में भर जावे जहां कि अन्धकार सुरक्षित बैठ गया है। यह विद्यालय, जैसा कि तुम लोगों में से कुछ का विचार है, आर्थिक उन्नति को ध्यान में रखकर नहीं स्थापित किया गया है। और न प्रचार का साधन बनाने के लिये इसकी आधारशिला रखी गयी है। यह तो एक प्रेरणा का स्रोत, प्रकाश स्तंभ, एक उदाहरण, एक अग्रदूत है, और शिक्षा शास्त्रियों के लिये एक पाठ के रूप में तथा सभी मानवता वादियों के लिये एक आदर्श की पूर्ति के लिये ही इस विद्यालय की स्थापना की गयी है। एक सामान्य प्रश्न "कालेज शिक्षा किसलिये ?" का सामान्य उत्तर ऐसा ही होता है "एक अच्छी नौकरी पाने के लिये।" परन्तु इस प्रश्न "यह विद्यालय क्यों ? का उत्तर स्पष्ट है (१) इस देश की भावी माताओं के हृदय को विनम्रता, निष्ठा, विवेक और पाप के भय से मधुर बनाना है। (२) सत्य और पुण्य की दिशा में उनकी जीवन-यात्रा के मार्ग को आलोकित करने के लिये।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

इस पीढ़ी के लिये संस्कृत भाषा का अध्ययन, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भारतीय संस्कृति, जोकि इस देश के बच्चों का उत्तराधिकार है, उसकी कुंजी यही है। अमरता के इस अमृत के लिये दुनिया बहुत भूखी है, पूर्वजों के इस धन की तुम्हें उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। मैं पुनः आग्रह करता हूं कि शिक्षित महिलायें स्वयं गृहस्थी को चलायें और परिवार के सभी सदस्यों के पोषण और परिचर्या का दायित्व अपने कंधों पर ले लें। जो आनन्द निःस्वाथ प्रेमपूर्ण व्यवहार से प्राप्त होता है, वह एक दुर्लभ और उन्नायक अनुभव होता है। यह बहुत मूल्यवान साधना है। एक तीसरी आवश्यकता यह है कि छात्रों के हृदयों में सेवा के आदर्श को स्थापित किया जावे। न केवल उनमें सेवा के लिये उत्साह होवे बल्कि सहायक बनने की दक्षता भी वे अवश्य प्राप्त करें। पिछले ७, १० दिनों में हैदराबाद के स्वयंसेवकों ने (वे पहले भी कई अवसरों पर आ चुके हैं) तथा पूर्व और पश्चिम गोदावरी के जिलों से, कृष्णा और गुन्तूर जिलों से, उड़ीसा, बंगाल और पंजाब से, मैसूर, केरल, आसाम तथा भारत के अन्य भागों से, और समुद्र पार के देशों पूर्वी अफ्रीका और अमेरिका से भी, आकर स्वयं को पूर्ण रूप से हार्दिकता से रात-दिन कार्यरत रह कर थका डाला। परिणामतः यह विस्तृत क्षेत्र जो पहले ऊबड़-खाबड़ और मलबे के ढेर जैसा प्रतीत होता था आज प्रातःकाल होने तक समतल, चिकने और मृदु मैदान में परिणत हो गया है, अब यहाँ लाखों व्यक्ति आराम से बैठ सकते हैं। जिस प्रेम को उन्होंने अपने सेवा-कार्य से व्यक्त किया है उसका वर्णन शब्दों से नहीं किया जा सकता है। आज दोपहर को, जबकि पहले ही पर्याप्त विलंब हो चुका था और तुम सब धूप से झुलस रहे थे, मैं इस प्रेम की व्याख्या न कर सका और अपने आनन्द का वर्णन न कर सका। परन्तु इस समय तो मैं प्रसन्नता से चर्चा कर सकता हूँ।

विश्व दिखाई देता है, इसके संबंध में सीखा जाना जा सकता है, इसका अनुभव किया जा सकता है, इससे आनन्दित हुआ जा सकता है। परन्तु भगवान् अदृश्य है। उसकी सृष्टि से उसका अनुमान किया जाता है। इसी

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

प्रकार वह समाज, जिसकी सामाजिक सेवा की जाती है, नहीं देखा जा सकता है। हम तो केवल व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं। परन्तु व्यक्ति के माध्यम से तुम इस 'दैवत्व' का अनुमान लगाते हो। सभी तो इस विश्व रंगमंच के अभिनय के पात्र हैं, उसकी लीला ही यह विशाल अभिनय है। प्रत्येक परमाणु उसकी शक्ति से, उसकी महिमा से, उसके अधिकार से संयुक्त है। प्रत्येक व्यक्ति उसके आनन्द, उसके सौंदर्य, उसकी भलाई से ओतप्रोत है। ऐसा मत कहो कि तुम अपनी किसी विशिष्ठता या चातुर्य से कुछ कर रहे हो। यह तो उसी की कृपा की देन है, उसकी दयालुता का प्रसाद है। लोग एकांत में जाकर भगवान् से संपर्क का प्रयास करते हैं; परन्तु एकान्त का सर्वोत्तम उपयोग तो व्यक्तिगत दोषों को खोजने और उन्हें सुधारने के लिये किया जाना चाहिये। भगवान् से संपर्क करने के लिये अपने नेत्र खोलो और मानव-बन्धु की सेवा करो। वह तो मूर्तिमान भगवान् है जिसकी व्यक्ति अपनी रुचि और जी भर कर आराधना कर सकता है। सर्वाधिक बलिदान से सर्वाधिक आनंद प्राप्त होता है। वही तो सर्वोच्च भोग है यद्यपि उसे त्याग कहा जाता है। यही पूर्णत्व की स्थिति को प्राप्त होना है। देना ही प्राप्त करना होता है। इससे सर्वाधिक योग या एकत्व की स्थिति तक पहुंचा जा सकता है। लाभ (भोग) का यही ढंग सर्वश्रेष्ठ है, अन्य शेष भोग नहीं रोग हैं। और सेवा केवल यही प्रशान्ति निलयम् में ही नहीं, अथवा इसी प्रकार के विशेष समारोहों के अवसर पर ही नहीं, परन्तु जहाँ कहीं भी तुम होओ, और जब तुम्हें ऐसा अनुभव हो कि किसी को तुम्हारी सहायता की आवश्यकता है तो अपने सामर्थ्य और योग्यतानुसार सेवा करते रहो। सोचो कि भगवान् ने कृपा करके तुम्हें यह अवसर दिया है, मनोवृत्ति और योग्यता दी है साधना की परीक्षा का यही अवसर होता है।

आज गुरुपूर्णिमा है; जब कि अनेक लोग उस 'गुरु' की विशेष पूजा करते हैं जिसने उन्हें आध्यात्मिक जीवन में दीक्षा दी है, कुछ मंत्र दिया है या व्रत और अनुष्ठान करने को कहा है। मुक्तिमार्ग के पथदर्शक गुरु की पूजा के

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

लिये इसी विशेष तिथि के पुनः आने की प्रतीक्षा करने की ग्रावश्यकता नहीं है, उसके प्रति तो सदा ही कृतज्ञ रहना है। गुरु ने ग्रन्तर्दृष्टि प्रदान की है, वह लक्ष्य तो तुम्हारे ग्रन्दर ही है। यह मार्ग तुम्हें ग्रपनी ग्रात्मा 'मैं' तक पहुंचाने वाला है, वही तो तुम्हारे विना जाने ही तुम्हारे ग्रन्दर, उसी प्रकार सभी में, प्रकाशित हो रही है। इसे जानना ही शरीर के वंधन ग्रौर जन्म-मृत्यु की ग्रनिवार्यता से, जोकि शरीर की क्रियायें हैं, मुक्त होना है। लोग मेरे पास ग्राते हैं ग्रौर प्रार्थना करते हैं, "स्वामी नाकु मोक्षम् कावासि" (मेरे लिये मोक्ष चाहिये !)। तृष्णा के इस वक्तव्य पर विचार करो। डाक द्वारा एक पार्सल प्राप्त होता है जो सभी ग्रोर से बन्द होता है इसी डिब्वे में उपहार ग्रन्दर रखा होता है। तुम ऊपर नीचे का ग्रावरण हटा कर ग्रपनी मनचाही मूल्यवान भेंट प्राप्त कर लेते हो। इसी प्रकार मोक्ष भी (जिसके लिये तुम लालायित हो) दोनों ओर से दो विचारों 'मेरे लिये' ग्रौर 'चाहिये' ग्रर्थात् ग्रहंभाव ग्रौर इच्छा के बीच में बन्द है। इसलिये मुझे तो केवल यही कहना है "ऊपर के ग्रावरण को हटा दो ग्रौर ग्रपने मोक्ष के उपहार को प्राप्त कर लो। ग्रहंभाव को त्याग दो, इच्छाग्रों को त्याग दो, वस तुम मुक्त हो।" गुरु तुमसे एक मंत्र जपने को कहता है; परन्तु मंत्र तुम्हें अंतिम दिव्यानंद नहीं प्रदान कर सकता है। यह तो मन को ग्रनुशासित करेगा, इसकी चंचलता को सीमित करेगा ग्रौर निष्ठा को दृढ़ बनावेगा। परन्तु जब तक तुम सभी में ईश्वर का दर्शन न कर सको, जब तक तुम्हारा मन भगवान् को प्रतिविम्बित करने वाला ऐसा दर्पण न बन जावे कि प्रत्येक वस्तु ग्रौर व्यक्ति उसी का रूप है, तब तक जिस मोक्ष को तुम चाहते हो उसके उपयुक्त पात्र नहीं हो।

जब बर्तन में सुई की नोक जैसा भी छिद्र हो तो टपक कर पात्र रिक्त हो जाता है। जब हृदय में निष्ठा ग्रौर शक्ति, प्रकाश ग्रौर प्रेम हों तो क्रोध या द्वेष, या ईर्ष्या या घमंड द्वारा सूक्ष्म छिद्र भी इतना हानिप्रद हो जाता है कि वहुमूल्य धन शीघ्रता से नष्ट हो जाता है। ग्राज ही (भगवान् की) उपस्थिति में प्रतिज्ञा करो कि, जिसके लिये तुम इतने इच्छुक हो, क्षुद्र इच्छाग्रों ग्रौर

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

धोखेबाज शत्रुओं (जो छिपे-छिपे घात लगाये बैठे रहते हैं) के झाँसे में नहीं आओगे। यश, अपयश, प्रशंसा या निन्दा से कभी प्रभावित न हुआ करो। कोयल को कौवे जब भी देख पाते हैं, पीछा करते हैं और अपनी चोंचों से घायल करने की चेष्टा करते हैं। महान व्यक्ति सदा ही क्षुद्र व्यक्तियों के आक्षेपों के शिकार होते रहते आये हैं। अपनी त्रुटियों और बुराइयों को छिपा कर रखो जिससे एकान्त में उनका परिमार्जन या संशोधन कर सको। उन्हें दूसरों पर मत थोपो। उनसे संघर्ष करके उन्हें साधना के एकान्त में पछाड़ दो। दूसरों के साथ प्रसन्नता से और हितकारी ढंग से सहयोग किया करो। भगवान् शिव की ओर देखो। जिस भयंकर विष से समस्त ससार भस्म हो जाता उसे उन्होंने अपने गले में स्थान दिया। जो चन्द्रमा सब पर शीतल शान्त और सुखद किरणों की वर्षा करता है उसे उन्होंने मस्तक पर धारण कर रखा है; जिससे कि समस्त विश्व उससे लाभान्वित हो। यह तुम्हारे लिये एक उपदेश-प्रद पाठ है। जिन शत्रुओं और डाकुओं को तुम्हारे हृदय ने अपनी सीमातीत दुर्बलता से छिपा रखा है; उनसे अन्य लोगों का जीवन क्यों दुखमय बनाते हो?

इस देश में, तथा अन्य देशों में भी, मानव की आध्यात्मिक उन्नति के लिये अनेक संगठन और संस्थायें हैं; परन्तु वे सब सम्मान और शक्ति के लिये प्रतिद्वन्दिता की राजनीति में फँस गये हैं। वे आत्मश्लाघा के लुभावने खेल खेल रहे हैं। जहाँ दृष्टि डालो, संन्यासी, योगी, गुरु, आनन्द और बाबा लोग ही दिखाई पड़ते हैं। ये सब एक ही उद्देश्य की भिन्न-भिन्न अभिव्यक्तियाँ लिये हुये श्रोताओं और अपने भक्त आसामियों के लिये चीख पुकार करते दिखाई देते हैं। वे चन्दा या दान एकत्र करते और अपने सम्मान, मान-मर्यादा का प्रदर्शन करते फिरते हैं। किसी ने भी वस्तुओं की सापेक्षता में जाने की चेष्टा नहीं की है। किसी ने भी न तो मोतियों के लिये तली तक डुबकी लगाई है और न उन्हें प्राप्त ही कर पाया है। सभी ऊपरी सतह की ही देख भाल और टटोलने में व्यस्त हैं, उन्हें अपनी सत्ता के विलीन होने का भय है कि कहीं प्रकाश की एक चमक एक बार में ही उन्हें प्रकट न कर दे। हमें ऐसे आध्या-

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

त्मिक पथ-प्रदर्शकों की आवश्यकता है जो अभिमान और घमंड से रहित होवें, घृणा और लोभ उन्हें छू तक न गया हो। ऐसे पथ-प्रदर्शक जो सम्पूर्ण दूरी की यात्रा कर चुके हों। मैं जानता हूं कि तुममें से अनेकों व्यक्ति तर्क करते हैं और बहस करते हैं कि ये संगठन इतने बड़े विशाल पैमाने पर कैसे संगठित किये गये हैं। यदि तुम मुझे अच्छी तरह से जानते होते, तो इस प्रकार का तर्क तुम्हारे मन में उठता ही नहीं। तुम्हें पता चलेगा कि यह तो मेरी शक्ति की एक नगण्य उपज है। मैंने तो उदाहरण की तरह इसे किया है, क्यों कि जो लोग पथ-प्रदर्शन करते हैं जबतक वे सक्रिय और उत्साहित होकर झुक कर भार वहन के लिये तैयार नहीं होते हैं; तो जिन्हें अनुसरण करना है वे निराश होकर रास्ते से भटक जावेंगे। धार्मिक नेताओं का इस दिशा में अधिक बड़ा उत्तरदायित्व है; क्योंकि इस क्षेत्र में पाखण्ड ही महान विश्वासघात है। लोग ऊँचे उड़ते हैं, जिससे वे वृहत्तर वृत्त पर दृष्टि डालकर अपना भोज्यपदार्थ गिद्धों की तरह खोज सकें। उनके पक्ष जो घोषणा करते हैं उनके नेत्र उस घोषणा का प्रतिवाद कर देते हैं।

अन्य लोगों ने, मैं जानता हूँ, प्रश्न किया है कि मैंने भारत के राष्ट्रपति की पत्नी श्रीमती सरस्वती गिरि, मैसूर के राज्यपाल, आन्ध्र के मुख्यमंत्री और शिक्षा-मंत्री और व्यंकटेश्वर विश्वविद्यालय के उपकुलपति को इस अवसर के आनन्द का उपभोग करने के लिये क्यों आमंत्रित किया है। वे उन स्थानों पर हैं जो अनेकों पर प्रभाव डाल सकने की क्षमता रखते हैं और यह आवश्यक है कि आध्यात्मिक शिक्षा के पुनरुत्थान के लिये उनका ध्यान इस ओर भी आकर्षित किया जावे। उन्हें भी इस देश की संस्कृति के पुनरुत्थान के लिये महत्वपूर्ण क्रियाकलापों से सम्पर्क में रखने की आवश्यकता है। इसी कारण से मैं इन महत्वपूर्ण अधिकारियों को यहाँ की कार्यवाही में भाग लेने के लिये आमंत्रित कर रहा हूं। मेरा लक्ष्य सभी के हृदय परिवर्तन से है। चाहे वे उच्च पदों पर होवें अथवा नहीं। मुझे सभी प्यारे हैं, मेरी दृष्टि में सभी महत्वपूर्ण हैं। सभी साधनों का उपयोग करके प्रशान्ति स्थापना का लक्ष्य पूर्ण करना है। यही मेरा कार्यभार है।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

खुला हृदय रखो, सीमित प्रेम के तंग मार्ग को ही मत अच्छा समझो । सभी से प्रेम करो, सत्ताधारियों और उच्चपदस्थ अधिकारियों से ही क्यों द्वेष-पूर्ण पक्षपात का व्यवहार रखना चाहते हो । वे भी हमारे स्वजन और आत्मीय हैं । हम सभी साथी यात्री हैं । मेरे विषय में एक सत्य का विश्वास रखो कि स्वामी जी अकारण ही किसी कार्य को हाथ नहीं लगावेंगे और जब कोई कार्य हाथ में लेंगे तो उसके गंभीर परिणाम अवश्य होंगे ।

आज तीन 'गु' इकट्ठे हुये हैं । आज गुरुवार है (सप्ताह का यह दिन मंत्रदाता गुरु के नाम पर है), इस महीने की पूर्णिमा व्यास के सम्मान के लिये विशेष रूप से मनाई जाती है, (क्योंकि वे वेदों के सम्पादक और ब्रह्मसूत्र के रचयिता हैं, पचम वेद के नाम से प्रसिद्ध महाकाव्य महाभारत के कवि हैं, वे भक्ति के प्रख्यात शास्त्र श्रीमद्भागवत के रचयिता हैं), आदि गुरु मानकर उनका पूजन किया जाता है, तीसरा 'गु' इस गुरुकुल आश्रम की ओर संकेत करता है, यह विद्यालय देखने में नवीन परन्तु आदर्शों में प्राचीन है, यह शताब्दियों के परम्परागत पवित्र प्राचीन गुरु-शिष्य संबंधों पुनर्प्रचलन का समर्थक है । यह तीनों 'गु' बिल्वपत्र के तीन पत्तों का स्मरण दिलाते हैं जो शिवाराधन में प्रयुक्त होता है । ये तीन गुण (सत्, रज्, तम) त्रिकाल (भूत, भविष्यत, वर्तमान) जो शिवजी के त्रिशूल के रूप में उनके अधिकार में होते हैं, और मानव को इन्हीं गुणों से ऊपर उठकर त्रिगुणातीत का साक्षात्कार करना है ।

व्यास का महानतम योगदान भक्ति के क्षेत्र में है जो कि नाम-रूप के द्वारा भगवान् की उपासना का मार्ग प्रशस्त करती है । जब तक मनुष्य एक आकार में निहित है और उसने नाम धारण कर रखा है उसे केवल नाम और रूप का ही अनुभव हो सकता है । अग्नि की कोई आकृति नहीं होती वह जिस वस्तु को जलाती है अथवा भरती है उसी का रूप धारण कर लेती है, एक लौह पिण्ड या बटी हुयी रस्सी इत्यादि । जल की भी अपनी आकृति नहीं होती

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

है, वह जिस पात्र में भरा जाता है उसी के आकार का हो जाता है वायु की भी कोई आकृति नहीं होती है वह तो जिस गेंद या ट्यूब में भरी जाती है उसी आकार में समा जाती है। आत्म तत्व के सम्बन्ध में भी यही सिद्धान्त है ।

शरीर ही वह गेंद है जिसमें दैवत्व की वायु भरी हुयी है। इसे खेल में छः शत्रु खिलाड़ी एक ओर से ठोकर मारते हैं (षड्रिपु, काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मत्सर) और छः मित्र खिलाड़ी (सत्य, न्याय, शान्ति, प्रेम, दया, सहिष्णुता) दूसरी ओर से खेलते हैं। प्रत्येक पक्ष के गोल स्तंभ आमने सामने हैं। यदि गेंद को ऐसी ठोकर मारी जावे कि यह धर्मविद्या (नैतिकता की उपलब्धि) और ब्रह्मविद्या (आध्यात्मिक उपलब्धि) के बीच से होकर निकल जावे तो ठोकर मारने वालों को विजय प्राप्त होती है। अन्यथा उनकी ठोकर बाहर (आउट) घोषित की जाती है। जो अनुभव करते हो उसे व्यक्त करना सीखो और जो कहते हो उस पर आचरण करो। इनमें विरोधाभास मत उत्पन्न करो। एक राक्षसी मनोवृत्ति का मनुष्य जिसमें से घृणा का धुआं निकलता होवे, संघर्ष में रत होवे वह शान्ति कान्फ्रेंसों का आयोजन करता है। और अपने शान्ति प्रयासों पर गर्व करता है। हृदय को शान्ति की मठिया में परिवर्तित कर दो। तब अपने को अथवा दूसरों को धोखा देने के लिए कान्फ्रेंसें अनावश्यक और व्यर्थ हो जावेंगी। केवल बातों से क्या पाया जा सकता है ?

रचनात्मक विचार, सान्त्वनादायक शब्द, दयालुता के कार्यों में रत रहो। आँसुओं से भरी आँखों की अथवा दीर्घ निःश्वास लेते हुये हृदयों की ताक में रहो। मुझे विश्वास है कि मेरे शब्द तुममें अनेक हाथियों की शक्ति भर देगें। जब भी तुम किसी सेवा-कार्य में ऐसी शक्ति की आवश्यकता अनुभव करोगे। मैं जानता हूं कि उन्हें प्राप्त हुयी है, तुममें से प्रत्येक इस सत्य का साक्षी है। जो कुछ तुम सबने मिलकर कर पाया है उसका साक्षी मैं स्वयं हूँ। किसी के द्वारा आख्या प्राप्त करने की मुझे आवश्यकता नहीं है; जो आनन्द तुम्हें प्राप्त हुआ है उसे किसी से नाप कराने की तुम्हें आवश्यकता नहीं। जब आन्ध्र प्रदेश

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

के अराजपत्रित कर्मचारियों ने डेढ़ माह से ऊपर हड़ताल रखी, अस्पतालों में सहायक और परिचारिक नहीं रहे, विजयवाड़ा, हैदराबाद, विशाखपटनम् तथा अन्य जगहों से सेवादल के सदस्यों ने दया से द्रवित होकर अस्पताल के भर्ती हुये रोगियों की परिचर्या संभाल ली। उन्होंने उनकी सेवा प्रेम और भक्ति भाव से की।

कोई भी सेवा घृणित या क्षुद्र नहीं होती। प्रत्येक तात्कालिक आवश्यकता को देखा गया और उसके निराकरण का प्रयत्न किया गया। उन्हें इस बात का कोई विषाद नहीं होना चाहिए कि उन दिनों न तो ध्यान, जप कर सके और न नगर संकीर्तन में ही भाग ले सके। क्यों ? जब तुम सड़कों को स्वच्छ करो तब भी तुम्हारी जिह्वा पर नाम तो रह ही सकता है। जब लाशों को उठाकर पहचान करने वाले स्थानों पर जमा करने ले जाओ अथवा संकट ग्रस्त क्षेत्रों को जाते आते समय भी नाम जप कर सकते हो। लोग तुम्हें पागल कह सकते हैं। परन्तु तुम प्रसन्न होओ कि तुम उस प्रकार के पागलपन से तो ग्रस्त नहीं हो जिससे कि तुम्हारी खिल्ली उड़ाने वाले पीड़ित हैं।

भारत ही नहीं, आज समस्त विश्व ही चिन्ता और भय की पीड़ा से ग्रस्त है। परन्तु मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि ये काले बादल शीघ्र छँट जावेंगे और समस्त विश्व में एक प्रसन्नता का युग प्रारंभ होगा। न्याय की प्रतिष्ठा होगी और अन्याय का दमन होगा। तुम्हारा कर्त्तव्य यही है कि तुम उसी एक की चेतना की प्राप्ति की आकाँक्षा करो जो इस समस्त प्रतीयमान विविधता की आधार है। प्रेम के, दयालुता के, सेवा, पारस्परिक सहिष्णुता के केन्द्र बनो। प्रसन्न रहो, अत्यधिक आनन्द में मग्न रहो। आज इस गुरुपूर्णिमा के अवसर पर मैं तुम्हारे लिए इसी आशीर्वाद की वर्षा करता हूं।

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late.Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri

CC-0. Late Pt. Manmohan Shastri Collection Jammu. Digitized by eGangotri